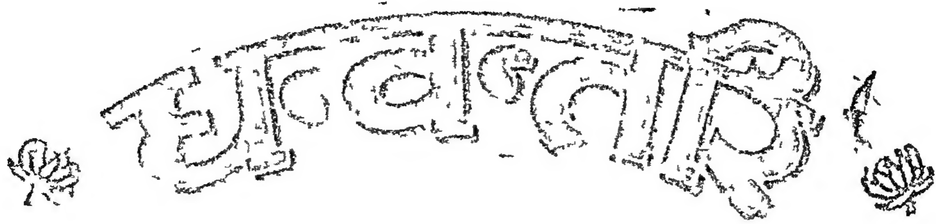


वनौषधि विशेषाङ्क

(छठा भाग)

'थ' से 'द' तक की सम्पूर्ण वनस्पतियों का
विस्तृत सचित्र वर्णन एवं विभिन्न
रोगों पर हमारे सफल सरल
प्रयोगों का अनुपम संग्रह



विशेष सम्पादक एवं लेखक
वैद्याचार्य उदयलाल महात्मा एच. एम. डी. एस.

सम्पादक
वैद्य देवीशरण गर्ग आयुर्वेदोपाध्याय
ज्वालाप्रसाद अग्रवाल बी० एस-सी०
दाऊदयाल गर्ग ए०, एम० बी० एस०

वर्ष ४५
अङ्क २-३



फरवरी-मार्च
१९७१

वार्षिक मूल्य ८.५०
इस अङ्क का १०.००

आवश्यक

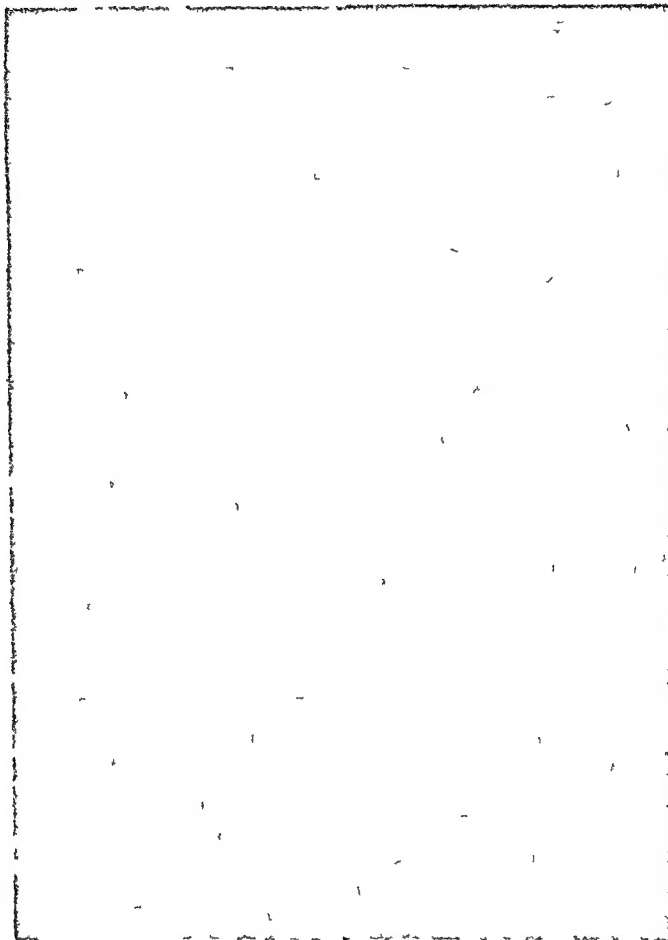
१—सभी ग्राहकों से निवेदन है कि विशेषांक के ऊपर के रैपर को सम्भाल कर रखें तथा उस पर लिखा ग्राहक नम्बर तथा पोस्ट आफिस का नम्बर इस विशेषांक के टाइटिल के पृष्ठ २ पर नोट कर लें।

२—भविष्य में पत्र व्यवहार करते समय अपना ग्राहक नम्बर पत्र में अवश्य लिख दिया करें। अन्यथा उत्तर नहीं दिया जा सकेगा।

३—कोई भी अङ्क मिलने पर देख लिया करें कि उससे पहिले मास का अङ्क मिला है या नहीं। न मिला हो तो पोस्ट आफिस में तलाश करें और उसके उत्तर के साथ हमको लिखें। पोस्ट व्यय के लिए १० न पै. का टिकट साथ भेजें।

४—धन्वन्तरि के नवीन ग्राहक बनाने का अवश्य प्रयत्न करें।

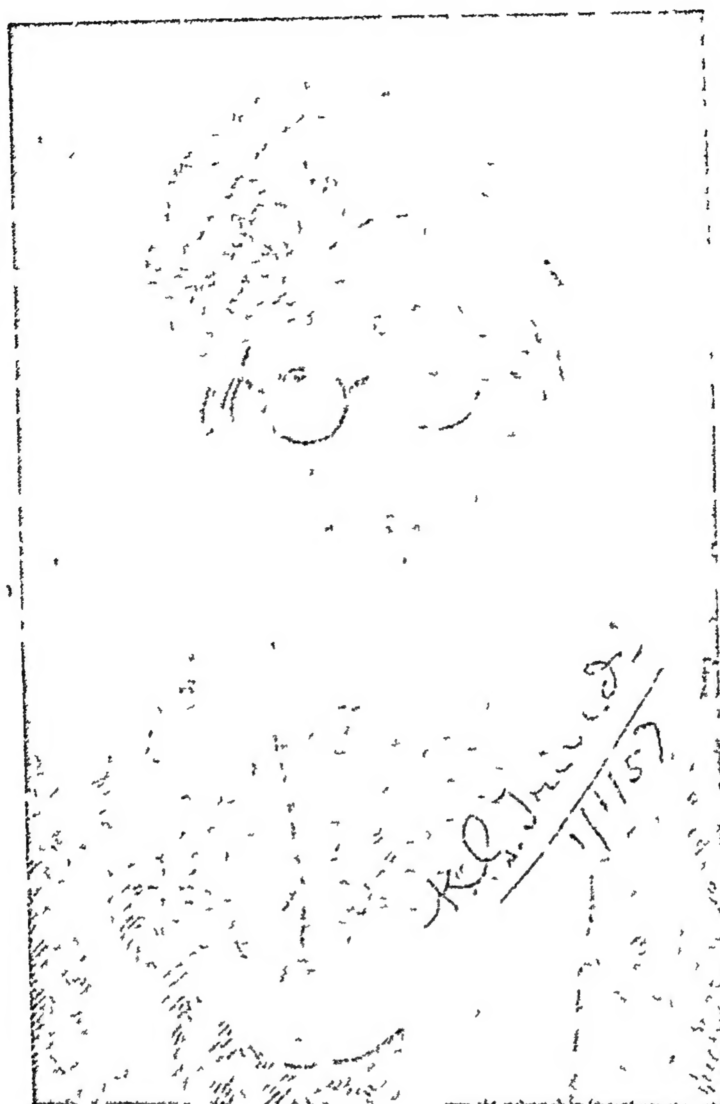
५—ध्यान रहे यह विशेषांक फरवरी-मार्च २ मास का अङ्क है।



इस छठे भाग के विशेष सम्पादक एवं लेखक

वैद्याचार्य श्री उदयलाल जी महात्मा

श्री महावीर चिकित्सालय, देवगढ़ (राजस्थान)



स्वर्गीय श्री पं० कृष्णप्रसाद जी त्रिवेदी
बी० ए० आयुर्वेदाचार्य

(जिन्होंने इस विशेषांक शृंखला के १ से ५ भाग तक का लेखन एवं सम्पादन १० वर्षों तक कठिन परिश्रम एवं अध्यवसाय से किया ।)

प्रकाशकीय निवेदन

वनौषधि-विशेषांक का यह छठा और अन्तिम भाग वैद्य समाज के समक्ष प्रस्तुत करते हुये हमको प्रसन्नता है। लगभग ३० वर्ष पूर्व स्वर्गीय श्री पं. कृष्णप्रसाद जी त्रिवेदी B. A, आयुर्वेदाचार्य ने वनौषधि-रत्नाकर नाम से वनौषधि विषयक विस्तृत साहित्य संकलित कर लिखना प्रारम्भ किया था उसे हम पुस्तक रूप में प्रकाशित करना चाहते थे लेकिन कतिपय कठिनाइयों के कारण उसे पुस्तक रूप में प्रकाशित नहीं कर सके। विषय अति उपयोगी तथा विशाल था अस्तु हमारी उत्कट अभिलाषा थी कि यह साहित्य अवश्य प्रकाशित किया जाय। कतिपय शुभेच्छुओं ने सत्परामर्श दिया कि इस साहित्य को धन्वन्तरि के विशेषांकों के रूप में क्रमश: प्रकाशित किया जाय। अस्तु, वर्ष १९६१ में वनौषधि-विशेषांक का प्रथम भाग प्रकाशित किया गया। इस विशेषांक को वैद्य समाज ने अत्यधिक पसन्द किया तथा हजारों प्रशस्ति पत्र प्राप्त हुए जिससे उत्साहित होकर आगामी भाग प्रकाशित करने का आयोजन किया गया। पंचम भाग के लिए इस साहित्य को लिखते हुए श्री त्रिवेदी जी जो उस समय लगभग ७५ वर्ष के थे अस्वस्थ हो गये और ५-६ माह बाद उनका स्वर्गवास हो गया। पंचम भाग का लगभग तीन चौथाई भाग ही वे लिख सके। उसके बाद का साहित्य श्री महात्मा [illegible] जी वैद्याचार्य देवगढ़ (राजस्थान) द्वारा संकलित करके लिखा गया है।

इन छः भागों में कुल ३१५५ पृष्ठों में १२९५ वनस्पतियों का 'अ'कारादि क्रम से विस्तृत वर्णन, उनके विभिन्न रोगों पर उपयोग तथा विभिन्न रोग नाशक अनमोल सरल-सफल प्रयोगों का विपुल भण्डार प्रकाशित किया गया है। इस साहित्य को चिकित्सक समाज ने तो पसन्द किया ही है, वनस्पति विज्ञान-वेत्ताओं ने भी इसको पसन्द किया है।

इस समय धन्वन्तरि १९००० की संख्या में प्रकाशित होता है अस्तु यह उपयोगी साहित्य सहज रूप में सभी आयुर्वेद संस्थानों एवं वैद्य समाज में पहुँच सका है। यदि हम इसे पुस्तक रूप में प्रकाशित करते तो इसका मूल्य भी कम से कम दुगना रखना पड़ता और उस दशा में पर्याप्त समय में ४-८ हजार की संख्या में ही निकल पाता। धन्वन्तरि के विशेषांकों के रूप में प्रकाशित करने के कारण ही यह विशाल तथा अत्युपयोगी साहित्य इतने अल्प मूल्य में हम वैद्य समाज को देने में समर्थ हुये हैं।

वनौषधि-विशेषांक का प्रथम भाग तीन बार छप चुका है, द्वितीय भाग दो बार छपा है, तीसरा भाग पुनः छप रहा है। चौथे तथा पांचवे भाग भी समाप्त होने को हैं। इन विशेषांकों की इतनी मांग इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है कि यह साहित्य चिकित्सकों के लिये अति उपयोगी है। हम सभी वैद्यों से आग्रहपूर्ण निवेदन करेंगे कि जिनके पास जो भी भाग न हों वे उन्हें शीघ्र मंगाकर इस साहित्य को अपने पास रखें और मनन करें। इसमें सैकड़ों हजारों सरल-सफल प्रयोग आपको मिलेंगे जिन्हें आप अपने चिकित्सा व्यवसाय में व्यवहार करके लाभ उठा सकेंगे।

—[illegible] मूल्य वृद्धि—

जाते हैं। अन्य व्यवस्था सम्बन्धी व्यय में भी उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है। इन सबसे ऊपर पोस्ट व्यय में अत्यधिक वृद्धि हो गई है। इन सभी कारणों से हमको धन्वन्तरि के मूल्य में पुनः १.०० की वृद्धि करनी पड़ी है। इस मूल्य वृद्धि को धन्वन्तरि के कृपालु ग्राहकों ने सहर्ष स्वीकार करते हुए उचित बताया है जिसके लिये हम आभारी हैं। आप विश्वास रखें कि हमने धन्वन्तरि प्रकाशन से आर्थिक लाभ न कभी किया है और न भविष्य में करेंगे। 'धन्वन्तरि' प्रकाशन का उद्देश्य आयुर्वेद का प्रचार तथा अपने कार्यालय की प्रसिद्धि मात्र है। हम अपने ग्राहकों से निवेदन करेंगे कि वे धन्वन्तरि के २-४ नवीन ग्राहक बनाकर हमारी सहायता अवश्य करें।

-लेखकों से निवेदन-

धन्वन्तरि को अधिकाधिक उपयोगी बनाने में आयुर्वेद विद्वानों एवं सम्माननीय लेखकों का सहयोग हमको बराबर मिलता रहा है तथा भविष्य में भी हमें उनके सहयोग की आशा है। लेखकों तथा विद्वानों के कृपापूर्ण सहयोग के आधार पर ही हम से वैद्य समाज की जो भी सेवा बन पड़ी है वह करते रहे हैं तथा करते रहेंगे। धन्वन्तरि को उपयोगी बनाने में आप भी अपना सहयोग व सुझाव अवश्य दीजियेगा।

-लघु विशेषांक-

सदैव की भांति इस वर्ष भी एक लघु विशेषांक 'आसवारिष्ट-निर्माण अङ्क' प्रकाशित किया जायेगा। इसका सम्पादन श्री दीनदयाल जी मिश्र कर रहे हैं। अभी एक लघु विशेषांक और भी प्रकाशित करना चाहते हैं। लेखकों से इस विषय में अपने सुझाव प्रस्तुत करने की प्रार्थना है। शीघ्र ही विषय निश्चित करके आगामी अङ्क में सूचना प्रकाशित करेंगे।

—निवेदक

ज्वालाप्रसाद अग्रवाल

[illegible] लघु विशेषांक

आसवारिष्ट निर्माण अंक

वनौषधि विशेषांक (छठवें भाग) की
विषयानुक्रमणिका





बनौषधि विशेषांक (छठवे भाग) की

चित्र सूची

डाक्टर हरनारायन "कोकचा" की सन् १९७१ में छपी एक और अनमोल भेंट

"अपटूडेट एलोपैथिक पेटेंट मैडिसन्स नवनीत चार्टस"

(पेटेंट औषधि विश्वकोष)

- यह ससार की हिन्दी की पहली पुस्तक है जिसमें सुप्रसिद्ध पेटेण्ट औषधियो का विशाल संग्रह किया गया है। पेटेण्ट औषधियो की एसी अनुपम पुस्तक "एशिया", "अफ्रीका" और "यूरोप" की किसी भी भाषा मे अब तक प्रकाशित नही हुई है।

- इस 'पेटेण्ट औषधि विश्वकोष" में लगभग तीन हजार (३०००) चार्टो मे इस पुस्तक के छपने तक की निकली लगभग दस हजार पेटेण्ट औषधियो का अत्यधिक विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। इससे लगभग दो हजार "एलोपैथिक", इजेक्शनो का अत्यधिक विस्तारपूर्वक विवरण दिया गया है।

- डा० "कोकचा" की इस "पेटेण्ट औषधि ज्ञान कोष" मे प्रत्येक सुप्रसिद्ध पेटेंट औषधि का नाम, बनाने वाली कम्पनी का नाम, मूल्य, पेटेंट औषधि का योग तथा निर्माण-विधि, विशेष गुण तथा उपयोग, मात्रा तथा सेवन विधि, प्रत्येक पेटेंट औषधि से होने वाले विपाक्त लक्षण और उनको दूर करने के उपाय तथा पेटेंट औषधि को सेवन कराते समय ध्यान मे रखने योग्य सम्पूर्ण बातो का अत्यधिक विस्तारपूर्वक वर्णन बिलकुल सरल हिन्दी मे दिया गया है इसी पुस्तक मे "अपटूडेट एलोपैथिक मिक्सचर गाइड चार्टस", "मोडरन सल्फा ड्रग्स चार्टस", "एण्टीबायोटिक चार्टस", "पेनीसिलीन चिकित्सा", "स्ट्रेप्टोमाईसीन तथा मोडरन इजेक्शन चार्टस" आदि कई पुस्तकें भी मिला दी हैं।

- "अपटूडेट एलोपैथिक पेटेण्ट मैडीसन्स नवनीत चार्टस" नामक बिलकुल नई पुस्तक मे कई सौ कम्पनियो के इगलिश मे छपे कई हजार विवरण पत्रो (पैम्फलेटो आदि) का निचोड सरल हिन्दी में दे दिया है। अंग्रेजी नही जानने वाले चिकित्सको, वैद्यो,हकीमो,कम्पाउण्डरो आदि के लिए यह पुस्तक एक "वरदान" सिद्ध होगी।

- यह पुस्तक "एलोपैथिक पेटेण्ट चिकित्सा नवनीत चार्टस" नामक सुप्रसिद्ध पुस्तक का "द्वितीय भाग" है। एलोपैथिक पेटेण्ट चिकित्सा" मे जिन औषधियो का वर्णन आधी या एक-दो लइनो में किया गया है, इस पुस्तक मे उन्ही तथा अन्य पेटेण्ट औषधियो का विवरण सुविस्तृत रूपेण किया गया है। यदि आपने "एलोपैथिक पेटेण्ट चिकित्सा नवनीत चार्टस" नामक पुस्तक में से किसी भी रोग की पेटेण्ट औषधि चुन ली है तो आप इस "अपटूडेट पेटेण्ट मेडिसन्स नवनीत चार्टस" मे से उसका पूर्ण विवरण पढ़ कर अपने रोगी को दवा दें ताकि आपकी दी हुई"पेटेण्ट दवा"की पहली खुराक ही गले के नीचे उतरते ही आपके रोगी को लाभ प्रतीत होने लगे।

- यदि आपके पास डा० "कोकचा" की "एलोपैथिक पेटेण्ट चिकित्सा नवनीत चार्टस" नामक पुस्तक है तो आप इस अनमोल पुस्तक को भी अवश्य ही मगवाने का कष्ट करे ताकि आपकी "अधूरी पुस्तक" पूरी हो जाये।

- तीन हजार के लगभग चार्टो से सजी, वढिया कागज पर छपी, सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल आठ रुपये है। डाक खर्च दो रुपये अलग। कमीशन काटकर नौ रुपये की वी० पी० होगी।

- इस अनमोल पुस्तक की थोडी ही प्रतिया छापी गई है। शीघ्रता कीजिए। नही तो अगले सस्करण के लिये लगभग दो साल इन्तजार करना पडेगा।

पता—साधना प्रकाशन [रजिष्टर्ड]

१७/१११ नई रोहतक रोड, नई दिल्ली—५

पाठकों से निवेदन

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ द्वारा निर्माण की जाने वाली प्रामाणिक विशुद्ध आयुर्वेदिक औषधियों, सफल प्रमाणित पेटेंट औषधियों, कार्यालय में प्रस्तुत विक्रियार्थ पुस्तके तथा 'धन्वन्तरि' के प्राप्य विशेषांकों का विवरण इस विशेषांक के अन्त में दिया गया है। पाठकों से निवेदन है कि वे उसे देखें तथा आवश्यकतानुसार औषधियां पुस्तकें आदि मंगाकर हमको सेवा का अवसर अवश्य दें। हम आपको विश्वास दिलाते हैं कि आप हमारी सेवाओं से संतुष्ट रहेंगे।

—व्यवस्थापक

धन्वन्तरि कार्यालय
विजयगढ़ (अलीगढ़)

खतौली—श्री वेदव्यास जी हितकारी औषधालय
नरकटियागञ्ज—जनता स्टोर्स मीनाबाजार
राठ (हमीरपुर)—नारायण आयुर्वेद कार्यालय
,, ,, श्री द्वारिकाप्रसाद गुप्ता एण्ड सन्स
,, ,, आदर्श मेडीकल औषधालय
मंडी बामोरा (सागर)—चन्द्रकुमार जी जैन
गुना (म. प्र.)—कस्तूरचन्द्र माडल
गौरीकरन (कानपुर)—बाबूराम जी बाजपेयी
किरावली (आगरा)—प्यारेलाल रामजीलाल
मछरेहटा (सीतापुर)—पं सेवकराम जी वैद्य
दूरा (आगरा)—ठाकुरदास जी अग्रवाल
गोपीगञ्ज (वाराणसी)—हरीशचन्द्र गणेशचन्द्र जी
भरारौली सुरेशपुर पो कुण्डासर—नरेन्द्र सिंह जी
दुबहा बाजार (गोंडा)—रामेश्वरप्रसाद सिंह जी
घुघली (गोरखपुर) - केशरचन्द्र जी गुप्ता
,, ,, शिव आयुर्वेदिक फार्मेसी
गन्न (नन्नल)—रामसिंह नरेशकुमार जी
जरवल रोड (बहराइच)—पुत्तूलाल फूलचन्द जी
अम्बाला—श्री चन्द्रकमल औषधालय, अनाजमंडी
गोड्डिया—श्री डा अम्बरनाथ शर्मा
टावर (आगरा)—कैलाशचन्द्र अग्रवाल
बागडीह (बलिया) वैद्य परीक्षण सिंह जी
रीगा (मु. पुर) श्री सुमित्रा स्टोर्स
मांगरोल (कोटा) श्री गोपीलाल रामचन्द्र
उन्नाव—प बालगोविन्द गया प्रसाद
हट्टा (बालाघाट)—श्री पीताम्बरदास प्रभाकर
फिरोजाबाद—श्री कस्तूरचन्द्र जैन वैद्य
हविलिया पो साफर (इटावा)—श्री सुरेन्द्रनाथ त्रिपाठी
गोंटा—राजपूत औषधालय, गोलागंज
नजीबाबाद(बिजनौर) श्री लाजपतराय गुप्ता
रायभा (आगरा) श्री गोपाल ए वी डिस्पेंसरी
गरैना—श्री गोवरधनदास जी
,, श्री परमानन्द वैद्य
अमरावती—श्री सुगन्धि स्टोर्स
भदवारी (इलाहबाद) श्री अवधनारायण त्रिपाठी
अमरवाडा (छिंदवाडा)—श्री सोधी मेडीकल स्टोर्स
फतहपुर सीकरी (आगरा)—श्री रामचरनलाल

शाहाबाद (कोटा)—श्री जैन मेडीकल स्टोर्स
बगवार (आगरा)—श्री प विजेन्द्र सिंह जी
महाराजगञ्ज (वाराणसी) सावित्री मेडीकल स्टोर्स
दुर्ग—श्री गुलाबचन्द्र बजाज
,, श्री पार्वतीपति औषधालय कोष्टा पारा
मुरादाबाद—श्री मुकुन्दराम रामभरोसे
कमासिन (बांदा)—श्री बसंतलाल जगन्नाथ प्रसाद गुप्ता
,, ,, —श्री वासुदेव पाण्डेय
मऊरानीपुर (झांसी)—श्री नवलकिशोर बवेले
झांसी—डा. हरीराम जी सुन्दरानी
सीतापुर—श्री सोमनाथ आयुर्वेदिक फार्मेसी,
जसपुर (बांदा)—श्री डा शिवनारायण सिंह जी
चौमुहां (मथुरा)—श्री भगवानस्वरूप एण्ड सन्स
उत्तरीपुरा (कानपुर) श्री सतीश मेडीकल स्टोर्स
जालौन—श्री पुरवार आयुर्वेदिक स्टोर्स
उनवल (गोरखपुर)—श्री शिवराम जी गौड उर्फ पूजन
बबराला (बदायूं) श्री विनोदकुमार जी विजय
शिवहर (मु. पुर) श्री प त्रिभुवन पाठक
मडौला (हरदोई) श्री वैद्य शिवप्रसाद त्रिपाठी
रींगस (सीकर)—मे जांगिड मेडीकल स्टोर्स
गिहोरा (भंडारा)— श्री रमेशकुमार एण्ड सन्स
बिसंडी (बांदा)—श्री इन्द्रपाल रामपाल कुसवाहा
जलेसर (एटा)—श्री कृष्णा मेडीकल स्टोर्स
बेवर (मैनपुरी)—प विष्णुदयाल शुक्ल जैन
भौरी (बांदा)—मिश्रा आयुर्वेदिक फार्मेसी
रसूलाबाद (कानपुर)—श्री सुरेन्द्र मेडीकल स्टोर्स
सिकन्दरपुर(फरुखाबाद)—श्री जमुनाप्रसाद रामशरणलाल
कुफरी (मंडी) हि प्र—श्री देवीसिंह बगड़पाडा
बरौत (इलाहबाद)—श्री हीरालाल सीताराम
कादीपुर (सुलतानपुर)—श्री रामचन्द्र जी वैद्य
कमालपुर (वाराणसी)—श्री बलभद्रप्रसाद रामजीप्रसाद
जहांगीराबाद (बदायू)—डा विद्यास्वरूप गांधी
इस्माइलपुर (भागलपुर)—श्री जनता स्टोर्स
इटाढी (आरा)—श्री रामसुन्दरशाह रामनरायणशाह
औरैया (इटावा)—श्री कुशवाहा मेडीकल स्टोर्स
केकड़ी (अजमेर)—श्री किशोरीलाल कृष्णकुमार व्यास
ढकिया (रामपुर)—श्री दौलत सिंह वैद्यराज
गदरपुर (नैनीताल)—गुप्ता मेडीकल हाल
बासगांव (आजमगढ)—प. रामानुग्रह शर्मा

सुरेशचन्द्र मीतल

जमुआ (मिर्जापुर)–श्री किशोरीलाल राधेश्याम
कोडा जहानावाद (फतेहपुर) प. चन्द्रिका प्रसाद त्रिपाठी
पंडरिया (विलासपुर)–मै सलूजा जनरल स्टोर्स
लोरमी (विलासपुर)–श्री अग्रवाल जनरल स्टोर्स
खदलहाट [मिर्जापुर]–श्री राजेश मैडीकल हाल
सीकर–श्री रामा ड्रग स्टोर्स
रसधान [कानपुर]–डा राजाराम गुप्ता
भुञ्जपुरा [मुरैना]–श्री सावलदास रामसेवक गर्ग
माधौगढ [जालौन]–मै ववलू मैडीकल स्टोर्स
अटसू [इटावा]–श्री अजोध्याप्रसाद जगदीश नारायण
धनौरी [हमीरपुर]–श्री नाथुराम जी गुप्ता वैद्य
सिकन्दरा [कानपुर]–श्री अक्षय मैडीकल स्टोर्स
किच्छा [नैनीताल]–श्री रामसिंह वैद्य
दिवली [कानपुर]–श्री देवीचरण जी आर्य
सफीपुर [उन्नाव]–श्री कृष्ण मैडीकल स्टोर्स
गुनई पो हट्टा[वालाघाट]—श्री पाडुरग टीकाराम शेलवटे
थान खमरिया—श्री सन्तोष मैडीकल स्टोर्स
शक्ति [विलासपुर]—श्री केदारनाथ महावीर प्रसाद
नैली (गया)—श्री गुप्ता आयुर्वेद भण्डार
तेहरा [आगरा]—श्री कैलाशचन्द्र जी गर्ग
" " श्री ओम प्रकाश शर्मा
वेहरावल [शाजापुर]—कु प्रेमनारायण लवें
अकलेरा [झालावाड़]—श्री दुलीचन्द्र कैलाशचन्द्र जैन
तूमडा [नरसिंहपुर]—श्री गोपाल प्रसाद पचौरी
मालेगाव कैम्प [नासिक]—श्री चन्द्रलाल नत्थूलाल
हिंडौन [स माघोपुर]—श्री चिमनराय पीरूराम
मल्हीपुर पटना [वहराइच]—प. काशीराम शर्मा
धमतरी [रायपुर]—श्री शिवनारायण गुप्ता
दौसा [जयपुर]—राजेन्द्र मैडीकल स्टोर्स
घुमरी [एटा]—डा. सतीशचन्द्र गुप्ता
मडला फोर्ट—न्यू मैडीकल एण्ड जनरल स्टोर्स
कुडा [प्रतापगज]—श्री महावीर प्रसाद कैलाशनाथ
शेरवा अहरोरा [मिर्जापुर]—श्री अशोकमैडीकल हाल
विधूना [इटावा]—श्री कैलाशसिंह सेंगर
अगवानपुर [मुरादावाद]–वैद्य महेशचन्द्र गुप्ता
कुडासर [वहराइच]–डा रामेश्वर प्रसाद जी
रूपवास [भरतपुर)—श्री विरजवलाल हरिश्चन्द्र

कुरावली [मैनपुरी]—ओउम् औषधि भण्डार
मेहगाव [भिण्ड]–श्री के एल श्रीवास्तव
अछनेरा [आगरा]—श्री डा. [illegible] जी शर्मा
वेल पहाड [सम्बलपुर]–श्री [illegible] जनरल स्टोर्स
गण्डार [स माधोपुर]—श्री रमेश मेडीकल स्टोर्स
वेतिया [चम्पारन]—श्री [illegible] शर्मा
ऊचाहार [रायवरेली]–श्री रामनरायन गुप्ता
राजगागपुर [उडीसा]–श्री प. नथमल जी शर्मा
वलागीर [उडीसा]—श्री हरियाणा स्टोर्स
वेला [इटावा]–सैनी मैडीकल स्टोर्स
जय के नगर [वर्दवान]—श्री अर्जुन प्रसाद
देवरी [भोपाल]—सेठ मुरलीधर अवधेशकुमार
छुई खदान [दुग]—साधना मैडीकल स्टोर्स
भरोच–वैद्य एम आर मेहता नवादेरा
सीकरी [भरतपुर]–विमल प्रसाद शीतलप्रसाद जैन
सायन [सूरत]—श्री के के शर्मा
वार—अत्तार वावूलाल धारावाला
हैदरावाद–मै विजय फार्मेसी
अकुआ वाजार [इलाहावाद]–श्री नागम आयु स्टोर्स
सैंया [आगरा]–श्री प्रभूलाल जी वैद्य
दूडला [आगरा]—श्री उन्द्रसैन जैन वैद्य
रमसा पो० महामिर [शाहजहापुर]—श्री मुरारीलाल जैन
उल्दन [झांसी]—श्री हरदास राघवेन्द्र जी रेजा
मुगलसराय [वाराणसी] श्री जगन्नाथराम पारसनाथ वैद्य
सिरोज [विदिशा]—वैद्य हुकम चन्द विजयकुमार जैन
डवौरा पो तरीचर कला -श्री वावूलाल भगवतनारायण जैन
अम्वालाकैंट–श्री चन्द्रकमल औषधालय
कुरसहा [वहराइच]—श्री तुलसीराम वैद्य
वरेली–श्री रामेश्वरदयाल जी शर्मा
शिवली [कानपुर]–डा रामसनेही कटियार D I M S
तखतपुर [विलासपुर]–श्री गुप्ता मैडीकल एण्ड जनरलस्टोर्स
विलगाव [हमीरपुर]—श्री प्रेमचन्द्र पाठक
सतूधार [पौढी]—श्री मानसिंह आर्य वैद्य
कटरावाजार [गौंडा]—श्री वाके विहारी रस्तोगी
पिपरिया [होशगावाद]—श्री राजोरिया औषधालय
शिवली [कानपुर]–श्री कृष्ण औषधि मण्डार
वार [झांसी]—वैद्य रामचरण स्वर्णकार

यदि आपके यहां हमारी एजेन्सी नही है तो शीघ्र ही सूचीपत्र तथा एजेन्सी नियमावली मंगाकर एजेन्सी ले लीजिएगा अथवा स्थानीय दवा विक्रेता को एजेन्सी लेने को उत्साहित करें।

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ [अलीगढ़]

प्रकार के रोग आराम हो जाते हैं। यदि [illegible] में पढ़ा जाये तो भूत, प्रेतादि नहीं सतावें। [illegible] आराम हो जावे। अबकी संस्करण में अनेकों प्रकार कवच दिये गये हैं और [illegible]। पुस्तक मंगाकर देखिये मूल्य २ रु।

७. हनुमत्पाठ

इस छोटी सी पुस्तक में हनुमान जी के प्रकट करने के तीन महा मन्त्र हैं व हनुमान चालीसा, बजरङ्ग बाण, हनुमत्सन्ध्या वन्दन जिसके पाठ करने से तीनों काल की बातें मालूम हो जाती हैं। हनुमान जी का प्रातःकालीन भजन व हनुमान जी की बहुत सी स्तुतियां हैं। पुस्तक अन्त मे हनुमान जी की आरती देकर समाप्त की गई है। मूल्य १ रुपया।

८. रागुणौती

इस पुस्तक मे सगुण निकालने के अनेकों चक्र बने हुये हैं। मन में मनकामना रखकर तथा भगवान का ध्यान धरकर दूब चक्र पर धर दीजिए जो शुभ और अशुभ होने वाला होगा निकल आवेगा। घर कैसे स्थान मे बनाना चाहिये, कौन वृक्ष घर के निकट रहने मे हानि पहुँचाता। कौन मुख दरवाजा रहने से क्या फल देता है। दरवाजे के दाये या बायें तरफ कितनी जमीन छोड़नी चाहिये, विवाह, रोखसती (द्विरागमन) आदि विषय बहुत अच्छे प्रकार से बताये गए हैं। इसे प्रत्येक गृहस्थ को रखना चाहिए। मूल्य ५.७५।

वर्ष १९७२ में

धन्वन्तरि मुफ्त मंगावें

धन्वन्तरि के जो भी ग्राहक—

(१) १ मार्च १९७१ से ३० नवम्बर १९७१ तक

(२) धन्वन्तरि कार्यालय द्वारा निर्मित औषधियां

(३) धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ (अलीगढ़) से

(४) १ बार में १४१) की
या २ बार में १७१) की
या ३ बार में २०१) की

मंगा लेंगे, उनको वर्ष १९७२ में धन्वन्तरि मुफ्त दिया जायगा।

नियमों को भली प्रकार समझ लीजियेगा—

१—वर्ष १९७१ में जो 'धन्वन्तरि' के ग्राहक हैं वही सज्जन उपर्युक्त विज्ञप्ति के अनुसार औषधियां मंगाकर वर्ष १९७२ में धन्वन्तरि मुफ्त प्राप्त कर सकेंगे।

२—जो सज्जन 'धन्वन्तरि' के ग्राहक नहीं बन सके हैं और १ मार्च १९७१ के बाद औषधियां मंगाकर उपर्युक्त नियम की पूर्ति कर दी है तो वे ३० नवम्बर १९७२ से पहिले ही वर्ष १९७१ के लिए धन्वन्तरि के ग्राहक बन कर वर्ष १९७१ में धन्वन्तरि मुफ्त प्राप्त कर सकेंगे।

३—इसकी पृष्ठ पर एक तालिका छपी है उसे भर कर १५ दिसम्बर १९७१ से पहिले-पहिले जब भी नियमों की पूर्ति हो जाय कार्यालय को भेजना आवश्यक होगा। तालिका मिलने पर उसकी जाच करके नियमों की पूर्ति हो गई है तो आपका पता वर्ष १९७२ के निःशुल्क ग्राहकों में लिख कर आपको सूचना दी जायगी।

४—१ मार्च १९७१ से पहिले के या ३० नवम्बर १९७१ के बाद के बिलों पर यह रियायत कदापि नहीं दी जायगी।

५—जो सज्जन इसके पृष्ठ पर छपी तालिका भर कर १५ दिसम्बर १९७१ से पहिले-पहिले भेज देंगे उनको ही [उक्त नियमों की पूर्ति होने पर] वर्ष १९७२ में धन्वन्तरि मुफ्त दिया जा सकेगा। अस्तु तालिका (फार्म) भर कर भेजने का उत्तरदायित्व ग्राहक पर है।

तालिका

जो १५ दिसम्बर १९७१ से पहिले-पहिले भेजनी होगी



श्री व्यवस्थापक—
धन्वन्तरि कार्यालय
विजयगढ़ जिला अलीगढ़

आपकी विज्ञप्ति के अनुसार मैं—
१ बार में १६१ ०० की
२ बार मे १७१ ०० की
३ बार मे २०१ ०० की

जो मे से जो दो अना-
वश्यक हो उन्हें काट दीजियेगा

औषधियां मंगा चुका हूं जिसका विवरण नीचे लिखा है। अपने यहां जांच करके मेरा पता वर्ष १९७२ के निःशुल्क ग्राहक रजिस्टर मे लिख लें और ग्राहक संख्या की सूचना दें।

	विष	दिमाग विष	औषधियों का मूल्य	वी० पी० छुड़ाने की तारीख	विवरण
प्रथम बार					
द्वितीय बार					
तृतीय बार					

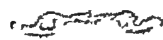
आपका पूरा नाम वर्ष १९७२ के लिए निःशुल्क ग्राहक रजिस्टर में नं० ... पर चढ़ा लिया गया है।
हस्ताक्षर ... ... व्यवस्थापक
दिनांक..............

मेरा पूरा पता..
....
....

धन्वन्तरि ग्राहक संख्या ....

धन्वन्तरि के ग्राहक

बनने के नियम



१—धन्वन्तरि का वार्षिक-शुल्क पोस्ट व्यय सहित ८.५० है। विशाल-विशेषांक ग्लेज कागज पर छपा प्राप्त करना चाहें तो वार्षिक-शुल्क ६.५० देना होगा।

२—धन्वन्तरि के ग्राहकों को हरसाल एक विशाल विशेषांक तथा एक लघु-विशेषांक भेंट किया जाता है। वर्ष १९७१ का विशाल-विशेषांक "वनौषधि-विशेषांक छटा भाग" आपके हाथ में है।

३—वर्ष जनवरी से प्रारम्भ होकर दिसम्बर में समाप्त होता है। पूरे वर्ष के लिए ही ग्राहक बनाये जाते हैं। ग्राहक किसी भी समय बने जनवरी से उस समय तक के अङ्क भेज कर जनवरी से ही ग्राहक बना लिये जाते हैं, और उनका वर्ष भी दिसम्बर में समाप्त हो जाता है।

४—वार्षिक शुल्क मनीआर्डर से भेजना सुविधाजनक होता है किंतु यदि चाहें तो अङ्क-विशेषांक [illegible] द्वारा भी ग्राहक बना लेंगे। खर्चा दोनो प्रकार समान होता है।

५—नए ग्राहक मनीआर्डर से वार्षिक शुल्क भेजते समय कूपन में अवश्य लिख देना चाहिए कि नए ग्राहक बन रहे हैं।

६—[illegible] भाग का मूल्य १०.०० है लेकिन वर्ष १९७१ के ग्राहकों को वार्षिक शुल्क में ही [illegible] अन्य अङ्कों के साथ दिया जायगा।

७—धन्वन्तरि के ग्राहकों से हम साग्रह निवेदन करते हैं कि वे धन्वन्तरि के अधिक से अधिक नवीन ग्राहक बनावें। धन्वन्तरि की ग्राहक संख्या जितनी बढ़ेगी हम धन्वन्तरि को उतना ही अधिक उपयोगी और विशाल बनाने की क्षमता प्राप्त कर सकेंगे। अस्तु आपसे निवेदन है कि आप भी २-५ ग्राहक अवश्य बनाने का प्रयत्न कीजिएगा। ग्राहक बनने के लिये किसी आर्डर फार्म की आवश्यकता नहीं है। वार्षिक शुल्क मनियार्डर से भिजवादें या पूरा पता लिखते हुए अङ्क-विशेषांक वी० पी० से भेजने की आज्ञा दें। इस समय नवीन ग्राहक बनाने पर कोई उपहारी योजना नहीं है। यह कार्य तो आपको अपने प्रिय धन्वन्तरि की उन्नति की कामना से ही करना है।



आयुर्वेद का अग्रगामी

भाग ३८
अंक २

वनौषधि विशेषांक
भाग छठवां

१९७१

अत्तीमवं कुसुमपत्र फलानलीनां धर्मव्यूथं प्रकृति ...
यो देहसर्पयति धन्य सुराश्च हेतोरततं ... शुभ्रे ... ॥

औषधियां हमारा कल्याण करें

शिवास्ते सन्त्वोषधय उत त्वाहार्षमधरस्या उत्तरां पृथिवीमभि ।
तत्र त्वादित्यौ रक्षतां सूर्या चंद्रमसाविव ॥

—अथर्व वेद काण्ड ८ ना । २

ओषधियाँ शिवमय हो तुमको,
अन्तरिक्ष भूलोक सभी ।
सूर्य चन्द्र जल पवन आदि भी,
सुखमय रक्षक बनें सभी ॥
मानव ! तुम दीर्घायु प्राप्त कर,
मृत्युपाश से बचे रहो ।
तेजस तत्व तुम्हारे भीतर,
पाप पंक से खिंचे रहो ॥

—आचार्य वेदव्रत शास्त्री, ... (...)



यूकेलिप्टस (Eucalyptus Globulus)

यह जम्ववादि कुल (Myrtacae) का एक बड़ा ऊचा वृक्ष होता हे । तना साफ सफेदी लिये हुये, जिसका काण्ड स्कन्ध काफी ऊचा तथा सरल होता है । काण्ड त्वक लम्वे लम्वे तथा कागज सदृश पतले पर्नों मे उतरती है, जिसके बाद वृक्ष काण्ड सर्वत्र नीलाभ श्वेत, चमकीला एव चिकना मालूम होता है ।

पत्र—करवीर के समान लम्वे, पीले, सफेदी मायल हरे, चमकीले और सुगन्धदार २०—२५ से० मी० या ८ से १० इच की लम्वी रूप रेखा मे हसिया सदृश, सवृन्त होते है । शाखाओ एव छोटे वृक्षो के पत्र अपेक्षाकृत छोटी रूप रेखा मे, कुछ हृदयाकार तथा अवृन्त होने है । पत्रो मे तेल बिन्दु पाये जाते हैं, जिससे इनको मसलने पर यूकेलिप्टस के तेल की भाति उग्र सुगन्धि आती है । व्यावसायिक एव औषधीय यूकेलिप्टस आयल (Eucalyptus oil) इन्ही पत्रो से प्राप्त होता (किया जाता) है ।

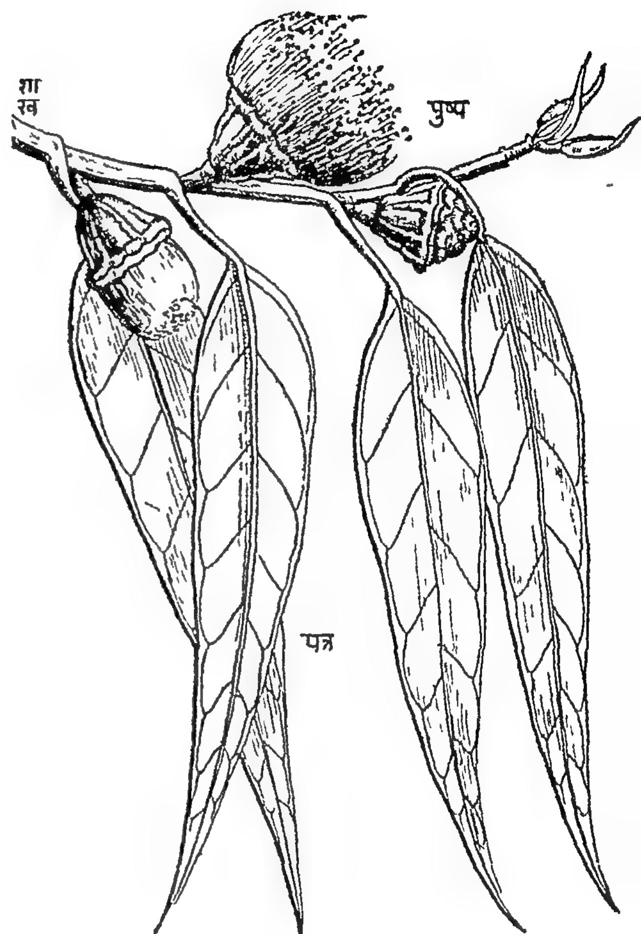
पुष्प—बडे तथा पत्र कोणो मे १ से ३ की सख्या मे निकलते है, जो प्राय अवृन्त या छोटे वृन्त युक्त होते है ।

फल—१ ५ से २ ५ से० मी० या ½ से १ इच व्यास के कोणाकार होते हैं, जिनका स्फुटन ढक्कन के रूप मे होता है । विशेष जानकारी के वास्ते चित्र अवलोकन कीजिये ।

विशेष—यूकेलिप्टस की लगभग ३०० जातिया है । इसमे से अधिकतर का काष्ठ अथवा इमारती लकडी [टीम्बर] के लिये प्रसिद्ध है । इसमे से केवल २५ जातियो से ही यूकेलिप्टस तेल मिलता है । इसमे की मुख्य मुख्य जातिया निम्न है—

1	Eucalyptus	globulus
2	,,	lumosa
3	,,	sideroxylon
4	,,	leucoxylon
5	,,	elaeophora

इस वृक्ष की जन्म भूमि आस्ट्रेलिया है और आज भी वहा की वनस्पतियो मे ७५% सख्या इस वृक्ष की है ।



युकलिप्टस
EUCALYPTUS GLOBULUS LABILL.

यूकेलिप्टस तेल ताजा पत्तो से और वृक्ष के शिरे पर जो शाखाये आयी हुई होती है उनमे से निकाला जाता है । तेल का बडा भाग सावुनो को सुगन्धित करने मे इस तरह कितने धातुओ से शुद्ध (Mineral sulphides) प्राप्त करने के लिये काम मे लाया जाता है । दवाइयो मे भी तेल का खूब प्रयोग होता है । नीलगिरी मे अपढ लोग पान मे से तेल सादे तरीके से खीच लेते है और उसका क्रय कर देते है ।

उत्पत्ति स्थान–

यूकेलिप्टस आस्ट्रेलिया का आदिवासी वृक्ष है। आज यह वृक्ष भारत मे सर्वत्र होता है। विशेषकर के दक्षिण भारत मे नीलगिरी, अन्नमलाई एव पालनी की पहाडियो मे ५,००० से ८३०० फीट की ऊचाई पर बहुतायत से मिलते है। शिमला मे ४००० से ७००० फीट की ऊचाई पर और शिलाग आसाम मे इसके अतिरिक्त उद्यानो एव सडको के किनारे इसके वृक्ष सौन्दर्यार्थ लगाये हुए मिलते है। लखनऊ के राष्ट्रीय वानस्पतिक उद्यान मे इसके कई वृक्ष लगाए हुए मिलते है।

नाम–

स०—एकलिप्तो, मत्रयजो, मतङ्गो, दूरदर्शन, अभ्रलिहो, सूक्ष्मपर्णी, गन्धी, गिरिज वान्धव, दुर्वाष्य हरण, श्रीद, सर्व्वतो भद्र। (आयुर्वेद विज्ञानम्) हि०—एक लिप्र, यूकेलिप्टस। गु०—नीलगिरी तेल। ता०—कर्पुरा मरम्। मलयाली—कर्पुरा मरम्। ले०—(Eucalyptus globulus, Ladill) यूकलिप्टस ग्लोब्युलस।

रासायनिक संगठन–

यूकेलिप्टस तेल मे मुख्यत सिनिओल या यूकेलिप्टोल लगभग ६२%, पाइनीन्स २४%, सेस्क्विटपीन अल्कोहल्स ५% तथा इसके अतिरिक्त अल्प मात्रा मे अन्य एल्डिहाइडस एव अल्कोहल्स पाये जाते है।

वर्णन —रासायनिक दृष्टि से यह एनहाइड्राइड आफमेथान १ ८ होता है। यह यूकेलिप्टस तैल का प्रधान उपादान होता है। यूकेलिप्टस एक रङ्गहीन द्रव होता है, जिसमे एक विशिष्ट प्रकार का द्रव्य पाया जाता है। यथा किंचित कर्पूर सदृश गध भी आती है। स्वाद मे तिक्त एव शैत्यजनक होता है।

विलेयता—यह दो भाग अल्कोहल (७०%) मे विलेय होता है।

प्रयोज्याङ्ग— तैल और पत्र।

चिकित्सा मे मुख्यतया इसके तैल (यूकेलिप्टस का तैल) का प्रयोग किया जाता है। वैसे पत्र का कही कही औषधार्थ उपयोग होता है।

मात्रा—पत्र चूर्ण ४ से १० रत्ती। तैल १ से ३ बूद।

यूकेलिप्टस का तैल—

यूकेलिप्टस नामक वृक्ष की विभिन्न प्रजातियो के ताजे पत्रो से प्राप्त किया जाता है। पत्रो का परिस्रवण करने से तैल निकलता है। तैल प्राप्त करने के लिये मुख्यतया यूकेलिप्टस ग्लोब्युलस के पत्रो का व्यवहार किया जाता है। इस प्रकार से प्राप्त (निकले) उत्पन्न तैल को यूकेलिप्टस का तैल कहते हैं।

शुद्धाशुद्ध परीक्षा—

यूकेलिप्टस का तैल—एक उडनशील, रङ्गहीन अथवा पीताभवर्ण के द्रव के रूप मे प्रयुक्त होता है, जिसमे एक विशिष्ट प्रकार की उग्र सुगन्ध पायी जाती है, जो कुछ-कुछ कर्पूर से मिलती जुलती है। स्वाद मे यही तीक्ष्ण तथा कर्पूर सम होता है और बाद मे मुख शैत्य का अनुभव होता है।

विलेयता—जल मे अत्यल्प मात्रा मे घुलनशील है, किन्तु तेलो, वसा एव डिहाइड्रेटेड अल्कोहल मे अच्छी तरह घुल जाता है। अल्कोहल ८०% की बराबर मात्रा मे भी घुलनशील होता है। आपेक्षिक घनत्व १५० पर ०.९०-६५ से ० ९१६५ होता है।

परावर्तन तालिका—१ ४५८० से १ ४७०० होता है। आप्टिकल रोटेशन ५ से १० तक होता है।

सग्रह एवं सरक्षण—

यूकेलिप्टस तैल को अच्छी तरह मुख बन्द पात्रो (स्टापर्ड बोतलो) या शीशियो मे, ठण्डे एव अधेरे कमरे में रखना चाहिये।

वीर्य कालावधि—तैल का दीर्घकाल तक औषधार्थ प्रयोग किया जा सकता है।

गुण-धर्म और प्रयोग–

रस—कटु, तिक्त, कषाय। गुण—लघु, स्निग्ध, तीक्ष्ण। वीर्य—उष्ण। विपाक—कटु। दोषकर्म—कफवात शामक। कर्म—(अ) वाह्य—जीवाणुवृद्धि रोधक (जतुघ्न), जीवाणु नाशक।

(ब) आभ्यन्तर—उत्तेजक, वेदना स्थापन, कफघ्न, ज्वरघ्न, श्लेष्मक्षतिहर, मूत्र जनन, स्वेद जनन, प्लीहा-सकोचक ।

"हरि द्रुमोज्वर हरः कीट मर्दश्च तिक्तकः । कफ पित्तहर-स्तिक्त सुगन्ध पूति नाशन । वल प्रदोरुचिकरो, क्षताक्षेप विनाशन. ॥ जीर्ण दुर्वाष्पि विषम ज्वर हृत काम शूलनुत् । तैलं दुर्गन्ध हरण पत्रं सर्वरुजापहम् । संपर्कादस्य नश्यंति सर्वे रोगा' न संशय ॥"

नीलगिरी मे खूब कृपि द्वारा पैदा हुआ है, इससे मलयज । यह गगन चुम्वी (अभ्र लिहो) आकाश के साथ बाते करने वाला तथा वहुत ऊँचे वृक्ष होते है, इससे दूर से ही जाने जाते हे । जहा इसके वृक्ष होते है तहा Mal-air दुष्ट गन्ध नही रहती है । क्षय रोग और अन्य आरोग्य गृहो के आस-पास इसके वृक्ष खूब लगाये जाते है । इसके वृक्षो के सम्पर्क से सर्व रोगो का नाश होता है । इस प्रकार कविराज जी इसके गुणो पर मुग्ध हुये है । नवीन वनस्पि-तियो को इस पद्धति से सस्कृत मे ग्रहण कर ही लेना चाहिए । कफ मे दुर्गन्ध आती हो उसमे दुष्टपीनस मे, इन्फल्युएन्जा मे, प्रतिश्याय मे, यूकेलिप्टस का तैल अत्यन्त लाभकारी सिद्ध हुआ है। पाइमिया, सेप्टीसिमिया और प्रसूत ज्वरो मे ५ बूद की मात्रा मे यह उत्तम औषधि मानी गयी है। विपमज्वर, ताप, प्लीहावृद्धि को रोकता है । किन्तु यह उक्त रोगो मे क्वीनाइन से वढिया काम नही करता है । पाचक और वातघ्न रूप मे या मल मे खराब वदवू आती हो ऐसे अजीर्णातिसार मे यह उपयोगी है ।

छोटे मल के कृमियो को मारने के लिये इस-तैल की गुदा मे पिचकारी दी जाती है । युकेलिप्टस तैल इन्फल्यु-ऐन्जा मे वहुत उपयोगी कार्यकर है । इस तैल की २-३ बूदे शक्कर अथवा वतासा ऊपर अथवा मधु मे डाल करदेवे ।

शुद्ध मधु यह मिलाकर "Eucalyptus honey" नाम देकर वेचा जाता है । किन्तु वच्चो की सर्दी के रोगो मे यह मधु काम मे भी लाया जाता है । (राखालदासघोष)

(नि आ से साभार)

उपयोग-

मालिस के लिये प्रयुक्त वायुनाशक तैलो मे यूकेलिप्टस का तैल भी मिलाया जाता है । पार्श्वशूल, सधि शोथ आदि मे सर्षप तैल के साथ यूकेलिप्टस का तैल मिलाकर मालिस करवाने से गम्भीर शोथ का विलयन तथा वेदना का शमन होता है । प्रतिश्याय, जीर्णकास एव दुर्गन्धित ष्ठीवन मे रुमाल पर तैल छिडक कर सूघते है अथवा यूकेलिप्टस के पत्रो का फाण्ट(पत्र चूर्ण १ तोला को २० गुने उवलते जल मे डालकर १० मिनट वाद उतारकर छान ले) देते है । व्रण शोधनार्थ भी इसके तैल को पचगुण तैल आदि योगो मे मिलाते है ।

पाश्चात्य मतानुसार—

यूकेलिप्टस के तैल का वाह्य प्रयोग त्वचा पर करने से अन्य उडनशील तैलो की भाति उत्तेजक, रक्तिमा या लाली पैदा करने वाला तथा प्रतिक्षोभक होता है। इसके अतिरिक्त यह साधारण जीवाणु वृद्धि रोधक तथा दुर्गन्ध नाशक भी होता है । इस क्रियाहेतु इसका प्रयोग प्रतिश्याय तथा इन्फल्युएन्जा की प्रारम्भिक अवस्थाओ मे आघ्राणन के रूप मे किया जाता है ।

एतदर्थ उष्ण जल मे यूकेलिप्टस का तैल, मेथाल एव टिक्चर वेन्जोइन मिलाकर उससे उत्पादित वाष्प (निकलने वाले वाष्प) का आघ्राणन किया जाता है ।

जुकाम या प्रतिष्याय तथा गले की खरावी (स्वरभग) आदि मे सत पिपरमिन्ट (मेथौल) के साथ वनी हुई मुख-चक्रिकाओ को मुख मे रखकर चूमते है । यूकेलिप्टस का तैल या इसके साथ अन्य उपयुक्त औषधिया मिलाकर उसका आघ्राणन श्वसन सस्थान के अनेक रोगो मे उपयोगी पाया जाता है । अतएव उष्ण जल मे यूकेलिप्टस का तैल मिलाकर भाप का आघ्राणन श्वास नलिका शोथ, कुकुर एव प्रतिष्याय मे किया जाता हे । इसका प्रयोग सीकर यत्र (Atomiser) के द्वारा भी कर सकते है ।

(सचित्र आयुर्वेद)

विशेष—इस तैल का उपयोग उदर सेवन और वाहर लगाने मे दोनो प्रकार से होता है । इसमे पूतिहर (Antiseptic)गुण महत्व का है, फिर भी स्थानिक उग्रता उत्पन्न कराने के लिये जितना चाहिये उतने परिणाम मे मर्यादा तोडकर इसका उपयोग नही किया जाता है। इसे स्राव

इसे अच्छी तरह से बन्द बरतनो मे रखना चाहिये। यह सूखा मंजन है, परन्तु यदि रांगे की चिपकने वाली नलिकाओं में भर कर बेचना हो, तो इसमें आवश्यकतानुसार पानी मिलाकर गीला कर लेना चाहिये।

(गैलीपैथिकसार व सिद्ध प्रयोग संग्रह से साभार)

विशिष्ट योग–

१ अर्क पुदीना। २. नेवुला यूकेलिप्टोलिस कंपोजिटा। ३ वेपर्मेथालिस एट यूकेलिप्टाइ। ४. नेवुला यूकेलिप्टाइ। (बी पी सी) ५ अगवेण्टम यूकेलिप्टाइ। (आइ पी सी)

(सचित्र आयुर्वेद से साभार)

रक्त चन्दन–देखिये–भाग ३ पृष्ठ ४१ पर चन्दन लाल

रक्त रोहिड़ा न. १ (Tecomella undulata)

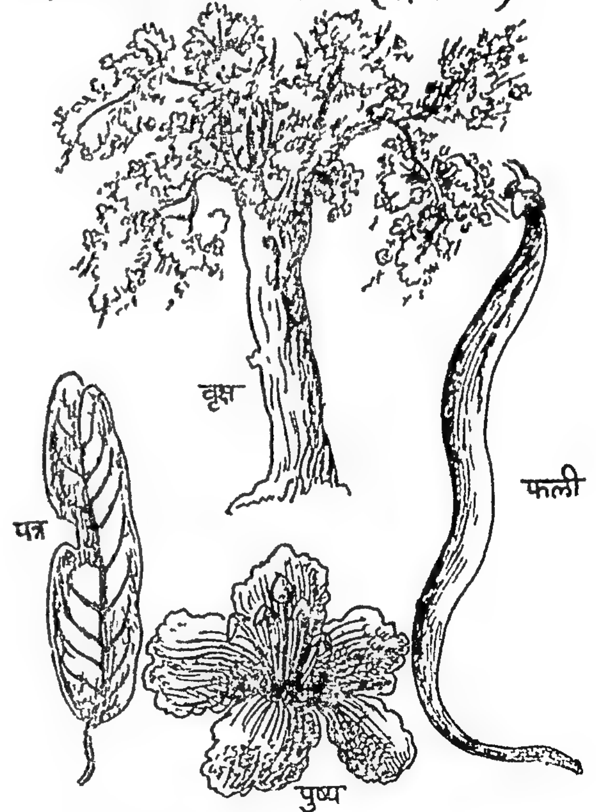
यह बटादि वर्ग और सोनकादि कुल (Bignoniaceae) का वृक्ष मध्यम कद का होता है। इसकी ऊंचाई १० से २५ फुट तक होती है। इसमें मोटी शाखायें कम किन्तु पतली-पतली शाखायें बहुत निकली हुई होती हैं। शाखायें सीधी और अक्सर ऊंची चढी हुई होती हैं। कोमल शाखायें बहुधा नीचे झुकी हुई होती हैं।

पान—लम्बे किन्तु तंग अनार के पत्तो की तरह दिखाई देते हैं। कोमल शाखाओ के पान पर अधिकतर कोमल रोयें देखने में आते हैं।

इसके बसन्त आगमन के पूर्व केशरिया रङ्ग के बड़े, चमकदार और निर्गन्ध पुष्प आते हैं। इसकी फलिया ६ से ८ इंच तक लम्बी और मुडी हुई होती हैं और उन्हाले (गरमी) मे पकती हैं।

मूल—वृक्ष के प्रमाण मे मोटा और जमीन मे गहरा गया हुआ होता है, इसमे से अलग अलग जडे फूटकर जमीन में दूर तक जाकर अलग शाख सा निकलकर स्वतंत्र झाड बन जाता है। मूलत्वक भूरी और उस पर खडे चीरे पडे हुये होते हैं। अन्तर छाल मोटी हल्के लाल रङ्ग की मजबूत रेशे वाली और रस युक्त होती है। गंध इमली के गूदे से मिलती, खट्टी और स्वाद कडवास लिये कषैला और चरपरा होता है। कडवापन चिरायते के समान बहुत देर तक जबान पर से नहीं जाता।

शाखे–शाखाओ का रङ्ग राख के वर्ण का होता है। छाल ऊपर से खरदरी बचडी और उस पर उभे चीरे पडे हुये होते हैं। इसकी अन्दर की छाल हरापन लिये पीले रङ्ग की होती है।



गन्ध—खारी जाल [पीलु] से मिलती हुई तेज और स्वाद कडवा और चरपरा होता है।

पान—आमने सामने आये हुए होते है किन्तु कहीं-कहीं एकान्तर भी देखे जाते हैं जो ३ से ६ इंच लम्बे और ½ से १¼ इंच चौडे होते है। पान की नोक ज्यादा करके बुट्टी होती है। पान की केवल बीच की नस नीचे तह से

वाहर निकलती फीके,सफेद रङ्ग की स्पष्ट दिखायी देती है। पत्र दण्ड टेढा ½ से ¾ इच का होता है।

फूल—शाखाओ के किनारे सुन्दर केसरिया रङ्ग के फूलो के गुच्छे आते है। पुष्प धारण करने वाली सलिये सूतली जैसी मोटी चलकत्ती और हरे रङ्ग की होती है। एक सली पर २ से ३ फूल आये हुये होते है। पुष्प दण्ड१/४ से १/२ इच लम्वा। पुष्प पत्र दो होते हैं।

पुष्प वाह्य कोप—फीके केसरिया रङ्ग का पांच पत्रो का वना होता है, ये चौडे और वुठे होते हैं। इसमे मे एक पत्र सवसे चौडा होता है। यह पौन इच लम्वा और इतना ही ऊपर से चौडा होता है। पुष्पाभ्यन्तर कोष मुख के पास दो से अढाई इच व्यास का अन्दर से गहरा जामुनी और वहुत चमकता हुआ होता है। इस कोष का मुख विछुवे के फूल के समान दो ओष्ठ से नीचे झुका हुआ और ऊपर का ओष्ठ ऊचा गया हुआ होता है। जव फूल खिलता है तव उसमे के पु केसर और स्त्री केसर ऊपर के ओष्ठ मे स्पष्ट दिखायी देते हे। पु केसर ५, ये फूल की पखडी की नली के ऊपर आयी हुई होती है। स्त्री केसर नलिका से वहुत छोटी होती है। इन पांच पु केसरो से दो सवसे लवी, दो कुछ छोटी और एक सवसे छोटी होती है, ये पराग कोष रहित होती है। शेप चारो पु केसरो के सिरो पर पराग कोष होता है। पु केसर तन्तु फीके पीले रङ्ग का और पराग कोप पीले रङ्ग का होता है, जो पीछे से काले पड जाते हे। सवसे लम्वे दो पु केसर सवा इच से कुछ लम्बे और सवसे छोटा एक इची, पराग कोप १¼ लाइन लम्वा, सहज लम्व गोल और वुठे अणी वाले होते है।

स्त्री केसर—पुष्प वाह्य कोष की वीचोवीच एक चक्राकार पडके मध्य से स्त्री केसर निकली हुई होती है। रङ्ग फीका पीला, नलिका पौने दो इच लम्वी, नलिकाग्र मुख दो विभाग का, नागफन जेसा चपटा होता है।

फली—६ से ८ इच लम्बी, ⅓ इच चौडी, जरा टेढी और चपटी होती है।

वीज—पतले, भूरे ¾ इच से १ इच लम्बे और ⅓ इच चौडे होते है।

नोट—राज निघण्टुकार ने रोहिडा के दो भेद व्रतलाये है, लाल और सफेद। ये दोनो भेद राजस्थान मे होते है। लाल के फूल गहरे लाल होते हैं और सफेद हल्के पीले। इसी प्रकार पलाश के भी दो भेद होने हैं। सफेद पलाश जिसको कहा जाता है उसके भी फूल फीके पीले ही आते है, विल्कुल सफेद नही। अत उपरोक्त निघण्टु मे वर्णित दोनो रोहिणे के भेद होते हैं और मौजूद है।

प्रयोज्याङ्ग—त्वक् एव सर्वाङ्ग -

उत्पत्ति स्थान--

विलोचिस्तान, अरवस्तान, पश्चिमी पाकिस्तान, पजाव, गुजरात, काठियावाड, राजस्थान, पूर्व मे यमुना तक, कलकत्ते की ओर सुन्दर फूलो के लिये लगाते है। वगाल के फरीदपुर जिले मे अधिक पाये जाते है। यह आर्द्र जमीन मे खूव वढता है।

नाम-

स —रोहितक, रोहितक, दाडिम पुष्पक, दाडिमच्छद। हि —रक्त रोहिडा, रोहेडा। म —रक्त रोहिडा। गु —रोहिडो। प —रुहेडा। व —हरिण हाडा, रोडा, रयना, पित्तराज। क —यरडूमल, मुत्तनू। तै —मुलुमोदुगचेट्टु। ले —Tecomella undulata g Don (टकोमाअन्ड्युलेटा)।

रासायनिक संगठन-

इसमे दो तरह का पीला गोद, श्वेतसार, रजक वस्तु, टेनिन या लवण पाये जाते है।

गुण-धर्म और प्रयोग--

सक्षेप मे—रस-कषाय, कटु। वीर्य—शीत। विपाक—कटु। गुण—सारक, रक्त शोधक, स्निग्ध। दोप शमन—कफ पित्त। रोहिडा की छाल-रसायन, कषाय और वल्य है। यकृत-प्लीहावृद्धि, स्थौल्य एव दुर्वलता मे यह प्रयोग किया जाता है। —भा प्र. नि.

रोहेडा—यकृत-प्लीहा, गुल्म और उदर रोग नाशक है। (राजवल्लभ) दोनो प्रकार के रोहेडे-स्निग्ध, कषैले, चरपरे, रक्त प्रसादक, कडवे, शीतल, सारक, कृमि, प्लीहा रोग, रुधिर विकार, व्रण, कर्ण रोग, विष, नेत्र रोग, गुल्म, यकृत् रोग,कफ, वात, विवन्ध, मांस, मेद सम्वन्धी शूल,



आनाह और भूत वाधा को दूर करते है। —शा. नि

रोहेड़ा—यकृत्-प्लीहा, गुल्म और उदर रोग नाशक है तथा दस्तावर है। —ध नि.

कैयदेव निघण्टु ने काश नाशक विशेष लिखा है—

रोहेडा—यकृत्-प्लीहा, उदर रोग, कामला, मूटमार आदि पर इसका गुण निश्चित है। —नि आ

नव्य मतानुसार—

रक्त रोहिणा—रसायन, ग्राही, वल्य है। यकृत् प्लीहा वृद्धि मे, मेद रोग मे, अशक्ति मे यह काम मे लिया जाता है। [डा. आर एन खोरी] इसकी काण्ड त्वक् उपदश मे लाभकारी है।[क चौपड़ा] रक्त रोहिडे की छाल जमे हुये रक्त को बिखेरने मे अक्सीर मानी जाती हे। इसलिये चोट और पछाड में अगर कही रक्त जम गया हो तो इसकी छाल को औटाकर उसमे दूध मिलाकर पिलाते हैं। इसकी छाल और पत्ते क्षय, खासी और ज्वर मे लाभ पहुचाते है। इसकी छाल तिल्ली और यकृत सम्बन्धी उदर व्याधियो मे उपयोगी मानी जाती है।

प्रसव के वाद स्त्री का शरीर अशक्त हो जाय तथा किसी प्रकार के रोग से शरीर निर्वल हो गया हो तो उसमे रक्त रोहिडा की छाल या पान का क्वाथ या चूर्ण दूध मिश्री के साथ दिया जाता है।

रोहितक चाय—इसकी छाल के चूर्ण से एक प्रकार की गुलाबी चाय तैयार की जाती हे। इसकी छाल के आधे तोले चूर्ण को २० तोले खौलते हुये दूध मे डाल देने से यह चाय तैयार होती है। यह चाय स्वास्थ्य और आयुवर्द्धक है।

उपयोग—

१. कफ पित्तज प्रमेह मे—बहेडा छाल, रक्त रोहिडा, कडू आदि के फूलो का चूर्ण मधु मे मिलाकर चाटने से प्रमेह मिटता है। [च. चि. अ ६]

यकृत् प्लीहा रोगे—रक्त रोहिडा की छाल, हरडे के चूर्ण को गोमूत्र की ७ भावना देकर सुखाने के बाद चूर्ण करके लेने से, कामला, गुल्म, प्रमेह, यकृत् प्लीहा वृद्धि, अर्श, उदर कृमि आदि को मिटाता है। [च चि अ १८]

३ सफेद प्रदर मे—रक्त रोहिडा की मूल की छाल का चूर्ण पीने से सफेद प्रदर मिटता है।

[च चि अ ३०, १४४]

४ कुष्ठ मे—रक्त रोहिडा का क्वाथ स्नान मे, पीने मे और लेप मे काम मे लावें।

—[च चि. अ ७, १२६]

५ चरक ने हृदय रोग चिकित्सा मे रक्त रोहिडे की योजना की हे। [च चि अ २६, ९६]

विशिष्ट योग—

१ रोहितकादि कल्क (वगसेन स्त्री रोगा०)—रुहेडे की जड की छाल को पानी के साथ पीसकर कल्क बनावे। इसमे मिश्री और शहद मिलाकर पीने से सफेद प्रदर नष्ट होता हे। इस प्रयोग को केवल ३ दिन प्रयुक्त करने से ही प्रदर रोग नष्ट हो जाता है।

२ रोहितकादि योग (यो र उदर रो०)—रुहेडा की छाल, हर्र, सोठ समान भाग लेकर यथाविधि चूर्ण बनावे। इसे यथोचित मात्रानुसार गोमूत्र के साथ सेवन से समस्त प्रकार के उदर, प्लीहा, प्रमेह, अर्श, कृमि और गुल्म का नाश होता है।

३ रोहितकाद्य चूर्णम् (भै र प्लीह-यकृद्रोगे)—रुहेडे की छाल, यवक्षार, चिरायता, कुटकी, मोथा, नवसादर, अतीस, सोठ प्रत्येक को समभाग मे मिश्रित कर १ माशा परिमाण मे रोगी सेवन करे।

अनुपान—शीतल जल। इसके सेवन से यकृद्रोग शीघ्र नष्ट होता है।

४ महा रोहितक घृतम् (भै र प्लीह-यकृद्रोगे)—
क्वाथ—(१) १०० पल [६। सेर] रुहेडे की छाल को ३२ सेर पानी मे पकावे और ८ सेर पानी शेष रहने पर छान ले।

(२) ४ सेर वेर का गूदा [कोल का गूदा] को ३२ सेर पानी मे पकावे और ८ सेर शेष रहने पर छानले।

कल्क—सोठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेड़ा, आमला, हींग अजवायन, तुम्बरू, विड नमक, जीरा, कालानमक, अनारदाना, देवदारु, पुनर्नवा, इन्द्रायन की जड, जवाखार, पोखरमूल, वायविडग, चितामूल, हपुषा, चव और वच, प्रत्येक औषधि १।-१। तोला लेकर सबको एकत्र पीले।

विधि—२ सेर घी मे उपरोक्त क्वाथ तथा कल्क और ८ सेर बकरी का दूध मिलाकर पकावे। जब जलाश शुष्क हो जाय तो घृत को छान ले।

मात्रा—२ तोले। अनुपान—यूप अथवा दूध। इसके सेवन से यकृत्-प्लीहोदर, प्लीह शूल, वृक्कशूल, कुक्षिशूल, हृच्छूल, पार्श्वशूल, अरुचि, पाण्डु, कामला, विबन्ध, छर्दि अतिसार, तन्द्रा और ज्वर का नाश होता है।

नोट—मूल पाठ मे अनुपान मे मास रस भी लिखा है परन्तु जो मासाहारी नही है उनके लिये उसकी आवश्यकता नही है।

६ रोहितक घृतम् [भै र प्लीह-यकृद्रोगे]—गो घृत २ प्रस्थ। क्वाथार्थ–रोहीतक छाल २५ पल, वेर २ प्रस्थ [३२ पल], जल क्वाथ से आठ गुना [४५६ पल], अवशिष्ट क्वाथ ११४ पल। कल्कार्थ–पीपल, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोठ, प्रत्येक १ पल, रोहीतक [रोहेडा] छाल ५ पल। इस घृत के सेवन से प्लीहा वृद्धि, गुल्म, ज्वर, कास, श्वास, कृमिरोग, पाण्डु-कामला प्रभृति रोग शीघ्र नष्ट होते है। मात्रा–½ आधा तोला।

६ रोहितकावलेह [भा भै र स. ५६३८]—६। सेर रुहेडे की छाल और १०० हर्रो को आठ गुने भैस के मूत्र मे पकावे, जब चौथा भाग शेष रहे तो छानकर उस क्वाथ मे उपरोक्त १०० हर्रे और पीपल, पीपलामूल, चव्य, चीता सोठ और दन्तीमूल का चूर्ण मिलाकर पुन पकावे। जब गाढा हो जाय तो उतार ले।

इसमे से नित्य दो हर्रे खाकर अवलेह चाटना चाहिये। इसके सेवन से प्लीहोदर और यकृतोदर शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

७ रोहीतक लौहम् [भै र प्लीह-यकृद्रोगे]—रोहीतक छाल, त्रिकटु, त्रिफला, त्रिमद [वायविडङ्ग, मोथा, चित्रक] प्रत्येक समभाग। सम्पूर्ण के समान लौह भस्म। इन्हे एकत्र मिश्रित कर रोगी को सेवन करावे। मात्रा–२ रत्ती इसके सेवन से प्लीहा रोग, अग्रमांस तथा शोथ प्रभृति रोग नष्ट होते हैं।

रोहीतकारिष्ट [भ र प्लीहा-यकृद्रोगे]—रोहीतक छाल दस सेर, जल ८ द्रोण, अवशिष्ट क्वाथ २ द्रोण। इसको वस्त्र से छानकर ठण्डा होने पर २०० पल [वीस सेर] गुड घोलकर, धाय के फूल १६ पल, पञ्चकोल [पिप्पली, पिप्पलीमूल, चव्य, चित्रक, सोठ], त्रिजात(छोटी इलायची, दालचीनी, नागकेसर], त्रिफला [हरड, वहेडा, आवला), प्रत्येक का १ पल का प्रक्षेप देकर एक मास तक पात्र मे बन्दकर एकान्त मे पडा रहने दे। मात्रा–सवा तोले से अढाई तोले तक। इसके सेवन से सम्पूर्ण उदररोग, प्लीहा, गुल्म, अष्ठीला, ग्रहणी, अर्श, कामला, कुष्ठ, शोथ तथा अरुचि प्रभृति रोग नष्ट होते हैं।

(९) रोहितकासव (१) (गदनिग्रह) ६। सेर रुहेडे की छाल को १२८ सेर पानी मे पकावे और ३२ सेर पानी शेष रहने पर छान ले। एव उसके शीतल होजाने पर उसमे निम्न लिखित प्रक्षेप द्रव्य मिलाकर सबको मिट्टी के स्वच्छ और घृत से चिकने पात्र मे भरकर उसका मुख वन्द करके रखदे और १५ दिन वाद निकालकर छान ले।

प्रक्षेप द्रव्य–धायके फूलो का चूर्ण १ सेर गुड ६। सेर तथा दालचीनी, तेजपात, इलायची, छोटी पीपल, पीपलामूल, चव्य, चीता और सोठ का चूर्ण ५-५ तोले।

इसके सेवन से प्लीहा, प्लीहोदर, प्लीहाशूल, हृच्छूल, पार्श्वशूल, हर प्रकार की अरुचि, मलावरोध, शूल, पांडु, कामला, छर्दि, अतिसार तथा जीर्ण ज्वर नष्ट होता।

यह आसव तिल्ली को अवश्यमेव नष्ट कर देता है। (मात्रा–२ तोले।)

(१०) रोहितकासव (२) (गद निग्रह)–६। सेर रुहेडे की छाल को ३२ सेर पानी मे पकावे और ८ सेर पानी शेष रहने पर छान ले।

तदनन्तर उसमे ६। सेर गुड, ५-५ तोले, हर्र, वहेडा, आमला का चूर्ण, १५ तोले धाय के फूलो का चूर्ण और ५-५ तोले पीपल, पीपलामूल, चव, चीतामूल और सोठ का चूर्ण मिलाकर सबको घृत से चिकने मिट्टी के पात्र मे भर कर उसका मुख वन्द करदे और पन्द्रह दिन पश्चात् छान ले।

इसके सेवन से ज्वर, गुल्म, अर्श, प्लीहा, अस्थिग्रह और पांडुरोग नष्ट होता है। (मात्रा–२ तोले।)

(११) रोहीतकासव (३) (गद निग्रह)–१२॥ सेर रुहेडे की छाल को ६४ सेर पानी मे पकावे और १६ सेर पानी शेष रहने पर छान ले।



तदनन्तर उसमे १२॥ सेर गुड, ६-६ पल (३०-३० तोले) हरं, वहेडा, आवला, लौग, जायफल, धाय के फूल और लौह का चूर्ण तथा २५-२५ तोले दालचीनी तेजपात, छोटी इलायची, नागकेशर, पीपल, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोठ का चूर्ण मिलाकर सबको घृत से चिकने मिट्टी के पात्र मे भरकर उसका मुख बन्द करदे। ओर १५ दिन वाद छान ले।

इसके सेवन से गुल्म, ज्वर, अरुचि, हृद्विकार, भगन्दर, तिल्ली, रक्तदोष और श्वास नष्ट होजाती है। (मात्रा–२ तोले)

रोहिड़ा नं॰ २ (Aphanamixis polystachya)

यह गुडूच्यादि वर्ग और निम्बादि कुल (Meliaceae) का वृक्ष होता है। इसका वृक्ष ३० से ७० फीट ऊचा गहरे हरे पत्तो से आच्छादित होना है। पत्र–एक से तीन फुट। पत्रिका ३ से ९ इच लम्वी, १$\frac{1}{3}$ इच चौडी। पु पुष्प दड, पत्र की दीर्घता अपेक्षा कुछ छोटा और समान। पु पुष्प $\frac{1}{2}$ इची, स्त्री पुष्प $\frac{1}{4}$ इची लम्वा। फल–चिकने, गोलाकार, हल्के पीत वर्ण अथवा इपत लालवर्ण, १-१ इच लम्वा, नरम और शास युक्त। फल के वीजो मे तैल होता है जो निकालकर प्रयोग मे लाया जा सकता है। वर्षाकाल मे फूल होते है।

उत्पत्ति स्थान–

डा हूकर साहब–सिक्किम, तेराई और कारसिपा से इस वृक्ष को सग्रह किया था। उसके पत्ते वडे, पत्रिका १२ से १५ इच लम्वी एव ३ से ७ इच विस्तृत (चौडी) बाटोनिकल गार्डन शिवपुर (कलकत्ता) मे इस रोहिडे के काफी वृक्ष हैं। यह आसाम, सिलहट, काछाड, अयोध्या, पूर्वी बगाल, पश्चिम घाट, वर्म्मा, कोन्कन, हुगली, हावडा, २४ परगना मे भी होता है।

नाम–

स –रोहितक। ब –तिक्तराज, पित्तराज, रोडा, रयना। हि हरिन हाडा। ता –सुरन। ते –मुन्चकुन्द। ले –Aphanamixis polystachya (Wall) parker—(अफानामिक्सिस पोलिस्टेचिया)।

प्रयोज्य अङ्ग–वृक्ष की त्वक् और तैल।

मात्रा—क्वाथ ५ से १० तोला। कल्क २ से ४ माशा।

गुण धर्म और प्रयोग–

इसकी छाल धारकी। (Watt वौट) पक्व फलो की मीगी का तैल वातरोग मे प्रयोग किया जाता है। इसकी छाल चरपरी, रसायन, कषाय और बल वृद्धिकारी है। प्लीहा-यकृत् की वीमारियो, अर्बुद और उदर रोगो मे लाभकारी है।

विशेष–रक्त रोहिडा न १ (Tecomella undulata) ही असली रक्त रोहिडा है और उसी मे ही निघण्टुओ मे वर्णित सारे गुण विद्यमान है तथा रक्त रोहिडे से जितने वनाने वाले योग है उन सब मे इसी रक्त रोहिडे का प्रयोग करना चाहिए। (सम्पादक)

रक्त रोहिड़ा नं. ३ (Rhamnus wightii)

यह बदरीकुल (Rhamnace) की एक वनस्पति होती हे। इस वनस्पति की वहुत वडी झाडी होती हे। इसके पत्ते आमने सामने लगते हे और ये कगूरेदार होते हैं। इसकी छाल मोटी कठोर और लाल रग की होती है।

उत्पत्ति स्थान–

यह झाडी पश्चिम घाट, नीलगिरी पर्वत और लका मे वहुत ऊचे स्थानो पर पैदा होती हे।

नाम–

मं –रक्त रोहित। वम्वई–रक्तरोहिडा। ता –पेपुल्ला। अ –Indian buckthorn (इडियन वुकथोर्न) ले –Rhamnus wightii w, & A (र्‍हेमनस विटी)।



रतन जोग (Anemone obtusiloba)

यह वत्सनाभादि कुल (Rananculaceae) की एक वर्षजीवी वनस्पति होती है। इसकी जड कन्द के रूप मे होती है। इसके फूल सफेद और नीले रङ्ग के होते है।

उत्पत्ति स्थान—

यह हिमालय मे काश्मीर से लेकर सिक्किम तक ८ हजार फीट से १५ हजार फीट की ऊचाई तक पैदा होती है।

प्रयोज्य अङ्ग—मूल।

नाम—

हिं—रतन जोग। प—रतनजोग, पाडर। कुमाऊ—रतन जोग, काकरिया। ले—Anemon obtusiloba D Don. [एनेमोन आवटुसीलोबा]।

गुण धर्म और प्रयोग

यूनानी मतानुसार इसकी छाल और पत्ते गरम, खुश्क और कडवे होते है। ये तिल्ली, गुर्दे की शिकायतो को दूर करते है, पीलिया मे लाभ पहुँचाते हैं। मुह के छालो को दूर करते हैं। इनको कुछ अधिक मात्रा मे खा लेने से सिर मे दर्द पैदा होता है। स्टेवर्ट के मतानुसार इसकी जड को कुचलकर दूध के साथ मिलाकर पिलाने से शस्त्र से लगे हुये जख्मो मे लाभ होता है। कही कही पर यह वनस्पति छाला उठाने वाले द्रव्य की तरह उपयोग मे ली जाती है।

इसके बीजो को पेट मे देने से वे वमन और दस्त पैदा करते है। इसके बीजो का तेल सन्निवान मे उपयोग किया जाता है।

रतनजोत (Onosma echioides)

यह श्लेष्मान्तकादि कुल (Boraginaceae) की वनस्पति है जो हिमालय मे काश्मीर से कुमाऊ तक ५ हजार फीट की ऊचाई से ६ हजार फीट तक और बिलोचिस्तान मे पैदा होती है।

प्रयोज्याङ्ग—पत्र, पुष्प और मूल।

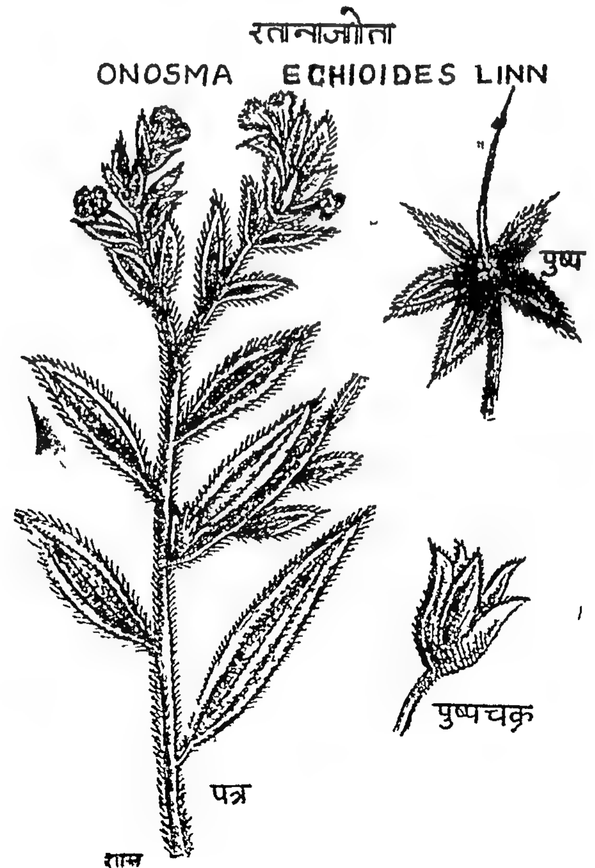
नाम—

स—वामनी, अजनकेशी, कपोत चरणा, नाली, नलिनी, नर्तकी, रक्तदला, स्तुत्या। हिं—रतनजोत। प—लालजरी, महारङ्गा, रतनजोत,। नेपाल—नेवार, महारङ्गी। ले—Onosma echioides Linn [ओनोस्मा इचिआइडस]।

गुण धर्म और प्रभाव—

आयुर्वेद मतानुसार इसका पौधा कडवा, तीक्ष्ण, मृदु विरेचक, कृमि नाशक और विष विकार को दूर करने वाला होता है। यह नेत्र रोग, खासी, उदरशूल, मूत्रकृच्छ्र, श्वास, खुजली, श्वेत कुष्ठ, ज्वर, जख्म, बवासीर, मूत्राशय की पथरी और रक्त की अव्यवस्था को दूर करता है।

इसकी जड को कुचलकर फोडे-फुन्सियो पर लेप करने से लाभ होता है। इसके पत्ते धातु परिवर्त्तक होते है और





इसके फूल उत्तेजक और हृदय के लिये पौष्टिक होते है। ये हृदय की धडकन (Palpitation of heart) और सन्निवात के अन्दर उपयोगी समझे जाते है। इसके पत्तो का चूर्ण बच्चो को देने से विरेचक द्रव्य का काम करता है। चर्म रोगो मे इसकी जडो का लेप किया जाता है।

इस वनस्पति से एक प्रकार का लाल रङ्ग प्राप्त किया जाता है जो तेलो मे रङ्ग देने के काम मे लिया जाता है।

उपयोग—

१ गठिया मे—रतनजोत को तैल मे औटाकर उस तेल की मालिश करने से गठिया मे लाभ होता है।

२ मिर्गी मे—रतनजोत को पीसकर नाक मे टपकाने से मिरगी वाले की मूर्च्छा मिटती है।

३ हृदय रोग मे—रतनजोत के पत्तो को औटाकर पिलाने से हृदय को वल मिलता है और उसकी अस्वाभाविक धडकन मिट जाती है।

४ रुधिर विकार—इसके पत्तो के रस मे शहद मिलाकर पिलाने से रुधिर विकार मिट जाता है।

रतन जोत नं. २ (Rotentilla Napalensis)

यह शतपत्री कुल (Rosaceae) की एक वर्ष जीवी वनस्पति होती है। इसके फूल गुलावी रग के होते हैं।

उत्पत्ति स्थान–

यह वनस्पति हिमालय मे मुरी काश्मीर से लेकर कुमाऊ तक ५ हजार फीट से ८ हजार फीट की ऊचाई तक पैदा होती है।

नाम—

प —रतनजोत। ले —(Potentilla Nepalensis hook) (पोटेंटिला नेपालेसिस)।

गुण, धर्म और प्रभाव–

इसकी जड शोधक मानी जाती है। इसकी जड की राख को तेल मे मिलाकर जले हुये स्थान पर लगाने से शाति होती है।

(व च से साभार)

रतन जोत नं. ३ (Clausena Pentaphylla)

यह शतापादि कुल(Rutaceae) की एक सीधी झाडी होती हे। उसकी ऊचाई एक फुट से लेकर टाई फुट तक होती है। इसके पत्ते एक के वाद एक लगे हुये रहते हे। इसके फूल कुछ पीलापन लिये हुये रहते ह। इसके फल छोटे-छोटे रसदार पीले तथा नारगी रग के होते है।

प्रयोज्य अङ्ग—पत्र, पुष्प।

उत्पत्ति स्थान –

यह वनस्पति कुमाऊ, नेपाल, सिक्किम, चम्पारन और अवध के जगलो मे पैदा होती है।

नाम—

हि —रतनजोत, रोवाना, सूरजमुख, थारु। ले —Clausena Pentaphylla (Rosela) D C

गुण धर्म और प्रभाव—

इस वनस्पति की छाल पशु चिकित्सा के अन्दर बहुत उपयोगी होती है। इसके चूर्ण को मीठे तेल मे मिला ताजा जख्मो पर लगाने के काम मे लिया जाता है। मास पेशिया और जोडो की ऐठन तथा मोच और रगड मे इसके चूर्ण को १५ मिनट तक मीठे तेल मे औटाकर पुल्टिस की तरह लगाया जाता है।

रतन पुरुष (Ionidium enneaspermum)

यह वनफशादि कुल (Violaceae) की वहु वर्ष जीवी क्षुद्र वनस्पति ६ से लेकर १० इच तक ऊची होती हे। इसकी छोटी-छोटी शाखाये वहुत फैली रहती है। इसके पत्ते छोटे,वरछी के आकार के डेढ इच से लेकर दो इच तक

लम्बे और कटी हुई किनारो के होते है। इसके फूल छोटे लाल और किरमजी रग के होते है। इसकी जडे ३ से ४ इच तक लम्बी और पीलापन लिये सफेद रग की होती है। इसके बीज पीलापन लिये सफेद रग के होते है।

प्रयोज्याङ्ग—सर्वाङ्ग।

उत्पत्ति स्थान—

यह वनस्पति बुन्देलखण्ड, आगरा, बगाल, मद्रास प्रदेश, गुजरात, खानदेश, कर्णाटक, अकलेश्वर और सिलोन मे पैदा होती है।

नाम—

स.—स्थल पद्म, स्थल पद्मिनी, चारटी, पुष्कर नादि, पुष्करनी, शारदा, सुगन्धमूल, लक्ष्मी श्रेष्ठ, पुरुष रत्न। हि.—रतन पुरुष। बम्बई–रतनपुरुष। म –रतन पुरुत्र। ब –नुन वोरा। ते –पुरुष रत्नम्, सूर्यकान्ति। ता –ओरीलेट तमाराइ। सथाल–विरसूरजमुखी, टाडी सोल। ले –Ionidium enneaspermum D c (आयो निडियम एनेसपरमम) Ionidieem suffruticum Ging (आयोनिडियम सफ्रूटीकोसम) और Thbantneesenneaspermcum (हायेबन्थस एनेस परमम)।

गुण धर्म और प्रभाव—

इस वनस्पति का पौधा कडवा, कसैला, सहज सुपाच्य कफ पित्त मूत्रकृच्छ्र, मूत्राशय की पथरी, अतिसार, वमन दाह, चित्तभ्रम, अनैच्छिक वीर्यश्राव, रक्त विकार, दमा, मिर्गी, खासी मे लाभ पहुचाता है। यह स्तनो को कठोर करता है। सथाल जाति के लोग इसकी जड को बच्चो के आतो से सम्बन्धित रोगो को दूर करने के लिये देते है। रतन पुरुष मे शीतल, स्नेह और मूत्रल धर्म रहते है। इसका स्नेहन धर्म उत्तम होता है। इसका मुलहठी के साथ काढा बनाकर देने से सुजाक की जलन कम होती है। इसके चूर्ण की गोलिया बनाकर देने से खासी का त्रास कम हो जाता है। गर्मी की वजह से होने वाले सिर दर्द मे इसके स्वरस को तेल के साथ मिलाकर सिर पर मालिश करने से शान्ति मिलती है। फल का लेप—वृश्चिक दश मे उपयोगी है। सिद्ध सप्रदाय और आध्र के वैद्य इसका खूब प्रयोग करते है।

रतालू (Ipomoea Batata)

यह शाक वर्ग और त्रिवृत्तादिकुल (Convulaceae) की एक लता होती है जिसके कन्द को रतालु कहते है। लाल और सफेद दो तरह का होता है। इसका कन्द शाक वनाने के काम मे आता है।

प्रयोज्य अङ्ग–पत्र और कन्द।

उत्पत्ति स्थान–

समग्र भारत मे शाकार्थ कृषि की जाती है।

नाम–

स —रक्तालु, रक्त पिण्डक, रक्तकन्द। हिं —रतालू। गु —रतालू। म –पाडरे रताले, लाल रताले। ब —लाल पिडालू। फा -जमीकन्द। उर्दू–रतालू। ले -Ipomoea batata Linn (आइपोमोइया बटाटा)।

गुणधर्म और प्रभाव—

सफेद रतालू—शीतल, मधुर, भारी और कामोद्दीपक होता है। यह दाह शोष, प्रमेह और मूत्र कृच्छ्र को नष्ट करता है। लाल रतालू—शीतल, मधुर, खट्टी, भारी बलकारक और पौष्टिक होता है। यह दाह, पित्त और श्रम का नाश करता है।

विच्छू के विष पर रतालू की वेल के पत्तो को पीस कर लगाने से तथा सूखे हुए रतालुओ को पानी मे पीसकर लगाने से शान्ति मिलती है। (ब च)

रनफनास (Artocarpus hirsutus)

यह वटादि कुल (Urticaceae) की एक वनस्पति है

उत्पत्ति स्थान–

यह पश्चिमी घाट से उत्तरी किनारा से मलाबार, कुर्ग ट्रावनकोर मे पैदा होती है।

नाम—

बम्बई–महाराष्ट्र–रन फनास। हिं –रन फनास। मल

अन्निजी । ता —अन्जाली । ले –Artocarpus hirsutus Lam (आर्टोकार्पस हिरसुटस) ।

गुण धर्म और प्रभाव—

इसके सूखे पत्ते और रस नरकचूर और कपूर के साथ मिलाकर वद गाठे और अण्डकोष की सूजन पर लगाये जाते है ।

रस भरी (Physalis Puruviana) देखिये 'टकारी' भाग ३ पृष्ठ २७१ पर ।

राई (Brassica Juncea)

यह धान्यवर्ग और राजिकादि कुल (Cruciferae) का वर्षायु फसल उनालु मे होने वाला क्षुप हे । राई की फसल रवी या उनालु की फसल बोने के समय बोयी जाती हे और ग्रीष्म मे पकजाती हे । इसके पान मूली के पान से कुछ मिलते हुए होते हैं । नीचे के चौडे, वीच के मध्यम और ऊपर के छोटे होते है । इसका पौधा दो से चार फीट तक ऊचा होता हे, मूल रेशेदार, तना श्वेताभ हरित । शाखा छोटी चतुष्कोणीय होती हे । इसके तेजस्वी पीले फूल आते हैं । छोटी फलीके रूप मे फल आते हैं । जिसमे लाल दाने निकलते हैं, जिसको वोल चाल मे राई कहते है । राई का क्षुप सुन्दर होता हे । इसको सब जानते हैं । इसके पत्तो का साग वनाकर खाया जाता हे ।

उत्पत्ति स्थान—

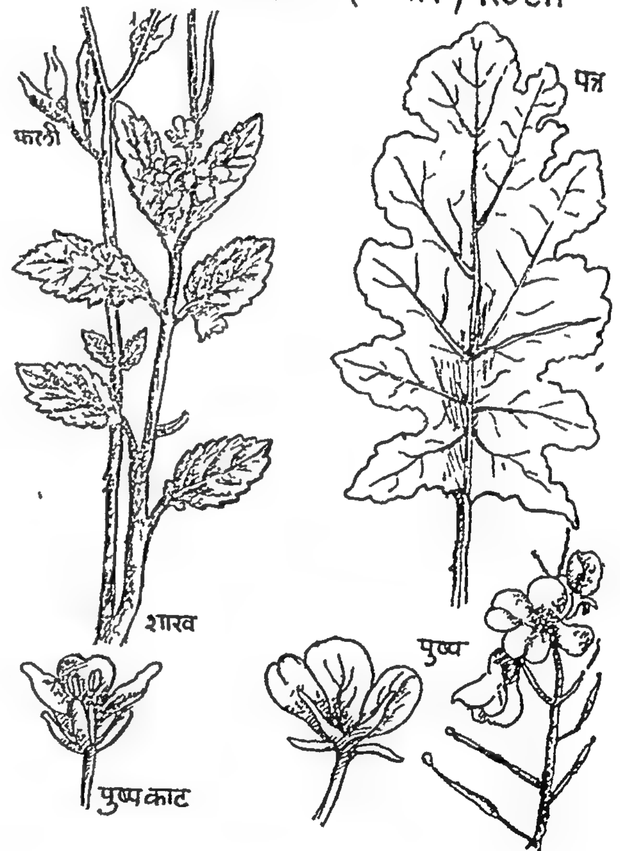
यह भारत, पूर्वी एशिया, अफ्रीका, दक्षिण अमेरिका मे वहुतायत से प्राप्त होती है । इमको समग्र भारतवर्ष मे कृषि द्वारा पैदा किया जाता है ।

नाम—

स -राजिका, राजी, आसुरी, तीक्ष्णगधा । हि, गु राज —राई । म –मोहरी । व –राइ सरिशा । काश्मीर–आसुर । ता -–कडुघम् । सि —खरदल । काठि –ओहर । क —सासिवे, कडुघु । तै —अवालु । मल –कडुक । अ –खर्दल, कुन्न । फा —सरशफ । अ–Indian mustard (इण्डियन मस्टर्ड) । ले —Brassica Juncea (Linn) Czern & Coss (ब्रेसिका जुसिया) Brassica integrifolia west (ब्रेसिया इन्टेग्रीफोलिया) ।

रासायनिक संगठन—

वीज मे मायरोसीन (Myrosin) और सिनिग्रिन (Sinigrin) अर्थात् पोटासियम माइरोनेट (Potassium



myronate) ० ५% अनुस्पत तेल २५%, और सिनपीन (Sinapine) प्रभृति द्रव्य होते है ।

प्रयोज्य अङ्ग—पत्र, वीज और तेल ।

गुण धर्म और प्रभाव—

सक्षेप—रस कटु तिक्त वीर्य—उष्ण, विपाक—कटु, गुण—तीक्ष्ण, दाहकर । दोष शमन—वात कफ, पित्तकर ।

राई—चरपरी, कडवी, गरम, वात, प्लीहा और शूल नाशक है । दाहजनक, पित्तकारक, नेत्र और वृक्कों को

प्रदूपित करती हे तथा कफ, गुल्म और कृमि रोग को हरने वाली है। —रा नि.

राई—कफपित्त नाशक, तीक्ष्ण, गरम, रक्त पित्तकारक किंचित रूखी अग्नि वर्द्धक तथा कण्डू, कुष्ठ, कोष्ठरोग और कृमिरोग को दूर करती है। काली राई के गुण भी राई के समान है। विशेष करके अत्यन्त तीक्ष्ण है।

राई के पत्तो का शाक चरपरा, गरम, बलकारक, स्वादिष्ट, पित्तकारक, कृमिनाशक, वात कफ नाशक और कठ रोग को दूर करते है। —भा. प्र. नि

राई का तेल बगाल की ओर लोग खाते है। राई का तेल वातज वेदना वाले अङ्गो पर मालिश करने के काम मे आता है। तेल दीपन, चरपरा, लघु, तीक्ष्ण, वातहर, पुंसत्वनाशक, केश्य, त्वचा दोषहर, कफघ्न और मेदोहर है। अर्श, सिर दर्द, कर्ण रोग, कण्डू, कुष्ठ, कृमि और शीत पित्त को दूर करता है। यह विशेपत मूत्रकृच्छ्रकारक है।

नव्य मतानुसार—

राई के तेल का प्रयोग—

राई का तैल उड्डयनशील या ईषत् पीत होता है, वह ईथर मे मिल जाता है। आपेक्षिक गुरुत्व १०१५ से १०-२० है। प्राय २६८ फार्नहाइट तापाश पर उबलने लग जाता है। यह तैल उग्रगन्ध, तीक्ष्ण और चरपरे स्वादु युक्त है। त्वचा पर लगाने से थोडे ही समय मे फायदा कर देता है। इस तैल का उपयोग डाक्टरी मे राई का मर्दन (Liniment of mustard) मे होता है।

इसके बीज गरम, पसीना लाने वाले और पाचन शक्ति को सहायता देने वाले होते है। ये शरीर के अन्दर होने वाले रक्त सचय की वजह से होने वाले आक्षेप, स्नायु सम्बन्धी विकृति और सन्धिवात मे बहुत उपयोगी सिद्ध होते हैं। मस्तिष्क की सुषुम्ना नाडी की अव्यवस्था मे भी इनका उपयोग होता है।

बहुश बीज का प्रलेप (Mustard plaster) का उपनाह (Mustard poultice) मे व्यवहार होता है। पुलटिस बनाते समय समभाग आटा मिला लेना चाहिये, ताकि उसकी तीक्ष्णता कम हो जावे। यह फोडो को पकाने व फाड़ने तथा गठिया की शोथ मे लाभकारी है। राजिका चूर्ण को गरम जल मे हिलाने से विलेपी सी बन जाती है। यह प्रलेप (Plaster) है जो शोथ व शूल वाले स्थान पर किया जाता है। १०—१५ मिनट मे स्थान लाल हो जाता है, वहा दाह प्रतीत होता है। जब वह असह्य हो, तब प्रलेप हटाले। वहा फुन्सिया भी हो जाती है, जिनका जल निकल जाने पर वैसलीन या मक्खन (कर्पूर सहित) लगा देना चाहिये। बच्चो के अथवा मर्म स्थानो पर प्रलेप मलमल के वस्त्र पर लगाकर करना चाहिये। यह सुगमता से हटाया जा सकता है। यह प्रलेप छाती, शिर, सन्धि, गर्भाशय आदि अगो के शूल व शोथ मे बहुत लाभकारी है। राई के स्थान पर सर्षप व तुवरी (तारामीरा) का प्रयोग कर सकते हे परन्तु वह राई जैसे तीक्ष्ण नही।

राई के ४—५ दाने खा लेने से पाचन शक्ति बढ जाती हे, परन्तु ५—६ माशे राई को गरम पानी से निगल जाने पर वान्ति हो जाती है अतः राजिका से अहिफेनादि निद्रा जनक विषो, ज्वर, आमाजीर्णादि रोगो मे वान्ति कराई जाती है। राई का अधिक प्रयोग अम्लपित्त और आमाशय मे क्षत करता है। —कै. नि

शरीर के ऊपर राई की क्रिया हुलहुल बूटी के समान दर्शायी हे। यह छोटी मात्रा मे दीपन, पाचन, उत्तेजक और पसीना लाने वाली होती है। बडी मात्रा मे यह वामक होती है। इसको बडी मात्रा मे लेने से तुरन्त वमन होता है मगर यह वमन घातक नही होता।

बाह्योपचार है राई का लेप चिकित्सा शास्त्र के अदर एक बहुत मशहूर वस्तु है। जिस स्थान पर यह लेप किया जाता हे वहा की त्वचा लाल हो जाती है और त्वचा के अन्दर की रक्तवाहिनिया उत्तेजित हो जाती है जिससे उस भाग मे शून्यता पैदा हो जाती है। इस लेप को अधिक समय तक रखने से उस स्थान पर छाला उत्पन्न हो जाता है। जिस स्थान पर यह लेप लगाया जाता हे उस स्थान के साथ शरीर के जिन-जिन हिस्सो का सम्बन्ध होता है उन हिस्सो की रक्ताभिसरण क्रिया को मज्जा ततुओ के द्वारा उत्तेजना मिलती है जिससे उनकी विनिमय क्रिया सुधरती हे। राई को गरम पानी मे डालकर उस पानी मे स्नान करने से त्वचा की रक्त वाहिनियो का विकास होता

है जिससे रक्त का दवाव कम पडता है। रक्त का दवाव कम होने से सूजन की कमी होती है। इसी से राई का लेप शोथनाशक माना जाता है।

जिन रोगो के साथ सूजन रहती हे तथा जिसमे शरीर के अन्दर अन्तर्दाह रहता हे ऐसे रोगो मे राई का लेप किया जाता है। फुफ्फुस की सूजन, फुफ्फुस कोप की सूजन, यकृत कोप की सूजन, श्वास नलिका की सूजन, वीज कोषो की सूजन, मस्तिष्क रोगो की सूजन इत्यादि रोगो मे राई का लेप वहुत लाभ पहुचाता है। ज्वर के अन्दर भ्रम को दूर करने के लिये ललाट के ऊपर राई का लेप किया जाता हे। हृदय के कमजोर होने पर हाथ-पाव और हृदय के ऊपर राई का लेप किया जाता है।

हैजे मे जव रोगी को वहुत उल्टी दस्त होते हो, और उसके शरीर मे वायटे चलते हो, अगो मे शिथिलता पैदा हो रही हो ऐसी स्थिति मे राई का लेप करने से वहुत लाभ होता है। हैजे के अतिरिक्त भी जो दस्त, उल्टी होते हैं वे अगर किसी दूसरी औषधि से न रुकते हो तो राई का लेप करने से रुक जाते ह।

राई के लेप की विधि—राई को ठण्डे पानी के साथ सिलपर महीन पीसकर उसको साफ मलमल के कपडे के ऊपर पतला पतला लेपकर देना चाहिये। फिर उस कपडे को जिधर राई लगी हुई हो उसकी दूसरी तरफ से जिस जगह लेप लगाना हो उस जगह रख देना साहिये। राई के लेप को चमटे की तरफ रखने से उसका प्रभाव यद्यपि जल्दी होता हे पर उससे चमटे पर फु सिया पडने का डर रहता हे इसलिये जव तक विशेषत जरूरत न पडे तव तक इसका लेप कपडे के ऊपर के वाजू ही रखना चाहिये।

राई के अन्दर एक प्रकार का तेल भी निकलता है। यह चमटे की जलन और व्रणो के ऊपर लगाने के काम मे आता है।

यूनानी मतानुसार—

प्रकृति—चौथे दर्जे मे उष्ण एव रूक्ष।

गुण कर्म—वाह्य प्रयोग से राई श्वयथु विलयन,लेखन शोणितोत्क्लेशक और विस्फोटजनन हे। लेप करने से प्रथमत दाह उत्पन्न करती हे, उसके उपरात सशमन कर्म करती है। आतरिक उपयोग से यह आमाशय को उद्दीप्त करके पाचन और क्षुधा की वृद्धि करती है और प्लीहा की सूजन उतारती हे। अधिक प्रमाण मे उपयोग करने से यह छर्दिजनन है। यह प्रधानत शोथ विलयन, शोणितोत्क्लेशक और आहार पाचन है।

उपयोग—

कफोल्वण सन्निपात,पक्षवध, आमवात, वातरक्त,गृध्रसी, पार्श्वशूल और फुफ्फुस शोथ जैसे प्राय शीतल रोगो मे राई का लेप करते या उपयुक्त औषधि द्रव्यो के साथ मिला कर मर्दन करते है। आमाशय शूल, प्लीहा शूल और यकृच्छूल शमन करने के लिये इसका लेप करते है। शीत जन्य आर्तव स्तम्भ को दूर करने के लिये इसके क्वाथ मे रोगिणी को वैठाते है। शोणितोत्क्लेशक और विस्फोट जनन होने के कारण दद्रु, किलास और खालित्य जैसे रोगो मे लेप करते हे। शीतल शोथो और कठमाला को विलीन करने के लिये भी इसका लेप करते हैं। जिह्वा शोथ और दत शूल मे इसके काढ़े से कुल्ले कराते हैं। आहार पाचन और अरुचि को नष्ट करने के लिये इसे आहार मे डालकर खिलाते हे। प्लीहा शोथ को विलीन करने के वास्ते इसका चूर्ण सेवन कराते हैं। आमाशय से कफोत्सर्ग और कतिपय विषो के प्रभाव को नष्ट करने के लिये वमन द्रव्य की भाति अधिक प्रमाण मे (लगभग १ तोला) गरम पानी मे मिलाकर पिलाते है। अहितकर तृष्णा उत्पन्न करती है। निवारण वादाम का तेल और सिरका। प्रतिनिधि-शलगम के वीज हैं। मात्रा १ माशा से ३ माशे तक।

(यू द्र. विज्ञान)

सूचना—छाले उठाने के लिये राई का उपयोग नही करे क्योकि यह अति दाहकारक है फुन्सिया या छाला हो जाता है। फिर छाला का क्षत भी शीघ्र नही सूखता। केवल चर्म प्रदाहक (Rubefacients) अर्थात् त्वचा लाल वनाकर शोथ शमनार्थ होसकती हे। वाह्य प्रयोग से सज्ञावहा नाडिया (Sensory nerves) मे उग्रता उत्पन्न होने पर प्रतिफलित क्रिया द्वारा हृदय और श्वासोच्छ्वास क्रिया उत्तेजित होती है। इस हेतु से कभी कभी मूर्च्छित मनुष्य को चेतना आजाती हे।



आभ्यन्तरिक प्रयोग से (मसाले राई खाने से) आमाशय और आंत्र के भीतर उत्तेजना उत्पन्न होती है जिससे आमाशय का रक्तश्राव बढ जाता है और मथन क्रिया तेज हो जाती है। परिणाम मे क्षुधा प्रदीप्त होती है। अन्त्र मे इसकी उत्तेजना पहुचने से मल आदि तर बनता है। इसके अतिरिक्त राई मूत्रजनन क्रिया भी दर्शाती है।

राजिका शोधन—राई का औषधि रूप से उपयोग करने के लिये ऊपर का छिलका निकाल देना चाहिये। इस हेतु से राई को थोडा जल लगाकर कुछ समय तक फैलादें। फिर चक्की मे से निकाल लेने पर छिलके पृथक होजाते हे। उन्हे सूप से फटककर अलग कर लेवे। इसे चक्की मे से पीस आटा बनाकर बोतल मे भर लेवे।

उपयोग—राई का उपयोग प्राचीन काल से हो रहा है। चरक सहिता और सुश्रुत सहिता मे भी राई का प्रयोग मिलता हे। अग्निमाद्य, अपचन, विष प्रकोप, अफारा, उदर शूल, कफ प्रकोप, आन्त्रवृद्धि, कृमिरोग, श्वासरोग और हिक्का रोग मे तथा मृत गर्भ को बाहर निकालने के लिये राई का उदर मे सेवन कराया जाता है। एव बाह्योपचार रूपसे कर्णपाक, कर्णमूल शोथ, राधिस्थान की पीडा, वातशूल, कक्षाग्रन्थि शोथ, बालको की खासी, व्रण, गाठ, अजनी, पीनस, सिरदर्द, अर्श, उदर कृमि, श्वेत-कुष्ठ, वातरक्त, गर्भाशय की विविध वेदना, बालको का अजीर्ण तथा विविध अन्तर प्रदाह [फुफ्फुसावरण प्रदाह, यकृदावरणप्रदाह, श्वास नलिका प्रदाह, बीजाशय प्रदाह, मस्तिष्कावरण प्रदाह] आदि मे राई का लेप किया जाता है। सन्निपात मे देह शीतल होने पर और प्रसव कष्ट होने पर राई से मर्दन कराया जाता है। अपस्मार की मूर्च्छा मे राई का नस्य दिया जाता है।

प्रत्युग्रतासाधक (Counter irritants) अर्थात् जिन उग्रता साधक औषधियो की क्रिया सम्बन्ध वाले स्थान पर प्रतिफलित करनी हो, ऐसे विविध रोगो पर राई के प्लास्टर या पुल्टिस लगाये जाते है। इसकी क्रिया सत्वर प्रकाशित होती है। ज्वर, विषूचिका आदि की अवसन्नावस्था मे उत्तेजना देने से लिये काख (Armpit) छाती, साथल आदि स्थानो पर पुल्टिस का प्रयोग किया जाता है।

सूचना—राई की पुल्टिस बनाने के लिये शीतल जल या सिरका मिलाना चाहिये। कारण उष्ण जल मे राई का प्रधान वीर्य द्रवीभूत नही होता।

मासिक धर्म का श्राव अल्प होना, उन्माद और रोमान्तिका आदि पिटिका प्रधान रोग, इन सबमे राई के जल से स्नान कराया जाता है। गर्भाशय का क्षत प्रधान अर्बुद रोग होने पर उत्तर बस्ति लगाई जाती है।

आख मे फूला पडने पर—राई का अञ्जन मे उपयोग होता है। कर्ण पाक मे राई और कर्पूर मिश्रित तैल कान मे डाला जाता है।

(१) **अपचन और उदरशूल मे**—राई का चूर्ण १ से २ माशे को थोडी शक्कर के साथ खिलाकर ऊपर से ५-१० तोला जल पिलावें।

(२) **अफरा**—राई २ माशे को शक्कर के साथ खिलावे। ऊपर ६ से ८ रत्ती चूने को ५ तोले जल मे मिलाकर पिला देवे। उदर पर राई का तैल लगावे।

३ **विष सेवन मे**—राई का चूर्ण १ तोले को शीतल जल मे पीसे। फिर उसको ४० से ६० तोले जल मे मिला कर पिला देने से तत्काल वमन होकर विष निकल जाता जाता है। एव अन्य वामक औषधियो के समान शिथिलता भी नही आती।

वक्तव्य—अफीम आदि से विषाक्त होने, विसूचिका की प्रथमावस्था, सन्यास रोग (मूर्च्छा) का उपक्रम तथा जुखाम मे कफाधिक्य होने पर वमन कराई जाती है। इन सब पर राई सेवन कराना, यह अति निर्भय और अत्युत्तम उपाय है।

४ **मृत गर्भ को बाहर निकालने के लिए**—राई ३ माशे और भुनी हीग ४ रत्ती को थोडी काजी (या शराब) मे मिलाकर पिला देवे।

५ **कफ ज्वर**—जिह्वा पर सफेद मैल, क्षुधा नाश और तृषानाश सह मन्द ज्वर रहता हो तो राई का आटा ४-४ रत्ती सुबह-शाम शहद के साथ देते रहने से कफ प्रकोप से उत्पन्न ज्वर दूर हो जाता है।

६ श्वास -राई आध माशे को घी, शहद मे मिलाकर प्रात साय देते रहने से कफ प्रकोप सह श्वास रोग शमन हो जाता है। यदि अपचन होकर श्वास का दौरा हुआ हो तो २ २ घटे पर २–३ वार राई देने से वेग शमन हो जाता है।

७ कफ प्रकोप—कास मे कफ अधिक गाढा हो जाने से निकालने मे अति कष्ट होता हो तो राई ४ रत्ती, सेधा नमक २ रत्ती और मिश्री २ माशे मिलाकर प्रात साय देते रहने पर कफ पतला होकर सरलता मे बाहर निकलने लगता है।

८ उदर मे छोटे कृमि—उदर चूरव (सूति) कृमि अथवा धान्याकुर के सदृश मुडे हुये अन्त्रदा कृमि हो जाने पर राई का आटा १–१ माशे, गो मूत्र ५ से १० तोले के साथ प्रात काल को कुछ दिन तक लेते रहने से रहे हुये कृमि निकल जाते हैं और भावी उत्पत्ति वन्द हो जातीहै।

९ वात वृद्धि—राई के तैल मे पकवडे या पूरी आदि तलकर खिलावे। राई और सरसो के तैल को मिलाकर मालिश करे, फिर निवाये जल से स्नान करे।

सूचना—मस्तिष्कादि कोमल स्थान और नेत्र पर तैल नही लगाना चाहिये अन्यथा जलन होती है।

२० विसूचिका—यदि विसूचिका उत्पन्न हुये अधिक समय न हुआ हो, रोग प्रथमावस्था मे हो तो राई १ माशे को शक्कर के साथ सेवन कराया जाता है।

१२ प्रतिश्याय—राई ४ से ६ रत्ती और शक्कर १ माशे को मिलाकर थोडे जल के साथ दे देने से प्रतिश्याय दूर हो जाता है।

१२ कर्ण मूल शोथ—सन्निपात होने पर कभी कभी कान के मूल मे सूजन आ जाती है। इस तरह कान मे पूय होने पर भी सूजन आ जाती है। दोनो प्रकार की सूजनो पर राई के आटे को सरसो के तैल या एरण्ड तैल मे मिलाकर लेप कर देने से रक्त विखर जाता है।

१३ सधि शूल और अर्धाङ्ग वात—आमवात या सुजाक के हेतु से या अन्य कारण से सधि पर सूजन आ जाती है और उसमे वेदना होती है। उस पर तथा नये अर्धाङ्ग वात मे शून्य हुये अङ्ग पर कपूर मिलाये हुये राई के तैल की मालिश करने से रक्ताभिसरण क्रिया बलवान होकर शोथ को दूर कर देते है। यदि अति चलने के हेतु मे या व्यायाम से सांधे मांधे मे थकावट आ गई हो और सारा शरीर टूटना हो तो भी तैल की मालिश से लाभ हो जाता है।

सूचना—सधि शोथ मे त्वचा के नीचे जल(द्रव) सग्रहीत हुआ हो तो तैल की मालिश नही करे। उसपर स्वेदन सेक, लेप आदि उपचार किये जाते है।

१४ कक्षा—काख मे गाठ (कखौरी) होने पर वह अति दुःख देती है। न विखरती है और न जल्दी पकती है। दिनो तक त्रास देती रहती है। उसे विखेरने या पच्यमान अवस्था मे सत्वर पकाने के लिये गुड, गूगल और राई को मिला जल मे बारीक पीसकर कपडे की पट्टी पर लगा निवाया करके चिपका देवें। यदि पक गयी हो तो फाडने के लिये राई और लहसुन को पीस पुल्टिस वनावें। फिर करवौरी पर एरण्ड तैल या घी वाला हाथ लगाकर पुल्टिस बाध देने से जल्दी फूट जाती है।

१५ शोथ—हाथ पैर मुड जाने से या आगन्तुक कारण से सूजन आई हो तो एरण्ड पान पर राई का तेल लगा निवाया करके बाध देने से शोथ दूर हो जाती है। इस तरह राई और नमक को जल के साथ पीस करके भी लेप किया जाता है।

१६ शीतलता और कम्प—शीत ज्वर मे अधिक ठण्डी लगती हो तथा कपन (कम्प) हो रहा हो, जल्दी शीतलता दूर नही हुई हो तो राई को शहद मे मिलाकर पैरो के तलवे पर लेप करें। फिर आधा घण्टे के बाद लेप को पोछ लेवें। ठण्डी और कम्प दूर हो जायेंगे और शरीर मे तेजी आ जायगी।

१७ वातज वेदना—राई और थोडी शक्कर को पीस, कपडे की पट्टी पर लेप कर शूल स्थान मे चिपका देवें। लगभग आध घण्टे मे जल न होने पर खोल लेवे। उस स्थान को जल से धोकर घी या तेल लगा लेवे। यदि वेदना कई दिनो से मन्द-मन्द बनी रहती हो, तो राई और सहिंजने की छाल को मठ्ठे मे पीसकर पतला लेप करे।

१८ व्रण—फोडे मे कीडे पड गये हो, तो सब कीडो को निकाल कर उसे शुद्ध करने के लिये राई के चूर्ण को घी-शहद मे मिलाकर लेप कर देने से कृमि मर जाते है।

१९ गांठ-किसी भी स्थान की गांठ बढ़ती हो तो उस पर राई और काली मिर्च के चूर्ण को घी मे मिलाकर लेप करने से वृद्धि रुक जाती है। रसौली और अर्बुदो की वृद्धि को रोकने मे राई अच्छा काम देती है।

२० अंजनी—नेत्र की पलक पर फुडिया होने पर राई के चूर्ण को घी मे मिलाकर लेप करने से तुरन्त लाभ होता है।

२१ पीनस—नाक के भीतर व्रण होकर दुर्गन्ध वाला पूय मिला श्लेष्मा निकलता रहता है, उसे पीनस कहते है। श्लेष्मा बहुधा अति पीला और अतिदुर्गन्ध वाला होता है। उस पर राई का आटा १ तोला, कपूर १॥ माशे और घी १० तोले को मिला मरहम बनाकर लगाया जाता है। उसे लगाने पर छीके आकर पूय प्रधान श्लेष्मा निकलकर क्षत शुद्ध हो जाता है। फिर कपूर और सफेद कत्थे को घी मे मिलाकर बनाया हुआ मलहम लगाते रहने से सरलता से घाव भर जाता है।

२२ कर्णपाक—राई १ तोला, लहसन १ तोला, कपूर १॥ माशे और तिल या सरसो का तेल १० तोला लेवे। तेल को गर्म करे। उफान आने पर नीचे उतार लेवे। वाष्प कुछ कम हो जाने पर राई कपूर डालकर ढक्कन ढक देवे। शीतल होने पर छानकर बोतल मे भर लेवे। इस तेल मे २-४ बून्द कान में डालते रहने से पूय स्राव दूर होता है और क्षत भर जाता है।

२३ अर्श—अर्श रोग मे कफ प्रधान मस्से हो अर्थात् खुजली चलती हो, देखने मे मोटे हो और स्पर्श करने पर दुःख न होता हो, अच्छा मालूम होता हो, ऐसे मस्से पर राई का तेल लगाते रहने से मस्से मुरझा जाते है।

२४ श्वेत कुष्ठ—राई को आचार्यो ने कुष्ठघ्न कहा है। राई के आटे को ८ गुने पुराने गोघृत मे मिलाकर लेप करते रहने से थोडे ही दिनो मे उस स्थान की रक्ताभिसरण क्रिया प्रबल होकर दाग दूर हो जाते है। इस तरह पामा, व्यूची, दाद आदि पर भी राई का मलहम लगाते रहने पर लाभ पहुच जाता है।

२५ कांटा दब जाना—त्वचा के भीतर कांटा, काच या धातुकण घुस गया हो, जो सरलता से नही निकल सकता उस पर राई को घी शहद मे मिल कर लेप कर देने से विजातीय द्रव्य ऊपर आ जाता है और स्पष्ट दृष्टिगोचर हो जाता है।

२६ सन्निपात मे भ्रम—गले पर राई का लेप करे। फिर त्वचा लाल होने पर लेप को हटा कर घी तेल लगा लेवे।

२७ हृदय की शिथिलता—हृदय मे कम्प होता हो या वेदना होती है या व्याकुलता मालूम होती हो अथवा निर्बलता आ गयी हो, तो हाथ पैरो पर राई का मर्दन करने से रक्ताभिसरण क्रिया बलवान बनकर मानसिक उत्साह और हृदय की गति मे उत्तेजना आ जाती है।

२८ अफीम विषज मूर्च्छा—अफीम का जहर अधिक बढ जाने से रोगी मूर्च्छित हो गया हो या सर्प विष से मूर्च्छा आ गयी हो तो रोगी को जागरित करने या रखने के लिये कांख, छाती और साथल आदि स्थानो पर राई का लेप लगाना चाहिये। यह लेप जागरित होने तक या अधिक से अधिक १ घण्टे तक रखे। फिर खोल कर घी या तेल लगा लेवे।

२९ ज्वर और विसूचिका मे अवसन्नावस्था—बुखार और कोलरा मे रोगी कभी कभी बिल्कुल ठण्डा और अचेत हो जाता है, उसे उत्तेजना देने के लिये कांख, छाती, साथल आदि भागो पर ऊपर कहे अनुसार राई का लेप लगाया जाता है।

३० अन्तर प्रदाह और शूल—देह के भीतर अवयव या अन्त्र त्वचा से संयुक्त हो, उनके प्रदाह जैसे फुफ्फुसावरण प्रदाह, श्वास नलिका प्रदाह, हृदयावरण प्रदाह, आमाशय प्रदाह, यकृदावरण प्रदाह, बीजाशय प्रदाह, मस्तिष्कावरण, वात नाडियो मे शूल आदि रोगो पर प्रत्युग्रता साधनार्थ राई के पान का प्रयोग किया जाता है। इस प्रयोग मे पीडित स्थान के निकट मे किसी सम्बन्ध वाले स्थान पर प्लास्टर लगाया जाता है। यह क्रिया वात नाडिया और रक्त वाहिनियो के द्वारा प्रतिफलित होकर लाभ पहुचाती है।

आशुकारी तीव्र प्रदाह मे जब प्रदाहजनित रस का शोषण कराना हो, तब यह प्रत्युग्रता साधक प्रयोग किया

जाता है। प्रदाहशमन और रसशोषणार्थ फुफ्फुसावरण, हृदयावरण, मस्तिष्क, उदर्य्यकला (Peritonium) अर्थात् सारे उदर पर रहा हुआ आच्छादन, इन सब पर राई के प्लास्टर का उपयोग होता है। मूत्राशय मे अश्मरी और पित्ताशय मे से अश्मरी का नलिका मे प्रवेश होने पर उत्पन्न शूल तथा वात नाडियो के शूल की वेदना निवारणार्थ प्रत्युग्रता साधक प्रयोग का व्यवहार होता है।

हिस्टीरिया मे मस्तिष्कगत वातनाडी केन्द्र की उग्रता दमनार्थ प्रयोग होता है। गृध्रसी नाडी (Scitic nerve) जो कूल्हे से नीचे पैरो की ओर जाती है, उसके शूल और उदर के पार्श्व भाग मे नीचे की ओर रहे हुए कटि त्रिकोण प्रदेश (Lumber triangle) मे शूल होने पर लेप लगाने से लाभ पहुच जाता है।

विसूचिका मे मासपेशियो का आक्षेप (दृढता) होने पर प्लास्टर लगाया जाता है। आमाशय प्रदाह के हेतु से होने वाली दुर्दमनीय वमन के निवारणार्थ प्लास्टर प्रयोग अति उपकारक सिद्ध हुआ है।

सूचना— १ जब सग्रहीत रक्त को बिखेर कर वेदना निवारण कराना हो, तब प्रत्युग्रता साधक प्रयोग नही होता।

२ फुफ्फुसावरण प्रदाह मे लेप या प्लास्टर छाती पर लगाया जाता है।

३ मस्तिष्कावरण प्रदाह मे प्लास्टर गोस्तन प्रवर्द्धक (Mastoid Process), जो शखास्थि के ऊपर उठे हुए भाग मे शकु आकार का भाग है, उसके नीचे लगाया जाता है। शीर्षोदर अर्थात् मस्तिष्क जल सग्रह (Hydrocephalus) होने पर भी द्रव शोषणार्थ उसी स्थान पर लगाया जाता है। एव हिस्टीरिया मे किसी अग का पक्षवध होने पर भी वही पर लेप करना चाहिये।

४ प्रलाप, मूर्च्छा, सन्यास, पक्षवध और विविध प्रकार के प्रदाहिक ज्वर, जिनमे रक्त सग्रहित होता है, उन सब पर पैरो के तल, कूल्हो (चूतडो) के पश्चादश या साथल के भीतर के भाग मे राई का लेप लगाना चाहिये एव राई के जल मे पैरो को २०-२० मिनट तक भिगोना भी हितकारक है।

५ श्वास कृच्छ्रता प्रधान रोगो मे छाती पर राई का प्लास्टर लगाना चाहिये।

६ गर्भाशय की विविध वेदना अति तीव्र और कष्ट प्रद होने पर नाभि के नीचे या कमर पर राई की पुल्टिस का प्रयोग बार बार करते रहना चाहिये।

३१ फुफ्फुस की दृढता—फुफ्फुस प्रदाह [निमोनिया] शमन हो जाने पर यदि फुफ्फुस की कठोरता (Consolidation) रह जाय तो उस भाग पर उग्रता पहुँचाने के लिये राई की पुल्टिस लगायी जाती है। फुफ्फुस की दृढता के हेतु से फुफ्फुसावरण या हृदयावरण मे रक्त सग्रह हुआ हो तो वह भी शोषित हो जाता है।

सूचना—(१) यदि प्रदाह युक्त स्थान से बिल्कुल समीप मे राई का लेप लगाया जायगा तो रक्त सग्रह का ह्रास नही होता, अपितु वृद्धि होती है। जिससे उपकार नही होता, बल्कि अपकार होता है।

(२) हृदय के लिये यह नियम लागू नही होता। हृदयावरण के प्रदाह मे उससे थोडी दूर पर [छाती पर] ही प्रयोग किया जाता है।

(३) प्रदाह की प्रारम्भिकावस्था मे या उग्रता ह्रास होने के पहले [तीव्र वेदना काल मे] लेप या पुल्टिस नही लगाना चाहिये।

(४) सगर्भावस्था मे स्तन आदि कोमल भाग पर प्लास्टर का प्रयोग निषिद्ध है।

३२ स्वर बन्ध—हिस्टीरिया मे स्वर बन्ध हो गया हो अर्थात् बोलने की शक्ति नष्ट हो गई हो तो कण्ठ मे स्वर यन्त्र पर उग्रता पहुचाने के लिये राई का लेप करना चाहिये।

सूचना—यदि स्वर यन्त्र प्रदाह हो और उस स्थान पर दबाने से वेदना होती हो तो लेप नही लगाना चाहिये।

३३ अपस्मार की बेहोशी—राई के चूर्ण का नस्य देवे।

३४ दन्तशूल—राई को निवाये जल मिलाकर कुल्ले कराने से वेदना का दमन होता है।

३५ गज—मस्तिष्क मे किसी स्थान पर बाल उगना रुक जाय अथवा सूक्ष्म कृमि, जुये उत्पन्न हो जाय, तो राई के हिम से [या फाण्ट से] सिर धोते रहने पर बाल उगने लगते है। दारुणक [सिर पर छोटी छोटी फुन्सिया होना

और खुजली चलना] और अरुंषिका [छोटी छोटी पूयवाली फुन्सिया] दूर होते है तथा जुयें मर जाते हैं।

३६. मासिकधर्म के स्राव में प्रतिबन्ध—मासिक धर्म के समय कष्ट होता हो या स्राव कम होता हो तो जल को गरम [निवाया] कर उसमे राई का चूर्ण मिलाकर कमर डूबे उतने जल में रुग्णा को १ घण्टे बैठाने पर योग्य परिमाण मे स्राव विना कष्ट से होता हे । डाक्टरी मे इस स्नान को हिप बाथ और सिटज बाथ (Hip bath or Sitz bath) सञ्ज्ञा दी है।

३७. गर्भाशय के क्षत मय कर्क स्फोट—गर्भाशय मे कर्क स्फोट (Cancer) होने पर जीवन अतिभय मे आ जाता है। कर्क स्फोट की वृद्धि होती है और रक्त वाहिनियो द्वारा दूर दूर के स्थानो पर भी अर्बुद वनाये जाते हैं। उसमे शिरा या केशिका के टूटने पर रक्त निकल जाता है लसिका स्राव भी होता है। यह स्राव अति दुर्गन्धमय होता है । इस स्राव की अधिक हानि से वचने के लिये सप्ताह मे २–३ वार राई के निवाये जल की उत्तर वस्ति द्वारा धोते रहना चाहिये। स्राव पतले जल जैसा होने पर चिकित्सा से अधिक लाभ होता है। स्राव गाढा होने पर कुछ चुनचुनाता है।

सूचना –राई २॥ तोले को १० तोले शीतल जल मे भिगोवे। फिर ममल लुआव बनाकर ७० तोले निवाये जल मे मिला देवें।

१ राई का स्नान–राई के दस तोले से चालीस तोले चूर्ण को पहले थोडे ठण्डे जल मे भिगोवे। फिर मसल कर लुआव [Paste] बनाकर टव मे भरे हुये सव जल मे मिला लेवे। यह स्नान उत्तेजक हे। रक्ताभिसरण क्रिया बढती है।

स्थानिक स्नान अर्थात् कटितक स्नान, पैरो का स्नान अथवा केवल हाथो को डुबाने के लिये जल की उष्णता से १०० से १०५ डिग्री तक रखनी चाहिये। कटि स्नान मे राई लगभग १० तोले मिलानी चाहिए।

२ राई की पुल्टिस—वडे मनुष्य के लिये अलसी ३ भाग और राई १ भाग तथा वालको मे लिये अलसी का चूर्ण १० से १५ गुना लेना चाहिये। पुल्टिस सिरके या ठण्डे जल से वनानी चाहिये । उसे चमडी लाल होने तक १० से १५ मिनिट रखनी चाहिये।

३ राई का लेप—राई को तीन गुने चावल या गेंहू के आटे के साथ मिलावे और ठडे जल से लपसी जैसी वना लेवे । फिर ४–६ या ८ इञ्च चोकोर ब्राउन पेपर या मलमल पर लेपनी से पतला लेप करे । कागज के किनारे को मोड देवे। उस पर पतला मलमल का टुकडा चिपका कर दुखते स्थान पर या जहा लगाना हो वहा लगा देवे। १०, २० या ३० मिनट मे चमडी लाल होने पर लेप को हटा लेवे । १० मिनट के बाद ५–५ मिनट पर देख लेवें। लेप हटाने पर तेल वाले हाथ से सब राई को पोंछ लेवे। फिर तैल या घी मे लगा लगावें। राई लगी हो तो शीतल जल से धोकर फिर तैल लगावें।

४ राई का पान—राई के लेप लगे हुये कागज बाजार मे मिलते है, उनको राई के पान कहते है। तस्तरी मे थोडा गरम जल लेकर उसमे पानी को फैलावे । राई की नीचे रखे, किन्तु पट्टी नही बाधे २० मिनिट से अधिक समय तक न रखे। अन्यथा छाला पड जायगा।

—गा० औ० र० भा० ३ से साभार

राई काली (Brassica Nigra)

यह धान्यवर्ग और राजिकादि कुल (Cruciferae) का वर्षायु फसल उनालु मे होने वाला क्षुप है। यह राई की ही एक काली जाति होती है। इसका पौधा, पत्ते, फूल वगैरह सब राई के पौधे के ही समान होते है। यह काली राई लाल राई की अपेक्षा गुण-धर्म मे वहुत उग्र होती हैं।

उत्पत्ति स्थान–

भारत के कई भागो मे इसकी कृषि की जाती है।

नाम–

स —कृष्ण राजिका, कृष्णिका, कृमिका, ज्वलती, क्षुधाभिजनन, क्षुजनिका। हि —काली राई, बनारसी-राई, तारामीरा, तीरा। ब —राड सरिश। गु —काली

राई। कोकण—सन-सोनव। फा—मरशाफ। अ.—खरदल। ता—कुदुगु। ते—अवालू। उर्दू—राई। अ—Black Mastard (ब्लेक मास्टर्ड)। ले—Brassia nigra (Linn) Koch (ब्रासिया निग्रा)

रासायनिक संगठन–

काली राई के वीजो मे मिनाग्नि नामक एक प्रकार का उपक्षार पाया जाता है इसके अतिरिक्त इनमे एल्व्यूमिन्स, मायमोजिन, मिनिग्रीन, गोद और कुछ रगने वाले द्रव्य भी पाये जाते हैं।

प्रयोज्य अङ्ग—वीज और तेल।

गुण-धर्म और प्रभाव–

आयुर्वेदिक मत से काली राई के पत्ते गरम, तीक्ष्ण और सुस्वादु होते हे। शरीर को शक्ति देते हे। पित्त को वढाते हे। कृमियो को नष्ट करते है और गले की शिकायतो मे लाभ पहुचाते है। इसके वीज गरम, तीक्ष्ण और कडवे होते है। ये वात को नष्ट करते हे। वढी हुई तिल्ली को दुरुस्त करते हैं। ज्वर को दूर करते हे। शरीर मे दाह उत्पन्न करते हे। कफ से पैदा हुये अर्वुद मे लाभ पहुचाते है, कृमियो को नष्ट करते है, भूख वढाते हे। चर्म रोग और खुजली मे लाभ पहुचाते है। परोपजीवी कीटाणुओ को नष्ट करते है।

यूनानी मतानुसार–

यूनानी मत से राई के वीज सफेद, काले और लाल तीन तरह के होते हे। ये गुण मे मृदु विरेचक, भूख वढाने वाले, अग्नि वर्द्धक, शुद्ध डकार लाने वाले और खासी को दूर करने वाले होते है। ये शरीर की सूजन को दूर करते है तथा तिल्ली की सूजन, विस्फोट की सूजन और सवियो की सूजन मे लाभ पहुचाते हैं। नाक, कान, आख व दातो के रोगो मे ये उपयोगी होते हैं। वाहर रहने वाले परोपजीवी कीटाणुओं को ये नष्ट करते है और इनका धुआ मक्खी और मच्छरो को नष्ट करता है।

इसके वीजो का पुल्टिस एक वहुत उपयोगी और तेज चर्मदाहक एव फफोला उत्पन्न करने वाली वस्तु है। ज्वर, सूजन वाले रोग, आक्षेप, स्नायुशूल, सधियो की सूजन, गठिया और भीतरी रक्त सचय मे इसकी पुल्टिस एक वहुत उत्तम और हाजिर जवाव वस्तु है। राई के आटे को पानी मे मिलाकर देने से यह एक वहुत सुरक्षित वमन कारक वस्तु का काम करता है। इसके वीज अगर वहुत थोडी मात्रा मे लिये जाय तो वे एक पाचक चटनी का काम करते है, अगर ये सारे ही निगल जाय तो मृदु विवेचक द्रव्य का काम करते है। अजीर्ण रोग और आतो की जडता सम्वन्धी दूसरी शिकायतो मे भी इनको देने से लाभ होता है।

इन वीजो का विशुद्ध और ताजा तेल उत्तेजक और हल्का चर्मदाहक होता है। यह गले के हलके व्रणो पर लगाने से वहुत लाभ पहुचाता है। अन्तरङ्ग रक्त सचय और प्राचीन मासपेशियो की अकडन मे यह एक वहुत लाभदायक वस्तु है। महर्षि चरक के मतानुसार राई के वीजो को दूसरी औपधियो के साथ सर्प विप को दूर करने के उपचार मे लेते है मगर केस और महस्कर के मतानुसार यह वस्तु सर्प विप के उपचार मे निरुपयोगी है।

१ **पित्तशोथ**—पित्त की सूजन पर राई की पुल्टिस वाधने से वहुत जल्दी लाभ होता है। परन्तु चमडी लाल हो जाने के पश्चात् इस पुल्टिस को उतार लेना चाहिये,नही तो वहा पर कष्टप्रद छाले हो जाते हैं।

२ **गठिया**—राई का प्लास्टर करने से गठिया की वेदना फौरन मिट जाती है। इसके तैल मे कपूर मिलाकर उसकी मालिश करने से गठिया मे लाभ होता है।

३ **वमन**—राई के आटे को पानी मे घोलकर पिलाने से वहुत शीघ्र और निरुपद्रव वमन होता है और राई के प्लास्टर को पेट पर और कलेजे पर लगाने से भयकर और हठीले वमन भी वन्द हो जाते हे।

३ **मन्दाग्नि**—राई की फक्की देने से कब्जियत की वजह से पैदा हुई मदाग्नि मिट जाती है।

५ **आलस्य**—इसके ताजे और शुद्ध तैल की मालिश करने से शरीर का आलस्य मिटता हैं।

६ **गले की सूजन**—गले की हल्की सूजन पर इसके तैल की मालिश करने से लाभ होता है।

७ **रुधिर का जमाव**—शरीर के भीतर अगर कही रुधिर का जमाव हो जाय तो वहा इसके तेल की मालिश करके सेंक कर देने से वह जमाव विखर जाता है।

८ पट्ठो की सूजन—राई के तैल की मालिश करने से पट्ठो की पुरानी सूजन उतर जाती है।

९. जुकाम—राई के तैल का पैरो और पैरो के तलवो पर तथा नाक के ऊपर मालिश करने से मस्तक की सर्दी और जुकाम एक रात मे मिट जाते है। नाक पर इस तैल की मालिश करने से नाक का बहना तुरन्त बन्द हो जाता है।

१० बच्चो की खासी—बच्चो की छाती पर राई के तैल की मालिश करने से उनकी खासी मिट जाती है।

११ बिच्छू का विष—कपास के पत्ते और राई को पीस कर लेप करने से बिच्छू का विष उतर जाता है।

१२ मृत गर्भ—राई और हीग के चूर्ण की फक्की देने से मरा हुआ बालक गर्भ से बाहर निकल जाता है।

१२ वात शूल—राई और सहजने की छाल को गाय के मठ्ठे के साथ पीसकर लेप करने से वातशूल मिटता है।

१४ सर्प विष—साप के काटे हुये को बडी मात्रा मे राई खिलाने से वमन होकर विष हल्का पड जाता है।

१५ आधा शीशी—राई और कबूतर की बीट को पीसकर लेप करने से आधाशीशी मिटती है।

१६ दाद—राई को सिरके के साथ पीसकर लेप करने से दाद मिटता है।

१७. कांख बलाई—राई को गरम जल के साथ पीस कर लेप करने से बगल के भीतर होने वाली विद्रधि मिट जाती है।

१८ बद गांठ—राई का लेप करने से बद गाठ बिखर जाती है।

१९ सिर की गज—आधी कच्ची और आधी सेकी हुई राई को पीसकर कडवे तैल मे मिलाकर लगाने से सिर की गज मिटती है।

—ब० च० से साभार

स०—रोगी, राजिका, हि०—मण्डुवा, कृपया, मण्डुवा नाम से अवलोकन करावे। रागन—स—बन्धुका। कृपया देखिये—बन्धुका।

राजगिरा (Amaranthus Paniculatus)

यह अपामार्गादि कुल (Amaranthaceae) की एक वर्ष जीवी वनस्पति होती है। इसका पौधा खूबसूरत और करीब ५ फीट ऊंचा होता है। इसके पत्ते मासल अण्डाकार और बरछी के आकार के होते है इनकी लम्बाई २ से लगाकर ६ इन्च तक और चौडाई १ से ३ इन्च तक होती है। इसके फूल गुच्छो मे लगते हैं।

इसकी फली लम्बी और गोलाकार रहती है। इसके बीज छोटे छोटे गोल२ राई से कुछ बडे होते हैं। यह व्रतियो के उपवास के दिनो मे फलाहार के काम मे आती है इसकी २ किस्में है एक हरी और दूसरी लाल।

उत्पत्ति स्थान—

इसकी सारे भारत मे शाक की तौर से कृषि की जाती है। बगीचो मे बारहो मास प्राप्त हो जाती है। यह खास करके हिमालय की ९००० फीट से ऊपर की जमीन मे खूब पैदा होती है और पैदा की जा सकती है।

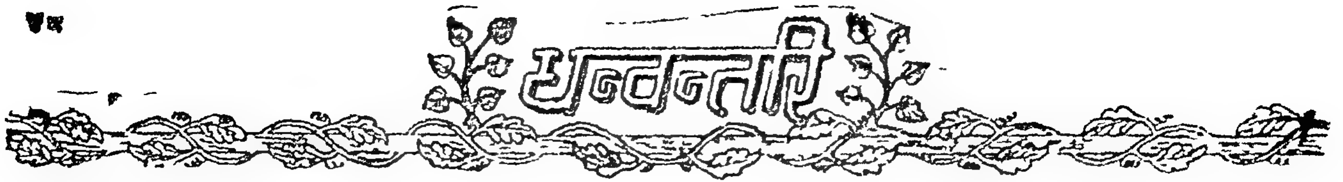
रासायनिक संगठन—

इसके बीजो मे आवश्यक पोषक तत्व अच्छी मात्रा मे जो आदर्श भोजन मे होने चाहिये, वो मौजूद है।

प्रयोज्याङ्ग—बीज, पत्ते और तने।

नाम—

स०राजाद्रि, राजगिरी, राजशाकिनी। हि०—राजगिरा, चौलाई, चुआमारसा, गनहर। ब०—चुको, नतया, राजशाक, वथु। गु०— राजगरो, चुको। दक्षिण, म०—राजगिरा। बम्बई—करोज्भाजी। काश्मीर—बस्तनाफुरीज। फा०—बुस्तना फरोज। परशियन—ताजी खुरस। बुस्तान—अफरोज। कन्नड—राजगिरी। हिमालय—केदारी चुआ। ता०—पु गी की राई। हे० Amaranthus paniculatus linn (अमेरेन्थस पेनिक्युलेटस) Amaranthus cauda-



tus linn (असेरेन्थस कोडेटस) ।

गुण धर्म और प्रभाव—

आयुर्वेद के मतनुसार इसके पत्ते और वीज कफ कारक, भारी, सारक, निद्रा लाने वाले, शीतल,कब्जियत करने वाले रुचिकारक और पित्त नाशक होते है ।

यह वनस्पति रक्त को शुद्ध करने वाली होती है । ववासीर मे इसके सेवन से लाभ होता है । पथरी मे इसको मूत्रल वस्तु की तरह देते है । गण्डमाला के फोडे मे इसके बीजो की रोटी और पत्तो का शाक करके देते है । पेशाब की जलन मे भी इसके पत्तो का स्वरस देने से लाभ होता है । (व च)

राजबला (Abutilon Tomentosum)

यह कार्पासादि कुल (Malvaceae) की अतिवला की ही एक उपजाति होती है । इसका सारा पौधा रेशम के समान मुलायम रुओ से भरा रहता है । इसके फूल नारगी रङ्ग के रहते है । इसका सारा पौधा अत्तिवला (कङ्घी) के समान होता है मगर उससे कुछ वडा होता है ।

उत्पत्ति स्थान—

वाडो और वगीचो की पडत जमीन मे पाया जाता है।

नाम—

स —राजवला । हि.—राजवला । म —चकभेंड़ा । गु —खपाट । ले —Abutilon tomentosum (एव्यूटिलन टोमेटोमस) ।

गुण धर्म व प्रभाव—

इस वनस्पति मे सब गुण धर्म अतिवला के गुण धर्म के समान ही होते है इसके बीज स्नेहन, मूत्रल, पौष्टिक और कुछ कामोद्दीपक होते हैं ।

राजमाष (चांवला) (Vigna catjung)

यह शाक वर्ग और शिम्बी कुल (Leguminosae) की वेल होती है जो फसल खरीफ या मौसम वारिष मे कृषि की जाती है । यह एक प्रकार की दाल की जाति का अनाज है । इसकी वेल उडद की वेल की तरह होती है । इसके तीन पत्ते एक सीक मे होते है । इसकी फलिया ६ इन्च से लेकर १ फुट तक लम्बी लगती है । इन फलियों की तरकारी सारे हिन्दुस्तान मे बनाई जाती है ।

इसके बीजो का रङ्ग सफेद और मुह पर काला होता है । यह सफेद लाल, काले भेद से तीन प्रकार का होता है।

वक्तव्य—दाहोद की ओर मोटा चवला वालोल के समान बीज वाले होते है । गुजरात मे छोटे चवले होते हैं।

उत्पत्ति स्थान—

इसकी सारे भारत के उष्ण भागो मे कृषि की जाती है ।

नाम—

स.—राजमाष, अलसान्द्र, चवला, महामाष । हि —चवला, लोविया, चोला, वोरा, रवाँ, लोभिया वडा । व —वर्बटी । खानदेश -सोटा । गु —चोला, चोल । म —चवल्या । त —रवन, रैस । ता कारामुनी, पायरा । ते —वोवलु । म अलसदुर । राज —चवला - अरवी—फिरिका । फा —कजराजू । को.—अलसदे । क —तदगणि । अ —Cowpea [कॉउपी) । चीनी—Beans (विन्स) । ले —Vignacatjung Walp (विग्नाकेटजङ्ग)

रासायनिक संगठन—

मास वर्द्धक द्रव्य २४%, पिष्ट ५६%, तेल १%, राख मे १% भाखराम्ल होता है ।

उपयुक्त अङ्ग—फलिया और बीज ।

गुण धर्म और प्रयोग—

आयुर्वेदिक मत से चवला भारी, स्वादिष्ट, कसेला, तृप्तिकारक, सारक, रूखा, वातकारक, रुचिकारक, स्तनो मे दूध बढाने वाला और वलकारक है ।

(भा० प्र०)

सक्षेप मे—रस–मधुर, कषाय वीर्य–मधुर । विपाक —मधुर । दोषघ्नता—कफ पित्त है ।

चवला (लोविया) सारक, रुचिकारक, कफकारी, शुक्र-जनक, अम्लपित्त नाशक, स्वादिष्ट, वातकारक, रूक्ष, कसैला विशद और भारी है।

(च० सु० स०)

लोविया—[चवला] की दाल रुखी, भारी, स्वादिष्ट, कसैली, मलरोधक, वातकारी, स्तनो मे दूध प्रगट करने वाली और रुचि को उत्पन्न करने वाली है।

चरक—चवले को अम्लपित्त का नाशक कहते है। कारण—चवला, मधुर, रूक्ष, कषाय है और अम्लपित्त, कफ वात जन्य होने से तथा चवला विपाक मे मधुर होने से ये अम्लपित्तनुद है।

यूनानी मतानुसार—

प्रकृति—मल भूत द्रव्ययुक्त गरम और खुश्क। गुण-कर्म—यह श्लेष्म नि सारक, मूत्रार्तवजनन, वाजीकरण, स्तन्य जनन, लेखन और श्वयथु विलयन तथा विशेषकर शुक्रल है।

उपयोग—

लोवियाकी कोमल और नरम फलियां अकेली या मांस के साथ पकाकर खाई जाती है और पक्की फलियो के बीजो की दाल पकाकर खाते है। आर्तव जनन के लिए इसका क्वाथ पिलाते है। चेहरे का रङ्ग निखारने और सूजन उतारने के लिये इसका लेप लगाते है। अहितकर—आनाह कारक एव चिरपाकी। निवारण—दालचीनी, अदरक और कालीमिर्च।

मात्रा—क्वाथ रूप मे १ तोला।

[यू० द्र० वि०]

राड़ी (Lathyrus aphaca)

यह शिम्बी कुल (Yeguminosae) का एक धान्य है। जिसको आगरा व अवध के पास अकरी नास से पुकारा जाता है। यह गेहू और ज्यादातर मसूर के खेतो मे अपने आप उगता है। इसकी फलिया लम्बी-लम्बी होती है, उनमे से जो गल्ला निकलता हे उसकी शक्ल कुछ कालास व मसूर के दाने की मानिन्द ललाई लिये रग की होती है, लेकिन वह गोल होता हे और मसूर के दाने से किसी कदर छोटा। अक्सर मसूर की दाल गल जाती है और यह नही गलती। इसलिये किसान लोग इसको अलग कर लेते है। शिगरफ की इतनी वडी मात्रा इसी गल्ला "रवाडी या राडी" के साथ एक ही मात्रा मे एक तोला तक आसानी से खाई जा सकती है। शिगरफ के अवगुण नष्ट करने के वास्ते इसका वजन शिगरफ के वरावर होना चाहिये।

उत्पत्ति स्थान--

यह उत्तरी पश्चिमी भारत मे, पजाव, उत्तर प्रदेश, वगाल, मध्य भारत और पश्चिमी हिमालय पर्वतो पर ७००० फिट की ऊचाई पर होती है।

गुण धर्म व प्रयोग—

सप्ताह उल खजायन जिसमे अक्सीर और रसायनो का वर्णन है जो दफ्तर अलहकीम मोची दरवाजा लाहौर (पाकिस्तान) से प्रकाशित है। उसके पृष्ठ ९३ से ९५ वें तक विना शुद्ध किये शिगरफ (हिगुल) सेवन का प्रयोग है और वह भी रत्ती दो रत्ती की मात्राओ मे नही होकर १ ही मात्रा मे १ तोला देना लिखा हे और वह उसकी दर्प-नाशक औषधि के साथ दिया गया है। जिसकी परीक्षा कई हकीमो ने करके अजीव असर पाया है वह योग वैद्य वन्धुओ की सेवा मे प्रस्तुत है।

अशुद्ध शिगरफ रूमी योग—शिगरफ रूमी, राडी या रवाडी गल्ला बरावर लेकर अलग-अलग पीसकर वस्त्रपूत चूर्ण बनाकर मिला लेवे और फिर इसको एक प्रहर अच्छा खरल करके शीशी मे रख लेवे।

गुण—प्रमेह, वीर्य का पतलापन, स्वप्न दोष, नामर्दी, रुकावट की कमी, खून की कमी आदि मे यह दवा ६ माशा लेकर एक सेर गाय का दूध पीवे। इस दिन और इसके सेवन के दो दिन बाद तक भोजन मे दूध चावल की खीर जिसमे घी डाला गया हो सेवन करे। एक हफ्ते के वाद ६ माशा दवा ओर ऊपर माफिक सेवन करे। भोजन भी तीन दिन तक वही चावल दुग्ध क्षीर घृत का करना चाहिये। किसी किसी को इसके सेवन से कब्जी या वेहोशी

होती है अगर ऐसा हो तो हफ्ते भर का बीच मे विश्राम देकर दवा को फिर सेवन करावे। क्योकि गुण तब ही होता है जब दवा का सम्यक पाचन हो। इसके एक वक्त खाने से एक साल तक अच्छी ताकत रहती है। पुस्तक मे उदाहरण है कि एक व्यक्ति प्रमेह, स्वप्न दोष, नपुंसकता से कई वर्षों से रुग्ण था और चिकित्साओ से ना-उम्मीद हो चुका था। उसको सात माशा शिगरफ रूमी और ७ माशा राडी' गल्ला मिलाकर दूध के साथ खिलाया गया उसको कुछ दस्ते लगी तीसरे दिन दोनो दवाइया दश दश माशा खिलाई गई सिर्फ कुछ उबकाइया आई'। एक हफ्ता के बाद दोनो दवाइया १-१ तोला दी गई। इससे न तो दस्तें हुई नही कय व बेहोशी। दवा खाने के दो दिन बाद से ही वह व्यक्ति ऐसा ताकतवर और तन्दुरुस्त हो गया कि जवानी मे भी वह ऐसा नही था।

(रा वै स पत्रिका से)

रान चिमनो Andrographis echioides

यह वासकादि कुल (Acanthaceae) की एक बनस्पति होती है। इसका पौधा आधा फीट से १॥ फीट तक ऊचा होता है।

उत्पत्ति स्थान-

यह बनस्पति भारतवर्ष के खुश्क प्रदेशो मे पैदा होती है।

नाम-

हि, म-रान चिमनी। गु-कालू किरायतू। मल-पिटुम्बा द-रान जिमनी। ले-Andrographis echioides Nees (एण्ड्रो ग्राफिस इचि आइडस)।

गुण धर्म और प्रभाव-

रीड के मतानुसार यह बनस्पति बुखार के अन्दर उपयोगी समझी जाती है। (ब. च)

रानीफूल (Polygonaum Plebejum)

यह चुक्रादि कुल (Polygonaceae) की एक फैली हुई शाखाओ वाली बनस्पति होती है। इसके पत्ते ४ से लेकर १७ मिलीमीटर तक लम्बे होते है। इसके फूल गुलावी रग के होते है। इसके फल कडे छिलके वाला, चिकना और चमकदार होता है।

उत्पत्ति स्थान-

यह बनस्पति हिमालय मे काश्मीर से लेकर भूटान तक ७ हजार फीट तक की ऊचाई पर होती है।

गुणधर्म और प्रभाव-

क्वार्टर के मतानुसार लखीमपुर मे इसके पौधे को सुखाकर उसका चूर्ण करके निमोनिया के रोगियो को औषधि के रूप मे खिलाने के काम मे लेते है।

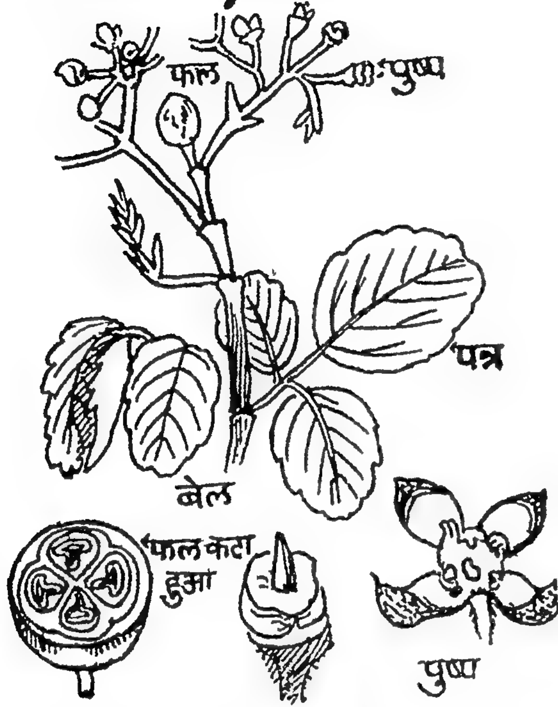
केम्पबेल के मतानुसार सथाल लोग इसकी जडो को आतो की तकलीफ मे सेवन करने के काम मे लेते है।

रामचना [Vitis Trifolia]

यह द्राक्षाकुल (Vitaceae) की एक वडी वेल होती है। वर्षा ऋतु मे इसकी हरी भरी वेल जगलो, झाडियो तथा थूहर के वृक्षो पर खूब फैली हुई देखने मे आती है। डाक्टरो ने इसकी गणना अगूर कुल मे की है। इसका तना पतला, अनेक शाखा प्रशाखाओ से युक्त और त्रिकोणाकार होता है। पत्ते की डडी की दूसरी ओर [illegible] के समान वाल होते है, जो झाडी आदि से लिपट जाया करते है। प्रत्येक सीक पर तीन तीन पत्ते लगते है, जिनमे से बीचका पत्ता वडा होता है। पत्ते डडी की ओर से गोलाकार होकर बीच के भाग मे अणीदार होते हैं फूल किंचित हरापन लिये सफेद रग के झूमको मे आते है और फल भी झुमको मे ही मटर के समान गोल होते है और कच्चे रहने की दशा मे हरे, और पकने पर नीले रङ्ग के तीन-चार बीज वाले और रस से भरे हुये होते है।

रामचना

Vitis trifolia Linn



बीज त्रिकोणाकार और नुकीले होते हे। इस लता के नीचे लगभग ६ इच का एक कन्द बैठता हे। इस कन्द से ततु निकलकर जमीन के अन्दर फैलता है और एक दो हाथ की दूरी पर वैसे ही एक एक कन्द बैठता हे। इस प्रकार जगह जगह आठ-दस कन्द होते है। इस वेल के पत्ते, डडी सब खट्टे होते हैं। चित्र अवलोकन कीजिये।

उत्पत्ति स्थान-

यह भारत के सभी प्रदेशो मे और विशेषकर उष्ण प्रदेशो मे हिमालय पहाड तक तथा सिलोन के जगलो मे तथा झाडियो के वृक्षो आदि पर अधिकता से पाई जाती है।

नाम-

सं—अत्यम्लपर्णी, तीक्ष्ण, कडूरा, वल्लिसूरणा, करमड वल्ली, वनस्था, अरण्य वासिनी। हिं०—रामचना, खट्टुआ, अम्लबेल, अमलबेल, अमर्ती, इमर्ती, गिदाद द्राक, कस्सर, बं०—काडवड वेनि, बदल, बुन्दल, अमल लता, सोनकेसुर। राज०—रामचिणा। महाराष्ट्र—आवेट वेल, कडमड वल्लि, ओधी, अवट वेल। ते०—मडलमारी, कुरुदिन्ने, काडेय तिग्गे, कनपटिगे, मडल मारीतिगे, मेकमेस्त निचेट्टु, खाट खट्टव वेल्य। क०—हिगोली, जारिललरा। ता०—तुकबुलिरिक। आसामिया—मैमटी। प०—कारिक, आम्ल वेल, गिदर द्राक, द्रिकी, वल्लर। गु०—खाटखटबो मिंहली—वलरतदियलबु। ले०—Vitis trifolia, Syn Vitis earnosa Vitis pentaphylla (विटिस ट्रिफोलिया)।

प्रयोज्याङ्ग—कन्द, पत्र और फल।

गुण-धर्म और प्रयोग

अत्यम्लपर्णी (रामचना) तीक्ष्ण, अम्ल, अग्नि को दीपन करने वाली, रुचिकारक, प्लीहा, शूल वात हारक, गुल्म और कफनाशक है। —रा० नि०

१ इसकी जड और बीज औषध प्रयोग के काम मे आते है। इसकी जड को कामराज कहते है जिसका लोशन बनाया जाता है। हल की रगड से बैलो के कन्धों पर जो घाव होते है, उन पर पत्तो की पुल्टिस लगाई जाती है। इसकी जड को कालीमिर्च के साथ पीसकर फोडे पर लगाने से लाभ होता है।

२ बिच्छू के काटे हुये स्थान पर इसका कन्द घिसकर लगाने से फायदा होता है।

३ सूजन और फोडे पर कन्द की पुल्टिस बाधनी चाहिये।

४ फुन्सियो पर पत्तो को कालीमिर्च के साथ पीसकर लगाने से फायदा होता है।

५ अतिसारमे फलो की तरकारी खाना लाभकारी है।

६ हल की रगडसे बैलो के गर्दन मे घाव उत्पन्न होने पर पत्तो की पुल्टिस बाधनी चाहिये।

७ इसके पत्तो का शाक घृत मे तलकर थोडा-थोडा खाने से सुजाक मिटता है। इसको लगाने से खाज आती है। मूल को खाने से जीभ मे खाज आती है। यह एक प्रकार का वल्ली युक्त—वेलदार सूरण जिमीकन्द होता हे। इसका अधिक प्रयोग जगली लोगों मे होता है।

अनुभूत चिकित्सा सागर मे जो वर्णन किया है वह सब अम्लपर्णी का है। —रूप निघण्टु से साभार

रामतिल (Guziotia abyssynica)

यह धान्य वर्ग और भृङ्ग राजादि कुल (Composıtae) का वर्प जीवी पौधा होता है। पौधा कोमल लोमावृत्त। पत्र ३ से ५ इच लम्वे, पत्र दण्ड छोटा। पत्तो के किनारे करौती के समान कर्तित। पुष्प विम्फारित, पत्र दल ५ व वडे हरे रङ्ग के। पुष्प पीले रङ्ग के। इसकी कृपि शीतकाल मे होती है।

उत्पत्ति स्थान—

यह अफ्रीका देश का उद्भिद है। १८०० ईस्वी मे भारत लाया गया है। वेरार के राजा के व्रिटिश रेजिडेन्ट एव मि० हेनिबेंगलोर से कलकत्ता लाये थे। इसकी कृपि भारत मे सर्वत्र विशेपकर हुगली जिला के गोघाट अचल मे एव मैसूर, गुजरात, राजस्थान आदि मे होती है।

नाम—

म०—रामतिल, कालातिल। हिं०, राज०—कालातिल, रामतिल। व०—रामतिल, सरगुजा। गु०—खरसाटी, रामतल, केसानी। म०—कारिया, खुरासानी। वो—रामतिल। ता०—कट्टेल्ल। ते०—वेलेसुलु, यूसी। कन्नड—काडेरल, हुचेल्लु, गुरेल्लु। अं०—(Nıger seed, Kersanı seed (निगर सिड, केरसानि सिड)। ले०—Guızotıa abyssynıca cass (गुडजोटिया एवीसिनिका)।

प्रयोज्य अङ्ग—वीज और तेल।



रामतिल
-GUIZOTIA ABYSSYNICA CASS

गुण धर्म और प्रयोग—

इसके वीज उत्तम मूत्र–जनन और आर्तवकर हे। अनार्तव मे १ तोला वीज गुड के साथ दिये जाते हैं। मलावरोध से उत्पन्न अर्श मे तिल और तैल वहुत उपयोगी होता है। इसकी राख उत्तम मूत्र जनन है।

इसका तैल तिल तैल की अपेक्षा कुछ अपकृष्ट है। तैल वात व्याधियो मे मर्दन के काम मे आता है। इसका तैल भी मीठा होता है और तिल के साथ उपयोग मे आता है।

(भा व वगाल भा २ से)

रामदतोन (Smilax prolifera)

यह पलाण्डुकुल (Lılıaceae) की एक पराश्रयी लता होती है।

उत्पत्ति स्थान—

यह पश्चिमी हिमालय, कुमायू, नेपाल, सिलहट, वगाल, विहार, व्रह्मा और दक्षिणी पेनिनशुला मे पैदा होती है।

नाम—

युक्त प्रान्त–राम दतोन। सिंग—महा कवरासा। ले (Smılax prolıfera Rolxe) (स्मीलाक्स प्रोली फेरा)।

गण धर्म व प्रयोग—

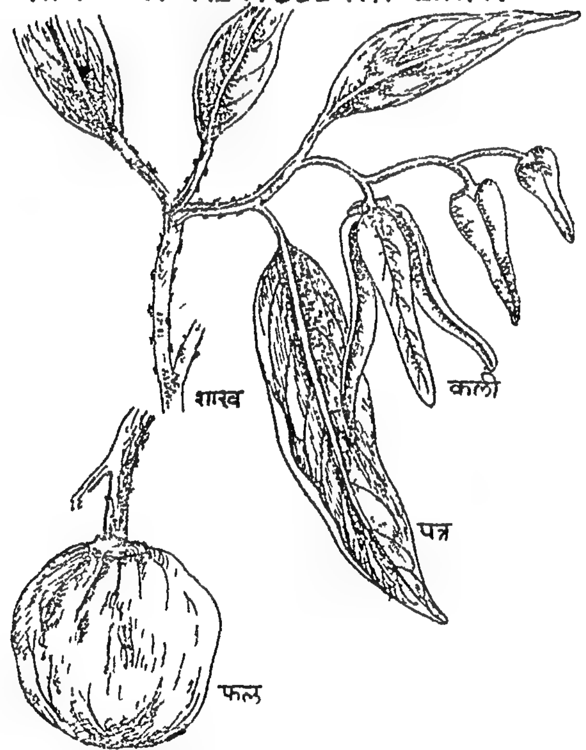
छोटा नागपुर के मुडा जाति के लोग इस वनस्पति

की जड को पीसकर उसको मिश्री या जमे हुये गाय के दूध में मिलाकर या पानी के साथ खूनी पेचिस और पेशाब की ऐसी शिकायते जिनमे पेशाब काला और लाल होने लगता है उनको दूर करने के लिये पिलाते है। इसके साथ ही वे रात मे महुये के सूखे फलो को पानी मे भिगोकर रखते है। सवेरे उठते ही वे इस पानी को पीते है और उसके बाद इस औषधि का सेवन करते हैं। ऐसा विश्वास किया जाता है कि इसके सेवन से खूनी पेचिस और मूत्र सम्बन्धी शिकायतो मे बहुत लाभ होता है।

(व च)

रामफल (Annona raticulata)

यह सीताफलादि कुल(Annonaceae) का एक छोटा वृक्ष होता है। मूल—वेस्ट इण्डिज का है। पान ५ से ८ इच लम्बे, १½ से २ इच चौडे। फूल—सीताफल से बडे गोलाकार पीले रग के और पकने पर कुछ लाल हो जाते है। वर्षा ऋतु के अन्त मे पकते है। इसके वीज पीले और करेले के वीज के समान पीले होते हे। स्वाद सीताफल से मिलता, किंतु कम मधुर। शाखा की छाल के रेशे मे से डोरी वनती है। ताजे पानो मे से नील के सदृश रग निकलता है।



उत्पत्ति स्थान—

इसकी खेती भारतवर्ष मे कई स्थानो पर की जाती है।

नाम—

स.—रामफलम्, अग्रिमा, लवनी। हिं.—रामफल, लवनी नौना। म. गु क.—रामफल। को —अतोन। मल —मनीला, नीलम। सथाल—गोम। ता रामचिता। ते —रामफलम्। अ (Bullock's heart) ले —(Annoha reitculata Sinn) (आन्नोना रेती कुलाटा)।

गुण धर्म और प्रयोग—

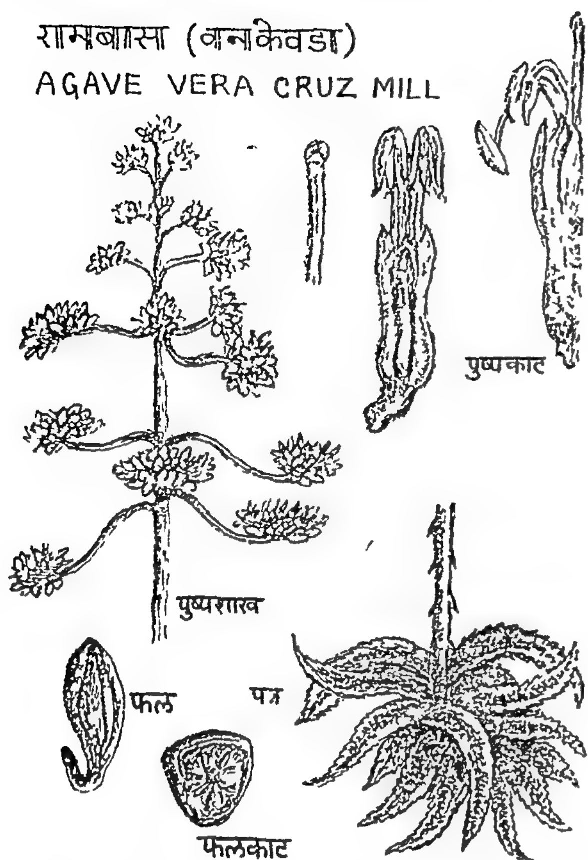
रामफल—सकोचक, रक्तदोषहर, कसैला, मीठा और खट्टा, कफ वात वर्द्धक, रुचि, दाह, तृषा, पित्त, श्रम और क्षुधा को मद करता है। फल ग्राही और कृमिघ्न होने से आमातिसार मे पिलाया जाता है। फल सेवन से उदर के सूक्ष्म कृमि मर जाते है। रामफल—अतिसार, पेचिस से पीड़ित के लिये हितकर है। मूल का उपयोग अपस्मार पर होता है।

इसकी छाल एक प्रभावशाली सकोचक पदार्थ होती है।

(गा. औ. र. से)

रामबांस (Aloe Americana)

यह गुडूच्यादि वर्ग और पलाण्डु कुल (Liliaceae) का क्षुप प्राय घीग्वार के समान होते हैं, परन्तु घी कुआर से कुछ कालापन लिये और वडे तथा पतले होते है और केवडे से छोटे होते है। इस पर लाल और सफेद रग के



गुच्छेदार फूल आते है। पजाब मे रामवाण नाम से प्रसिद्ध है। इसके क्षुप उडती रेती बध करने के लिये बोये जाते हैं।

उत्पत्ति स्थान--

समग्र भारत मे बाग और खेतो की वाडो पर अधिकता से होते है।

नाम--

स.—क्षुद्रकेतकी, तृण केतकी, रज्जुदात्री, मव्यदटा, पृथक्पुष्पा। हि—रामबास, रामकोटा। गु—केतकी छोटी जगली कु वार। राज—रामवास। पोरबन्दर—विलायती-केतकी, विलायती कु वार। म—इलायती केउरा, राकास हट्टा। ले Aloe americana (एलोई अमेरिकाना)।

गुण धर्म और प्रभाव—

राम वास—चरपरा, स्वादु, कडवा, हलका, विष और कफनाशक है। इसका फूल—हलका, चरपरा, कडवा, कांति-जनक, गरम, वात कफनाशक, केशो की दुर्गन्धता को दूर करने वाला और तापनाशक है। इसके फूल का जीरा—सिध्म और कण्डूनाशक है। इसका फल किंचित उष्ण, स्वादिष्ट, वात, प्रमेह और कफनाशक है।

—नि० र०

इसका मूल मूत्रल और विस्फोट नाशक है। कहा जाता है कि इसका सारसापारेला के साथ मेल करने मे आता है। यह भी कहा जाता है कि इसकी जड को भली प्रकार वाफ करके राधने मे आवे तो यह एक स्वादिष्ट, पौष्टिक खुराक की तरह काम आ सकती है। इसके रेशे उद्योग मे बहुत काम मे आते है।

—व० व० गुजराती

रामलो (Uacaranga indica)

यह थूहर कुल [Euphor biaceae] का एक बडी जाति का वृक्ष होता है।

उत्पत्ति स्थान—

इसके वृक्ष पूर्वी हिमालय, खासिया पहाड और दक्षिण पेनिनशुला मे पैदा होते है।

नाम—

कुमाऊ—रामलो। नेपाली—मालटा। ता०—वट्टुटा-मारा। मल०—पुठाटामारा। ले०—Uacaranga indica wight (मेकेरेङ्गा इण्डिका)।

गुण-धर्म और प्रभाव—

इसका गोद फोडे-फुन्सियो के ऊपर लगाने के काम मे आता है।

—व० च०

रामशर (हापरमाली) (vallaris heynei Spreng)

यह कुटजादि कुल (Apocynaceae) की लम्बी लता की झाड़ी होती है, छाल हलके रग की, पत्र १½ से ४ इच लम्बे व पौन से डेढ इच चौडे, सूक्ष्म रोमावली युक्त, पत्र दंड पौन से आधा इची।

पुष्प दड—३ से १० विभागो से युक्त।

फूल—छोटे ¾ इची व्यास विशिष्ट श्वेत वर्ण व सुगध युक्त। कुछ मौलश्री के फूलो के समान पुष्प।

पुष्प दल—५, डिम्बाकृति, लम्बा, स्थूल, कोणो का विस्तृत। स्त्री पुष्प दड कोमल रौये युक्त।

फल—६ इची लम्बा व २ इची चौडा, सरल मूल की ओर गोलाकार, अग्र भाग क्रमश नोकीला, फल पकने पर फट जाते हे।

बीज—१ इची, डिम्बाकृति, अग्रभाग ठूंठ की तरह फल का खोल वडकने ओर गूद से पूर्ण होता हे। शाखा की गाठ से मूल निकलकर भूमि मे प्रवेश करते है। इसके पत्तो तोडने से उतरन के समान दूध निकलता है।

फूलने फलने का समय—फूल ग्रीष्म काल मे आते हे।

उत्पत्ति स्थान——

सारे बग प्रदेश मे जगलो के किनारे इसके वृक्ष देखे जाते है, बोटेनिकल गार्डन शिवपुर, गङ्गा के तीर वर्ती स्थानो से हिमालय प्रदेश, मध्य भारत ओर दक्षिण भारत मे तथा पश्चिमी वगाल की शुष्क जमीन मे पैदा होती है।

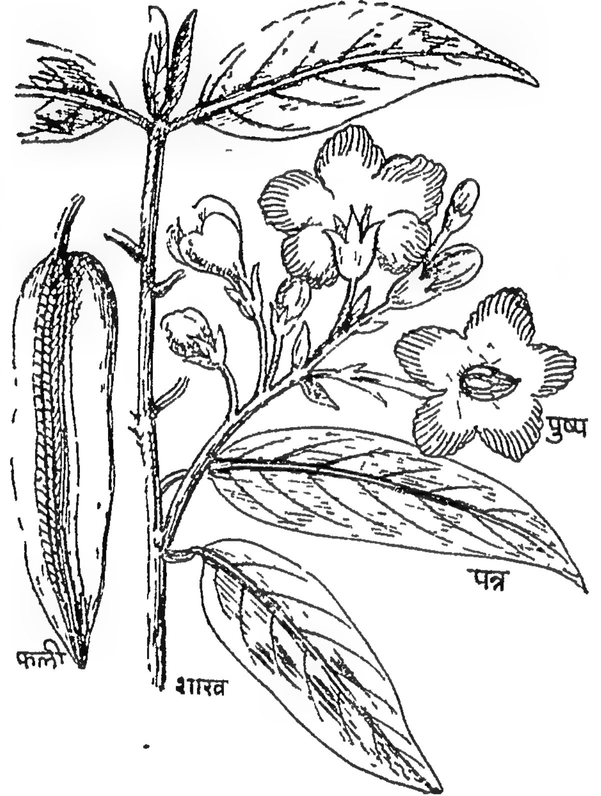
नाम-

स—भद्रवल्ली, भास्फोता हिं—रामसर, रामशर। ब—हापरमाली। ने—पुट्टापोदार याराला। उड़िया—हापर माली। ले—वेलेरिस हिंनि स्प्रेंग (Vallaris heyncei Spreng)।

उपयुक्त अङ्ग—दूध और मूल की छाल। मात्रा—१ चावल।

गुण धर्म और प्रयोग-

इसकी शाखा मे चितरक (चित्रक) के समान गर्भपात करने की शक्ति है। हापरमाली का दूध, चन्दन तैल व



कपुर का योग चर्म रोगो पर लगाने से दूषित फोडे आराम होते है। इसका दूध व्रणो मे और किसी स्थान पर कट जाने से व्रणो पर व्यवहृत होता है। —अटकिन्सन।

दूध की तरह इसका दूध उत्तेजक, यह पुराने क्षत व शोथ मे व्यवहरित होता है। औषध प्रयोग करने से पहले प्रदाह होकर शीघ्र ही घाव भर जाते है।

नखो के अन्दर प्रदाह होने पर इसका दूध भरने से कष्ट आराम हो जाता है ओर नया नाखून उत्पन्न होजाता है। —चक्रदत्त।

इसकी छाल सुजाक निवारक है। इसके पत्तो को पीस कर प्रलेप करने से शोथ आराम हो जाती है। इसका दूध वात वेदना नाशक है। मूलत्वक भेदक है। इस वृक्ष की

छाल, नारियल का तैल, घृत और चावलों के सहित व्यवहार करने से उदरामय आराम होता है। फूलो का अग्रभाग पानी के साथ खाने से वमन का निवारण होता है। एक चावल के परिमाण मे इसके सूखे दूध या इतने ही परिमाण मे रस का सेवन करने से जुलाप के समान विरेक आते है।

—भा व व से

रामशर —देखिये-मुञ्ज के वर्णन मे

रामेठा (Lasiosiphon eriocephalus)

यह रामेठादि कुल [Thymelaeaceae] का एक छोटा वृक्ष २ फुट से ६ फुट तक ऊचा होता है इसके हल्के लाल रङ्ग की और बैंगनी रङ्ग की सीधी-सीधी वहुत सी डालियां होती है। इसके पत्ते अखडित किनारो वाले, दो से तीन इच तक लम्वे और वरछी के आकार के होते है। इसके फूल शाखाओ के शिरो पर आते है। हर एक फूल में ४ से लेकर ५ तक पखुडिया होती है इसके फूल की नली वहुत सकीर्ण होती है और उसके ऊपर सफेद अथवा पीले रुओ की पीछी लगी हुई रहती है। इसके फल वहुत छोटे होते है और ये फूल की नली के हिस्से मे लगते है। हर एक फल मे एक बीज होता है।

प्रयोज्याङ्ग—छाल।

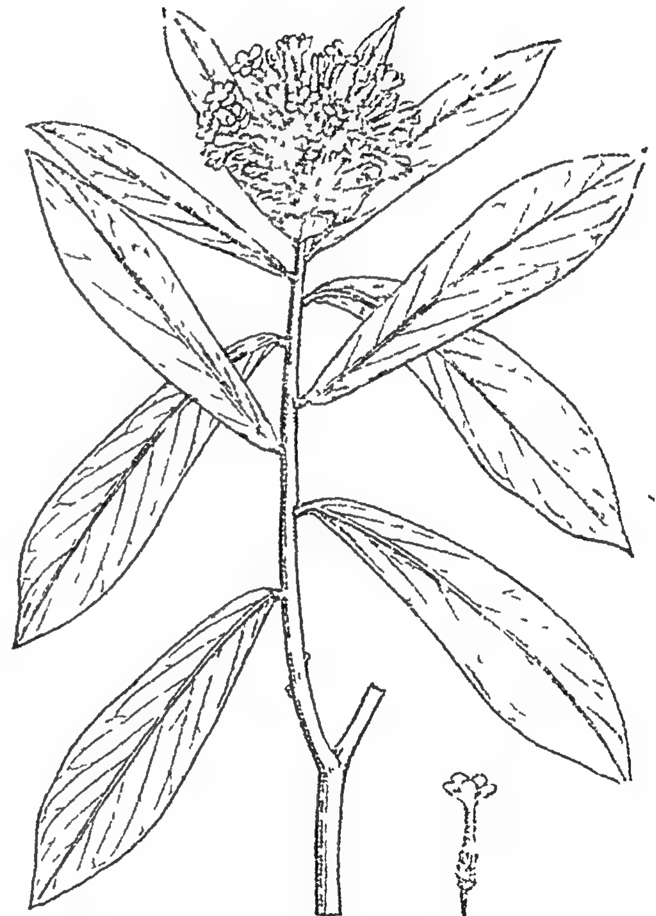
उत्पत्ति स्थान—

इसके वृक्ष दक्षिणी हिन्दुस्तान मे महावलेश्वर, माथेरान, लानोली, पश्चिमी घाट से वम्वई तक, तामील नाड प्रदेश, नीलगिरि मे ७००० फीट तक की ऊचाई पर टेकरियो और गुफाओ में पैदा होते है।

नाम—

स—दग्धा, दग्धारुहा। हि—रामेठा। म, गु—रामेठा। ले—Lasiosiphon eriocephalus Dene [लेसियो सिफेन दूरियो सीफेलस]।

विशेष वर्णन—वम्वई वैद्य सभा के समक्ष जामनगर के प्रोफेसर हीरजी माधव जी ने भी इस वनस्पति का विवेचन करते हुये वतलाया था कि इस वनस्पति की शाखायें झीपटे के समान होती है। अपामार्ग की डाली मे जैसी गठाने होती है वैसी गठाने इसकी शाखाओ मे भी होती है। यह वनस्पति दक्षिण प्रान्त मे वहुत अधिक होती है। इस वनस्पति का दातोन करने से दात की सारी बत्तीसी ढीली होकर गिर जाती है। अगर किसी को कोई



रामेठा
LASIOSIPHON ERIOCEPHALUS DENE

दात गिरना हो तो उस दात के पास उतने ही भाग मे इस वनस्पति की डाली को सावधानी के साथ घिसने से वह दांत विना किसी प्रकार की तकलीफ के वाहर निकल आता है। इसी प्रकार अगर इस वनस्पति को जलाकर इसकी राख भी दात पर लगाई जाय तो भी उससे दांत निकल आते है। इसके पश्चात् सुप्रसिद्ध वनस्पति शास्त्री जय कृष्ण इन्द्र जी ने भी वैद्य कल्पतरु मे इस वनस्पति के सम्वन्ध मे कुछ चर्चा की थी।

उन्होने लिखा था कि—

"वनस्पति शास्त्र के अनुसार 'रामेठा' थाई मिलेसी [Th-y melaeceae] नामक कुल की वनस्पति है। इस वनस्पति का लेटिन नाम लेसियोमिफोन इरियो सिफेलस हे। इस वर्ग मे करीब ३६० भिन्न–भिन्न प्रकार की वनस्पतिया पैदा होती है। इनमे से करीब २० जातिया भारतवर्ष मे भी पैदा होती है।"

"सिद्ध मत्र निघण्टु" मे उस वनस्पति का सस्कृत नाम दग्धा, दग्धारुहा, दग्धिका, रोमशा, कर्कशदला इत्यादि लिखे है।

"यह वनस्पति दातो को गिराती हे या नही इस विषय का प्रत्यक्ष अनुभव हमको नही है। पर कागरा गजेटियर मे लिखा है कि इसकी लकडी और इसकी राख दातो का नाश कर देती हे। इसी भय से यहा के निवासी इसका उपयोग करने मे वहुत डरते हैं।

सर जे पैक्स्टन कहते है कि इस वर्ग की वनस्पतियो की छाल इतनी दाहक [Caustic] होती है कि अगर इसको दातो के नीचे चावा जाय तो वहुत वेदना उत्पन्न होती है। डाक्टर बेंटली का कथन हैं कि इस वर्ग की वनस्पतिया उनकी छाल की मजवूती और दाहक गुण के लिये प्रसिद्ध हैं। वनस्पतियो का यह वर्ग जहरीला होता हे। इस वर्ग की वनस्पति डेफनी मजेरियून ब्रिटिश फारमाकोपिया मे सम्मत मानी गयी है। मजेरियून की छाल छाला उठाने के लिये और दातो के रोग मे लार वहाने के लिये चवाने के काम मे ली जाती हैं। इसके अतिरिक्त एक उत्तेजक द्रव्य की तरह पसीना लाने और मूत्र वढाने के लिये भी इसका उपयोग किया जाता ह। इसके ये सव गुण इसमे पाई जाने वाली एक दाहक राल और एक दाहक उडनशील तेल के ऊपर निर्भर है। डा खोरी का कथन है कि 'रामेठा' की छाल का उपयोग वहुत सावधानी के साथ करना चाहिये क्योकि अगर इसकी छाल को अधिक चवाया जाय तो दात की जड़े ढीली पडकर सूज जाती है और दात गिरने का भय रहता है। उपरोक्त सारे विवेचन से यह मालूम होता है कि 'रामेठा' और रामेठा के वर्ग की तमाम वनस्पतिया दाहक और जहरीली होती हैं। इस का उपयोग करने मे वहुत सावधानी की जरूरत होती है।

उपरोक्त अवतरणो के होते हुये भी इस वनस्पति के सम्वन्ध मे अभी तक भी सन्देह वना ही हुआ है। लेफ्टनेट कर्नल कीर्तिकर और मेजर वसू 'इण्डियन मेडिसिनल प्लान्टस' मे लिखते हे कि यह वनस्पति एक शक्ति-शाली चर्मदाहक पदार्थ है। लेकिन मनुष्य शरीर पर इसके क्या प्रभाव होते है? यह बात बिल्कुल अनिश्चित हैं। इसकी छाल मछलियो के लिये विष का काम करती हे। दक्षिण मे इसके पत्ते घाव, भीतरी चोट और सूजन के ऊपर लगाने के काम मे आते हे।

और भी कुछ लोगो ने इस वनस्पति के सम्बन्ध मे जानने की चेष्टा की हे मगर वे किसी निश्चित परिणाम पर नही पहुचे हे। इसलिये इस वनस्पति का प्रयोग करने वालो को वहुत सावधानी से काम लेना चाहिये।

गुण धर्म और प्रभाव—

आयुर्वेद के मतानुसार 'रामेठा' तीक्ष्ण, तूरा, गर्भ और वात को नष्ट करने वाला, पित्त को कुपित करने वाला और जठराग्नि को दीपन करने वाला होता हे।

इस वनस्पति के सम्वन्ध मे वैद्य समाज के अन्दर कई प्रकार की किवदन्तिया प्रचलित है। विशेषकर गुजरात के वैद्यो मे इस वनस्पति को लेकर वहुत उहा पोह हुआ हे। मगर अभी तक इस वनस्पति के निश्चित गुणो के सम्बन्ध मे कोई भी विश्वसनीय वात मालूम नही हो सकी है और आज भी यह वनस्पति वैद्य समाज के सन्मुख उतनी ही रहस्य पूर्ण बनी हुई है। अत इस वनस्पति के सम्वन्ध मे जो भी विवेचन यहा किया जाता है उसको असदिग्ध नही मानना चाहिये। 'जगली जडी बूटी' के लेखक इस वनस्पति का विवेचन करते हुये लिखते है कि—

इस वनस्पति के पत्ते और इसकी छाल भयकर जलन पैदा करने वाली और जहरीली होती है। अगर यह भूल से चवाने मे आजाय तो मुह मे अत्यन्त वेदना उत्पन्न करती है। इतना ही नही वल्कि अगर यह कुछ अधिक मात्रा मे चवाने मे आ जाय तो मुह से लार वहने लगती है। दात के मसूडे सूज जाते है अथवा गिर भी जाते हैं।

इसकी लकडी अथवा इसकी राख भी इसी प्रकार दातो को नष्ट करती है और इसलिये अगर कोई दाढ पोली हो



रामेठा
LASIOSIPHON ERIOCEPHALUS DENE

जाय और उसमे वार वार वेदना होती हो तो उस दाढ के अन्दर इस वनस्पति का चूर्ण भरने से वह दाढ जड मूल से उखड जाती है और रोगी को शान्ति मिल जाती है । फिर भी इस कार्य के लिये इसका उपयोग करना बहूत खतरनाक है क्योकि अगर दाढ मे भरते समय दूसरे दातो पर भी यह वनस्पति लग गई तो वे दांत भी कमजोर हो जाते हैं ।

निमोनिया रोग और रामेठा—

आगे चलकर उपर्युक्त ग्रन्थ के लेखक लिखते हैं कि—'इस ससार मे निमोनिया रोग को दूर करने के लिये इस वनस्पति के समान श्रेष्ठ दूसरी कोई औषधि देखने मे नही आई । निमोनियां के रोग मे इसकी ५ रत्ती (१२ ग्रेन) छाल का रस अथवा उसका काटा चावल के माड में मिलाकर दातो पर न लगे इस तरीके से पिलाना चाहिये । इससे पहिले उल्टी के द्वारा और फिर दस्त के द्वारा छाती मे जमा हुआ सव कफ निकल जाता है । यह एक अत्यन्त उग्र औषधि है । इसलिये इसका वार वार उपयोग करने की आवश्यकता नही होती । इसको सिर्फ एक ही वार देने से और यदि रोग वहुत भयकर हो तो अधिक से अधिक दो वार देने पर सारा कफ निकल जाता है । भयकर केसो मे भी इसको दो वार से अधिक देने की जरूरत नही पड़ती ।

बहुत से केसो मे तो इसको एक ही वार देने से निमोनिया रोग विदा हो जाता है । परन्तु जो रोग भयानक हो और एक वार से सारा कफ बाहर नही निकले तो तीन दिन के वाद इसकी दूसरी खुराक देनी चाहिये । जिससे कफ का रहा सहा अश भी निकल जाता है और निमोनिया से पूर्ण छुटकारा हो जाता है । 'यह औषधि वहुत तीव्र होती है । इसलिये छोटे वालको और कोमल प्रकृति के मनुष्यो पर इसका उपयोग नही करना चाहिये । अगर किया जाय तो कुशल वैद्य के द्वारा वहुत छोटी मात्रा मे इसका उपयोग करना चाहिये ।

इसकी सूखी छाल की अपेक्षा हरी छाल विशेष गुणदायक होती है । छ—सात रत्ती ताजी छाल को कूटकर उसका रस निकाल कर चावल के माड मे मिलाकर देना उत्तम होता है । मगर यदि ताजी छाल नही मिले तो इसकी सूखी छाल को छ—सात रत्ती की मात्रा मे लेकर उसका काढा वनाकर उस काढ़े को चावल के माड मे मिलाकर निमोनिया के रोगी को पिलाना चाहिये । जिससे पहले रोगी को वमन होगा । उस वमन से वहुत सा कफ निकलेगा । उसके पश्चात् रोगी के दस्त मे भी बहुत सा कफ निकलेगा । इस औषधि से शरीर मे पित्त का प्रभाव वहुत वढ जाता है । इसलिये वमन या विरेचन के पश्चात रोगी को शान्ति मिलने के लिये मोती की भस्म, सितोफलादि चूर्ण, अभ्रक भस्म इत्यादि पौष्टिक, हृदयोत्तेजक, बलवर्द्धक और पित्त शामक औषधियो का सेवन रोगी को कुछ दिनो तक कराना चाहिये ।

इसकी ताजी छाल का रस आखो मे लग जाय तो अन्धा होने का भय रहता है और यदि चमडी पर लग जाय तो दाह और सूजन हो जाती है। इसलिये इस वनस्पति का व्यवहार बहुत सावधानी से करना चाहिये। इतने पर भी यदि इसका अप-व्यवहार हो जाय तो इसके दर्प को नष्ट करने के लिये मक्खन और घी का प्रयोग करना चाहिये।

भुमण्डल पर अस्तित्व मे आये हुये किसी भी चिकित्सा शास्त्र मे अभी तक ऐसी औषधि की खोज नही हुई जिसकी सिर्फ एक या दो मात्रा लेने से ही भयानक निमोनियां का रोग नष्ट हो जाय। परन्तु परमात्मा की कृपा से अभी ही यह औषधि हाथ लगी और इसका प्रयोग करने पर यह अक्सीर मालूम हुई है।

—व. च. से साभार।

राय जामन (Eugenia Operculata)

यह फल वर्ग और लवगादि कुल (Uyrataceae) का एक छोटा मध्यम कद का वृक्ष होता है। इसकी छाल पीलापन लिये हुए भूरे रङ्ग की खरदरी और ऊबड़-खावड होती है। इसकी डालियां चिकनी और हरी होती है। इसके पत्ते ४॥ से लेकर १० इच तक लम्वे और ३ से लेकर ४॥ इ च तक चौडे होते हैं। इसके फूल सफेद विना डंठल के और तीन पत्तियो वाले होते है। इसके फल जामुन की तरह ही होते हैं।

उत्पत्ति स्थान—

यह वनस्पति प्राय सारे भारतवर्ष मे ही पैदा होती है। विशेप करके इसके वृक्ष विहार, उड़ीसा, आसाम, सिलहट, कच्छार और चिट्टागाग के जगलो मे पाये जाते हैं।

नाम—

स—भ्रमरेष्टा, भृङ्ग बल्लभा, भूमि जम्बू, जल जम्बुक, काष्ट जम्बू, पिक भक्षा, ह्रस्वा, सूक्ष्मपत्रा। देहरादून—पियामान, थूयी। हि० राय जामन, दुगदुगिया, पियामान। गढवाल—पियामान। सथाल—टोटोनोपाक। चिट्टागोंग—वोटी जाम। मल०—नरल। ले०—Eugenia opercula ta Roxb (यूगेनिया आपर क्यूलेटा) दूसरा नाम Syzygium operculatum Yamble (सिजिजियम आपर क्यूलेटम) है।

प्रयोज्याङ्ग—छाल।

गुणधर्म और प्रभाव—

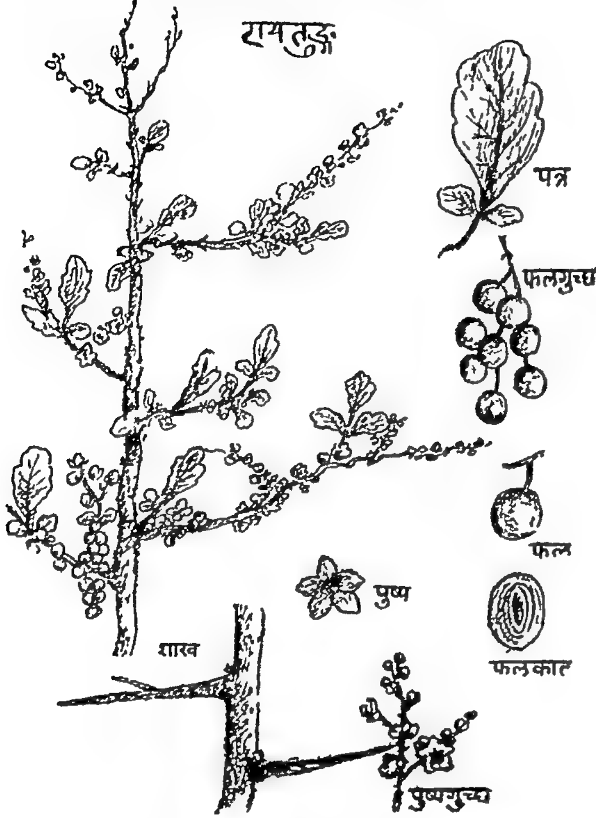
आयुर्वेदिक मत से इसकी छाल कडवी, कसैली, भारी, पौष्टिक, आतो के लिए सकोचक, प्यास बुझाने वाली और कमोद्दीपक होती है। यह रक्तातिसार को दूर करने वाली रक्त रोग नाशक, पित्तनाशक व्रण पूरक और खांसी मे लाभ पहुचाने वाली होती है। छोटे नागपुर मे इसका फल सधिवात को दूर करने के लिए खाया जाता है और इसकी जड को उबालकर उसका तैल तैयार करके जोडो पर लगाया जाता है। इसके पत्ते सेक करने के काम मे आते है।

दु किंग मे इसके पत्तो को चाय के पत्तो के प्रतिनिधि रूप मे काम मे लाते है और इसके फूल यूकेलिप्टिस के पत्तो की जगह काम मे लाये जाते है। [व च [

राय तुङ्ग (Rhus parviflora)

यह आम्रकुल (Anacardiaceae) की एक छोटी झाडी होती है। इसके पत्ते एक इंच लम्वे आगे से गोल और किनारे दार होते है। वर्षा के प्रारम्भ मे फूल और भाद्रपद-आश्विन मे फल पकते है। इसकी लकडी बड़ी मजबूत और जलने मे उत्तम होती है। इसकी छाल चमडा रङ्गने के काम मे आती है। इसके फल मसूर जैसे लाल रङ्ग के दाने (फल) समाक दाना राजस्थान मे 'डासरिया', 'डारा', के नाम से बाजार मे भील लोग वेचते है। इसकी

सा तिन्तिडिक पा. सुमाकदाना (डासरिया)
RHUS MYSORENSIS, HEYNE



लकडी की छाल को यूनानी हकीम गिर्द सुमाक या पोस्त सुमाक कहते हैं। छाल दवा और चमडे की रगाई के काम आती है। समाकदाना स्वाद मे खट्टे और मीठे होते है। इसकी दो जातिया और हे। (१) ह्रस कोरिया-रिया (२) ह्रस माइसोरेन्सिस हिनी है। विशेष जानकारी चित्र से करिये।

उत्पत्ति स्थान—

हिमालय मे सतलज से नेपाल तक २००० से ५००० फीट की ऊचाई पर, मध्यप्रदेश मे पचमढी हिल्स, गोदावरी क्षेत्र, रपा हिल्स, राजस्थान की उदयपुर डिस्ट्रिक्ट मे कसरत मे होते है।

नाम

स० तिंतिडिक। हिं०—रायतुङ्ग, तत्रक, निनास, निनावा, तुङ्गला, डासरिया, डारा। ब०—सुमोक। बोम्बे—सुमाक। प०—तामरा, तुङ्गा, तुङ्गला। राज०—डासरिया, डारा, काश्मीर—चौक्क मुसुर, मुमाक दाना। अलमोडा—तग। गढवाल, कुमाऊ—तुङ्गा। अर०—सुमाक, तिमतिमा। फा०—समाक। अ०—Sumach ले०—Rhus parviflora Roxb (ह्रसपार्विफ्लोरा) Rhus Coriaria Linn Rhusmysorehsis Heyne

प्रयोज्याग—फल, पत्र, छाल।

गुण धर्म और प्रभाव—

रायतुङ्ग हृदय को बल देने वाला, दीपन, ग्राही, रक्त-पित्त शामक और रक्तसग्राहक होता है। यह एक बहुत मृदु-स्वभाव वाली वनस्पति होती हे। इसकी क्रिया इमली के समान होती है। दक्षिण मे जिस प्रकार कोकम का सार उपयोग मे लिया जाता है, उसी प्रकार उत्तर मे रायतुङ्ग का पन्ना काम मे लिया जाना है। गर्भवती स्त्रियो को लगने वाले दस्त, निर्बल मनुष्यो के रक्तयुक्त स्राव, पित्त प्रकोप की वजह से पैदा हुए वमन, रक्तपित्त, नेत्ररोग और ज्वर के अन्दर की जलन और गर्मी को कम करने के लिए इसका बहुत उपयोग किया जाता है। (व च)

पक्के रायतुङ्ग (डासरिया) वातहर और कच्चे पित्त कफ कारक है। (सुश्रुत)

श्रद्धेय बापालाल भाई—निघण्टु आदर्श भाग १ तिन्तिडिक प्रकरण मे लिखते है कि—चरक मुनि ने अम्लवर्ग मे तिन्तिडिक की गणना की है सुश्रुत जी ने भी। परन्तु आज तक तिन्तिडिक क्या है? इसकी मालूमात नही थी। तिन्तिडिक का अर्थ बहुत विद्वान इमली ही करते थे। स्वर्गीय पूज्य यादव जी ने तिन्तिडिक को समाकदाना, डासरिया के रूप मे पहिचान कराई है। योगो मे जहा-जहा तिन्तिड़िक आती हो वहा समाक दाना को काम मे लेना उचित है। [नि आ]

यूनानी मतानुसार—

प्रकृति—दूसरे दर्जे मे शीत एव रूक्ष। गुणकर्म—यह सग्राही, विलोम कर्त्ता, आमाशय को शक्ति प्रदान करता, पित्त शामक तथा रक्तश्राव एव बहुमूत्र को रोकता है। यह विशेषकर दीपन और पित्तातिसार नाशक है।

उपयोग—पोस्तसुमाक का अधिकतया पित्तज अतिसार रक्तातिसार तथा उत्क्लेश एवं छर्दि को रोकने एव तृष्ण,

को शान्त करने के लिये अकेले या उपयुक्त औषधियो के साथ उपयोग करते है । यह उष्ण प्रकृति के लोगो के आमाशय को शक्ति देता और भूख लगाता है। इसको बहुमूत्र और अतिरज को बन्द करने के लिये खिलाते है, दातो को मजबूत करने और दतशूल निवारण के लिये इसके फाण्ट जल से कुल्ली कराते और मजनो मे डालकर दांतो पर मलते है। दोष-विलोमकरण के लिये शोथ के आरम्भ मे इसका लेप लगाते है। नकसीर मे इसे जल मे पीसकर मस्तक पर लेप करते है । अहितकर— शीतल यकृत को । निवारण—मस्तगी, अनीसू और सौफ के साथ खाने से इसके दोष का परिहार हो जाता है ।

प्रतिनिधि—जरिश्क । मात्रा—३ से ५ माशे तक ।

[यू द्र. वि. से साभार]

रायधनी (ventilago calyculata)

यह बदरी कुल (Rhamnaceae) की एक बडी हमेशा रहने वाली पराश्रयी लता होती है। इसके पत्ते २ से लेकर ४ इच तक लम्बे और १ से लेकर २½ इच तक चौडे होते है। इसके फूल पीलापन लिये हरे होते है। विशेष परिचय के वास्ते चित्रावलोकन कीजिये ।



उत्पति स्थान—

यह वनस्पति भारत के सभी गरम हिस्सो मे कुमाऊ, नेपाल, भूटान, सिलहट और पश्चिमी घाट मे पैदा होती है ।

नाम—

हिं — रायधनी । ब रक्त पित्त । वम्बई—कनियेल, पापरी । अलमोडा—कालीवेल । देहरादून—कालीवेल । कुमाऊ—कालीवेल, रक्तपित्त । म—सकलयेल । सथाल—बोगासरजोम । कन्नड—कुरियादी । ते —इर्राशिरा तलातिगे । उडिया—पित्त टोली । ले.—Ventilago calyculata tulasne (व्हेंटिलेगी केलिक्युलेटा) ।

गुण धर्म और प्रभाव—

छोटा नागपुर मे इसकी छाल का रस और इसके कोमल अंकुर मलेरिया ज्वर की वजह से होने वाले शरीर के दर्द को दूर करने के लिये लगाये जाते है। इस वनस्पति की लता या ततु से एक अगूठी बनायी जाती है जो दत शूल को रोकने के लिये काम मे ली जाती है।

—व च से साभार

शाल वृक्ष (Shorea Robusta)

यह कर्पुरादि वर्ग और सर्ज रसादि कुल [Diptero-carpaceae] का एक बडा सरल वृक्ष होता है। मूल पृथ्वी मे गहरी उतरी हुई मोटी होती है। तना गहरा रक्ताभ कपिश कठोर और शाखायें साधारण होती हैं।

इसके पत्ते एकान्तर सादे १० से ३० सेण्टीमीटर तक लम्बे और ५ से लेकर १८ सेण्टीमीटर तक चौडे होते हैं। पत्र-दण्ड १ इची, पत्र—मूलकी ओर डिम्वाकृति, अग्रभाग क्रमश. नोकीला, घोडे के कान के समान चिकने और पकने के समय चमकदार हो जाते है, जिनमे नसे वहुत स्पष्ट मालूम होती है। उपपान होते है। केवल फाल्गुन मास को छोडकर वृक्ष पर वारहो मास पत्ते होते है। छोटे वृक्ष की छाल चिकनी होती है। वडे वृक्ष की छाल १ से २ इच मोटी ऊवड़-खावड और फटी सी होती है। इसके थड मे छिद्र करने से जो रस झरता है वो राल कहलाता है। इसी जाति का दूसरा पेड होता है, जो सर्ज कहलाता है उसे Vetıria Indıca कहते हे। इसके गुण एव रूप शाल जैसे होते है। नवीन राल रङ्ग रहित और पारदर्शक स्वाद एव गन्ध रहित होती है और धुप की तरह जलती है।

फूल—शाखाग्रोद्भुत गुच्छदार श्वेत वर्ण नरम और लोमयुक्त, परन्तु पुराना फीका अबरी वा उदी। पुष्पपत्र दल फीके पीत वर्ण के ½ इची लम्वा और नोकीला, वर्शाकृति और लोमश, पुष्पदण्ड अर्धवृत्ताकार।

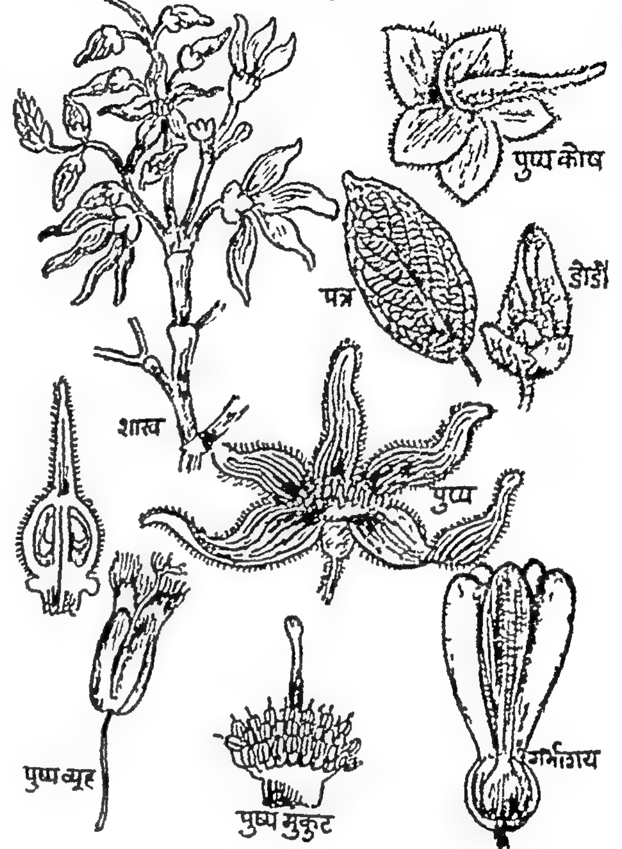
फल—लम्बा ½ इच, सूक्ष्म कोणी, श्वेत और नरम, कक्ष ५, २ से ३ इची लम्बा, मूल की ओर नोकीला, पकने पर धूसर वर्ण, असमान, १०-१२ समान्तराल शिरायें होती है। मार्च मे फूल आते हे और मई जून मास मे फल आ जाते है। चित्रावलोकन करे।

उत्पत्ति स्थान—

यह उत्तरी भारत मे हिमालय के अन्दर देहरादून, पालघाट, मोरङ्ग वगैरह पहाड़ो मे पैदा होता है। पजाब की कागडा डिस्ट्रिक्ट से अम्वाले का कालेसर जङ्गल तक, आसाम की दाराङ्ग डिस्ट्रिक्ट, हिमालय की घाटियो मे ५००० फीट की ऊचाई पर, गारो की पहाडियें, कामरूप, खासिया, जैनशियाहिल्स, सताल परगना से गजम, जयपुर, मध्यप्रदेश, विजिगापट्टम, गोदावरी के जङ्गल और दक्षिण कोरो मण्डल से पश्चमढी की पहाडियो मे वहुतायत से पाये जाते हैं।

नाम—

स —साल, राल, साल निर्यास, सर्जरस, सर्ज, देवधूप



हि., प., ब., वोम्बे—साल, राल, रालवृक्ष। ब —धूना, सखू, साल, सालवा। बम्बई—साल। गु.—राल। म —राल, सजारा, रालवृक्ष। प.—साल, सरेल। मध्यप्रदेश—साल, रिंजल। कु —साल। नेपाल—सकवा। अवध—कोरोह। उर्दू—राल। फा —लोले मोहरी। ता —शालम् तैलगू—सालुवा। उ —Common sal ले —Shorea-rubusta gaertn (शोरिया रोवुस्टा)।

इस वृक्ष के गोद को राल। व —धुना। अ —Resın (रेजिन), रोइजिन (Roısın)। ले —(Resına) रेजिना।

रासायनिक संगठन—

इसका प्रधान उपादान साईबीटिक एसिड नामक एक स्फटिकीय यौगिक है जो क्षारो से विलेय लवण के रूप मे परिणत हो जाता है।

विलेयता—यह सुरासार (६०%), ईथर, तारपन

तेल, बेजोल, कार्बन, कार्बन बाइ सल्फाफाइड मे सुविलेय है। तथा गरम जैतून तेल और क्षार मे भी घुल जाती है।

प्रयोज्य अङ्ग—निर्यास, त्वक्, पत्र और फल।

मात्रा—छाल का काढा ५ से १० तोला। सर्जरस—१ से ३ माशा।

गुण धर्म तथा प्रयोग—

रस—कषाय-मधुर। वीर्य—शीत। विपाक—कटु और शरीर मे आंत्र और त्वचा पर खास कार्यकारी है।

साल—कषाय, शीत वीर्य, रूक्ष, ग्राही, व्रण शोधन तथा रक्त विकार अग्निदाह, कर्णरोग, विष, प्रमेह और पाण्डु रोग नाशक तथा कफ और मेद को सुखाने वाली है। (कं० नि०)

राल के गुण—मधुर, कषाय, स्तभन, व्रणरोपण, टूटी हड्डियो को जोड़ने वाला ग्राही, रक्तविकार, स्वेद, विसर्प, ज्वर, व्रण, विपादिका, अग्निदग्ध व्रणो,अतिसार आदि की नाशक है। (ध नि)

इसका फल—मीठा, शीतल, कामोद्दीपक, सकोचक, पौष्टिक वातल और पित्त निस्सारक होता है।

इसका गोंद—शीतल, पचने मे भारी, कडवा, कसैला, आतो का सकोचन करने वाला, रक्तशोधक, ज्वर और पसीने को दूर करने वाला और रक्त अतिसार मे लाभदायक होता है। यह सब प्रकार के प्रदर मे भी लाभ पहुंचाता है। जख्म, अग्निदग्ध व्रण, हड्डी का टूटना तथा खुजली आदि वाह्य व्याधियो मे भी यह उपयोगी होता है। इसका धुआ वायु शोधन कर्त्ता है।

यूनानी मतानुसार—

प्रकृति—तीसरे दर्जे मे गरम और खुश्क है। गुणकर्म व्रणो मे इसका बाह्य प्रयोग करने से यह कोथ प्रतिबधक और व्रण लेखन कर्म करती है। आंतरिक प्रयोग से फेफडो पर इसका कोथ प्रतिबधक और कफोत्सारि कर्म होता है। विशेषत: यह श्लेष्म निस्सारक एव दृष्टि-वर्द्धक है। उपयोग—इसको अधिकतया मलहमो मे डालकर व्रणो पर लगाते है तथा कण्डू, दद्रु, छीप वा झाईं और ऐसे रोगो में उपयोग करते हैं। हाथ पैर का फटना या बिबाई में इसे मक्खन में मिलाकर लगाते हैं। पुरातन कास-श्वास और फुफ्फुस-व्रण मे विभिन्न प्रकार से इसका उपयोग करते है। कास एव श्वास मे इसका धूम्रपान भी लाभदायक है।

अहितकर—उष्ण प्रकृति के लिये। निवारण-दूध और घी।

प्रतिनिधि—अञ्जरूत नेत्र के लिये। मात्रा—१ माशे से २ माशे तक।

डाक्टरी चिकित्सा—

चीड वा सरल (*Pinus*) जातीय वृक्षो से एक प्रकार का राल युक्त गाढा तेल निकलता है। परिस्रावण विधि से तेल और राल को पृथक-पृथक कर लिया जाता है। इस प्रकार पृथक भूत तेल 'तारपीन का तेल' कहलाता है। राल की अर्ध स्वच्छ हलके अबरी या हलके पीले रग की डलिया होती हैं जो आसानी से टूट जाती और चूर्ण हो जाती है। तोडने पर टूटी हुई सतह चमकदार होती है। गध और स्वाद तारपीन वत् होता है। इसके जलाने से विपुल धूम्र उत्पन्न होता है और लौ का रग पीला होता है।

डाक्टर देसाई के मतानुसार राल मे उत्तम व्रण शोधक, व्रणरोपक, रक्त सग्राहक और संकोचक धर्म रहते है। उत्तम राल विलायती पाइन रेजिन के बदले काम आ सकती है। राल के मलहम से बिना किसी प्रकार की तकलीफ हुये फोडे-फुसी पककर फूट जाते है और अच्छे हो जाते है। इस मलहम को जहा लगाया जाता है वहा की रक्ताभिसरण क्रिया बढती हे और वह हिस्सा कृमियो से रहित हो जाता हे। प्रसूता के कमरे मे सुगन्धित द्रव्यो के साथ राल की धूप देने से वहा की हवा बहुत शुद्ध रहती है।

अजीर्ण और सुजाक के अन्दर भी राल देने का रिवाज है। बच्चो के रक्त मिश्रित अतिसार मे राल को शक्कर के साथ देने से अच्छा लाभ होता है। हर एक स्थान की वायु को शुद्ध करने के लिये राल बहुत उपयोगी वस्तु है।

मात्रा—इसकी मात्रा एक रत्ती से दो रत्ती तक। छोटे बच्चे-बच्चियो को यह जीरा और मक्खन के साथ देना चाहिये।

(१) **राल का मरहम**—राल ४ भाग, मोम ४ भाग,



तिल का तेल ४ भाग और घी ३ भाग । इन सब चीजो को मिलाकर गरम करके घोटने से राल का मरहम तैयार हो जाता है। यह मरहम उत्तम व्रण शोधक और व्रण रोपक होता हे।

राल का लेप—अण्डे की सफेदी ओर आसव (ब्राडी) इन दोनो को मिलाकर राल का प्रलेप कटिवात एव अन्यान्य वात वेदना को शान्त करता है। उपजिह्वा के बढने पर राल के चूर्ण का व्यवहार करते है। आम व रक्तातिसार मे राल को वहुत फायदेमन्द पाया है।

(क विश्वनाथ जी द्विवेदी)

राल का चूर्ण—शक्कर के साथ समभाग राल का चूर्ण आम व रक्तातिसार मे अत्यन्त फायदेमन्द है। बच्चो के रक्तातिसार मे अधिक उपयोगी हे। यह चूर्ण पुराने अतिसार को नष्ट करता है। मात्रा २ से ४ माशे तक। अनुपान-शीतल जल। (डा सखाराम अर्जुन)

राल का लेप—राल, सैंधव, गुड, मोम, मधु, गूगल, गेरू और घी। इनको समभाग मे लेकर थोडा गरम करने से इनका मरहम तैयार हो जाता है। यह मरहम हाथ पैर के फटने पर बहुत लाभ करता है। पाददारी, खुजली के ऊपर भी यह लाभकारी है। (आर्य औषधालय)

(५) **राल का मरहम**—(आ नि) तिल का तैल, राल दोनो को बराबर-बराबर लेकर, पहले तैल को गरम करे। तैल मे से जब धूआ निकलने लगे तब राल पीसी हुई को मिला करके तुरन्त ही ठण्डे जल के अधभरे वरतन मे डाल देवे। फिर इसको कासे की थाली या वडे वरतन मे लेकर हाथ से फेटे और ठण्डा पानी वार-वार डालते जावे। धीरे धीरे सफेद रङ्ग का फूल कर लोदे के समान वने मलहम को लेकर, इस मलहम को डूवते जल मे रख दे। पानी २-४ दिन के बाद वदलते रहे। यह मरहम अग्निदग्ध पर बहुत सुन्दर है। जलन एक दम शात होजाती है और रोपण भी शीघ्र होने लगता है। मलमल के कपडे पर यह मलहम लगाकर व्रण के ऊपर लगा देवे। कितने ही वैद्य तैल के स्थान पर घी लेकर मलहम वनाते है।

योनि कण्डू के ऊपर यह मलहम उत्तम काम करता है, वृषण कच्छु ऊपर काम मे लेने मे उससे थोडा सा मोरथूथा मिला देना हितावह है।

राल मरहम ३—तैल, राल और मोम समान भाग मे लेकर मरहम वनाते हैं, परन्तु मोम युक्त मलहम पट्टी लगाने मे काम आता है। इसकी पट्टी से फोडे जल्दी फूटकर भर जाते हैं।

राल पर्पटी-(ज्वरे) राल चूर्ण १६ तोला। २ तोला सखिये का चूर्ण वना तैयार रखें। सिगडी ऊपर एक वरतन मे राल डालकर मन्द आच पर उसको पिघलावे। राल के पिघलते ही तुरन्त २ तोला सखिये का वारीक चुर्ण डालकर बराबर मिल जाय इस प्रकार हिला करके फोरन ही खरल मे डाल दे और खरल मे घोटकर चूर्ण तैयार करके शीशी मे रख लेवे। इसको 'सर्ज पर्पटी' कहते है।

उपयोग—वात कफज ज्वरो मे और जव ये अतिसार तथा सग्रहणी रोगियो के हो तव यह वनावट उत्तम है।

[६] **रक्तार्श में**—राल नागकेशर के साथ देने से रक्तार्श की वेदना और रक्तश्राव दोनो वन्द होते है।

[आ० नि०]

विशिष्ट योग—

[१] **राल का मलहम १**—(र त सा) राल, सफेद कत्था और तिलो का तैल प्रत्येक ५-५ तोले, फिटकरी का फूला सवा तोला, नीलाथोथा सवा तोला और पानी ५ तोले लें। प्रथम सब सूखी औषधियो को वारीक पीसले और तैल पानी दोनो को अगुली से मिलाकर छाछ जैसी बनाले। फिर चूर्ण मिला २-३ मिनट अग्नि पर रख हिला कर मलहम तैयार कर लेवे। [धन्वन्तरि]

उपयोग—व्रण के शोधन और रोपण दोनो कार्यों के लिये यह उपयोगी है। यदि फोडा फूट गया हो, तो एक कपडे का फाहा या पट्टी बना वीच मे छेद कर, उस पर मलहम लगाकर घाव पर लगा दे, और फोड़ा नही फूटा हो तो कपडे के फाहे मे छेद नही करना चाहिये।

इस तरह उपयोग करने से सब प्रकार के नये और पुराने व्रण मिट जाते है।

२. राल का मलहम न २ (र त सा)—राल १० तोले, सफेद कत्था ४ तोले और मुर्दासग २ तोले लेकर सबको अलग अलग पीसे। फिर २॥ तोले सरसो का तेल

और राल मिला शिला पर रगड़े । चेप छोड दे, तब पानी मिलाकर धोवे । मक्खन जैसा हो जाय तब शेष औषधियो को मिलाकर खूब रगड़े । एक जीव होने पर चीनी के वरतन मे भरले । (धन्वन्तरि)

उपयोग—यह मलहम फुन्सी, फोडा, पैतिक फोडा, चूतड़वा अण्डकोष की खाज, सिर का फोडा आदि नये और अति पुराने रोगो को जड से निकाल देता है । शिर पर जलन करने वाले हर प्रकार के फोड़ो को शीघ्र मिटाता है । ऊपर के मलहम की अपेक्षा इस मलहम से घाव जल्दी भरता है ।

३. राल मरहम न ३ (र त सा)—राल ५ तोले तिल का तैल १० तोले, मोम ३ तोले और भिलावा २० तोले लें । पहले भिलावे को तैल मे भूनकर तैल को छान ले । फिर तैल कडाही मे डालकर मन्दाग्नि पर रखे । तैल गरम होने पर मोम डाले । मोम पिघल जाने पर राल का चूर्ण डालकर हिलाने से मलहम बन जाता है ।

उपयोग—सब प्रकार के व्रण और भगन्दर मिटाने मे यह मलहम उपयोगी है ।

४ राल मलहम नं ४ (र त सा)—राल २० तोले, मोम १० तोले, वैसलीन पीली ४० तोले, कडवे बादाम का तैल ५ तोले ले । वैसलीन को गरम करके मोम मिलाकर छान लें । बादाम का तैल, राल मिलाकर गरम करें । पक जाने पर वैसलीन मिलाकर मरहम बनाले ।

उपयोग—इस मलहम से नये-पुराने फोडा, फुन्सी थोडे ही दिनो मे मिट जाते है ।

५ राल मलहम नं ५ (र त, सा)—तिल तैल १६ तोले और राल ५ तोले ले । पहले तैल को कड़ाही मे डाल मन्दाग्नि पर गरम करें । फिर राल डाले । राल मिल जाने पर कडाही को उतार तैल को तुरत छान ले । शीतल होने पर जल मिलाकर धोवे । बार बार मलकर जल को निकाल डाले ।

इस तरह १०-२० बार धोने से श्वेत मलहम मक्खन के सदृश दृढ बन जाता है । इसे काच के अमृतबान मे भर ऊपर जल भरें । रोज सुबह पुराना जल निकाल डाल और ताजा भर दें । जब तक मलहम जल मे डूबा रहेगा, और जल बदलते रहेगे तब तक मलहम अच्छा रहेगा ।

जल नही बदलने से जल का रङ्ग काला हो जाता है, और मलहम पर फफूदी आ जाती है एव जल मे नही रखने पर भी मलहम बिगड जाता है ।

उपयोग—इस मलहम की पट्टी लगाने से अग्निदग्ध व्रण, बालको की गुदा पक जाना, सडे हुये फाले और व्रण रोग अच्छे हो जाते है । सामान्य फोडा फुन्सियो पर यह बहुत अच्छा कार्य करता है ।

६. राल तैलम् न १ (नपु सकामृतार्णव)—सफेद चदन का चूर्ण २० तोले, राल ४० तोले, लोबान १० तोले और लौग २½ तोले लेकर सबको एकत्र पीसकर पाताल यन्त्र से तेल निकाल ले ।

इसे वृक्क (गुरदो) तथा शिश्न पर लेप करने से नपु-सकता नष्ट होती है ।

७ राल तैलम् २ (बृ नि र वातव्या.)—नलिका यन्त्र (भबके) से राल का तेल निकालकर मालिश करने से पक्षाघात नष्ट होता है ।

८. रालादि लेप (बृ नि र मुखरोगा)—राल, मोम और गुड को तेल या घी मे पकाकर मलहम बनावे । इसे लगाने से होठो की तोद, परुषता (खरदरापन), पीडा और पीप या रक्त श्राव अवश्य नष्ट हो जाता है ।

(तीनो ओषधिया एक-एक तोला । घी या तैल २४ तोला ।

९ रालादि धूप न १ (यो र)—राल के चूर्ण को तेल मे मिलाकर धूनी देने से अर्श का रक्त श्राव बन्द हो जाता है ।

१० रालादि धूप नं २ (बृ नि र मसूरिका)-राल, हीग और लहसुन समान भाग लेकर सबको एकत्र पीसले । इसकी धूप देने से मसूरिका मे कृमि उत्पन्न नही होते और यदि हो गये हों तो नष्ट हो जाते है ।

यूनानी योग-

११. धावी चूर्ण—धावी पुष्प, राल दोनो को सम भाग लेकर बारीक चूर्ण करे । मात्रा ३ माशा से १ तोला तक । लोहे गरम से बुझाई छाछ के अनुपान मे दे ।

गुण—अहिफेन खाने वालो के अतिसार मे उत्तम है ।

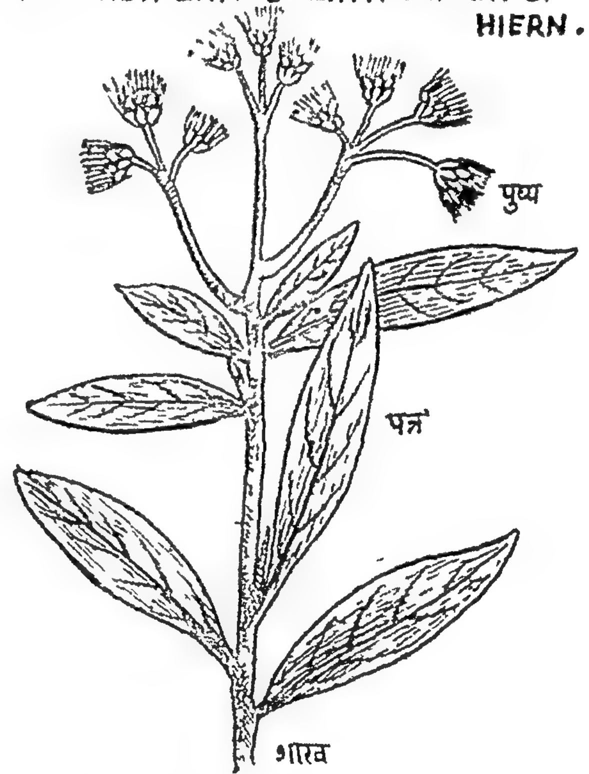
—(यू चि सा)

१२. मरहम राल (यू वि. सा.)—मोम सफेद, कर्पूर, राल, कत्था प्रत्येक डेढ़ तोला, सबका पृथक पृथक चूर्ण करे, मोम को गो घृत ६ तोला मे पिघलाकर पहले राल चूर्ण डालें, इसके पश्चात कत्था कर्पूर डालकर भली प्रकार हल करे। नीम के जल मे धोकर प्रयोग करे।

गुण—दुष्ट माग को दूर करके आतशक तथा नासूर के व्रण को भरता है।

रास्ना [वायसुरी] (Pluchea lanceolata)

यह हरितवर्गा ः वर्ग और भृङ्ग राजादि (Compositae) कुल के रास्ना (Pluchea lanceolata) के क्षुप प्राय १२ माह ही देखे जाते है तथापि चातुर्मास के पश्चात् शरद ऋतु मे विशेषतता उपजते है। यह क्षुप १ से ३ फुट तक ऊचे होते है और हरित क्षुप बडे ही सुन्दर लगते है। यह समुद्री किनारे पर रेतीली जमीन मे अधिक पाये जाते हैं। अन्य स्थानो पर नदी नाले, तालवो के किनारे अधिक मिलते है। गगा का मैदान इसकी प्राप्ति का विशेष स्थान है। इसके मूल जमीन के अन्दर ही अन्दर २५ से ५० फुट तक या उससे भी अधिक लम्बे चले जाते है। उसके उपमूल चारो ओर फैलते हुये होते हे। वे जमीन मे जैसे-जैसे लम्बे बढते है वैसे जमीन के ऊपर थोडी-थोडी दूरी पर पुन उनमे से अकुर फूटकर निकलते है। इस प्रकार यह जहा उगता है वहा प्राय इसीका एक स्वतन्त्र जाल सा बिछ जाता है।



विशेष परिचय—

काण्ड शाखाये—सूतली से लेकर अगुली जितनी मोटाई वाले होते हैं। उन पर भूरे रोम होते हे कोमल शाखाओ पर ऊन या कपास के जैसे लम्बे श्वेत रोम घने होते है। काण्ड पर थोडी-थोडी दूरी पर छोटी-छोटी गाठ सी होती है।

पत्र—जिह्वा के आकार के, यह पत्र गाढ़े हरिताभ अन्तर पर आते हे। वे एक इञ्च से २½ इञ्च तक होते है। तथा ½ इञ्च से १¼ इञ्च तक चौडे होते है। पत्र के दोनो पृष्ठो पर रोमावलि रहती है। पत्र के नीचे वृन्त नही होता। अगर होता है तो वहुत ही छोटा होता है। पत्र नीचे मे पतले एव ऊपर की ओर से चौडे तथा नोकदार होते हैं। शाखाओं के ऊपरी भाग के पत्र प्रायः परदेशी भूम्यामलकी या अरहर के पत्तो से प्राय मिलते हुये होते हैं। पत्र गत शिरायें अस्पष्ट एव ऊपर को जाती हुई होती है। पत्रो मे किंचित सुगन्ध आती है। पान सूखने पर पीलापन लिये भूरे रङ्ग के हो जाते है। ये स्वाद और गन्ध मे तीक्ष्ण होते है।

पुष्प—पुष्प के गुच्छे शाखाओ के अग्रभाग पर आते है। उसमे प्रत्येक पुष्प (Flower head) दो से तीन लाइन लम्बे होते हैं। उस पर चौडे प्राय रोम की रोमावलि जैसे पुष्प पत्र छाये हुए होते है। वे अन्दर से धनिये के दल के समान दिखाई देते है।

पुष्प—रक्ताभा वाले कुछ जामुन रङ्ग के होते है।

फल बीज—गहरे भूरे रङ्ग के सूक्ष्म, स्निग्ध अनुलम्ब

रास्ना नं० २
VANDA ROXBURGHII R BR



रेखावाले होते है।

मूल—प्रयोज्य अङ्ग मूल होने के कारण इसका वर्णन विस्तार से किया जायगा।

शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध इनके आधार पर मूल का वर्णन दिया जा रहा है।

(१) शब्द—मूल में द्रव्यगत कोई शब्द नही। तोडने पर कट्-कट् होता है। यह अभगुर है।

(२) स्पर्श—शीत, खर, कठिन एव लघु यह मूर्त गुण पाये जाते है।

(३) रूप—(क) बाह्य रचना। (ख) आभ्यान्तरिक रचना।

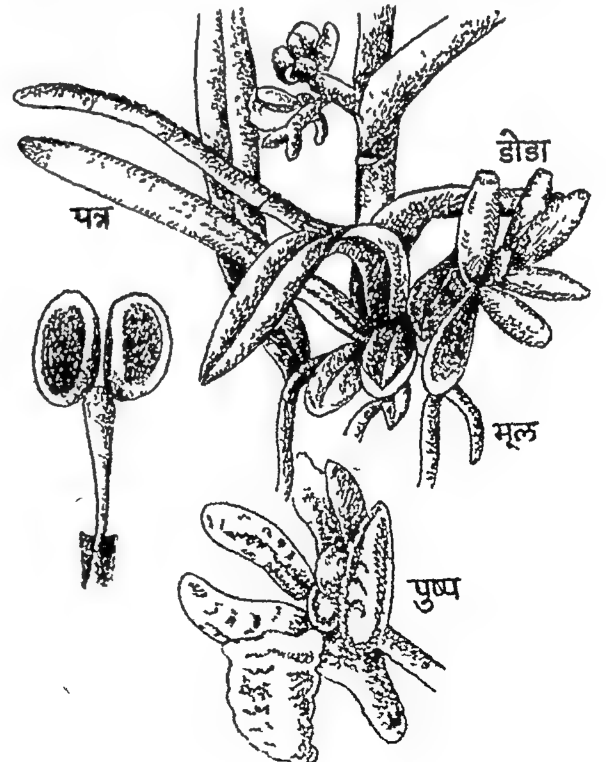
(४) रस—प्रधान रस तिक्त है।

(५) गन्ध—आर्द्र तथा शुष्क दोनो अवस्थाओ मे बडी अच्छी सुगन्ध आती है।

बाह्य रचना—इसके मूल भूरे रङ्ग के किंचित श्याभ (सूखने पर) प्राय चिकने और अनुलम्ब रूप मेसउ पर सिलवटे (झुर्रियां) पडी होती है। यह सीधे या गाठो के कारण अनियमित होते है अर्थात् इनकी गाठे (पूर्व) अनियमित दूरी पर होती है। इन गाठो या सधियो पर श्वेत छोटे-छोटे रोम (उद जैसे) होते है। मूल के ऊपर की त्वचा जरा मोटी भगुर एव जल्दी उतर जाने वाली होती है। एक मोटी गाठ के साथ अनेको उपमूल लगे होते है। ये भिन्न भिन्न विचित्र आकृति के होते है। परन्तु अन्त की पतली मूल वर्तुलाकार ही होती है।

आभ्यन्तरिक रचना—दूसरे सर्व प्रथम बाह्य स्तर (एपीडर्मिस) दिखाई देती है, जो कटी फटी है एव श्यावाभ धूसर वर्ण की है। यह एक ही मोटी त्वचा है जो एक ही प्रकार के सेलो से बनी है। इसके भीतर की ओर कार्क का भाग श्याव वर्ण का दिखाई देता है। जो विल्कुल बाह्य स्तर से सटा हुआ होता है। फिर इसके भीतर कारटेक्स का भाग है, यह भी श्याव वर्ण का है और कोमल भाग

रास्ना नं ३ (बी आकुली)
SACCOLABIUM PAPILLOSUM LINDL.



है। बिल्कुल बीच मे काष्ठ मय चक्राकार भाग कठिन, श्वेत वर्ण का तथा कठिन सूत्रो से बना हुआ हे।

अनुलम्वच्छेद—इसमे वाहर की ओर वाह्य स्तर दिखाई देता है जो कटा-फटा हुआ और श्याव व धूसर वर्ण का है। यह मोटी त्वचा एक ही प्रकार के सेलो से वनी हुई है। इसके साथ भीतर की ओर सटा हुआ कार्क का भाग है फिर भीतर कारटेक्स है और मध्य मे काष्ठीय भाग सूत्रमय है। इसके मध्य मे सार (पिथ) का भाग है। काष्ठीय भाग मे सौन्त्रिक तन्तु लम्वाई मे दिखाई देते है। यह भाग श्वेत वर्ण का है।

वर्ण—इसके चूर्ण का वर्ण गहरा धूसर श्याव है।जल मे डालने पर घुलने से इसका वर्ण श्याव-धूसर (व्राउन) दिखाई देता है। तेल मे डालने पर पीत वर्ण वा दिखाई देता है। एव घृत मे डालने पर श्वेत-धूसर वर्ण का दिखाई देता है। इसका चूर्ण जल, तेल घृत मे अल्प मात्रा मे घुलन शील है।

इसका चित्र दिया जा रहा है इसके अवलोकन से विशेप जानकारी मिलेगी।

प्रयोज्य अङ्ग—मूल, पत्र और सर्वाङ्ग।

उत्पत्ति स्थान—

यह भारत मे पजाव, उत्तर-प्रदेश, दिल्ली, मध्यप्रदेश, राजस्थान, विहार, सिंध, गुजरात और अफगानिस्तान मे प्रभूत मात्रा मे पायी जाती है।

गुजरात मे वीसा वाडा (मूल द्वारिका) और टुकडा गावो कीमीमाओ मे राजस्थान के पाली जिला के भावी (विलाडा) गाँव के आस-पास तथा अन्यत्र यह खूब होती है। वहा इसको वायसुरई या वायसुरी भी कहते है। तथा उक्त सभी प्रदेशो मे राम्ना के नाम से प्रयुक्त होता है। (व व गुजराती)

नाम—

स —रासना, युक्तरसा रस्या, सुवहा, रसना, रसा, सुगन्धा, सुरसा, श्रेयसी।

हि —राम्ना, रास्ना, सुरही, वायसुरी, राशना, रायसन।

उ प्र—वन सेरई, छोटी कलिया, सोरही। म.—रासन राम्ना। गु—रामना, राम्ना, रामनो। कच्छी—फाउ, सेवा-उफाड, सन्निफाड। राज—राठकापान, रायसन, रासना छोटा कलिया। सिंधि—कुरामना, कउरासन, काउरासन। प—मरिमण्डी, रास्ना। [illegible]—रासन। व—रासना। विहारी—रास्ना, रचना। कन्नड—रासनाकेदारे, रासना, रान्न रास्मे,रास्मे। ते—रास्ना,किरम्भिचक्कु। ता—राम्ना मल—रास्ना। मालवी—रास्ना, राठ का पानी। पश्तो—मरपदी, मरबन्दी। अरवी—रासन, रहसन, रायसन। फरसी—रासन, रहसन। उर्दू—रासन, रहसन, रवासन। अ—(Indian ground sel) इण्डियन गाउन्ड सेल। ले—(Pluchea lanceolata—Oliver and Hiern) प्लूचिया लेन्सि ओलेटा)।

रासायनिक सगठन—

इसमे तीन मुख्य तत्व पाये जाते हे। (१) आवश्यक तेल। (२)एलक्लायड। (३) विटररेजिन।

गुण धर्म—

रास्ना—अपाचक कडवी, भारी, गरम, कफ, वात-नाशक, सूजन, रक्तवात, वातशूल, उदररोग, खासी, ज्वर, विष विकार ८० प्रकार के वातरोग और सिध्म (सेहुली) चर्म रोग को नष्ट करती है। (भा प्र) रास्ना—गरम हे, वात सूजन, आमवात और वातरोगो को नष्ट करती हे।

रास्ना—कडवी, भारी,गरम, पाचक, आमनाशक, वातरक्त, विष, श्वास, खांसी, विषम ज्वर, सूजन, हिचकी, आमवात, कफशूल ज्वर, कम्प, उदर रोग और सर्व प्रकार के वात का नाश करती है। (शा नि)

रस—तिक्त, वीर्य—उष्ण,विपाक—कटु, गुण—आमपाचक, वात-शामक, दोषशमन—वातकफ, श स प्रभाव—वातसस्थान, व्याधि—आमवात, शोथ ज्वर, वातरक्त, वात-रोग। (वनस्पति परिचय अन्तुभाई वैद्य)

यूनानी मतानुसार गुण दोष—

तीसरे दर्जे मे गरम और रूक्ष,मनको प्रसन्नता कारक हृदय, आमाशय का मुख, पाचन शक्ति, ओज, वस्ति को वलकारी, मिरगी (अपस्मार) माली खोलिया, वेहशत,

सताप नाशक, यकृत के रोध की उद्घाटक, वायु को शाति तथा शिर पीडा उत्पन्न कारक और उष्ण प्रकृति वालो को हानि कारक है । दर्पनाशक खट्टा अनार, प्रतिनिधि—ईरसा और वच । मात्रा २ से ५ माशे तक ।

(अभिनव बूटी दर्पण)

रास्ना के सम्बन्ध मे शास्त्रीय निर्णय—

चरक सहिता मे रास्ना का ८२ स्थलो पर प्रयोग हुआ है । रास्ना को वात व्याधि की सर्वोत्तम औषध माना है । "रास्ना वात हराणा" श्रेष्ठम् ।

(चरक सू० २५–४०)

इससे स्पष्ट है कि रास्ना उस समय मे असदिग्ध थी और इसका औषध प्रयोगो मे खूब प्रचलन था ।

"रास्ना वातघ्नाना" यह चरक का वचन है । अर्थात् रास्ना वातघ्न द्रव्यो मे श्रेष्ठ है ।

चरक के दिये प्रयोगो मे कोई भी ऐसा नही है जिससे यह सकेत मिलता हो कि रास्ना कोई सुगन्ध पूर्ण मूल वनस्पति थी । वागभट्ट जी की रास्ना भी चरक की ही रास्ना थी ।

रास्ना सम्वन्धी विद्वानो का निर्णय—

(१) वैद्य जयकृष्ण इन्द्रजी ठाकुर ने अपने वनस्पति वर्णन मे—"फ्लूयचिया लैन्सिओलेटा" को ही रास्ना माना है और उसका कुल भृङ्गराजादि लिखा है । पोरबन्दर और गुजरात मे होने वाली सन्नि फाड या खेत्राउ फाड को ही इन्होने रास्ना माना है और इसका वानस्पतिक वर्णन विस्तार मे लिखा है । इस प्रकार श्री ठाकुर जी तो निश्चित् रूप से प्लयूचिया लेन्सिओलेटा को ही रास्ना मानते हे ।

(२) अभिनव बूटी दर्पण के लेखक–रूपलाल जी वैश्य ने पृष्ठ १७६ के दूसरे कालम मे लिखा है कि 'रास्ना' यह स्वरूप परिचायिका सज्ञा रक्खी है । आप वारीकी से देखेंगे तो जैसा रसना सादृश्य इसके पत्तो मे है वैसा सादृश्य अन्य जगह नही है । इसीलिये निघण्टुकारो ने इसके रसना, रसा, रास्ना ये नाम रखे है । वायुकी अनुलोमक होने से मध्य पदेशो मे वायसुरी और काशी, अयोध्या, गोरखपुर प्रभृति मे रासना या रासन नाम आवालू वृद्ध प्रसिद्ध है । इसलिये वन्दाक प्रभृति को छोडकर इसे काम मे लाकर रुग्णो को जीवन दान देकर, यश और कीर्ति को उपार्जित करें । यह हमारी सद्वैद्यो से नम्र प्रार्थना है ।

(३) श्रीमान् अन्तुभाई वैद्य, डायरेक्टर आयुर्वेद रिसर्च इन्स्टीट्यूट बम्बई १ ने वनस्पति परिचय मे पृष्ठ ३०४ पर "प्लयूचिया लैन्सिओलेटा' को रास्ना माना है ।

शङ्कर दत्तजी गौड ने शङ्कर निघण्टु द्वितीय भाग पृ २४१ पर "प्लयूचिया लेन्सिओलेटा'(वायसुरी)को रास्ना ही लिखा है । ठाकुर बलवन्त सिंह जी की सम्मति मे युक्त प्रान्त की रास्ना प्लयूचिका लेन्सिओलेटा का जिसे ग्रामीण वायसुरई कहते है, उपयोग होना चाहिये । यह उत्तम वात नाशक है और रोशना या रायसन इसका परम्परा से प्रचलित नाम है ।

डा० हूकर साहब "फ्लोरा आफ ब्रिटिश इण्डिया" मे प्लूचिया लेन्सिओलेटा को ही वह बर्थोलेटिया लेन्सिओलेटा (Bartholetia lanceolata) लिखते है और इसका प्राप्ति स्थान पजाब बङ्गाल, बिहार, यू पी , गुजरात, राजस्थान एव सिंध लिखते है । इस प्रकार चाहे उन्होने हिंदी या सस्कृत का नाम नही लिखा परन्तु गुण धर्म का मिलान करने पर "प्लूचिया लैन्सियोलेटा" शास्त्री रास्ना से मिलती है ।

ग्लासेरी आफ इण्डियन मेडिसिनल प्लान्ट मे प्लयूचिया-लेन्सिओलेटा को सस्कृत मे 'रास्ना' लिखा है ।

रास्ना के सम्बन्ध मे महा सम्मेलन का निर्णय—

अभिनव बूटी दर्पण के पृष्ठ १६४ के दूसरे कालम मे रास्ना यथा तथ्यम् १ मे स्वर्गीय वैद्य हरि प्रपन्न जी शर्मा, वनस्पति सभाषा परिषदाध्यक्ष क वै स ३ भोई वाडा बम्बई न ३ मे लिखा है कि 'अखीर मे बहुमत से वायसुरी को रास्ना कायम रखा गया ।'

आपका कहना था कि चरक की रास्ना के पत्ते जिह्वा के आकार के होने चाहिये । हम जिस वनस्पति को आज तीस वर्षो से रास्ना के नाम से व्यवहृत करते चले आये हे वह पत्र रास्ना हे । उसकी आकृति बिलकुल जिह्वा के आकार की है और पत्र इतने रस पूर्ण होते है कि कई महीनो मे जाकर सूखते हे । अ० भा० आयुर्वेद महा सम्मे-

लन जयपुर सन् १६२६ मे 'अन्त में 'वायसुरी' (ल्यूचिया लेन्सिओलेटा) को "रास्ना" माना गया।

इसी प्रकार से अ० भा० आयुर्वेद महा सम्मेलन 'फतहपुर'मे भी हुआ जहा पर 'वायसुरी" को ही असली रास्ना होने का निर्णय लिया गया ।

अन्त मे जब लाहौर मे सन् १६३६ मे आयुर्वेद महासम्मेलन का ३१ वा अधिवेशन हुआ तो वहा भी रास्ना के हरित क्षुप एव सूखे सेम्पल एकत्रित हुये, विचार विमर्श हुआ इस सम्मेलन मे प्रख्यात आयुर्वेदिक वनस्पति शास्त्री श्री रामेश वेदी, आयुर्वेदालकार भी उपस्थित थे। उन्होने आयुर्वेदिक औषधि द्रव्यो पर रिसर्च करने का ढङ्ग बताया एव रासायनिक विश्लेषण से भी द्रव्य गुण की परीक्षा होनी चाहिये, ऐसा कहा। इसी प्रकार रास्ना के सभी प्रकार रास्ना के सभी सेम्पलो को एकत्रित कर उनको रोगियो पर प्रयोग करके फिर निर्णय लेना चाहिये।

रास्ना पर परीक्षणात्मक निर्णय—परम श्रद्धेय श्री एस पी कनौजिया महोदय ने वैज्ञानिक ढङ्ग से रास्ना का परीक्षण किया और सारी रिपोर्ट सचित्र आयुर्वेद जुलाई १९६४ से जून १९६५ तक प्रकाशित की उसमे का कुछ साराश निम्न है—

शास्त्रीय रास्ना का 'रस' तिक्त होना चाहिये । वो वायसुरी–रास्ना मे है। इसमे शास्त्र के अनुसार 'उष्णवीर्य' है इसका विपाक कटु है। यह रास्ना गुण मे 'गुरु' है। इसी प्रकार शास्त्रीय रास्ना का कर्म वातहर, कफहर, आम पाचन, विषघ्न, वय स्थापन, निरुहण, अनुवासन ऐव शीताय नयन होना चाहिये वो इसमे है। शास्त्रीय रास्ना की जो आकृति होनी चाहिये वो वायसुरी (ल्यूचिया लेन्सिओलेटा) मे मौजूद है।

अन्त मे कनौजिया महोदय ने (१) गुण कर्मात्मक पक्ष (२) नाम रूपात्मक पक्ष मे दिया है—

गुण कर्मात्मक पक्ष	नाम रूपात्मक पक्ष
१ रस—प्रायश तिक्त रस। २. वीर्य उष्ण। ३ विपाक—कटु (एव गुरु)। ४ प्रभाव—विशेषकर वातशामक। ५. गुण—गुरु। ६ कर्म—वातहर, कफहर, आम पाचन, विषघ्न, वय स्थापन, निरुहण, आस्थापन एव शीतापनयन। ७ रोग (जिनको शान्त करती है) वात व्याधि, आमवात, वातरक्त सधिवात, अर्श, शोथ, श्वास, ज्वर और विष।	१ आकृति—(क) सामान्य आकृति—हरा भरा क्षुप देखने मे सुन्दर। (ख) पत्र—एला पत्र या जिह्वा कृति सदृश, गन्ध एव रस युक्त। (ग) काण्ड—साधारण क्षुप जैसा। (घ) मूल—अत्यन्त सुगन्धित। अधिक मूल वाला, उपमूल युक्त। (ङ) पुष्प—रक्ताभवर्ण, सुगन्धित। २ स्वरस—अधिक, स्वच्छ, सुगन्धित स्वरस। ३ गन्ध—विशेष प्रकार की सुगन्ध। ४ प्राप्ति स्थान—सर्वत्र सुलभ।

ऊपर लिखे गुण—कर्म एव आकृति 'शास्त्रीय रास्ना' के है। जिस द्रव्य मे अधिक से अधिक यह मिले उसको रास्ना मानना उचित होगा।

इससे आगे आपने लिखा है कि—

इस प्रकार उक्त विवेचन मे हम देखते है कि ३० द्रव्यो मे से १७ द्रव्य तो ऐसे थे जो निश्चित रूप से रास्ना से पृथक द्रव्य है और वह अन्य प्रसिद्ध द्रव्य ही है अत. उन्हे इनसे पृथक करने पर कुल १३ द्रव्य हमारे सामने आये। इनमे से ९ द्रव्य तो वन्दाक (वेण्डा) के ही भेद तथा जातियां है। इस १३ मे से हमने निम्न तीन द्रव्यो को चुना है जो शास्त्रीय रास्ना से मिलते हे। अत ऐसे द्रव्य का हम रोगियो पर प्रयोग करके उनके गुणो और प्रभाव

को जानकर वास्तविक रास्ना का निर्णय कर सकेंगे ।

वह तीन द्रव्य यह हे—

इनको शास्त्रीय रास्ना के गुण-धर्मों के आधार पर मिलायेंगे कि कौन द्रव्य अधिक साम्य रखता है ।

आगे आपने कई एक रोगियो पर परीक्षण करके क्रियात्मक कार्य का निष्कर्य दिया है जो निम्न है—

क्रियात्मक कार्य का निष्कर्ष—कन्नौजिया महोदय लिखते हैं कि—हमने प्लूयचिया लैन्सिओलेटा, अलपीनिया गैलेगा (कुलजन) और वेण्डा राक्सवर्गी (वन्दाक) के चूर्ण, क्वाथ एव सिद्ध तैल का रोगियो पर प्रयोग किया। शास्त्र मे लिखे रोगों को जिनको रास्ना शान्त करती है, चुना गया । ऐसे रोग वाले रोगी भी इस कार्य हेतु लिये गये । वह रोगी निम्नलिखित थे । वात व्याधि, आमवात, सन्धिवात, वातरक्त, उदरशूल एव कास-श्वास के । इनमे प्लूयचिया लैन्सिओलेटा का वात व्याधि आमवात, सन्धिवात, वातरक्त और उदर शूल पर प्रयोग किया। प्लूयचिया द्वारा इन पाचो रोगो का नाश हुआ ।

अलपीनिया गैलेगा (कुलजन) का वातव्याधि, आमवात, सन्धिवात, वातरक्त, उदरशूल पर प्रयोग किया गया। परन्तु इससे केवल उदरशूल वाले रोगी को ही लाभ हुआ और किसी रोगी को नही । वेण्डा राक्सवर्गी (वन्दाक) का दो वात व्याधियो के रोगियो पर एव एक सन्धिवात, एक उदर शूल और एक कास श्वास के रोगी पर प्रयुक्त किया गया । इस औषधि ने किसी को भी लाभ नही पहुचाया ।

इससे यह बात स्पष्ट हुई कि प्लूयचिया ने तो शत प्रतिशत उक्त रोगो मे लाभ पहुँचाया । अलपीनिया ने २० प्रतिशत ओर वेण्डा ने बिल्कुल भी लाभ नही पहुँचाया ।

अत क्रियात्यक कार्य से हमे यह पता चला कि शास्त्रोक्त रास्ना द्वारा शान्त किये जाने वाले रोगो पर प्लूयचिया का ही अधिक प्रभाव है। अत शास्त्रीय रास्ना से प्लूयचिया का ही इस विषय मे अधिक साम्य है ।

विवेचनात्मक निष्कर्ष—इससे पूर्व हम शास्त्रीय रास्ना तथा इन तीन सभावित रास्नाओ के गुण कर्म एव आकृति का विवेचन आपके समक्ष रख चुके है । इनका तुलनात्मक अध्ययन करे तो पता चलता है कि शास्त्रीय रास्ना के गुण धर्म से प्लयूचिया (वायसुरी) अधिक मात्रा मे साम्यता रखती है । अन्य दो इसके बराबर नही टिकती । इसका निर्णय करने के लिये हमने गुण, कर्म, वीर्य, विपाक, आकृति आदि के लिये धन और ऋण मे व्यक्त किया। एक धन/ २५ प्रतिशत का और एक ऋण विल्कुल ही साम्यता न रखने के लिए प्रयोग किया गया हे ।जिसमे यह वात स्पष्ट हुई कि प्लयूचिया ६७ प्रतिशत शास्त्रीय रास्ना से साम्यता रखती है और अलपीनिया (कुलजन) ५७ प्रतिशत तथा वैण्डा (वन्दाक) ४३ प्रतिशत ।

इस प्रकार क्रियात्मक विवरण के आधार पर एव सभी नमूनो की आकृति की परीक्षा के आधार पर हमने तीनो सभावित रास्नाओ का शास्त्रीय रास्ना के गुण, कर्म एव रूप के साथ विवेचन किया तो यही बात स्पष्ट निष्कर्ष के रूप मे हमारे सामने आती है कि प्लयूचिया लेन्सिप्रा लेटा के गुण—धर्म तथा आकृति प्रायशः अत्यधिक मात्रा मे शास्त्रीय रास्ना से मिलते हैं। अत यही हमारी वास्तविक रास्ना है । जिसकी खोज के लिये मैने अपना यह प्रयास इस सम्बन्ध के रूप मे आपके समक्ष रखा ।

अन्त मे मेरी सभी आयुर्वेदज्ञो से प्रार्थना है कि क्रियात्मक तथ्यो के आधारो पर निर्णित इस वास्तविक रास्ना का ही प्रयोग करे ताकि वह वात रोगियो को पूर्ण एव शीघ्र लाभ पहुचाकर यश की प्राप्ति कर सके एव 'रास्ना वात हराणाम्' प्रत्यक्ष करके आयुर्वेद के प्राचीन गौरव को जनता के सामने रक्खे ।

(श्री. एस. पी कनौजिया महोदय के लेख के आधार पर सचित्र आयुर्वेद से साभार सकलित)

इस प्रकार सही रास्ना के निर्णय मे श्रद्धेय रामेश वेदी जी के महा सस्मेलन मे दिये गये सुभाव पर आदरणीय एस पी कनौजिया महोदय ने जिस प्रकार विस्तृत सर्वप्रकारेण शोधकर निर्णय आयुर्वेद जगत के सामने रखा एव उसका सचित्र नियमित प्रकाशन सचित्र आयुर्वेद ने किया उसका आयुर्वेद जगत चिर ऋणी रहेगा । आगे जिन वनौषधियो मे सदिग्धता है उनका भी इसी प्रकार शोधपूर्वक निर्णय किया तो आयुर्वेद एव राष्ट्र की सच्ची सेवा हो सकती हे । ध. भा

आयुर्वेद महा सम्मेलन द्वारा जो प्रत्येक सम्मेलन मे निर्णय की परम्परा थी उसके वास्ते महा सम्मेलन म विद्वानो की अलग से समिति वनाई जाकर वो समिति वर्ष भर मे सम्पर्क साधन कर तीन चार वैठके करके प्रतिवर्ष अपने निर्णय को महा सम्मेलन मे प्रस्तुत किया करे और ऐसे सन्मान योग्य विद्वानो को सन्मानित भी किया जाये तो अ भा आयुर्वेद महा सम्मेलन का सगठन भी मजवूत होगा साथ ही आयुर्वेद एव राष्ट्र की सेवा होकर आयुर्वेद का गौरव वढेगा और सम्मेलन की प्रतिष्ठा की भी वृद्धि होगी । आशा हे आयुर्वेद महा सम्मेलन के कर्णधार रचनात्मक इस कदम की ओर भी शीघ्र ध्यान दिलावेगे ।

इस प्रकार हमारी वास्तविक रास्ना प्लूयचिया लैन्सिओलेटा (वायसुरी) ही मिद्ध है, वेमी स्थित मे पूर्व ग्रन्थो के समान रास्ना न २, ३, ४, ५ का उल्लेख कर सदिग्धता जारी रखने का कोई औचित्य नही है । अतएव अन्य वनस्पतियो का वर्णन अपने अपने स्थानो मे हुआ है और आगे भी होगा उनकी जानकारी वही देखकर करने का कष्ट करे, ऐसी पाठको से प्रार्थना है ।

रास्ना के प्रयोग–

रास्नादि चूर्ण (चि. च.) रास्ना, पोहकर मूल, सहन्जना, वेलगिरी, चीता, सैंधानोन, गोखरू और छोटी पीपर—इनको समान भाग मे लेकर कूट-पीस छान लो । इस चूर्ण की मात्रा १।। माशे से ३ माशे तक है , इसको "घी" मे मिलाकर खाने से वातरोग नष्ट हो जाते ह । परीक्षित हे । यह औपधि पाचक, आमशोषक, मूत्रल, वातानुलोमक और रस तथा विपाक मे कटु और वीर्य में उष्ण है । इसके सेवन से रूक्ष, शीत गुण द्वारा कुपित वात के कारण होने वाले आमवात आदि विकार नष्ट हो जाते हे । तथा परिपूर्ण उष्मा की वृद्धि होकर रक्त का परिभ्रमण वढता है और वात के कारण रहने वाले आम और वात रोगो को नाश करने के लिये उत्तम है ।

रास्ना के विशिष्ट योग—

(१) रास्ना दशमूल क्वाथः (भा भै. र स. ५८६४) रास्ना, सोंठ, वायविडङ्ग, अरण्डमूल, हर्र, वहेड़ा, आमला, दशमूल की प्रत्येक वस्तु (शालपर्णी, पृष्ठ पर्णी, कटेली, वडी गोखरू, वेल की छाल, स्योनाक, खम्भारी, पाढल और अरणी) और निसोत समान भाग लेकर सवको एकत्र मिलाकर अवकुटा करले । (इस मे मे २।। तोले चूर्ण को २० तोले पानी मे पकावे और ५ तोले शेष रहने पर छानलें ।) यह क्वाथ वातजरोग, अर्द्धविभेदक, आढ्यवात, अर्दित, खञ्जता, नेत्ररोग, शिरःशूल, ज्वर, अपस्मार और मयनीभ्र श को नष्ट करता है ।

(२) रास्नादि कल्क (१) (भा. भै र स. ५८६५) रास्ना, सोठ, पीपल के कल्क को गरम पानी के साथ पीने से श्वास, खासी, अग्निमाद्य और शीत ज्वर को नष्ट करता है । (प्रत्येक औषधि १।। माशा)

(३) रास्नादि क्वाथः (२) (स ५८६८) रास्ना, मुलैठी, गिलोय, अरण्डमूल, खरैटी और गोखरू । सव चीजे समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर अवकुटा करले । (२।। तोले यह चूर्ण लेकर उसे २० तोले पानी मे पकावें और ५ तोले शेष रहने पर छान ले ।) इस क्वाथ मे अरड का तेल मिलाकर पीने से अण्डवृद्धि शीघ्र ही नष्ट हो जाती है ।

(४) रास्नादि क्वाथ(७) (स. ५८७३)रास्ना, अमलतास, देवदारु, रक्त पुनर्नवा, गिलोय, गोखरू और अरण्डकी जड समान भाग लेकर क्वाथ वनावे । इसमे सोंठ का चूर्ण मिलाकर पीने से अनेक विध सन्धि पीडा युक्त भयकर आमवात नष्ट होता है । (प्रत्येक वस्तु ६ माशे । पाकार्थ जल २८ तोले । शेष क्वाथ ७ तोले । सोंठ का चूर्ण १-१।। माशा ।)

(५) रास्नादि क्वाथः (१२) (स ५८७८) रास्ना, गिलोय, अमलतास का गूदा समान भाग लेकर क्वाथ वनावे । इसमे अरण्डी का तेल मिलाकर पीने से सर्वाङ्ग वातरक्त भी नष्ट होजाता है । (प्रत्येक वस्तु १ तोला । पानी २४ तोला । शेष क्वाथ ६ तोले ।)

(६) रास्नादि क्वाथः (१३) (स. ५८७९) रास्ना, एरण्डमूल, पीपल, हर्र, पियावासा, कटेली, गिलोय, गन्ध प्रसारणी, नागर मोथा, पोखरमूल, देवदारु, गूगल, वच, ब्राह्मी, हल्दी, कचूर, कीकर की छाल, पीपलामूल, वेल की

छाल, सोना पाठा की छाल, खम्भारी की छाल, पाढल की छाल, अरणी, हपुषा, धमासा, सोया, अतीस, पुनर्नवा की जड़, अजवायन, शतावर, अमलतास, और असगन्ध समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर अधकुटा करले। (यह चूर्ण २॥ तोला। पाकार्थ जल २० तोला। शेष क्वाथ ५ तोला।)

यह क्वाथ कुब्जता, वामनता, पक्षाघात, हनुग्रह, गात्र का सूखना, सधियो की जकडाहट, ऊरुस्तभ, अग्निमाद्य, नासाभग, गलग्रह, शोथ, पाडु, ऊर्ध्ववात, आमवात, वातरक्त, खजता (लङ्गडापन), गूंगापन, गद्गद शब्द (हकलाना), उदावर्त, शूल, सन्निपात, रक्तश्राव, योनिदोष, भगदर अर्श, सग्रहणी और कोष्ठगत वायु को नष्ट करता है।

(७) रास्नादि क्वाथ (१५) (सं. ५८८१) रास्ना, देवदारु, अमलतास, सोठ, मिर्च, पीपल, अरण्ड की जड, पुनर्नवा और गिलोय समान भाग लेकर क्वाथ बनावे। इसमे सोठ का कल्क मिलाकर सेवन करने से आमवात शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

(८) महारास्नादि क्वाथः (१८) (सं. ५८८४) (शा सं.) रास्ना २ भाग तथा धमासा, वला (खरैटी), अरण्डमूल, देवदारु, कचूर, वच, वासा, सोठ, पथ्या (हर्र), चव्य, नागरमोथा, पुनर्नवा, गिलोय, विधारा, सोया, गोखरू, असगध, अतीस, अमलतास, शतावर, पीपल, पिया वासा, धनिया, छोटी और बडी कटेली समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर अधकुटा करले। (यह चूर्ण २॥ तोला। पाकार्थ जल २० तोला। शेष क्वाथ ५ तोले।)

इस क्वाथ मे सोठ या पीपल का चूर्ण अथवा योगराज गूगल या अजमोदादि चूर्ण मिलाकर सेवन करने से अथवा अरण्डी का तेल मिला कर पीने से सर्वाङ्ग कम्प, कुब्जता, पक्षाघात, अपवाहुक, गृध्रसी, आमवात, श्लीपद, अपतानक अन्त्रवृद्धि, अफरा, जघा और जानु की पीडा, अर्दित, शुक्रदोष, मेदवायु, बन्ध्यत्व और योनि दोषो का नाश होता है।

(९) महारास्नादि क्वाथ (९) (भा. भै. र. सं ५८८५) रास्ना, अरण्डमूल, गिलोय, वच, पियावासा, चव्य, चिरायता, नागरमोथा, भारङ्गी, अजवायन, अनन्तमूल, अजमोद, पाठा, देवदारु, वायविडग, काकडासिगी, सोठ, खरैटी, मूर्वा, कुटकी, मजीठ, अतीस, कचूर, हर्र, बहेडा, आमला, पीपल, जवाखार, लाल चदन, अमलतास, कूडा की छाल, इन्द्र जौ, पुनर्नवा और दशमूल की प्रत्येक वस्तु समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर अधकुटा करले। (यह चूर्ण ५ तोले। पाकार्थ जल ४० तोले। शेष क्वाथ ५ तोले।)

इस क्वाथ मे गूगल मिलाकर सेवन करने से सर्वाङ्ग वात, एकागवात, श्वास, खासी, पसीना, शैत्य, तन्द्रा, शूल, तूनी, प्रतूनी, गलरोग, अङ्ग व्यथा, कम्प, खल्ली, विश्वाची, श्लीपद, आमवात, सूतिका रोग, सुप्ति, जिह्वास्तम्भ, अपतानक, शरीर की हडफूटन और व्याथा, कुब्जता, आक्षेप, शोथ, आटोप, अपतत्रक, अर्दित, खुड्डवात, उरुग्रह, हनुग्रह, गृध्रसी, पादशूल और अन्य वात कफज रोग नष्ट होते हे।

(१०) रास्नादिक्वाथ (२०) लघु (स ५८८६ ब.से आमवाते) रास्ना, अरण्ड की जड, शतावर, पियावासा, धमासा, वासा, गिलोय, देवदारु, अतीस, हर्र, नागरमोथा, कचूर, सोठ समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर अवकुटा करले। (यह चूर्ण २॥ तोला। पाकार्थ जल २० तोला। शेष क्वाथ ५ तोला)।

इस क्वाथ मे अरण्डी का तेल मिलाकर पीने से शूल युक्त आमवात तथा कटि, उरु, त्रिकस्थान, पृष्ठ, पार्श्व और जठर की वातज पीडा शान्त होती हे।

(११) रास्नाद्वात्रिशक क्वाथ (स ५८८७) रास्ना, गिलोय, देवदारु, अरण्डमूल, हर्र, कचूर, खरैटी, अमलतास, सोठ, सोया, पुनर्नवा, पञ्चमूल (वेलकी छाल, सोनापाठा, पाढल, खम्भारी, अरणी) अतीस, मुण्डी, पिया वासा, धमासा, अजवायन, पोखरमूल, असगध, प्रसारिणी, गोखरू, वासा, विधारा, हपुषा, शतावर, मजीठ, गूगल और शिलाजीत समानभाग लेकर क्वाथ बनावे।

यह सर्वाङ्ग वायु, आमवात, सन्धिगत, अस्थिगत और मज्जागत वायु, कम्प, शोथ अपतानक, मन्यास्तम्भ, द्रोग,हृ

पक्षाघात, अपतन्त्रक, अर्दित, आक्षेपक, कुब्जता, हनुग्रह, शिरोग्रह, गृध्रसी, जानुरोग, गुल्म शूल, कटि ग्रह तथा साम और निराम सप्त धातु गत वायु एव विशेषत वात रक्त को नष्ट करता है।

(सब औषधिया समान भाग लेकर अधकुटा करलें। यह चूर्ण २॥ तोले । पकार्थ जल २० तोले, शेष क्वाथ ५ तोले । गूगल और शिलाजीत क्वाथ तैयार होने पर मिलाना चाहिये ।)

(१२)रास्नादि दशमूलम (भै० र०- च० द० आमवाते)–दशमूल की प्रत्येक वस्तु (शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, छोटी और बडी कटेली, गोखरु, बेलछाल, सोनापाठा की छाल, खम्भारी की छाल, पाढल की छाल, अरणी), गिलोय, अरण्ड की जड, रास्ना, सोठ और देवदारु समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर अधकुटा करलें ।

(यह चूर्ण २॥ तोले, पाकार्थ जल २० तोले, शेष क्वाथ ५ तोले ।) इस क्वाथ मे शोधनार्थ अरण्डी का तेल १ तोला या अधिक तथा शमनार्थ छ या आठ माशा मिलाकर पीने से आमवात नष्ट होता है ।

(१३) रास्ना द्वादशक कषाय (यो र आमवात)–रास्ना, शतावर, वासा, गिलोय, अतीस,हर्र, सोठ, धमासा, अरण्ड की जड, देवदारु, वच और नागरमोथा सब चीजें समान भाग लेकर सबको अधकुटा करलें । (यह चूर्ण २॥ तोले, पाकार्थ जल २० तोले, शेष क्वाथ ५ तोले) यह क्वाथ कटि, उरु, त्रिक, जाघ, गुल्म और जानु स्थित आम -वात को शीघ्र नष्ट कर देता है ।

(१४) रास्ना पञ्चकम् (शा० स०, भै० र०, योर० आमवात)—रास्ना, गिलोय, अरन्डमूल, देवदारु और सोठ समान भाग लेकर क्वाथ बनावे ।

यह क्वाथ सर्वाङ्गवात, आमवात और सन्धि, अस्थि तथा मज्जागत वायु को नष्ट करता है । विरेचन आवश्यक हो तो एरण्ड तेल १ तोला से २ तोला तक मिला लेवे । प्रत्येक औषधि ६ माशे, पाकार्थ जल २० तोले शेष क्वाथ ५ तोले ।)

(१५) रास्ना पञ्चदशकषाय (यो र आमवात)–रास्ना, गिलोय, सोठ, देवदारु, दशमूल की प्रत्येक वस्तु और इन्द्र जौ समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

इसमे अरण्डी का तैल मिलाकर पीने से आमवात का नाश होता है प्रत्येक वस्तु ३ माशे । पाकार्थ जल ३० तोले शेष क्वाथ ७॥ तोले । अरण्डी का तैल २-३ तोले ।

(१६) रास्ना सप्तकम् (शा सं, च. द भै र आमवात) रास्ना, गिलोय, अमलतास, देवदारु, गोखरु, अरण्ड मूल और पुनर्नवा समान भाग लेकर क्वाथ बनावें ।

इसमे सोठ का चूर्ण मिलाकर पीने से जघा, उरु, पार्श्व, त्रिक और पृष्ठशूल नष्ट होता है ।

प्रत्येक औषधि आधा तोला । पानी २८ तोले । शेष क्वाथ ७ तोले । सोठ का चूर्ण १॥ माशा । यदि विरेचन आवश्यक हो तो १ तोला से २ तोला तक एरण्ड तेल मिला लेवें ।

(१७) रास्नादि चूर्णम (२) स ५६१४ भै र ग्रहणी रास्ना, हर्र, कचूर, सोठ, मिर्च, पीपल, जवाक्षार, सज्जी क्षार, सैंधव, कालानमक, काच लवण, विड लवण, समुद्र लवण, पीपलामूल समान भाग लेकर यथाविधि चूर्ण बनावे । तथा उसे बिजौरे के रस मे घोटकर सुरक्षित रक्खे ।इसे उष्ण जल के साथ सेवन करने से कफज ग्रहणी नष्ट होती है । (मात्रा १॥ से २ माशे) ।

(१८) रास्नादि चूर्णम (३) (यो र वातरोगा)–रास्ना, कूठ, तगर, सोठ, मिर्च, पीपल, वच, चीता, पीपला मूल, कचूर, पाठा, वच, सारिवा, चिरायता, हर्र, बहेडा, आमला, खरैटी, दशमूल की प्रत्येक वस्तु, सभालु, अरण्ड की जड, अमलवेत, हीग, अद्रक, अजमोद, वनतुलसी, जवाखार, सज्जीखार, सैंधव, कालानमक, विडनमक, साभरनमक १–२ तोला ले यथाविधि चूर्ण बनाले ।

इसे पुष्कर मूल के क्वाथ के साथ सेवन करने से ८० प्रकार के वात रोग नष्ट होते हे ।

(१९) रास्नाद्य चूर्णम (ग नि राजयक्ष्मा)–रास्ना, नागरमोथा, खस, पद्माक, लौंग, असगन्ध, मिश्री, भारङ्गी, हर्र, बहेडा, आमला, सोठ, मिर्च, पीपल, वायविडग, इलायची, तेजपात, नागकेसर, देवदारु और पीपल का चूर्ण १-१ भाग तथा मिश्री सबसे २ गुनी लेकर सबको एकत्र

मिलाले। यह चूर्ण श्वास, खासी और राजयक्ष्मा को नष्ट करता है। मात्रा ६ माशे।

२०. **रास्नाद्य चूर्णम (२) (स. ५६१७)**–रास्ना, शतावर, देवदारु, ककोल, लागली (कलिहारी), पीपल, लाल चन्दन, मजीठ, ऋद्धि, सैधानमक, पद्माक, असगन्ध, गिलोय, पाठा, नागरमोथा, इलायची, शालपर्णी, सौया, अजमोद, सोठ और कूठ, इन सबका चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाले।

इसे घी मे मिलाकर उष्ण जल के साथ सेवन करने से त्वग, अस्थि, स्नायु और सन्धिगत वायु शीघ्र ही नष्ट हो जाती है। (मात्रा-१॥ से २ माशे।)

२१. **रास्नाद्यो गुग्गुल (२) [स. ५६३१]**—रास्ना का चूर्ण ५ तोले और शुद्ध गूगल ६। तोला लेकर दोनो को एकत्र मिलाकर उसमे आवश्यकतानुसार घी डालकर कूटे। इसके सेवन से गृध्रसी नष्ट होती है।

मात्रा–१॥ से २ माशा। अनुपान–उष्ण जल।

२२ **रास्नाद्यो गुग्गुल [२] [स. ५६३२]**—रास्ना, गिलोय, अरण्ड मूल, देवदारु और सोठ सबका चूर्ण १-१ भाग तथा शुद्ध गूगल सबके बराबर (५ भाग) एव आवश्यकतानुसार घी लेकर सबको एकत्र मिलाकर कूटे।

इसके सेवन करने से वातरोग, कर्ण रोग, शिरो रोग, नाडी व्रण और भगन्दर का नाश होता है।

मात्रा–१॥ से २ माशा। अनुपान–उष्णजल।

२३. **रास्नाद्यं घृतम [सं ५६४० च. द, गुल्म २६]** कल्क–सोठ, मिर्च, पीपल, अनारदाना, तिन्तिडीक, अजवायन, चव्य, सैधानमक, हीग, अम्लवेत, जीरा और अजवायन प्रत्येक ५-५ तोला लेकर सबको एकत्र पीसले।

द्रव पदार्थ—लहसन का स्वरस ६ सेर, वृहत्पञ्चमूल का क्वाथ ६ सेर (पञ्चमूल ३ सेर, पानी २४ सेर, शेष ६ सेर), सुरा ६ सेर, आरनाल (काजी) ६ सेर, खट्टा दही ५ सेर, मूली का रस ६ सेर।

विधि—६ सेर घी मे उपरोक्त कल्क और समस्त द्रव पदार्थ मिलाकर पकावे। जब द्रवाश जल जाए तो घी को छान ले।

इसके सेवन से गुल्म, ग्रहणी, अर्श, श्वास, उन्माद, क्षय, ज्वर, खांसी, अपस्मार, अग्निमाद्य, प्लीहा, शूल और वायु का नाश होता है।

रास्नादि घृतम् [२] (स ५६४२)—क्वाथ–रास्ना, खरैटी की जड, गोखरू, शालपर्णी और पुनर्नवा १६–१६ तोले लेकर सबको अधकुटा करके सात सेर पानी मे पकावे और जब २ सेर पानी शेष रहे तो छानले।

कल्क—जीवन्ती और पीपल २॥–२॥ तोले लेकर एकत्र पीस ले। आधा सेर घी मे आधा सेर दूध और उपरोक्त क्वाथ तथा कल्क मिलाकर पकावे। जब पानी जल जाय तो घी को छान लें। इसके सेवन से शोष नष्ट हो जाता है।

रास्नादि घृतम् [३] (स. ५६४४)—क्वाथ–रास्ना ३२ तोला, शालपर्णी, बेलछाल, सोनापाठा छाल, खम्भारी छाल, पाढल की छाल, अरणी, वच और नागर मोथा १६-१६ तोले लेकर सबको अधकुटा करके १६ सेर पानी मे पकावे। जब ४ सेर पानी शेष रहे तो क्वाथ को छानले।

कल्क—सारिवा, सोठ, मिर्च पीपल, चीता, पाठा, वायविडङ्ग, मुलैठी, क्षीर काकोली, हीग, देवदारु, पीपलामूल और इन्द्रजौ सब समान भाग मिश्रित १० तोले (प्रत्येक ६। माशे) लेकर सबको एकत्र पीसले।

विधि—१ सेर घी में क्वाथ और कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब क्वाथ जल जाय तो घी को छानलें। यह घृत बच्चो के लिये हितकारी है। इसके सेवन से बालको के समस्त ग्रह नष्ट होते, तथा अग्नि दीप्त होकर बल वर्ण की वृद्धि होती है।

रास्नाद्यं घृतम् [१] (ब. से. नेत्र रोग)—रास्ना, त्रिफला और दशमूल के क्वाथ तथा जीवनीयगणके कल्क के साथ घृत सिद्ध करे।

यह घृत तिमिर नामक नेत्ररोग को नष्ट करता है। (क्वाथ ८ सेर, घी २ सेर, कल्क २० तोले।)

रास्नाद्य घृतम् [५] (स ५६४८)—रास्ना, पोखर मूल, सहजने की छाल, चीता, सैंधव, गोखरू और पीपल

समान भाग लेकर चूर्ण बनावे ।

इसे घी मे मिलाकर पीने से वातज रोग नष्ट होते है।

अथवा उपरोक्त समस्त औषधिया और असगन्ध ५-५ तोले लेकर सबको एकत्र पीसले और फिर ४ सेर घी मे यह कल्क तथा १६ सेर दूध मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें जब दूध जल जाय तो घी को छान ले ।

इसके सेवन से असाध्य वात व्याधिया और भयङ्कर शुक्र क्षय रोग का नाश होता है ।

रास्नाद्यं घृतं तैलञ्च (र र शूला)—क्वाथ–रास्ना, असगन्ध, कौंच के बीज, भुईकुम्हडा, गोखरु, शालपर्णी, गिलोय, एरण्डमूल, खरैंटी, सोया और पुनर्नवा २५-२५ तोले लेकर सबको एकत्र कूटकर ३२ सेर पानी मे पकावे और जब ८ सेर पानी शेष रहे तो उसे छानले ।

विधि—२ सेर घी या अरण्ड के तेल मे उपरोक्त क्वाथ और कल्क तथा २ सेर सतावर का रस मिलाकर पकावे । जब पानी जल जाय तो छान ले ।

नोट—उपरोक्त कल्क के स्थान मे ४० तोले शुद्ध गूगल भी डाल सकते है ।

इस घृत तथा तैल के सेवन से एक दोषज, द्विदोषज त्रिदोषज (सर्व दोषज) आमवात, पार्श्वशूल, हृदयशूल, कटिशूल, पादशूल और सधिशूल नष्ट होता है ।

रास्नादि तैलम्(स, ५९६१)(च स चि स्था. ६ अ. २८)—क्वाथ–रास्ना, सिरस की छाल, मुलैठी, सोठ, पिया बासा, गिलोय, श्योनाक, देवदारु, अमलतास, असगन्ध और गोखरु १०–१० पल (५०–५० तोले) लेकर सबको अध-कुटा करके ८ गुने (५५ सेर) पानी मे पकावे और जब चौथाई शेष रह जाय तो छान ले ।

कल्क—दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर, कपूर, ककोल, अगर, सिल्हक और लौग १।-१। तोला लेकर सबको एकत्र पीसले ।

विधि २ सेर तिल तैल मे उपरोक्त क्वाथ और कल्क तथा २-२ सेर दही, आरनाल, उडद का क्वाथ, मूली का रस और ईख का रस मिलाकर पकावे । जब जलाश शुष्क हो जाय तो तेल को छानले । यह तैल प्लीहा, मूत्रा-वरोध, श्वास, खासी और वातज रोगो को नष्ट करता है ।

३०. रास्ना पूतिक तैलम् [यो र.]—दशमूल की प्रत्येक औषधि, खरैंटी, देवदारु, असगन्ध, शतावर, वरने की छाल, अरण्डी की जड, मभालु, अरणी, सहजने की छाल, क्षीर मोरट, पिया वास, चीते की जड, करन्ज, अकोल की जड, पुनर्नवा, भूपीलु, सूरजमुखी, प्रसारणी, जीवन्ती, कुचला, लाल अरण्ड की जड, जटामासी, सफेद आक, जौ, बेर और कुलथी १-१ तोला । रास्ना ३७ तोला और पूति करन्ज की छाल ७४ तोला लेकर सबको एकत्र कूटकर ८ गुने (१४ सेर ६४ तोला) पानी मे पकावें और जब १४८ तोला पानी शेष रह जाय तो छानलें ।

तदन्तर इस क्वाथ मे ३७ तोला तिल का तेल, ३७ तोला बकरी का दूध और निम्नलिखित कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावे । जब पानी जल जाय तो तेल को छान ले ।

कल्क द्रव्य—गूगल, तगर, जटामासी, सोठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेडा, आमला, दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेसर, कचूर, वायविडग, देवदारु, हीग, रास्ना, वच, कुटकी, पाठा, मुलैठी, चीता, फूल प्रियगु, पीपलामूल, सफेद चन्दन, चव, अजवायन, लौग, चम्पा, कूठ, मजीठ, सौंफ, सरसो, जायफल, सुगन्ध तृण, पाठा और खस, सब समान भाग मिश्रित तेल का छठा भाग (प्रत्येक २ माशे) लेकर सबको एकत्र पीसलें ।

इसे पान, लेपन, नस्य और शिरो वस्ति मे प्रयोग करना चाहिए । इसके सेवन से धनुर्वात, अन्तरायाम, गृध्रसी, अपबाहुक, आक्षेपक, व्रणायाम, विश्वाची, अपतन्त्रक, भ्रूस्तम्भ, शख कर्ण नासा, अक्षि और जिह्वा स्तम्भ, कलाय खञ्जता, पगुता, सर्वाङ्गवात, एकागवात, आढच वात, हनुस्तम्भ, शिरो वात, अपतानक, अर्दित, पादहर्ष, पक्षवात, उरुस्तम्भ और सुप्तवात का नाश होता है।

३१ रास्नादि लेप [२] [का स., यो. र विषर्प] रास्ना, नीलोत्पल, देवदारु, लाल चन्दन, मुलैठी और खरैंटी की जड समान भाग लेकर सबको बारीक पीसकर घी तथा दूध मे मिलाकर लेप करने से वातज विषर्प नष्ट

होता है।

३२. रास्नादि प्रलेप [भै र. वातरक्ता]—रास्ना, गिलोय, मुलैठी, वला, इन्हे समभाग मे लेकर दूध मे पीस लेप देने से वातरक्त शान्त होता है।

३३. रास्नादि लेप [३] [सं. ५९९६]—रास्ना, सोंठ, विजौरे नीबू की जड, चीतामूल, दारुहल्दी और अरणी की जड, इन सव का समान भाग चूर्ण लेकर सवको (पानी के साथ) एकत्र पीसले।

इसका लेप करने से सन्निपात के पश्चात् उत्पन्न होने वाला कर्ण मूल का शोथ नष्ट होता है। (लेप को जरा गरम कर लेना चाहिए।)

३३. रास्नाद्यजञ्नम् [यो र सन्निपात]—रास्ना, मनशिल और इलायची समान भाग लेकर सवको एकत्र घोटकर अत्यन्त वारीक अञ्जन वनावे।

यह अजन तन्द्रिक सन्निपात मे उपयोगी है

रास्नासार [भै सा. सं]—प्रवाही निर्माण के लिये रास्ना के मूल अथवा पत्रो का प्रयोग करना चाहिये। रास्ना मूल गन्धयुक्त तिक्त होती है। इसका प्रयोग आमवात और इसके अनुवन्धियो मे किया जाता है। रास्ना प्रवाही—वात-कफ रोगो मे प्रशस्त है फिरङ्ग और पूयमेह की अन्तिम दशाओ मे जव उनका विष शरीर मे फैलकर अङ्ग प्रत्यङ्ग और विशेषकर सन्धियो मे वेदना, शोथ और वेदनायुक्त शोथ उत्पन्न कर देता है तव रास्ना प्रवाही अपने आमनाशक, सस्वेदक, कफ वात नाशक, पाचक और मूत्रल गुणो से शीघ्र और अच्छा लाभ पहुँचाती है। कफवातज अन्य रोगो मे इसका प्रयोग अन्य आवश्यक प्रवाहियो को मिलाकर किया जाता है।

रास्ना प्रवाही आमवात के लिये उत्तम औषधि है।

रीठा (Sapindus trifoliatus)

यह वटादि वर्ग और अरिष्टकादि कुल (Sapindaceae) का एक वडा वृक्ष होता है। रीठा के वृक्ष १५ से २५ फीट तक की ऊचाई के होते है, जो पथरीले पहाडो मे देखने मे आते है। इस वृक्ष मे वहुत शाखाये निकली और चारो और फैली हुई होती है। इसमे पत्र वहुत होते हे। पत्र सयुक्त और एक भग्न होते है। शाखाओ के सिरे पर अक्सर पान नही होते है किन्तु उनके स्थान पर कुछ छोटी मोटी अणी होती है। फूल फीके सफेद रग के आश्विन और कार्तिक मे आते हे और फल पौष-माघ मे तैयार होते हैं। वे तीन खाचो वाले होते है। जिससे तीन फल शरीक होय ऐसा दिखाई देता है।

इस वृक्ष के कोमल भाग पर वहुधा भूरे या तपखीरिया रग की रुवाली होती है। ये महुये के समान दिखाई देते हे।

मूल—वहुत विभाग वाले, मोटे और वहुत गहरे बैठे हुए होते है। इसके ऊपर की छाल भूरे रग की, खडवचडी चिरेदार, पोची और वडकने वाली होती है। इसकी अन्तर छाल हरे और भूरे रग की मुलायम, चमकीली और वडकने वाली होती है। मूल की लकडी फीके भूरे और पीले रग की और रसदार होती है। किन्तु काटने के वाद थोडे ही समय मे छाल पीली पड जाती है। इसका आडा काट करके देखने से वीच मे सछिद्र और लहेरियादार, चक्राकार दीखता है। इसमे गन्ध थोडी तीखास लेती और स्वाद कडवास लिए हुए, गलचटा और चरपरा लगता है।

डाड़ी और शाखाये—भूरे या गहरे भूरे रग की होती है। इन पर किसी वक्त भस्मी रग के अवियमित छापा और छाटण होते है। कोमल शाखायें भूरी या फीके तपखीरिया रग की और उन पर भी खडे चीरे पडे हुए होते है। वहुत ही कोमल शाखाओ पर तपखीरिये रग की वहुधा रुवाली होती है।

पान—एक शालाका पर ५।६ और एकान्तर आये हुए होते है। उसकी मुख्य बीटडी सुतली से स्लेट पेन्सिल जैसी मोटी, नीचे चौडी और खाचेदार और आगे ऊपर की ओर कुछ चपटी और वीचोवीच उभरी नसवाली होती है। और यह ३ से १२ इञ्च लम्बी और भूरी रुवाली युक्त होती है।



इन पर पान के पर्ण की एक से तीन जोडी आई हुई होती है। यह जरा छोटी छोटी और नीचे से ऊपर की तरफ अनुक्रम से मोटी हो जाती है, कभी इस जोडी मे के पान थोडे ऊचे-नीचे होते है और समय पाकर बीच की जोडी सबसे मोटी होती है । इसकी दण्ड बहुत छोटी और चौडी नोकवाली होती है । बीटणी के पास कितने ही पानो की किनार थोडी विषम होती है । पान १ १/३ से ८ इच लम्बे और १ से ३ या ४ इच चौडे होते है, और ये दोनो सिरो पर अथवा दड की ओर सकडे और अग्रभाग की ओर चौडे, लम्बगोल होते है और सिरा या नोक अणीदार गोलाई लिये अन्दर लगते खाचादार होते है । ऊपर की सपाटी का रग पीलास लिये हुए हरा और नीचे का फीका होता है । पत्र की ऊपर की सपाटी पर अच्छी रोमावली होती है । पत्र थोडे चिकने और कठोर होते है । अन्दर की नसे थोडी दूरी पर आमने सामने ऊची चढती हुई और दोनो ओर ज्यादा कर बाहर निकलती फिर भी नीचे की ओर की विशेष बाहर की तरफ होती है । पान प्रकाश की ओर रखकर देखने से इन नसो की बीच का सुन्दर जाली का काम अर्ध पारदर्शक दिखाई देता है । पान की गध और स्वाद दाहक और उग्र लगते हैं ।

फूल—शाखाओ के सिरो पर और पास मे पत्र कोण मे पुष्प मण्डप थाम के बौर समान निकले हुए होते है और ये शाखा प्रशाखा मे होते है । ये १/२ से १ फीट लम्बे, सुतली से पेन्सिल जैसे मोटे और कालास लिए भूरे रग की रुवाली से भरे हुए होते है । पुष्प दड बहुत छोटा होता है । नीचे सूक्ष्म पुष्प पत्र होते है ये भी भूरी रुवाली से आच्छादित होते है । फूल १/६ से १/५ इच लम्बे, फीके सफेद रग के और रोंयेदार होते है, ये कदाचित ही पूरे खुलते हैं ।

पुष्प वाह्य कोष के पत्र ५ होते हैं । उन पर भी सफेद रोमावली होती है, सिरा बुट्टा और सफेद रोमावली से युक्त होता है ।

पुष्पाभ्यन्तर-कोष—की पखडिये ४, किन्तु अक्सर ५ होती है। ये पुष्प वाह्य कोष के पत्रो से थोडा तग और लम्बे होते है। इस पर भी सफेद लम्बे रोंये होते हे ।

पुकेसर—ज्यादा करके ८ होती है, तन्तुओ पर सफेद लम्बे बालो की रुवाली होती है। परागकोष सफेद होता है। परत के बीच गट्टेदार और किनारे पर रोंये होते हैं।

स्त्री केसर—१ होती है । गर्भाशय भूरे नरम रोंगिया बालो मे भरा हुआ, ३ खांचे और तीन पोल वाला होता है, इस पर ३ छिद्र की नलिकायें होती हैं ।

फल—कच्ची अवस्था मे पीलास लिये हुए हरे रङ्ग के और गहरी रुवाली मे युक्त होते है किन्तु जब पक कर सूख जाते हैं तब ऊपर की रोमावली धीरे-धीरे सूखकर दूर हो जाती है और फल की सतह पर बचडी झुर्रीदार और ललाई लिए भूरे रङ्ग की हो जाती है । फल के नीचे छोटा बीट होता है और बीट के चारो ओर सफेद रोमावली का चक्र दिखाई देता है । फल १/२ से ३/४ इच लम्बा और सिरे पर १ से १ १/४ इच चौडा होता है । सूखने पर इसके तीनो खाचे तुरन्त जुदा हो जाते है । उन प्रत्येक खाचो मे एक एक बीज होता है । फल की छाल कुछ नरम और खजूर के समान गूदे वाली होती है, वास उग्र सुगन्धित और स्वाद प्रथम कुछ मीठा परन्तु पीछे से बहुत कडवा, चरपरा और उग्र लगता है । इसके त्वक के झागो से ऊनी और रेशमी वस्त्र धोते है ।

बीज—काला रग का चिकना, चलकता एक उभीनस और ३ छोटी नोक वाला होता है । ये एक सिरे सूक्ष्म और दो अणीवाला होता है । बीज आधा इच व्यास का और सख्त होता है । तोडने पर अन्दर से पीलास युक्त उपरा उपरी दो दल निकलते है । ये स्वादार और तेलिया मालूम देते हैं ।

उत्पत्ति स्थान—

भारतवर्ष के शुष्क वन, हुगली, हावडा, २४ परगना, छोटा नागपुर, राजस्थान, दक्षिण हिन्दुस्तान, लका द्वीप के तमाम गावो मे बहुत उगते है और बगाल मे कृषि भी की जाती है ।

नाम—

स —अरिष्टक, फेनिल, गर्भपातन । हि —रीठा, अरीठा । ब —रिटेगाछ, वडा रीठा । म —रीठा, कोटाई । गु अरिठा । राज —आरेठा, अरीठा । तै —कुकुड । ता —पोन्नान । द — रीठा । मल —चवकायी मरम । क —कूकाट कायी । को —

अपनी औषध मजूसा मे जरूर रखना चाहिये। अच्छी मात्राओ के मुकाबिले मे यह चूर्ण अद्भुत कार्य करता है और वहुत यश देता है। (नि आ.)

यूनानी मतानुसार—

प्रकृति—दूसरे दर्जे मे गरम और खुश्क। गुण-कर्म—वाहरी तौर पर लगाने से रीठा-लेखन, श्वयथु विलयन, शोणितोत्क्लेशक और सक्षोभ जनन है। सक्षोभ जनन होने के कारण नाक मे नस्य करने से यह छीके लाता और द्रवो को शोषित करता है और फलवर्ती की भांति उपयोग करने से आर्तव प्रवर्तन करता और गर्भ एव अपरा का निर्हरण करता है। थोड़ी मात्रा मे आन्तरिक रूप से खिलाने से दीपन और वातानुलोमन है और शीतल व्याधियो मे लाभ करता है। किंतु अधिक मात्रा मे खिलाने से वमन और विरेचन करता है। इसका कारण सभवतः यह है कि आमाशय और अन्त्र पर इसका सक्षोभजनन प्रभाव होता है।

छीप व झाई तथा किलास आदि त्वचा के रोगो के लिए लेप के रूप मे तथा सर्प एव वृश्चिक विष के लिये भक्षणीय औषध रूप मे इसका विशेष उपयोग किया जाता है। उपयोग—झाई, व्यङ्ग और किलास जैसे त्वचा के रोगो मे रीठे को पीसकर लेप करते है। चेहरे का रग निखारने के लिये इसे उबटनो मे मिलाकर उपयोग करते है। कठमाला पर इसे सिरके मे पीसकर लेप करते है। अर्दित, अर्धावभेदक, अपस्मार और शीतल शिर शूल निवारण के लिये इसको पानी मे पीसकर नस्य कराते है। इससे छीके आती है या छीक के विना नासिका मे सक्षोभ होकर विपुल द्रव्य स्रावित होता है और रोग निवृत्त हो जाता है। रुद्धार्त्तव को नष्ट करने और मृत गर्भ एव अपरा निर्हरण के लिये इसको जल मे पीसकर फलवर्ति बनाकर योनि मे रखते है। रतौंधी और धुन्ध के लिये इसको जल मे घिसकर नेत्र के भीतर लगाते है। सर्प और वृश्चिक, दष्ट के लिये यह अगद है। सर्प और वृश्चिकदष्ट को ६ माशे के लगभग वारीक पीसकर जल मे मिलाकर २-२ घण्टे बाद पिलाने से छर्दि एव अतिसार होकर सम्पूर्ण विष दूर हो जाता है। दष्ट अवयव पर पतला लेप भी करते है।

अहितकर— उष्ण प्रकृति के लिये। निवारण—तेल, विशेषतः वादाम का तैल। मात्रा १से २ माशे तक।

(यू द्र. वि)

नव्यमतानुसार—

डा० मुडीन शरीफ लिखते है कि—

'मैं इस औषध को कई दिनो से प्रयोग मे ला रहा हूँ। वमनकारक औषधियो मे यह औषधि सबसे सस्ती है। यह औषधि अपना असर वहुत शीघ्र बतलाती है व अन्य वमन कारक औषधियो की तुलना मे जोशीली और अपेय रहती है। आधा शीशी और श्वास के रोग मे यह केवल क्षणिक प्रभाव दिखलाती है।'

दमे के अन्दर छाती मे जमे हुये कफ को निकालने के लिए अरीठे से वमन कराई जाती है। इपिकाक की अपेक्षा इसका असर जल्दी होता है। जीर्ण कफ रोगो मे इसको देने से कफ पतला होता है और हृदय को शक्ति मिलती है। कफ रोगो मे इसको वहुत छोटी मात्रा मे देना चाहिए क्योकि इससे पाचन क्रिया पर कुछ खराव असर होता है। दमे मे और आधाशीशी मे इसकी सुंघनी सुघाने से तत्काल लाभ होता है।

यद्यपि यह लाभ चिरस्थाई नही होता पर एक वार तो रोगी को तत्काल शान्ति मालूम होती है। अजीर्ण से पैदा हुए उदरशूल मे इसके गुदे की २ रत्ती की गोली बनाकर देना चाहिए। अफीम विष को दूर करने के लिए अरीठा एक उत्तम औषधि है।

कर्नल चोपडा के मतानुसार वह औषधि पौष्टिक, कफ निस्सारक, वमनकारक, क्षारयुक्त और बिच्छू के डङ्क मे उपयोगी है।

आयुर्वेदिक औषधियो मे अरीठा एक प्रधान वमन कारक औषधि है। वमनकारक होने के ही कारण यह विष नाशक भी मानी गई है। क्योकि विष को नष्ट करने मे वमन भी एक प्रधान उपाय है, इसके अतिरिक्त वेहोशी को दूर करने का भी इस औषधि मे विशेष गुण है।

१. हिस्टीरिया और मृगी—अरीठे के फल की गिरी को पानी मे घिसकर उसी की दो चार बूदें नाक मे टपकाने से तथा सलाई के द्वारा थोडा सा आख मे आजने से मृगी, हिस्टीरिया तथा और किसी भी कारण से पैदा हुई बेहोशी तुरन्त दूर हो जाती है, आख मे आजने पर यदि जलन हो तो गाय का घी या मक्खन आजने से शान्ति होती है।

२ आधाशीशी—अरीठे के फल को एक-दो काली मिर्च के साथ पानी मे घिसकर नाक मे टपकाने से आधा शीशी का रोग तत्काल दूर होता है।

३ अनन्त वायु—प्रसव के पश्चात् वायु का कोप होने से स्त्रियों का मस्तिष्क शून्य हो जाता है, आखों के आगे अन्धकार छा जाता है, दातों की बत्तीसी भिड जाती है और वायु की ताणे आने लगती हैं। ऐसे कठिन समय मे अरीठे को पानी मे घिसकर फेन पैदाकर आख मे आजने से तत्काल वायु का कोप दूर होकर जादू के समान असर दिखलाई देता है।

४. अरीठे की सूघनी—अरीठे का मग्ज, नकछिकनी, कायफल, नौसादर, सफेद मिर्च, अपामार्ग के बीज और वायविडङ्ग ये बराबर लेकर कूट, पीस, छानकर चूर्ण करके रख लेना चाहिये। जब जरूरत पडे तब उसमे से थोडा सा लेकर उसमे सीप का चूना अच्छी तरह से मिलाकर सुघाने से सर्दी, आधाशीशी, हिस्टीरिया तथा मस्तक मे खून का चढ जाना आदि दूर होते हैं।

५. सन्निपात—अरीठे का मगज, अकोल के जड की छाल, समुद्रफल के बीज, अपराजिता के बीज और कडवी तोरई के बीज ये सब समान भाग लेकर तुलसी के रस मे खरल कर दो-दो रत्ती की गोलिया बना लेनी चाहिये। रोगी की शक्ति का विचार करके एक से चार गोलियों तक गरम पानी के साथ देने से उल्टी और टट्टी होकर महा भयङ्कर सन्निपात दूर हो जाता है। इसके अतिरिक्त इसी औषधि से सर्प दश, पागल कुत्ते का जहर तथा सखिया, अफीम, वच्छनाभ वगैरह विषो के विकार भी वमन होकर नष्ट हो जाते हैं।

५. बिच्छू का जहर—अरीठे के एक फल की गिरी लेकर उसको पीसकर तीन हिस्से करके गुड मे मिलाकर तीन गोलिया बना लेनी चाहिये। पाच-पाच मिनट मे एक एक गोली ठण्डे पानी के साथ देने से तथा इसी के फल को पीसकर आखो मे आजने से और डङ्क पर लगाने से जहर उतरता है। इसी प्रकार अगर इसके फल के चूर्ण को तम्बाकू की तरह पिया जाय तो भी विष नष्ट हो जाता है।

७. मासिक धर्म की रुकावट—अरीठे के फलो के मगज को पीसकर उसकी बत्ती बनाकर स्त्री की जननेन्द्रिय मे रखने से मासिक धर्म की रुकावट मिटती है। प्रसव के समय भी यह बत्ती रखने से बिना विलम्ब के प्रसव हो जाता है।

८. केश मञ्जन पाउडर—कपूर कानरी, नागरमोथा दश दश तोला और कपूर तथा अरीठे के फल की गिरी चार-चार तोला, शीकाकाई १५ तोला, सूखे हुये आवले २०० तोला, इन सबका चूर्ण करके उसमे से ५ तोला चूर्ण लेकर के १॥ पाव उबलते हुये पानी के साथ १५ मिनट तक भिगोकर रखना चाहिये। बाद मे मल छानकर बालो को जल से मसलना चाहिये। इससे बाल अत्यन्त मुलायम और रेशम के समान सुहावने हो जाते हैं तथा सिर के अन्दर यदि जू-लीख होती है तो वह भी मर जाती है।

(व च से साभार)

९ अर्धावभेदक चिकित्सा—रीठे की छाल को पानी मे मलकर झाग निकाले और शीशी मे सुरक्षित रखे। यदि पीडा बाई ओर हो तो दाई और दाई ओर हो तो बाई ओर दो बूद नाक मे टपकाये।

१० भोह पीडा—सिर दर्द अर्थात् मस्तिष्क पीडा होने से पूर्व दो बूद दर्द के दूसरी ओर के नासिका के छिद्रो मे टपकाये। एक-एक घण्टे के पश्चात् तीन बार टपकाना चाहिये। ३ दिन मे तो दर्द का नाम मात्र भी नही रहेगा।

११ अनन्त वात (धोवे) पर—रीठा का छिलका १ तोला, निबौली की गिरी १ तोला, दोनो को बारीक पीसकर नस्य दे, रोग समूल नष्ट हो जावेगा।

रीठा की छाल को स्त्री के दूध मे घिसकर नस्य दे। पूर्ण लाभ होगा।

रीठे का छिलका ही बारीक पीसकर नस्य बनाकर



सू घे। शूल को लाभकारी है।

१३ नजला तथा जुकाम—रीठे का तेल–यह पुराने प्रतिश्याय के लिये अत्युत्तम है। रीठे का छिलका दो तोला, निबौली की मीग दो तोला को आध सेर पानी मे रात को भिगो रखे और प्रात काल पीसकर उबाले । जब आध पाव पानी शेष रह जावे तब आध पाव सरसो का तेल मिलाकर उबाले। जब तेल मात्र शेष रह जावे और पानी लेश मात्र भी न रहे तब उतार कर छानले और आवश्यकता के समय दो तीन बू दे सूघे।

१३. रीठे की नस्य –रीठे का छिलका, कालीमिर्च समभाग लेकर बारीक पीसकर सुरक्षित रखे और आवश्यकता के समय थोडी सु घा दिया करे।

इससे पक्षाघात, अर्दित रोग, मानसिक उन्मत्तता, अर्धावभेदक तथा जिसकी घ्राण शक्ति नष्ट हो गई हो तथा जिनको सदैव नीद सी आती रहती हो उनके लिये भी लाभकारी है।

१४ दन्त पीडा की अनुभूति औषधि—रीठे का बीज जलाकर कोयला बनाले और इसी के समभाग भुनी हुई फिटकडी मिलाकर तथा खूब बारीक पीसकर दन्त मजन बनाले। हिलते हुये दातो तथा दातो से रक्त बहने व पीडा को दूर करने के लिये विशेष लाभकारी है।

१५ कठ रोग खुनाक पर—रीठे का छिलका एक तोला को घोटकर या उबाल कर कुल्ली (गण्डूष) करायें।

यदि रोगी अचेतावस्था मे पडा हो तो पानी मुख मे डालकर दूसरा पुरुष उसके सिर को हिलावे, रोगी दो ही मनट मे चङ्गा होकर उठ बैठेगा। खुनाक के लिये तो रीठा जादू का सा असर रखता है। खुनाक की हर अवस्था मे उत्तम है।

६ श्वास और खासी पर—४ माशे से ८ माशे तक रीठे के छिलके का चूर्ण लेकर पानी मे काढा करके पिलाया जावे तो अल्पकाल मे ही वमन हो जायगी । पुन गर्म पानी खूब पिलावे ताकि फिर वमन खुलकर हो जावे। इससे एक बार तो छाती कफ से निवृत्त तथा शून्य हो जावेगी और अधिक समय तक खासी तथा श्वास से छुटकारा मिल जायगा। कफजनित खासी तो जाती रहेगी।

१७ दर्द गुर्दा—एक रीठे का छिलका तथा गिरी (जिसका ऊपर का काला छिलका दूर कर दिया हो)बारीक पीसकर पानी मे पाच गोलिया बनाओ और एक गोली सेवन कराओ। यदि एक गोली से आराम नही हो तो फिर और गोली देवे।

१८. फोडे, फुन्सियो पर—रीठे का छिलका, लाल शक्कर, साबुन। रीठे के छिलके को बारीक पीसकर शक्कर मिलाये और फिर साबुन मिलाकर जल द्वारा मरहम बनालें और कपडे पर लगाकर प्रात साय लगाया करे। वास्तव मे एक अजीब वस्तु है।

१९. विष नाशक अगद—रीठे का चूर्ण उसके जबडे पर मल दिया जावे तो जबडे शीघ्र ही खुल जाते हैं।

यह अगद आमाशय मे पहुँचते ही रोगी को होश आ जाता है। रीठे मे सबसे बडी विशेषता यह है कि समस्त विषो को वमन द्वारा निकालकर निर्विष कर देता है। अत सर्पदश के लिये तो यह अगद सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। सर्प दशित को रीठा कई विधियो से सेवन कराया जाता है। यह योग सर्पदशित के वास्ते उच्च कोटि का है। यदि प्राण शेष हो तो रोगी बच जाता है।

इसकी पहचान यह है कि तालु और मस्तक के मध्य मे पछने लगाकर देखे यदि रक्त नही निकले तो समझो कि सर्पदशित व्यक्ति मर चुका है। यदि रक्त बह निकले या बू द टपके तो रीठा ६ माशा घोटकर पिलावे तत्काल ही खुलकर वमन होगी। दो घटे के बाद फिर पिलावे।

२० सर्प विष पर लेप—रीठे का छिलका एक तोला, तूतिया ३ माशा, सखिया ३ माशा। बारीक पीसकर आक के दूध मे दो घण्टा रगड और खूब खुश्क करदे । दूसरे दिन फिर दूध से तीन घण्टा पीसकर सुखादे। इसी प्रकार तीन बार करे और फिर शीशी मे सुरक्षित रखे । आवश्यकता के समय सर्पदशित स्थान पर पौछ करके लेप कर दें।

२१. सर्पदंश पर काढा—रीठे का छिलका एक तोला, लाल साठी दो तोला, पानी मे उबाल कर पिलावे। इससे वमन होकर समस्त शरीर का विष निकल जाता है दो घटे के बाद पुन सेवन करावे ।



२२. रीठा सत्व—रीठे का छिलका एक सेर, पानी तीन सेर । प्रथम रीठे के छिलका को बारीक पीसकर पानी मे मिलाकर विलोना प्रारम्भ करें और जितनी झाग आती जावे उसको उतार कर चीनी की प्लेट मे रखते जावे । जब झाग आना बन्द हो उस झाग को धूप मे सुखा कर रखले । बस यही सत रीठा ओर सर्प काटे की अक्सीर दवा है । मात्रा—केवल दो रत्ती ।

सर्प दशित पशु की चिकित्सा—रीठे का चूर्ण आध पाव पानी मे घोलकर-नाल (नार) के द्वारा पिला दे । चन्द मात्राओ के सेवन से ही जहर उतर जायगा ।

मिसाल—एक मनुष्य को ऐसे जहरीले सर्प ने काटा कि उसका शरीर बिल्कुल फट गया । उसका जहर उतर जाने के बाद १८ दिन तक रीठे का चूर्ण एक माशा की मात्रा मे प्रात-साय दिया गया । परिणाम स्वरूप घाव भरकर शरीर बिल्कुल शुद्ध और आरोग्य हो गया । रीठा सर्पदशित के लिये एक अगद है । इसको सदैव पास मे रखना आवश्यक है ।

२३ **बिच्छू का विष दूर करना**—बिच्छू काटे पर दो माशे चूर्ण रीठा का छिलका या एक रत्ती सत रीठा पानी मे पिलावे और कुछ नस्य की तरह सुघावे । इसके साथ पछने लगाकर लेप लगाना भी उत्तम है ।

२४ **अफीम का अगद**—रीठे को उबाल कर जब उसमे झाग निकलने लगे तब अफीम खाने वाले को पिलावे । वमन आकर जहर निकल जायगा । परीक्षित है । —रीठा के गुण तथा उपयोग से साभार ।

रुदन्ती घास (Cressa cretica)

यह त्रिवृत्तादि कुल (Convolvulaceae) का एक छोटा पौधा होता है । क्रेसा=मध्य समुद्र के क्रीट द्वीप मे होने वाला । क्रिटिका=क्रीट से सम्बन्ध वाला । खडा अनेक शाखा युक्त वामन क्षुप ऊचाई ६ से १८ इन्च । काण्ड कोमल, अनेक शाखा युक्त, तेजस्वी, श्वेत बालो से आच्छादित । शाखाये सघन और क्रमशः ऊपर छोटी-छोटी शाखायें लगभग त्रिकोणाकार । शाखाये लगभग मूल पर से ही निकलती है । इसका क्षुद्र क्षुप एक वर्षायु चने के पौधे के सदृश होता है ।

पान—अनेक, लगभग वृन्तरहित, करीब ¼ इन्च लम्बे, कुछ मोटे, निम्न पान हृदयाकार, ऊपर के पान अडाकार या भल्लाकार, कोमल या रुएदार राख के रग के, उग्रवास युक्त, स्वाद चिपचिपा, कसैला, नमकीन ।

पुष्प—सफेद या गुलाबी सामान्यत छोटे गुच्छा मे एकत्र पुष्कल पुष्प होते है । ऊपर के पानो के अक्ष स्थान से निकली हुई पुष्प शलाका पर वृन्त रहित, ⅕ इच व्यास का । पुष्प बाह्य कोष सघन रुएदार, ⅛ इच लम्बे एक दूसरे के किनारे पर रहे हुए दल युक्त । पुष्पान्तर कोष चौगासदृश, गहरे पाच खण्ड युक्त, ५ इच लम्बे । लम्बा पुकेसर ५ श्वेत, पखडियो से लम्बे, स्त्री केसर १ हरे, गोल एव गर्भाशय दो कोष युक्त । बीजाणु ४ । मूल सफेद (स्थान भेद से पीताभ या रक्ताभ) सूतली जैसा पतला ६ इच से २ फुट तक गहरा । विशेषत यह क्षार प्रधान जमीन मे होता है । इसी हेतु से इसके नीचे की जमीन आर्द्र भासती है । इस क्षुप पर शीतकाल मे ओस के जल बिन्दु पडे हुए प्रतीत होते है । इस क्षुप का देखाव दूर से चने के क्षुप जैसा भासता है । पान पर से रस बिन्दु टपकते रहते हैं । यह स्वाद मे तिक्त और खारी है ।

पुष्पकाल—जुलाई से दिसम्बर ।

उत्पत्ति स्थान—

भारत के सब प्रान्तो मे, सिलोन और उष्ण प्रदेशो मे, मुलतान, सिन्ध, कोरो मण्डल के किनारे, पन्जाब, उत्तर-प्रदेश, राजस्थान, सौराष्ट्र आदि मे समुद्र तट के समीप वर्षान्त के उपरान्त खेतो मे और प्राय सख्त आर्द्र और क्षारीय भूमि मे नदी नालो के समीप उत्पन्न होती है ।

नाम

स—रुदन्ती, स्रवन्ति, पलितक, चणकपत्री । हि—रुद्रवती घास, रुदन्ती, लाणा, चणपत्री । व—रुदन्ती । म—

रुदन्ती, खरडी, रान हरा-भरा । गु –पलीयो पडीयो । सिं गु कच्छी–उण गुण । नामिक–चवेल । क –अलुत्रणि, अडिवेकडूले, नोण सुत्तल । ता उत्पु-सनग । ते.–उप्पु-मनगा । सिलोन–पनीट्टु की । ले (Cressa Cratica) Linn) । (क्रेसा क्रेटीका) ।

इसमे एक ईथर विलेय क्षारोद हे ।

रासायनिक संगठन–

प्रयोज्याङ्ग–पञ्चाङ्ग ।

मात्रा–३ माशे से ५ माशे तक ।

रुदन्ती–चरपरी, कडवी, गरम, रसायन तथा क्षय, कृमि, रक्तपित्त, कफ, श्वास और प्रमेह नाशक है ।

गुण–धर्म और प्रयोग–

रुदन्ती–अग्निजनक, वीर्य वर्द्धक, पित्त नाशक और रसायन हे । (शा नि)

यूनानी मतानुसार–

प्रकृति–दूसरे दर्जे मे गरम और खुश्क । गुण कर्म–यह शरीर एव शरीर के प्रत्येक अग-प्रत्यग को शक्ति प्रदान करती हे ।

उपयोग–रुद्रवन्ती को साए मे सुखाकर सम प्रमाण मिश्री के साथ या मधु मे मिलाकर शरीर बलवर्धन, वाजीकरण और असामयिक पलित को रोकने के लिये खिलाते है । इसके अतिरिक्त गर्भस्थापन के लिये भी इसका उपयोग करते है । सम्भवत गर्भाशय को शक्ति देने के कारण यह गर्भस्थापन मे सहायक होगी। अर्ध प्रमाण त्रिफला चौथाई प्रमाण त्रिकुटा और सम प्रमाण मिश्री के साथ चूर्ण बनाकर लगभग ७ माशे । यह चूर्ण गौ दुग्ध के साथ । समस्त शरीर की वेदनाओं और शरीर बल वर्धन के लिये खिलाते हैं । अहितकर–किसी अग प्रत्यग के लिये विशेष रूप से अहितकर नही है । निवारण–गोघृत और ताजा-दूध । मात्रा ३ से ५ माशा तक ।

रुदन्ती घास कच्छ और सौराष्ट्र मे भैंसो को खिलाने का रिवाज हे इससे दूध बढता है और मधुर भी बनता है तथा घी भी विशेष स्वादु और सुन्दर (बडे कण मय) बनता हे । (गो रुदन्ती घास पसन्द नही करती ।)

(१) **कफ कास**–रुदन्ती घास के पानो का चूर्ण शहद के साथ दिन मे ३ बार देते रहने से थोडे ही दिनो मे कफ निकलकर खासी शमन हो जाती है ।

(२) **स्तन्य बढाने को**—दूध बढाने के लिये स्त्रियो को पचाङ्ग का दुग्धावशेष क्वाथ कर पिलाते रहना चाहिये ।

(३) **रक्त विकार**–रुदन्ती घास पचाङ्ग १ तोला, काली मिर्च ४ रत्ती को जल के साथ पीस छानकर पिलाते रहने और पथ्य पालन करने से थोडे ही दिनो मे खुजली चलना, फुसिया होना, त्वचा शुष्कता रस विकार के धब्बे दूर हो जाते है । (गा औ र से साभार)

रुदन्तीफल [लुतिकाय] (Capparis Moonii)

यह वरुणादि कुल (Capparideae) की एक मध्यम ऊचाई की स्वत उत्पन्न होने वाली और अनियमित रूप मे फैलने वाली वृक्षाश्रयी झाड़ी है जिसकी ज्यादा से ज्यादा ऊचाई पन्द्रह से अठारह फुट तक होती हे । परन्तु प्राय दस-पन्द्रह फुट ऊची होती हे । इसकी निर्लोभ शाखाये तीन से छ इञ्च तक लम्बी और सवा से ढाई इञ्च तक मोटी होती ई । इसके जब नये नये पत्ते निकलते हे तो उनका रङ्ग ताम्र वर्ण का होता है । सुर्खी स्पष्टत पाई जाती है परन्तु परिपक्व होने पर चमकदार हरे रङ्ग के होते हैं । इनकी डटी आधे से एक इञ्च तक लम्बी होती हे । यह तीन से चार इञ्च लम्बे और डेढ से दो इञ्च चौडे होते है । यह नोकरहित या थोडे नोकदार और कडे होते हे । पत्र वृन्त के पास छोटे-छोटे टेढे काटो का एक जोडा होता है । पत्तो के मध्य सिरा से दस बारह जोडे सिराओ के निकले रहते है ।

इस पर मञ्जरिया आती है । मञ्जरी मे छ से बारह तक पुष्प श्वेत वर्ण के और लोमरहित होते है । यह चार से पाच इञ्च व्यास मे होते हे। हर पुष्प मे चार-चार पुष्प पत्र होते है जो आमने-सामने होते है । पु केशर तथा स्त्री केशर स्पष्टत दिखाई देते है ।



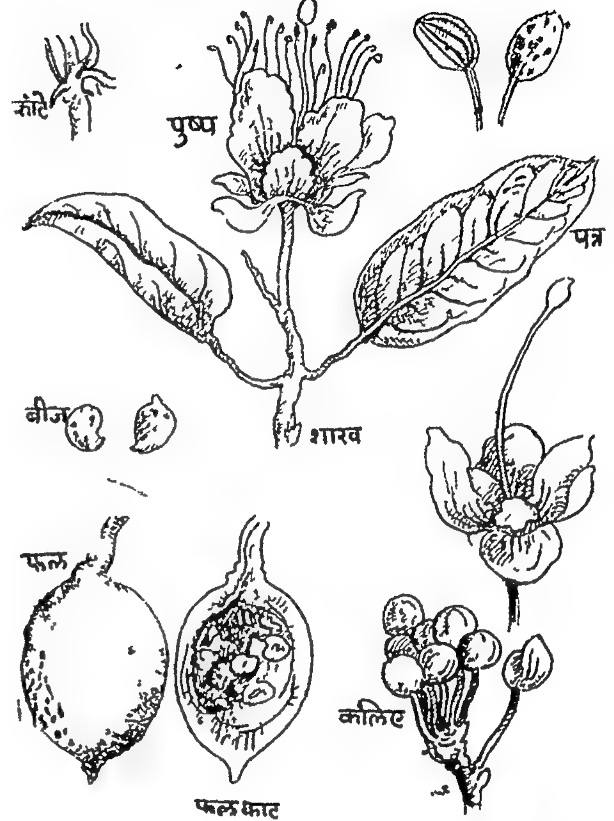
इसके जो फल आते है वह अण्डाकार गोल होते है। छोटे से छोटे फल का व्यास प्राय ¼ इञ्च होता है। वडे फल प्राय छोटे अनार जितने आकार के होते हैं। वडे से वडे फल चौदह पन्द्रह इञ्च व्यास तक के पाये जाते है। पत्तो के अनुकूल ही अपक्व फल भी सुर्खी लिये होते है। परन्तु पकने पर इनका रङ्ग हरा होता है।

इसके छोटे-छोटे फलो को तोडकर सुखा लिया जाता है तो रङ्ग काला हो जाता है। परन्तु वडे-वडे मोटे फल शुष्क होकर नसवारी रङ्ग के हो जाते है। इनका छिलका दृढ और मोटा होना है और अन्दर से यह ठोस होते है। इनके फलो को काटने से इनमे से मीठी-मीठी सुगन्ध निकलती है। इसके हरे वडे वडे फलो को काटने से इनका गूदा हलका लालिमायुक्त हरा होता है। किन्तु सावत फलो को तोडकर चार छ दिन सुखाने के बाद काटने से गूदा हलके गेरू रङ्ग का निकलता है। फलो के अन्दर कई वीज होते है जो सेम के वीजो के बरावर और सदृश होते हे। फलो का स्वाद ओट के समान होता है।

रुदन्ती की जानकारी सम्बन्धी डा मेहदी हसन की खोज—

पाकिस्तान के डा० एस० मेहदी हसन पी० एच० डी०, सदस्य कोसिल आफ रिसर्च आफ बायोकैमिस्ट्री, कराची ने बडे प्रयत्न से डा० कृष्ण मूर्ति से इस औषधि के सम्बन्ध मे सम्पर्क स्थापित किया। पुन दक्षिण मे जाकर उन्होने केरल–कोकण, पश्चिमी घाट मे इसके वृक्षो को स्वय देखा और देखने के बाद पत्र, पुष्प और फलादि का विवरण उन्होने दिया है, जो अध्ययनात्मक दृष्टिकोण से उचित तथा सनोषजनक है। नाम का पता न लगने पर पहचान के लिये एक लफिस्टन कालेज बम्वई के वनस्पनि शास्त्र के अध्यापक श्री कपूर से सहायता ली गई। पुन इसकी पुष्टि, सेंट जेवियर कालेज, बम्बई के वोटेनिकल म्युजिक के प्रधान डाक्टर फादर सन्तापू के पास जाकर की गई। पुन इसकी प्रमाणिकता के वारे मे सर एडवर्ड सेलिसवरी, डायरेक्टर न्यू गार्डन, लन्दन को भेजकर पूछा गया और यह उनके नमूने Capparis Moonii से ठीक मिला। इतना प्रयत्न इसलिये करना पडा कि किसी भी

रुदन्ती
CAPPARIS MOONII



आधुनिक पुस्तक मे इसका नाम नही था। रुदन्ती नाम कल्पित है।

(विश्वनाथ जी द्विवेदी द्वारा–सचित्र आयुर्वेद से साभार)

चित्र परिचय—

यह एक मध्यम जातीय वृक्ष श्रेणी की वनौषधि है, जिसकी अधिकतम ऊचाई १५ से १८ फीट तक होती है। इसकी पत्तिया एक विशेष प्रकार की लम्बी और शिराओ से युक्त होती है। जब ये नयी होती है तो इनका वर्ण ताम्र वर्ण का और पूर्ण होने पर हरित वर्ण का रहता है। इसका पत्र वृन्त आधा से एक इञ्च तक लम्वा होता है। पत्र ३–४ इञ्च लम्वे, १॥ से २ इञ्च चौडे होते है। प्राकृतिक रूप मे इनका आकार चित्र न १ से दिये हुये पत्र की तरह होता हे। पत्रवृन्त के पास छोटे-छोटे काटो का एक जोडा होता है, जैसा न ५ मे दिखाई पडता है। नए पल्लव ताम्रवर्णवत् रक्तिमा से युक्त होते हैं और परिपक्व

यत्रो मे चमकदार हरित वर्ण होता हे। इसमे १०-१२ जोडे शिराओ के मध्य की सिरा से निकलने है। पत्तियो के वर्ण उनकी आयु के अनुसार क्रमश भिन्न-भिन्न होते है। इसके फलो मे भी पत्रवत् ही नये फल लालिमा लिये और परिपक्व हरित वर्ण के होते है और इनका रङ्ग भी क्रमश नये से पुराने मे वदलता रहता हे। नये पत्र व नये फल मे रक्तवर्णता स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है।

पुष्प—अविकसित पुष्प का स्वरूप चित्र न ७ की तरह होता है। इस समय के वडे व छोटे पुष्प-पत्र छोटे वडे विषम आकार के होते है। प्राकृतिक रूप मे पुष्प का आकार जैसा होता है, यह चित्र न ५ मे दिखाया गया है। जव पुष्प विकसित होने लगता है तो उसके दो पुष्प पत्र स्पष्ट दिखाई पडने लगते है, जैसा चित्र न ३ मे है। इसके चित्रो मे वडे को एम व छोटे को एन अक्षर के निर्देश से समझा जासकता है, जो कि १-२-४ चित्रो मे अङ्कित है।

चारो पुष्पपत्र इसमे चित्र न ४ मे स्पष्ट दिखाये गये हैं। जव पुष्प पूर्ण विकसित होजाता है तो यह चित्र न १ की तरह दिखायी पडता है। पुकेश्वर व स्त्री केशर स्पष्ट दिखाई पडते है। पुकेशर छोटे होते हैं, योनि छत्र वडा और गर्भाशय परिपुष्ट होता है। योनि सूत्र (Pestile) लम्वा,सूत्राकार और वडा होता है, जैसा चित्र न ४ मे दिखाया गया है। इसके ऊपर के भाग को ओ अक्षर से चिह्नित किया गया है। परिपार्श्विक भागो को डी. व वी अक्षरो से चिह्नित करके व्यक्त किया गया है।

फल—फलो मे सवसे छोटा फल चित्र न ७-९-१० पर दिखाया गया है जो इसकी नैसर्गिकता को व्यक्त करता है।

परिपुष्ट फल न ११ की तरह आकार तथा लम्वाई चौडाई व मोटाई लिए होता है। न १२ मे अपक्व फल को छेदन करके दर्शाया गया है, जिसमे वीच वीच मे कटे कच्चे वीज दिखायी पडते है। अपक्व वीजो की आकृति चित्र १३ मे प्रदर्शित की गयी है। इस प्रकार इसके विभिन्न चित्रो द्वारा आकार व प्राकृतिक स्वरूप को



रुदन्ती
CAPPARIS MOONII Wt

दिखाने की चेष्टा डा मेहदी हसन के ही शब्दो मे की गयी है। (सचित्र आयुर्वेद से साभार)

इसकी झाडी का पूरा चित्र भी प्राकृतिक रूप मे पहिचान निमित्त दिया जारहा है जिससे पाठक लाभ उठावेंगे।

सग्रह काल—अप्रैल मास मे इसके फल एकत्र किये जाते हैं।

प्रयोज्याङ्ग—फल।

मात्रा—फल चूर्ण ६ रत्ती से ४८ रत्ती तक। अनुपान—जल।

उत्पत्ति स्थान—

इसकी झाडिया पश्चिमी घाट, कोकण और दक्षिणी कनार, केरल और लङ्का के घने जगलो मे जो समुद्र धरातल से दो हजार से ढाई हजार फुट की ऊचाई तक होते हैं स्वत. उत्पन्न होती है। यह मैसूर मे शरावती नदी के



किनारो के घने जङ्गलो मे, जिला कारवाड़ और मगलोर के घाटो मे वहुत अधिकता से प्राप्त होती है। यह दक्षिण भारत मे मिरसी, कुमठा, मिलासा और खण्डाला आदि के चारो ओर के जङ्गलो मे वहुत पायी जाती है।

नाम-

हि —रुदन्ती फल, लुतिकाय। कोकण—छोटी काई, छूटी काई, मरजादु धट (Marjadudhaut)। कारवाड-लुतिकाय। कन्नड–तुलीकाय, तुतीकाय, लूथीकाई (Luthi kai) ले —Capparis moonii (कैपरस मुन्नाई)।

नोट—अभी इसके वास्तविक नाम का निरुक्ति सहित निरूपण होना आवश्यक है जो शेष है।

रासायनिक संगठन-

इसके सक्रिय तत्व के पृथक करने का कुछ प्रयत्न किया गया है। परन्तु कुछ अधिक सफलता प्राप्त नही हुई। एलकोहल और सलफ्युरिक ईथर (Sulphuric ether) के मिश्रण तरल समुदाय मे इसके फलो के पृथकीकरण करने से एक गाढा लेसदार ओर हरित रङ्ग का तैल प्राप्त किया गया है। परन्तु इससे अधिक अभी तक कोई रासायनिक प्रथकीकरण नही किया जा सका।

औषधि प्रयोगार्थ प्राय सावुत फल अर्थात छिलका तथा गूदा सहित प्रयोग किये जाते है परन्तु तो भी कई इनके केवल छिलके के प्रयुक्त करने को श्रेष्ठता देते है। हम तो सदा समुच्चय फल को ही प्रयोग मे लाते है।

अनुभव से मालूम हुआ है कि परिपक्व फलो (मोटे फलो) की अपेक्षा कच्चे फल (छोटे फल) चिकित्सार्थ अधिक गुणदायक प्रमाणिक होते है। छोटे फलो को इसी तरह कूट छानकर वनाया हुआ चूर्ण उपयोग मे लाना चाहिये।

श्री रतिलाल हर किशनदास गोरडिया वम्वई लिखते है—कि मेरे अनुभव मे रुदन्ती फल (Capparis moonii) के छोटे फलो मे अधिक गुण होता है। वडे फलो मे विशेष गुण नही। जिन फलो का व्यास २ से ४ इच होता है उनका थोडा सा गूदा निकाल कर शेष गूदा सहित फल का उपयोग करना उचित है। जो फल आकार मे बड़े होते है उनकी केवल छाल को ही उपयोग मे लाना चाहिये। —(आयुर्वेद जगत)

मात्रा–चार ग्रेन (दो रत्ती) से वारह ग्रेन (छ रत्ती) तक है, दिन मे ऐसी चार मात्राये दी जाती है।

गुण-धर्म और प्रयोग-

फोडे, फुन्सियो, घावो, चोट, कील, मुहासे और ग्रन्थियो के निवारणार्थ यह चिरकाल से प्रयुक्त होती है। कुष्ठनाशक भी है। अब क्षय मे अधिक लाभदायक प्रमाणित होने के कारण से इसे विशेष प्रसिद्धि प्राप्त हो गई।

यह क्षय के कीटाणुओ (बैसिलस ट्यूवरक्युलोसिस) के लिये घातक है। यह उनकी क्रिया को कम करती है और उनकी वृद्धि मे वाधा डालती है। रक्त विषाक्तता (Toxaemia टाक्सीमिया) को कम करती है। इसके प्रयोग से ज्वर कम हो जाता है। कफजन्य कष्ट की निवृत्ति हो जाती है। खासी दूर हो जाती है। क्षुधा चमक उठती है। वजन वढ जाता है। विदित रहे कि क्षय के रोगियो के अतिरिक्त इससे न तो अन्य रोगियो के शरीर भार मे वृद्धि होती है और न क्षुधा वढती है। फुफ्फुसीय व्रण भर जाते है और इनका चिह्न तक भी शेष नही रहता। रोगी की साधारण शारीरिक अवस्था वहुत सुधर जाती है। वह अपने भीतर नवीनता का अनुभव करता है। उसे नीद खूब आती है।

बिशेष प्रयोग—

श्री डा० जी कृष्णमूर्ति जो डा०वाला भाई नानावती हास्पीटल वायल पारले वम्वई मे देशी औषधियो के क्लीनीकल रिसर्च सेन्टर के प्रधान है और जिनको चौथाई शताब्दी से भी अधिक काल से फुफ्फुसीय क्षय की चिकित्सा करने मे विशेष रुचि है उन्होने २८ सितम्वर १९५७ को नानावती अस्पताल वम्वई मे चिकित्सा सभा मे ट्रीटमेट आफ पलमोनरी टच्यूवर क्युलोसिस विद रुदन्ती एण्ड इण्डिजएनस इण्डियन ड्रग (Treatment of pulmonary tuberculosis with Rudanti & Indigenous Indian drug) अर्थात् फुफ्फुसीय क्षय का रुदन्ती तथा स्वदेशी भारतीय औषधियो द्वारा चिकित्सा नाम का एक

लेख पढा था जो कि मार्च १९५८ के करेन्ट मेडीकल प्रेक्टिस (Current Medical Practice) मे प्रकाशित हो चुका है। इसमे लिखा है कि जुलाई १९५३ मे एक दो वर्ष का बालक मेरे पास लाया गया। वह टाक्सीमिया (रक्त विषाक्तता) और असाधारण क्षीण परिस्थिति मे था। इसकी परीक्षा करने पर इसकी मुखाकृति फुफ्फुसीय क्षय की पाई गई और ग्रीवा के दोनो ओर की लसीका ग्रन्थिया सूजी हुई थी। ग्रन्थियो का ठोस पन गठीला था और इनमे पूय पड रहा था। कक्षा का तापमान १०१ दर्जा फारेन्हाइट था। जबकि बालक तीन माह का ही था। स्ट्रेप्टोमाइसीन (Streptomycin) आई एन एस (I N S) (अर्थात् आई जी नैक्स) और पी ए. एस. (P A S) (अर्थात् पास) की आवश्यकतानुसार मात्रा से इसकी चिकित्सा पहले की जा चुकी थी परन्तु उसकी दशा मे कोई समुचित सुधार न हुआ था प्रत्युत रोगी की दशा बराबर विगडती जा रही थी।

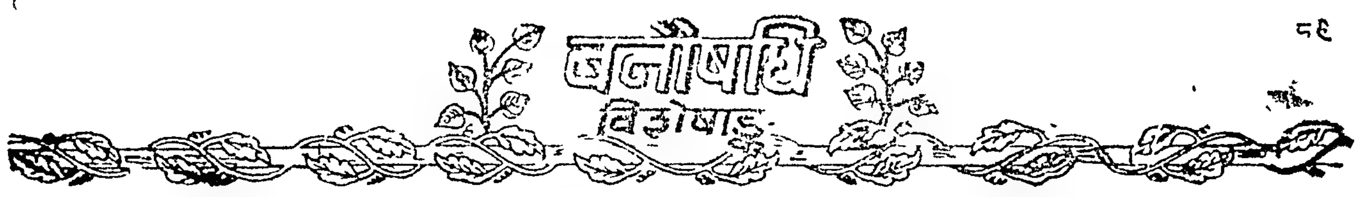
यह प्रथम अवसर था जब मैंने रुदन्ती फल का चूर्ण प्रयोग किया जो मुझे एक जानकार ने प्रदान किया था और पूय पड रही विकृत रचना के लिये प्रभावकारी स्वीकार किया जाता था। इस रोगी को चूर्ण इस आशा मे दिया गया था कि केवल अमुख्य छूत दूर हो जायगी। एक हफ्ता के पश्चात् पूय पड रही विकृत रचना आरोग्य होनी प्रारम्भ हो गई थी और पूय का स्रवित होना समाप्त हो गया था। रोगी बहुत अच्छी अवस्था मे था और उसकी क्षुधा बढ गई थी। मैंने और छ हफ्ता के लिये चिकित्सा जारी रखी। इसकी ग्रन्थियो के आकार मे अनुभव योग्य न्यूनता हो गई थी। लगभग तीन माह मे ग्रन्थियो का आकार बहुत न्यून हो गया था और एक माह की चिकित्सा से कोई भी लसीका ग्रन्थि बढी हुई न थी और बालक का भार पांच पौंड बढ गया था।

इन निरीक्षणो ने मुझे यह सोचने की प्रेरणा दी कि रुदन्ती जो कि स्ट्रेप्टोकोकाई (Streptococci) अर्थात् (बिन्दुकाकार पंक्ति बद्ध कीटाणु) और स्टेफिलो—कोकाई (Strephylococci) अर्थात् (बिन्दुका कार समूह रूप कीटाणु) की छूत से होने वाले रोगो के लिये प्रभावकारी विचार की जाती है।

इसमे कुछ क्षयघ्न क्रियाशील शक्ति भी पाई जाती है। मैंने तदनन्तर ३२ वर्ष के एक रोगी के ग टी की छाटा जो एक क्षय के आतुरालय से मुक्त किया जा चुका था। इसके दाहिनी फुफ्फुस के ऊपर के भाग मे दो क्षयज कोटर (Cavaties) कैविटीज अर्थात् रिक्त स्थान या गारें थे। बाया फुफ्फुस बिल्कुल स्वस्थ था। रोगी को रुदन्ती का चूर्ण प्रतिदिन १२ ग्रेन (६ रत्ती) की मात्रा मे ४ समान मात्राओ मे विभक्त करके दिया गया था चूकि मैं इस औषधि की प्रयोग योग्य मात्रा और इसकी विषैली प्रतिक्रिया के सम्बन्ध मे अधिक अनुभव और न रखता था, इसलिये मैंने रोगी की देखभाल बहुत सावधानी से की। प्रत्येक हफ्ता इसकी छाती की स्क्रीन (Screen) हो जाती थी तीसरे हफ्ते मे रोगी की साधारण अवस्था मे सुधार दिखाई दिया और पाचवें हफ्ता मे एक्सरे से मालूम हुआ कि इन दो कोटरो मे से एक अब तक भर चुका था। इस रोगी के परिणाम ने मुझे रुदन्ती के सम्बन्ध मे अपने अनुसधान को जारी रखने पर विवश कर दिया और मैंने फुफ्फुसीय क्षय के कुछ और अधिक रोगियो को इसके द्वारा चिकित्सा करने के निमित्त चुना। वर्तमान वर्णन बहुत से रोगियो पर रुदन्ती द्वारा की गई क्लीनीकल परीक्षाओ का परिणाम है।

चिकित्सा विधि—

रुदन्ती द्वारा चिकित्सा करने के लिये प्रधानतया रोगी डा० बाला भाई नानावती हास्पीटल से चुने गये थे। सब रोगियो को अस्पताल से बाहर रखकर उनकी चिकित्सा की गई थी और उसमे से किसी एक को भी अस्पताल मे प्रवेश करने की आवश्यकता नही समझी गई थी। इनमे से कुछ रोगियो को पन्द्रह से तीस दिन के अवसर के लिये शय्यापर लेटे रहने की सिफारिश की गई थी और बाद मे इनको लघु कार्य करने की आज्ञा देदी गई थी। इस अनुसधान की प्रारम्भिक अवस्था मे थूक का परीक्षण, ई एस आर (E S R अर्थात् Erythrocyte Sedimentation Rate) नही किये गये थे परन्तु बाद मे इन अनुसधानो के ज्ञात प्रमाण रखे गये थे'।



वर्णित रोगी तीन श्रेणियो मे विभक्त करने योग्य हे—

(१) एक वह जिनकी चिकित्सा पूर्व मे एण्टीवायोटिक (Antibiotic ओर कीमोथेराप्यूटिक Chemotherapeutic) औपधियो (जीवाणुओ का नाश करने वाली रासायनिक ओषधिया) यथा स्ट्रेप्टोमाइसिन, आई. एन एच और पी ए एस के द्वारा सकोच पूर्वक की जा चुकी थी। मैने विशेष करके वह रोगी चुने जो २०० ग्राम से अधिक स्ट्रेप्टोमाइसीन ले चुके थे।

(२) रोगी जिनमे क्षयज कोटर थे या जिनका विकृति स्थान विस्तृत रूप मे रेशेदार पनीरी अवस्था (Feibrocaseous) फिवरोकेजिअस मे था।

(३) जीर्ण रोगी जो एक वर्ष से अधिक काल से वीमार थे। चूकि कुछ रोगियो मे कफ का निकास न होता था इसलिये कफ की परीक्षा सब रोगियो मे क्रियात्मक रूप मे नही लाई जा सकी। सुधार की निर्धारिता भार के वढने, भूख की वृद्धि और एक्सरे पर आश्रित थी।

इस अनुसन्धान के आरम्भ मे रुदन्ती की दो टिकिया (हर एक छ ग्रेन चूर्ण निर्माणित) दिन मे दो वार दी जाती थी परन्तु अधिक अनुभव करने पर मैने प्रतिदिन ६६ ग्रेन की तीन समान मात्राये बहुत अच्छी प्रभावकारी पाई तो भी बाद मे मैंने प्रतिदिन ४८ ग्रेन की चार समान मात्राये (२–२ टिकियो की ४ मात्राये) वहुत अधिक प्रभावकारी पाई थी। यह वर्णन कर देना उचित है कि कुछ रोगी जो प्रतिदिन ६६ ग्रेन रुदन्ती चूर्ण चार दिन लेते रहे उन्होने किसी कष्ट को प्रकट नही किया।

शय्या पर विश्राम करने की केवल तव अनुमति दी जाती थी जव तीव्र ज्वर और टाक्सीमिया (रक्त विषाक्तता) होता था। तो भी यह विश्राम सम्पूर्ण नही होता था क्योकि रोगियो को अपने घरो मे प्रतिदिन थोडा हिलने की आज्ञा थी। ज्यादा प्रोटीन वाला आहार तजवीज किया जाता था परन्तु बहुत से रोगी अत्यन्त दरिद्र थे जिससे कि वह इस तजबीज का दृढता से अनुकरण नही कर सकते थे।

जहा तक सम्भव था रुदन्ती के अतिरिक्त कोई अन्य औषधि नही दी गई थी। कुछ रोगियो को अत्यन्त गम्भीर रक्त न्यूनता की चिकित्सा के निमित्त रुदन्ती एक मौखिक लोह योग के सहित दी गई थी। अब तक कुल ९७ रोगियो की चिकित्सा रुदन्ती द्वारा की जा चुकी है। ५५ नर ओर ४२ नारिया। रोगियो की आयु समुदाय निम्न प्रकार थी—

बीस वर्ष से कम के ११
वीस वर्ष ओर तीस वर्ष के मध्य के ५२
तीस और चालीस वर्ष के मध्य के २५
चालीस वर्ष से अधिक के ?

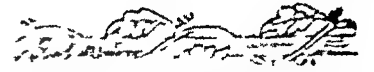
इस समुदाय मे सवसे कम आयु का रोगी ९ वर्ष का था ओर सबसे वडी आयु का रोगी ६५ वर्ष का था। रोगी विभिन्न व्यवसायो के अनुयायी थे परन्तु अधिकतर समाज की वहुत दरिद्र श्रेणी मे से थे (उच्च श्रेणी के ७, मध्य श्रेणी २३, कनिष्ठ श्रेणी के ६७)।

९७ रोगियो मे से ८१ रोगियो का थैराप्यूटिक या एन्टीवायोटिक ओपधियो यथा स्स्ट्रेप्टोमाइसिन, आई एन एच ओर पी ए एस के द्वारा पहिले कोई चिकित्सा नही की गई थी। १६ रोगियो की चिकित्सा पहिले की जा चुकी थी। ७ रोगी २०० ग्राम से अधिक स्ट्रेप्टोमाइसीन ओर पर्याप्त मात्रा मे आई एन एच और पी ए एस. प्रयोग कर चुके थे। एक रोगी थौरेकोप्लास्टी (Thoracplasty) अर्थात् सीना का प्लास्टिक आपरेशन करा चुका था और दो रोगी न्यूमोपैरीटोनियम् (Pneumoperitonuem) अर्थात् पेट मे हवा भरा चुके थे।

मेरे इस क्रम की ओसत अवधि चार मास थी। चिकित्सा की कम से कम अवधि एक मास थी ओर अधिक से अधिक चिकित्सा अवधि बारह मास थी।

परिणाम – जैसा कि ऊपर वर्णन किया जा चुका है परिणाम का निर्णय वजन के वढने, क्षुधा मे सुधार और, एक्सरे मे सुधार होने से किया जाता था। सुधार की श्रेणिया ठहराई गई थी यथा 'बहुत अच्छी 'मध्यम अच्छी 'अल्प' और 'निष्प्रभाव'।

वहुत अच्छी ३७। मध्यम अच्छी ४१। अल्प १३। निष्प्रभाव ७। (इनमे से दो की मत्यु हो गई)।



निरीक्षण—इन रोगियो की अवस्था के अध्ययन के बाद प्राप्त किये निरीक्षण निम्न प्रकार है—

(१) प्राय दो सप्ताहो के अन्दर ही अन्दर क्षुधा मे वृद्धि हो गई थी। जिसका परिणाम यह था कि रोगी अधिक आहार के लिये कहते थे। कई रोगी तो अति अधिक खाने वाले हो गये थे परन्तु तो भी अजीर्णता से पीडित नही होने पाये थे।

(२) यदि ताप बढा हुआ होता था तो दो सप्ताह के अन्दर अन्दर नार्मल (प्राकृतिक) हो जाता था।

(३) वजन मे निश्चित रूप से बढोतरी होती थी। औसतन अधिक से अधिक चौदह से पन्द्रह पौंड।

डा जी कृष्णमूर्ति ने अपने ६७ रोगियो मे से जिन १० रोगियो के विषय मे चित्र सहित प्रकाश डाला है, इसके अध्ययन से विदित होता है कि इसके प्रयोग से विशेष कर भार बढ जाता है चुनाचे दूसरे रोगी का भार चार सप्ताह मे ७१ पौड से ९४ पौड होगया था अर्थात् २३ पौड बढ गया था। तीसरे रोगी का भार चार मास मे ११५ पौड से १५० पौड होगया था अर्थात् ३५ पौड बढ गया था। इसके अतिरिक्त स्वास्थ्य प्राप्ति के चार वर्ष बाद जब इसका एक्सरे लिया गया जबकि इसने रुदन्ती का प्रयोग करना छोड दिया था तो भी इसका विकृत फुफ्फुस क्षय के प्रभाव से बिल्कुल वचित था। पाचवा रोगी २४ वर्ष का एक लडका था जिसका दो मास मे बारह पौड भार घट गया था। रुदन्ती के प्रयोग से दो सप्ताह मे ही इसका ज्वर जाता रहा तेजी से इसकी भूख बढ गई और इसका सामान्य शारीरिक स्वास्थ्य बहुत शीघ्र अच्छा होगया, साढ़े चार मास मे यह बिल्कुल ठीक होगया और इसका वजन ११० पौड से १२३ पौड होगया था यानी १३ पौंड वजन बढ गया था। छठे रोगी का भार ८६पौड से ९६ पौंड होगया अर्थात् १० पौड बढ गया था। सातवे रोगी का वजन ८२पौड से ११० पौड होगया था यानी २८पौड बढ गया था और दशवे रोगी का वजन ९८ पौंड से ११८ पौड होगया था। अर्थात् २० पौडकी वृद्धि होगई थी।

(४) द्रव्य के स्रवित होने की क्रिया बहुत शीघ्र नियन्त्रण मे आजाती जान पडती थी, साथ ही टाक्सीमिया मे भी सुधार हो जाता था। इसकी प्रामाणिकता रोगी की सामान्य अवस्था की उन्नति और एक्सरे द्वारा प्राप्त जानकारी से की गई थी।

(५) स्रवित हुआ द्रव्य दो या तीन मास मे सोख हो जाता मालूम पडता है जैसा कि रोगियो के विषय मे चित्र सहित प्रकाशित जानकारी से जान पडता है।

(६) यह औषधि कोटरो के तनाव को बन्द करने के लिये प्रभावकारी मालूम हो चुकी है। यह विलक्षण अवस्था सम्भवत दो स्थितियों मे होती है। प्रथम स्थिति मे श्वास की नलियो मे ट्यूबर क्युलोसिस ग्रेन्युलेशन टिशू (Tuber culosis granulation Tissue) अर्थात् क्षयज व्रणो मे दानेदार मास बनाने वाला द्रव्य) की कमी हो जाती है जिसका परिणाम होता है कि कोटर मे वायु के अन्दर और बाहर जाने का मार्ग खुल जाता है। कोटर मे वायु का तनाव वायु मडल के दवाव तक कम हो जाता है। अत कोटर की जीविका और फैलाव जो कि बिल्कुल दवाव मे विभिन्नता होने के कारण थे समाप्त हो जाते हे।

दूसरी स्थिति मे श्वास की नलियो और विकृत श्वास की नलियो के चारो ओर रेशे उत्पन्न हो जाते है। जिसका परिणाम यह होता है कि श्वास की नलियां पूर्णतया और दृढता से बन्द होजाती है। इस स्थिति मे कोटर के भीतर की वायु का पूर्णतया सोख हो जाता है और इसका क्षय के होने को प्रेरणा देने वाले आधारभूत हेतु के साथ सम्बन्ध हो जाता है जिसके परिणामस्वरूप कोटर बन्द हो जाता है।

दोनो स्थितियो मे इस औषधि का स्पष्ट रूप से क्षयघ्न प्रभाव ही इन कोटरो को बन्द करने का जिम्मेदार होता है। जो कि अब तक सपूर्णतया (सर्जरी) शल्य क्रिया के अधिकार सीमा मे आते थे। एक बार कोटर का तनाव बन जाता था तो अब तक कोई ऐसी औषधि मालूम न थी कि जो इसे बन्द करने का प्रभाव रखती हो, इसका कारण यह है कि अब तक जो औषधिया प्रयोग की जाती हैं वह क्षयघ्न होने के सम्बन्ध मे मन्द गति की है। इसलिए वह इस प्रकार के क्षयज कोटरो के तनाव के बन्द होने की

यह विलक्षण अवस्था उन रोगियों में अधिक स्पष्ट रूप से थी जिन्हे कि स्ट्रेप्टोमाईसीन और अन्य क्षयघ्न औषधियो की वृहत मात्रा के उपरात भी अबतक फुफ्फुस विकृत थे और कोटर थे।

इन निरीक्षणो से मैने यह परिणाम निकाला है कि यह औषधि या तो बैसीलाई (Baci lli) शलाकाकार कीटाणु के छूत फैलने की क्रिया शक्ति) फैलाने की क्रिया शक्ति को निर्बल कर देती है और इस प्रकार टाक्सिन्स (Toxines) अर्थात् एक विशेष प्रकार के विषैले मवाद जो कीटाणुओ के शरीर मे उत्पन्न होकर किसी विशेष रोग का कारण बन जाते हैं, कम से कम होजाते हैं या वह डीटाक्सिकेशन (Detoxication—टाक्सिन्स का उत्पन्न न होना) मे सहायता करती है या दोनो कार्य करती है।

(करेंट मेडीकल प्रेक्टिस)।

एक अमरीकी डाक्टर की सम्मति—

एक प्रसिद्ध अमरीकी डाक्टर ने भारत पर्यटन करते हुये रुदन्ती के नमूने प्राप्त किये। इस औषधि के विषय में काच की नलिकाओ मे विस्तृत परीक्षणो के करने के उपरांत उसने प्रकट किया कि यह औषधि परम कीटाणुघ्न है। इन्होने हाल ही मे डा० कृष्णमूर्ति को लिखा है कि उन्होने इसे क्षय को आरोग्य प्रदान करने का एक निश्चित रूप का आविष्कार पाया है। (टाइम्स आफ इण्डिया २७ जुलाई १९५८)

आधुनिक रुदन्ती या रुदन्तीफल के लाभदायक गुणो से प्रेरित होकर पोद्दार आयुर्वेदिक कालेज और अस्पताल बम्बई के आयुर्वेदिक क्लिनीकल रिसर्च बोर्ड मे भी इसके सम्बन्ध में बिलकुल हाल ही मे परीक्षणो प्रारम्भ किये गये है और क्षय के निरोध करने मे इससे निश्चिततापूर्वक सफलता प्राप्त होने की बडी प्रबल आशा लगी हुई है। दश वर्ष का समय हो गया है जो परिणाम सामने आये हो उनको आयुर्वेद जगत के समक्ष रखना चाहिये। प्रयोग सम्बन्धी जो विवरण दिया गया है उससे ज्ञात होता है कि रुदन्ती ज्वर को कम कर देती है और क्षुधा की वृद्धि होने लगती है। रोगी का वजन बढने लगता है, जो अब तक की किसी दवा से नही बढता। पूय आना बन्द होकर लाभ होता है।

रुदन्ती (लूथी-काई) या मरजादु धाट (Marjadudh-aut) क्षय रोग की महौषधि है इसके सेवन से फेफडो के भीतर के व्रण भर जाते है और एक्सरे लेने पर उन वणो के चिह्न भी नही दिखायी देते।

(क० विश्वनाथ जी द्विवेदी, सचित्र आयुर्वेद से साभार)

जबकि भारतवर्ष मे प्रतिवर्ष सात लाख लोग क्षय से मृत्यु का ग्रास बन जाते है और लगभग तीस लाख लोग क्षय से ग्रसित रहते है तो इस पर काबू पाने के लिये वास्तव मे ही आधुनिक रुदन्ती या रुदन्तीफल चूर्ण का प्रयोग प्रकृति का एक अनमोल और आश्चर्यजनक उपहार है। इससे हमे पूरी तरह लाभ उठाना चाहिये।

(कविराज श्री जगन्नाथ जी वैद्य वाचस्पति, चन्दौसी (मुरादाबाद) का धन्वन्तरि पत्र से सकलित)

रुदन्ती पर स्वानुभव—

खानपुर के साहुकार विश्वनाथ आधा मुधोकपुर की धर्मपत्नी नाम—गगाबाई लगातार दो वर्षों से टी० बी० (यक्ष्मा) से बीमार थी जिसकी औषधी ऐलोपैथिक डाक्टरो द्वारा प्रारम्भ से ही हो रही थी परन्तु कोई लाभ दृष्टिगोचर नही हो रहा था, रोगिणी निरन्तर कमजोर होती हुई मृत्यु की ओर बढ रही थी। मै एक बार उस गाव गया और भाग्यवश उन्हीं के यहां ठहरा। यद्यपि रोगिणी के पति का विश्वास आयुर्वेद पर उनके बराबर नहीं था तथापि मेरे पहुचने पर रोगिणी मुझे दिखाई गयी। जाच करने पर पता लगा कि रोगणी को सूखी खासी, छाती मे दर्द, ज्वर, रक्ताल्पता, मासिक रजस्राव बन्द और कमजोरी है, शरीर अस्थि पजर मात्र था।

मैंने निम्न प्रकार औषध योजना की—

सर्व प्रथम महारुदन्ती फल और बासा पत्र का चूर्ण सम प्रमाण मे मिलाकर ३—३ माश की ३ मात्रा प्रतिदिन गाय के गरम दूध के साथ एक माह तक दी। इससे रोगिणी के श्वास और खासी में काफी लाभ हुआ जिससे उन सबका आयुर्वेद मे विश्वास बढा। इसके बाद औषधि मे निम्नाङ्कित परिवर्तन किया गया अर्थात् उपरोक्त चूर्ण मे स्वर्ण मालती वसत १—१ मात्रा मिला दी गई। कुछ दिनो

के बाद रोगी मे शक्ति सचार हुआ तव मैंने महारुदन्ती चूर्ण, अश्वगधा चूर्ण, स्वर्ण मालती वसन्त, अभ्रक भस्म शतपुटी, प्रवाल भस्म इसका योग्य प्रमाण मे मिश्रण बनाकर प्रतिदिन आधा माशा की मात्रा मे दूध के साथ लम्वे समय तक देने की व्यवस्था की। भोजनोपरान्त द्राक्षासव प्रारम्भ से चलता रहा।

३—४ माह के वाद ज्वर, खासी आना वन्द हो गया शरीर मे रक्त वढने लगा जिसमे नियमित मासिक स्राव शुरू हो गया रोगिणी थोडा वहुत गृह कार्य भी करने लगी है। औषधि अभी चल रही है। स्क्रिनींग कराने पर थोडी शिकायत वाकी हे। वैसे रोगिणी अव काफी स्वस्थ हे।

परतवाडा निवासी कुसुमावती नामक रोगिणी के दाये स्तन मे गाठी पैदा हुआ करती। इस कारण रोगिणी के स्तन पर वहुत सूजन आती थी और दर्द होना ज्वर—वढना ये लक्षण दीख पडते थे उसने कुछ दवाई लिया तो ठीक होना और थोडे ही दिन मे पहली जैसी ही हालत होना इस कारण वहुत परेशान थी। मैंने फौरन धीरज हरिद्वार से रुदन्तीफल मगवाया। इस रुदन्ती फल का चूर्ण १॥ माशा और वासा पत्र चूर्ण १॥ माशा दूध के साथ दिन मे ३मात्रा कुछ दिन तक दिया उस रोगिणी के स्तन मे अभी तक कुछ शिकायत नही।

मेरे स्वानुभव से रुदन्तीफल चूर्ण के साथ वासापत्र और सुवर्ण मालती वसत का देना ज्यादा हितकारक है।

—द० ए० डायकर पेन्शनपुरा परतवाडा(अमरावती)

नोट—यह धन्वन्तरि भाग ४२ अक ७ पृष्ठ ३८ पर प्रकशित हो चुका हे। (सम्पादक)

रुद्रवन्ती (Astragalus Candolleanus)

यह शिम्बी कुल (Leguminosae) का पौधा है, जो कि प्राय ७ से ९ इंच लम्बा तथा जमीन पर कुछ परिसृत सा रहता है। मूल डेढ फुट लम्बी तथा एक इंच मोटी होती है। मुंह मे चबाने से यह लुआब सा छोडता है। पत्र चने के पत्र सदृश घने एव सयुक्त (Compound) अण्डाकार (Ovale shape) होते है और ये पत्र डण्ठल से रहित तने से सटे रहते हैं। पत्रो की वाह्य तथा आभ्यन्तर सतह रोमश एव चिकनी होती है। पुष्प पीले रङ्ग के $\frac{1}{4}$ इंच लम्बे होते है और इसकी शिम्बी (Pods) $\frac{1}{3}$ इंच लम्बी, रोमश एव मसृण होती है। जिस स्थान पर यह वनस्पति पायी जाती है वह स्थान नमी युक्त होता है तथा ऐसा प्रतीत होता है कि मानो इसके नीचे ओस कण सदा विद्यमान रहते है। पुष्पकाल—जून-जुलाई, फलकाल—जौलाई अगस्त।

वक्तव्य—

जो वर्णन शास्त्रो मे है उसके आधार पर प्रचलित रुदन्ती (Cressa cretica) रुद्रवन्ती नही हो सकती है। जिसका खण्डन श्री जगन्नाथ जी ने भी किया है तथा मै भी इसी मूलिका पर अपना गवेषणात्मक सचित्र लेख पाठक वर्ग के समक्ष प्रस्तुत कर रहा हूँ जो इस प्रकार है—

जैसा कि चरक ने सूत्र स्थान अध्याय १ मे स्पष्ट दिया है कि औषधियो के नाम, रूप, परिचय एव गुणो का ज्ञान जगलो मे रहने वाले एव भेड बकरी चराने वालो से जानना चाहिये सो ठीक यही अवसर मुझे मिला। मै दिनाक १२—७—६४ को वनौषधि सर्वेक्षण के लिये गगोत्री जा रहा था तो मुझे गगोत्री के पास एक दीवान जी मिले उन्होने मुझे कहा कि यदि आप लोग वनौषधियो के लिये गगोत्री जा रहे है तो मेरे लिये रुद्रवन्ती अवश्य ले आये। यह सुनकर मुझे कुछ उत्कण्ठा हुई और मैने दीवान जी से पूछा कि आप इस वनौषधि का क्या करेंगे, तो उन्होने कहा कि इसका क्वाथ छाती मे होने वाली वेदना, खासी एव रक्त विकार के लिये अत्युत्तम है। यह जानकार मुझे बहुत प्रसन्नता हुई और मैंने गगोत्री के लिये प्रस्थान किया। दिनाक १३—७—६४ को जब मै सुक्की चट्टी पर पहुँचा तो एक बगाली साधू महाशय कुछ वनौषधि सग्रह करके ला रहे थे तो उस सग्रह मे एक मूलिका रुद्रवती भी थी। मैंने उनसे पूछा कि महाराज यह क्या है तो उनका उत्तर था कि खासी आदि के लिये यह अमूल्य औषधि है।

स्वामी जी का उत्तर भी मुझे सन्तोषजनक ही मिला इस तरह से जानकारी करते हुये मैं गगोत्री पहुच गया। वहा के तीर्थ पुरोहित भी इस मूलिका से परिचित है। वे लोग भी अपने ग्राम्य औषधि प्रयोग मे इसे अमूल्य औषधि मानते है।

उपरोक्त वानस्पतिक परिचय के आधार पर यह शास्त्रीय रुद्रवती हो सकती है जिसका वर्णन शास्त्रो मे इस प्रकार मिलता है—

रुद्रवती का क्षुप चने के समान होता है, स्वाद मे कुछ अम्लत्व लिये होता है। शिशिर काल मे इससे ओस विन्दु स्रवित होती रहती है।

> चणपत्र समं पत्रं, क्षुपं चैव तथाम्लकम्।
> शिशिरे जल बिन्दुनाम्, स्रवन्तीति रुदन्तिका ॥
> (राज निघण्टु)

रुद्रवन्ती का क्षुप हिमालय, देवमन्दिर एव पुण्य भूमि मे पाया जाता है।

> गिरि कन्दर दुर्गेषु, निकरेषु तथैव च।
> पुण्य क्षेत्रेषु सर्वेषु, देवतायतनेषु च ॥
> (अभिनव बूटी दर्पण)

गुण धर्म के आधार पर यह रक्तदोषहर, श्वास-कास हर तथा क्षय, कास श्वास नाशक है।

> रुदन्ती कटु तिक्तोष्णा, क्षय कृमि विनाशिनी।
> रक्त पित्त कफ श्वास, मेह हारी रसायनी ॥
> (राज निघण्टु)

उपर्युक्त शास्त्रीय दृष्टान्त इस रुद्रवन्ती पर घटित होता है जो कि हमे प्राप्त हुआ है।

उत्पत्ति स्थान—

उत्तराखण्ड की पवित्र भूमि विशेषत गगोत्री और

केदार नाथ के सूने घास के मैदानो मे उपलब्ध होती है। हिमालय मे उत्पन्न होने वाला यह क्षुप (Herb) जो कि प्राय १० हजार से ११ हजार फीट की ऊचाई पर देखने को मिला है। यह कैलाश पर्वत, मन्दराचल, विन्ध्याचल, नदियो के सगम तथा समुद्र तट, श्री शैल पर्वत एव वर्फ वाले पर्वतो की तलहटियो तथा हिमालय की तराइयो एव पुण्य क्षेत्र वाली पहाडी भूमियो मे यह प्राप्त की जा सकती है।

नाम–

स —रुदन्ती, स्रतोया, सजीवनी, अमृतस्रवा, रोमाञ्चिका, महामासी, चणपत्री, मधुस्रवा (मुधास्रवा)।

हि —रुद्रवन्ती। म —रुदन्ती

ले —Astragalus Candolleanus (एस्ट्रागेलस केन्डोल्लिनस)। प्रयोज्याङ्ग—सर्वाङ्ग।

गुण धर्म और प्रयोग–

गुण धर्म के आधार पर इसमे शास्त्रोक्त वर्णित गुण विद्यमान हैं जो कि होने चाहिये।

रस —कटु–कपाय, गुण–उष्ण, पित्तघ्न, क्षयघ्न, रक्त-पित्त, कफ, श्वास, कास तथा प्रमेह नाशक है।

इसके अतिरिक्त अग्निजनक, वीर्यवर्द्धक, पित्तनाशक और रसायन है।

'रुदन्ती वह्निकृद् वृष्णा, पित्तघ्नी च रसायिनी'
—राजवल्लभ

स्थानीय लोगो द्वारा प्रयोग—

यह रुद्रवन्ती ग्रामवासियो की अमूल्य औषधि है। यहा के लोग इसे काफी लाभदायक औषधि मानते हैं। इन लोगो का कहना है कि रुद्रवन्ती के क्वाथ को कास तथा वक्ष मे होने वाली वेदना मे प्रयोग करने से विशेष लाभ होता है। इसके अतिरिक्त इसका प्रयोग यहा के लोग रक्त विकार और सधि वात मे करते है। औषधि निर्माण क्वाथ विधि से करते है। इस प्रकार स्थानीय लोगो के कथन के आधार पर यह स्पष्ट हो जाता है कि शास्त्रोक्त वर्णित रुद्रवन्ती मे ही इसकी काफी साम्यता मिलती है जो कि क्षय के लिए काफी उपयोगी सिद्ध हो सकती है। प्रयोग विधि का भी जो वर्णन शास्त्रो मे मिलता है वह इस प्रकार है—

रुद्रवन्ती को पत्रो के सहित उखाड कर छाया मे सुखा लेना चाहिये। तथा इसका चूर्ण बनाकर कच्ची तुम्बी मे रख लेना चाहिये। इस चूर्ण का सेवन प्रात और साय काल को घृत मधु को विषम मात्रा मे लेकर सेवन करना चाहिये। औषध सेवन काल मे लवण का परित्याग कर देना चाहिये।

समाधान—

दिनाक १२-८-६४ को जब मै मूलिका की जानकारी के लिये देशरक्षक औषधालय एव योगी फार्मेसी, कनखल मे गया तो वहा रुदन्ती घास के नाम से (क्रेसा क्रेटिका) का पञ्चाङ्ग मुझे मिला तथा रुदन्ती फल से केपरिस मोनी (Capparis moonii) का फल मिला। इस तरह रुदन्ती घास से अन्य पचाङ्ग तथा फल से दूसरी जाति का फल मिलना काफी भ्रमोत्पादक है किन्तु मेरे विचार से रुदन्ती घास भी शास्त्रीय नही हो सकती है। यह जरूर है कि "चणकपत्र सम पत्रम" यह उक्ति जरूर घटित होती है किन्तु इसके अतिरिक्त अन्य कोई भी लक्षण इसमे घटित नही होते है जो कि शास्त्रीय रुदन्ती मे विद्यमान है। शास्त्रीय लक्षण तो Astragalus Candolleanus मे ही मिलते हैं, रुदन्ती घास मे नही। यह सम्भव है कि इसमे भी कास-श्वास नाशक गुण विद्यमान हो किंतु रुदन्ती सज्ञा देना अनुचित सा प्रतीत होता है।

रुदन्ती फल के वर्णन के आधार से यह पता चलता है कि यह भी शास्त्रीय रुद्रवन्ती नही है क्योकि यह उन स्थानों पर नहीं मिलती जहां पर इसकी प्राप्ति के स्थानो का वर्णन मिलता है तथा इसके पत्र चने के पत्रो के समान भी नही होते है। यह एक वृक्षाश्रयी झाडी है जबकि रुद्रवन्ती का क्षुप होता है और रुद्रवन्ती का पचाङ्ग औषधि कार्य के लिये प्रयुक्त होता है ऐसा वर्णन शास्त्रो मे उपलब्ध होता है किन्तु फल की उपादेयता शास्त्रकारो ने नही बताई है।

अत उपर्युक्त तथ्यो से स्पष्ट है कि यह वनस्पति भी शास्त्रीय रुद्रवन्ती नही है। यह सम्भव हो सकता है कि आधुनिक खोजो के आधार पर इसमे क्षयजन्य जीवाणुओ को नष्ट करने वाली शक्ति विद्यमान हो किन्तु रुद्रवन्ती के नाम से इसे पुकारना एक भ्रम है क्योकि इससे सदि-



ग्धता बढती ही है और समाधान हो नही पाता है ।

इन सभी तथ्यो के आधार पर पाठको से अनुरोध है कि इस मूलिका का प्रयोग अपने चिकित्सा क्षेत्र मे अवश्य करें । परीक्षण तथा पहिचान के लिये बनौषधि के नमूने हमारी अनुसधान योजना से मगवा सकते है । इसके रासायनिक परीक्षण प्रयोगशाला मे रासायनिक शास्त्री कर रहे है जो कि अन्त मे क्षय एव रक्त विकार के लिये अमूल्य औषधि घोषित हो सकती है ।

परीक्षण पूर्ण होने पर यथा शीघ्र ही प्रकाशित करेंगे । (उपर्युक्त लेख को प्रकाशित हुए यह पाचवा वर्ष जाता है अत मान्य उनियालजी से प्रार्थना है कि रुदन्ती घास, रुदन्ती फल और रुद्रवन्ती सम्बन्धी जो भी खोज पूर्ण तथ्य ज्ञात हुए हो उन्हे कृपया यथाशीघ्र आयुर्वेद समाज के समक्ष प्रकट कराने का कष्ट करावे, जिससे रुद्रवन्ती सम्बन्धी सही समाधान हो जाय । —सम्पादक)

श्री वैद्य मायाराम जी उनियाल आयुर्वेदाचार्य
ए० एम० बी० एस०

वनस्पति अनुसधान योजना (केन्द्रीय स्वास्थ्य मत्रालय)
गुरुकुल कागडी विश्व विद्यालय, हरिद्वार ।
(धन्वन्तरि से साभार)

रुद्रवन्ती के प्रयोग–

(१) एक दिन पहले निमन्त्रित कर उत्तम शुभ दिन शुक्ल पक्ष मे अथवा उत्तम नक्षत्र वार वाले दिन मे रुद्रवन्ती को मूल सहित लाकर बारीक चूर्ण बनाले । तथा उस चूर्ण को कडवी तूम्बी (और वर्त्तमान मे स्टापर्ड बोतल) मे रखदे । फिर उस चूर्ण मे से आधा से १ तोला तक लेकर घी व शहद मिलाकर, प्रात निरन्तर सेवन करे। यदि क्षय रोग है तो पीपल का चूर्ण १-१ माशे (या रोगी की शक्ति के अनुसार कम) मिला ले । इस प्रकार पथ्य (आहार-विहार) करते हुए ६ महीने तक सेवन करे । गौ दुग्ध व सात्विक भोजन करे । इस प्रयोग से क्षय रोग अवश्य दूर हो जायगा । साथ ही सब क्षय के उपद्रव दूर होकर रोगी स्वस्थ होगा एव उसका वजन भी बढ़ेगा ।

यदि इस प्रयोग को स्वस्थ पुरुष पथ्य सह सेवन करेगा तो अनुत्पन्न रोगो की शान्ति होगी । शरीर सदा स्वस्थ एव निर्जर बलवान बनेगा ।

(२) रुद्रवन्ती का स्वरस १ तोला, शुद्ध पारद १ तोला, सोने के वर्क १।। माशे, शुद्ध गधक ६ माशे, इन सबको उत्तल खरल मे डालकर दिनभर घोटे । इस द्रव्य को शीशी मे भरकर डाट लगा दे । फिर बालुकायन्त्र से तीव्राग्नि दे । दो दिन तक इस प्रकार पकाकर स्वाग शीतल होने पर औषधि निकाल ले । मात्रा १ से २ रत्ती । बिजौरे नीबू के रस अनुपान से १ मास तक सेवन करे । सात्विक आहार विहार सह पथ्य पालन करे । इससे उत्तरोत्तर सब धातुये बढती है । निर्बलता नष्ट होकर मनुष्य निरोग होता है ।

रस क्रिया—

(३) रुद्रवन्ती का स्वरस निकाल कर समभाग शुद्ध पारद के साथ खरल मे मर्दन करे । जब एकजीव होजाये अर्थात् दोनो का कल्क बन जाय तब विशुद्ध ताम्र के पत्रो पर इस कल्क का लेप करके गजपुट मे पकावे । इस प्रकार १०० बार क्रिया करने से सर्वश्रेष्ठ सुन्दर बनता है ।

(४) सोने के वर्क १ भाग, वज्राभ्रक सत्व दोनो को रुद्रवन्ती के रस से उत्तम खरल मे डाल कर के घोटे । ३ दिन के पश्चात् शुद्ध ताम्र चूर्ण (भस्म) १ तोला व शुद्ध पारद १ तोले डालकर हल्के हाथ से १ दिन भर घोटे । फिर लघुपुट मे फूक दे । इस प्रकार १०० बार रुद्रवन्ती के रस से घोटकर पुट देने से रजक बीज द्रव्य तैयार होगा । इसमे से केवल पाव रत्ती द्रव्य को एक तोला ताम्र या नाग मे डालने से कमनीय काति काचन क्रिया होगी ।

(५) शुद्ध पारद १ भाग (भस्म), शीशा शुद्ध (भस्म) १ भाग, स्वर्ण माक्षिक (सत्व भस्म) १ भाग, मैनशिल १ भाग, पक्वगन्धक १ भाग और अग्निस्थायी हरताल १ भाग, इन सबका सूक्ष्म चूर्ण बनाकर गोमूत्र मे १ भावना दे । पुन. रुद्रवन्ती का स्वरस मिला कर खरल में ३ घड़ी तक घोटे । जब उत्तम कल्क बन जाये तो विशुद्ध ताम्र के पत्रो पर लेप करके मूपा मे बन्द् कर क्रमशः मन्द, मध्य, तीव्र अग्नि मे रखकर धोके । स्वाग शीतल होने पर निकाल ले । यह निर्बीज निर्दोष होने पर भी उत्तम काचन होगा ।

वैद्य बद्रीनारायण जी शर्मा, प्रधान वैद्य, कालेडा
(स्वास्थ्य पत्र से साभार)

रुद्राक्ष (Elaeocarpus Gamitrus)

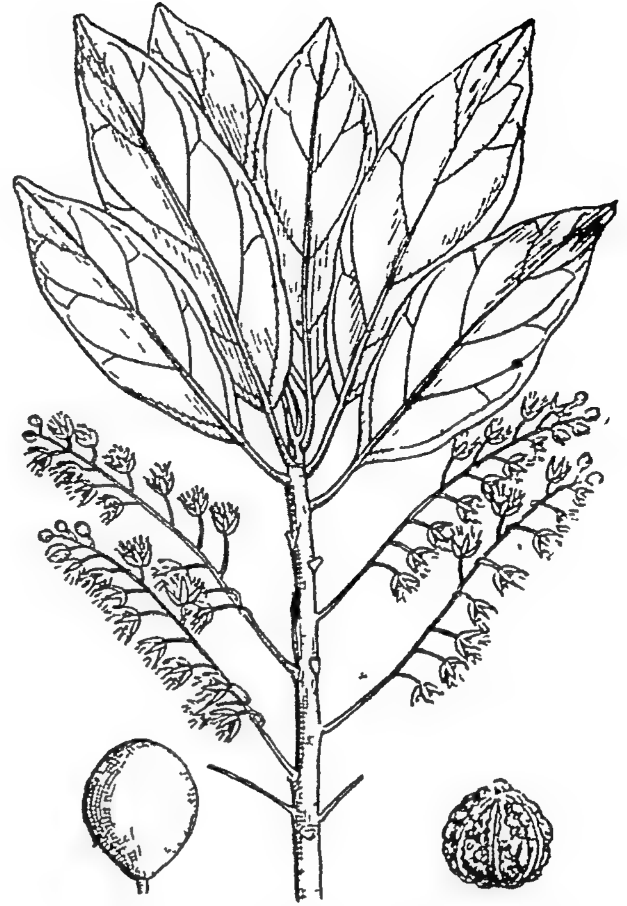
यह वटादि वर्ग और रुद्राक्ष कुल(Elaeocarpaceae) का एक मध्यम कद का वृक्ष विशेष करके वन मे होता है। पत्ते लघु और कुछ गोल होते है। फूल श्वेत, फल नीलाभ गोल या अण्डाकार जिसको रुद्राक्ष कहते है वह बीजहै बीज को साफ करके पौलिश किया जाता है कितनेही समय रग भी किया जाता है। बीज की माला, वगडीओ और अन्य आभूषण बनते है। बीज के ऊपर का गूदा खट्टा होता है और वह अपस्मार मे उपयोगी माना जाता है। विशेष जानकारी के लिये चित्रावलोकन कीजिये।

उत्पत्ति स्थान–

नेपाल, भूतान, विहार, बगाल, आसाम, मध्य प्रदेश, वम्बई प्रदेशो मे और हिमालय की तलहटी मे विशेष रूप से पैदा होती है।

नाम–

स –रुद्राक्ष, शिवाक्ष,रुद्रक। मि, ब, गु, म कर्णा,, तै –रुद्राक्ष। ता –अक्कम। मल का –रुद्राक्ष। आसामी–रुद्रई, लुद्राक, उद्रोक। अ –(Utrasum bead tree) ले. (Elaeocarpus ganitrus Roxb) (इलियोकार्पस गेनीट्रस)।



रुद्राक्ष
ELAEOCARPUS GANTRUS ROXB

गुण-धर्म और प्रभाव-

रुद्राक्ष–अम्ल, उष्ण, वातनाशक, कफ निवारक, शिर की पीडा को दूर करने वाला तथा भूतवाधा और ग्रहवाधा को हरता है। (शा नि)

जिस प्रकार हैजे की मौसम मे तावे के पतरे की टिकडिया शरीर पर धारण करने से हेजा होने का डर नही रहता है और जिस प्रकार प्लेग की मौसम मे पपीते (Strychnea Ignati) की माला धारण करने से प्लेग होने का का भय कम हो जाता है उसी प्रकार चेचक, बोदरी और अछबडा की मौसम मे रुद्राक्ष की माला धारण करने से इन वीमारियो का आक्रमण होने का डर नही रहता है। इसलिये एक ऐसी माला जो ताबे के तार मे पपीते के बीज और रुद्राक्ष से बनाई हुई हो प्रतिदिन गले मे पहनी जाय तो हैजा, शीतला, बोदरी इत्यादि प्राण घातक रोगो के हमले का भय वहुत कम हो जाता है।

योगी लोगो का कथन है कि रुद्राक्ष की माला धारण करने से मनुष्य शरीर का प्राण तत्व अथवा विद्युत शक्ति नियमित होती है और इसलिये इस माला को धारण करने मे कई प्रकार के शारीरिक तथा उन्माद, अपस्मार, भूतवाधा, प्रेतवाधा, ग्रहवाधा, रक्त का दवाव इत्यादि मानसिक रोग भी रुक जाते हैं।

इसके सिवाय इस वनस्पति मे महत्वपूर्ण कफ निस्सारक गुण भी पाया जाता है। इस गुण की वजह से वालको की छाती मे अगर कफ वहुत चिपक गया हो और वह



रुद्राक्ष
ELAEOCARPUS GANITRUS ROXB

किसी औषधि से नही खुलता हो, उसकी वजह से आक्षेप, धनुर्वात इत्यादि के लक्षण पैदा हो गये हो और बालक के जीवन की आशा छोड दी गयी हो तो ऐसे समय मे रुद्राक्ष के दो या तीन दाने लेकर उनको बारीक पीसकर शहद के साथ मिलाकर पाच-पाच मिनट के अन्तर से थोडी-थोड़ी मात्रा मे माता के दूध के साथ देने से वमन के द्वारा सब चिकना कफ निकलकर एक घण्टे भर मे बालक को आराम हो जाता है। (ब च)

चेचक (शीतला)पर–रुद्राक्ष का दाना पानी मे घिस-कर पिलाने से चेचकजनित सब उपद्रव शान्त होते हैं। (धन्वन्तरि बालरोगाक)

रुद्राक्ष के प्रयोग–

एक और बहुत ही अच्छी औषधि रक्तचाप के लिये है। मैने एक अंग्रेजी लेख मे पढा था। यह रुद्राक्ष धारण करना है। शुद्ध रुद्राक्ष प्राय काशी मे मिल जाता है और दाम भी अधिक नही लगता। रुद्राक्ष को ऐसे धारण करना चाहिये कि वह बराबर शरीर से लगा रहे। रुद्राक्ष एक से लेकर बारह मुखी तक होते है। मैने जो रुद्राक्ष धारण किया वह छ मुखी है। उसका नाम कालाग्नि रुद्र है। इससे मुझे तो सदा लाभ हुआ है। प्राय चार वर्ष हुए रक्तचाप फिर नही हुआ। हृदय के विविध रोगो मे भी इस रुद्राक्ष को घिसकर औषधि के रूप मे भी लेते है। मुझे यह रुद्राक्ष तीन आने मे मिला था। अधिक से अधिक चार छ आने मे मिल सकता है। छोटा शुद्ध रुद्राक्ष कम मिलता है। अत बडे से ही काम लेना चाहिए। रुद्राक्ष इन्डोनेशिया (जावा इत्यादि टापू) मे ही होता है और वहा से भारत मे आयात किया जाता है। यदि किसी को और बाते जाननी हो तो वे मुझे लिख सकते है।

पता–भगवतीप्रसाद सिंह, १७ बी, मोतीलालनेहरू रोड, इलाहाबाद(उ प्र)

रुद्राक्ष पर संपादक जी "कल्याण" की सम्मति—

(१) एक मेरे सम्माननीय महानुभाव ने बतलाया था कि असली रुद्राक्ष की माला गले मे सदा पहने रखनी चाहिए जिससे उसका स्पर्श हृदय से होता रहे। इससे बढ़े हुए रक्तचाप का रोग मिट जाता है।

(२) इण्डियन एक्सप्रेस के गतांक मे एक सज्जन लिखते है कि असली रुद्राक्ष के दो चार दाने एक या दो औंस जल मे डुबोकर रखदे और रात भर पडा रहने दे। सवेरे खाली पेट उस पानी को पीले। इससे बढ़े हुए रक्तचाप का रोग मिट जाता है। यह प्रयोग ६० से ९० दिन तक करना चाहिए।

(३) इसके अतिरिक्त रुद्राक्ष के दाने को गो के दूध मे पीसकर प्रात काल खाली पेट उसका सेवन करने से चेचक बहुत जल्दी मिट जाता है। रुद्राक्ष का प्रयोग चेचक को रोकता भी है।

सम्पादक कल्याण
(कल्याण भा ३९ स -से साभार- सकलित)

रुद्राक्ष के सम्बन्ध में--

रक्तचाप वढने और कम होने पर नमक तथा घी विल्कुल छोड देना चाहिए। रुद्राक्ष धारण दोनो प्रकार के रक्तचापो को ठीक करता है। मैने जटामांसी का सेवन नही किया क्योकि उसकी आवश्यकता नही पडी। रक्त-चाप होने पर भोजन बहुत हल्का करना चाहिए और रात्रि मे सोने से पहिले तीन घण्टा पूर्व हल्का भोजन कर लेना चाहिए। रुद्राक्ष वाहु मे यत्र की तरह वाध सकते है अथवा माला ऐसे पहने जो हृदय को स्पर्श करती रहे।

श्री भगवती प्रसाद सिंह, १७वीं मोतीलालनेहरू रोड, इलाहवाद, (उ प्र.)

कल्याण वर्ष ३९ अक ११ से साभार सकलित

रुद्राक्ष नं. २ (Elaeocarpus Tuberculatus)

यह रुद्राक्षकुल (Elaeocarpaceae) का बहुत वडा वृक्ष होता है। यह रुद्राक्ष की एक दूसरी जाति होती है। इसके वृक्ष पश्चिमी प्रायद्वीप और मलाया मे पैदा होते हे।

नाम–

स –रुद्राक्ष। हिं.–रुद्रक। कन्नड–रुद्राक्ष। ता – पगुम्बाल रुद्राक्षम्।

ले —(Elaeocarpus Tuberculatus Roxb) (इलेओकारपस ट्यूवरक्यूलेटस) (Monocera tuberculata) (मोनोसेरा ट्यूवर क्यूलेटा)।

गुण धर्म और प्रयोग–

इसकी छाल का काढा पित्त विकार, रक्तवमन को दूर करने के काम मे लिया जाता है। और इसके फल सधिवात, मोतीज्वर, मृगी रोग को दूर करने के लिए उपयोग मे लिए जाते हे।

(व. च)

रूसा (Streblus ASper Lour)

यह वटादि वर्ग और वटादि (वर) कुल (Urticaceae) का एक छोटी जाति का हमेशा हरा रहने वाला वृक्ष होता है। रूसा (सहोड़ा) के वृक्ष अत्यन्त गठीले झाड़ झकाड से युक्त १० से २० फुट ऊचाई मे होते है। इसकी शाखाये गठीली एव प्राय कर सीधी नही होती हे। छाल ३ इच मोटी मुलायम व कुछ धूसर वर्ण की होती है। लकडी का रग श्वेत होता है और उसमे काटे से होते है। इसका रस दूध के समान होता है। प्रशाखाये सख्त और नरम रुवाली से युक्त होती है।

पत्र —खुरदरे २ से ४ इच चौडे, पत्र दड बहुत छोटा १/१० इच लम्बा होता है। पत्ते एक के पश्चात् एक लगते हैं।

फूल—इसके नर और मादा दो तरह के फूल लगते पुष्प-एक लिङ्ग विशिष्ट, पु पुष्प गोलाकार। पु केसर ४, स्त्री पुष्प एक एक होता है। पुष्प दण्ड आधा इच लम्बा होता है।

फल—इसके फल १ खण्डी छोटे वेर के आकार के और पकने पर पीले रग के होते है। प्रत्येक फल मे एक वीज होता है।

बीज—गोलाकार। फल का गूदा खाने मे मीठा होता है या लगता है। मार्च-अप्रैल मे फूल आते है और मई-जून मे फल लगते है।

उत्पत्ति स्थान–

यह वनस्पति भारत के शुष्क प्रदेशो मे पैदा होती है। जैसे–बगाल, मध्य व दक्षिण भारत, ट्रावन्कोर, ब्रह्मा, अन्डमान द्वीप, हुगली, हावडा, गुजरात मे पचमहाल, उत्कटेश्वर महादेव के आस-पास तथा उक्त जिलो के जगलों मे पाये जाते है। विशेष करके वगाल और मध्य प्रदेश मे बहुतायत से प्राप्त होते हे।

नाम–

स —रूक्षपत्रा, पीतफला, शखोटा, अक्षधरा, भूतवासा, भूतवृक्ष, गवाक्षी, कर्कशच्छदा। हि. रूसा, सहोरा, दहिया

सहोडा, करचन्ना। वो –करौली, करचन्ना, करेरा, रूसा। गु —सहोडा। ब.—शिओरा, सहोड। म.—खारोली, सागसा होडा। सीमाप्रात-रूमा,सिहोरा। पटना–सिहोरा। प०—दहिया, जिंदी। सहारनपुर–दहिया, कुरचन। ता.–कुर्री पिल्ला, पाल पिराइ, परायाम, पिरायन। ते.–वरोनिका, वारांनकी पाक्कि। कन्नड–आखोर, मोरानु। लै०–Streblus asper Lour (स्ट्रेबलस एस्पर)।

रासायनिक संगठन—

इसमे Nederl tidsehrrt नामक रसायनिक तत्व प्राप्त होते है।

प्रयोज्याङ्ग—छाल, मूल और पत्तो का रस।

मात्रा एक से दो मागा।

गुण धर्म और प्रयोग–

रूसा (सहोडा) रक्तपित्त, ववासीर, वात कफ और अतिसार को दूर कर सकता है।

रस—कटु, वीर्य–उष्ण, विपाक–कटु, गुण–लघु, रूक्ष, दोप शमन–वात कफहै। इसका विशेप प्रभाव पचन सस्थान पर है। यह रक्तपित्त, अर्श, ज्वर और अतिसार रोगो मे प्रयुक्त होता है।

नव्य मतानुसार–

रूसा वल्य है। यकृत और प्लीहा की वृद्धि मे यह उपयोगी है। हथेली मे तथा पगतली मे चीरे पडे हो तो उसमे इसका रस या दूध भरना बहुत उपयोगी है।

इसका दूध के समान रस धारक और विषनाशक है।

इसका मूल अपरिपक्व फोडे के ऊपर लगाने से फोडा फूटकर व्रण का रोपण होता है।

(१) **अपची मे**—रूसा के स्वरस से सिद्ध तेल का नस्य और विरेचन के रूप मे उपयोग करने से अपची मिटती है। (सुश्रुत चि १८-२३)

(२) **गंडमाला मे**—रूसा के स्वरस से सिद्ध तेल गड माला को मिटाता है। (वृन्द)

(३) **वातज शोथ मे**—रूसा की छाल को काजी के साथ भली प्रकार घोटकर चिकना लेप योग्य तैयार करके लेप करने से वातज शोथ मिटती है। (वृन्द अ ४४-४)

(४) **पुरातन कुष्ठ में**—रूसा का पान तोडने से जो दूध निकले उसके लगाने से पुराना कुष्ठ मिटता है। (वैद्य मनोरमा)

(५) **हाथी पगा मे**—रूहा की छाल २ तोला जौकुट की हुई को चौगुने पानी मे उवाल ले, चौथा भाग जल का शेष रहने पर नीचे उतार कर छान के ठन्डा होने बाद उसके बराबर गौमूत्र मिलाकर पीने से बहुत जल्दी हाथी-पगा (श्लीपद) मिटता है। (शोढल)

(६) **उर्ध्वगामी रक्तपित्त में**—रूसा की ताजी छाल का रस २-३ बूंद लेकर उसमे दूना घी मिलाकर, चिरायते के चूर्ण के साथ पी जाने से उर्ध्वगामी रक्तपित्त मिटता है। (चक्रदत्त)

रेंड (Ricinus Comunis Linn)

यह गुडूच्यादि वर्ग और एरण्डादि कुल (Euphorbiaceae) का छोटा सर्वदा हरा वृक्ष। ऊचाई ६ से १२ फीट। तना-स्निग्ध, हरित। पान हरे या रक्ताभ १ से २ फीट व्यास के। पत्र कुछ हस्तागुली के समान, चौडे, विषम भग्न, पान का विभाग लम्बा और गोलाकार, अग्रभाग तीखा। पत्र का डण्ठल ४ से १२ इन्च। पुष्प दण्ड बडा शाखा-प्रशाखा विशिष्ट। मजरी मे नर फूल आध इच व्यास के, स्त्री पुष्प के ऊपर होते है, स्त्री पुष्प के वाहर कोष उतने ही लम्वे। पु केसर अनेक होती हैं, स्त्री पुष्प का बहिर्वास आध इन्च लम्वा। गर्भाशय तीन आवरण विशिष्ट, स्त्री केसर विस्तृत, गाढ लाल वर्ण। बीज कोष गोलाकार आध से १ इच लम्वा। वीज लम्व गोल, मसृण, मासल, श्वेत वर्ण के दागो से युक्त। फल-द्विकोषीय। फलो पर कोमल काटे होते है. फल मे तीन बीज निकलते है. यह बीज ऊपर चित्रित होते है और बीज के भीतर मीग सफेद सफेद निकलती है। उस मीग के भीतर तेल होता है। उस

मीग अथवा तेल को खाने से जुलाव होता है। फूल-फल सब समय मिल जाते है। गुण दोनो के समान है।

भेद–

(१) लाल और (२) सफेद। सफेद के पुन ये दो अवातर भेद होते हैं। (१) इसके बीज बडे होते है इसका तेल जलाने के काम में आता है। (२) इसके बीज छोटे होते है। इसका तेल औषधि मे प्रयुक्त होता है।

लाल एरण्ड के वृक्ष का काण्ड, पत्र और फल रक्त वर्ण के होते है। छोटी जाति के दोनो के एरण्ड मे से तैल अधिक निकलता है। इनमे से औषधि रूप से छोटी जाति के वृक्षो का मूल और तैल एव बडी जाति के वृक्षो के पानो का उपयोग करना चाहिए।

उत्पत्ति स्थान–

इसके वृक्ष प्राय समस्त भारतवर्ष मे खेतो के किनारे लगाये जाते है।

नाम–

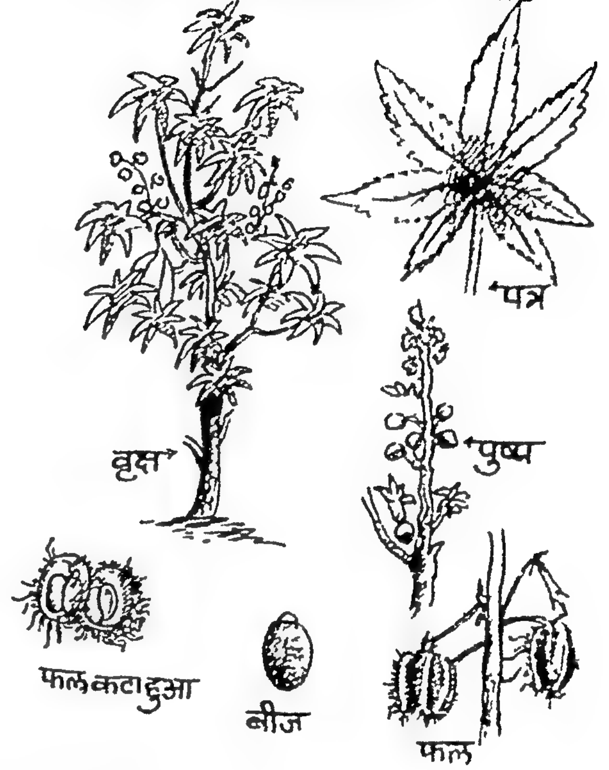
स —रुचागुल, वातारि, रुवूक, एरण्ड। हि —एरण्ड, रेड। व —भेराण्टा। आन्ध्र-एरी। वो —इरेंडी। म – एरण्ड। गु -एरडो राज -एण्डिया एरण्डिया। ता -आमणक्कु। क —एरडु, आडलके। कन्नड—मण्डा। मला –चिट्ठा-मणक्कू। आसाम–इरी। मलवार–इरण्डम्। अ –खिरवा। फा —वेदजीर। तुरकी फरफच। अ –Castor oil plan s) (कास्टर आयल प्लान्टस)। ले —Reclnus Communis Linn (रीसीनुस कोम्मूनिस)।

रासायनिक संगठन–

बीज मे अन्यान्य तेलो के विपरीत सुरासार विलेय एक अनुत्पत तेल ४५%, प्रोभुजिद २०%, पिष्ट, लवाव, शर्करा और राख १०%, तेल ग्लीसरोल के रिसिन आलिएट या स्वल्प पामिटिन और स्टियरीनयुक्त ट्राइरिसिन आलीइन का यौगिक है। रिसिन आलिइक एसिड के ग्लीस राइडस प्रधानत विरेचन कर्म के लिए उत्तरदायी हैं। मुख द्वारा उपयोग करने से तेल साबुन के रूप मे परिणत हो जाता और स्वतन्त्र अम्लयोग मुक्त हो जाता है। उसीके द्वारा उक्त कर्म निष्पन्न होता है। मग्ज में पाये जाने वाले

रेंडी (एरण्ड)

Ricinus Communis Linn



तेल से भिन्न, बीज मे रिसीन (Ricin) नामक अल्व्युमिनाइड स्वभाव का एक परम विषाक्त पदार्थ भी होता है। इसमे विरेचन गुण नही होता और न तेल मे यह किसी अश मे पाया जाता है। (यू. द्र वि)

प्रयोज्याङ्ग—मूल, त्वक, पत्र और तैल।

प्रकृति—दूसरे दर्जे मे गरम और खुश्क। तैल-बीजो से ज्यादा गरम।

गुण धर्म व प्रभाव--

सक्षेप मे—रस मे मधुर तिक्त। गुणो मे—विरेचक, शोधक, वातहर। वीर्य मे—उष्ण। विपाक मे—मधुर। दोषशामक—वातकफ।

शरीराङ्गो मे मुख्य प्रभाव—आन्त्र और वात सस्थान पर। विशेष–एरण्ड की गुद्दी (मग्ज तुख्म वेदजीर) श्वयथु विलयन, शोथघ्न, वेदना स्थापन, लेखन, तीव्र विरेचक, कठोरता को मृदु करने वाली, आर्तवजनन, उदर कृमि

निसारक और सर्प दष्ट का अगद है। पत्र—यद्यपि गुण कर्म मे निर्बल है, तथापि इसमे अगद गुण अधिक है। यह प्रधान रूप से दुष्ट दोष विरेचनीय और शोथ विलयन।

रेंडी—रस मे चरपरा, विपाक में कड़वा, उष्णवीर्य और कफघ्न है। ज्वर, वात और कास को दूर करता है। लाल एरण्ड-शोथ, पाडु, ज्वर, कफ, भ्रांति, श्वास और अरुचि को दूर करता है। इनके सिवाय भाव प्रकाश ने कटिवात, वस्तिपीड़ा, सिरदर्द, उदररोग, बद, आनाह, कुष्ठ और आम प्रकोप मे भी लाभदायक कहा है। (रा. नि.)

एरण्डमूल के गुण—एरण्डमूल शूलघ्न, वृष्य, वात-कफनाशक है। (शो नि.)

तेल निकालने की विधि—रेंड़ी की गिरी को भूनकर बारीक पीसकर जोश देते हैं और झाग उतारकर इकट्ठे करते रहते हे फिर केवल पानी रहने पर उसे छोड झागो को गरम कर तेल तैयार कर लेते हैं।

नोट—आग और पानी से निकाला तैल दवा रूप मे काम नहीं आता केवल जलाने मे काम आता है। दवा मे मशीन से दबाया हुआ या कोल्हू मे पिरोया हुआ और फिर जिसको वाष्प (Steam) दे पुन शुद्ध कर लिया हो यह एरण्ड स्नेह (Castor ail) है विरेचनार्थ काम आता है।

तैल के गुण—

एरण्ड तैलं कृमि दोष नाशनं,
वातामयघ्न सकलाङ्ग शूल हृत।
कुष्ठापहं स्वादु रसायनोत्तमं,
पित्त प्रकोपं कुरुतेऽग्नि दीपनम्।
[शा० नि०]

डाक्टर देसाई के मतानुसार एरण्ड तैल सौम्य, स्तन्य-जनन, दाहशामक और वातहर है। मूल—वातहर। स्रंसन वर्ग मे एरण्ड तैल यह अच्छा उदाहरण है। रात्रि को १–२ ड्राम देने पर दूसरे दिन सामान्यत पतला और पीले रङ्ग का एक या दो दस्त होते है। एरण्ड तैल से अन्त्र की श्लैष्मिक कला मे मृदुता आती है। इससे मल की गाठे शिथिल होकर नीचे चली जाती है। इस तरह मल को सरकाने वाले द्रव्यो को स्रंसन कहते है।

एरण्ड तैल की क्रिया अन्त्र के प्रारम्भिक १२ अगुल वाले भाग (ग्रहणी) पर होती है। इसकी क्रिया यकृत पर बिलकुल नही होती। यह अति सौम्य होने से कभी दगा नही देता। मात्रा अधिक होने पर कुछ पतला दस्त एकाध अधिक आता है। फिर भी कभी हानि नही पहुँचाता। एरण्ड तैल मे पीछे से कब्ज करने का थोड़ा धर्म भी है। इस एरण्ड तैल के अतिरिक्त सारक, स्रंसन, अनुलोमिक वर्ग की अन्य औषधिया—जैसे सूखे अन्जीर, काला मुनक्का, शुद्ध गन्धकादि है। इन द्रव्यो से भी विशेष और जल सदृश पतले दस्त नही होते। और उनसे अन्त्र का प्रदाह आदि कुछ भी हानि नही होती। इन सबमे एरण्ड तैल श्रेष्ठ है। एरण्ड तैल सुबह खाली पेट होने पर देना चाहिये। साथ मे अदरख का रस मिला देना, यह उत्तम अनुपान है। अदरख का रस या सोठ का क्वाथ मिलाने से आम को निकालने की क्रिया और अग्नि को प्रदीप्त करने मे सहायता मिल जाती है।

स्रंसन औषधिया छोटे बालक, वृद्ध और स्त्रियो को दी जाती हैं। एरण्ड तैल सगर्भावस्था मे भी दे सकते है। स्त्रियो के कटि स्थान मे रही हुई इन्द्रियो का प्रदाह होता है उस पर एरण्ड तैल देने से कुछ भी त्रास नही होता। एरण्ड तैल में पीछे से कब्ज करने का धर्म भी है। अत प्रतिदिन रात्रि को सोने के समय १–२ ड्राम देने से जीर्ण मलावरोध दूर होता है। —देसाई

डा० खोरी ने लिखा है कि एरण्ड तैल प्राय: अदरख के रस या सोठ के क्वाथ, चाय या दशमूल क्वाथ के साथ दिया जाता है। यह तैल उग्र नही है। सेवन करने के पश्चात् जब यह ग्रहणी में पहुंचता है तब वहां उसके साथ आग्नेय रस (Pancreatic juice) मिल जाता है। फिर वह एरण्डाम्ल मे परिणत हो जाता है जो आन्त्र मे उग्रता लाता है। आत्र की ग्रन्थिया और आन्त्र की पेशी वृत्ति को उत्तेजित करता है। जिससे विरेचन क्रिया होती है। एरड तैल यकृत् को कभी उत्तेजित नही करता। इसका परिणाम ४-५ घण्टे मे होता है। उदर मे कुछ भी वेदना या शूल उत्पन्न किये विना प्रवाही विरेचन होता है। फिर आन्त्र पर शामक असर पहुचाता है। यदि छोटे बच्चे की माता को एरण्ड तैल दिया गया हो तो वह दूध (स्तन्य) द्वारा

वाहर निकलता है। जो वच्चे के उदर मे जाकर उसे विरेचन करता है।

एरण्ड तैल अफरा, मलावरोध, ज्वर, आमवात, प्रजनन और मूत्र सस्थान के अवयवो मे प्रदाह, वृक्क प्रदाह, सुजाक, अश्मरी, गुदनलिका सकोच, मूत्र मार्ग मे सकोच आदि रोगो मे व्यवहृत होता है। अतिसार का प्रारम्भ होने पर यदि आतो के भीतर उग्रता उत्पादक मल या अन्य द्रव्य अवस्थित होने से अन्त्रस्राव अधिक होता हो और उसमे रक्त सचय अधिक हुआ हो तो एरण्ड तैल का सेवन कराना अति हितकारक है। इससे निर्वलता नही आती, वल्कि वल वना रहता है। उदर गुहा और विटप भाग(पेड़ू) पर शस्त्र क्रिया करने पर एरण्ड तैल का सेवन कराया है।

यदि आन्त्रिक ज्वर (मधुरा—Typhoid), सगर्भावस्था, प्रसवावस्था के पहले और प्रसव होने पर मलावरोध हो, तो एरण्ड तैल का प्रयोग किया जाता है। आन्त्र अथवा वृक्क के भीतर शूल चलने पर अदरख के रस और शहद के साथ मिलाकर देने पर शूल शमन हो जाता है। आन्त्र मे यदि गोल कृमि के हेतु से प्रदाह हुआ हो तो उसमे और उदर्य्याकला प्रदाह तथा पेचिश मे अफीम के फल के छिलको को गरम जल मे भिगोया हुआ मदोष्ण जल के साथ एरण्ड तैल दिया जाता है, जिससे वेदना शान्त होती है और उदर की शुद्धि होती है। पाकोन्मुख विद्रधि (फोडा पकने की अवस्था में) हो तो उस पर बीजो की गिरी को पीस पुल्टिश कर वाधने से जल्दी पाक हो जाता है। आमवातज और वात रक्तज शोथ पर पुल्टिस वाधने से वेदना कम हो जाती है।

छोटे शिशु की माता के स्तन पर प्रदाह होने पर स्तन्य स्राव रुकता हो और उस हेतु से वेदना होती हो, तो एरण्ड के पानो को पीस पुल्टिस वनाकर वाधने से तुरन्त लाभ पहुचता है। यदि मासिक धर्म काल मे रजस्राव योग्य न होता हो, तो अधिवस्तिक प्रदेश (नाभि के नीचे के भाग) पर एरण्ड के पानो को निवाया करके वाधा जाता है। उदर गुहा के अवयवो (यकृत प्लीहादि) की चिरकारी वृद्धि होने पर चिरकारी रोगो मे एरण्ड-मूल के छाल का सेवन रक्त प्रसादन रूप से कराया जाता है।

(डा० मोगी)

मात्रा— मूल त्वक चूर्ण ३ से ६ माशा तक। पत्र औरस्वरस ½ से १ तोला तक। तैल—२ से ४ तोला तक। २ वर्ष तक की उम्र के बालक को १॥ से ३ माशा। २ वर्ष से ५ वर्ष तक के बालक को ६ माशा (१॥ ड्राम)। पाच वर्ष से ऊपर की उम्र के बालक को १ तोला (३ ड्राम)।

बीज मात्रा—साधारण ३ से ५ दाने तक। पक्षाघात, अर्दित के लिए जिह्वा निकाले हुये मग्ज के ५ से ११ दाने तक। मासिक धर्म जारी करने के लिये शुद्ध मग्ज ४॥ माशा।

उपयोग—एरण्ड का उपयोग आयुर्वेद मे अति प्राचीन काल मे अत्यधिक रोगो पर हो रहा है। यह अति निर्भय घरेलू औषधि है। बालक, वृद्ध, सगर्भा आदि को भी निर्भयतापूर्वक दी जाती है। चरक सहिता मे अगमर्द प्रशमन, स्वेदोपग मे एरण्ड और भेदनीय दशेमानियो मे एरण्ड का उल्लेख किया है। स्वेदोध्याय मे एरण्ड के पान पर रोगी को लेटाने को कहा है। इनके अतिरिक्त मधुर स्कंध, वातघ्न औषध समूह और अनेक रोगो की औषधियो मे एरण्ड का उपयोग किया है। सुश्रुत सहिता मे अधोभागहर सशमन औषधियो मे एरण्ड की गणना की गई है। एरण्ड के पान, बीज और मूल का क्वाथ स्वेदोपग है अर्थात् स्वेद साध्य रोगो मे हितकारक है। चर्म विकारी रक्त विकार, शोथ, जलोदर, रक्त मे विष प्रकोप से उत्पन्न ज्वरादि विकार,आमप्रकोप से उत्पन्न व्याधियां आदि मे स्वेद देने से लाभ होता है, इन सब रोगो मे एरण्ड का प्रयोग किया जाता है।

आन्त्रशूल, आमातिसारादि मे जब ऐसा ज्ञात हो कि किसी स्थान पर आन्त्र मे मल चिपका हुआ या भरा हुआ है या किसी भारी पदार्थ के खाने से भारीपन हो गया है उस समय रोगी को दस्त होता हे फिर भी एरण्ड स्नेह का विरेचन देना योग्य है जिससे दस्त और शूल होने का कारण दूर होकर दस्त वन्द हो जाते है।

एरण्ड को 'वातारि' कहा गया है और यह वायु के ऊपर अक्सीर दवा है। वायु से अधिक करके अकड जाना,

शूल और शोथ ये तीनो बाते होती है। ये तीनो लक्षण एरण्ड के सेक से मिट जाते है। उपरोक्त चिन्हो से युक्त वात व्याधि मे एरण्ड मूल के क्वाथ का सेवन उपयोगी है।

प्रयोग—

(१) सशूल आमवात मे एरण्ड मूल त्वक का क्वाथ अत्यन्त उपयोगी है।

(२) आमवात मे उसी प्रकार पेचिश मे जब आमरक्त गिरता हो, पेट मे सख्त शूल हो तब थोडा सोठ लेकर एरण्ड के रस मे पीसकर गोली बना उसको एरण्ड के पत्तो मे लपेटकर पुटपाक के अन्दर पकाकर फिर निचोड स्वरस निकाल कर पीने से पेचिश (प्रवाहिका) जल्दी ठीक हो जाती है। जठराग्नि दीप्त होती है और शूल मिट जाता है। इसको एरण्ड पुटपाक कहते है।

(३) मक्कल शूल मे—दशमूल क्वाथ १ तोला, एरण्ड त्वक यवकूट १ तोला लेकर दिन मे २–३ बार क्वाथ वना कर पिलाने से एकदम मक्कल शूल मिट जाता है।

(४) अण्डवृद्धि—३ माशा गूगल के क्वाथ मे एरण्ड तेल १ तोला, गोमूत्र १ तोला मिलाकर सुवह-शाम पीने और रुग्ण स्थान पर एरण्ड पत्र तेल लगाके गरम कर बाधने से पीडा शीघ्र मिट जाती है। (आर्य औषध)

(५) शय्याक्षत मे—एरण्ड तेल लगाने से शय्याक्षत (Bedsore) जल्दी मिटते हैं।

एरण्ड बीज शुद्धि—एरण्ड बीज मज्जा को जिह्वा रहित करें अन्यथा उवाक आती रहती है फिर नारियल के जल मे १ प्रहर दोलायत्र से स्वेदन करने से शुद्ध होते हैं।

६. मेद और आतो के रोगो मे—१० नग एरण्ड के बीजो की (जिह्वा रहित) गिरी माउलअस्ल (शहद के साथ जल या कोई अर्क मिलाकर पकाते है, यही 'माउल अस्ल है।) के साथ खाने से दस्तो के रास्ते से आम और क्रमि निकल जाते है।

७ पेट के विकार में—शुद्ध मग्ज एरण्ड गाय के चौगुने दूध मे पीसकर औटावे। जब खोवा की तरह हो जावे तो उसमे बराबर खाड मिलाकर अवलेह वनाले। रोजाना १॥ तोला खाने से पेट की वायु मिटती है।

८ इसके पत्तो का रस २–३ बार बच्चे की गुदा मे लगाने से चुन्ने मर जाते है।

९. स्त्री रोग—एरण्ड गिरी को 'सिरके' मे पीसकर स्तन पर लगाने से वरम उतर जाता है।

१० शुद्ध एरण्ड गिरी उचित मात्रा मे खाने से रज स्वला जारी होती है।

स्त्री एरण्ड गिरी का ऊपरी सफेद पतला परदा और अन्दर की जीभ निकाल के रज स्वला स्राव से मुक्त होकर सेवन करती हे तो एक वर्ष भर गर्भ नही रहता।

१२ पत्तो का रस पिलाने से स्तनो मे दूध की कमी दूर हो जाती है।

१३ एरण्ड क्षीर—शुद्ध एरण्ड मीगी एक, दूध एक पाव, जल एक पाव के साथ औटावे और दूध मात्र रहने पर १ तोला मिश्री मिला रोगी को पिला देवे। इस प्रकार एरण्ड गिरी एक से शुरू करके ७ दिन तक ७ गिरी तक क्रमश वढावे और इसी तरह १–१ प्रतिदिन घटाकर १ गिरी पर लाने से खून के रोग मिटते है।

१४ विष नाशक—एरण्ड के पत्तो का रस पिलाकर कै कराने से साप, विच्छू, अफीम, सीगीमोहरा का जहर मिटता है। इसी प्रकार दूसरी तरह के जहर भी मिटतेहैं।

१५ वालको का वमन-विरेचन—कभी कभी छोटे वालको के उदर मे दूध की गोली (मल की गाठ) बन जाती हे। फिर वह सडने लगती है एव उससे वमन विरेचन होते है। ऐसी स्थिति मे इस त्रासदायक मल (गोली) को वाहर निकालने के लिये एरण्ड तैल उत्तम औषध है।

१६ जीर्ण उदर वेदना—जीर्ण उदर वेदना मे रोज रात्रि को सोने के समय यदि आध पाव गरम जल मे एक नीवू का रस निचोड कर एरण्ड तैल डाला जावे तो उसका दु स्वाद छिप जाता है। नीम्बू के रस के स्थान पर आर्द्रक रस भी डाला जा सकता है। इस प्रकार कम मात्रा मे लेते रहने से शनै शनै वेदना निवारण हो जाती है।

१७. प्रवाहिका [अ]—पेचिस मे आम और रक्त

गिरता हो तो प्रारम्भावस्था मे एरण्ड तैल देने से आम प्रकोप आधा कम हो जाता है और रक्त स्राव मे भी लाभ पहुँचता है।

१८ प्रवाहिका [आ]—यदि पेचिस मे रक्त नही आता हो, आम गिरता हो और ज्वर हो तो एरण्ड मूल को बकरी के दूध और जल मे उबाले। फिर दूध शेष रहने पर छानकर पिलावे। यह उपचार सुबह और रात्रि को या दिन मे ३ बार करना चाहिये।

—च० चि० १०—५१

१९ अर्श और गुदा की त्वचा फट जाना—प्रतिदिन रात्रि को एरण्ड तैल देने से बहुत लाभ हो जाता है। अनेक आचार्य एरण्ड तैल के साथ थोड़ा शिलाजीत भी देते हैं। एव कई वैद्य त्रिफला के क्वाथ के साथ एरण्ड तैल देते हैं।

२०. उपान्त्र प्रदाह (Appendicitis)—छोटे बडे अन्त्र के सयोग स्थान पर उपान्त्र (Appendix) रूप एक अवशिष्ट भाग रहा है। वह कभी कभी सूज जाता है, जिससे नाभि के दाहिनी ओर असह्य वेदना होती है, शौच शुद्धि नही होती, वमन होती है, ज्वर आ जाता है, नाडी तेज चलती और सूक्ष्म हो जाती है। इस रोग के प्रारम्भ मे एरण्ड तैल देने से शस्त्र क्रिया की आवश्यकता नही रहती। इसमे एरण्ड तैल और हीग के जल के मिश्रण की वस्ति भी दी जाती है।

सावधानी—इस रोग मे उदर वेदना बहुत होती है उसे दूर करने के लिये अफीम नही देनी चाहिये। आवश्यकतानुसार खुरासानी अजवायन दे सकते है।

इस रोग की मुख्य औषधि कुचला है। कुचला प्रधान अग्नि तुण्डी, बिष तिन्दुक, शूलान्तक वटी का सेवन ४–६ मास तक पथ्य पालन सह कराने से रोग निवृत्त हो जाता है।

२१. वात प्रकोप और वात शूल—वात रोग में एरण्ड तैल उत्तम गुणकारक है। इस हेतु से इसे वातारि सज्ञा दी है। कटिशूल, गृध्रसी, पार्श्वशूल, हृदयशूल, कफजशूल, आमवात और सन्धिशोथ इन सब रोगो में एरण्ड मूल और सोंठ का चूर्ण क्वाथ करके दिया जाता है एव वेदना वाले स्थान पर एरण्ड तैल की मालिश करायी जाती है। इन सब रोगो मे एरण्ड तैल के साथ शिलाजीत का सेवन और वाह्य लेप भी कराना चाहिये।

२२ गृध्रसी—(Sciatica) और कटिशूल के लिये भाव प्रकाशकार के अनुसार एरण्ड के बीज की जिह्वा निकाली गिरी १–१ तोले को दूध मे पकाकर (खीर बना कर) सुबह पिलाते रहने से थोड़े ही दिनो मे रोग दूर हो जाता है।

—भा० प्र०

२३ नूतन और तीव्र आमवात—

आमवात गजेन्द्रस्य शरीर वनचारिण.।
एक एवाग्रणाहंन्ता एरण्ड स्नेह केसरी॥
कटि तट निकुञ्जेषु संचरन्वात कुञ्जर।
एरण्ड तैल सिंहस्य गन्धमाघ्राय गच्छति॥

—यो० र० पृ० ७८१

एरण्ड तैल रोज सुबह खाली पेट होने पर देने से लाभ जल्दी होता है। —भा० प्र०

२४ घुटने का जीर्ण वात शोथ—इन पर एरण्ड तैल और शिलाजीत के मिश्रण से जैसा गुण मिलता है वैसा अन्य किसी औषधि मे नही मिलता।

२५. स्तनों में गांठें पड जाना—स्तनो पर एरण्ड तैल का मर्दन कर फिर एरण्ड पान बाध देने से स्तन्य प्रकोप से उत्पन्न गाठ बिखर जाती हैं और दूध अधिक उतरता है।

२६. स्तन वृन्त की त्वचा फट जाना—स्तन वृन्त के चारो ओर त्वचा फट जाती है, उन पर एरण्ड तैल लगाने से तुरन्त लाभ होता है।

२७. नेत्रों में धूल रेती गिरना—विशुद्ध एरण्ड स्नेह (Castor oil) नेत्र मे डालने से, नेत्र मे प्रवेश हुये स्नुही क्षीर या अर्क क्षीर जन्य दाह, अणु (धूल, कोयले, मच्छरादि) बाहर निकल जाते हैं, एव कुकूणक रोग में उसकी तीक्ष्णता भी कम हो जाती है। एरण्ड तैल के अञ्जन से नेत्रो मे से जल स्राव होता है. इस कारण इसे नेत्र विरेचन कहा है।

२८ अर्श—अर्श के मस्से मे दाह होने पर एरण्ड तैल को घी कुवार के गुद्दे के साथ मिलाकर बांधने से



जलन शान्त हो जाती है। यदि शोथ आया हो तो वह भी दूर हो जाती है।

२९ वातरक्त–एरण्ड के वीजो की गिरी को दूध मे पीस, गरम कर शोथ स्थान पर बाधे और ६ माशे सोठ और १ तोले एरण्ड मूल का क्वाथ करके दिन मे दो बार पिलाते रहे। पिलाते समय ६ माशे शहद भी मिला लेना चाहिये।

३० वृषण वृद्धि—अण्डकोष वढे हो और रोग नया हो तो एक मास तक पथ्य पालनसह रोज सुवह दूध के साथ एरण्ड तैल पिलाने से वृद्धि दूर हो जाती है।
—सुश्रुत चिकि० ६–४४

३१ उदरशूल–एरण्ड मूल त्वक चूर्ण १ तोला, सोठ चूर्ण ६ माशे का क्वाथ कर उसमे १ रत्ती भुनी हीग ग्रोर १ रत्ती काला नमक मिलाकर पिलाने से अपचजन्य शूल निवृत्त हो जाता है।

३२. योनिशूल—एरण्ड तैल मे रूई के फाहे को भिगोकर योनि स्थान मे धारण करने से शूल शान्त हो जाता है। —गद निग्रह

२२ कामला—गर्भवती को होने वाले कामला की प्रारम्भावस्था मे एरण्ड के पानो का रस १ तोला को दूध के साथ मिलाकर रोज सुवह पाच दिन पिलाने से कामला दूर हो जाता है। एव शोथ तक हो, तो वह भी दूर हो जाता है।

३४ कान मे जन्तु का प्रवेश—पुराने गाढे एरण्ड तैल से कान भर देवे और ऊपर रुई लगा देने से जन्तु मरकर निकल जाता है।

३५ प्रसव कष्ट–प्रसव काल मे कष्ट कम कराने के लिये सगर्भा को ५ मास हो जाने पर एरण्ड तैल से १५–१५ दिन वाद उदर शुद्धि कराते रहे।

प्रसव के समय मे भी २ तोला एरण्ड तैल चाय या दूध मे पिला देने से प्रसव शीघ्र होता हे।
—गा० औ० र० प्र० भा०

३६ कास—एरण्ड पत्र का अन्तरधूम दग्ध क्षार, त्रिकटु, तिल तैल, पुरातन गुड मिला गोली बनाकर सेवन करने से कास रोग मिटते है। —चरक

रतौंधी—एरण्ड के कोमल पत्रो को घी मे भून कर सेवन करने से रतौंधी दूर होती है। (वाग्भट)

सर्पदश जनित रक्त दुष्टि पर—एक प्रकार के चित-कबरे सर्प के काटने पर वह स्थान नीला और सूज जाता है और बाद मे छाले हो जाते है, ऐसी जगह पर एरण्ड के मुलायम पत्ते १ तोला, ११ काली मिर्च दोनो चीजो को पानी मे पीस छानकर पिलावे। इससे वमन होगा और कफ निकलेगा। दुवारा इस तरह फिर पिलावे। दो वार मे ही आराम हो जाता हे। यदि आवश्यकता जान पडे तो पुन पुन पिलावे। निश्चय ही सर्पदशित रोगी स्वस्थ हो जायगा। (भा ज बू द्वि भा)

निजी अनुभव—

मैंने उक्तावस्था मे २ तोला एरण्ड छाल का क्वाथ वनवाकर वस्त्रपूत करने के बाद मन्दोष्ण अवस्था मे २तोला गाय का घी और १ माशा कालीमिर्च चूर्ण मिलाकर १५ दिन तक पिलाया, जिससे रोगी स्वस्थ हो गया।

गर्भाशय शोथ—प्राय सन्तान उत्पन्न होने के पश्चात् पैदा होता है। इससे रोगिणी को बहुत वेग का ज्वर हो जाता है। ऐसी अवस्था के लिये एरण्ड के पत्तो का वस्त्र पूत स्वरस मे उम्दा शुद्ध रुई का फाहा भिगोकर योनि मे रखावे। इससे आराम होगा। (भा ज वू भा १)

वालको के वास्ते सिद्ध एरण्ड स्नेह—सोया २ तोला, कालानमक आधा तोला दोनो को जल मे पीस के टिकिया बनाले, २० तोला शुद्ध एरण्ड तैल को कडाही मे डालकर उसमे उपरोक्त टिकिया डाल के पकने दें। टिकिया वादामी रग की होने पर कडाई को आग से उतार टिकिया को अलग हटा, तैल को छानकर शीशी मे रखले। इस एरण्ड तैल की ३-४ बूद २-३ बूद शहद मे मिलाकर तीसरे, चौथे तथा आठवे दिन एक वक्त बच्चो को देने से वालक तन्दु-रुस्त रहता है। इससे उनके शरीर मे वायु तथा कब्ज की तकलीफ नही होती। (जा व वै प्र गुजराती)

एरण्ड के विशिष्ट योग–

एरण्डादि क्वाथ (यो र पृ ७११) –एरण्ड की जड विल्व की छाल, छोटी कटेरी, वडी कटेरी, सचल नमक,

सोठ, मिर्च, पीपल, हीग, सैंधव इनका क्वाथ धनुर्वात के लिये परम उत्कृष्ट है ।

एरण्ड स्वरस (भा भै र सं ५४४)—एरण्ड मूल का स्वरस आधा तोला दूध मिलाकर तीन दिन तक पीने और घृत तथा दूध भात का लवणरहित आहार करने से 'कामला' का अत्यन्त शीघ्र नाश होता है ।

एरण्ड भस्म योग (भा भै र सं. ५५१)—एरण्ड को पत्र और मूल सहित लेकर वरतन मे बन्द करके गजपुट मे भस्म करे । इसे १-१ तोले की मात्रा से ४ तौले गोमूत्र के साथ पीने से तिल्ली रोग का नाश होना है ।

एरण्डादि गुटी (स १६५)—एरण्ड के बीजो की जिह्वा रहित गिरी, सोठ और मिश्री समान भाग लेकर यथा विधि गोलिया बनावें । इन्हे सेवन करने से आमवात का नाश होता है ।

एरण्ड पाक (यो र वा व्या)—एरण्ड के पक्के बीजो की मींगी (गिरी) १ सेर लेकर उसे ८ सेर दूध मे मन्दाग्नि पर पकावे और खोया हो जाने पर उसे आधा सेर घी मे भूनले और फिर चार सेर खाड की चाशनी मे मिलालें और उसमे त्रिकुटा, तेजपात, दालचीनी, नागकेसर, इलायची, पीपलामूल, चीता, चव्य, सोया, सौंफ, कचूर, वेल, अजवायन, दोंनो जीरे, हल्दी, दारु हल्दी, असगध, खरैटी, पाठा, हाऊवेर, वायविडग, पोहुखरमूल, गोखरू, कूठ, त्रिफला, देवदारु, काला विधारा, ववूल का गोद, एलवालुक और शतावर प्रत्येक का चूर्ण १-१ तोला मिलाकर रक्खें । इस पाक को यथोचित अनुपान के साथ सेवन करने से वातव्याधि, शूल, सूजन, वृद्धि रोग, उदररोग, अफरा, वस्ति शूल, गुल्म, आमवात, कटिशूल, उरुग्रह और हनुस्तभ का नास होता है ।

एरण्ड तैल योग (१) (स ५७३)—१ मास तक गौ मूत्र मे एरण्ड का तैल डालकर पीने से गृध्रसी और उरु ग्रह का नाश होता है ।

एरण्ड तैल योग २ (सं ५७४)—गृध्रसी के लिये एरण्ड तैल को असगध, खरैटी और सोठ, दशमूल के क्वाथ तथा कल्क से सिद्ध करके पीना चाहिये एव इसीकी वस्ति भी लेनी चाहिये ।

एरण्ड तैल हरीतकी (सं ५७८)—एरण्ड के तैल मे भुनी हुई हरडो को ७ दिन तक गोमूत्र के साथ पीने से श्लीपद (हाथी पग) का नाश होता है ।

एरण्डादि तैलम् ३ (स ५८१ विसर्प)—अरण्ड के बीज कडवी तोरी के बीज, निवौली, पवाड के बीज, वाकची और अकोल । सब चीजें समान भाग लेकर पाताल यत्र द्वारा तैल निकालें ।

इस तैल की मालिश से विसर्प आदि अत्यन्त शीघ्र नष्ट होते हैं ।

एरण्ड के जहरीले लक्षण-

लाल अरण्ड के २० बीजो की गिरी नशा पैदा करती है और ४० दानो के खाने से बहुत वमन होकर आदमी मर जाता है । इस तादाद की मात्रा कुत्ते के लिये भी जहर है । अगर कोई व्यक्ति इसके बीजो का परदा साढे दश माशा खा जावे तो वह मर जाता है ।

चिकित्सा एरंड जहर-

जिसने अरण्ड जहरीली मात्रा मे खाली हो तो तवासीर (वसलोचन) ४० माशा पीसकर ४॥ तोला सिकजवीन और ठन्डे पानी से मिलाकर पिलावें । रस अनार इसका तिर्याक है ।

तात्कालिक चिकित्सा-

आमाशय की नलिका या वामको द्वारा शुद्धि करावे । उत्तेजक द्रव्यो का प्रयोग करावे और अध त्वक् मार्ग से मारफीन का प्रयोग करे । रोगी को बाहर से गर्मी पहुँचावे ।

अहितकर—आमाशय के वास्ते ।

निवारण—कतीरा और मस्तगी ।

प्रतिनिधि—जमालगोटा ।

—x—

रेवन्द चीनी [भारतीय रहुबार्ब] (Rheum emodi Wall)

यह चुक्रादि कुल (Polygon ceae) का एक ४-५ फीट ऊचा हरा एव धूसर वर्ण का नैसर्गिक क्षुर है और इसे वोते भी है ।

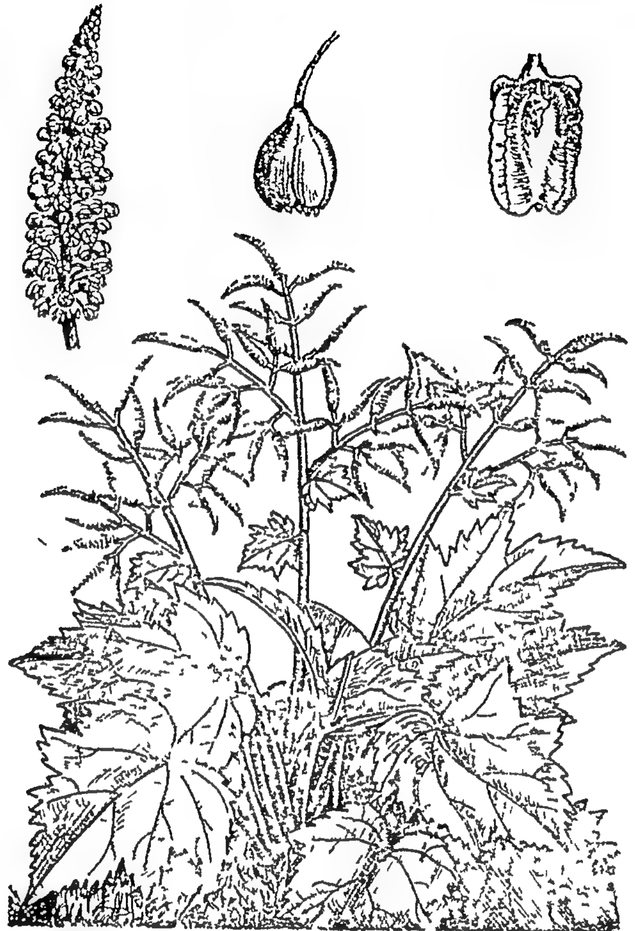
काण्ड (Stem)—शाखायुक्त तथा पत्रमय होते है । काण्ड त्वक अतिशय मोटाई मे दृढ और लम्वा होता है । मूल दृढ और मोटा । इसकी जड मे अदरक के समान गठाने होती है । इन गठानो की छाल को निकाल कर सुखाये हुये टुकड़े "रेवदचीनी" के नाम से बाजार मे विकते है । मूल १ इच से २½ इच तक मोटा होता है । औषधि प्रयोग मे मूल का अधिक व्यवहार होता है। मूलका आभ्यन्तरिक स्तर पीत वर्ण का अथवा कुछ भूरा होता है ।

पत्र—६ इच से २ फीट व्यास के होते हैं पत्रो की आकृति मुचकन्द के पत्री के समान होती है । ये पत्र पहले कोमल, मांसल एव रक्त वर्ण के, पश्चात् ऊपर से फीके हरे और नीचे की ओर पीले होते है । पत्र वृन्त की ओर हृत्पिण्डाकृति ५–७ शिरायुक्त । पत्र वृन्त ४ से ५ इच लम्वे सघन होते हैं ।

पुष्प—इसके पुष्प पुष्पदण्ड के ऊपरी भाग मे मञ्जरी के रूप मे व्यवस्थित वहुत करके आक की डोडी के अथवा लाल मिर्च के समान केवल मात्र एक शिरायुक्त, पुष्पदल ५ पुष्प व्यास $\frac{1}{8}$ इची, खिलने पर ये पुष्प गुलावी सफेद वर्ण के होते हैं ।

फल—आधा इची लम्वे, बैंगनी रङ्ग के होते है । वीज पकने पर चपटे एव धूसर रङ्ग के होते है ।

विशेष—मूल की वाह्य रचना का विवरण–रेवन चीनी का मूल १ ५ से ३ सेण्टीमीटर के वेलनाकार ठोस खण्डो के रूप मे फार्मेसियो मे मिलता है। प्राकृतिक अवस्था में मूल ६ से १२ इच लम्वा एव उग्र सुगन्ध वाला तथा भूरे वर्ण का होता है । सूखने पर मूलकी बाह्य सतह हलके भूरे रङ्ग की तथा कुछ झुर्रीदार होती है । मूल—स्वाद मे तिक्त–कषाय होती है । मूलसत्व नारङ्गी वर्ण का होता हे ।



हिं०-रेवन्द चीनी
RHEUM OFFICINALE BAILLON

मूल की आभ्यन्तरिक रचना—व्यत्यस्तच्छेदन रचना——इसमे सर्वप्रथम वाह्य स्तर की दिखाई देती है। इसका भीतरी भाग कार्क का बना होता है जो कि पीतवर्ण का दिखाई देता है फिर इसके भीतर कार्टक्स का भाग होता है। यह कार्टक्स पतली भीतियों वाले कोषाओ का बना होता है। इनमे स्टॉर्च, ग्रेन्स, टेनीन एव कैल्सियम, ऑक्जीलेट के रवो का समूह व पीले रङ्ग का पदार्थ जो कि ६० प्रतिशत अलकोहल मे अघुलनशील व पानी मे घुलनशील होता है । केम्बियम लहरदार व दबा हुआ होता है । केन्द्र के अन्दर का अधिकाश भाग जाइलम उत्तक का बना होत है और केन्द्रीय भाग पतली भित्ती की कोषाओ का बना

सार भाग होता है। वैस्कुलर उत्तक के बीच मे दो कोषा चौडी अक्ष के समानान्तर मेडुलरी रेज होती है।

(श्री मायाराम जी उनियाल द्वारा विवेचित सचित्र आयुर्वेद से साभार सकलित)

इसकी उत्तम जाति की जड़ को "रेवन्द खताई" ओ हलकी जाति की जडो को "रेवद चीनी" कहते है। इसके मूल से "सत्व-रेवदी चीनी" निकलता है जिसे यूनानी हकीम "उसारे रेवद" के नाम से प्रयोग करते है। सत्व को अधिकाधिक मात्रा मे प्राप्त करने के लिये ५—६ साल के पुराने मूलका उपयोग करना चाहिये। क्योकि उसमे (उसारे रेवद) सत्व की मात्रा अधिक होती है।

इस पश्चिमोत्तर उत्तराखण्ड मे इसकी तीन उप जातिया (Species) पायी जाती है जो कि निम्न प्रकार मे है—

(अ) रेवन चीनी Rheum emodi Wall

(आ) „ Rheum moorcroftianum Royle

(इ) „ Rheum Webbianum Royle

उपर्युक्त व्यापारिक रेवद जो इसका उत्कृष्ट भेद है और जिसको चीनी, रूसी और पूर्व भारतीय रेवद कहते है, रहीअम् आफिसिनेली (Rheum officinale Baillon) या रहीअम् पामेटम् (Rheum Palmatum Linn) क्षुप या इसी प्रकार के अन्य क्षुप का मूल है जिसकी छाल उतार कर सुखा लेते है। इनके क्षुप तिब्बत के दक्षिण-पूर्व और चीन के उत्तर-पश्चिम भागो मे होते है। बाजार मे इसकी सूखी जड और लकडी रेवदचीनी के नाम से विकती है और औषधोपयोग मे आती है। भारतीय रेवद काश्मीर, नेपाल भूटान और सिक्किम के पहाडो मे ४००० से १२००० फीट की ऊचाई पर होती है। चीन देश से रेवदचीनी का यहा आयात होता है। उसका नाम (Rheum officinale Baillon) है। इसके झाड चीन देश के जङ्गलो मे उत्पन्न होते है और कृषि भी की जाती है। Rheum palmatum Linn के झाड भी, उपर्युक्त समान गुणयुक्त है। इसको रूस देशीय रेवदचीनी कहा जाता है।

यह पीत नदी के उत्पत्ति स्थान के १०००० फीट उच्च प्रदेश मे मिलती है। चीनी लोग सितम्बर और अक्टूबर मे जमीन से इसके मूलो को निकालते है। मूलको छीलकर छोटे-छोटे टुकडे कर छाया मे सुखा लेते है। मूल ८-१० वर्ष पुरातन झाड का व्यवहारोपयोगी होता है।

(वनौषधि शतक)

स्वाद—मूल का स्वाद कडवा कसैला होता है। जिह्वा पर रखने से कुछ चिरपिराहट सी होती है। पत्र अम्ल रस प्रधान होते हैं। यही कारण है कि कुछ वनौषधि विक्रेता इसके पत्र वृन्त एव नाल को अमलवेतस के नाम से अनेक फार्मेसियो में वेचते हैं जो अनुचित है।

गन्ध—कुछ अजीब किस्म की होती है।

पुष्पकाल—जुलाई से अगस्त। फलकाल—सितम्बर से अक्टूबर। औषधि सग्रह काल-अक्टूबर से नवम्बर तक।

प्रयोज्याङ्ग—मूल।

उत्पत्ति स्थान-

यह काश्मीर, नेपाल, भूटान और सिक्किम के पहाड़ो मे ४००० से १२००० फीट की ऊचाई पर होती है। विशेषकर—हिमालय मे भिलगनाघाटी, भागीरथी घाटी, जमुना घाटी एव केदारनाथ की घाटियो मे ३२०० मी से ३००० मीटर की ऊचाई पर उपलब्ध है।

भागीरथी घाटी मे वसस्या, देवकुण्ड, गौरथात, हर्सिल वीट, भैरोघाटी, रुद्रगगाघाटी, गोमुख, देववन, नीलग आदि स्थानो के ऊपरी बर्फीली पहाडियो की तलहटियो मे ३२०० मीटर से ३००० मीटर की ऊचाई पर पायी जाती है।

भिलङ्गाना घाटी में—पवाली, काटा, रूपागली, भुजकण्डी, खडारी, चौकी, सहस्रताल, खतलिङ्ग, कुशकल्याणी किन कोलिया खाल आदि स्थानो पर पाई जाती है।

जमुनाघाटी मे—वीफ वीट, जमुनोत्री, हनुमान चट्टी के ऊपरी भागो मे एव चौखम्बा के नीचे के भागो मे यह मूलिका पायी जाती है।

केदारनाथ घाटी मे—इस घाटी मे यह वनौषधि गौरी कुण्ड, रामवाडा, केदारनाथ, वासुकी ताल आदि स्थानो पर प्राय उपलब्ध होती है।

सग्रह मात्रा—व्यापारिक दृष्टि से इस मूलिका का

इन स्थानो से सकलन किया जाता है। इन स्थानो के वनौपधि सग्रहकर्त्ताओ का कहना है कि ३०-४० क्वीन्टल्स के लगभग इसके मूलका सग्रह किया जाता हे। आवश्यकता पडने पर १६०० मीटर से २७०० मीटर की ऊचाई पर इस औपधि की कृषि भी की जाती है।

नाम-

स-क्षीरिणी, काञ्चन क्षीरी, हेम दुग्धा, हेमावती, पीत मूलिका, रेवन्दचीनी। हि-रेवन्द चीनी, रेवन्द खटाई। नेपालीपद्मचाल। गढवाली-आर्चू, डोल। गु-रेवची, गमनी रेवन्दचीनी। म-रेवन्द चीनी, रेवा चीनी। ब०-रेवन चीनी। वम्बई-लदाकी, रेवन्द चीनी, रेवन चिनी,। प-रेवन्द चीनी, चुकी, कडोल। ता, तै, क, मल-नट्टी, रेवल चिन्नी। फा-रेवन। अ-रावद। अ-(Indian Rheubarb) इडियन रुबार्ब) ले-(Rheum emodi wall) (हीम इमोडी वाल)।

रासायनिक संगठन-

विश्लेपण करने पर इसमे निम्न उपादान पाये जाते है-(१) क्राईसारोबीन जिसको रहीईन (जौहररेवन्द) और क्रोइसोफेन भी कहते है यह सत्व इसका प्रधान उपादानहै। इसकी रगत और विरेचन कर्म इसी सत्व के आश्रयभूत है, (२) क्राईसोफेनिक एसिड जो ताजी जड मे नही पायी जाती, प्रत्युत सुखाने मे क्रोईसारोबीन ओषजन कोअभिशोषित करके क्राई सोफेनिक एसिड मे परिणित हो जाती है। (३) इमोडीन। (४) रहोओ टेनिक एसिड। (५) आक्जेलेट ऑफ लॉइम ३५%, रेवन्द को चबाने से दातो मे कुरकुराहट इसी उपादान के कारण होती है।(६) अन्यान्य उपादान। जैसे रह्यु मिक एसिड, राल, पिष्ट प्रभृति उपादान होते हे।

गुण धर्म और प्रयोग-

रेवन्दचीनी—चरपरी, कडवी, बलकारक, मृदु रेचनी, अजीर्ण, अतिसार, मन्दाग्नि, अरुचि, विड्वध, शीतपित्त ओर दुष्ट व्रण को दूर करती है।

(व परि)

रस—कटु तिक्त। वीर्य-कटु। गुण-वल्य, मृदु विरेचक, यकृतोत्त जक। दोप शमन-कफ है।

(व परि)

नोट—उसारे रेवन्द के सम्बन्ध मे देखिये भाग १ पृष्ठ २४६, २४७। रेवन्द चीनी मे कटु, दीपन, यकृत के लिये उत्तेजक और आनुलोमिक इतने धर्म रहते है। इसको छोटी मात्रा मे देने से लार बढती है। आमाशय मे पाचन रस अधिक पैदा होता है, भूख बढती है, अन्न पचता है और यकृत को उत्तेजना मिलने से पित्त का सचालन ठीक तरह से होने लगता है। इसको छोटी मात्रा मे देने से इसका सकोचक अथवा ग्राही धर्म स्पप्ट दिखाई देने लगता है। लेकिन वडी मात्रा मे इसको देने से यह जुलाब का काम करती है। वडी मात्रा मे इसको लेने से वडी आत की क्रिया बढकर ६ से ८ घण्टे मे दस्त लगते है और पेट मे मरोड पैदा होती है। फिर भी यह सौम्य होने की बजह से आतो मे दाह पैदा नही करती। जुलाब होने के पश्चात् इसका सकोनक धर्म प्रारम्भ होता है और दस्त अपने आप बन्द हो जाते है। इससे पेशाव का रङ्ग गाढा हो जाता हे।

शिथिलता प्रधान अजीर्ण रोग मे जब कभी-कभी दस्त होने लगते है तव इसके अर्क को देने से काफी लाभ होता है। वातरक्त के रोगियो को दस्त दिलाने के लिये यह एक उत्तम वस्तु है। इस रोग मे अगर अन्न का पाचन बराबर न होता हो तो उस हालत मे इसको थोडी मात्रा मे देने से लाभ होता है। छोटे बच्चो को दस्त लाने के लिये इसका उपयोग करने मे कोई हानि नही होती। बवासीर के रोग मे रेवन्दचीनी का जुलाब देने से बहुत लाभ होता है। पुरानी कब्जियत के अन्दर इसका जुलाब नही देना चाहिये। छोटे बच्चो को अधिक दूध पीने की वजह से अगर पेट मे दूध सड जाय और अम्लता बढ कर दस्त लगने लगे तो ऐसी स्थिति मे रेवन्द चीनी को देने से सडा हुआ दूध बाहर निकल जाता है, अम्लपित्त कम हो जाता हे और पेट साफ हो जाने के पश्चात् दस्त अपने आप वन्द हो जाते है। पहिले दस्त लगाकर उसके पश्चात् कब्ज करने वाली दो ही औपधिया दृष्टिगोचर होती है। एक रेवदचीनी और दूसरा अरण्डी का तेल, दोनो ही सौम्य स्वभावी होते है। लेकिन अरण्डी का तेल क्षार स्वभावी न होने की वजह से पेट की



अम्लता को कम नही करता । मगर रेवन्द चीनी पेट की अम्लता को भी कम करती है। इसलिये बच्चो के लिये अरण्डी के तेल की अपेक्षा रेवन्द चीनी विशेष उपयोगी होती है। रेवन्द चीनी का यह क्षार स्वभावी धर्म बहुत सौम्य होता है। इसलिये अगर इसके इस धर्म को कुछ उग्र करना हो तो सज्जीक्षार के समान कोई क्षार-स्वभावी पदार्थ इसमे मिला देना चाहिये । रेवन्द चीनी को लेने से पेट मे मरोड भी चलती है। इसके इस दोष को दूर करने के लिये इसमे सोठ के समान कोई सुगन्धित पदार्थ मिलना चाहिये। पेट के अन्दर ग्रहणी मे अम्लता बढने से अगर दस्त होते हो तो उस अम्लता को दूर करने के लिये रेवद चीनी का जुलाब बहुत उपयोगी होता है। रेवन्दचीनी को ठण्डे पानी मे पीसकर सूजन पर लगाने से भी लाभ होता है। (व० च०)

यूनानी मतानुसार-

प्रकृति--समिश्र वीर्य, क्योकि विरेक लाती है और कब्ज भी पैदा करती है। गुण-कर्म-बाहिर प्रयोग से रेवद चीनी लेखन, सक्षोभजनन, विलयन और वेदना स्थापन कर्म करती तथा आतरिक प्रयोग से फुफ्फुसो मे कफ निर्हरण करती, अल्प प्रमाण मे खिलाने से अन्त्रामाशय को शक्ति देती, वायु का उत्सर्ग करती, कब्ज उत्पन्न करती, और सम्पूर्ण शरीर को शक्ति प्रदान करती है किन्तु अधिक प्रमाण मे उपयोग करने से पीले रङ्ग के पतले विरेक लाती और अत मे कब्ज करती है। यकृत पर इसका बल्य और उत्तेजक प्रभाव होता है। इसके अतिरिक्त यह मूत्र एव आर्त्तव का प्रवर्तन करती है। यह प्रधानत पिच्छिलदोष विरेचनीय है।

आधुनिक मतानुसार गुण-धर्म-

कर्नल चोपडा के मतानुसार रेवदचीनी पश्चिमी चिकित्सा शास्त्र के अन्दर एक विरेचक द्रव्य की तरह बहुत बडी तादाद मे उपयोग मे ली जाती है। बच्चो के रोगो मे यह एक बहुत उपयोगी और घरेलू औषधि मानी जाती है। मतलब यह है कि यह गृहस्थ के घर मे प्रतिदिन काम मे आने वाली वस्तु है। यह वस्तु विशेष करके चीन से परसिया होती हुई हिन्दुस्तान मे आती है।

हिमालय मे पैदा होने वाली रेवन्द चीनी, चीनी रेवद चीनी की अपेक्षा गहरे रङ्ग की और बनावट मे कुछ भद्दी होती है। हिमालय की रेवन्द चीनी का चूर्ण कुछ भूरापन लिये हुये पीले रङ्ग का होता है इसीसे यहा की रेवदचीनी चीनी रेवदचीनी से हल्की समझी जाती है। देशी रेवद चीनी दूसरी रेवद चीनियो से विरेचक तत्वो मे किसी प्रकार कम नही है।

मात्रा-मूल चूर्ण की मात्रा १ से ५ रत्ती। विरेकार्थ मूल चूर्ण की मात्रा ५ माशा। अनुपान-जल।

इसका बाह्य प्रयोग त्वचा के रोगो को मिटाता है। शोथ को दूर करता है। इसे सिरके मे पीसकर झाई, दाद, त्वचा के दाग और धब्बो पर लगाया जाता है। लेप शोथ को हटाता है। (आयुर्वेदीय द्रव्य गुण विज्ञान)

१ बाल रोग—इसके साथ (Grey Powder) मिलाकर सेवन कराने से बालको का दात निकलते समय का उदरामय एव पुरातन रक्तामाशय (पेचिश), कासला सर्दी आदि रोग मिटते है। इसको Soda Bicarbonate अथवा Mag Carb के योग से व्यवहार करने से बालको का बदहजमी के कारण होने वाला उदरामय आराम होता है।

२ अतिसार, आमातिसार और प्रवाहिका—गर्मी के दिनो मे अधिक धूप मे फिरने या बिगडने लगे हो ऐसे फल खाने से उत्पन्न अतिसार (ग्रीष्मकालीन अतिसार-Summer Dirrhoea), आमातिसार, जिसमे मल के भीतर कच्चे सफेद आम जाती है और मल मे से दुर्गन्ध आती है उन सब पर और पेचिश के आरम्भ मे विरेचन देने के लिये रेवन्द चीनी अन्य सब औषधियो से श्रेष्ठ है। कारण, इसके द्वारा अन्त्रस्थ बद्ध मल निकल जाता है। फिर इसकी सकोच क्रिया द्वारा अतिसार का दमन होता है। इस विकार पर सोडाबाई कार्ब और सोठ मिश्रित चूर्ण विशेष लाभदायक है। मल निकल जाने के पश्चात् भी उदर पीडा और अतिसार रह जाय, तो अफीम मिश्रित औषधि देनी चाहिये।

२ मूत्रकृच्छ्रता—मूत्र विरेचन के लिये रेवन्द चीनी हितकारक है। रेवन्द चीनी, शोरा, शीतल मिर्च और



छोटी इलायची के दाने, इन चारो को मिला ६–७ माशे चूर्ण दूध की लसी के साथ सेवन कराने से मूत्र शुद्धि हो जाती है।

सुजाक, मूत्रकृच्छ्र, मूत्रदाह होने से वार–वार थोडा मूत्र आते रहना आदि विकारो पर यह हितावह है।

४. कामला—पित्तनलिका मे पित्ताश्मरी रुक जाने पर कामला होता है। ऐसे समय पर रेवन्दचीनी का सेवन दूध के साथ कराने मे वह पित्तस्राव वढा अश्मरी को दूर हटा देती है। फिर पित्तस्राव अपने मार्ग पर नियमित गति करने लगते हैं जिससे कामला दूर हो जाता है।

५. एक्सट्रेक्टम—किसी वानस्पतिक द्रव्य का वह रस जो ताजी जडी–बूटी से निकालकर या उसका काढाकर पुन मन्दाग्नि पर उडाकर गाढा कर लेते हैं। उसे रस क्रिया, सत्त्व, सार, खुलासा, रुव्व कहते हैं। एक्सटैक्ट आफ रहुबार्व (Extaract of Rhubarb) रेवन्द चीनी का सत, पीतमूली सत्व। –आ० वि० कोष से

विशिष्ट योग—

१ रेवन्द चीन्यादि अर्क—मूल का चूर्ण २ ओंस, छोटी इलायची के दाने और धनिये का चूर्ण २–२ ड्राम, उत्तम शराव (४५%) २० औंस लेवे। सव चूर्ण को शराव मे भिगोवे। फिर पर्कोलिशन यन्त्र द्वारा टपका लेवे। १८ ओंस मे कम हो, तो शेष रहे हुये रेवन्द चीनी चूर्ण मे और शराव मिलाकर चुवा लेवे। फिर २ औंस शहद मिलाकर २० औंस पूरा करे। मात्रा–½ ड्राम। वार वार देने के लिये।

एक समय के लिये २ से ४ ड्राम।

फाण्ट–चूर्ण १ भाग को उबलते हुये जल २० भाग मे डालकर १५ मिनिट वन्द रक्खे। फिर छान लेवे। मात्रा– ½ से १ औंस।

सत्त्व—छलनी मे चूर्ण डाल ऊपर (६०%) शराव मिलावे। जव तक सत्त्व निकलता रहे, तव तक शराव डालते जाय। तले मे से ऊपर रही शराव निकाल लेवे। फिर शेष थोडी शराब जो सत्त्व के साथ रही है, उसे सुखा लेवे। मात्रा २ से ८ ग्रेन।

२ रेवन्दचीन्यादि वटी—मूल का चूर्ण २५ भाग, एलुआ १० भाग, विजावोल १४ भाग, सावुन १४ भाग, पीपरमेण्ट का तैल २ भाग तथा शरवत २५ भाग मिलाकर २–२ रत्ती की गोलिया वना लेवे। मात्रा—१ से २ गोली तक।

उपयोग—मलावरोध और अपचन मे यह गोली रात्रि को सोने के समय देने से सुवह उदर शुद्धि कराती है।

३ रेवन्द चीन्यादि चूर्ण—मूल का चूर्ण ६ तोले, सोठ ३ तोले, मोडावाई कार्ब २ तोले तथा इलायची के दाने १ तोला लेकर मिला लेवे। मात्रा—दो से वारह रत्ती तक।

उपयोग–रेवन्दचीनी का उपयोग वालक और वडे सवके लिये निर्भय रूप से उदर शुद्धि के लिये हो सकता है। अपचन, आमातिसार, प्रवाहिका की प्रथमावस्था, शोथ, कामला, शीतपित्त, वात रोग और दुष्ट व्रण पर व्यवहृत होता है।

ज्वरादि रोग मे निर्वलता अधिक होने पर विरेचन के लिये रेवन्दचीनी की व्यवस्था की जाती है। स्वाभाविक मलावरोध दूर करने के लिये रात्रि को भोजन के वाद रेवन्द चीन्यादि चूर्ण अल्प मात्रा मे दिया जाता है।

अर्श रोग मे भी आवश्यकता पर विरेचनार्थ यह दिया जाता है। किन्तु आकुचन क्षमता के सशोधनार्थ रात्रि को दूध के साथ दो ड्राम एरण्ड तैल देना चाहिये।

शिथिलता प्रधान अजीर्ण रोग मे कभी कभी पतले दस्त लग जाते है। ऐसे रोगियो के लिये रेवन्द चीनी अति उपकारक है। अजीर्ण के रोगी को रेवन्द चीनी के अर्क या चूर्ण का सेवन स्वल्प मात्रा मे प्रतिदिन कराने से विलक्षण लाभ पहुँचाता है। शीतपित्त मे वालक और स्त्रियो के रक्त की शुद्धि करा रोग को निवृत्त कराने के लिये रेवन्द चीनी विशेष उपयोगी औषध है। वात रोग मे पीडा तीव्र न हो, ऐसी निरामावस्था मे भावी आक्रमण के दमनार्थ रेवन्दचीनी प्रशस्त औषधि है। इस रोग मे अन्न पचन न होता हो, तो प्रतिदिन रात्रि को सोने के समय रेवन्द चीन्यादि चूर्ण सेवन कराते रहना चाहिये। यह विरेचन छोटे वच्चे को देने मे भी हानि का भय नही है। अस्थिमार्दव पीडित वालक जिसकी हड्डिया अतिकम

जोर या मुडी हुई हो, शरीर अस्थि पञ्जरवत् प्रतीत होता हे, उदर बडा हो, उसके लिये भी यह हितकर हे ।

यूनानी विशिष्ट योग–

रेवन्द चीनी, नौसादर, कलमी शोरा, बालछड, तेजपात प्रत्येक समभाग । इनको पीसकर कपडछन चूर्ण बना लें । मात्रा–४ रत्ती । उपयुक्त अनुपान मे सेवन करे । यह यकृत् वृद्धि मे लाभकारी है ।

५ इन्द्री जुलाब चूर्ण –कलमी शोरा, रेवन्द चीनी प्रत्येक ७ माशा, यवक्षार ६ माशा, जीरा सफेद १ तोला, खाड १२ तोले । इनका चूर्ण करे । मात्रा—६ माशे । गाय के दूध की लस्सी के साथ प्रयोग करे । मूत्र द्वारा दोषो को बाहर निकालता है । सुजाक मे उपयोगी है । जलन, टीस को बन्द करके मूत्र खुलकर लाता है ।

६ रेवन्दचीनी, वच, शहादाना, करफस बीज, सौंफ, अनीसून, अजवायन खुरासानी ५–५ तोला, मधु ३ पाव, खाड सवा सेर सबका चूर्ण कर मधु तथा खाड का पाक करके अच्छी तरह मिलादे । मात्रा–½ से १ तोला । प्रत्येक शोथ मे उपयोगी है । यकृत् विकार मे विशेप लाभप्रद है ।

७ कलमी शोरा, जोहर नौसादर १–१ तोला, रेवन्द खताई ५ तोला, बालछड, तमाल पत्र, काली मिर्च १–१ तोला, सब औषधियो का बारीक चूर्ण करे । मात्रा—१ से २ माशा । कासनी क्वाथ से । गुण—यकृत् के सब रोगो मे एक विशेप उत्तम योग है ।

—वनौषधि शतक से साभार

८ शरबत रेवन्द—रेवन्द ३५ माशा, त्रिवृत, गारीकून, बिमफाइज, कासनी बीज प्रत्येक १७ माशा, सोठ २ रत्ती, खाड सफेद २६ तोला १ माशा, सबका क्वाथ कर खाड मिलाकर पाक करे । मात्रा-२ से ४ तोला । गुण–यकृत्, प्लीहा मे उत्तम हे, विबध नाशक हे ।

६ रेवन्द वटी—सकमूनिया, जलापा, रेवन्द असारा, मस्तङ्गी रूमी, इन्द्रायण का गूदा, मुसब्बर २-२ तोला, सोठ, मुरमुक्की १-१ तोला, सबको पीसकर जल से २-२ रत्ती की वटी करे । मात्रा-१ से २ वटी रात्री को सोते समय दूध व जल से प्रयोग करें । गुण-कोष्ठबद्धता नाशक है, यकृत् विकारो मे अत्यन्त उत्तम है । आन्त्र का शोधन कर आरोग्य प्रदान करती है, शीघ्र प्रभावी विरेचन है ।

—यू. सि. नि ना

१० हब्ब सलादीन–द्रव्य और निर्माण विधि—[illegible] दाना, सफेद निशोथ, रेवन्द खताई प्रत्येक १ तोला, शुद्ध जमाल गोटे के बीज की गिरी २० दाना । इनको कूट-छानकर बिही दाने का लुआब ५ माशा मे मर्दन करके मूग प्रमाण की गोलिया बनावे । मात्रा और सेवन विधि–२ गोली से ६ गोली तक ताजे पानी मे सेवन करे । यह अत्यन्त सरलतापूर्वक कब्ज को दूर करती है । स्वर्गवासी हकीम अजमल खा के गुरु का कृत प्रयोग औषधि है ।

११. अकसीर जिगर—द्रव्य और निर्माण विधि—रेवन्द खताई, देशी नौसादर प्रत्येक १ तोला, कलमी शोरा २ तोला, लोहभस्म ६ माशा । सबको पीसकर कपडछन चूर्ण बनायें ।

मात्रा और सेवन विधि—१ रत्ती सवेरे और १ रत्ती सायकाल उपयुक्त अनुपान से सेवन करे ।

गुण तथा उपयोग—यह यकृत का सुधार करती है तथा जीर्ण ज्वर और यकृत् विकार जन्य व्याधियो मे उपकारी है ।

१२ दवाए यरकान—द्रव्य और निर्माण विधि—रेवन्द खताई १ तोला, नौशादर १ तोला, कलमी शोरा २ तोला । सबको कूट छानकर ६ माशा लोहभस्म मिलाकर कपडछन चूर्ण बनायें । १–१ रत्ती की मात्रा में १० तोला गावजवानार्क और ३ तोला शर्बत बजूरी के साथ सवेरे शाम उपयोग करे । यह यकृत् का सुधार करती हे । यदि यकृत् या पित्त प्रणाली शोथ या अवरोध के कारण कामला रोग हो तो उसके लिये अनुपम भेपज है ।

१३ कवदी—द्रव्य और निर्माण विधि—रेवन्द चीनी नौशादर, कलमी शोरा, बालछड, तेजपत्ता, प्रत्येक समभाग । इनको पीसकर कपडछन चूर्ण बनाकर रखलें ।

मात्रा और सेवन विधि—४ रत्ती उपयुक्त अनुपान से सेवन करें ।

गुण तथा उपयोग— यह यकृत् वृद्धि मे लाभकारी हे ।

—यू. सि यो स

अहितकर—निर्बल व्यक्तियो को इसका विरेचन अहितकर है।

निवारण—वबूल का गोद, कतीरा, वहीदाने का लवाव आदि।

प्रतिनिधि—आमाशय और यकृत् रोगो के लिये गुलाव के फूल।

मात्रा—कब्ज आदि के लिये १ रत्ती से ३ रत्ती तक। विरेचन के लिये १॥ माशा से २ माशे तक।

—यू द्र वि से साभार

रोजमरी (Rosmarinus officinalis)

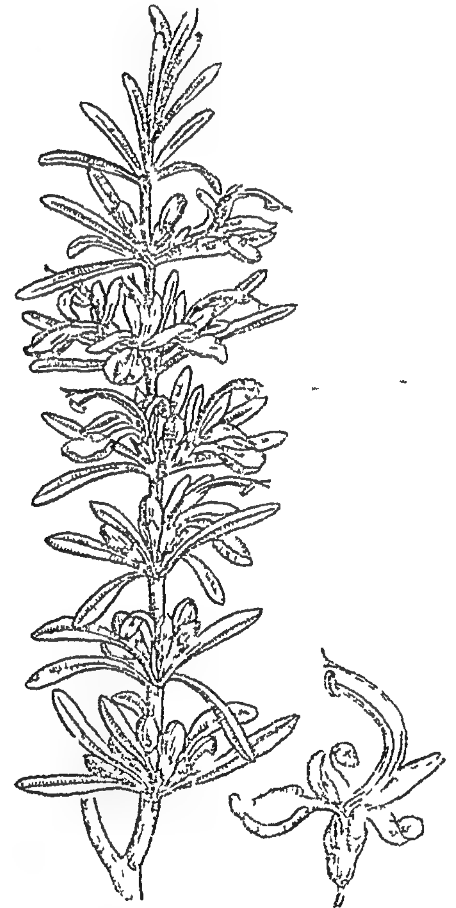
यह तुलसी कुल (Labiatac) का एक छोटा सुगन्धित क्षुप है। यह अधिकतया पहाडो पर और कडे एव अल्प जल वाले सूखे जगलो मे होता है। नदी आदि के तट पर भी होता है, बहुत जगह इसे वागो मे लगाते है। इसका क्षुप एक गज से भी अधिक ऊचा, पत्र लम्बे, वारीक, समूह वद्ध और कालाई लिये, शाखाये कडी, फूल सुगन्धित कुछ कुछ आसमानी और सफेद पत्तियो के वीच से निकलता है, फल कडा और कुछ गोल होता है। वीज राई के दानो से भी छोटा, तिक्त एव तीक्ष्ण, कुछ कसेला और सुगन्धित होता है।

उत्पत्ति स्थान—

यह स्पेन, मिश्र देश, दक्षिणी यूरोप, एशिया माइनर, उत्तरी अफ्रीका मे होता है। भारत के वगीचो मे इसकी कृषि की जाती है।

नाम—

हि—रोजमरी। अरवी—इक्लीलुल जवल,उवेसरान। फा—गुले सुर्ख वहरी(सामुद्र गुलाव)अ-रोजमरी(Rosmari) ले—(Rosmarinus officinalis Linn) रोजमरिनस आफिसिनेलिस।



रोजमरी
ROSMARINUS OFFICINALIS Linn

रासायनिक संगठन—

इसकी पुष्पवान शाखाओ से एक प्रकार का वर्णरहित हलका उत्पन्न तेल प्राप्त होता है। इसकी गंध रोजमरी की तरह सुगन्धित उष्ण और आपेक्षिक गुरुत्व ० ९०० से ० ९१५ तक होता है। यह तेल (Oil Rosmari) ब्रिटिश फार्माकॉपिया मे सम्मलित है।

प्रयोज्याङ्ग—पत्र, पुष्प और तैल।

गुण धर्म और प्रभाव—

रोजमरी के अन्दर वायुनाशक, उत्तेजक और सकोच विकास प्रतिबधक ये तीन धर्म उत्तम होते हैं। उदरशूल, कोष्ठ वायु ओर वायु गोला मे इसका उपयोग किया जाता है। भूतोन्माद के अन्दर अगर उपरोक्त लक्षणो की प्रधानता हो तो इसको देने से लाभ होता है।

यूनानी मतानुसार गुण धर्म—

प्रकृति—तीसरे दर्जे(अन्ता की के अनुसार दूसरे दर्जे)

मे उष्ण एव रूक्ष है ।

गुण कर्म—वातानुलोमन, श्वयथु विलयन, अवरोधोद्घाटक, अश्मरीनाशक, मूत्रजनन, आर्तवजनन और कफोत्सारी है ।

उपयोग—इसके सेवन से वायु का अनुलोमन होता है । यह दमे और आर्द्र कास मे गुणकारी है । इसके जीर्ण होने पर यह फुफ्फुस का शोधन करता है । यह शीतल, हृत्स्पदन और जलोदर मे जिसके साथ अधिक दाह और पिपासा नही, गुणकारी है । यह यकृत प्लीहा के अवरोधो का उद्घाटन करता, यकृच्छूल, अश्मरी और गोदावी(वातज) कामला को नष्ट करता है, मूत्र और आर्तव का प्रवर्तन करता, तथा मूत्र मार्ग एव गर्भाशय का शोधन करता है । इसके सेवन से जीर्ण शोथ विलीन हो जाता है । नेत्र के चारों ओर इसका लेप करने से शीतजनित नेत्र शूल दूर हो जाता है ।

अहितकर—उष्ण प्रकृति में शिर शूल जनक है ।

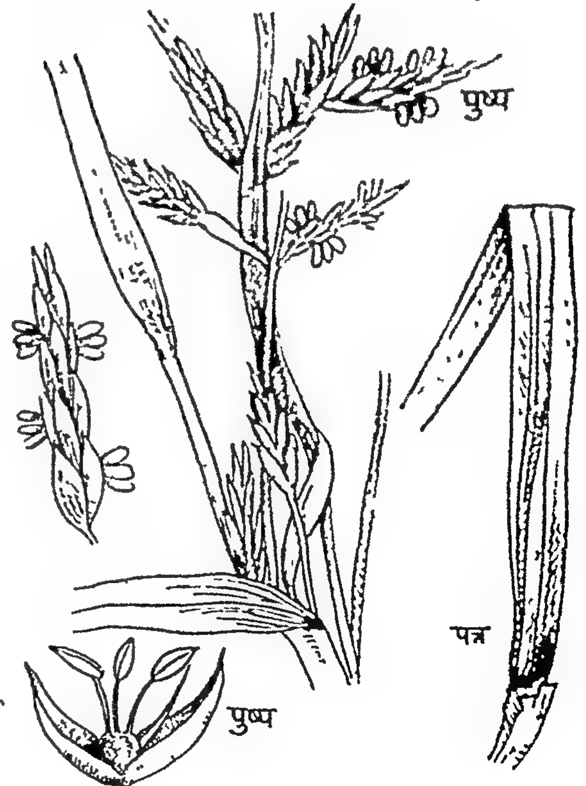
निवारण—सिकंजबीन । मात्रा १० माशा पत्र चूर्ण । तेल ३ से ५ बूंद तक ।

(गृ द्र वि)

रोशा घास (Cymbopogon schoenanthas)

यह गुड्डच्यादि वर्ग और धान्य कुल (Gramineae) का तृण होता है ।

सिम्बोपोजन = नाव और पक्षी के पर सदृश आकार वाला, स्कीनेन्थस =सुगन्धित पराग कोष युक्त । एण्ड्रोपोजन—मञ्जरी नर मादा विभागवाली । बहु वर्षायु, सुगन्धित तृण । मुख्य शलाका ३ से ६ फुट ऊची, खडी । पान लम्बे, क्रमश पतले अग्रभाग वाले, तीक्ष्ण नोकदार । पुष्प युग्मो मे उत्पन्न । पुष्प रचना विभाजित- १ से २ फुट लम्बी सघन शलाका, मञ्जरी विषम ३ — ४ पर्व युक्त । अन्य ४-६ पर्वयुक्त, वृन्तरहित । उप मञ्जरी ¼ इच लम्बी, छोटी, चोच सदृश । आच्छादक पुष्प कोष मञ्जरी अनुरूप लम्बा, वृन्त युक्त । उप मञ्जरी ३ – ४ युग्मो मे हरी । वृन्त रहित , उप मञ्जरी बहुत छोटी । रोशा घास एक सुगन्धित घास होता है । इसके पौधे ३ से ६ फीट तक ऊचे होते हैं । जिस जगह पर यह पैदा होता है वहा इसके पडाव के पडाव पडते है । इसके पत्ते नीचे से चौडे और फिर क्रमश पतले होते हुये ऊपर वारीक नोक वाले होते है । इसके पौधे के सिरे पर फूल की चवरी आती है । इसके फूल का रग ललाई लिये पीला— भूरा कई प्रकार का होता है । पान–फूलो को मलने से उस मे से उत्तेजक मनपसन्द सुगन्ध आती है । यह घास इसकी सुगधी के कारण बहुत प्रसिद्ध है । इस घास को ढोर नही खाते । पुष्प काल-वर्षा ऋतु । फल काल– शीत ऋतु ।



उत्पत्ति स्थान—

यह घास मध्य भारत, सिन्धु, पजाव, काटियावाड़, कच्छ, दक्षिण मालवा, निमाड और राजस्थान में होता है ।

इस घास को पशु दूसरा चारा के नहीं मिलने पर खाते है। यह घास गजिओ (वागरो) मे बहुत वर्षो तक विना बिगडे रहता है और दुष्काल के समय पशुओ के खाने के काम मे आता है पश्चिमी और पूर्वी बगाल मे कृषि भी की जाती है। बरार मे इसके तेल को 'तिरवाडीचे तेल' (oil Geranium) कहते है।

नाम—

स०—रोहिष, रोहिष तृण, सुगन्धिका, धूपगन्धिका, कत्तृण। हि०— रोसाघास, रूसा, गंधेज घास, मिरचिया गन्ध, पालखडी। ब०—अगिया घास, गन्धवेना, राम कर्पुर। बम्बई—रोहिष। गु०—रोशाघास, रूप, रोशडो। म०—रोहिष। प०—रानुश। सहारनपुर—मिरचागन्ध। राज०—रोहीघास, रोही को चारो। कर्णा०—किरुगजणी तै०—काम चिगड्डि, तुरिकर। मल०—ता०—शकनारु-पिल्लु। ओत्कली—पालखारि। खवालमामून। अ०—अजखर। इ०—Rusa grass ले०—Cymbopogon schoenanthus (linn) spreng (सिम्बो पोजन स्कीनेन्थस)प्राचीन सज्ञा—Andropogon Schoenthanhus linn (एण्ड्रोपोजन स्कीनेन्थस) प्रयोज्याङ्ग—मूल।

गुण धर्म और प्रयोग—

कत्तृण (रोहिष) कसैले, कडवे, पचने मे चरपरे तथा हृदयरोग, कंठरोग, रक्तपित्त, शूल, खांसी, कफ और ज्वर-नाशक है। (भा० नि०) कत्तृण—(रोहिष) चरपरे, कडवे कफनाशक तथा शस्त्रशल्यादि दोष और बाल ग्रह निवारक है। (शा० नि०)

कैयदेवजी के मतानुसार कत्तृण रस मे चरपरा, कडवा, उष्णवीर्य, विपाक मे चरपरा, वातकफनाशक, रक्त-विकार, कण्डू, हृदयरोग, कृमि, कास, ज्वर, श्वास, शूल, अजीर्ण और अरुचिका नाशक है धन्वन्तरि निघण्टुकार ने विसूचिकाहर भी कहा है। चरक सहिता मे स्तन्यजनेन दशेमानि मे इसका उल्लेख किया हे।

नव्य मतानुसार—

डा० देशाई के मतानुसार रोहिष तेल उष्ण, स्वेदजनन मूत्रजनन, ज्वरघ्न, उत्तेजक और चेतनाप्रद है। नूतन आमवातज वेदना और गज (खालित्य) में इसका मर्दन कराया जाता है। प्रतिष्याय और कफ ज्वर मे रोहिष फाण्ट (चाय) देने से लाभ होता है।

डा० कीर्तिकर ने लिखा है कि आमवातज शूल और वातनाडी शूल में रोहिष तृण तेल का मर्दन कराया जाता है। (गा० औ० र०)

रोहिषघास—बलकारक, उत्तेजक, स्वेदल और वातघ्न है। ज्वर मे सूजनयुक्त ग्रन्थियो मे अतिसार, योषापस्मार कफ रोगो मे प्रयोग की जाती है। रोहिष के मूलका ताव मे शरीर पर लेप किया जाता है। (डा० खोरी)

समग्रक्षुप का क्वाथ ज्वरघ्न है। सर्दी देकर आने वाले ज्वर मे मैंने इसका प्रयोग किया है। (अ० स० (बोली चन्द्रसेन)

घास मे से स्प्रीट निकलती है जो ज्वर और अजीर्ण में उपयोगी है। (स्टुयु अर्ट)
(नि० आ० से साभार)

ज्वर वाले को रोहिष घास का तेल पानी मे डालकर पसीना लाने के लिये पिलाते है। इसके पानो के क्वाथ का बफारा पसीना लाने के लिये देते है।

रोहिष घास का तेल सधीवात और पक्षाघात मे मालिश करने मे प्रयोग किया जाता है। (वनस्पति वर्णन)

इस घास का तेल इन्द्रलुप्त रोग मे हितकारी है। इस घास का तेल क्वाथ ज्वरनाशक और सर्दी (प्रति-श्याय) मे हितकारी है, यह एक परीक्षित दवा है। (भा० वनौ० बगला)

उदरशूल—रोशाघास का फाट बनाकर पिलाने से पेट का दर्द मिटता है।

चर्मरोग—इसके तेल की मालिश करने से खाज, खुजली आदि चमडे के रोग मिटते हैं।

हाथ पैरो की शून्यता—इसके पत्तो को पीसकर मालिश करने से हाथ पैरो की शून्यता मिट जाती है। (व० च० से साभार)

रोहिषादि क्वाथ—(भा० भै० र० स० ५६००) रोहिष तृण (गन्ध तृण), धमाशा, वासा, पित्तपापडा, फूलप्रियगु और कुटकी समान भाग लेकर क्वाथ बनावे। इसमे खाण्ड मिलाकर सेवन करने से क्षतज (रक्तष्ठीवन) (रक्तथूकना) शान्त होता है। (प्रत्येक औषध आधा तोला। पाकार्थ जल २४ तोले। शेष क्वाथ ६ तोले। खाण्ड १॥ तोला।)

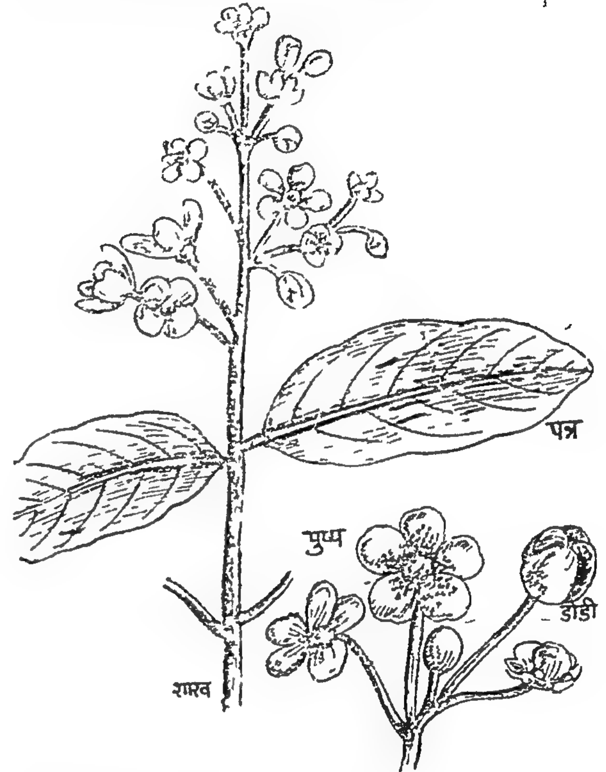
रोहण (Soymida Febrifuga)

यह गुडूच्यादि वर्ग और निंबादि कुल (Meliaceae) का रोहण का वृक्ष बहुत ऊंचा होता है। किन्तु पथरीले पर्वतो मे २० से ३० फीट की ऊंचाई मे देखने मे आते है। इसका तना ३ से १ या २ फीट व्यास मे होता है। ये लम्बा सीधा तरसा के समान और गोल होता है। इसमे शाखाये छोटी छोटी कितनी ही निकली हुई होती है। पान—बहुत लम्बे, नीम की सलाई के समान सलाई पर आये हुये होते है। फूल सूक्ष्म आम के बोर के समान फाल्गुण के अन्त मे आते है और फल मृदगाकृति के सेमल से कुछ छोटे, भूरे लाल रङ्ग के होते है। ये चातुर्मास के अखीर मे पकते है।

मूल—मूल की लकडी सफेद या लाल रङ्ग की होती है। छाल मोटी लाल रङ्ग की और इसके ऊपर का छिलका भूरे रग का खड बचडा होता है। गन्ध—कडवी, स्वाद—कषैला और कडवा होता है।

शाखायें—शाख की लकडी ललाई लिये हुये रङ्ग की और इसके ऊपर की छाल राख के रग की होती है, यह दलदार कुछ पोची और अन्दर से लाल, गन्ध कडवी और स्वाद कषैला, कडवा होता है। शाखाओ की छाल भूरे सफेद रग की होती है। शाख पर अनियमित छारे और सूक्ष्म छीटे होते है। कोमल शाखाये भूरे रग की होती है और उन पर खडे चीरे और सूक्ष्म भूरे छींटो से युक्त होती है।

पत्र—एकांतर आये हुये होते है, ये ज्यादा करके शाखाओ के सिरे पर घने होते है। पान नीम के पत्तो की तरह सली अर्थात् मुख्य शलाका पर आये हुये होते है। ये शलाका मूल मे मोटी और आगे जाकर पतली होती जाती है। ये ८ से २० इंच लम्बी होती है। शलाका—नीम की सली से ज्यादा मोटी होती है। इन पर ६ से २० पान आमने सामने जोडी मे आये हुये होते है। पत्र दड बहुत छोटा और लाल रग का होता है। पत्तो के बीच की नस भी ऊपर की ओर लाल रग की होती है। पान के ऊपर की तह पीलास लिये हुई अथवा गहरे रग की होती है और



नीचे की तह सफेद होती है। कोमल पत्ते लाल और ये बहुत सुन्दर दिखाई देते है। किनारी पत्र दड के पास बहुधा विषम होती है और सिरा गोलाई लिये ज्यादा करके बुट्टे या अन्दर बैठने खाचे वाले होते है।

पान—लम्ब, गोल और दोनो तह पर घोले, चपटे, गोल, सूक्ष्म छींटे लगे हुए होते है। पान १½ से ६ इंच लम्बे और आधा से चार इंच चौडे होते हैं। पान की गंध और स्वाद नीम के जैसे होते है।

फूल—पुष्प मण्डल पत्र कोण से और शाखाओ के किनारे पर आये हुये होते है। ये पान जैसे या इनसे भी कभी लम्बे होते है। पुष्प मण्डप की मुख्य सली सुतली मे सलेट पैन जैसी मोटी होती है। इस पर झिणी झिणी शाखा, प्रति शाखाये आतरे आई हुई और माखाओ से युक्त होती है। ये फीके हरे रङ्ग की और फूल हरापन

लिए सफेद का ½ इन्च मे २ ताजन व्यास का और नीम के फूल की गन्ध से मिलती मीठी गन्ध वाले होते है।

पुष्प बाह्य कोष—हरापन लिए सफेद पाच सूक्ष्म पत्रो से बना हुआ होता है। ये पखडियो से बहुत छोटा होता है। पत्र पखडियो से दूर आए हुए और गोल छिन्न भिन्न कोर वाले होते है।

पुष्पाभ्यन्तर कोष—की पखडिये ५ होती है। ये अलग, नीचे से तग और सिरे पर चौडी होती है। उनकी किनारी तीनो ओर से अन्दर की ओर मुडी हुई और दाते दार तथा छिन्न भिन्न होती है।

पुंकेसर—१० होती है। ये चक्राकार आई हुई होती है। इसके ततु पखडियो के समान सफेद रग के सिरे पर दो भाग वाले होते है। इन दो भागो के बीच मे सूक्ष्म पराग कोष पीलापन लिये भूरे रग के आये हुए होते है परन्तु केसरिया रङ्ग की होती है।

स्त्री केसर १ होती है। गर्भाशय ५ पोल का हरे रङ्ग का होता है। नलिका छोटी और सिरे पर चौडी और रग भरे मुख वाली होती है।

फल—बीच मे चौडे और दोनो सिरो पर थोडे सकडे हरे, चमकीले और पीलास लिये हरे रङ्ग के होते है। जब ये पकते है तब भूरे लाल रङ्ग के और सुखाने पर काले हो जाते हैं। फल दण्ड इसके प्रमाण मे मोटी और भूरे लाल रङ्ग की होती है। फल के बीचो बीच पोचा गाभा (गूदा) होता है बाजू पर पाच परत आई हुई होती है। फल के बाहर की ओर पाच खडी नोक होती है। फल पकता है तब उन नोको पर से इसके परत अलग होते है और बीजो को निकलने का मौका मिल जाता है। फल को आडा काटने से अन्दर के पाच पड और बीज का गूदा स्पष्ट दीखता है और इसमे इसके पड और इसमे बीज किस प्रकार की सुन्दर कारीगरी से रखे होते है, इसका ध्यान इसको देखने से अच्छी तरह आता है। इसके बीच के गूदे मे बीचो बीच पाच भूरे रङ्ग के बिन्दुओ का चक्र आया हुआ होता है और इसके बीच मे एक और बिन्दु अलग से होता है। इस गूदे के पाच कौने बाहर निकले हुये होते है। गाभे के प्रत्येक कौने पर ऊपर मूजिब कारीगरी होती है (वास्तव मे यह फल बीच मे आडा काटकर देखने योग्य है)।

इस फल की अन्दर की परत और बाहर की फाको का अन्दर का भाग सफेद होता है, किन्तु पीछे से ये भी सफेदी लिए हुये हो जाता है। फल की अन्दर की सुवास सफर जल के समान किन्तु स्वाद कडवा होता है।

बीज—के ऊपर मकडी के जाले के समान पोलापड होता है। बीज—चपटे, ½ इच लम्बे और कुछ कम चौडे होते है। इस बीज के दोनो सिरे, इस पर आया हुआ सफेद पड का किनारा बढाहुआ होता है। ये अन्दाजन—⅛ से ½ इच लम्बा होता है। (ऐसे किनारे वाले बीज को अग्रेज वनस्पति शास्त्री "पख वाले बीज' [Winged seeds] यह नाम दिया है। मीगी पतली, चमकती और कडवी होती है। परन्तु कडवापन जीभ पर लम्बे समय तक नही रहता।

प्रयोज्याङ्ग—सर्वाङ्ग, विशेषकर त्वक्।

उत्पत्ति स्थान—

रोहन के वृक्ष भारत के दक्षिण, पश्चिम, मध्य उत्तरभाग, राजस्थान की अरावली पर्वत श्रेणियो, पजाब, मिर्जापुर की पहाडियो, छोटा नागपुर, सीमाप्रान्त आदि के खुश्क जगलो मे उपलब्ध होते है।

नाम—

स०—मासरोहिणी, रोहिणी, अग्निरुहा, अतिरुहा, चन्द्रवल्लभा, चर्मकशा, कशामासी, लोमकर्णी, वीरवती, रसायनी, पतरङ्गा। हि०—रोहिणी, रोहण, रोहन, रक्त-रोहण, दुक। म०—रोहिणी, मासरोहिणी, पोटर। ब०—रोहन, रोहिणा। बम्बई—रोहन। गु०—रोहणी। काठि—रोना। ता०—सोमादमम्, सेम्मारसु, सुमी। ते०—सोमीदा कन्नड—सुम्त्री, स्वामीमारा। उर्दू—रोहन। इ०—Red Wood Tree ले०—Soymida Febrifuga A guss (सोय मिडा फेब्रिफ्यूगा)

निरुक्ति—मास रोहिणी—मांस को भरती है अर्थात् मांस कट गया हो उसको फिर से जल्दी ले आती है। याने गहरे व्रणो को जल्दी भरने वाली है।

रोहिणी—जो घाव को जल्दी रोपण करती है।



चर्मकरी—व्रण को जल्दी भरकर नयी चमडी जल्दी ले आती है इसी से चर्मकरी कहते है ।

रासायनिक संगठन—

इसकी छाल मे एक कडवा, रङ्गरहित और राल पूर्ण पदार्थ पाया जाता है। यह पानी मे नही घुलता लेकिन अलकोहल मे घुल जाता है। इसका स्वाद बहुत कडवा होता है। इस पदार्थ के सिवाय इसकी छाल मे कषाय अम्ल भी बहुत रहते है।

मात्रा—इसकी छाल के चूर्ण की मात्रा ३० रत्ती की है जो दिन मे ३ बार दी जाती है। इसकी छाल का फान्ट बनाकर २ तोले की मात्रा मे दिया जाता है।

(व० च०)

गुण धर्म और प्रयोग—

सक्षेप मे—रस—कटु, कषाय। वीर्य—शीत। विपाक—कटु। दोषघ्न—त्रिदोष नाशक है।

मासरोहिणी—वीर्यवर्द्धक, सारक और त्रिदोपनाशक है। (भा० प्र०)

मासरोहिणी—व्रण को हितकारी, उष्ण तथा रक्त-पित्त और सर्व प्रकार की सग्रहणी को दूर करती है।

रोहिणी—वातनाशक, कास निवारक, श्वास हारक और रुधिर विकार विनाशक है।

(ध० भा० नि०)

दोनो प्रकार की रोहिणी—शीतल, कषैली, कृमि नाशक, कठ शोधक, रुचिकारक और वात निवारक हैं।

(रा० नि०)

यूनानी मतानुसार—

यूनानी मत से रोहण की छाल आतो का सकोच करने वाली और ज्वर मे लाभदायक होती है।

रोहिणी की छाल मे उत्तम सकोचक, कटु पौष्टिक और थोडी मात्रा मे पार्यायिक ज्वरनाशक धर्म रहते है। बडी मात्रा मे इसको देने से चक्कर आ जाते है और आतो की शिथिलता मे यह बहुत उपयोगी वस्तु है। इसकी छाल का काढा बनाकर देने की अपेक्षा इसका चूर्ण विशेष लाभदायक होता है।

प्राचीन—अतिसार मे इसको लेने से उत्तम परिणाम दृष्टिगोचर होता है।

मलेरिया ज्वर अथवा पार्यायिक ज्वरो मे और उनसे होने वाली कमजोरी मे, पुराने और हठीले अतिसार मे, प्रवाहिका मे तथा दूसरे ऐसे रोगो मे जिनमे सकोचक औषधि की जरूरत होती है उस वनस्पति का उपयोग सफलता के साथ किया जा सकता है।

कोमान के मतानुसार—

इस वृक्ष की छाल कटु-पौष्टिक और मलेरिया के विष को नष्ट करने के लिये सिंकोना की छाल के समान मानी जाती है। हमने इसकी छाल का काढा १ औस की मात्रा मे दिन मे ३ बार मलेरिया ज्वर के रोगियो को दिया और उसमे यह लाभदायक पाई गई।

मगर इसकी क्रिया बहुत धीरे धीरे और सिंकोना के उपकारो की अपेक्षा बहुत ही कम दर्जे मे पाई गई।

इसकी छाल का काढा ओक की छाल के प्रतिनिधि के रूप मे व्रणो को धोने, एनिमा देने और कुल्ले करने के काम मे लिया जा सकता है।

उपयोग—

१. **गठिया**—इसकी छाल का क्वाथ पिलाने से और इसकी छाल की पुल्टिस बांधने से गठिया की सूजन मिटती है।

२. **योनि का व्रण**—इसकी छाल का क्वाथ बनाकर उससे धोने से योनि के व्रण मिटते है।

३ **मुंह के छाले**—इसकी छाल के क्वाथ से कुल्ले करने से मुह के छाले मिटते है।

४. **अतिसार**—इसकी छाल के चूर्ण की फकी देने से पुराना और हठीला अतिसार और आमातिसार मिटता है।

५ **मलेरिया ज्वर**—इसके चूर्ण को ३० रत्ती की मात्रा मे दिन मे ३ बार देने से मलेरिया ज्वर छूट जाता है। मगर यदि मात्रा अधिक हो जाती है तो स्नायु जाल मे विकार पैदा होकर पहले चक्कर आते है और फिर मूर्च्छा आ जाती है। इसलिये इसको अधिक मात्रा मे नही देना चाहिए।

—व च से साभार

रंगन (बन्धुका) (Ioxora coccinea Linn)

यह मजिष्ठादि कुल (Rubiaceae) का एक गुल्म जातीय झाड है। शाखायें लम्बी और चपटी। पत्र २ से ३ इंच डिम्बाकृति। फूल बडे वृन्त के आते हैं। वहिर्व्वास दांतेदार, लम्बा और नोकीला। पुष्पनाल १ से १½ इंची और अवनत। फल ½ इंची, खाने के योग्य। इसकी अनेक जातियां हैं, बगीचों मे इनकी कृषि होती है। पुष्प बडे अथवा छोटे, पीत व लाल वर्ण के। चित्रावलोकन कीजिये।

ग्रीष्म व वर्षाकाल मे फूल और फल होते हैं।

उत्पत्ति स्थान–

पश्चिम भारत मे कृषि होती है, बगाल के प्रत्येक जिले मे पाया जाता है। चटगाव के जिले मे काफी होता है।

डा० ब्रान्डिस का कहना है कि यह गुल्म दक्षिण से विशेषत पश्चिम घाट पर्वतीय प्रदेशो मे नदियो के किनारे बहुत परिमाण मे पैदा होता है। इसको अनेक भारतीय बगीचो मे सुन्दरता के लिये लगाया जाता है।

नाम–

सं०—रक्तक, बन्धुक। हिं०, बं०—रगन। ले०—इक्सोराकोक्सिनिया (Ixora coccinea linn)।

उपयुक्त अङ्ग—फूल।

गुण धर्म और प्रयोग–

इसके फूल दो तोला लेकर घृत मे भूनलें और स्याहा जीरा और नागकेसर के फूल मिलाकर गोलिया बनावें। उनको चीनी व मिश्री के साथ सेवन करने से रक्तामाशय मिटता है। (डीमक)।

ये गोली प्रदर और सुजाक मे हितकारी है। इनको तक्र दूध का फाडा हुआ जल बकरी के दूध के साथ सेवन करना चाहिये।

जड का चूर्ण जल मे पीसकर उसको कपडे पर लगा



करके घाव पर पुल्टिस लगाने से व्रण आराम होता है। गले के जख्म मे-जड को जल मे सिद्ध करके कुल्ले करने मे व्यवहार करने से गले के जख्म आराम हो जाते है।

इसकी जड ३० से ४० ग्रेन परिमाण मे पीसकर पानी मे और पीपल का चूर्ण मिलाकर खाने से रक्त आमाशय (पेचिस) आराम होता है। यह इपिकाक की अपेक्षा उत्कृष्ट एव ज्वर और सुजाक मे हितकर है।

(भा० व० न० से साभार)

रंगून की बेल (Quisqualis indica)

यह हरीतक्यादि कुल (Combretaceae) की एक सुन्दर लता बहुत लम्बी प्राय ४० से ६० फीट ऊंची वृक्षो पर चढी हुई होती है। भारतवर्ष के बहुत से बगीचो मे लगाई जाती है। इसके पत्ते आमने सामने गोल, गहरे हरे रङ्ग के ३ से ४ इच लम्बे और कुछ दूर से पेरु के पान जैसे दिखायी देते है, ये अखण्ड किनारी वाले और सिरे पर



साकडी अणी वाले और रुऐंदार होते है। इसके फूल रग बिरंगे लाल, सफेद, गुलाबी, केसरिया छाया लिए हुये बहुत सुगन्धित और झुमको मे लगते है। फूल की नली वुच के फूल के समान बहुत लम्बी और नरम होती है। इससे इन फूलो के झुमके नीचे नमे हुये होते है। ये पहले सफेद रङ्ग के होते है और फिर गहरे लाल रग के हो जाते हैं। इसके बीज काले रङ्ग के होते हे। औषधि प्रयोग मे बीज ही काम मे आते हैं। परिचय के लिए चित्र अवलोकन कीजिये।

उत्पत्ति स्थान–

यह वनस्पति बरमा मे विशेष रूप से पैदा होती है मगर भारतवर्ष के बगीचो मे भी यह लगायी जाती है।

नाम–

हिं—रगून की बेल। म—रगूनची बेल, लाल चमेली। गु—बारमासीनी बेल। बम्बई—विलायती चमेली। पोरबन्दर—झुम्मक बेल, झुमखा बेल। ता—इरगूमल्लि। ते—रगूनीवेल। इ.–Rangoon creeper (रगून क्रीपर)। ले—Quisquails indica (क्विस क्वेलिस इंडिका)।

गुण धर्म और प्रयोग–

इस वनस्पति का कृमिनाशक धर्म बहुत महत्व का है। इसके २–२ बीजो को पीसकर शहद मे मिलाकर देने से पेट मे पडने वाले गोल कृमि (Roundworm) नष्ट हो जाते हैं।

इसके पत्तो का काढा बनाकर पिलाने से पेट के अन्दर की कोष्ठस्थ वायु निकल जाती है और उदरशूल बन्द हो जाता है।

चीनी लोग इसके बीजो को पीसकर प्रवाहिका और ज्वर को रोकने के लिए देते हैं। —व० च०

मलाया मे बच्चो की आतो मे पडने वाली कृमियो को नष्ट करने के लिये इसके ४ या ५ बीजो को कुचलकर शहद मे मिलाकर देते हे।

झुमखा बेल के पत्तो को पीसकर सडे व्रणो पर बाधा जाता हे। पान का क्वाथ व्रण धोने के काम मे लाया जाता है। पित्तज शिर दर्द मे इसके फूलो को पीसकर लेप किया जाता है। —व० व० गुजराती

रंजन (बड़ी घुमची) [Adenanthera pavonia]

यह शिम्बीकुल (Leguminoceae) का वृक्ष हे रञ्जन का वृक्ष बहुत ऊंचा और सीधा पडता है। यह सरल और कटकरहित होता हे। इसमे छोटी–छोटी और पतली सीधी बहुत शाखाये निकली हुई होती है। मोटी शाखाओ का रङ्ग कालापन लिये होता है।

पान—लम्बे और द्विभग्न होते हे। पान की मुख्य शलाका नीम की शलाका से कुछ मोटी चिकनी और चमकीली होती है। इस पर छोटे पान की मुख्य सलियें ४ से १६ जोड़ी कुछ-कुछ दूरी पर आई हुई होती हे। इस जोडी मे की प्रत्येक शलाका नीम की शलाका से कुछ पतली

और ६ से ८ इच तक लम्बी होती हे। प्रत्येक सलीपर १२ से १८ दल अथवा पर्ण होते है। ये लम्ब गोल ¾ से 1¼ इच लम्बा, १ इच चौडा, दोनो ओर कुछ कुछ रोयेंदार पुष्प धारण करने वाली कलगी पत्रकोण से और शाखाओ के सिरे पर आई हुई होती है।

फूल—पीलापन लिये हुये ½ से ⅙ इची, पुष्पदल ५, मुलायम। पुङ्केसर १० होती हे। फली-६ इच से १० इच लम्बी, ½ इच चौडी, चपटी टेढी, बीज जितने भाग मे उठी हुई, छिकती, चलकत्ती, १० से १२ बीज वाली होती है। इसमे बीज कुछ दूर दूर आये हुये होते है। फली वृक्ष पर फटकर इसके दोनो भाग सूखकर गु छले के समान टेढे हो जाते है। बीज—लाल, चिकने, चमकते, वीच मे दोनो ओर उठे हुये होते है और किनारे कुछ पतले होते है। ग्रीष्मकाल मे फूल और बाद मे फली लगती है।

(व० व० गुजरातो)

प्रयोज्याङ्ग—बीज और पत्र।

उत्पत्ति स्थान--

बगीचे और खेतो की वाड मे रञ्जन के झाड कही २ अपने आप उगे हुये देखे गये हें। यह भारत के दक्षिण—पश्चिम भाग और पूर्वी हिमालय, अण्डमान द्वीप, वरमा, बङ्गाल मे चट्टग्राम, त्रिपुरा मे पैदा होती है।

नाम–

स०—कुचन्दनम्, रञ्जक, क्षारक। हि०—रञ्जन, वडी गुमची। ब०—रञ्जन, रक्तकम्बल, रक्त कञ्चन। दक्षिण—बडी गुमची, हट्टी गुमची। गु०—बडी गुमची। म०—थोरलीगञ्ज, वाल। काठियाबाड—रातावाल, रताञ्जली। अ०—Redwood (रेडवुड)। मल०—अनी कुंदमनी। तै०—गुडी वेन्डा। ले०—Adenanthera Pavonia Linn (अेडेनेन्थेरा पेवोनिया)।

रासायनिक संगठन–

इसके वीजो मे १४% तेल और २५% लिग्नोसेरिक एसिड पाया जाता है।

गुण धर्म व प्रयोग–

इसके बीजो का चूर्ण लेप के रूप मे फोडो को जल्दी पकाने के लिये लगाया जाता है। दक्षिणी भारत मे इसके पत्तो का काढा तैयार करके प्राचीन सधिवात, गठिया, और कटिवात को दूर करने के लिये दिया जाता है। अगर इसके काढ़े को अधिक समय तक सेवन किया जाय तो यह जननेंद्रिय की शिथिलता उत्पन्न करके ध्वज भङ्ग रोग करता है। इसके पत्तो का काढा रक्तार्श और आतो से होने वाले रक्तस्राव और मूत्र के साथ रक्त जाने की बीमारी मे उपयोगी माना जाता है। इसके बीज और लकडी जल मे पीसकर शिर दर्द पर लगाई जाती है। लारि यूनियन मे इसको सकोचन मानी जाती है। यह सधिवात तथा गले के व्रण को दूर करने के उपयोग मे लिया जाता हे।

(व० च० से साभार)

रंधेवड़ा (Cylista scariosa)

यह एक शिम्बी कुल (Leguminosae) की काष्ठ पूर्णलता होती है। इसकी डालिया और शाखाये रुये से से आच्छादित रहती हे। इसके फूलो का भीतरी भाग पीले रङ्ग का होता है। इसका वीजकोष रुयेदार और छोटा होता है। हर एक बीजकोप मे एक वीज रहता है।

उत्पत्ति स्थान–

यह मध्य प्रदेश और दक्षिणी, पश्चिमी भारत मे पाई जाती है।

नाम–

स०—नादि निष्पावा। म०—रधेवडा। गु० वमल-वेल। काठियावाड—दरिया वेल। कच्छ—खाटी वालोर। ते०—करुचिक्कुडा। ले०–Cylista scariosa Roxf (सिलिस्टा स्केरिओसा)।

गुण धर्म तथा प्रयोग–

इसकी पीले फूल वाली जाति के फल कडवे और कपैले होते हैं। ये रुचिवर्द्धक, भूख वढाने वाले, आतो को सङ्कोचन करने वाले, रक्त को शुद्ध करने वाले, पित्त और कफ को शमन करने वाले और गले की पीडा मे लाभ दायक होते है तथा वात को वढाने वाले होते हैं।

जडो बूटियो को बेचने वाले लोग इस वनस्पति को संग्रह करके, इसको पेचिश और श्वेत प्रदर की दवा के नाम से बेचते है। क्योंकि इसके संकोचक तत्व बहुत ही उग्र होते है। यह [illegible] साथ पिसाकर अर्बुद या गठानों पर लेप की जाती है।

(व० च०)

लघु श्लेष्मान्तक (गोंदी)

(Cordia rothii Roem & Schult)

यह फल वर्ग और श्लेष्मान्तकादि कुल (Boragin-aceae) के झाड १५ से ३० फीट ऊंचाई मे होते है। इसकी शाखायें लम्बी और बहुधा सीधी बढ़ती है। पत्र—लम्बे और सकडे होते है। पुष्प—छोटे, सफेद और उनमे नेवारी के फूलो जैसी सुवास आती है। पुष्प फाल्गुन मास मे आकर फल चैत्र वैशाख मे पकते है। साधारणतया इस झाड का थड आडा टेढ़ा और इसके ऊपर की छाल खड बचडी और भूरे रङ्ग की होने से यह झाड सुन्दर नही मालूम होता है किन्तु जब इसमे केसरिया रग के फलो के झुमखे झुके हुए होते ह और इनको खाने के लिये कोयल, तोता, कावर, लिलाडी और आदि बुलबुल आदि पक्षी इसकी झुकती हुई कोमल शाखाओ पर बैठकर इनके भार से शाखाओ को विशेष झुकाए हुए होते हैं, तब इस झाड का दिखावा मनोहर और अजीब लगता है।

पान—आमने सामने तो भी कुछ दूर आते है। पत्र दंड ½ इंच से ¾ इंच लम्बा होता है। इसके ऊपर की ओर छीछरी चौडी नोक होती है और इस पर भूरे रोये आये हुए होते है। पान विशेषकर बेडौल होते है। ये एक समान लम्बाई और चौडाई के नही होते। एक जोडी मे एक पान लम्बा और चौडा तो दूसरा छोटा और सकडा होता है। पत्तो को जन्तु जल्दी लगते है जिससे कितने ही पानो मे छेद होकर बेडौल हुए देखे जाते हैं तो भी पान की लम्बाई १ से ५ इंच और चौडाई ½ से १ या १½ इंच की होती है। पान-पत्र दंड के पास तंग (सकडे) और सिरे की ओर चौडे हुए होते है। सिरे पर से बुट्ठे अथवा थोडे अन्दर बैठते खाचे वाले होते है। पान का रंग ऊपर से हरा और नीचे से कुछ फीका होता है। ऊपर की सपाटी और नीचे की नसे चमकती हुई होती है। दोनो तह खुरदरी मामूली रोमावली से युक्त होती है किन्तु नीचे की तह पर नसो के होने से सफेद लम्बी रोमावली स्पष्ट दिखती है। पानो को रोशनी की तरफ रखकर आईग्लास से देखने पर इसके अन्दर का जाली का काम बहुत सुन्दर और पारदर्शक दीखता है। पान स्वाद मे चिकने और खुरे लगते है।

फूल—शाखाओं के किनारे पुष्प धारण करने वाली विभाजित सलियो तुर्रे के समान निकली हुई होती है। ये पीलास लिए हरे रग की होती है। इन पर भूरे रोम छाये हुये होते हैं। पुष्प दंड बहुत छोटा और व्यास ⅛ इंच जितना होता है।

पु० बाह्य कोष ¼ इंच लम्बा, पीलापन लिए हरे रग का और नीचे जुडा हुआ होता है।

पुष्पाभ्यन्तर कोष—की पंखडिया ज्यादा करके ४ होती है और ये पु० बा० कोष से लम्बी होती है।

पु केसर—४ सफेद रग के, पंखडी के सिरे जितने लबे और उनसे दूर आये हुए होते हैं।

स्त्री केसर—१ होती है, गर्भाशय हरापन लिये पीले रग का और चमकता हुआ होता है। नलिका ४ विभाग वाली और पु केसरो जितनी लबी होती है।

फल—आधे या कुछ कम पु० बा० कोष मे ढके हुए होते है। ये ३ लाइन से आधा इंच लम्बे और इससे कुछ कम चौडे होते है। टेरवा तंग और सिरे पर काली अणी वाला होता है। ये कच्चे होते है तब हरे रंग के, चमकदार और सफेद छीटे होते हैं और पकते हैं तब पु० बा० कोष की तरफ कुछ तंग और टेरवे की ओर चौडा और रंग मे पीले हो जाते हैं। त्वचा पतली होती है। फल को कुछ दबाने से इसमे से गुठलिया रस युक्त बाहर आ जाता है। यह रस बहुत चिकना, कुछ मीठा और पीले रंग का होता है। गुठलिया रंग मे भूरा पीला होता है। इसकी सपाटी (तह) खर बचडी होती है। इस पर दो स्पष्ट दीखती और

दो कुछ कम, इस तरह चार धार होती हैं। इसके ऊपर नीचे छोटे नोक होते हैं जिनमें सफेद रेशे आये हुए होते हैं गुठलिये मे ४ खड होते है। इसके प्रत्येक खण्ड मे नियमानुसार एक एक बीज होना चाहिये, किन्तु गुठलिये को तोडने से विशेषकर एक ही बीज निकलता है।

बीज—नरम, सफेद रग का और जमे हुये नारियल के तेल जैसा दिखाई देता है।

उत्पत्ति स्थान—

भारत मे सर्वत्र। पजाब, सिन्ध, राजस्थान, गुजरात, दक्षिण कर्णाटक आदि स्थानो मे इसके वृक्ष होते है।

नाम—

स०—लघुश्लेष्मान्तक। हि०—लघुश्लेष्मान्तक, गोंदी। ग०—गोदनी। पोरबन्दर, गुजरात—लीयार गोंदी, गुंदी। राज०—गाय गूदी। ना०—सेलु। ते०—चिन्ना नोटुक्। अं—नेरोलीव्ड सेपीस्टन (Narrow leaved sepistan) ले —कार्डिआ रोथाइ (Cordiarothic Roem & Schult)।

उपयुक्त अङ्ग—फल, पत्र, छाल।

मात्रा—सूखी गोंदी का चूर्ण ७ माशे से १ तोला तक।

गुण धर्म और प्रयोग—

सक्षेप मे—ग्राहि, कफघ्न और स्निग्ध।

गोंदी का कच्चा फल विष्टम्भि, रूक्ष और कफ पित्त एव रक्त विकृतियो का नाशक है। परिपक्व फल मधुर रस प्रधान, स्निग्ध कफवर्धक, शीतल और गुरु है।

यूनानी मतानुसार—

लघुश्लेष्मान्तक [गू दी] की प्रकृति—पकी गोदनी या गू दी समशीतोष्ण और पहले दर्जे मे तर [स्निग्ध], कोपल शीत और रूक्ष है।

गुण कर्म तथा उपयोग—गोंदनी के गुण कर्म सपिस्ता के समान हैं। विशेषकर यह श्लेष्म निस्सारक एव वाजीकर है। पकी गोदनी को दूसरे फलो की भाति खाते हैं। यह उरोमार्दव कर और कफ नि सारक है। इससे खासी एव उर कठ के सरस्व मे उपकार होता है। गोदनी की कोपल और गुठली निकाला हुआ मुनक्का प्रत्येक १-१ तोला जल मे पीसछानकर एक माशा गेरू का चूर्ण मिलाकर अर्शोजात रक्त रोकने को पिलाते है। फिर किंचित बबूल के गोद का चूर्ण मिलाकर कास निवारण के लिये चटाते हैं।

उपयोग—शुक्र प्रमेह और शुक्र तारल्य मे सूखी गोदनी का चूर्ण बनाकर चटाते है। मूल और शाखा की छाल, पान,फूल और फल का काढा प्रमेह और सग्रहणी पर दिया जाता है। मु ह पाक हुआ हो तो इसके क्वाथ के कुल्ले कराये जाते हैं। पत्तो का लेप फोडे और व्रणों पर लगाया जाता है। इसके पत्तो का काढा या चूर्ण मिश्री या मधु के साथ खांसी और क्षय रोग मे दिया जाता है।

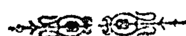
बाल काले करने के लिए—गू दी के फल की मज्जा को [गुठलिये तोडकर उसमे का गर्भ लेना] काजी मे पीसकर एक छोटे छिद्र वाले लोह के बरतन मे रख बन्द करके ऊपर ताप देवे याने पाताल यत्र की विधि से तेल निकाल लेवें। इस तेल का नस्य लेने से और मालिश करने से बाल जल्दी से काले हो जाते है। तैल खाने से उर्ध्व जत्रुगत रोग मिटते है। [चक्रदत्त]

श्वेत प्रदर पर—धावडी गोद आधा सेर, रावगून्दी आधा सेर, सिंघाडा आधा सेर, मिश्री डेढ सेर, गाय का घी अढाई सेर, नाग केसर २ तोला, मू गापिष्टी २ तोला। गोद को घी मे तल कर फूले बनाना, शेष सब चीजो को पीसकर मिलाना। सेवन के समय गर्मी महसूस हो तो सौंफ आधा सेर पीसकर मिला देवे। इसके ग्यारह लड्डू बनालें और एक लड्डू प्रात सेवन करे।

[वैद्य लक्ष्मीलाल जी महातमा करेडा]

नोट—इसके शेष गुण 'लिसोडा बडा' के समान है। अत गुण, प्रयोग, विशिष्ट योग 'लिसोडा बडा' के वर्णन मे मे देखें।

अहितकर—यकृदामाशय के लिये। निवारण—गुलाब की पत्ती। उन्नाव और मिश्री। प्रतिनिधि—सपिस्ता।



लजालू (Mimosa Pudica Linn)

यह गुडच्यादि वर्ग और शिम्बी कुल ((Leguminosae) एव वब्बूलादि (कीकर) जाति की वनस्पति है। इसके छोटे-छोटे क्षुप लता के समान वर्षाकाल मे होते है। यह दो प्रकार की होती है। एक पर मनुष्य की छाया पडने से और दूसरी मनुष्य का हाथ लगते ही मुरझा जाती है। जड लाल वर्ण की होती है, अत "रक्तपादी" नाम है। स्पर्श करने से झुक जाती है, अत "नमस्करी" कहा गया है। अक्सर ऊपर तक उसके डंठल का रङ्ग लाल होता है मजीठ की तरह अतएव समङ्गा भी कहा गया है।

उत्पत्ति स्थान-

यह भारतवर्ष के समस्त उष्ण प्रदेशो मे न्यूनाधिक परिमाण मे नैसर्गिक रूप मे उत्पन्न होती है। यह विशेष कर काली और पानी से तर रहने वाली चिकनी मिट्टी की जगहो मे मिलती है। इसके सूक्ष्म बीजो से सर्वत्र लग भी जाती है।

परीक्षा—यह बूटी पुरुप के हाथ लगने मे मुरझाने लगती है और पकडने से मुरझा जाती है। फिर इससे हाथ उठा लिया जावे तो वह फिर अपनी असली दशा मे आ जाती है। इसी वास्ते इसको लजालू, लज्जालु, छुईमूई कहते हैं। इस वनस्पति की खास यही परीक्षा है।

विवरण—यह चारो ओर फैलने वाला छोटा क्षुप है। ऊचाई डेढ से तीन फीट। काण्ड और शाखायें नीचे झुकी हुई, कांटेदार और लम्बी, रोयें से आच्छादित, सारी लता तथा क्षुप की शाखे पत्तो के किनारे ललाई लिये हुये होती हैं। मूल आध से दो फुट तक गहराई मे गया हुआ रक्ताभ सुगन्धित, दृढ तन्तुमय, त्वचा युक्त। पान—स्पर्शासहिष्णु २ से ४ इच लम्बे, द्वि पक्षाकार, ४ द्वितीय वृन्त युक्त। पत्र वृन्त १ से २ इच लम्बा, रोयेंदार, विषम वर्ती आधार स्थान मे स्थित। उपपान छोटा, रेखाकार, भल्लाकार, २ से ३ इच लम्बा, लगभग वृन्त रहित। पत्र दल १२ से २० जोडी वृन्त रहित, चिमडे (जो खिंचने या मोडने से नही टूटे) रेखाकार-लम्बे गोल, नोकदार, ऊपर चिकना नीचे रोयेंदार होते हैं।

फूल—गुलाबी लगभग आध इच चौडा, गोलाकार गुण्डी। इन पुष्पो मे कतिपय नर और कुछ स्त्री पुष्प होते है। पुष्प बाह्यकोष घटाकार और किंचित दानेदार, अतर कोष की पङ्खडिया आधार स्थान की ओर सयुक्त—युग्म अथवा निम्न तरफ तिहाई लगभग विभक्त, गुलाबी, (गुजरात और सौराष्ट्र और राजस्थान मे पीली), पुङ्केशर ४ (सौराष्ट्र मे १०)। पुष्पदण्ड लगभग एक इच लम्बा, काटेदार शाखाओ पर पत्र कोण मे से जोडे रूप से निकले हुये। पुष्पपत्र—एकाकी, रेखाकार, नोकदार। फली-आधा से पौन इच लम्बी, चिपटी, किंचित मुडी हुई। पुष्प फल काल—जुलाई से दिसम्बर तक। किसी किसी स्थान पर वसन्त मे भी फली मिलती है। बीज—प्रत्येक फली मे ३-४ बीज होते है। बीज इसके बादामी रङ्ग के और मूङ्ग से कुछ छोटे होते हैं। स्वाद इसका तिक्त कषाय होता है। बीज वृष्य और वीर्य स्तम्भक होते हैं।

भेद—इसके दो भेद है—

(१) यह प्राय खेतो मे वर्षा के मौसम मे उत्पन्न होती है। पौधा जमीन पर बिछा या थोडा (वित्ताभर) उठा हुआ होता है। पत्र भुई आवले की तरह, पत्र विन्यास स्तवकाकार होता है। बीच से पतला और लम्बा पुष्पदण्ड निकलता है। उस पर पीले रङ्ग के छोटे फूल लगते हैं। फली लम्बी और चपटी, बीज लाल रङ्ग के होते है। यह समस्त भारतवर्ष मे होती है। इसको लेटिन मे बायोफिटम सेन्सिटिवम (Biophytum sensitivum) सस्कृत मे रक्त पादी हिंदी मे छोटा लजालु कहते है। यह चागेरियादि कुल (Geraniaceae) की औषधि है।

(२) यह भूमि पर पथराई हुई होती है। शेष बातो मे प्रथम भेद की तरह और उसी कुल की किन्तु कटक रहित होती है। यह समस्त भारतवर्ष और लङ्का साधारणत उष्ण कटिबन्ध पर स्थित प्रदेशो मे होती है। इसे सस्कृत मे "अलम्बुषा" हिन्दी मे "जल लजालु" और लेटिन मे नेप्च्युमिया ओलिरेसिया (Neptumia oleracea Lour) कहते है।



इन तीनो के पत्र छूने से सिकुड जाते है, इसलिये इनको 'छुई मुई' और 'लज्जालु' कहते है ।

नाम—

स०—लज्जालु, नमस्करी, समगा, अंजलिकारिका । हि०—लाजवन्ती, लजालू, छुई मुई । ब०—लज्जावती । म०—लाजालु, लजैनी । गु०—रिसामणी, लाजरी, लज्जामणी । प०—लजवन्ती । मला०—तितरमणी, तोक्तावली । कना०—लज्जा । ता०—तोत्तलवादी । ते०-मुनुगुदामरमु । मल०, कोकन—लजरी । कन्नड—नचिकाय गिदा । ने०—इन्द्रिकान्ति । । उर्दू—लताल़ू । अ—शजर तुलहया । अ—सेन्सिटिव्ह प्लान्ट (Sensitive plant) ले०-मिमोसा पुडिका (Mimosa Pudica Linn) कहते है ।

रासायनिक संगठन—

जड मे कषाय द्रव्य टेनिन (Tenin) होता है ।

उपयुक्त अङ्ग—जड और पत्र ।

मात्रा—पत्र वा मूल का चूर्ण ५ से ७ माशे तक, बीज १ से ३ माशे तक ।

गुण-धर्म और प्रयोग—

लजालु—शीतल, कडवी, कषैली, कफपित्तहर, ग्राही, रक्तस्तम्भन, रक्तप्रसादन, पित्त और रक्तसशमन तथा अति आर्त्तव—शोणित श्राव जैसे योनि रोगो को दूर करती है।

आयुर्वेदीय गुण धर्म—

यह रस मे तिक्त, कषाय । वीर्य मे शीत । विपाक मे कटु । चरक सहिता के भीतर सधानीय और पुरीष सग्रहणीय एव कफ पित्त दोषो की नाशक है ।

भावप्रकाश के अनुसार लज्जालु रस मे कडवी, अनुरस कषैला और शीत वीर्य है तथा कफ प्रकोप, पित्त, वृद्धि, रक्तपित्त, अतिसार और योनि रोग को दूर करती है ।

निघण्टु रत्नाकर के अनुसार—लज्जालु-चरपरी, और कसैली, शीतवीर्य स्वादु विपाक युक्त, रूक्ष तथा वात, पित्त, कफ रक्तरोग, योनिदोष, रक्तपित्त, अतिसार श्रम, शोथ, दाह, व्रण, श्वास और कुष्ठरोग नाशक है

चरक ने दशेमानियो मे तथा सुश्रुत सहिता के भीतर प्रियंगवादिगण और अम्बष्ठादि गण मे समङ्गा नाम से दर्शायी है।

विशेष—लजालू ग्राही होने के कारण अहिफेन के समान प्रवाहिका, अतिसार, रक्तश्रावहर है । इसमे शीतलता तथा तिक्तता होने के कारण पित्तशामक तथा कषाय होने के कारण कफनाशक भी है। आमातिसार मे जब पक्वावस्था आ जावे तब इसका उपयोग चमत्कारी गुण दिखाता है और जो ग्राही गुण है उसके द्वारा शीघ्र ही अतिसार को रोकती है तथा उदर शूलादि सभी उपद्रव आप ही आप नष्ट हो जाते है। डाक्टरो के इमेटीन हाईड्रोक्लोराइड इञ्जेक्शन से भी अधिक हितकारी उस रोग मे लजालू है तथा हानिरहित है। (धन्वन्तरि)

विज्ञ वैद्यवर्य्य अनुसन्धानात्मक दृष्टि से उक्त रोग (Amoebic Dysentry) मे प्रयोग करा फलाफल प्रकाशित करावें और जिनके आस-पास यह बूटी अधिक सुलभ होवे सग्रह करा वैद्यो मे वितरण की भी व्यवस्था करावे, तो अति उत्तम होगा ।

यूनानी गुण और धर्म—

प्रकृति दूसरे दर्जे मे शीतल एव रूक्ष । हवा को निकालने वाली, सुद्दो [आत के अन्दर मल की गाठो[को तोडने वाली, खून साफ करने वाली, हैज जारी करने वाली, नासूर, पुराने व्रण और वात से उत्पन्न विकारो को तथा बवासीर, भगन्दर, पीलिया, दस्त, खून थूकना, रक्तदपित ज्वर, रक्तप्रदर तथा सतति निग्रह मे उपयोगी है ।

डाक्टरी मतानुसार—

डाक्टर देसाई के अनुसार लज्जालु उत्तम रक्त सग्राहक है। छोटी रक्त वाहिनियो का सकोच करती है। रक्त मिश्रित प्रवाहिका और सिकतामेह मे इसके मूल का क्वाथ दिया जाता है। अर्श पर पानो का चूर्ण दूध के साथ देते है।

डा० डिमक ने लिखा है कि इसके रस का बाह्य प्रयोग करने पर अर्श और भगन्दर रोग दूर होता है ।

प्रयोग—

१. किसी शस्त्र का घाव लगा हो और रक्तश्राव हो

रहा हो तो लजालू के मूल से सिद्ध तेल का व्रणोपचार करने से घाव भर जाता है। —राज मार्तण्ड

बच्चो के आक्षेप रोग को दूर करने के लिये इसका बहुत उपयोग किया जाता है।

४ बवासीर और भगन्दर मे इसके पत्ते और इसकी जड का चूर्ण थोडे दूध के साथ मिलाकर दिये जाते हैं।

४ **जिर्यान [शुक्रमेह] से**—इमली के बीज, लजालू के बीज, तालमखाना १–१ तोला लेकर सबको बारीक कूटकर बडके दूध मे भिगोकर घोट के चने समान गोलिया बनाकर छाया मे सुखाले।

मात्रा—३–३ गोली सुबह और शाम गाय के दूध के साथ देवे।

५ **कामला**—इस वनस्पति का प्रयोग करने से पहले सप्ताह मे सब प्रकार के ज्वर और पित्त के विकार मिटते हैं। दूसरे सप्ताह मे बवासीर, कामला इत्यादि रोग मिटते हैं और तीसरे सप्ताह मे कोढ, उपदश और चर्म कीले इत्यादि रोग मिटते है।

६. **नेत्र पुतली पर मांस वृद्धि**—नेत्र मे वेल (Pterygium) या मासवृद्धि होकर काले भाग पर फैलती है, उस पर लज्जालु के पानो का रस और अश्व मूत्र को सम भाग मिलाकर प्रात साय अञ्जन करते रहने से वेल या मांस वृद्धि नष्ट हो जाती है।

७. **स्तनो का ढीलापन**–लजालू और असगन्ध की जड को पीसकर स्तनो पर लेप करने से स्तनो का ढीलापन मिटकर वे गोल और कठोर हो जाते हैं।

८ **मूत्रावरोध**—मूल या पचाग का क्वाथ पिलाने से मूत्रावरोध दूर हो जाता है। अश्मरी के कण हो तो बाहर निकल जात है और मूत्र नलिका पर शोथ आया हो तो वह भी दूर हो जाता है।

९ **काली खासी**–लजालू के मूल का चूर्ण १-१ रत्ती शहद या शक्कर के साथ दिन मे ३-४ वार बालक को देते रहने से काली खासी के वेग का दमन हो जाता है।

१० **शीघ्र पतन पर योग**–वड की दाढी [वट जटा], लजालू के बीज, सफेद मूसली, सालब मिश्री, सत्यानाशी की छाल, सिंघाडे का आटा, इमली के बीज, भूसी इसबगोल, बग भस्म, प्रवाल भस्म प्रत्येक बराबर-बराबर, सबके समान मिश्री मिलाकर चूर्ण बनावे। ६ माशा की मात्रा मे दूध के साथ सेवन करें।

११ **शीघ्रपतन पर योग**–लजालू के बीज २ माशा मिश्री ६ माशा। यह एक मात्रा है। इस प्रकार प्रात -साय लगातार १५ दिन सेवन करने से कुदरती रुकावट पैदा होती है।

१२ **स्वप्न दोष पर**—सिंघाडे का आटा, बबूल की फलियो का चूर्ण,बट के फल, असगध,कौच की जड,बीफली, मोचरस-प्रत्येक २-२ तोला, कपासियों की गिरी ३ तोला, सालममिश्री छोटी १ तोला, कमरकस, उटगन के बीज १-१ तोला, बडा गोखरू २॥ तोला, तालमखाना वड के दूध मे शोधे हुये २॥ तोला, इमली के बीज ३ तोला, लजालू के बीज १॥ तोला, चादी के वर्क २५ नग, चारो मग्ज ४ तोला। इन तमाम दवाइयो को कूट छान कर चूर्ण बनाले। यह चूर्ण ६ माशा की मात्रा मे प्रात ५ तोला ताजा मक्खन मे मिलाकर सेवन करे।

१३ **वाजीकरण वटी**–लौंग, जायफल, जावित्री,केसर, गोंदी के वृक्ष की अन्तर छाल, दालचीनी-प्रत्येक ६ माशा, कुलिंजन, तोदरी सफेद व लाल, हरमल, मौलश्री के फूल, बीज लज्जालु-प्रत्येक ६ माशा चादी के वर्क, अगर प्रत्येक ३ माशा, कस्तूरी १॥ माशा, अर्क माउल रहम अम्बरी १ बोतल, हिंगल भस्म ३ माशा। सबको बारीक करके अर्क माउल रहम मे पीसकर गोलिया मटर बराबर बनावे। मात्रा २-२ गोली सुबह और शाम दूध के साथ।

१४ **अनियमितार्तव मे**—मूसली काली और सफेद, कमरकस [पलाश गोंद], मोचरस, सालम मिश्री, बोझीदान, कडके बीज, लजालू के बीज, मुनक्का, प्रवाल भस्म, मोती भस्म, मुक्ता शुक्ति भस्म, धाय के फूल,बबूल की फली,पिश्ते का छिलका, गोखरू, समुद्र शोख, बीज बद प्रत्येक १-१ तोला। पनीर माया शुत्तर एरावी ६ माशा, चादी के वर्क ४ माशा, सोने के वर्क १ माशा। सबको बारीक करके अवलेह की तरह चाशनी बनावे। मात्रा—१ तोला। प्रात साय। अनुपान—शरबत कड ४ तोला, अर्क बिरजाशिफ

२ तोला के साथ। गुण—अगर बदन मे खून की उत्पत्ति कम हो और शरीर के अग कमजोर हो गये हो या खून नही वनता हो उस हालत मे यह प्रयोग बहुत लाभ कारी है।

१५. रक्त प्रदर—अकाकिया, वट जटा का सत, माजूफल, माई, भुनी फिटकरी, अनार के फूलो का सत, गन्दना के पत्ते, चूका के बीज—ये सब १-१ तोला, प्रवाल भस्म, मुक्ता शुक्ति भस्म, अकीक भस्म, धाय के फूल, कमरकस, मोचरस, सफेद मूसली, लजालू के बीज, सालममिश्री प्रत्येक ६ माशा। चूर्ण वनावे।

मात्रा—३ माशा। प्रात साय। अनुपान—वकरी का दूध, सत अनार या शर्वत खस के साथ।

१६ योनि भ्रंश—योनि मार्ग से कमल (गर्भाशय) बाहर आजाने पर लजालू के पानो का रस या मूल घिसकर कमल पर लेप लगावें। और हाथो पर लेप कर ऊपर चढा लगोट वधवाकर आराम कराने से कमल ऊपर रह जाता है। नये रोग मे लाभ होता है।

१७. प्लेग पर—लजालू पत्र ५ तोला, अर्क वेद मुश्क १२ तोला, अर्क गावजवा डेढ पाव मे पीस छान कर रखलें। इसको १ या २ घण्टे के फासले से प्यास के समय थोड़ी मात्रा मे पिलावे। प्लेग के वास्ते यह एक उम्दा योग है।

१८. रक्त विकृति पर—छुईमुई बूटी ६ माशे को काली मिर्च के साथ घोट छानकर ४० दिन पिलावे तो गण्डमाला, फिरग, चेचक प्रभृति के घावो को शीघ्र दूर करने मे अद्वितीय है।

१९ स्तन शोथ पर—किन्ही वालको तथा पुरुषो को कभी कभी स्तनो मे शोथ उत्पन्न हो जाता है उस शोथ को दूर करने के लिये छुईमुई के पचाग की लुगदी गर्मकर लेप करने से अति शीघ्र लाभ होता है।

विशिष्ट प्रयोग—

१. समंगादि कल्क [हा सं स्था ३ अ ११]—लजालू मूल, सेंमल का फूल, लाल चन्दन, अर्जुन छाल और नीलोत्पल समान भाग मिश्रित (१ तोला) लेकर वकरी के दूध मे पीसकर पीने से रक्त प्रदर नष्ट होता है।

२ समगादि क्वाथ १ [वृ नि र । अति]—लजालू मूल, धाय के फूल, वेलगिरी, आम की गुठली, कमलकेसर, मोचरस, लोध्र, कुडा की छाल और इन्द्र जो। इन्हे चावलो के धोवन (तण्डुलोदक) मे पकाकर अथवा पीसकर कल्क बनाकर पीने से कफ पित्तातिसार का नाश होता है।

३ समगादि क्वाथ [यो र अति]—लजालू मूल, अतीस, नागरमोथा, सोठ, सुगन्ध वाला, धाय के फूल, कुडे की छाल और वेलगिरी। इनका क्वाथ समस्त प्रकार के अतिसारो को नष्ट करता है।

४. लजालू चूर्ण [जा व व. प्रयोग से]—लजालू मूल का चूर्ण ३ माशा दही के साथ पिलाने से रक्तातिसार मे तुरन्त फायदा होता है।

५ लज्जालु योग १ [ग. नि,]—प्रातःकाल वकरी के दूध मे लज्जावन्ती की जड पीसकर पीने और अनभिष्यन्दि आहार करने से अपस्मार नष्ट हो जाता है।

६ लज्जालु योग २ [यो त]—लज्जावन्ती की जड धाय क फूल, नीलोफर, मुलेठी और लोध समान भाग लेकर क्वाथ वनावे।

यदि स्त्री जल मे खडी होकर इसको पिये तो गिरता हुआ गर्भ रुक जाता है।

७ लज्जावत्यादि योग [रा मा.]—लज्जावन्ती की जड, सेमल की छाल, धाय के फूल और नील कमल को दूध मे पीसकर शहद मिलाकर जल मे खडे होकर पीने से गर्भपात रुक जाता है।

८. समंगादिक्वाथ ३ (यो र । बालातिसारे)—लज्जालु की जड, धाय के फूल, लोध और सारिवा इनके क्वाथ मे शहद मिलाकर पिलाने से वालको का भयकर अतिसार भी नष्ट हो जाता है।

९ समंगादि क्षीर (भा प्र म खं २ अर्शो.)—लज्जालु की जड, नीलोत्पल, मोचरस, लोध, तिल और लाल चन्दन। इनसे वकरी का दूध सिद्ध करके पिलाने से रक्तार्श का रक्त बन्द हो जाता है। औषधिया समान भाग मिलित २½ तोले, दूध २० तोले, पानी एक सेर। पानी जलने तक पकावें।

१० समगादि चूर्ण (यो र. अतिसार)—लज्जालु की जड, धाय के फूल, वेलगिरी, कालानमक, विडलवण और अनारदाना समान भाग लेकर चूर्ण वनावे।

इसे शहद मे मिलाकर चावलो के धोवन के साथ सेवन करने से पित्तातिसार और शूल शीघ्र नष्ट हो जाती है।मात्रा ३ से ६ माशे।

आयुर्वेदीय योग—

सखिया सफेद १ तोला लेकर लजालू पत्र १ छटाक को कूटकर वनाये हुये कल्क मे रख और गोले को दो मिट्टी के प्याला के सपुट मे रख कपट मिट्टी करे। सूखने पर एक सेर उपलो की आच दे। इस प्रकार सात वक्त करें। प्रत्येक वक्त कल्क और कपडमिट्टी नयी हो।

सेवन विधि और गुण—कमजोर और नपुसक को २ चावल ६ माशा मक्खन मे प्रात सेवन करावें और घी दूध का अच्छी तरह सेवन कराने से वहुत ताकत देता है।

अहितकर—वृक्क और प्लीहा को।

निवारण—काली मिर्च और मधु।

प्रतिनिधि—नीम पत्र।

लजालु छोटी (झरेर) (Biophytum senstivum)

यह चागेरियादिकुल (Geraniaceae) की लाजवन्ती की एक दूसरी जाति होती है। यह भूमि पर पथराई हुई कटकरहित होती है। इसके पौधे वहुत छोटे और काण्ड डोरा या सुतली जैसे पतले होते हैं। इसके पत्ते भुई आवला के पत्तो के समान होते है। इनको छूने से ये कुम्हला जाते हे। इसमे छोटे-छोटे फल लगते है। इसके वीज लाल रग के और वहुत महीन होते है।

विशेष वर्णन—वर्षायु क्षुप। काण्ड खडा, १ से १० इन्च ऊचा, कोमल, चिकना या रुएदार। पान—स्पर्शासहिष्णु, सयुक्त, काण्ड के शिखर पर गुच्छ मे, १½ से ५ इन्च लम्वे। पर्ण वृन्त छोटा, पुष्प दण्ड कोमल, चिकना या रुएदार। पर्णदल अभिमुख ⅓ इन्च लम्वा, ६ से १० जोडी, इनमे अन्तिम जोडी सवसे वडी, लम्व गोल, लगभग वृन्त रहित। पुष्प पीले। पुष्प दण्ड अनेक। पुष्प पत्र भल्लाकार, छोटे, पुष्प दण्ड के नीचे गुच्छ मे।

फल सूक्ष्म गोलाकार, कुछ वीजो युक्त कोषमय। वीज अण्डाकार खुरदरे, आडाई मे पक्ति युक्त। पान और फल विशेष करके क्षुप के सिरे पर छत्राकार आये हुए होते है। इसके क्षुप पर जामुनी रग की झाई होती है। इसके क्षुप को अगुली से स्पर्श करने से इसके पत्र कुछ लजालू के समान सकुचित हो जाते हैं।

उत्पत्ति स्थान—

तालावो के किनारे, वर्षा का जल भरा रहता हो ऐसे गढ्ढो के किनारे पहाडो के झरनो के किनारे, जगलो मे वडे वृक्षो की छाया मे लजालु छोटी (झरेर) के क्षुप उगते हैं और जहा उगते हैं, काफी तादाद मे उगते है। यह विशेष करके भारत के गरम प्रदेशो एव पूर्व और पश्चिमी घाटो मे, अफ्रीका का उष्ण कटिवन्ध प्रदेश, एशिया से फिलिपाइन तक पैदा होती है।

नाम—

स०—लज्जालुका, पीत पुष्पा, पक्तिपत्रा, जल पुष्पा। हि०—लजालु, झरेर। कच्छी—झरेरो, रिसामणु। गु०—रिसामणी, झरेर, लाजरी, लहान। व०—झलाई। म०—झरेर। ले०—वायोफिटम सेन्सिटिवम् (Biophytum sensitivum Linn D C.)।

उपयुक्त अङ्ग—सर्वाङ्ग। मात्रा—३ से ६ माशे।

गुण धर्म और प्रयोग—

आयुर्वेद मतानुसार—लघु लज्जालु ग्राही, मूत्रल, सारक और चिर गुणकारी पौष्टिक है। इसके पत्ते कडवे, मूत्रल और मूत्र कृच्छ्र को दूर करने वाले होते हैं।

निघण्टु रत्नाकर के अनुसार लघु लज्जालु रस में कडवी, उष्णवीर्य, पारद वन्धक, कफघ्न, आमनाशक और विविध विज्ञानकारक है।

इसके पत्तो को पानी के साथ पीसकर देने से ये अपना मूत्रल प्रभाव दिखाते है। पित्त ज्वर के अन्दर प्यास को दूर करने के लिये भी इनका उपयोग होता है। इसकी जड के काढे को पिलाने से सुजाक और पथरी मे लाभ होता है।



फिलिपाइन मे इसके पत्तो का क्वाथ कफ निःसारक रूप से देते है और रगड तथा जख्म पर पानो को कुचल कर बाधते हैं ।

भारत मे पारद की चचलता दूर करने के लिये अनेक कीमियागर (रसायन विद) इसे और रुद्रवन्ती को उपयोग मे लेते है ।

सौराष्ट्र मे इसके क्षुप का क्वाथ यकृद विकार, मूत्र-रोग और ज्वर पर देते है । एव रसायन रूप से भी इसका उपयोग होता है । पानो को जल मे पीस छानकर ठण्डाई बनाकर पिलाने से मूत्रल गुण दर्शाता है ।

प्रयोग—

१—लघु लज्जालु काटेदार करज और कुन्दरू के चूर्ण के साथ वृषण वृद्धि मे देते है ।

२ **पित्त ज्वर में**—तृषा वृद्धि मे लघु लज्जालु का क्वाथ या हिम पिलाने से तृषा का शमन होता है और पित्त ज्वर शान्त होता है ।

३ **यकृद वृद्धि**—तीव्र और चिरकारी दोनो अवस्थाओ पर लघु लज्जालु का क्वाथ पिलाने से सरलता से यकृत् का वर्म कम होता है साथ ही कफस्राव भी ।

—गा औ र से

लटकन (Bixa orellana Linn)

यह तुवरकादि (Bixaceae) का एक छोटी जाति का हमेशा हरा रहने वाला वृक्ष होता है । यह प्राय हिन्दुस्तान के बगीचो मे लगाया जाता है । इसके पत्ते बेल के पत्तो के समान किंतु कगुरेदार दो तीन अगुल चौडे, पत्तो की दीर्घता की अपेक्षा विस्तार मे कम होते है, पत्तो की शिरायें लाल होती है ।

इसके फूल श्वेत, लाल और सिन्दूर के समान लगते है पुष्पपत्र के दल ५, बहु सख्यक पुङ्केशर होती है । गर्भाशय एक परदे या घर विशिष्ट होता है । गर्भकेशर लम्बी और रक्त होती है । इसके फल धतूरे के फलो के समान होते है । हर एक फल मे चार फाके रहती है । इनमे बहुत बीज रहते है । इन बीजो को जल मे डालने से जल लाल हो जाता है । इस वनस्पति से लाल रङ्ग भी प्राप्त किया जाता है । इसके वृक्ष दो तरह के होते है । एक के फूल गहरे लाल, दूसरे प्रकार के वृक्ष के हरी आभायुक्त पीत वर्ण के होते है ।

उत्पत्ति स्थान—

आदि उत्पत्ति स्थान अमेरिका । इसकी सारे भारत के बगीचो मे कृषि की जाती है । यह बङ्गाल और दक्षिण मे अधिक होता है । कभी-कभी इसके वृक्ष जङ्गल मे भी मिलते है । ब्राजील मे बहुत परिमाण मे होता है । रङ्ग के लिये इसके क्षुप लगाये जाते है ।

नाम—

स०—सिंदुरपुष्पी, सिंदूरी, तृण पुष्पी, सुकोमला, रक्तबीजा, रक्तपुष्पी, करच्छदा । हि०—लटकन, सिंदूरिया, जाफर । म०—शदरी । ब० प०—लटकन । बम्बई—जाफजर, केसरी, केसुरी, सेंदा । गु०—सिंदूरी । ता०—कुरगूमजलू, मजिट्टी । ते०—जाबुरा । अस०—जोलेन्डहूर । मल०—कोरङ्गमुङ्गा । कन्नड—कप्पुमेल काला । अ०—मस्नात । फा०—सिंदूरी पुष्पी । अ०—अन्नाटो (Annatto) ले०—बिक्सा ओरेलेना (Bixa orellana Linn) ।

उपयुक्त अङ्ग—मूल, पत्र और बीज ।

मात्रा—७ माशे से १ तोला तक ।

गुण धर्म और योग—

आयुर्वेद मतानुसार—लटकन के वृक्ष की छाल कडवी, चरपरी, शीतल, हलकी, कसैली, ग्राही, ज्वरघ्न, मूत्रल, रक्त विकार, वातरक्त, तृषा, विषदोष, पित्त, वातपित्त, वमन, कफ, मस्तक शूल और भूत बाधा को दूर करने वाली होती है ।

मूलत्वक उत्तम विषम ज्वर नाशक है, जो क्वाथ रूप मे चढ़े हुए वा उतरे हुए ज्वर मे दे सकते है । यह क्वाथ प्रवाहिका और मूत्र कृच्छ्र मे भी लाभकारी है । बीजो का क्वाथ भी इन रोगो मे दे सकते है ।

यूनानी मतानुसार—

इसकी प्रकृति पहले दर्जे मे शीतल एव स्निग्ध मानी है ।

इसके फलो मे रहने वाला केसरिया रग विषैला नही होता इसके फल का गूदा सकोचक और बडी मात्रा मे कुछ स्र मन होता है। इसके बीज और जड रुचिकारक, ज्वर नाशक और सकोचक होते है।

इसके जड की छाल मलेरिया ज्वर और दूसरे ज्वरो को दूर करने वाली होती है। इसका पार्यायिक ज्वर, मलेरिया ज्वर और अविराम ज्वर मे बहुत उपयोग होता है।

इसके बीज हृदय के लिए पौष्टिक, सकोचक और ज्वर नाशक होते हैं। सुजाक के वास्ते यह एक उत्तम औषध है। इसमे पार्यायिक ज्वर नाशक तत्व रहते है। मगर ये तत्व इस वनस्पति की जड की छाल की अपेक्षा इसके बीजो मे कम रहते है।

यह वनस्पति सकोचक और अधिक मात्रा मे कुछ हलकी विरेचक होती है। रक्तातिसार और गुर्दे की बीमारियो मे यह बहुत लाभ पहुचाती है। इसके बीजो मे रहने वाले रगदार तत्व को पानी मे घोलकर सारे शरीर पर लगाने से मच्छर काटने का डर नही रहता।

फ्रेंच गायना मे इसके पत्ते मृदु विरेचक और शोधक समझे जाते है। इसके फलो का निर्याम अतिसार के अन्दर विरेचक वस्तु की तरह दिया जाता है। (व च०)

इसके मूलत्वक के क्वाथ को कामला रोग मे हितकारी माना है। बाजो को प्रमेह रोग मे लाभकारी मानते है। (भा व)

(१) सुजाक पर—इसके पत्ते जल मे पीस छानकर मिश्री मिलाकर पिलाने या सूखे पत्तो को रात्रि मे जल मे भिगोकर रखने और प्रात काल मल छानकर उपयोग करने से सुजाक मे विशेष उपकार होता है। (यू० द्र० वि०)

अहितकर—कफज प्रकृति के लिये। निवारण-कालीमिर्च और शहद। प्रतिनिधि—जल पिप्पली।

लट महुरिया (Digera Arvensis Forsk)

यह अपामार्गादि कुल (Amranthaceae) की एक प्रकार की घास होती है। इसके क्षुप १ से ३ फीट तक ऊचे होते है। इसके पत्ते चौलाई के समान एकान्तर होते है। पत्र दण्ड एक से तीन इच लम्बा, पान लम्ब गोल और सकडे होते है। पानी की किनारी विशेष करके लाल और उस पर सफेद चलकती हुई सूक्ष्म बेडोल कगूरिये आयी हुई होती है। पत्र कोण से सुतली के समान पतली हरे रग की १ से ३ इच या आधा से १ फीट लम्बी पुष्प धारण करने वाली सली या मजरी निकली हुई होती है। इन पर खडी रेखाये आयी हुई होती है। आधे से ऊपर सूक्ष्म गुलाबी रग के छोटे-छोटे फूल आये हुए होते है। गध सहज सुगन्धित होती है। फूल मजरी मे थोडी-थोडी दूर आए हुए होते हैं, ये ज्यादा करके ३-३ पास मे होते है। इसमे पास के दो कलगीं वाले हरे रग के सख्त हो गए से होते है। बीच का फूल खिल जाने पर जैसे-जैसे पुष्प पकता और बढता जाता है तैसे-तैसे ये दोनो पकड भी फल के साथ उसके दोनो ओर रहकर बढतीं जाती हैं। जब फल पकता है तब उसको बीच मे लेकर दोनो ओर मे उसे मजबूती से पकड लेतीं है। इस समय इसका आकार दो आमने-सामने हरे मोर पक्षी बैठे हुए हो ऐसा दिखाई देता है।

यह ईश्वरी बनावट वास्तव मे सूक्ष्म दर्शक काच से देखने के योग्य होती है। यह बरसात मे बहुत अधिक मात्रा मे पैदा होता है। केणजरो या कली झराकी भाजी कृषक लोग खाते है।

उत्पत्ति स्थान—

भारत मे सर्वत्र जहा जहा चदलोई की भाजी पैदा होती है यह भी अपने आप खूब पैदा होता है।

नाम—

स — कुणजर, कुणजी, मन्जरीक,, आरण्य वास्तुक। हि.—लटमहुरिया, लट्टूर। राज —कलीझरो। पोरबन्दर-कणजो। गु०—कणेजरो। म०—गीतना। बं०—गुगेटिया, लटमहुरिया। प०—लेसवा। सथाली—कडीगन्धारी। ब०—गेटन। ते०—चचलीकुरा। ले —डिगेरा अरवेन्सिस (Digera arvensis forsk)।



उपयुक्त अङ्ग—पचाग।

गुण-धर्म और प्रयोग—

आयुर्वेदीय मत से लद्दूर त्रिदोषनाशक, मधुर, रुचिकारक, दीपन, संकोचन, पित्तश्लेष्म नाशक और हलका होता है। यह छोटी मात्रा मे आतो का सकोचन करता है लेकिन बडी मात्रा मे यह मृदु विरेचक होता है। इसके फल और बीज अनैच्छिक—वीर्य श्राव अथवा प्रमेह मे उपयोगी होते हैं। इसके पत्तो की गरीब लोग शाग बनाते हैं। (व च)

शोढल— इसको 'अतिसारस्यजनक' कहता है। राजनिघण्टु कार इसे 'कषाय, सग्राही' कहते है। निघण्टु रत्नाकर ने इसको 'गुरु' मलस्तभकृन दने दोषोत्पादनकृत' बतलाया है। सद्गत कुतोभट्ट जी 'मल स्तम्भ करके पीछे दस्त लगाता है' ऐसा कहते है।

शोढल इसके शाक को 'दुर्भिक्षवल्लभ' कहते है। किसी प्रकार का शाक नही मिलता हो तब ही कलीभरे की भाजी खानी चाहिये।

लतमी (Amoora Cucullata Roxb)

यह निंबादिकुल [Meliaceae] का एक मध्यम कद का वृक्ष होता है। इसके पत्ते १२ से लेकर १८ इन्च तक लम्बे होते है।

उत्पत्ति स्थान—

यह वनस्पति बगाल के जगलो मे और बर्मा मे पैदा होती है।

नाम—

हिं —लतमी। ब०—लतमी, अमूर। ब्रह्मा—पिटनी। ले–Amoora cucullata Roxb [एमूरा क्यूक्यूलटा रोक्सवर्गी]

गुण-धर्म और प्रयोग—

इसके पत्तो को कुचलकर लेप करने से सूजन कम हो जाती है।

लता मेंहदी (Croton Caudatus,Geisel)

यह एरडादिकुल [Euphorbiaceae] की एक जमालगोटे की जाति की वनस्पति होती है। इसकी बडी झाडी होती है। इसके पत्ते १३ से २५ सेंटीमीटर तक लम्बे होते हैं। इसके फूल छोटे और कुछ पीलापन लिये हुये हरे रग के होते हैं। इसके बीज काले और चमकीले होते हैं।

उत्पत्ति स्थान—

यह वनस्पत्ति पूर्वी हिमालय, आसाम और बगाल मे पैदा होती है। नाम—हिं—लता मेहदी। ब—नानमन्तर नेपाल–हलागेरी। ले क्रोटन कोडेटस (Croton caudatus Geisel)

उपयुक्त अङ्ग—पत्र।

गुण-धर्म और प्रयोग—

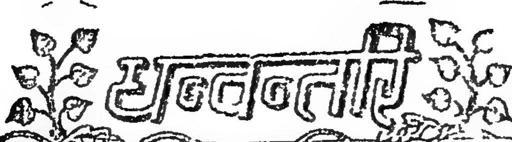
इसके पत्तो को कुचलकर उनका पुल्टिस बनाकर चोट और मोच के ऊपर बाधा जाता है। लखीमपुर मे इसके पतो को कोभिलो को पतग नामक वनस्पति के साथ मिलाकर यकृत के रोगो को दूर करने के काम मे लिया जाता है।

लफा (Malvaverticillata Linn)

यह कार्पासादि कुल (Malvaceae) की खुब्बाजी की जाति की एक वनस्पति होती है। इसका सारा पौधा रुयेंदार होता है। इसके पत्ते २ इच से लेकर ६ इच तक लम्बे होते है। इसके फूल बहुत छोटे होते हैं।

उत्पत्ति स्थान—

यह वनस्पति हिमालय मे १२ हजार फीट की ऊचाई तक पैदा होती है।



नाम —

हि -लफा। आसाम-लफा। ले -मालवा व्हर्टिसिलेटा (Malva verticillata Linn)।

गुण धर्म व प्रयोग —

इसकी जड को कुक्कुर कास (हूपिंग काफ) मे देने से वमन होकर रोगी को शान्ति मिलती है। इसके पत्ते और कोमल डालिया पाचक होती है और यह गर्भावस्था की उत्तरावस्था मे स्त्रियो को दी जाती है। इसके सूखे पत्तो की राख पिलाने से गीली खुजली मे लाभ होता है।

लमतानी (Anaderon Peniculatum)

यह कुटजादि कुल (Apooynaceae) की एक बहुत बडी बडी शाखाओ वाली झाडी होती है। इसकी डालियो की छाल भूरी, मोटी और मुलायम होती है। इसके पत्ते ६ से १५ सेन्टीमीटर तक लम्बे और ३ ८ से ६ ३ सेन्टीमीटर तक चौडे होते हैं। इसके फूल बहुत छोटे और पीले रग के होते है। इसके बीज कुछ ललाई लिये हुये भूरे रग के होते है।

उत्पत्ति स्थान —

यह वनस्पति सिलहट, उडीसा, मैसूर, कोकण और पश्चिमी घाट मे पैदा होती है।

नाम —

हि —लमतानी। बबई—लमतानी। म —कावली। कन्नड —मनवाल्लि। ले —(Anodendron Paniculatum A Dc) एनोडेंड्रोन पेनिक्यूलेटम।

उपयुक्त अङ्ग—मूल।

गुण धर्म और प्रभाव —

अतिसार के अन्दर यह वनस्पति लाभ पहुचाती है। इसमे प्राय वे ही तत्त्व होते है जो इपेकिकोना मे पाये जाते है।

ल्यूबिस फरम्यून (Lithospermum officinate)

यह वनस्पति श्लेष्मान्तकादि कुल (Boraginaceae) की है और काश्मीर मे पैदा होती है।

नाम —

हि—ल्यूबिस फरम्यून। ले —लियोसपरमम आफिसीनेल (Lithospermum officinale Linn)।

इस वनस्पति के बीज पथरी को नष्ट करने वाले और उत्तम मूत्रल होते है।

लवंग लता (Lavunga scandens Ham)

यह फल वर्ग और नारङ्गी कुल (Rutaceae) की एक बडी झाड जैसी काटे वाली बेल होती है। बगाल मे इसके फल 'काकल' नाम से बिकते हुये मिलते है। फल से नीबू के समान सुवास और रुचि होती है। बगाल मे इन फलो को सुगन्धित तेलो मे उपयोग किये जाते है। कितने ही इसीको शास्त्रीय 'काकोली' मानते हैं। मूल और बीज दोनो का प्रयोग औषधि मे होता है। क्षय मे पित्त विकारो मे, रक्त के विकारो मे और दाह मे उपयोग होता है।

नाम —

स , हि —लवगलता। ब —लवग फल। ले —लवगा स्केन्डेस (Lavunga scandens Ham)।

गुण धर्म और प्रयोग —

मूल और फल—बिच्छू के दश मे प्रयोग करते है।

—आ० नि०





लहसन (Allium sativum Lirm Linn)

लहसुन को सस्कृत मे रसोन नाम से ही अधिक पुकारा जाता है। अत रसोन शब्द से ही इसकी निरुक्ति भी कही गई है। रस+ऊन-रसोन, अर्थात् रस (केवल अम्ल रस) से जो रिक्त है वही रसोन है। लहसुन के अन्दर आयुर्वेद मे वर्णित षट्रसो मे से अम्ल को छोडकर बाकी के पाचो रस विद्यमान है।

पचभिश्च रसैर्युक्तो रसोनाम्लेन वर्जित ।
तस्माद्रसोन इत्युक्तो द्रव्याणा गुणवेदिभिः ।।

नाम—

हि —लहसुन। सस्कृत-रसोन। यूनानी—स्कूर्दून। अग्रेजी —गार्लिक (Garlic) लेटिन-एलियम (Allium Sativum Linn) बगला-हरसुन। गुजराती-लसण। मराठी—लसूण। आसाम —नहरू। सिन्ध —पोम। अरबी —सूम। तामिल—वल्लइ पुडु। तेलुगु—वेल्लुल्लि। भोटिया —गोक्स। पारसी —सीर।

वर्ग —प्राच्य शास्त्रो की दृष्टि से हरितक्यादि और नव्य अन्वेषण के अनुसार लिलिएसी (Lilliaceae) वर्ग मे इसे माना गया है।

उत्पत्ति स्थान-

प्राचीन शास्त्रों के अनुसार लहसुन की उत्पत्ति के बारे मे बडी ही रोचक किवदन्ति मिलती है। कहते है कि इन्द्र देव के पास से जब गरुड ने अमृत का हरण किया तो इसी बीच एक विन्दु भू पर गिर पडा। बस इसी अमृतबिन्दु के स्थान पर एक पौधा उग आया जिसे रसोन (लहसुन) की सज्ञा दी गई। इस जनश्रुति का चाहे कुछ भी आधार रहा हो, किन्तु इतना अवश्य है कि लहसुन दोषहरण गुण के कारण काफी अशो मे अमृत की समकक्षता कर गया है।

भारत के पश्चिमोत्तर प्रदेशो (काश्मीर,पजाब, कुमायु आदि क्षेत्रो) मे यह बहुत उत्पन्न होता है।

परिचय—

प्याज (पलाडु) से मिलता जुलता ही इसका भी पौधा एक फूट के लगभग ऊचा और लम्बे लम्बे पत्तो वाला होता है। पत्ते चौडाई मे कुल ½ इच के लगभग चपटे और लम्बे अग्रयुक्त होते है। पुष्पचक्र मे सूखे, पतले और बहुत छोटे छोटे पुष्पक रहते है। पौधे के मूल मे लगने वाले कन्द को ही लहसुन कहते है। यह आठ से बीस तक की मीगियो मे विभक्त होता है। इन मीगियो मे बहुत तेज गध होती है। स्वाद भी तीव्र होता है।

रसभेद और रासायनिक संगठन—

हमारे प्राचीन आचार्यों ने प्रत्येक वनस्पति पर बहुत हीं सूक्ष्म खोजपूर्ण अध्ययन किया है। लहसन पर हुये उनके अन्वेषण की महत्ता आज भी हमे चकित कर देती है। इसके प्रत्येक भाग की रसानुभूति का चित्रण-देखिये—

कटुकश्चापि मूलेषु तिक्त पत्रेषु सस्थित ।
बीजे तु मधुर प्रोक्तो रसस्तद्गुण वेदिभि. ।।

अर्थात् जड मे कटु, पत्तो मे तिक्त, नाल मे कषाय, नालाग्र मे लवण और बीजो मे मधुर रस गुणज्ञ पण्डितो ने लहसुन के लिये कहे है।

आधुनिक शोध ग्रन्थो के आधार पर इसमे रासायनिक प्रक्रियाओ द्वारा बैक्टीरियानाशक तरल पदार्थ एल्लीसिन (Allicin) तथा प्रति जैतिकी तत्व ऐल्लीसेशन प्रथम और एल्लीसेशन द्वितीय (Allicetion 1 and Allicetion 2) पाये गये है। ये बाद के दोनो ही पदार्थ अच्छे एन्टीबायोटिक्स है और दोनो ही इथर [Ether] मे विलेय एव जल मे अविलेय है।

लहसुन मे एक बदामी पीले वर्ण का तैल [० १—० ३%] पाया जाता है। यह उडनशील होता है। इसमे एलिलडाइसलफाइड [Allyldisulphide $C_6 H_{10} S_2$] अधिक, एलिल प्रोपिल डाइ सल्फाइड [Allyl-propyl disulphide] कुछ तथा पोलीसल्फाइडस [Poly sulphides] थोडी मात्रा मे रहते है।

गुण और चिकित्सार्थ प्रयोग—

रसोनो बृहणो वृष्य स्निग्धोष्ण पाचन सर ।
रसे पाके च कटुकस्तीक्ष्णो मधुरको मत ।।



भग्न सन्धान कृत्कण्ठयो गुरु पित्तास्र वृद्धिद
वल वर्ण करोमेधा हितो नेत्र्यो रसायन ।।
हृद्रोग जीर्ण ज्वर कुक्षिशूल,
विवन्ध गुल्मारुचिकास शोफान् ।
दुर्नाम कुष्ठानलसाद जन्तु,
समीरण श्वास कफाश्च हन्ति ।।

लहसुन धातुओ का वढाने वाला, वीर्यवर्धक, स्निग्ध, उष्ण, पाचक, सारक, रस और पाक मे कटु, तीक्ष्ण तथा मधुर, भग्न सधानकारक, कण्ठहितकारी गुरु, पित्त और रक्तवर्धक, वल, वर्ण एव मेधाकारी, नेत्र हितकर और रसायन होता हे। इससे हृद्रोग, जीर्ण ज्वर, कुक्षिशूल, विवन्ध, गुल्म, अरुचि, कास, शोथ, अर्श, कुष्ठ, मन्दाग्नि, कृमि, वायु, श्वास और कास नष्ट होते है।

पचन सस्थान—आत्र स्थित केचुओ के लिये यह अमोघ शस्त्र है। इसके लिये लहसुन का टिक्चर दूध के साथ १० बूद से ½ ड्राम तक की मात्रा मे पिलाना चाहिये । लहसुन के ससर्ग से वनी रसोनादि वटी उदर गत सभी अजीर्ण रोगो मे हितकर है। घृत के साथ पिसा हुआ लहसुन खाने से वातिक गुल्म, अग्निमाद्य, उदरशूल, प्रभृति व्याधिया वहुत जल्दी ठीक होती है । लहसुन का रस एक छोटी चम्मच भर हिग्वष्टक चूर्ण १ माशा, घृत के साथ भोजन के प्रथम ग्रास में खाने से ग्रहणी व्रण (duodenal ulcer) कुछ ही दिनो मे ठीक होने लगता है। विशूचिका मे भी इसका टिक्चर अथवा रस अच्छा लाभदायक सिद्ध हुआ है। वास्तव मे आत्रवाहिनी के लिये यह अच्छा प्रतिदूषक है। आतो के यक्ष्मा, कैसर आदि मे भी इसका प्रयोग सफल रहा है।

आत्रिक और उपात्रिक ज्वर मे यह अच्छा प्रतिषेधक है। चिकित्सा और प्रतिरोध दोनो कार्यो मे यह समान लाभदायी है। आन्त्र शैथिल्य जन्य कुपचन मे इसका टिक्चर आधा आधा ड्राम की मात्रा मे यथावश्यक दिन मे २-३ वार पिलाते रहने से वहुत जल्दी आत्रगति स्वाभाविक होकर ठीक कार्य करने लगती है । मूत्रल गुण के कारण जलोदर मे भी प्रयुक्त करते हैं।

श्वसन सस्थान—लहसुन के ताजे रस को आधी चम्मच की मात्रा मे श्वासकुठार रस एक रत्ती के साथ अथवा स्वतन्त्र रूप मे देते रहने से कुकास (Whooping-cough) मे बच्चो के लिये बहुत ही लाभकारी पाया गया है। वयानुसार मात्रा को नियन्त्रित किया जाना आवश्यक है। व्याधि के सक्रमण मे स्वस्थ बच्चो को भी प्रतिषेधात्मक रूप मे दिया जा सकता है। इस प्रयोजन मे कुकासीय वैक्सीन (Whooping cough vaccin) से किसी भी तरह कम नही है। यह मेरा स्वय का कई वालको पर परीक्षणोपरान्त अनुभव है। सबसे बडे मजे की वात यह है कि कण्डु, ज्वर, दद्रु आदि व्याधियो मे निषिद्ध वैक्सीनों की भाति इसके लिये कोई प्रतिरोध नही है। केवल अल्प वय शिशुओ मे मात्रा नियन्त्रित रहनी आवश्यक है।

फुफ्फुस गत यक्ष्मा के लिये लहसुन का ताजा रस अथवा टिक्चर वडा ही उत्तम व्याधिनाशक सिद्ध हुआ है। यक्ष्मा के अतिरिक्त अन्य प्रकार की फुफ्फुस या फुफ्फुसावरण विकृतियों मे भी अच्छा लाभकारी हे। श्वसनिका प्रदाह श्वसनिकाभिस्तीर्णता, ग्रसनिका प्रदाह आदि मे इसका टिचर और स्वरस दोनो ही गुणकारी प्रभाव रखते है। इस हेतु इसका अवलेह भी वनाकर देते हैं। सभी उक्त प्रकार की व्याधियो मे छाती पर लहसुन को पीसकर लेप भी करते है। लहसुन से सिद्ध तैल की मालिश उरस्थित सचित श्लेष्मा को पिघला देती है। फुफ्फुस कोथ मे भी कई वैद्य इसके टिचर (५-२० बूद) को वर्धित क्रम से देते है। इसी प्रकार खडीय फुफ्फुस पाक मे यह टिक्चर आशुगुणकारी है।

मूत्रजनन सस्थान—यह मूत्रल गुण के कारण मूत्र कृच्छ्र मे भी लहसुन का प्रयोग किया जाता है। गर्भिणी मे इसका प्रयोग निषिद्ध है। आर्तवकृच्छ्रता मे इसके प्रयोग से मासिक खुलकर आता है। ऋतुस्राव की गडवडी के कारण होने वाली कटिवेदना मे इसका आन्तरिक और बाह्य दोनो ही प्रकार का प्रयोग अच्छा रहता है।

रक्तवह सस्थान—हृच्छोथ मे मूत्रल क्रिया के कारण लहसुन का प्रयोग उत्तम और शान्तिकारक है। नाडी व्रण और दूषित व्रणो मे इसके फाट से प्रक्षालन करते रहने से व्रण शुद्धि होकर जल्दी ही व्रण ठीक होने लगता है। दुष्ट नाडी व्रण मे २, ३ बूद के लगभग इसके शुद्ध और ताजे



रस का व्रण के चारो ओर नीचे की तरफ सूचिवेध करने पर वहुत ही आश्चर्यजनक लाभ दिखाई दिया है। खाज के लिये इससे सिद्ध किया कड़ुवा तेल मालिश करने के वास्ते अच्छा रहता है।

वात संस्थान—अगघात, गृध्रसी, सन्धि प्रदाह, कटि-शूल आदि मे इससे सिद्ध तैल की मालिश की जाती है। क्वाथ वनाकर मुख द्वारा भी रोगी को दिया जाता है। अपस्मार मे नस्य रूप मे यह अच्छा कार्य करता है। वात-विकारो मे क्षीर पाक विधि से भी इसका प्रयोग वहुत ही अच्छा रहा है। वातिक कर्ण रोग वाधिर्य, कर्णशूल आदि भी इसके रस अथवा सिद्ध तैल के टपकाने से अच्छे होते हैं। इस हेतु इन्हे कुछ उष्ण कर लेना चाहिए।

अन्य प्रयोग—विपम ज्वर मे प्रात खाली पेट घी के साथ खिलाना अच्छा रहता है। शीतजन्य अगवेदना और शिर शूल मे आन्तरिक प्रयोग के साथ ही स्थानिक लेप भी हितकर पाया गया है। डिफ्थेरिका मैम्वरेन मे लहसुन के स्वरस को शर्वत मे मिलाकर देने से आशातीत लाभ होते देखा गया है। सर्प विप मे भी कई चिकित्सक इसका वाह्यान्तर प्रयोग करते देखे गये हैं।

मात्रा—स्वरस ५ मे ३० वूद तक वयानुसार।

टिंक्चर—५ से ३० वूंद तक वयानुसार।

अवलेह—१ से २॥ माशे तक वयानुसार।

सावुत कन्द—एक मीगी से २० मीगी तक अवस्थानुसार।

सावधानी—छोटे वच्चो और शिशुओ को सुनियन्त्रित मात्रा मे देना चाहिये। गर्भिणी को इसका प्रयोग नही किया जाना चाहिए।

विषैले लक्षण और प्रतिरोध—हृल्लास, वमि, अतिसार, शिशुओ मे कभी-कभी अतियोग से मृत्यु भी हो जाती है। लहसुन के कारण हुए हानिकारक लक्षणो मे मीठे वादाम का तैल हितकर पाया गया है।

श्री व्रजमोहन वशिष्ठ ए० एम० बी० एस०
प्रधान चिकित्सक
राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय
मविवाली (श्रीगगानगर) (राजस्थान)

यह हरितवयादि वर्ग और पलाण्डु कुल (Liliaceae) का एक मशहूर कन्द है जो सारे भारत मे शाक तरकारी के साथ मसाले के रूप मे खाने के काम मे लिया जाता है। इसकी खेती समस्त हिन्दुस्तान मे की जाती है। इसका पौधा प्याज के पौधे की तरह होता है। इसका कन्द जमीन के अन्दर प्याज के कन्द की तरह लगता है।

उत्पत्ति स्थान—

समस्त भारतवर्ष मे कृषि की जाती है। उष्ण कटिवन्ध के प्रत्येक प्रदेशो की जलवायु इसके अनुकूल है। उत्तर प्रदेश मे यह वहुत वोया जाता है।

सक्षेप विवरण—कद से ही पुष्प दण्ड निकलने वाला वर्पायु, दुर्गन्धमय छोटा क्षुप। ऊचाई १ से २ फीट। कन्द के भीतर १०—१२ दाने या कलिये, पान कोमल, समतल, लम्बी चाच वाले, पतले कद के चारो ओर से निकले हुये। पानो के वीच की नाल। ऊपर की छत्र रचना का सम्बन्ध कद और पुष्प दोनो से, लगभग गोलाकार। पुष्प सफेद पुष्प वाह्य कोष के पत्र ६, नीचे चौडे, ऊपर सकडे नोकदार। भीतर पु केसर है, तन्तु २ या ३ दात वाले, जड मे नीचे कद, सफेद कुछ रक्त रङ्ग मिश्रित रहता है। यह रसोन और महा रसोन के भेद से २ प्रकार का होता है। जिस रसोन के पत्ते दीर्घ और चौडे होते है। जिसके कन्द स्थूल होते है, उसे महारसोन और छोटे पत्ते वाले को रसोन कहते है। यह गुलावी और सफेद रग भेद से भी दो तरह का होता है। कीर्तिकर और वसु ने एलियम की सवा तीन सौ जातिया लिखी है। फूलने फलने का समय—वसत ऋतु।

नाम—

स०—लशुन, रसोन, उग्रगव, महौषधि, अरिष्ट मलेच्छकन्द, यवनेष्ट, रसोनक। हि०—लहसन। ब०—रशुन लशुन। म०—लसूण, पाण्ढरी, लसूण। गु०—लसणी। राज०—लसण। प०—थोम। काश्मीरी—रोहन। सिंधी—थुम। आसामी—नहरु। दक्षिणी शनम। ते०—तेल्या उल्लि। ता०—वैल्लैपुण्डु। केनरीज—वेरलुल्लि। मल०—वेल्लुल्लि। कोकडी—लोस्सुन। भूटानी—गोक्यश। सिहावी—सुदुलुत। वर्मी—कैसुम्फिऊ, चेतौथु। मलयी—

दवङ्ग, लसुन । चीनी—स्वान, स्वानतिउ । अरबी—सोर, फोम । तुर्की—सम्सल । फा०—सरिविरादरए प्याज । कम्बोडिया—कच्छई । अंग्रेजी—गर्लिक (Garlic)फासीसी—(Ail) आइ । स्पेनिश—आजो (Ajo) । पोलिश—जोसनेक (Czosnek) ग्रीक—एग्लिदिओन (Aglidion) इटालियन—आलिओ (Alio) । पुर्तगाली—आलिहो (Alho) । रूमानियन्लि—अइयु (Aiu) । जर्मन—गार्टेनलाश (Gartenlanch) । स्वीडिश—ह्विलोकेन (Hviloken) डच—नाफ्लूक (Knoflook) । रशियन—शीनॉक (Tschenock) । लेटिन—एलियम सेटिवम (Allium sativum Linn) ।

रासायनिक संगठन—

लशुन का क्रियाशील तत्व एक उडनशील तेल है (यह तेल मूत्रल और कफघ्न है । रक्त दवाव वृद्धि का ह्रास करता है रक्त प्रसादन है) कुचली हुई गाठों को तिर्यक पातन करने से यह प्राप्त किया जाता है। इसमे लहसन की सी तेज गन्ध आती है । इसके अतिरिक्त प्रथिन गोंद, वसा और शर्करा मिलते है । उडनशील तेल का प्रथक्करण करने पर विविध प्रकार के गन्धक द्रव्य मिलते है । तेल की मात्रा ½ से १ बूंद तक है डाक्टर महसकर के अनुसधान अनुसार लहसुन मे प्रथिन ६ ३% वसा ० २% कर्बोदक २९%, १०० ग्राम (३½ औंस) मे १४२ उष्मैक तथा दशहजार भाग के भीतर खट २ ५, स्फुर ३० ५ । लोह १३१ भाग एव १०० ग्राम मे जीवन सत्वक १३ मि ग्रा मिलता है । उपयुक्त अङ्ग—कन्द की कलिया । मात्रा—३ से ६ माशे ।

गुण धर्म तथा प्रयोग—

लहसुन मे मधुर, तिक्त आदि ५ रस है, एक अम्ल रस इसमे नही है । इसके कद में चरपरा रस, पान मे कडवा, नाल मे कसैला, नाल के अग्रभाग मे नमकीन और बीजो मे मधुर रस रहा है । लहसुन मास पौष्टिक, कामोत्तेजक, स्निग्ध, उष्ण वीर्य, पाचन, सारक, रस और विपाक मे चरपरा, तीक्ष्ण और अनुरस मधुर है । यह भग्न सधान कर, स्वर प्रदाह, गुरु, पित्तवर्द्धक, रक्तवर्धक, चक्षुष्य और रसायन है । हृदय रोग, जीर्ण ज्वर, कुक्षिशूल मलावरोध, वातगुल्म, अरुचि, कफ, काम, क्षय, अर्श, शोथ, हिक्का, अग्निमाद्य, कृमि, आमवात, वातरोग, श्वास और कफ प्रकोप को नाश करता है ।

वक्तव्य—लहसुन सेवन करने वालों को शराब, मास और अम्ल पदार्थ हितावह है । परिश्रम, सूर्यताप का सेवन, क्रोध, अति जलपान, दूध और गुड हितकर नही है ।

—भा प्र

लहसुन अतिसार, वात प्रमेह, मधुमेह, रक्तपित्त, वातरक्त, वमन इन रोगो मे पीडितो को नही देना चाहिये । एव सगर्भा को भी (गर्भाशय उत्तेजक होने से) नही दिया जाता । कितने ही आचार्यों ने शोष रोग मे अपथ्य माना है, किन्तु लहसुन मे कीटाणुनाशक, शोथहर, कफघ्न, ज्वर शामक और सारक गुण होने से हितावह है । जिन क्षय रोगियो को कामोत्तेजना अत्यधिक होती हो और अतिसार हो, उनको लहसुन न दिया जाय तो अच्छा माना जायेगा । इस सारग्राही दृष्टि से आचार्य वचन को सार्थक मान सकते है ।

—गां औ र

लहसुन—गर्म, चरपरा, पिच्छिल, स्निग्ध, भारी, स्वादिष्ट, बलकारक, वीर्य वर्द्धक, मेधा जनक, स्वर को उत्तम करने वाला, वर्ण को सुन्दर करने वाला, भग्न सधानकारक और तीक्ष्ण है ।

—रा नि

लहसुन—शरीर मे सर्व प्रकार की फैली हुई वात की पीडा का नाश करने वाला, सारक, वृष्य, स्निग्ध, भारी, अरुचि को दूर करने वाला, खासी को हरने वाला, ज्वर का नाश करने वाला यथा कफ, श्वास और गुल्म को विनाश करने वाला, केशो को हितकारी, कृमिनाशक, प्रमेह, ववासीर, कोढ और सूजन को क्षय करने वाला, गर्म, भग्न सधान कारक, रक्त पित्त को कुपित करने वाला, शूल को शान्त करने वाला और जरा व्याधि का नाश करता है ।

—शा नि

नावनीतकम् के लेखक ने इसे हल्का (लघु) आहार माना है । प्रतिदिन के अनुभव से यह ठीक प्रतीत होता है । अपनी तेज बुरी गन्ध के कारण यह वोझल समझ लिया जाता है । लेकिन वास्तव मे यह सुपच हल्का आहार द्रव्य है ।

अम्ल, गर्म और स्निग्ध होने से यह वायु को नष्ट करता है। गर्म, तीक्ष्ण तथा कटु होने से कफ पर विजय प्राप्त कर लेता है। तीनों दोषों को दूर करने वाला यह सब रोगों को नष्ट कर देता है। सुश्रुत जी ने इसके गुण अधिक विस्तार से लिखे हैं। चरक के लिखे गुणों के अतिरिक्त वे इनको तीक्ष्ण, लेसदार, हलका दस्तावर, बलकारक बुद्धि स्वर, रंग तथा आंखों के लिये लाभदायक, टूटी हुई हड्डी को जोड़ने वाला, हृदय के रोग, पुराना बुखार, शरीर का सूजना, कोख का शूल, कब्ज, अरुचि, मेदे की अग्नि का मन्द होना, खांसी, दमा, कफ के रोग आदि में वे इनका प्रयोग किये जाने की सिफारिश करते हैं।

भावमिश्र जी ने इनको पाचक, गले के रोगों के लिये हितकर, रक्तपित्त उत्पन्न करने वाला, सोज (शोफ) उतारने वाला रसायन द्रव्य विशेष माना है।

वैद्यदेव जी ने इसे हिचकी, बुखार, मूत्र संस्थान के रोग, पुराना जुकाम, बवासीर तथा शूल में और बालों को बढ़ाने के लिये लहसुन के कन्दों के प्रयोग का उल्लेख करके इसकी उपयोगिता और बढ़ादी है।

काश्यप संहिता में ग्रहणी, विदाह, खुजली, फोड़े, त्वचा की विवर्णता तथा चर्म के सब रोग, रतौंधी, अङ्ग का मारा जाना, पथरी, कष्ट से पेशाब आना, भगन्दर, स्त्रियों के मासिक स्राव के रोग, तिल्ली और वातरक्त पर भी हितकर लिखा है।

यूनानी मतानुसार लहसुन दाहक स्वाद वाला, मूत्रल उदर वातहर, विषघ्न, कामोत्तेजक है। प्रदाह, पक्षाघात, संधि स्थानों में वेदना, प्लीहा, यकृतवृद्धि और फुफ्फुस के रोग, स्वर भंग, तृषा, दांतों पर मल जमना, कटिशूल, जीर्णज्वर, श्वेत कुष्ठ और रक्त के गाढ़ापन को दूर करता है।

डाक्टरी मतानुसार—

डाक्टर देसाई ने लिखा है कि 'लहसुन उष्ण, लघु, दीपन, उदर वातहर, उत्तम कृमिहर, सबल, और मूल्यवान उत्तेजक, कफघ्न, प्रबल कोथ प्रशमन (सड़े को रोकने वाला), मूत्र जनन, वातहर और बल्य है। इसमें रहा हुआ त्वचा, फुफ्फुस और वृक्कों द्वारा बाहर निकलता है। तेल के हेतु से श्वास नलिका में श्लेष्म शिथिल होता है, सरलता से बाहर निकलता है, कफ की दुर्गन्ध का ह्रास होता है और कफ के भीतर अवस्थित कीटाणु नाश होते हैं। वात नाड़ियों के ऊपर भी लहसुन की प्रबल उत्तेजक क्रिया होती है। मात्रा—स्वरस की १० से ३० बूंद।

वक्तव्य—मात्रा अधिक देने पर आमाशय और अन्त्र में उग्रता आकर वमन और विरेचन होता है स्वरस शहद और घी मिलाकर देने से दाहक गुण श्लैष्मिक कला को हानि नहीं पहुंचा सकता।

लहसुन शुद्धि—परिपक्व अच्छे लहसुन के ऊपर से छिलके निकाल और भीतर के अंकुर को निकाल कर रात्रि को मट्ठे में भिगो देवे। सुबह लहसुन को निकाल लेने पर दुर्गन्ध और उग्रता दोनों कम हो जाते हैं। यदि उग्रता अधिक कम करनी हो तो ३ दिन उसी तरह नया नया मट्ठा मिलाकर भिगोवें। इस शोधन से उग्रता कम होती है, उतनी ही उसकी शक्ति कम होती है। अतः रोगी को सहन हो सके तो बिना शोधन किये उपयोग में लेवे या शुद्ध लहसुन अधिक मात्रा में देवे।

उपयोग—क्षय रोग में लहसुन बहुत अच्छा कार्य करता है ऐसा सुन्दर सुश्रुताचार्य जी का अनुभव है। विधिवत् रसोन कल्प कराने का विधान किया है। चक्रदत्ताचार्य की आमवात रोग पर लिखी हुई 'रसोन सुरा' है उसका प्रयोग श्री सुखराम जी वैद्यराज ने अनेक क्षय पीड़ित रोगियों को सफलतापूर्वक कराया है। इस सुरा से क्षय कीटाणु नष्ट होते हैं और उत्तरोत्तर लाभ होता जाता है। श्री वाग्भट्टाचार्य जी ने उत्तर स्थान के भीतर रसायनाध्याय में लिखा है कि 'पित्त और रक्त' इनके अतिरिक्त किसी आवरण से आवृत्त वायु और अनावृत वायु प्रकोपज रोगों पर लहसुन से कोई अच्छी औषधि नहीं है।

डा० देसाई ने लिखा है कि "वात विकार पर लहसुन खिलाया जाता है। एवं बाह्य लेप भी कराया जाता है। गृध्रसी, पीठ अकड़ना, हिस्टीरिया, अर्दित (मुंह टेढ़ा हो जाना) पक्षवध, एकांग वात, उरु स्तम्भ (साथल रह जाना) इन सब रोगों पर लहसुन और वाय विडंग को १६-१६ गुने दूध और जल के साथ मिलाकर उबाले। पानी जल जाने पर दूध को छान ठंडा करके पिला देवे। इस क्वाथ

से वातनाडियो की शक्ति कायम रहती है। वच्चो की सूखी खासी भी इस मिश्रण से नष्ट हो जाती है।

काली खांसी पर अक्सीर लहसुन—श्री रामेश वेदी जी का अनुभव है कि 'लहसुन' जैसी सरल तथा सस्ती दवा के प्रयोग से जल्दी ही आशातीत लाभ नजर आता है। इसलिये मैं काली खासी से बचने के लिये लहसुन के प्रयोग की जोरदार सलाह दू गा। काली खासी को कुत्ता खासी, कुकुर खासी और हुपिंग कफ आदि नामो से जानते है।

लक्षणो मे कमी—लहसुन को कुचल कर इसकी गंध को प्रतिदिन चार घण्टे अन्त श्वास मे लेने से काली खासी के कष्टदायक लक्षण शीघ्रता से कम हो जाते है। काली खासी मे इसकी तुरियो की माला वच्चोके गले मे पहिनाये जाने की ग्राम्य प्रथा सभवत. इसी आधार पर प्रचलित है छोटे वच्चो और शिशुओ को कुक्कुर खासी की आरम्भिक अवस्था मे वीस से तीस वद तक लहसुन का ताजा रस शर्वत मे मिलाकर हर ४ घण्टे पीछे देने से जल्दी आराम पहुचाता है।

आशा के विपरीत विल्कुल स्वस्थ—श्री युत्त वी०वी० गैडगिल (ब्रिटिश मेडिकल जनरल ५ अगस्त १९१६ पृष्ठ १६८) लिखते हैं कि जब मैं अपने घर भारत गया तो घर मे एक वच्चे को काली खासी थी। उससे जल्दी ही तीन वच्चो को छूत लग गई। वेलाडोना, एन्टीपायरीन, हल्का हाइड्रोसाइनिक एसिड, एड्रिनलीन आदि दवाओ का विफल प्रयोग करने के वाद मैंने उन्हें लहसुन दे दिया। तीन खुराक देने के वाद वच्चे आश्चर्यजनक रूप से अच्छे होने लगे। दौरो की सख्या कम हो गई, और ये रहते भी वहुत कम समय तक थे। एक रोगी को तो जो सवसे अधिक बुरी अवस्था मे था दौरे के वीच मे उल्टी हो जाया करती थी और गुदा की मासपेशियो के शिथिल हो जाने से मल निकल जाया करता था चार खुराक देने के वाद मे दोनो लक्षण लुप्त हो गये। ये रोगी चैन की नीद लेने लगे और सव के सव एक दो सप्ताह तक आशा के विपरीत, विल्कुल ठीक हो गये। छिले हुए लहसुन को दूध मे पकाकर इनको दिया जाता था। चार साल के वच्चे के लिये इस दूध की मात्रा आधा से पौन औंस तक थी।

श्री रमेशवेदी जी का अनुभव—इसी तरह का अनुभव मुझे १९४५ की गर्मियो मे हुआ। घर मे वडे भाई के वच्चो को काली खासी थी। उनसे इनकी छूत मेरे दोनो वच्चो को लग गई। रात को वे विशेष रूप से वहुत वेचैन रहते थे। अपवाद रूप से भी कोई रात ऐसी नही वीतती थी कि जिस रात को वे खासते खासते उल्टी न करते हो और विस्तर वदलने के लिए हम लोगो को जागना न पड़ता हो। मैंने अपनी पत्नी से लहसुन प्रयोग की वात कही। दो तीन तुरियो को कुण्डी-सोटे मे रगडकर आधा चम्मच पानी मे मिलाकर कपडे मे रस निचोड लिया। जरा सी खाड मिलाकर देने से छोटी मुन्नी शशि (आयु ८ माह) तो झट पी गई। वडे वच्चे सुरेश(२॥ वर्ष आयु)ने भी पी तो लिया परन्तु वह लहसुन की तेजी पर आपत्ति करता था। मिर्च लगने की शिकायत करता था। पहले दिन केवल २ वार ही रस दिया गया। इसके आश्चर्यजनक प्रभाव से हम वहुत प्रभावित हुए। रोग अभी शुरू ही हुआ था इसलिये हम लोगो को तो कुल ४-५ रोज तक ही लहसुन का प्रयोग करने की जरूरत पडी थी। एक वात मैंने नही सोची। अवोध शिशु लहसुन की कलियो से खेलते रहते हैं। इससे इलाज मे सुविधा हो जाती है। अपनी मुन्नी के सामने हम छिली हुई कली को रख देते थे। वह उसे उठाती, मुह मे लेती और उसे मुह मे चवाने की कोशिश करती। इससे लहसुन का लाभ उसे पहुचता रहा और उसे रस पिलाने की जरूरत नही पड़ी। छिली २-३ कलियो को उसकी जेव मे डाल दिया करते थे और एक कली उसके हाथ मे दे दिया करते थे।

डा० मिनचिन (१९१८) अपना अनुभव लिखते है—शिशुओ और छोटे वच्चो को शर्वत मे २०-३० वूंद तक ताजा रस हर ४ घण्टे वाद देना चाहिए। रोग आरम्भ ही हुआ है तो जल्दी ही आराम हो जाता है।

(सचित्र आयुर्वेद से साभार)

डा० मिचीन लिखते है कि एक जवान मनुष्य जिसके कि सारे पैर और पैर के पजे की हड्डी मे क्षय रोग लगा हुआ था वह मेरे पास सलाह लेने के लिए आया। उस रोगी को देखकर मैंने उसे पैर कटवाने की सलाह दी।

परन्तु उस रोगी ने ऐसा करने से इनकार कर दिया। छः माह पश्चात् वही रोगी मुझे बिलकुल तन्दुरुस्त हालत मे मिला। मैंने आश्चर्य चकित होकर उससे सब हाल पूछा। उसने बताया कि लहसुन नमक और मेनसिल इन तीनो चीजो को समान भाग लेकर इनको पीसकर इनका लेप करने से ही मैं अच्छा हुआ हू। यह देखकर बडा ताज्जुब हुआ और उसी समय से मुझे लहसुन के गुणो की जानकारी हुई। उसके पश्चात् स्वय अनुभव के लिए मैंने अनेक रोगियो पर इसे आजमाया और इसमे मुझे आश्चर्यजनक सफलता मिली। लहसुन मे एलील सल्फाइड नामक जो तत्व रहता है। वह इसके रस मे ३% से भी अधिक पाया जाता है। यही तत्व क्षय के जन्तुओ को नष्ट करके शरीर के भिन्न-भिन्न भागो से क्षय रोग को नष्ट करता है।

एलील सल्फाइड कितना चमत्कारपूर्ण रीति से मनुष्य के सारे शरीर मे फैल जाती है इसका अनुभव लेना हो तो इसकी २-४ कलियो को पीसकर उनकी लुगदी किसी के पैर की पगतली मे बाध देना चाहिये। १५-२० मिनट के पश्चात् ही उस मनुष्य की श्वास को सू घने से मालूम होगा कि उसकी श्वास मे लहसुन की गन्ध आने लगी हैं। इससे मालूम होता है कि लहसुन मे रहने वाला अलील सल्फाइड नामक तत्व अतिशीघ्रतापूर्वक पगतली की त्वचा के पर्दों मे घुसकर रस और रक्तवाहिनी नसो के द्वारा सारे शरीर मे फैलकर अन्त मे फेफड़ो मे होता हुआ श्वास मार्ग के द्वारा प्रत्येक छोटे बडे भागो में प्रविष्ट हो जाता है इसलिये इसका उपयोग नियमित रूप से जारी रक्खा जाय तो शरीर के किसी भी भाग मे रहने वाली ट्यूवरक्युल वेसिली नामक क्षय के कीटाणुओ को नष्ट करके सब प्रकार के क्षय के उपद्रवो को शान्त करता है। क्षय के जन्तुओ की वजह से होने वाली हर प्रकार की व्याधियो को अर्थात् फेफडो के क्षय से लेकर चमडी की सडान के समान विकट रोग भी सिर्फ लहसुन के उपयोग से अच्छा करने के दृष्टान्त उपरोक्त डाक्टर अपने अनुभव से बतलाते है। वे एक दस वर्ष के बच्चे का उदाहरण बतलाते हैं। इस बच्चे की हाथ की हड्डी मे क्षय रोग लग गया था। जिससे उसके हाथ की एक ऊगली भी काट डाली गई थी। फिर भी उसकी हथेली मे ३ गहरे नासूर पडे हुये थे जिनसे हमेशा पीव बहता रहता था। इस रोग के ऊपर जब सब उपाय निष्फल हो गये तब लहसुन की कुछ कलियो को बारीक पीसकर उनको चर्बी मे मिला। २४ घण्टे मे एक बार उस हुये हाथ के ऊपर बाधी जाती थी, चर्बी मिलाने का कारण लहसुन के दाह के असर को कम करना था। इस प्रकार चर्बी मिला देने पर भी प्रारभ मे उस बच्चे को बहुत जलन सहन करनी पडी। लेकिन उसको बहुत शीघ्र फायदा दिखाई देने लगा और सब मिलाकर करीब डेढ महीने मे उसका हाथ बिलकुल अच्छा हो गया।

यूरोप मे सन् १९१४ मे जो भीषण युद्ध चला उसमे भी इस सम्बन्ध के कुछ अनुभव एक आर्मी सज्जन को हुये। उनका कहना है कि लहसुन के रस मे थोडा गर्म करके ठण्डा किया हुआ पानी मिलाकर उस पानी को चाहे जैसे चेप लगे हुये घाव पर लगाने से अथवा उस पानी से उस घाव को धोने से अथवा उस पानी मे कपडे को तर करके उस घाव पर बाधने से सडान उत्पन्न करने वाले चेपी कीटाणुओ का नाश होकर बहुत जल्दी घाव भर जाता है। चाहे जितने बडे और हठीले घाव पर भी लहसुन का रस और पानी मन्त्र शक्ति की तरह लाभ पहुँचाता है। उपरोक्त आर्मी सज्जन ने यूरोप के सारे रण क्षेत्र मे अपने इस अनुभव का प्रचार कर दिया था। उमने स्वीकार किया था कि यह आविष्कार मेरा स्वय का नही बल्कि एक फ्रेंच किसान की स्त्री का है। जो कि युद्ध क्षेत्र के अन्दर घायलो के घावो को आश्चर्यजनक रीति से दुरुस्त करती हुई मेरे दृष्टिगोचर हुई थी। उसके पश्चात् मैंने भी अनेक रोगियो पर इसका अनुभव किया और पूर्ण विश्वास होने के पश्चात् ही इस योग को दुनिया के लाभ के लिये प्रकाशित कर रहा हूँ।

डिफ्थीरिया (गलरोहिणी) पर लहसन—डिफ्थीरिया की चिकित्सा मे यह किसी भी दूसरी औषधि से अच्छा है। जरा सा हल्का करके इसका प्रयोग करना अच्छा रहता है। प्रयोग करने का सबसे अच्छा सरल तरीका यह है कि रोगी एक कली को मुह के अन्दर रख लें। और

उसे दातो के बीच मे जरा सा चबाये जिसमे थोडे से परिमाण मे रस निकल आये, इसे निगल लेने पर फिर कुछ देर बाद पहले की तरह रस निकाल ले। कली मे से पूरा रस निकल आने तक यह क्रम जारी रखना चाहिये। कली की चटनी सी बन जाने पर इसे निगल लेना चाहिये और तब दूसरी तूरी मुह मे रख लेनी चाहिये। इस विधि से ३-४ घण्टो मे एक दो औंस लहसुन की कलिया खा लेनी चाहिये - झिल्ली जल्दी ही लुप्त हो जाती है, रोगी निश्चित रूप से आराम अनुभव करता है। तापमान शीघ्र ही गिरने लगता है। और कुछ घण्टो मे साधारण तक आ जाता है। इस भयङ्कर बीमारी के लिये लहसुन अमोघ औषधि है।

जो रोगी तुरियो को खाना बहुत गर्म अनुभव करते हो उन्हे ताजे रस मे बराबर हिस्से पानी मिलाकर हल्के किये हुये घोल को झिल्ली पर बराबर लगाना चाहिये। ५०% इस घोल को एक छटाक की मात्रा मे पहले चार घण्टे मे रोगी खा ले।

झिल्ली लुप्त हो जाने के एक सप्ताह बाद तक भी एक या दो औंस गाठ प्रतिदिन चबा लेनी चाहिये। डिफ्थीरिया के रोगी को लहसुन की न तो गन्ध आती है और न स्वाद वह इसे केवल गर्म अनुभव करता है।

आधा शीशी के दर्द के लिए अद्भुत योग—लहसन को छीलकर खरल मे डालकर पीस ले और किसी बारीक मलमल आदि के कपडे से छानकर १ तोला पानी निकाल ले तत्पश्चात् उसमे ६ रत्ती हीग नढिया डालकर फिर खरल करे। जब भली प्रकार हल हो जावे तो शीशी मे डालकर सुरक्षित रखे और आवश्यकता के समय इसमे से ३ बूद लेकर रोगी के उस नथने तक टपकावे जिस ओर पीडा हो। यदि आधा शीशी के दर्द के कारण कफ हो तो ५ मिनिट मे आराम हो जायेगा।

आधा शीशी के दर्द पर लेप—लहसन को छीलकर शहद मे मिलाकर खूब अच्छी तरह खरल करे, तत्पश्चात् दर्द की ओर वाली कनपटी पर लेप करे।

अर्धाङ्ग के लिये तेल—लहसन का पानी ५ तोला, कडुआ तेल आधा सेर दोनो को मिलाकर आग पर रखे जब समस्त पानी जलकर केवल तेल ही तेल शेष रहे तो शीशी मे रख लेवे और रोगी के जलाकर मालिश करें और नीचे की दवा पिलायें।

अर्धाङ्ग के लिए चाय का योग- केवल प्रात तथा सायकाल चाय पकाकर उसमे ३ माशा लहसन का पानी मिलाकर पिलाया करे और चाय को मीठा करने के लिए खाड के अतिरिक्त मधु मिलाकर बिना दूध मिलाये पिलाया करे। यदि भूख को रोकते हुए ५-६ दिन तक इस चाय का प्रयोग कर लिया जावे तो प्राय आराम होजाता है।

सन्यासी योग—रोगी को प्रथम दिन लहसन की कली एक दूसरे दिन दो और तीसरे दिन तीन इस प्रकार एक कली प्रतिदिन बढाते जावे और ४० दिन तक ४० खिलाकर फिर एक-एक कम करना प्रारम्भ कर दे, और एक पर लाकर छोड दे। औषधि सेवनकाल मे ही रोग समूल नष्ट हो जायेगा।

अर्धाङ्ग व अर्दित के लिए अद्भुत पेडे—लहसुन साफ किया हुआ पाव भर आध सेर दूध डालकर मद मद आग पर पकावें। जब भली भाति एक दिल हो जाय तो खूब अच्छी तरह मलकर छान ले और फिर दुबारा आग पर रखकर पकावे यहा तक कि खोया बन जावे फिर इसमे बराबर खाड मिलाकर २-२ तोला के पेडे बनाले और उसमे से रोगी को एक पेडा प्रात काल तथा एक पेडा सायकाल खिलाया करे। अर्धाङ्ग तथा अर्दित के लिए अत्यन्त लाभप्रद है।

कर्ण पीडा के लिए अक्सीर तेल—१ तोला सरसो के तेल मे ३ माशा लहसन की कलिया और १ रत्ती अफीम जलाकर निकाल ले।

विधि—तेल को लोहे की कडछी या पीतल की कटोरी मे डालकर धधकते हुये कोयलो पर रखे। जब पकने लगे तब लहसन छीलकर डाल दे जब जल चुके तब उतार कर गुनगुना रहने पर अफीम मिलाले और आवश्यकता के समय गर्म करके कान मे २-३ बूद डाले। दर्द शीघ्र बन्द हो जायेगा।

सरल योग—लहसन का पानी गुनगुना करके २-३ बूद कानो मे डाले। इससे वह दर्द जो सर्दी के कारण होता है शीघ्र बन्द हो जाता है।

दमा पर योग—२ तोला घी मे ३ कलिया लहसन की पिसी हुई भून ले और उसमे १ तोला शहद मिलाकर के रोगी को खिलावें। कफजनित श्वास के लिए अत्यन्त लाभप्रद है।

दमा की अकसीर चिकित्सा—जिससे पुराने से पुराना दमा समूल नष्ट हो जाता है। सफेद सखिया ५ तोले को खरल में डालकर खूब पीसे और बारीक होने पर उसमें थोड़ा थोड़ा लहसुन का पानी डालने जावें और खूब जोर दार हाथों से खरल करने लगे। जब पानी शुष्क होने लगे तो और डाल दिया करें, इसी प्रकार पूरी दिलेरी और हिम्मत से पूरा १० सेर पानी खरल करते-करते प्रविष्ट करदें। इसके पश्चात् लौंग और जायफल के जुशादा का पानी जो कि ५ सेर पानी मे औटाकर सवा सेर रह गया हो उसको भी खरल के द्वारा प्रविष्ट करदे। बस दवा तैयार है।

सेवन विधि—पहले रोगी को २-३ दिन तक खिचडी मे घी मिलाकर खिलाये फिर जमालगोटा का जुलाब देकर पेट साफ कर दे। जब रोगी को दो दिन तक बिना-घी की खिचडी खिलाकर फिर दवा का सेवन करावे जिसकी विधि यह है कि प्रतिदिन १ रत्ती दवा ५ तोला घी के साथ खिला दिया करे और उसके बाद दिन भर मे कम से कम १० तोला और अधिक से अधिक २० तोला घृत प्रतिदिन पिला दिया करे। इस प्रकार १ सप्ताह के अन्दर दमा चाहे २०वर्ष का क्यों न हो दूर होजाता है, किन्तु इस बात को याद रखे कि जो रोगी घी न पी सकते हो उनको इस दवा का सेवन कदापि न कराना चाहिये, इस दवा के सेवनकाल मे खाना बिलकुल सादा मूग की दाल, रोटी या घिया कद्दू का साग खिलावे। प्रथम तो जहा तक हो सके रोगी को घृत ही खूब पिलावे जिससे भूख न लगे।

खारिश खुजली—लहसुन का पानी १ तोला, सरसो का तैल पावभर मिलाकर शरीर पर मालिश कराये और रोगी को १ घन्टा धूप मे बैठाकर गरम पानी से नहलाए खारिश के लिए बहुत लाभप्रद है।

दाद [चम्बल] पर—लहसुन को खूब बारीक पीसकर इसमे शुद्ध मधु मिलाकर ऊपर लेप कर दिया करे। कुछ बार लेप करने से चम्बल तथा दाद बिलकुल दूर हो जायेगा।

सधिवातपर लहसुन का हलवा—यह सधिवात के लिये अत्यन्त लाभदायक है इसके अतिरिक्त कफ को दूर करता है और गुर्दो को शक्ति देता है—

योग—लहसुन की कलिया छिली हुई २ सेर लेकर गाय के २ सेर दूध मे पकावे। जब दूध का भलीभाति मावा हो जावे तब २ सेर चीनी मिलाकर हलवा बनावें। मात्रा—२ तोला प्रतिदिन खाये। कुछ दिनो के सेवन से पूर्ण आराम हो जायेगा। अकसीर दवा है।

बिच्छू के विष का अगद—लहसुन का रस ३ तोला, शुद्ध मधु ३ तोला दोनो को मिलाकर चटाने से बिच्छू का विष उतर जाता है।

बिच्छू काटने का सरल योग—नमक और लहसन दोनो मिलाकर पीस दे और काटे हुये स्थान पर लेप करे विष उतर जायेगा।

विषम ज्वर—लहसन का कल्क कर उसमे तिल तैल (साधी) और सैंधानमक मिलाकर सुबह सेवन कराने पर विषम ज्वर, वात कफ ज्वर, और वात्त प्रकोप दूर होते है।

ज्वर मे शीतांग—अधिक स्वेद आकर शरीर शीतल हो गया तो लहसुन का रस, नागर बेल के पान का रस, अदरख का रस तीनो को मिला उसमे हीग डालकर मालिश करने पर शरीर जल्दी उष्ण बन जाता है।

विसूचिका—अपचजन्य विसूचिका का आरम्भ होने पर आध घन्टे पर रसोन वटी का सेवन कराने पर वमन और अतिसार जल्दी बन्द हो जाते है।

उदर शूल—लहसुन की चटनी बना शराब के साथ सेवन करने या रसोन अर्क सेवन कराने पर अपच जनित और वातप्रकोप से उत्पन्न शूल नष्ट हो जाते है।

वातज गुल्म—शुद्ध लहसुन २ तोले की चटनी, दूध ४० तोले और जल ४० तोले मिलाकर दुग्धावशेष क्वाथ करें। फिर छानकर पिलाते रहने पर वातगुल्म, उदावर्त्त, गृध्रसी, जीर्णविषम ज्वर, हृदयरोग, विद्रधि, क्षय और शोथ रोग दूर होते है।

आमवात (गठिया)—लहसुन का रस ६ माशा, गोदुग्ध ५ तोले मे मिलाकर पिलाते रहने पर भी जिस तरह अग्नि रुई को जला डालती है उसी तरह लहसुन

आमवात और शीतवात को जला देता है।

रेणुकादि क्वाथ-आमवात पर—लहसन, सोठ और निर्गुण्डी, इन तीनो को मिला २–२ तोले को ८ गुने जल मे मिलाकर उबालें। आधा जल शेष रहने पर छानकर इस प्रकार सुबह शाम पिलाते रहने पर जीर्ण आमवातज वेदना शमन हो जाती है।

ऊरुस्तम्भ—लहसुन को साफ कर १ तोला लें और भुनीहीग, जीरा, कालाजीरा, सैंधा नमक, काला नमक सोठ, काली मिर्च, पीपल ये सब ३–३ रत्ती (या न्यूनाधिक चटनी मे स्वाद आवे उतना) मिलाकर कल्क करें। फिर उसमे थोंडा तिल्ली तैल मिलाकर रोगी को खिलावें। ऊपर २ तोला एरण्ड मूल का क्वाथ पिलावें इस तरह एक मास तक औषध प्रयोग करे।

यह लहसुन योग सब प्रकार के आम प्रधान वात रोगो को दूर करता है। एकाग वात, सर्वांगवात, ऊरुस्तम्भ, गृध्रसी, कटिवात, पृष्ठवात, अस्थिशूल, सधिवात, अपतन्त्रक(हिस्टीरिया), धातुगत ज्वर, जीर्ण ज्वर और हाथ पैरो की शिथिलता को दूर करता है। यह योग पचन क्रिया सुधारता है, आम को जलाता है। धातुओ मे प्रवेशित आम को नष्ट करता है। कीटाणु प्रवेश होकर विष प्रकोप हुआ हों तो विष सह कीटाणुओ का नाश करता है ऊरुस्तम्भ मे होंने वाली त्वचा की शून्यता, आकुचन, कम्प, थकावट, अतिदाह, तैलमर्दन से रोग वृद्धि, हाथ पैर टूटना और चलने मे अति कष्ट आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इन सब लक्षणो सह ऊरुस्तम्भ नष्ट होता है।

वक्तव्य—यदि लहसुन सेवन काल मे लहसुन की उग्रता हेतु से पित्त प्रकोप हो जाय, तो छोटी हरड के क्वाथ का विरेचन देवें।

कटिशूल—मासिक धर्म की विकृति के कारण कमर मे दर्द होता हो तो रसोन पाक का सेवन कराने पर लाभ हो जाता है।

कर्णशूल—कान मे फुंसी का पाक होने के समय शूल चलता हो तो लहसुन, मूली, अद्रक इन तीन औषधियों को मिला रस निचोड़ कर निवाया करके कान मे डालने पर २–३ दिन मे फुन्सी बैठकर या फूटकर वेदना शमन हो जाती है।

यदि कान मे पूय स्राव हो रहा हों, और शूल चलता हों तो लहसुन रस मे तैल मिलाकर कान मे डालना चाहिये। कान को शीतल वायु और शीतल जल न लगे यह ध्यान रहे।

प्लीहा वृद्धि—लहसुन ४ माशे, पीपलामूल १ माशा, हरड ४ माशे और अपामार्ग क्षार (या गोमूत्र क्षार) ४ रत्ती मिलाकर मठ्ठे के साथ सेवन करावें। यह प्रयोग सुबह शाम कुछ दिनो तक देते रहने पर प्लीहा वृद्धि दूर हो जाती है।

रक्त दबाव वृद्धि—लहसुन, पोदीना, जीरा, धनिया, काली मिर्च, सैंधा नमक आदि मिला पीस चटनी बनाकर सेवन करने पर रक्त दबाव का ह्रास हो जाता है।

मूर्च्छा—लहसुन और प्याज को मिला रस निकाल कर सुघाने पर या २–२ बूद नाक से टपकाने पर अपस्मार और अपतन्त्रक की बेहोशी जल्दी दूर हो जाती है।

दुष्ट व्रण—लहसुन को चटनी की तरह पीस व्रण पर लगा देने से थोडे ही समय मे उसके कृमि मरकर निकल जावगे और घाव शुद्ध हो जायगा। शुद्ध घाव मे जब पाक होने का भय हो तब लहसुन लगा देने से पाक नही होता है और घाव मिट जाता है।

शीतला के व्रण—लहसुन, राल और हीग का धुआ देने से कृमि गिरे होगे तो मर जायेंगे फिर खुजली नहीं चलेगी और व्रण भर जायेगा।

दाद—लहसुन को पीसकर लेप करने से कीटाणु मर कर दाद दूर हो जाता है।

कुत्ते का दश—नीरोगी कुत्ते के काटने पर तुरन्त लहसन को पीसकर लगा देवें एव २ तोला लहसुन की चटनी को उबाल, क्वाथ कर पिला देवें या रसोन अर्क १ ड्राम पिला देवे अथवा भोजन मे ७ दिन तक लहसुन का अधिक सेवन करे।

अस्थिभंग—हड्डी पर चोट लगने पर लहसुन और लाख को पीस चटनी बनाकर शहद के साथ दिन मे २ बार चटावें। ५–७ दिन चटाते रहने पर हड्डी दृढ बन



जाती है। यदि हड्डी टूट गई हो तो बाह्य लेप भी लगाना चाहिये।

नारू—लहसुन, चित्रकमूल और राई को पीस पुल्टिस कर नारू पर बांधने से वह जल्दी बाहर आ जाता है। १ घण्टे से अधिक समय तक पुल्टिस को न रखें। नारू के बाहर आने पर या लाल होने पर पुल्टिश को हटाकर घी लगा देवे (गा. औ. र)

फोड़े—जिन फोड़ों में कीड़े पड़ जाते है उन पर लहसुन लगाने से वे अच्छे हो जाते हैं। (व. च)

विशिष्ट योग-

लहसुन का सुरासार (आ नि)—तुलसी के पत्र २० ड्राम, लहसुन की कलिया २० ड्राम, रेक्टी फाइड स्प्रीट ६० औंस। इनको कूटकर ४८ घण्टे भिगोकर छानकर रख लेवें।

रसोन कल्क (शा सं ख २ अ. ५)—सुपक्व लहसुन को छीलकर उसके भीतर का ततु और अकुर निकाल दें। फिर उसकी तीव्र गन्ध दूर करने के लिये उसे रात को तक्र मे डाल दें तथा दूसरे दिन प्रात पीस लें। अब इसमे इसका पाचवा भाग निम्नलिखित चूर्ण मिलाकर सुरक्षित रक्खें। चूर्ण संचल (काला नमक), अजवायन, भुनी हुई हींग, सेंधा नमक, सोंठ, मिर्च, पीपल और जीरा, सब चीजें समान भाग लेकर बारीक चूर्ण बनावें। इस कल्क में से १। तोला अथवा ऋतुदोष इत्यादिके अनुसार न्यूनाधिक मात्रानुसारखाकर ऊपर से एरण्ड मूल का क्वाथ पीना चाहिये।

इसके सेवन से सर्वाङ्ग वात, अर्दित, अपतत्रक, अपस्मार, उन्माद, ऊरुस्तम्भ, गृध्रसी, उरःशूल, पृष्ठशूल, कटि और पार्श्व शूल तथा कृमि रोग नष्ट होते हैं।

अपथ्य—लहसुन के सेवन काल में अजीर्ण न होने देना चाहिये तथा, क्रोध अत्यधिक जलपान, दूध और गुड़ से परहेज करना चाहिये।

रसोन योग (१) (वृ. मा. शूला)—प्रात काल भूख के समय लहसुन को पीसकर मद्य में मिलाकर सेवन कराने से वात-कफज शूल नष्ट होता है और अग्नि दीप्त होती है।

रसोन योग (२) (ग. नि. ज्वरा.)—प्रात काल लहसुन को पीसकर घी मे मिलाकर सेवन करने से ज्वर नष्ट होता है। यह प्रयोग मलेरिया मे अधिक उपयोगी है।

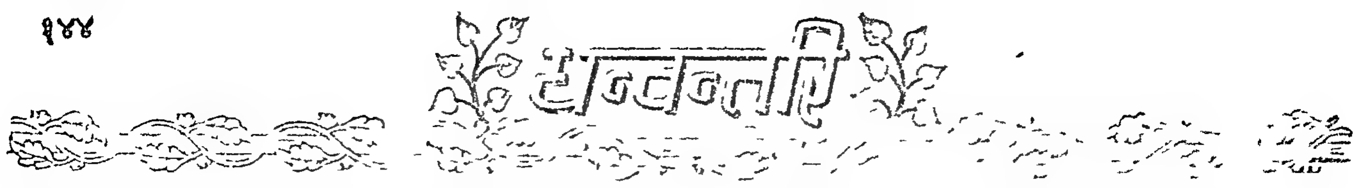
रसोनरस-स्नुही रसश्च (रा मा कर्णरोगा.)—लहसुन पर आक के पत्ते लपेट कर (उस पर एक अगुल मोटा मिट्टी का लेप करके) अग्नि मे स्वेदित करें और फिर उसका रस निकाल दें। यह रस कान मे डालने से कर्ण पीडा तुरन्त शांत हो जाती है। इसी विधि से स्नुही (सेंट थोहर) के डण्डे का रस निकाल कर कान मे डाला जाय तो भी पीडा शांत हो जाती है।

रसोन सप्तकम् (व. से. वात)—हींग (घी मे भुनी हुई), जीरा, सेंधा नमक, काला नमक, सोंठ, काली मिर्च, और पीपल, इन सबका चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलावें। अब ५ तोले या २॥ तोले लहसुन को छीलकर अच्छी तरह कूटकर उसमे उपरोक्त चूर्ण १। माशा मिला दोनो को एक जीव करलें। इसे अग्नि बलोचित मात्रानुसार प्रात काल एरण्ड मूल के साथ सेवन करने से १ मास मे अर्दित, अपतन्त्रक, एकांगवात, सर्वाङ्ग वात, ऊरुस्तम्भ, गृध्रसी, द्वन्दज शूल, कृमि, कटिशूल और वातोदर इत्यादि रोग नष्ट होते हैं।

रसोनादि कल्क (१) (वृ मा. नाडी व्रण)—लहसन, शहद, लाख घी और मिश्री समान भाग लेकर पीसने योग्य चीजो को पीसकर सबको एकत्र मिलालें। इसे सेवन करने से छिन्न-भिन्न और अपने स्थान से हटी हुई हड्डी ठीक हो जाती है।

रसोनादि कल्क (शा स ख २ अ. ५)—रसोन (लहसन) के कल्क को तिल के तेल में मिलाकर सेवन करने से विषम ज्वर और भयकर वातज रोग शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं।

रसोन पिण्ड (च द. आमवात)—निस्तुष (छिलके रहित) लहसन ६। सेर, तिल २० तोले तथा सोंठ, मिर्च, पीपल, हींग, जवाखार, सज्जीखार, सोया, पांचों नमक (सेंवा नमक, काला नमक, विढ नमक, समुद्र नमक और काच नमक), कूठ, पीपलामूल, चीता, अजमोद, अजवायन और धनियां, इनका चूर्ण ५-५ तोले लेकर लहसन और तिलो को एकत्र कूटकर उसमें औषधि का चूर्ण मिलाकर



अच्छी तरह कूटें और फिर सबको घृत के चिकने पात्र मे भरकर अनाज के ढेर मे दवादे । १६ दिन वीत जाने पर उसमे १–१ सेर तिल तेल और काजी मिलाकर सुरक्षित रक्खे ।

मात्रा—१। तोला । अनुपान—शीतल जल ।

इसके सेवन करने से समस्त वातज रोग, आमवात, सर्वाङ्ग वात, एकाग वात, अपस्मार, उन्माद, खासी, श्वास, भग्नवात और शूल नष्ट होता है ।

महारसोन पिंड (भे. र आमवात)—छिला हुआ लहसन ६। सेर, छिलके रहित तिल ३ से १० तोले तथा सोठ, मिर्च, पीपल, धनिया, चव, चीता, गजपीपल, अजमोद, दालचीनी, इलायची और पीपलामूल १–१ पल (५-५ तोले), खाड ८ पल, जीरा ५ पल, काला जीरा ४ पल, राई ४ पल एव हीग और पाचो नमक (सेंधा नमक, काला नमक, खारी नमक, कचनौन और सामुद्र लवण) ५–५ तोले, अदरख ४ पल, घी ८ पल, तिल का तेल ८ पल, सिरका २० पल, सरसो ४ पल और शहद ८ पल लेकर पीसने योग्य चीजो को पत्थर पर पीसलें और कूटने योग्य चीजो को कूट छान चूर्ण बनाले और सब चीजो को मिट्टी के चिकने पात्र मे भरकर उसमे ४ सेर तक्र डालकर पात्र का मुख वन्द करके उसे अनाज के ढेर मे दवादें तथा १२ दिन पश्चात् निकालकर काम मे लावें ।

इसे प्रात काल यथोचित मात्रानुसार, सुरा, सौवीरक, काजी या शहद के साथ सेवन करना और औषधि पचने पर दही तथा पिट्ठी के बने पदार्थो के अतिरिक्त यथेच्छ भोजन करना चाहिये ।

इसे १ माह तक सेवन करने से ८० प्रकार के वातज रोग, ४० प्रकार के पित्तज रोग, २० प्रकार के कफ रोग, योनिशूल, प्रमेह, कुष्ठ, उदर रोग, भगन्दर, अर्श, गुल्म और क्षयादि रोग नष्ट होकर रुचि और वल की वृद्धि होती हे। मात्रा—६ माशे से १ तोला तक ।

नोट—(१) समस्त पदार्थो को पात्र मे भरकर धूप मे रख देना चाहिये और जलाश सूख जाने पर पात्र का मुख वन्द करके अनाज के ढेर मे दवाना चाहिये ।

(२) ऊपर तक्र, शहद, घृतादि सब पदार्थों का जो परिमाण दिया है उसे दूना कर लेना चाहिये ।

रसोन पाक (१) (लहसुन पाक) (वृ नि. र वात.)

१ प्रस्थ छिलके रहित लहसुन को पीसकर १ कुम्भ (६४ सेर) दूध मे मिलाकर उसमे ८० तोला घी मिलावें और फिर सबको मन्दाग्नि पर पकावे । जब पकते पकते शहद के समान गाढा हो जाय तो उसमे २ सेर खाड मिला दें एव जब पाक लगभग तैयार हो जाय तो उसमे सोठ, मिर्च, पीपल, दालचीनी, इलायची, तेजपात, नाग केसर, पीपलामूल, चव्य, चीता, वाय विडङ्ग, हल्दी, दारु हल्दी, हपुषा, विधारा, पोखरमूल, अजवायन, लौंग, देवदारु, पुनर्नवा, गोखरु, नीम की छाल, रास्ना, सोया, शतावर, कचूर, असगन्ध और कौंच के बीज, इनका सवा–सवा तोला चूर्ण मिला दे ।

इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करने से समस्त वातज रोग, शूल, अपस्मार, उरुक्षत, गुल्म, उदर रोग, वमन, प्लीहा, वर्द्ध, वृद्धि, कृमि, विबन्ध, आनाह, शोथ, अग्निमाद्य, वलक्षय, पक्षाघात, हिचकी, श्वास, कास, अपतन्त्रक, धनुर्वात, बहिरायाम, अन्तरायाम, अपतानक, अर्दित, आक्षेप, कब्ज, हनुग्रह, शिरोग्रह, विश्वाची, गृध्रसी, खल्ली, शूल, पगुवात, सन्धिवात, वधिरता और समस्त शूल इत्यादि वातज रोग एव कफज रोग नष्ट होते और बल बढता तथा शरीर पुष्ट होता हे ।

रसोन पाक (२)(लशुन पाक) (यो चि म, अ. ७)

१ प्रस्थ छिलके रहित लहसुन को रात को तक्र मे डाल दे और दूसरे दिन प्रात तक्र से निकालकर (धोकर) पीस लेत । तदन्तर उस लहसुन को ८ सेर दूध मे पकावे और गाढा हो जाने पर उसमे ४० तोले घी मिला दें । जब पाक लगभग तैयार हो जाय तो उसमे रास्ना, शतावर, वांसा, गिलोय, कचूर सोठ, देवदारु, विधारा, अजवायन, चीता, सोया, पुनर्नवा, हरं, वहेडा, आमला, पीपल, और वायविडग का १।–१। तोला चूर्ण मिलावे एव पाक के ठण्डा हो जाने पर उसमे ४० तोला शहद मिलाकर सुरक्षित रक्खें ।

इसमे मिश्री मिलाकर यथोचित मात्रानुसार सेवन करने से आढ्यवात, हनुग्रह, आक्षेपक, भग्न, कटि स्तम्भ,

उरुस्तम्भ, हृदग्रह, सर्वाङ्ग वात, सन्धिभग और ८० प्रकार के वातज रोग, नष्ट होते है तथा वर्ण, आयु और पुष्टि की वृद्धि होती है।

रसोन तैलम् (च. द वातव्या)—लहसन के कल्क और स्वरस के साथ तैल सिद्ध करे। इसे पीने से वातज रोग शीघ्र ही नष्ट हो जाते है।

लहसन का कल्क १० तोले। तेल १ सेर। लहसन का स्वरस ४ सेर।

रसोनाद्य तैलम् (वृ नि र आमवाता)—क्वाथ—गुड पोई का शाक, उडद की पिट्ठी और लहसन प्रत्येक १ सेर ४५ तोले (मिलित ६।) लेकर सबको ३२ सेर पानी मे पकावे और ८ सेर पानी शेष रहने पर छानले।

कल्क—हर्र, बहेडा, आमला, सोठ, मिर्च, पीपल, हीग छोटी इलायची, चीता, विटलवण, सचल (काला नमक), वायविडग, अजवायन और पीपलामूल समान भाग मिश्रित ४० तोले लेकर सबको एकत्र पीसले।

८ सेर अण्डी के तेल मे उपरोक्त क्वाथ, कल्क तथा ८-८ सेर दही का पानी और दूध मिलाकर मन्दाग्नि पर ताम्र पात्र मे सिद्ध करे। इसे पीने से आमवात रोग नष्ट होता है।

रसोन सुरा (चक्रदत्त-आमवाता)—एक शुद्ध घडे मे (१२॥ सेर) बल्कला नामक निर्मल सुरा और ३ सेर १० तोला कुटा हुआ छिलकेरहित लहसन एव १।-१। तोला, पीपल, पीपलामूल, जीरा, कूठ, चीतामूल, सोठ, कालीमिर्च और चव का चूर्ण डालकर सबको अच्छी तरह मिलाकर घडे का मुख बन्द करके रखदे और ७ दिन पश्चात् निकाल कर छान ले।

इसके सेवन से आमवात, कृमि, कुष्ठ, क्षय, आनाह, गुल्म, अर्श, प्लीहा और प्रमेह तथा पाण्डु का नाश होता है एव अग्नि दीप्त होती है।

रसोनादि लेप (वै म. र पटल)—केवल वात जन्य प्रवृद्ध शूल मे रोगी की आयु और बलादि का विचार करके लहसुन को नारियल के ताजे जल मे पीसकर लेप करना चाहिये।

रसोन वटक (वृ. नि र वातव्या)—लहसुन की गुली और उर्द की दाल समान भाग लेकर दोनो की पिट्ठी बनावे और उसमे स्वाद योग्य सेधा नमक, अदरक तथा हीग मिलाकर वटक (बरे) बनाले और उन्हे मन्दाग्नि पर तिल के तेल मे तल ले। इन्हे यथोचित मात्रानुसार सेवन करने से हनुस्तम्भ नष्ट होगा।

लशुन योग (१) (व. से वातव्या.)—लहसुन को अत्यन्त बारीक पीसकर घृत मे मिलाकर खाने से और घृत युक्त भोजन करने से वातज रोग नष्ट होते हैं।

लशुन योग (२) (व. से अपस्मारा)-तेल के साथ लहसन या दूध के साथ शतावर अथवा ब्राह्मी के रस मे शहद मिलाकर सेवन करने से अपस्मार नष्ट होता है।

लशुनादि क्वाथ (१) (वै भ र पट १२)—लहसुन, भरङ्गी, गूगल, सोठ और देवदारु समान भाग लेकर बनावे। यह क्वाथ कफ और वायु को नष्ट करता है तथा जठराग्नि को बढाता है।

लशुनादि क्वाथ (२) (यो र सन्निपाता)—लहसन, चिरायता, भारङ्गी और अतीस समान भाग लेकर सबको मनुष्य के मूत्र मे पकाकर क्वाथ बनावे। यह क्वाथ सन्निपात ज्वर को नष्ट करता है।

लशुनादि स्वरस (वृ नि र कर्ण १)—लहसन, अदरक, सहजना, मकोय, मूली और केला, इनमे से किसी एक के स्वरस को मदोष्ण करके कान मे भरने से कर्णशूल नष्ट होता है।

लशुन योग (ग नि.। उदररोग)—लहसन, पीपलामूल और हर्र समान भाग लेकर सब को पीस ले। इसे गोमूत्र के साथ सेवन करने से प्लीहा रोग नष्ट होता है।

लशुनाद्य चूर्णम (वृ नि र.। अजीर्ण)—लहसन, जीरा, सैधा, सचल (काला नमक) सोठ, मिर्च, पीपल, और हीग समान भाग लेकर चूर्ण बनावे। इसे नीबू के रस के साथ सेवन करने से विसूचिका को तुरन्त आराम होता है।

लशुन योग (यो र। शूला)—अरण्ड का तैल ६ भाग, लहसन ८ भाग, भुनी हुई हीग १ भाग और सेधा नमक ३ भाग लेकर सबको एकत्र मिला कर घोटे। मात्रा १। तोला। इसके सेवन से आमशूल नष्ट होता है।

लशुन घृतम (१) (ग. नि. घृता १)—लहसन की गिरी,

कटेली और वासा १-१ सेर लेकर सबको एकत्र कूटकर ३२ सेर पानी मे पकावे जब ८ सेर पानी शेष रहे तो छान ले। तदनन्तर २ सेर घी मे २० तोला बीज रहित मुनक्का और २ सेर गाय का दूध तथा ५-५ तोले लहसन का स्वरस और बांसे के पत्तो का कल्क एव उपरोक्त क्वाथ मिलाकर मदाग्नि पर पकावे। जब जलाश शुष्क हो जाय तो घृत को छान ले और ठडा होने पर उसमे १० तोला खाड, २० तोला दूध और २॥ तोला वशलोचन का चूर्ण मिलाकर सबको मथनी से मथकर सोने या चादी के पात्र मे भरकर सुरक्षित रक्खे। यह घृत खासी, श्वास, ज्वर, गुल्म, कृशता, छर्दि, अरुचि, हृद्रोग, पार्श्वशूल, क्षत क्षीणता, प्लीहोदर, पाडु और शोथ को नष्ट करता है। तथा जीवन, बृहण और वृष्य है।

लशुन घृतम (२) (ग नि परि घृता १)—लहसन ६। सेर तथा बे छाल, स्योनाकछाल, खभारी छाल, पाढल छाल और अरवी २५-२५ तोला लेकर सबको एकत्र कूटकर ६४ सेर पानी मे पकावे और १६ सेर पानी शेष रहने पर छान ले। बाद मे उसमें ८ सेर अनार का रस, ८ सेर शराव, ८ सेर काजी, ८ सेर दही और २॥-२॥ तोले, सोठ, मिर्च, पीपल, हर्र, वहेडा, आमला, हीग, अजवायन, चव्य, अजमोद, अम्लवेत, सेंधा नमक और देवदारु का कल्क एव २ सेर घी मिलाकर मदाग्नि पर पकावें। जब जलाश शुष्क हो जाय तो घृत को छान ले यह घृत वातज गुल्म को नष्ट करता है।

लशुनाद्य घृतम (१) (व सं। चि अ १४ उन्माद)—कुटी हुई लहसन की गाठ १०० नग, गुठली रहित पिसी हुई हर्र ३० नग, समान भाग मिलित सोठ, मिर्च, पीपल का चूर्ण ५ तोले, गाय के चमडे की राख १ सेर, गो दुग्ध ८ सेर, गोमूत्र ८ सेर और पुराना घी २ सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावे। जब जलाश शुष्क हो जाय तो छान लें। तदन्तर उसके शीतल होने पर उसमे ५ तोले हीग का चूर्ण और १ सेर शहद मिलाकर सुरक्षित रक्खे।

यह घृत दोषज और आगन्तुक उन्माद विषम ज्वर और अपस्मार को नष्ट करता है। इसे पान, अभ्यङ्ग और नस्य द्वारा प्रयुक्त करना चाहिए।

लशुनाद्य घृतम (२) (वृ व उन्मादा)—छिलके रहित उत्तम लहसन ३ सेर १० तोले और दशमूल १ सेर ४५ तोले लेकर दोनो को एकत्र कूटकर १६ सेर पानी मे पकावे और ४ सेर पानी शेष रहने पर छान ले। तदनन्तर उसमे २ सेर घी, २ सेर लहसन का रस और १-१सेर बेर, मूली, तिन्तडीक, बिजौरे, अद्रक और अनार का रस तथा सुरा, मस्तु और काजी एव २॥-२॥ तोले हर्र, बहेडा, आमला, देवदारु, सेधव, सोठ, मिर्च, पीपल, अजमोद, अजवायन, चव्य, हीग और अम्लवेत का कल्क मिलाकर मदाग्नि पर पकावे। जब जलाश शुष्क हो जाय तो छान ले।

लशुन तैलम् (व से। उदर रोगा)—क्वाथ— ६। सेर लहसन को कूटकर ३२ सेर पानी मे पकावे और ८ सेर पानी शेष रहने पर छान ले।

कल्क—सोठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेडा, आमला, दती मूल, हीग, सेंधा नमक, चीता, देवदारु, वच, कूठ, मुलैठी, सहजने की छाल, पुनर्नवा, काला नमक, वाय विडग, अजवायन और गज पीपल ५-५ तोले तथा निसोत २॥ तोले लेकर सबको एकत्र पीसले। ८ सेर अरण्डी के तेल मे उपरोक्त कल्क और क्वाथ मिला कर ताम्र पात्र मे मदाग्नि पर पकावे। जब क्वाथ पक जाय तो तैल को छान ले।

इसे यथोचित मात्रानुसार प्रात काल पीने से अनेको रोग और उदर रोग नष्ट होते है।

यह तैल मूत्रकृच्छ, उदावर्त, अत्रवृद्धि, गुद कृमि, पार्श्व शूल, कुक्षिशूल, आमशूल, अरुचि, यकृत, अष्ठीलिका, आनाह, प्लीहा और अङ्ग पीडा को नष्ट करता है। यह तैल अर्श और वातज रोगो को १ मास मे नष्ट कर देता है।

लशुनाद्य तैलम (भै. र. कर्ण)—लहसन, आमला और हरताल ५-५ तोले लेकर सबको एकत्र पीसले।

१२० तोले (१॥ सेर) तिल के तैल मे यह कल्क और ६। सेर गाय का दूध मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावे। जब दूध जल जाय तो तेल को छान ले। इसे कान मे डालने से बधिरता नष्ट होती है।

लशुनाद्यञ्जनम (१) (वृ नि र)—लहसन, पीपल, राई, वच और हर्र समान भाग लेकर चूर्ण बनावे। इसे पानी मे पीसकर आखो में लगाने से ज्वर नष्ट होता है।

लशुनाद्यञ्जम (२) (यो र सन्निपाता)—लहसन, कालीमिर्च, पीपल, सेंधानमक, वच, सिरस के बीज और सोठ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें। इसे गोमूत्र मे पीस कर आखो मे लगाने से कफ वातज और रक्तपित्त तथा अतिसारयुक्त सन्निपात नष्ट होता है।

लहसन पाक (आर्य औषधि)—लहसन की साफ की हुई कलियें १ सेर लेकर उन्हे ५-७ दिन छाछ मे भिगो देवे। प्रतिदिन पुरानी छाछ निकाल कर नयी छाछ डाले। इस प्रकार ५-७ दिन भिगोने से उसकी प्याज के मानिन्द दूसरा भी छिलका उतर जायगा। फिर उसको धोकर साफ करके पत्थर पर पीसकर १ मन दूध मे खोवा बनावे बाद मे लहसन वाले मावे को ३ सेर घी मे सेक ले और १५ सेर शक्कर की चासनी कर उसमे उपरोक्त मावा डालकर ऊपर पिस्ता आधसेर, चरौंजी १ पाव, बादाम १ सेर और मुगलाई बेदाना ४ तोला डाले। इस पाक मे केसर और जायफल नही डाले। मात्रा—२ से ५ तोला। गुण—उष्ण और वात हर।

इन्द्राणी घृत (का. सं राजयक्ष्म चि)—एक सौ (१००) पल लहसन के छिलके उतार कर यव कुट करके १० द्रौण पानी मे पकाकर चतुर्थाश शेष रहने पर उतार ले। इसमे जीवनीय औषधियो के सहित २ आढक ५।, १ द्रोण बकरी का दूध तथा दशमूल का क्वाथ डालकर पकाये। घृत सिद्ध होने पर उतार कर धान्य राशि (धान्य राशि)आदि मे रख दे। एक मास बाद इसका सेवन करना चाहिये। इसका नाम 'इन्द्राणी घृत' है। यह राजयक्ष्मा को नष्ट करता है। तथा पथ्य का सेवन करने वाले बध्या (बाझ), नपु सक तथा वृद्ध पुरुषो की काम शक्ति को बढाता है। मात्रा ½-१ तोला।

लहसन कल्प (का सं राजयक्ष्मा चि)—आधे आढक (२ प्रस्थ) गो घृत मे एक आढक (४ प्रस्थ) यवकुट किया हुआ लहसन डालकर उसे घी से लिये हुये बर्तन मे डाल दे। वर्ष भर तक उसे धान्य राशि मे पडा रहने दे। इसका आवश्यकतानुसार ६ मास, ८ मास अथवा ४ मास तक रागवला के समान सेवन करने से सब रोग नष्ट हो जाते है।

लशुन कल्प (का. सं लशुन कल्प)—अमृत से उत्पन्न हुआ यह लशुन रूप अमृत-रसायन है। लशुन का सेवन करने वाले व्यक्तियो के उत्पन्न हुये दात, मास, नख, श्मश्रु केश, वर्ण, अवस्था एव बल कभी क्षीण नही होतें। तथा लहसन का सेवन करने वाली स्त्रियो के स्तन कभी ढीले होकर नीचे नही लटकते। स्त्रियो के रूप संतान, बल एव आयु क्षीण नही होते। उनके सौभाग्य की वृद्धि होती है। तथा यौवन दृढ होता है। स्त्रिया लशुन का अत्यन्त सेवन करके भी शुद्ध रहती है। तथा उन्हे ग्राम्य धर्म (मैथुन) से उत्पन्न होने वाले रोग नही होते है।

लशुन का सेवन करने से स्त्रिया, कटि, श्रोणि तथा अन्य अङ्गो के रोगो के वश वर्त्ती नही होती अर्थात् उन्हे कटि, श्रोणि एव अन्य अङ्गो के रोग नही होते है। स्त्री कभी वन्ध्या (बाझ) तथा अप्रिय दर्शना जिसका दर्शन प्रिय न हो) नही होती।

लशुन के सेवन से पुरुष भी दृढ मेधावी दीर्घायु एव सुन्दर संतान युक्त होता है। मैथुन मे थकता नही तथा शुक्र को धारण करने वाला होता है अर्थात् इसके प्रयोग से शुक्र की भी वृद्धि होती है।

इसके सेवन से शरीर मृदु एव कंठ मधुर हो जाता है ग्रहणी के रोगो की शान्ति होती है तथा जठराग्नि प्रदीप्त होती है। लशुन का प्रयोग करना-अस्थिच्युत, अस्थि भग्न एव अन्य अस्थि रोग, सम्पूर्ण वात रोग, पुष्प (आर्त्तव सम्बन्धी) रोग, वीर्य सम्बन्धी रोग, भ्रम, कास, कुष्ठ रोग, कृमि, गुल्म, किलास कण्डू विस्फोट, विवर्णता, तिमिर (नेत्र रोग), श्वास, नक्तान्ध्य, अल्प भोजन (भोजन कम करना), जीर्ण ज्वर, विदाह, तृतीयक एव चातुर्थिक सन्तत ज्वर, स्रोतो का बन्द होना, शरीर की जडता, उपशोष, अश्मरी, मूत्र कृच्छ, कुण्डल (वस्ति कुण्डल), भगन्दर, प्रदर, प्लीहा रोग, शोष, पगुता (चल न सकना), वात रक्त इत्या दि रोगो मे मेधा, अग्नि एव बल की वृद्धि के लिये लशुन का उपयोग करना चाहिये।

लहसुन के प्रयोग का निषेध—

काश्यप महिताकार मुनि जी ने निम्न रोगो व अवस्थाओ मे लहसुन के प्रयोग का निषेध किया है—श्लेष्मिक एव पैत्तिक रोग, शरीर का ह्रास, स्थावर (बृद्धावस्था), अग्निमाद्य, सूतिका, गर्भिणी, शिशु, आमरोग, ज्वर, अतिसार, कामला, अर्श, उरुस्तम्भ, विबन्ध, गले एव मुख रोग, सद्योवान्त, विरिक्त (जिसे विरेदिया गया हो) जिसने नस्य (शिरोविरेचन) किया है, शोष, तृष्णा, छर्दि, हिक्का एव श्वास की अधिक वृद्धि. धैर्य रहित, असहाय, दरिद्र एव दुरात्मा रोगी तथा जिसे वस्ति एव निरुह (आस्थापन) दिया गया है। इनमे लशुन का प्रयोग न करे।

जिनकी जठराग्नि एव बल क्षीण नही हुये है उनके सब रोगो मे लशुन का प्रयोग किया जा सकता हे। पौष एव माघ महीने मे आयु को स्थिर करने वाले, हृदय को अच्छे लगने वाले तथा छिलकेरहित लशुन का प्रयोग करना चाहिये।

मात्रा—उन्होने ताजे लहसुन की सबसे छोटी मात्रा ३२ तोला बताई है। मध्यम मात्रा ४८ तोला और अधिक तम मात्रा ६४ तोला या ८० तोला ताजा लहसुन न मिलने पर सूखे कन्दो का प्रयोग करना हो तो तुरियो को गिनती मे १००, ६० या ५० लिया जाना था। शरीर की अग्नि समय और अनुकूलता को देखकर साधारणतया मात्रा का निश्चय किया जाता था। रोगी को खाने मे उत्साह हो तो जब तक वह मूर्च्छित न हो जाय तव तक खिलाते जाते थे। तेज अग्नि वाला, शात मन वाला, धैर्यवान सुखी पुरुष प्रचण्ड वायु से रहित कमरे मे रहता हुआ पुण्य दिन मे लहसुन का प्रयोग करे। सर्दी से बचने के लिये उसके पास ओढने बिछाने के वास्ते गर्म कपडे होने चाहिये।

लहसुन लाने का काम ऐक नौकर-के जिम्मे हो और उन्हे ठीक करने का दूसरे के जिम्मे। पत्तो को छोड दे। तुरिया और नाल ले। कुण्डी सोटे मे रगडकर और खूब घी मिलाकर या घी मे भूनकर खिलावे। इसके लिये रुग्ण बालक के अनुसार मक्खन का घी अथवा नवीन तैल को उपयोग मे लाना चाहिये। घी अथवा तैल मे उन्हे तब तक भूनना चाहिये जब तक कि वे तैरना वन्द करके नीचे न बैठ जाय। तब शरीर का अच्छी प्रकार स्नेहन करके आवश्यकतानुसार दो, तीन, पाच, दस अथवा आठ दिन तक आत्म चिन्ता, सेवन के बाद दिन में सोना तथा दन्त धावन आदि के त्यागपूर्वक पूर्व आहार के जीर्ण हो जाने पर सुखपूर्वक शयन के बाद उठकर सुखासन से बैठकर इनका सेवन करना चाहिये। और सदा गर्म जल का सेवन करना चाहिये। अचार आदि मे भी आर्द्रक, सोठ, बिजौरे के केसर (पराग) जीवनीय गण के पदार्थ तथा अनार दाने के साथ इसको देना चाहिये। तथा मूली को छोड़कर हरित वर्ग के सब पदार्थ उसे खाने को दिये जा सकते हे। भुने हुये लशुन मे भी दालचीनी, तेजपात, सोठ, मिर्च, पीपल, छोटी इलायची, जायफल तथा लवण आदि मे जो मिले उनका चूर्ण डालकर प्रयोग करे। तथा अच्छी प्रकार से तैयार हुये मद्य का भी युक्तिपूर्वक सेवन करना चाहिये।

सुख पूर्वक, अग्नि के पास बैठकर लशुन तथा मद्य का बारी बारी से एक दूसरे के बीच मे सेवन करे। अर्थात् एक बार लशुन खाये फिर मद्य पीवें। फिर लशुन खाये तथा पुन मद्य इत्यादि क्रम से सेवन करे। इस प्रकार धीरे धीरे तृप्ति पर्यन्त इनका सेवन करे। इसके बाद उष्ण जल, मद्य अथवा पकाया हुआ दूध पीवे। तथा रोगो के हेतु, जठराग्नि रोग तथा सात्म्य को जानने वाले व्यक्ति को किसी दूसरी वस्तु का सेवन नही करना चाहिये। इन्द्रियो को वश मे रखता हुआ समझदार पुरुष इस विधि से १५ दिन, महीने, दो महीने या तीन महीने या सरदियो के चार महीनो तक इसे खावे।

लशुन सेवन के बाद अपथ्य—विरुद्ध तथा विदाह उत्पन्न करने वाले शाक तथा गोरस (दूध अथवा दूध से बने पकवान) अभिष्यन्दी अन्न, मास तथा इक्षु विकार (गन्ने से बने पदार्थ) खाने को न दे। अपथ्य (मार्ग गमन) मैथुन, चिन्ता, शोक व्यायाम, शरीर का शोषण करने वाले तथा अन्य भी सम्पूर्ण अहितकर भावो को त्याग दे। और निर्वातनिवात स्थान मे शयन करे तथा बैठे।

लशुन के सेवन काल मे होने वाले उपद्रव—लशुन का सेवन करते हुये शीतल उपचारो का त्याग करना चाहिये। शीत उपचार तथा स्नेह के सेवन से रोगी को



जलोदर हो जाता है। —वृ० स०

लशुन कल्प (२)—लशुन १ पल, घृत २ पल। इसमे थोडा मधु मिलाकर अवलेह बनाकर नित्य सेवन करे तथा उसके बाद घृत पिये। एक वर्ष तक इसका भोजन के जीर्ण हो जाने पर सेवन करे और दूध और चावल का भोजन करे। इससे वह व्यक्ति सम्पूर्ण रोगो से रहित होकर १०० वर्षो तक जीवित रहता है। जो व्यक्ति कच्चे लशुन का प्रयोग न कर सके उनको घी मे भूनकर तथा शाक के पत्तो की बनी पकौडियो की तरह सस्कृत करके प्रयोग करावे।

लशुन कल्प (३)—१०० पल लशुन ५ द्रोण जल मे डालकर पकावे। एक द्रोण शेप रहने पर उसमे एक आढक घृत डालकर पुन पाक करे। इसमे एक आढक दूध तथा १०० पल चिकने एव सस्कृत लशुन के बीज तथा अन्य जो भी दीपनीय, जीवनीय एव वृष्य ओपधिया मिल सके तथा एक कर्प दशमूल डालकर पकावें। सिद्ध होने पर इसे उतार ले। इसमे मधु एव शर्करा मिलाकर पान तथा भोजन के रूप मे प्रयोग करना चाहिये।

उपर्युक्त विधि से ही इनका तैल बनाकर उसकी वस्ति देनी चाहिये। गुण—यह नपुसक, वन्ध्या तथा अत्यन्त वृद्ध व्यक्तियो को भी वीर्य एव सन्तान का देने वाला है।

लहसुन की मात्रा के लिये वेदीजी का अनुभव—

श्रीमान् रामेशवेदी जी ने लहसुन पुस्तक के पृष्ठ ७६ पर लिखा है कि १९४५ मे मुझे सेवाग्राम मे महीना भर रहने का सयोग हुआ। यहा साधको ने अपना बौद्धिक विकास तथा मानसिक उन्नति तो बहुत की थी परन्तु शरीर की ओर से कुछ व्यक्ति उदासीन वृत्ति वाले प्रतीत होते थे। प्रोफेसर भसाली ने बताया कि वे १० तोला तक लहसुन रोज खाते रहे है। इसका परिणाम यह हुआ कि उनके पेशाब के साथ खून आने लगा। तब कही उनसे लहसन खाना छुडवाया गया। इस उदाहरण से पता चलता है कि आजकल कश्यप, शोढल, भावमिश्र आदि की मात्राओ मे लहसन जैसी तेज चीज का खाना शक्य नही। २० तोले के स्थान पर यहा २० माशे का ग्रहण करें भी अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है।

लशुन क्षीर (सि यो वाततया)—१६ तोले लहसुन, १ सेर दूध और ८ सेर पानी को दूध मात्र बच रहने तक पकाये। लहसुन से पकाये इस दूध को पीने से टाग की वातनाडी का दर्द(गृध्रसी) और उदावर्त मे लाभ होता है।

लहसुन का तेल—१ सेर तिलो का तेल लेकर उसको लोहे की कडाई मे डालकर आग पर रखे। जब तेल खूब अच्छी तरह पकने लग जाय तो उसमे लहसुन की साबूत गाठ छिली हुई लेकर उसको किसी तार मे पिरोकर कढाई के बीच मे लटकावे और नीचे मन्द-मन्द आग जलाते रहे जब लहसुन की गाठ सुर्ख स्याही मायल हो जावे तो निकाल कर उसी प्रकार दूसरी गाठ पकावे। जब सुर्ख हो जावे तब निकाल ले, इसी प्रकार ७ गाठ पकावे। और फिर उतार कर शीतल होने पर किसी शीशी मे सुरक्षित रखले बस तैयार है। पकते हुये तेल मे थोडी सी रतन जोत डाल देना चाहिये।

प्रयोग विधि—जाडे के ज्वर वाले को ज्वर होने से पूर्व मालिश करावे। सधिवात, जिसके शरीर पर सूजन आ गई हो, भिड, विच्छू, मक्खी का डङ्क खारिश आदि के रोगियो को इसकी मालिश करावे। कर्ण पीडा के रोगियो को जिनको कम सुनाई देता हो गुनगुना करके कान मे टपकावे।

कृष्णाभ्रक भस्म (लहशन के गुण तथा उपयोग से)—धान्याराभी कृष्णाभ्रक को लहसुन के रस मे ३ दिन तक खरल करे और फिर कपरौटी करके १० सेर उपलो मे आग दे। बस एक ही आग मे भस्म तैयार हो जायगी। इसकी १ रत्ती की मात्रा लेकर पान मे सब कर दिया करे। हर प्रकार की कफ जनित बीमारी, दमा, ज्वर, गठिया मे लाभप्रद है।

लशुन क्षीर (चिकित्सादर्श)—छिले हुये लहसुन के कल्क का चौगुना गो दुग्ध और चौगुना जल मे पकावें जब क्षीर मात्र शेप रहे छानकर पीवे। लहसन २ तोला प्रयोग करे प्रात सायम्। यह गृध्रसी मे अत्यन्त हितकर है।

लशुनादि तेल (चि चं भा ७)—लहसन १पाव,

काली मिर्च १ पाव और अफीम दो तोले इन तीनो को जौकुट सा करके २ सेर काली तिली के तेल मे मिला दो। फिर इन सबको किसी लोहे के लोटे या वर्तन मे भरकर, ऊपर से ढकना बद करदो और संधियो पर कपडमिट्टी कर दो। इसके बाद चूल्हे के नीचे गढा खोदकर उसमे इस वर्तन को रखकर, मिट्टी से दवा दो। उस चूल्हे पर रोटिया होती रहे। १५ दिन बाद वर्तन को चूल्हे मे निकाल लो और तेल को छानकर बोतलो मे भर दो। इस की लगातार मालिश करने से समस्त वात रोग निश्चय ही नाश हो जाते हे। कई बार का परीक्षित है।

रसोन कल्क नं २ (त्रि चं ७ भाग)—दूध, तेल, घी, मास, भात अथवा साठी चावलो का भात इसके साथ सात दिन तक क्रमश हर दिन २–२ तोले लहसुन का कल्क यानी सिल पर पिसा हुआ लहसन बढा—बढाकर खाने से वात सम्बन्धी रोग, विषम ज्वर, शूल, गोला, मदाग्नि, तिल्ली का रोग, हाथ का दर्द, पसलियो की पीडा सिर की पीडा और वीर्य के समस्त दोष दूर हो जाते हैं।

नोट—दूध, तेल, घी या मास प्रभृति मे से किसी एक के साथ लहसन का कल्क खाना चाहिये।

लशुन योग—१ तोला लहसुन को सिल पर महीन पीसकर और घी मिलाकर खाने से समस्त वात रोग नाश हो जाते है। (चि च भा ७)। खासकर अर्दित रोग मे यह नुस्खा अधिक लाभदायक है। परीक्षित है। इसी प्रकार लहसुन १ तोले को गाय के दूध मे पकाकर खाने से वात व्याधि नाश हो जाती हे। यह अत्यन्त उत्तम नुसखा है।

यूनानी योग—

माजून सीर (यू. सि यो स) द्रव्य और निर्माण विधि—लहसुन साफ किया हुआ आधा सेर लेकर १ सेर गोदुग्ध मे इतना पकावे कि लहसन भली भाति जल जाय फिर मधु ५ तोला और घी ६ तोला मिलाकर खूब घोटे। इसके बाद अग्नि से उतार कर लौग, जायफल, जावित्री, कालीमिर्च, रूमी मस्तङ्गी, छोटी इलायची, काबुली हड का छिलका, दालचीनी, सोठ प्रत्येक ३ तोला अगर और केशर प्रत्येक १–१ तोला मिलाकर माजून बनावे।

मात्रा और सेवन विधि—५-७ माशा तक १२ तोला सुहाना गर्म गावजबान के अर्क के साथ उपयोग करें।

गुण तथा उपयोग—यह पक्षवध, अर्दित और कम्प-वात को दूर करती है और आयु वृद्धि के लिये गुण-दायक है।

माजून सीर उदवीर वाला (यू सि यो स) द्रव्य और निर्माण विधि—गीलानी गावजबान पुष्प (गुल गावजबान गीलानी) और बिल्ली लोटन के पत्र प्रत्येक ६ तोला ४।। माशा, बसफाइज, फुस्तकी, काबुली हड, काली हड का बकला और मकोय प्रत्येक ४-४ तोला। सबको ६ सेर मीठे जल मे पकावे। जब २ सेर जल रह जाय तब आधा सेर साफ किया हुआ लहसुन उसमे डालकर पुन पकावे जिसमे लहसुन गल जाय। फिर एक पाव ताजा गोदुग्ध मिलाकर इतना पकावे कि दूध शोषित हो जाय। पीछे १ सेर शुद्ध मधु मिलाकर चाशनी करें और सोठ, मिर्च, पीपल, श्वेतमिर्च, लौंग, तज, कबाबचीनी, कुलञ्जन, श्वेत बहमन, रक्त बहमन, शकाकुल, मिश्री, बाबूना पुष्प, मरज-न्जोश प्रत्येक २२।। माशा, अम्बर, अशहब और केशर प्रत्येक ४।। माशा। इनको बारीक पीस और मिलाकर माजून प्रस्तुत करे और मर्तबान मे भरकर जौ की राशि मे गाढ दे। ४० दिन के उपरान्त उपयोग मे लावे। मात्रा ४।। माशा।

गुण तथा युपयोग—यह अर्दित और पक्षवध मे अति-शय गुणकारी है। सशोधन के उपरान्त ४० दिन खाने से रोग दूर हो जाता है। परीक्षित है। शर्द ऋतु मे यदि वृद्ध व्यक्ति ४० दिन तक इसका उपयोग करे तो अखिल शीत जन्य व्याधियो से सुरक्षित रहे।

रोगन सैर (यू चि सा.)—लहसुन ४ तोला, फरफी-यून, अकरकरा प्रत्येक ३–३ तोला, काली मिर्च, सुदाव १–१ तोला। सबको आधा पाव रोगन जैतून मे डालकर पाक करे। पाक सिद्ध होने पर उतार कर छानले।

उपयोग विधि—शिश्न पर अर्ध उष्ण तेल की मालिश करके ऊपर पान का पत्र बाध देवे।

गुण—शिश्न को दृढ करता हे जोडो की पीडा तथा आमवात मे भी लाभदायक है गर्म करके मर्दन करें।

रोगन सोम (लहसन तेल) (यूनिमा) —लहसन छिला हुआ १ भाग, फरफियुन, अकरकरा प्रत्येक तिहाई भाग, कालीमिर्च, सुदाव प्रत्येक चौथाई भाग सबका चूर्ण कर नौ गुने जैतून तेल मे पाक करे। औषधि के जल जाने पर उतार कर शीतल कर छान लो।

गुण—यह तेल वात पीडा, कटिशूल, अर्श मे लाभप्रद है। वाजीकरण है।

अहितकर—गर्भवती स्त्रियो को।

निवारण—बादाम तेल, सूखा धनिया, नमक और पानी मे पका लेना चाहिये।

प्रतिनिधि—जगली लहसुन। मात्रा—साधारण २-३ माशा।

लहसन एक कली (Allium Ascalonicum)

यह हरितक्यादि वर्ग और पलाण्डु कुल (Liliaceae) का एक छोटी जाति का लहसन होता है। इसके कन्द मे सिर्फ एकही कली रहती है। और ये कलि ये शाखाओ के अग्रभाग पर आती है। जमीन मे इसका कन्द नही बनता। इसका पौधा लहसन के समान ही होता है।

उत्पत्ति स्थान—

भारत के सब प्रदेशो मे बोया जाता है। यह बगीचो मे जहा अग्रेजी सब्जिया बोयी जाती हैं विशेष कर महाराष्ट्र मे।

संक्षिप्त विवरण—कदमय क्षुप। कद लम्बा और तीक्ष्ण सिरे वाला, दुर्गन्धमय। बाह्य त्वचा भूरी-पीली। कली। लम्बी। पान-पीले नलिकाकार, अनेक और सदृश आकार के। छत्री- गोलाकार सघन, केवल पुष्पो सह। मूलोद्भव पुष्प दण्ड १ से २ फीट ऊंचा। पुष्प सफेद। बाह्यान्तर कोष के आकुंचित सिरे ६। पुकेसर ६। बीजाशय उर्ध्व। नलिका कोमल। डोंडी-बीजो वाली। यह लहसन ऊपर की जाति की अपेक्षा अधिक तेज है।

नाम—

स०—क्षुद्र लशुन। हिं०—एक कली लहसन। ब०—गधुन। गु०—एक कलियों लसण। म०—एक कली लसण उर्दू—लहसुन। अ—शेलॉट [Shallot]। ले० Allium Ascalonicum Linn [एलियम एस्कलोंनिकम लीन]

उपयुक्त अग—कली।

मात्रा—३-६ माशा।

गुण-धर्म और प्रयोग—

यह एक उत्तम कामोद्दीपक वस्तु होती है। इसको घी मे भूनकर शहद मे मिलाकर खाने से प्रबल कामोद्दीपन होता है। कर्ण रोगो मे भी यह वनस्पति लाभदायक होती है। (ब० च)

इस सम्बन्धी विशेष जानकारी स्व० कविराज प्रताप सिंह जी रसायनाचार्य द्वारा रसायन पत्र देहली मे प्रकाशित हुई है, जो नीचे दी जा रही है। अत रसायन पत्र द्वारा प्राप्त सहयोग के लिये उनके कृतज्ञ हैं—

इस कन्द का भारतवर्ष मे सर्वत्र उपयोग होता है। किन्तु औषध के रूप मे कौनसा रसोन (लहसुन) काम मे लाना चाहिये, यह एक विचारणीय प्रश्न उन विज्ञ वैद्यो के सामने उपस्थित हो जाता है, जिन्होने इस अद्भुत रसोनकन्द को देखा है और उपयोग किया है। आश्चर्य इस बात का है कि यह कन्द प्राय सारा का सारा गुप्तरूप से पाश्चात्य वैज्ञानिक खरीद लेते है और भारतीय लोगो को इसके दर्शन भी दुर्लभ हो जाते है। बडी कठिनाई से बाजार भाव से चतुर्गुण अष्टगुण मूल्य देने पर कही-कही यह प्राप्त होता है। जब से मुझे इसका ज्ञान हुआ है, मै निरन्तर इसकी प्राप्ति के लिये प्रयत्नशील हूँ और काफी प्रयत्न करने पर यह अब तक केवल पाच सेर प्राप्त हो सका है।

इस रसोनकन्द मे विशेषता यह है कि यह एक ही कन्द का होता है, अत इसे एकपोती लहसुन के नाम से व्यापारी बेचते है। इसके अन्दर अन्य सुलभ प्राप्त लहसुन की तरह दाहोत्पादक या स्फोटोत्पादक उग्रशक्ति नही है। इसका सेवन कराने से हाईब्लड प्रेशर धीरे-धीरे कम हो जाता है और शरीर मे बल का सचार होता है। 'नावनीतक' ने अनेक कल्प इसके लिखे है, किन्तु चिकित्सको

को तो मरल योग चाहिये जिससे कार्य भी हो एव रोगी को अग्राह्यगन्ध से अरुचि भी न हो।

प्राचीन ग्रन्थो मे इसके रस का प्रयोग पाया जाता है —"लसुनस्य पलाडोर्वा मूल गृर्जनकस्य वा चन्दनाद्वा रस दद्यान्नारीक्षीरेण नावनम्" (अष्टाङ्ग सग्रेह श्वासहिक्का चिकित्सा)। रक्तपित्त मे इसका निषेध है। अष्टाङ्ग हृदयकार ने इस कन्द के गुण इस प्रकार लिखे है—

लसनो भृशतीक्ष्णोष्ण कटुपाकरसरः।
हृद्यः केश्यो गुरुर्वृष्यः स्निग्धो रोचन पाचनः॥
श्लिलासकुष्ठगुल्मार्शो मेहक्रिमिकफानिलान्।
सहिध्मपीनसश्वास कासान् हन्त्यस्लपित्तकृत्॥

इन गुणो की परीक्षा कर इसका उपयोग तो करना ही चाहिये, पर आज तो जर्मन चिकित्सक इसके तैल का प्रयोग भिन्न-भिन्न नामो से करते है। परिव्राजर्क सत्यदेव जी ने इस विषय मे वडी खोज की है और उस पर हिन्दी मे "लहसुन का वादशाह" शीर्षक एक निवन्ध भी प्रकाशित किया हे स्विट्जरलैण्ड का निवासी एक व्यक्ति भारतवर्ष मे योगियो से इस कन्द का ज्ञान प्राप्त कर जर्मन मे कायाकल्प चिकित्सा कर रहा है।

पर हम भारतवासी इस लहसन का दर्शन भी न करे, इसमे अधिक आश्चर्य की वात क्या है। मेने विशेप अन्वेपण करने के लिये यह सेण्ट्रल ड्रग रिसर्च इन्स्टीच्यूट, लखनऊ मे भी भेजा है और हिन्दू-विश्वविद्यालय के फार्मेसी डिपार्टमेण्ट मे भी इस पर विशेप अनुसन्धान की व्यवस्था की जा रही है। पर मेरी प्रार्थना वैद्य समाज से यह हे कि पाश्चात्यो के अनुसन्धान पर क्यो अवलम्वित रहे ? हमे स्वय अपने रोगियो पर विधिविधान से प्रयोग कर इसकी उपयोगिता का प्रचार करना चाहिये।

अनेक प्रकार से प्रयोग करने पर मैं निम्न विधि को अधिक उपयोगी और व्यवहारिक पा रहा हू। आशा है अन्य वैद्यबन्धु भी इसका उपयोग कर रोगियो को लाभ पहुचायेगे और अपना अनुभव "रसायन" द्वारा प्रकाशित कर वैद्य समाज का उपकार करेंगे।

एकपोती लहसन के जितने नमूने मुझे वनारस, लखनऊ या देहरादून मे प्राप्त हुए हैं, उन सवमे देहरादून का सर्वोत्तम पुष्ट और गुणवान सिद्ध हुआ है। यह कन्द प्याज के मध्य कन्द के वरावर मोटा होता हे। इसका पोपण प्याज की तरह अनेक मूल ,शाखाओ मे होना हे। पत्र इसके साधारण लहसन जैसे होते ह। गन्ध भी लहसन सी पर अत्यन्त उग्र नही होती है।

कन्द के छिलके हटाकर स्वच्छ करके वारीक काटकर दो छटॉक ले और पाच पाव गोदुग्ध मे मिलाकर मन्द आच पर पकाकर मावा वना ले। इस मावे मे समान शर्करा मिलाकर २० पेडे वना लें, और सुरक्षित काच पात्र मे रख ले। मात्रा एक से दो पेडा तक प्रात खाली पेट दूध के साथ रोग और रोगी की अवस्था विशेप के अनुसार प्रयोग कर। इसका सेवन करने से रक्तवाही नाडियो मे मार्दव उत्पन्न होता है, पाचन शक्ति वढती है, हृदय की गति सम और प्रसादयुक्त होने लगती है एव व्लडप्रेशर धीरे-धीरे स्वाभाविक होता जाता है।

पूज्य माहात्मा गान्धी जी ने अपने ऊपर चिरकाल तक इसका प्रयोग स्व० डा० अन्सारी की सलाह से किया था औरआ जभी अनेक विज्ञजन इसका प्रयोग कर लाभ उटा रहे है। मै स्वय इसका उपयोग अपने और अपने रोगियो पर करके लाभ उठा रहा हूँ। आशा है वैद्य समाज इसका लाभ अवश्य उठायेगा।

लक्ष्मणाफल (मामफल) (Annona Muricata)

यह फल वर्ग और सीताफलादि कुल (Annonaceae) का एक फल होता है। इसको लक्ष्मण फल कहते है। यह विदेशी है। फल वडा और उसकागर्भ खट्मीठा आम की सुवास वाला होता है।

उत्पत्ति स्थान—

भारत मे वेस्ट इडीज, वोम्वे प्रेसिडेसी और पूर्वी भारत मे कृषि की जाती है या लगाया जाता है।

नाम—

मल०—मुल्लनजक्का, विलायतीनुना। ता०—मुल्ल-चित्ता। स०—लक्ष्मडफल। हि०—लक्ष्मणफल, मामफल म०—मामफल। अ०—सौर सोप आफ अमेरिका (Sour soap of America)। ले०—एनोना म्युरीसेटालिन (Annona Muricetа Linn)।

उपयुक्त अङ्ग—फल। मात्रा—फल का गूदा १ से २ तोला।

गुण धर्म और प्रयोग—

फल—शीताद नाशक। वीज—वामक, ग्रोही, मत्स्य-विपनाशक, कृमिघ्न है।

इसके पके फल के खट्मीठे गूदे का पानी ज्वर की प्यास बुझाने के वास्ते दिया जाता है। कच्चा फल का गूदा खट्टा होता है और आतो मे जलन पैदा करता है। गूदा या धर वहुत ग्राही होता है। यह आँतो को बलकारी और शीताद को नष्ट करने वाला है। त्वक ग्रोही है। मूल त्वक का उपयोग सडी मछली खाने से उत्पन्न विष को नष्ट करने मे किया जाता हे। पत्र कृमिनाश करने मे उपयोग किये जाते है और बाह्य प्रलेप पूय युक्त फोड़ो और व्रणो पर किया जाता है।

लक्ष्मणा (Ipomoea Sepiaria)

यह गुडूच्यादि वर्ग और त्रिवृत्तादि कुल (Convolvulaceae) की एक बहुवर्षायु लता है जो समस्त भारत मे विशेपत वर्षा ऋतु मे पैदा होती है। लक्ष्मणा के सम्बन्ध मे अब तक सर्वसम्मत निर्णय नही हुआ हे किन्तु सुप्रसिद्ध वनस्पति शास्त्रीय जय कृष्ण इन्द्र जी और इडियन मेडिसिनल प्लान्टस के रचयिता लेफ्टनेंट कीर्तिकर और मेजर वसु ने हनुमान वेल अथवा वन कलमी (Ipomoea-sepiaria koen) को ही लक्ष्मणा माना है। उसी मत को मान्यता देकर यहा इसी नाम के नीचे इस वनस्पति का वर्णन दे रहे हैं।

अभिनव निघण्टु मे इस वनस्पति की पहिचान वताते हुए लिखा है कि—

पुत्राकार-रक्ताल्प-विन्दुभिर्लाञ्छिता सदा ।।
लक्ष्मणा पुत्र जननी वस्तगन्धाकृतिर्भवेत ।।
कथिता पुत्रदाऽवश्यं लक्ष्मणा मुनि पुङ्गवैः ।।

उत्पत्ति स्थान—

लक्ष्मणा की यह लता विशेपत काठियावाड मे थूहर की वाडो पर वहुत अधिक तादाद मे होती है। समस्त भारतवर्ष मे सिलोन, मलाया, फार्मोसा मे रास्ते के दोनो ओर, खेतो, वगीचो, वाडो पर पानी के घोरो पर पायी जाती है।

वर्णन—

यह लता अधिकतया वर्ष भर देखी जाती है। फिर भी चतुर्मास मे विशेष पाई पाती है। इसका तना वृक्षो और वाडो के ऊपर कोमल, चिकना या न्यूनाधिक रुयेदार गुच्छला के समान गुथा, लिपटा और चढा हुआ होता है। इसके पत्र गिलोय के पत्तो के समान होते है। इसमे बहुधा बारहो मास फूल और फल आया करते हे। किन्तु चातुर्मास मे विशेष होते है। फूल गुलावी रग के होते हे। इसके फूल प्रात काल खिलकर शामको मुरझा जाते हैं।

मूल—सूतली से कनिष्ठिका या छोटी उगली जैसा होता है। इसके ऊपरी भाग से क्वचित सुतली तथा स्लेट पेन जैसे मोटे के पतले भाग निकले हुये होते हैं। मूल की छाल थोड़ी मोटी, ऊपर से भूरी और अन्दर से सफेद रग की होती हे। मूल की लकडी सफेद रग की होती है। इसका आडा काट करके देखने से यह सछिद्र और चक्राकार दीखती हे। गन्ध उग्र और स्वाद दाहक होता है।

डण्डी और शाखाये—इस लता की डडी ज्यादा करके चिकनी और चिलकती है किन्तु किसी समय इस पर सफेद वालो की रुवाली होती है। डडो का रग फीका जामुनी अथवा ललाई लिये होता है और कभी पीलापन लिये हरा भी होता हे। डडी या शाखा सुतली जैसी मोटी होती है। इस पर क्षत करने से तने मे से थोडा दूध निकलता है। डाडी पर कभी बारीक दाने और लवी रुवाली भी होती है। इस पर दूरी लिये खड़ी नसे भी होती है।



पान—एकान्तर होते हैं। तो भी इनका पत्र दड मरोड़ी खाकर पान एक ही माला मे आये हुए हो एसे दिखाई देते हे। पत्रदड १ से २ या ढाई इच लम्बे कोमल चिकने होते है। यह अधिक करके लता जैसे मोटे होते हैं। पान का आकार गिलोय के पानो से विशेष करके मिलते होते है। तो भी वहुत समय एक ही वेल पर त्रिकोने, सकडे, लम्वे और लम्बी नोक वाले भी पान होते है। गिलोय के आकार जैसे छोटे पत्र ज्यादा करके १॥—२॥ इच व्यास के होते है। परन्तु तिकोने और लम्वे पान २—३ इच लम्वे और १॥ से २ इच चौडे होते हैं। पान दोनो ओर से चिकने चमकते हुए होते हैं। पत्र ऊपर से हरे या गहरे हरे और नीचे से सहज फीके होते है। पानो के दोनो ओर सूक्ष्म बिंदिये होती हैं। कुछ पत्तों में पत्रों के ऊपर की ओर वीच की नस के पास जामुनी रग के छीटे होते हे। पानो को मलने से अधिक चिकने लगते है। गन्ध वकरे जैसी या मूली के पत्तो की गन्ध से मिलती होती है। स्वाद चिकना और कुछ खारा लगता है।

फूल—पुष्प धारण करने वाली सली के पत्र कोण से निकली हुई होती है। ये नीचे से पतली और सिरे पर मोटी होती हुई होती हे। ये कही नीचे एक लाइन औरशिरे पर ¼ इच मोटी होती है। लम्वाई १ से ५ या ७ इन्च की होती है। रग वहुधा फीका जामुनी और सिरे पर कही पीलास लिये हरा होता है और ज्यादा करके चिकना, किंतु कही वालो की रुवाली होती है। शलाकाके सिरे पर २५ से ३० फूल एक छत्र के गुन्छा के मानीद आये हुये होते हैं। पुष्प डण्ड ½ से ¾ इच लम्वा होता है और १ से १½ लाइन मोटा होता है। ये नीचे से पतला और ऊपर से मोटा होता है। पुष्प दण्ड के सिरे पर गहरे हरे रग की दो रस कुप्पि होती हैं। पुष्प पत्र वारीक, सकडे और जल्दी से खिर जावे जैसे होते हैं। पुष्प की गन्ध थोड़ी कनेर के फूल की गन्ध से मिलती होती है।

पुष्प वाह्यकोष—के पत्र पाच होते हैं। ये हरे या पीलास लिये हुये हरे या जामुनी छाया लिये होते हैं। ये एक दूसरे पर ज्यादा करके वाजु से दवे हुए होते हैं। ये २ से २½ लाइन लम्वे होते हैं। इन पर कभी वालो की अच्छी रोलवली भी होती है। ये पुष्पाभ्यन्तर कोष की नली पर चहु ओर रहे होते हैं। ये पुष्पाभ्यतर कोष गिर जाने पर चौडे होकर सिरे से अलग होकर पुष्प सूखते समय वहुधा नीचे झुक जाते हे। ये वीच मे से कुछ मोटे और इनकी किनारी सफेद पतली होती है। यह सिरे से पुष्प मे तङ्ग किन्तु फल मे गोलाई लिऐ चौडे और बुट्ठे होते हैं।

पुष्पाभ्यन्तर कोष—की पखड़ी पांच होती हैं। परन्तु ये जुडकर नीचे के भाग मे नली और सिरे पर गोलाकार रकावी जैसी होकर रहती है। नली नीचे जैसी पुष्प वाह्यकोष के पत्र के अन्दर ढकी होती है उतनी सफेद रग की और शेष फीके जामुनी या गुलावी रग की होती है। सारा पुष्प वहुधा १ से १½ इच लम्वा होता है। इसमे ¾ से १ इच की नली और वाकी का भाग इसके मुख पर सपाट होता है। सिरे पर सपाट होती है। सिरे पर व्यास १ से १½ इची, नली अन्दर के भाग मे जामुनी रग की होती है।

पु केसर—पांच होती हैं। ये पखडी से छोटी होती है। ये पखड़ी की नली के अन्दर आई हुई होती है। इसके तन्तु वहुत पतले, सफेद, चिकने और चमकते हुए होते हैं। नीचे की ओर थोड़ी चलकती हुई सफेद रु वाली होती है। परागकोष गुलावी या जामुनी रग का भल्लाकृति का होता है और पराग रज सफेद होती है।

स्त्री केसर—एक होती है। गर्भाशय पु वा कोष के अन्दर ढका हुआ होता है। यह चिकना चमकता और हरापन लिये पीले रङ्ग का होता है, यह एक पीली कर्णिका पर होता है। नलिका वारीक और घोली होती है। ये पु केसरो जितनी अथवा उनसे थोड़ी छोटी और मिरे पर कुछ टेढी होती है। उस पर नलिका प्रमुख सूक्ष्म दानेदार कुछ विभागित हुई गेद जैसा रखा हुआ होता है।

फल—भूरे रङ्ग का, पतली छाल का, गोल और सिरे पर नोकदार होता है और नीचे सूक्ष्म ढाल जैसी पतली झिल्ली होती है। फल २ से ३ लाइनें व्यास का होता है। ये चार खण्ड का होता है, प्रत्येक खण्ड मे १-२ वीज होता है। फल झालीदार और चिकना होता है किन्तु इसके अन्दर के चार भाग की चार लाइनें इस पर

स्पष्ट दिखाई देती हैं।

बीज—१ लाइन लम्बे और चौडे होते हैं। ये भूरापन लिये सफेद अथवा फीके भस्मी रङ्ग के होते है। इसके एक ओर सूक्ष्म छेद या कालासयुक्त रग का चाँद सा होता है, बीज के किनारे से डोरे जैसा तार निकलकर बीच में अमलाई के बीज सा किनारे के साथ लगा होता है, जिससे इस फल के अन्दर के दो दो बीज एक सफेदी लिये लम्बा बाल जैसा बारीक तार से एक दूसरे के साथ बंधे हुये होते हैं। बीज तीन कोण वाले होते है। बीज की बीच की कोण गोलाई लिये और दूसरी दो कोण कुछ अन्दर दबी हुई होती हैं। इन तीनो कोणो पर तीन अलग अलग नसें खड़ी आई हुई होती है। ये तीनो इसके किनारे पर के छिद्र को तीन ओर से मिलाती हुई होती है। बीज पर चमकती मखमली अत्यन्त सूक्ष्म बालो की रोमावली होती है। इसकी एक सफेद फूल वाली जाति भी होती है।

लक्ष्मणा के सम्बन्ध में विद्वानो के मतव्य—

लक्ष्मणा के सम्बन्ध मे लाला रूपलाल जी वैश्य धन्वन्तरि बूटी चित्राक के पृष्ठ ४०६, भाग ११ सन् १९३५ मे लिखते हैं कि यह कहावत मशहूर है "जिन खोजा तिन पाइया गहरे पानी पेठ" मैं लगभग १९७३ सम्वत् मे ऋषिकेष गया, वहां के साधुओ से मैंने इस बनौषधि के बारे मे पूछताछ शुरु की, फलत एक साधु ने बतलाया कि यहा से उत्तर पूर्व भाग में लगभग २ मील के बाद लक्ष्मण झूला के समीप एक सोता (स्रोत-झरना) है—उसी के किनारे यह मिलेगी। मैं वहाँ गया किन्तु औषधि नहीं मिली। प्राय मैं १५ दिन लगातार इसकी खोज में रहा लेकिन फिर भी व्यर्थ। अन्त मे वहा के दूसरे महात्मा मिले, उन्होंने अपने साथ लेजाकर मुझे वह बूटी दिखलाई। वे क्षुप कोई १० इच लम्बे थे। ब्राह्मी की पत्ती से कुछ बडी पत्तिया थी। ऊपर अस्पष्ट दो नोक और नीचे पान की तरह कुछ नुकीली थी। किन्ही पत्तियो पर लाल और किन्ही पर सफेद सफेद चिह्न थे। किसी प्रकार के फूल या कन्द नही दीख पडे। जल के समीप ही इसके क्षुप थे। उस महात्मा ने बतलाया कि श्वेत चिन्ह पत्तो के प्रयोग से कन्या और रक्तचिह्न वाले से पुत्र पैदा होते हैं। प्राय यह बात प्रचलित है कि लक्ष्मण श्वेत कटकारी को कहते है और उसी से पुत्र पैदा होता है। यह धारणा इस क्षुप को देखने से बदल गयी। कटकारी के समान न तो इस क्षुप मे काटे थे और न उसके समान फल-फूल और पत्ते भी मेरी समझ मे लक्ष्मणा, श्वेत कटकारी का भी पर्यायवाची है किन्तु स्वत लक्ष्मणा है अन्य प्रकार की ही बूटी। हा। उस साधु को मैंने गया वाली लक्ष्मणा की कथा सुनाई तो उन्होने कहा, वह भी लघु लक्ष्मणा है। किन्तु उससे निश्चित फल नही देखा जाता। हो सकता है कि कुछ दिनो के लगातार सेवन से वह कोई प्रभाव दिखलावे।" इसके बाद इसकी सत्यता की जाच करने के लिए मैने इसका प्रयोग शुरू किया सर्व प्रथम १९७३ मे गुजरात प्रान्त मे सिद्धपुर स्थान के निवासी प दयाशकर पण्डा की श्रीमती को दिया ईश्वर की कृपा से उन्हे गर्भ स्थिति हुई। इसके बाद १९७४ मे विहार प्रान्त के हजारीबाग जिले मे गावा के रईस टिकेत श्री लक्ष्मण प्रसाद सिंह जी के यहा मैंने इसका दूसरा प्रयोग किया वहा भी पुत्रोत्पत्ति हुई किन्तु मुझे यह अनुभव हुआ कि प्रयाग के पूर्व गणेशादि देवताओ की पूजा इत्यादि अवश्य कर देनी चाहिये। अन्यथा उससे अनिष्ट भी हो जाता है। शास्त्रो मे भी ऐसा ही लिखा है। क्योकि मैंने पूर्व कर्म किये बिना ही इसका प्रयोग कर दिया था और फल यह हुआ कि प्रसूता की मृत्यु होगयी। फिर दश वर्षों बाद सम्वत् ८४ मे इन्ही महाशय के यहाँ दूसरी स्त्री को भी इस औषधि की आवश्यकता पडी और इसका प्रयोग करने पर इन्हे भी पुत्रोत्पन्न हुआ।

इन्ही दिनो स ८३ मे काशी निवासी बाबू विश्वनाथ प्रसाद खत्री के यहा भी इसका प्रयोग किया गया और वहा भी पुत्रोत्पत्ति हुई।

इसके बाद अर्थात् १९८७ मे इसका सबसे प्रचण्ड प्रभाव दिखाई पडा—महाराजा बहादुर हथुआ (छपरा-बिहार) के यहा। इस विषय मे यहा अधिक लिखना उचित नही समझता किन्तु इतना अवश्य है कि इसी औषधि के प्रभाव से इस राज्य मे एक महाशय का प्रभाव इतना बढा कि बिहार गवर्नमेंट को उनसे आज ७० लाख रुपयो का हिसाब मागना पड़ा है।

इसकी सबसे बडी विशेषता यह है कि ऋतुस्नाता को केवल एक बार ही, वह भी चवन्नी भर की मात्रा मे उष्ण गोदुग्ध जिसमे गौघृत भी मिला हो, के साथ देने से उपर्युक्त लाभ होता है। इसके पचाग का कल्क प्रयोग किया जाता है।

वर्षा और शरद ऋतु मे यह मिलती है किन्तु जब मैं दुबारा इसको लेने पुन उसी स्थान पर गया तो दुर्भाग्य वश मुझे एक भी पत्ती नही मिली (इसमे क्या रहस्य है यह तो रहस्य परमात्मा ही जानता होगा।

(ब० बूटी चित्राक से साभार)

नोट—जामनगर, काशी, देहरादून की अनुसधान शालाओ मे शास्त्र वर्णनानुसार इस पर निर्णय होना आवश्यक है।

नाम—

स०—लक्ष्मणा, पुत्रदा, पुत्रकदा, पुत्ररजनी, तूलिनी, नागिनी, नागपुत्री पुच्छदा, मजिका। हि०— लक्ष्मणा, बनकलमी। ब०—बनकलमी। म०—आमटी, आमटीवेल। गु०—हनुमान वेल। कच्छ-रातीगुमडवेल। ता०—ताली किराई। ते०—मेट्टातूती। मल—तिरु ताली। अ०—स्पाटेड लीव्हड इपोमिया (Spotted aleaved Ipomoea) ले०—पिमइया सेपिएरिया कोइन (Ipomoea sepıarıa Koen)।

उपयुक्त अङ्ग—सर्वाङ्ग। मात्रा—आधा से एक तोला।

गुण धर्म—

लक्ष्मणा कन्द मधुर, शीतल, स्त्री के वन्ध्यत्व को हरने वाला, रसायन, बलकारक और त्रिदोष को शात करने वाला होता है। गुजरात मे हनुमान वेल गर्भस्थान की शुद्धि के लिए उपयोग मे ली जाती है और यह विश्वास किया जाता है कि यह वनस्पति गर्भ स्थान के विकारो को मिटाकर उसको सन्तानोत्पत्ति के योग्य बना देती है। इसके पत्तो को पीसकर देहाती लोग फोडे, फुन्सियो के ऊपर बाधते है। इस का रस एक मूत्रल और वातनाशक वस्तु की तरह उपयोग मे लिया जाता है।

सखिया के विष को नष्ट करने के लिये भी यह वनस्पति बहुत सफल और उपयोगी मानी जाती है। यह रस मे तीक्ष्ण और दाहक है।

विशिष्ट योग—

[१] लक्षणारिष्ट (भै र. स्त्री रोगा')—६। सेर लक्ष्मणा को १२८ सेर पानी मे पकावे और जब ३२ सेर पानी शेष रहे तो छानले। तदन्तर उसमे १२॥ सेर गुड और १ सेर धाय के फूलो का चूर्ण तथा ५-५ तोले नागरमौथा, मुलैठी, खरैंटी, हर्र, बहेडा, आमला, हल्दी, दारुहल्दी, जीरा, सफेद चन्दन, लाल चन्दन, अजमोद, अजवायन और वेलगिरी का चूर्ण मिलाकर सबको मजबूत और घृत से चिकने किए हुए मृत पात्र मे भरकर उसका मुख बद करदे और फिर १ मास पश्चात् निकालकर छानले। यह अरिष्ट स्त्री रोगो को नष्ट करता है।

[२] लक्ष्मणा लोहम् (१) भै. र. स्त्री रोगा —६। सेर लक्ष्मणा के पचाङ्ग को अधकूटा करके ३२ सेर पानी मे पकावे और ८ सेर पानी शेप रहने पर छानकर उसे पुन पकावे। जब गाढा हो जाय तो उसमे अशोक की छाल, कुश की जड, महुवे का सार, मुलैठी, खरटी की जड़, पाठा और वेलगिरी का चूर्ण ५-५ तोले, लौह भस्म ३५ तोले, मिलाकर ठडा करके सुरक्षित रखे। इसके सेवन से स्त्रियो के समस्त रोग नष्ट होते हे। (मात्रा २-३ रत्ती)।

[३] लक्ष्मणा लोहम् (२) (लक्ष्मणादि चूर्णम्) भै र वाजीकरण—लक्ष्मणा, हस्ति कर्ण, पलाश, सौठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेडा, आवला, नागरमौथा, चीता मूल, वायविडग और असगन्ध इनका चूर्ण १-१ भाग और लौह भस्म सबके बराबर लेकर सबको एकत्र खरल करे।

यह लौह वृष्य, वाजीकरण, कृश मनुष्यो के लिए बलदाता और सर्व रोग नाशक है। यदि कन्या ही कन्याये उत्पन्न हो तो इसके सेवन से पुत्रोत्पत्ति हो सकती है। मात्रा ३-४ रत्ती।



लांगुली लता (Ipomoea Pestigridis)

यह त्रिवृत्तादिकुल (Convolvulaceae) की एक लता होती है जो चातुर्मास मे पैदा होती है। लता ५ से १० फीट लम्बी बढती है। इसके तने पर भूरे के सफेद बालो की लम्बी रुवाली होती है। इसको तोडने से बोला-पन लिए रस निकलता है। इसकी बेलें अधिक करके जमीन पर या घास मे फैली हुई होती हैं, किसी समय वृक्ष का सहारा पाकर उस पर चढ जाती है। इसके तने और शाखाओं का रग पीलास लिए हरे रग का होता है, किसी वक्त जामुनी छाया लिए भी होता है। तना पेन्सिल जैसा और शाखाये सुतली से स्लेट पेन जैसी मोटी होती है। इस पर सूक्ष्म बिन्दुओ से निकले हुए लबे खरसट वालो की रुवाली होती है, जिनसे शाखाओ पर उगली फिराने से खुरदरी लगती है। पान एकान्तर होते हैं। ये १ से ५ इच व्यास के होते हैं। ये हाथ की हथेली की उगलियो के समान टडी विभाजित हुई होती है। इसके विभाग ५ से ६ होते हैं, ये नीचे थोडे सकडे, बीच मे चौडे और सिरे की ओर सकडाते हुए अणीदार होते हैं। पान के ऊपरी ओर का रग पीलास लिए हरा या गहरा हरा होता है और दूसरी ओर ज्यादा फीका बल्कि सफेदी लिए होता है। पान के दोनो तरफ खुरदरे लम्बे वालो की रुवाली होती है।

पत्र दण्ड १ से ५ इच लम्बा और शाखा जैसा और उससे मोटा भी होता है, ऊपर की ओर सलग लबी लीक होती है। दण्ड का रग शाखा के समान और ऊपर सफेद बालो की रुवाली होती है। पुष्प धारण करने वाली सली पत्र कोण से निकली हुई होती है, यह १ से ३ इच अथवा पत्र दण्ड जैसी लबी और इतनी ही मोटी होती है, इस पर गहरे वालो की रुवाली आयी हुई होती है। सली के सिरे पर १ से ३ या ज्यादा करके अधिक फूल एक गुच्छा के समान आये हुये होते हे। इसमे बाहर के पुष्प पत्र एक इच लबा और ३ लायन से ½ इच चौडे होते है। ये नीचे पीलास लिये रग के ३ नसो वाले होते है, ऊपर से गहरे हरे रग के होते है। अन्दर के पुष्प पत्र इनसे छोटे होते है। इन सब पुष्प पत्रो पर ज्यादा कर लम्बा कुछ मुलायम रोये होते है।

फूल धोले या गुलाबी रग के मध्यम कद के होते है। पुष्प बाह्य कोष के पत्र ५ होते हे, ये एक दूसरे से थोडे लम्बे छोटे होते है। पत्र ⅓ से ½ इच लम्बे होते है, ये सकडाते हुये सिरे पर अणी वाले होते है। इनके दोनो ओर रुवाली होती है। पृष्पाभ्यन्तर कोष की पखडिये ५ होती है, ये इनकी जात समान जुडी हुई होती है, सिरे पर इसका व्यास १ से १¼ इच का होता हैकिन्तु किनारे पर इसमे पाच गहरे खाचे आये हुये होते हैं। पुकेसर भी इसकी जात के समान ५ होती है। स्त्री केसर १ होती है। फल गोलाई लिए, सिरे पर सकडाता हुआ नोकदार होता हे। जब पकता है तब फीका तपखरिया रग का हो जाता है, यह दो परत वाला होता है, इसकी प्रत्येक परत मे दो दो बीज होते हे। बीज चिकने, ऊपर सूक्ष्म मखमली वालो की रुवाली आई हुई होती है। इसके पत्ते शेरकेपजे के आकार के होते हैं इसलिए इसको बाघ पादी भी कहते हैं।

उत्पत्ति स्थान—

समग्र भारतवर्ष, हरे भरे पर्वतो पर चातुर्मास मे घास के साथ, पोरबन्दर तलपत आस पास की कर्दम जमीन मे उगती है।

नाम—

स—कामालता। हिं—लागुलीलता, कामालता। ब०—लागुलीलता। पो०गु०—वाघपादी, वाघपादीनी बेल। मल०—पुल्लिचुवाटु। ता०—पुल्लिचोवडी। ते०—मेकामाडुग्गु। अ—टाइगरफूट (Tiger foot)। ले०—इपोमिया पोस्टिग्रिडिस (Ipomoea pestigridis,linn)

उपयुक्त अङ्ग—मूल और बीज।

गुण धर्म और प्रयोग—

शोथघ्न और रेचक—इसकी जड़ एक विरेचक द्रव्य की तरह काम मे ली जाती है। इसी प्रकार यह कारबकल, विस्फोटक और बाल तोड़ पर भी उपयोग मे

ली जाती है। पागल कुत्ते के विष पर भी इसका उपयोग किया जाता है।

मूल जल मे घिस कर रस विकार और सन्धिवायु की शोथ पर लेप किया जाता है। बीज रेचक है।

लामज्जक (Andropogon Jwarancusa Roxb)

यह कर्पूरादिवर्ग और तृण धान्यादि कुल (Gramineae) का बर्षं जीवी खस की जाति का एक सुगन्धित तृण है जो देखने मे सर्वथा खस के समान प्रतीत होता है। यह अपने साधारण पातालो धड, जड से निकली हुई पत्तियो के क्षुद्र घने गुल्म और फूल की सफेद लोमयुक्त तुरियो के द्वारा पहिचाना जाता है। जड लम्बी और पतली होती है। वास गुलाब पुष्प के इत्र की तरह सुगन्धित, स्वाद सुगन्धित, तिक्त एव चरपरा होता है। सुखाया हुआ पौधा सफेद होता है।

इसके तृण का काण्ड सरल मोटा और नीचे लोमयुक्त, पत्र मसृण, पत्रका विस्तार नोकीला, पुष्प दण्ड भी सरल नोंकदार और आयताकार काण्डाच्छादित पत्रो के मूल की ओर पीतवर्ण। फूल—उभयलिङ्ग विशिष्ट फीके जामुनी रग के, भस्मी या दरियाई रग के होते है। शीतकाल मे फूल और फल होते है।

उत्पत्ति स्थान—

विहार, तिरहुत, बगाल, उत्तर हिमोलय प्रदेश (हिमालय की तराई मे) काश्मीर से आसाम तक ८ से १० हजार फीट की ऊचाई पर नदियो के किनारे, तिब्बत पर्यन्त, पजाब, सिंधु, राजस्थान की शुष्क मरुभूमि मे, अरब, फारस और अफ्रीका मे पैदा होता है।



हि०-लामज्जक, अ०-इजखिर
ANDROPOGON LANIGER DESF

नाम—

स०—लामज्जक। हि०—लामजक, लामज्ज, खवी। प०—इमरकुश। म०—पिवलावाला। गु०—पीलो वालो। ब्रह्मी—पन्नी। कर्णा०—कुस्सा, घाटभरी, इभरकुशा। व०—करकुशा। पोरबन्दर गधारु, गधारु घास। अरबी—इजखीर ले०—सिम्बो पोगन ज्वराकुश (Cymbopogon jwarancusa Jones) (एण्ड्रोपोगन ज्वाकुश जोन्स)।

उपयुक्त अङ्ग—जड, पुष्प और पचाङ्ग। जड और पुष्प एक प्रकार की हलकी तेज सुगन्ध होती है। इनसे एक प्रकार का उत्पत् तेल निकाला जता है जो अत्यन्त सुगन्धित होता है।

मात्रा—५ माशा से ७ माशा तक।

गुण धर्म और प्रयोग—

लामज्जक—शीतल, कडवा, हलका, त्रिदोषनाशक तथा रक्त दोष, त्वचा के रोग, पसीना, मूत्रकृच्छ्र, दाह और रक्तपित्त को दूर करता है। —भा. प्र.

लामज्जक—शीतल, कड़वा, मधुर, वातपित्तनाशक

तथा तृषा, दाह, श्रम, मूर्च्छा, रक्त पित्त और ज्वर को नष्ट करता है। —रा० नि०

लामज्जक—मधुर, तिक्त (कडवा), शीतल, पाचन, स्तम्भन, हलका, पित्तनाशक तथा वात, तृषा, दाह, त्रिदोष, श्रम, मूर्च्छा, रक्त विकार, शूल, वमन, ज्वर, पसीना, मूत्रकृच्छ्र, मद, कफ, घाव, विष और विसर्प इन को दूर करता है। —नि र

पुष्प—रक्त रोधक है।

यूनानी मतानुसार—

प्रकृति—दूसरे दर्जे मे उष्ण एव रूक्ष, मतान्तर से दूसरे दर्जे में उष्ण और पहले मे रूक्ष।

गुण कर्म—सान्द्र दोष पाचन अवरोधोद्घाटक, श्वयथु विलयन, वातानुलोमन, आर्तवजनन, मूत्रल, दीपन और ग्राही; इन समस्त गुण कर्मों मे फल अधिक वीर्यवान है।

औषधोपयोगी—जिसकी जड़ बड़ी हो, दृढ हो, सूक्ष्म हो, सुगन्धि युक्त हो, साधारण देश मे उत्पन्न हुआ हो, ऐसा लामज्जक श्रेष्ठ होता है। —भैं० चि०

उपयोग—अङ्गवात, पक्षवध, अर्दित, आक्षेप और विस्मृति जैसी शीतल कफज व्याधियो और कफ ज्वर मे लामजक का उपयोग करते हैं। जलोदर, आमाशय, यकृत, प्लीहा, शोथ, आर्तव, मूत्र सग और अश्मरी मे अकेला या अन्यान्य औषधि द्रव्यो के साथ इसका क्वाथ पिलाते हैं। आमाशय, वृक्क और यकृत के कठिन शोथो को विलीन करने के लिये इसका लेप लगाते है। खाज और शरीर की थकावट दूर करने के वास्ते इसके फूलो का तेल शरीर पर मर्दन करते है। दातो और मसूढो को दृढ करने के लिये लामजक की जड के क्वाथ से गण्डूष कराते है। इसके अतिरिक्त अग्निमांद्य उत्क्लेश (गसियने) और अतिसार बन्द करने के लिए इसकी जड का उपयोग करते हैं। —यू द्र. वि से

नवीन मतानुसार—

यह रक्त परिष्कार करणार्थ व्यवहार होता है। यह तृण, सर्दी, पुरातन वात और कालेरा रोगनाशक है। यह बालको के अजीर्ण रोग मे एक उत्तेजक औषधि है। सन्निवात, वात और ज्वर रोग मे यह बहुत हितकारी है। पेट के अफारे पर इसके मूल का लेप किया जाता है।

—बेडेन पोवेल

अहितकर—शिर शूल कारक। निवारण—सफेद-चन्दन।

प्रतिनिधि—अकरकरा और काली मिर्च।

लास (Porphyra vulgaris)

यह वनस्पति लास कुल (Rhodophyceae) की है। यह मेनोरा चट्टान और सिंध मे पैदा होती है।

नाम—

हिं.—लास। बो.—लास। ले —पोरफिरा व्लगेरिस (Porphyra vulgaris Ag)।

गुण धर्म और प्रयोग—

यह वनस्पति शान्तिदायक, धातु परिवर्तक और कठ-माला रोग मे उपयोगी होती है। इस वनस्पति मे आयोडिन का भाग मुख्य होता है।

—व, च

लिबिडिबी (Caesalpinia coriaria)

यह शिम्बी कुल (Leguminosae) का एक छोटी जाति का वृक्ष होता है। इसके पत्ते जुडमा लगते है। इसके फूल छोटे, हलके पीले या हलके हरे, मीठी खुशब वाले और इसकी फलियां मोटी, मुडी हुई और काटेदार होती है। इसकी छाल चमड़ा रगने के काम मे आती है।

उत्पत्ति स्थान—

यह वनस्पति पश्चिमी भारत मे पैदा होती है। इसका आदि स्थान दक्षिणी अमेरिका और वेस्ट इण्डिज है। इसकी कृषि धारवाड, वेलगांव, कनारा, उत्तर पश्चिमी भारत और बगाल मे की जाती है।

नाम—

हि —लिविडिवी । वम्वई—लिविडिवी । दक्षिण—अमरीका कासुमाक । कनारी—दिविदिवी । ता —तिवीदिवी । अ.–सुमाके मरीकाह । इ.—दिविदिवी (Divid-ivi) । ले —केसलपीनिया कोरिएरिया (Caesalpinia–coriaria(gacq) willd) ।

उपयुक्त अङ्ग—फली और छाल ।

मात्रा—इसकी फलियो की और इसकी छाल की मात्रा १० रत्ती से ३० रत्ती तक ।

गुण धर्म और प्रयोग—

इसकी फलिया सकोचक, पौष्टिक पार्यायिक ज्वरो को दूर करने वाली होती है और उसकी छाल एक प्रभाव शाली सकोचक वस्तु होती है । उसकी अखण्ट फलियो का चूर्ण पानी के बुखार मे दिया जाना है । उसकी फलियो के काढे से एनिमा लेने से खूनी बवासीर सूख जाते है । जीर्ण ज्वर मे दस्तो को बन्द करने के लिये इसकी छाल का काढा दूसरे सुगन्धित द्रव्यो के साथ दिया जाता है । इसकी छाल ज्वर नाशक होती है और जीर्ण ज्वर मे इसका उपयोग किया जाता है । —व च से

लिबाड़ा (Heynea trijuga)

यह निम्बादि कुल (Meliaceae) का एक छोटी जाति का वृक्ष होता है । इसके पत्ते जोडे मे लगते है । इसके फूल सफेद रग के होते है ।

उत्पत्ति स्थान—

इसके वृक्ष हिमालय मे सिक्किम के पर्वतो की ४००० फीट की ऊचाई पर, खासिया पहाडियो मे, मनीपुर, पूर्वी घाट, गोदावरी का जङ्गल, विजिगापट्टम पर ४५०० फीट की ऊचाई पर, पश्चिमी घाट मे पूना से नीलगिरी तक, अनाम लाइन्स से ट्रावेंकोर तक ६००० फीट की ऊचाई पर पैदा होते है ।

नाम—

हि —लिवाडा । वम्वई–लिवाडा । व —कपियाकुशी चेर्नेजी । भ —गु दीडा । अल्मोड़ा— वन रीठा । नेपाली–अखटरुआ । मल —कोराहाडी । ता —कराह, सेन्डाराइ । ले —हेनिया ट्रिजुगा (Heynea trijug a Roxb) ।

उपयुक्त अङ्ग—त्वक और पत्र ।

गुण धर्म और प्रयोग—

इसकी छाल और पत्तो मे कडवे और पौष्टिक पदार्थ रहते है । मलाया के अन्दर चोर व्यक्ति इसके फलो को दूसरी औपधियो के साथ मिलाकर लोगों को वेहोश और मूर्च्छित करने के काम मे लेते है । —इ मे. मे

लिसोड़ा छोटा (Cordia dichotama)

यह फलादि वर्ग और श्लेष्मान्तकादि कुल (Boraginaceae) का ४० फीट ऊचा वृक्ष होता है । यह देखने मे वहुत करके वडे लिसोडे के वृक्ष के तुल्य होते है । पत्र—डिम्बाकृति दण्ड के दोनो ओर होते है । पत्ते की बडी सिरायें ३, पत्ते के कोमल रोमावली और किनारे कर्तित होते हैं। फल १ इची, गोलाकार, मौलश्री वृक्ष के फल के समान दोनो ओर क्रमश नोकीला, फल मे एक बीज होता है। बीज से गूदा पृथक किया जा सकता है । इसके बीज करोत से काटने पर एक प्रकार से अप्रीतिकर गन्ध उसमे से आती है (डीमक) । ग्रीष्म के प्रारम्भ मे फूल एव वर्षा काल मे फल होते हैं ।

उत्पत्ति स्थान—

भारत मे सर्वत्र, छोटा नागपुर, पश्चिमी भारत, पजाव से आसाम तक खेतो पर, जगलो के किनारे, वगीचो मे इसके वृक्ष पाये जाते है ।

नाम—

स —श्लेष्मान्तक , शेलू, भूकर्बुदार, लघुश्लेष्मान्तक हि०—लिसोडा छोटा, लिसोडा । ब०—छोट वहनारी, वहुछोटा । वम्बई—छोटा गू दा, लेसरी गेदुरी, भोकर । राज०—गू दा, छोटा गू दो, लेपिस्ता । म०—भोकर । राज०—गू दा, छोटा गू दा । गु०—छोटा गू दो, लेपिस्ता म०—भोकर । प० —लेस छोटा । उर्दू—लिसोडा, सपि-

स्ता। फा०—सगपिस्ता, सपिस्ता। ता०—नरुविलि। ते०—चिन्नानेक्केरु। अ०—सेवेस्टन प्लम (Sebesten Plum)। ले०—कोर्डिया ओवलिक्वा (Cordia obliqua Wild) या कोर्डिया डिचोटेमा (Cordia dichotama Forst) या कोर्डिया मिक्सा (Cordia myxa Roxle)

उपयुक्त अङ्ग—फल, पत्र, त्वक्।

मात्रा—९ दाने से १५ दाने तक।

गुण धर्म और प्रयोग—

लिसोडे का फल कुछ मीठा, कुछ शीतल, कृमिनाशक, कफ नि.सारक, सकोचक और फेफडे की सब प्रकार की बीमारियो मे बहुत उपयोगी होता है।

यूनानी मत से इसका फल गर्मी और सर्दी मे मात दिल होता है। यह निमोनिया और सन्निपात के अन्दर लाभदायक होता है। न्यूमोनिया मे इसको देने की विधि इस प्रकार है—

९ दाने सपिस्ता को लेकर आधा पाव पानी मे जोश दें। जब तिहाई पानी शेष रह जाय तब उसको छानकर ३ तोले गरम घी और ३ तोले मिश्री मिलाकर उगली से हिलाकर पीले।

सपिस्ता पेट को मुलायम और फेफडे को साफ करता है। इससे दस्त साफ होता है। यह कफ को छाटकर निकाल देता है। पित्त विकार को दस्त की राह से निकालता है। पित्त और खून की गरमी को दूर करता है। प्यास और पेशाव की जलन को मिटाता है। आतो की खराश को दूर करता है। दमा, सूखी खासी और सीने के दर्द मे लाभ पहुँचाता है। मेदे के कृमियो को नष्ट करता है। जुलाब की तेजी और उससे पैदा होने वाली घबराहट को दूर करता है। जिनकी प्रकृति गर्म होती है उनके लिये मृदु विरेचक पदार्थ का काम करता है। अगर पित्त, कफ, खून तीनो विकार से ज्वर आने लगे तो इसको देने से बडा लाभ होता है। सुजाक मे इसकी ४-५ कोंपलो को बारीक पीसकर जल में मल छानकर पीने से लाभ होता है। इससे प्रमेह, मसाने के जख्म और बार-बार पेशाब का आना बन्द हो जाता है। इसके फलों का काढा खासी मे कफ ढीला करने के लिये, पेशाव की जलन को कम करने के लिये और अतिसार को दूर करने के लिये दिया जाता है। इससे आतो को उत्तेजना मिलती है।

इसकी छाल का रस नारियल के तेल के साथ मिलाकर उदरशूल को दूर करने के लिये दिया जाता है। इसकी छाल और इसके कच्चे फल हलके पौष्टिक पदार्थ की तरह उपयोग मे लिये जाते हैं। इसकी गुठली का मगज दाद की एक उत्तम औषधि है। इसको पीसकर लेप करने से दाद मिट जाता है।

उपयोग—

१ सूखी खासी—सपिस्ता के फलो का क्वाथ बनाकर पिलाने से सूखी खासी मिटती है।

२ अतिसार—गुठली निकले हुये गूदे का चूर्ण करके खिलाने से अतिसार मिटता है।

३. मूत्रकृच्छ्र—गूदे के कच्चे फलो का लुआब सेवन कराने से मूत्रकृच्छ्र मे लाभ होता है।

४ घाव—इसके पत्तो की राख को घी मे मिलाकर लगाने से घाव भर जाता है।

५ बदगाठ—इसके पत्तो को गरम करके बद गाठ पर बाधने से वह बैठ जाती है। (व च से)

नोट—यूनानी योगों मे यही लिसोडा छोटा (गूदा छोटा) लिया जाता है। इसके विशेष योग 'लिसोडा बडा' के प्रकरण मे देखे।

लिसोड़ा बड़ा (Cordia wallichi G. Don)

यह फलादि वर्ग और श्लेष्मान्तकादि कुल (Boraginaceae) का वृक्ष जमीन से ३०-४० फीट ऊचाई मे होता है। इसकी फैली हुई और ऊची शाखाये होती है। इसकी छोटी शाखायें कुछ ललाई लिये हुये भूरे रङ्ग की होती है। शरत काल मे पत्ते गिरते है। काण्ड वक्र ४ फुट से ६ फुट तक की गोलाई मे होता है। त्वक ½ से ¾ इची, मोटी धूसर वर्ण लम्बे भाग मे कर्तित दाग होते है। काष्ठ कुछ धूसर वर्ण का होता है। यह वृक्ष बहु शाखी

होता है।

पत्र—शलाका के दोनो ओर होते हैं। १ से ४ इच लम्बे, पत्र कोने से लम्बा एव किनारे अस्पष्ट होते है। पत्तो की कोपल सुचिक्कण और पत्ते कुछ खुरदरे होते है। पत्र दण्ड की ओर हृत्पिण्डाकृति। पत्र की सिराये ३ से ५, दड १ से २ इञ्च लम्बा होता है।

फूल—छोटा, उभयलिङ्ग, विशिष्ट श्वेत वर्ण गुच्छ समूह मे पुष्प दण्ड मे अनेक शाखाये होती है। फल भी गुच्छ समूह मे लगते हे। फल मे गुठली ½ से १ इच लम्बी होती है।

फल—कच्ची अवस्था में हरे, पकने पर कुछ पीत वर्ण ललाई लिये सफेद भूरे रङ्ग के होते हैं। फल का गूदा चिकना, उज्वल लस लसेदार मीठा होता है। फल देखने मे प्राय सुपारी के समान। प्रत्येक फल मे एक बीज होता है।

इस वृक्ष मे एक प्रकार का गोद भी लगता है। इसके मगज मे से तैल निकाला जाता है जो सू घने और लगाने के काम मे आता है। चैत्र मास मे फूल आते हैं और ज्येष्ठ मास मे फल पकते है, वर्षा मे पूर्ण परिपक्व हो जाते है।

वक्तव्य—लिसोड़ा वृक्ष की दो जातिया होती है। वडा लिसोडा और लिसोडा छोटा। यथार्थत लिसोड़ा फल के वडे और छोटे होने के कारण ही वड़ा और छोटा लिसोडा भेद किया गया है।

उत्पत्ति स्थान—

लिसोडे के वृक्ष प्राय. समस्त भारतवर्ष मे पाये जाते हैं। हिमालय प्रदेश के चिनाव से आसाम तक ५००० फीट की ऊचाई तक, बगाल के पर्वतीय प्रदेश, ब्रह्मा, मध्य और दक्षिण भारत, राजस्थान मे ग्रामो के किनारे, खेतो के किनारे और वगीचो में। भारतेतर चीन आदि देशो मे भी यह वहुतायत से उपलब्ध होता है।

नाम—

स—बहुवर्का, भूतद्रुमा, भूत वृक्षा, द्विज कुत्सित, गन्धपुष्प, सेलू, श्लेष्मान्तक। हि-लिसोडा वडा, निसोडा, लिटोरा, लटोरा, लफेडा, लफेरा। व—बहुवडा, वोहोदरी, बालफल। ववई—वडगू द, मोटा भोकर। गु.—वडगू द, पिस्तान, सपिस्तान। ता—अलि, नमाविरी। ते—नेक्केरा वोचकु। फा—सपिश्ता। अरवी—मोख्ताह, दिव्राक। मलय—पेरिया विरी। कर्णा—चेलु। औत्कली—अड। कन्नड—मन्नादिक्य। अ—लार्ज सेवेस्टन प्लम (Large sebesten plum)। ले.—कोर्डिया-वेलिचि (Cordia wallichii G Don) or (Cordia obliqua wild varwallichii)।

रासायनिक संगठन—

लिसोडे के वृक्ष की छाल मे एक प्रकार का (Cordic) पाया जाता है। पके फल मे शर्करा, एक प्रकार का गोद और एक प्रकार की भस्म पाई जाती है।

उपयुक्त अङ्ग—फल, छाल और पत्र।

मात्रा—६ दाने से १५ दाने तक। छाल का काढा ५ से १० तोला, फल का शर्बत १ से २ तोला।

गुण-धर्म और प्रयोग—

श्लेष्मान्तक—कटु, शीतल, कषैला, पाचक, मधुर, स्निग्ध, केशो को हितकारी तथा कृमि, शूल, आमरक्त, कफकारी, विस्फोटक, व्रण, पित्त, विषर्प और सर्व प्रकार के विषो को हरने वाला है।

इसके फल शीतल, मधुर, कडवे, हलके, कषैले, वातवर्द्धक, पित्तनाशक, विष्टम्भी, रुचिकर तथा रुधिर, विकार, दृष्टि विकार और कफ नाशक है। इसके पक्के फल मधुर, स्निग्ध, शीतल, पुष्टिकारक, विष्टभ कारक, रूखे, भारी, वात विनाशक, पित्त निवारक और रुधिर विकार को हरने वाले है। —नि. र.

लिसोडा—मधुर, कषैला, कडवा, वालो को हितकारी, विष, व्रण, विस्फोट, विषर्प, कोढ, कफ तथा पित्त नाशक है।

लिसोडे का कच्चा फल—विष्टभि, स्निग्ध, कफकारक, शीतल और भारी है।

छाल का रस—कषाय और तिक्त होता है तथा पाक मे कटु होता है।

यूनानी मतानुसार—

लिसोडा (सपिस्ता) प्रकृति मे समशीतोष्ण और प्रथम

कक्षा मे स्निग्ध । गुण कर्म—उर कण्ठमार्दव कर, कफ निःसारक, पित्त की तीक्ष्णता का शमनकर्त्ता, फिसलने वाला और प्रकृति मार्दवकर है । विरेचन औषधो के साथ सम्मिलित करने से तज्जन्य तीक्ष्णता एव सक्षोभ का परिहर करता है । यह शुष्क कास मे विशेष गुणकारी है । —यू. द्र वि.

यह खासी, गले की खरावी, छाती मे से जमे हुये वलगम को ढीला करके निकालता है । इसके पत्तो का रस निचोड कर पिलाने से पेशाव खुलासा होकर मर्दानगी आती है । लिसोडे के फल का गूदा भी ताकत को वढाता है । मनी (वीर्य) मे गाढापन लाता है । छाल का काढा करके कुल्ले करने से जीभ के छाले, गले की खरखराश और जलन दूर होती है । शरीर की सफरा (पित्त) सम्वन्धी खराबिया दूर होती हैं । पके हुये लिसोडे अन्य फलो की भाति खाये जाते हैं ।

डाक्टरी मतानुसार—

डा० खोरी महोदय का कथन है कि लिसोडा (पका) का गूदा (५–६ तोला एक साथ पिलाने से) पित्त की जलन या दूसरी खराबियो को शान्त करके आंत्र की श्लेष्मिक कला को चिकना करता हुआ विरेचन कार्य करता है ।

डा० पावेल और खोरी दोनो का मत है कि लिसोडे के ताजे नवीन कोमल पत्तो का रस मुख मे कवल धारण करने से मुख पाक और गले की खरखराश नष्ट होती है ।

उपयोग—

१ चरक सहिता तथा बगसेन ने लिखा है कि लिसोडे की छाल को पीसकर विषर्प (इरिसिपेलास) और विस्फोट (फफोले) पर लेप करने से अतीव लाभ होता है ।

२ यदि शीतला के दाने वहुत ही उग्र हो और नेत्र या नेत्र पलक के भीतर भी दिखाई देते हो (नेत्रेन्द्रिय नष्ट हो जाने की सम्भावना हो) तो लिसोडे की छाल को पीसकर उसकी लुगदी नेत्रो पर वांधना तथा स्वरस नेत्रो मे डालना चाहिये । —वृक्ष चिकि विज्ञान

३. गूदे के पत्तो को तेल मे चुपड कर उनको गरम करके पेट पर वाधने से वादी से कठोर पडा हुआ पेट मुलायम हो जाता है ।

४ मूत्र नली की जलन—उसके फलो के लुआव मे मिश्री मिलाकर पिलाने से मूत्राशय और मूत्र नाली की जलन मिट जाती है । —व. च.

५ औषधि मे शुष्क श्लेष्मान्तक फल ही काम आते है, इसका क्वाथ वडा लेसदार है, और इसी कारण से शरीर के आभ्यन्तरिक मार्गों मे जहा रूक्षता और खरता हो, यथा वातिक या शुष्क कास, प्रतिश्याय, श्वासादि में. वहां इसका प्रयोग वडा लाभकारी है ।

६ लिसूडा शुष्क, मुलहठी, उन्नाव, गुल बनफसा, विहीदाना, सौफ इत्यादि द्रव्यो का क्वाथ, फाण्ट व शीत कषाय, छाती के रोगो तथा प्रतिश्यायायादि में लाभकारी है ।

७. गुद भ्रंश—लिसोडा वडा की कृष्ण राख बारीक पीसी हुई गुदा से निकलने वाली कांच पर बुरका कर बैठाने से गुद भ्रंश रोग आराम हो जाता है । —इ मे मे

विशिष्ट योग—

१. शरवत अरजानी (यू वि सा)—वनफशा पुष्प, उन्नाव, वेर, गुलावपुष्प प्रत्येक आठ तोला, सपस्ता (लसूडे) इसव गोल प्रत्येक १० तोला, बिहिदाना ४ तोला, गाउ जवान ६ तोला । सव औषधियो को ८ गुने जल मे रात भर भिगोवें । प्रात क्वाथ करें, तीसरा भाग रहने पर इसमें चौथा भाग तुरजवीन डालकर छान लें और जल से त्रिगुण खाड मिलाकर पाक करें । यदि इसवगोल शरबत मे न डाला जाय तो शर्बत प्रयोग करते समय पहले ६ माशा इसवगोल फाक कर ऊपर से शर्बत पी लिया करें । मात्रा २ से ४ तोला ।

गुण—आत्र की शुष्कता को दूर करता है, विवन्ध नाशक है ।

शर्बत अहजाज—उन्नाब विलायती २० दाना, सपस्तान (लसूडे) ६० दाना, गोदकतीरा, गोदकीकर प्रत्येक १०॥ माशा, विहिदाना १॥ तोला, मधुयष्टि छिली हुई, खवाजी

बीज, नीलोफर पुष्प, वनफशा पुष्प प्रत्येक २ तोला, अडूसा पत्र आधा सेर, गोंद के सिवाय सबको आठ गुने जल मे भिगोकर प्रात क्वाथ करे, पाक सिद्ध पर गोंद को खरल करके डाले। मात्रा—२ तोला। अर्क गावजवान के साथ प्रयोग करे।

अतरीफल जमानी (शिरोरोगे)—द्रव्य और निर्माण विधि—श्वेत त्रिवृत (सफेद निसोथ) शुष्क धनिया ७॥ तोला, पीली हडका वक्कल, काबुली हडका वक्कल, काली हड, पुटपाक विधि से शुद्ध किया हुआ अर्थात् मुशव्वी (भुल भुलाया हुआ) सकमूनिया और वनफसा पुष्प प्रत्येक ३ तोला ६ माशा, बहेडा का वक्कल, गुठली निकला हुआ आमला (आमला मुकश्शर), वशलोचन, गुलाब के फूल, नीलोफर पुष्प—प्रत्येक २२॥ माशा, श्वेत चदन, कतीरा प्रत्येक १२॥ माशा। द्रव्यो को कूट—छानकर ११ तोला ३ माशा वादाम के तेल मे स्नेहाक्त (चर्ब) करे। पीछे उन्नाव, लिसोंडा (सपिस्तां) प्रत्येक १०० नग, वनफशा पुष्प २ तोला ६ माशा को जल मे क्वाथ करे और उसको छानकर औषध से डेढ गुना प्रमाण मे हड़ के मुरब्बा का शीरा मिलाकर अतरीफल प्रस्तुत करे।

मात्रा और अनुपान—रात को सोते समय ७ माशा अतरीफल, १२ तोला अर्क गाउजवान के साथ सेवन करे।

गुण तथा उपयोग—मस्तिष्क का शोधन करता है। शिरो रोग, मलावरोध, मालीखोलिया सदा बना रहने वाला प्रतिश्याय (नजला दायमी) और वाष्पारोहण के लिये अतीव गुणकारी है। (यू० सि० यो० स० से)

शरवत कासनी—सौंफ की जड, कासनी की जड, करफ्स की जड, अजखर की जड, अंजीर जरद प्रत्येक तीन पाव, उन्नाव, गाउजवान, वहिदाना, मधुयष्टि, द्राक्षा बीज रहित, वनफसा पुष्प, गुलाव पुष्प, सनाय, इमली प्रत्येक सवा सेर, लसूडे, सौंफ, परसाओशा (हसराज), प्रत्येक सवा दो सेर, रेशा खतमी १ पाव, अर्धकुट्टित चूर्ण कर आठ गुना जल मे रात्रि को भिगोकर प्रात क्वाथ करे, तीसरा भाग रहने पर छानकर २ सेर गुड जलाकर मिलावे, फिर ३८ सेर गुड मिलाकर पाक करे।

मात्रा—२ तोला। गुण—आमाशय के सब रोगो मे उत्तम है।

शर्बत जातुरिया—द्रव्य और निर्माणविधि—उन्नाव ३० दाना, लिसोडा (सपिस्ता) ५० दाना, खतमी बीज और खुब्बाजी बीज प्रत्येक १॥ तोला, अजीर २० दाना, जूफा और मुलेठी (छिली हुई) प्रत्येक ३ तोला, हसराज (परसियावशा) २॥ तोला, चीनी (कद सफेद) आधा सेर। कद सफेद को छोडकर शेष अन्य द्रव्यो को रात को एक सेर जल मे भिगोकर सवेरे क्वाथ करे। जब आधा जल शेष रह जाय तब उतार कर मल छानकर चीनी (कद सफेद) मिलाकर चाशनी करके शर्बत बनाये।

मात्रा और अनुपान आदि—३ तोला शर्बत सवेरे और ३ तोला सायकाल को ५ तोला अर्क गाउजवान के साथ देवे। साधारण प्रतिश्याय (नजला और जुकाम) और कास मे केवल जल ही मिलाकर देना पर्याप्त है।

गुण तथा उपयोग—यह कास, प्रतिश्याय (नजला और जुकाम), न्यूमोनिया (जातुरिया) और श्वास के लिये उत्कृष्ट भेषज है। यह शरीरगत द्रव्यो को उत्सर्ग योग्य बनाता (मुञ्जिज) और उनका छेदन करता (मुकत्तिअ) है। फुफ्फुस और वक्ष को मलो से शुद्ध करता है।

विशेष उपयोग—श्वसनक ज्वर (न्यूमोनिया) और पार्श्वशूल की अव्यर्थ महौषधि है। —(यू०सि०यो०स०)

वासा शर्बत—अडूसा पत्र ११ तोला ११ तोला ८ माशा, द्राक्षा बीज रहित ८ तोला ८ माशा, मधुयष्टि, जूफा, पोदीना, परसाशो प्रत्येक ३५ माशा, मस्तङ्गी, दालचीनी, सोठ प्रत्येक ७ माशा, उन्नाव, लसूडे प्रत्येक १०० नग, अजीर सफेद २० नग, सबको १२ सेर पानी मे एक दिन रात्रि भिगोवे, प्रात मृदु अग्नि पर पकावें कि आधा रह जये, फिर साफ करके २॥ सेर खाड मिलाकर पाक करे।

मात्रा—२॥ तोला से ५ तोला। गुण—कफके कारण यदि कास, श्वास हो, तो गुणकारी है।

शरवत विरेचक—गुलाब पुष्प, सनाय प्रत्येक पौने ४ तोला, वनफशा पुष्प ७॥ तोला, त्रिवृत्त, अफसन्तीन रूमी, गारीकून प्रत्येक २१ माशा, कसूस बीज, ऊस्तोखदूस, मस्तगी प्रत्येक १४ माशा, वालछड ६ माशे, उन्नाव, लसूडे प्रत्येक-

३० नग, मस्तगी और गारीकून के सिवाय बाकी सब औषधियो को आठ गुणा उष्ण पानी मे भिगो दें, प्रात काल क्वाथ करें, तीसरा भाग रहने पर इसमे तुरजवीन २८ तोला हल करके छान लें, फिर इसमे त्रिगुण खाड डालकर पाक करें, पाक सिद्धि पर मस्तगी, गारीकून का बारीक चूर्ण कर शरबत मे मिला दें। मात्रा—४ तोला।

गुण—विरेचक है, तीनो दोषो को निकालता है।

शरबत सद्र—गाउजबान पुष्प पौने तीन तोला, गाउजबान, अलसी बीज, अपक्व आबरेशम कुतरा हुआ, परसाशो, मधुयष्टि, अजवायन देशी, सौंफ प्रत्येक १॥ तोला, उन्नाव पौने ४ तोला, पोस्तडोडा, खतमी बीज प्रत्येक २। तोला, लसूडे ३।तोला, बहिदाना १ तोला, आठ गुणा जल में क्वाथ करे, तिहाई भाग रहने पर छानकर त्रिगुण खाड़ मिलाकर पाक करें। मात्रा—२ तोला।

गुण—कास, श्वास, रक्तपित्त, प्रतिश्याय मे उत्तम है।

लहूकसपिस्तान—सपिस्तान (लसूडें) ५० नग, उन्नाव २० नग, पोस्तखशखाश २ तोला, मधुयष्टि १ तोला, खतमी बीज सफेद १ तोला, खयारैन बीज प्रत्येक ४ माशा, बहिदाना ३ माशा, सबको २ सेर जल मे उबालकर पाक करें, छान लें, खाड औषध से त्रिगुणा लेकर पाक करे, पाक सिद्धि पर जो छिले हुए, मगज बादाम छिले हुये, खशखाश (बीज श्वेत) भुना हुआ १–१ तोला, गोद कीकर, गोद कतीरा, रबुलसूस ३–३ माशा चूर्ण करके पाक में मिलावें।

मात्रा—७ माशा या १ तोला। प्रात और साय काल चाट लिया करे।

गुण—यह लहूक कफस्रावी है, और कास, प्रतिश्याय मे उत्तम है।

लहूक सपस्तान खयार शम्बरी—उन्नाव, लसूडे १५–१५ नग, बनफशा ६ माशा, खतमी ५ माशा, सनाय १॥ तोला, शीरखिशत २॥ तोला, मगज अमलतास ४॥ तोला, खमीरा बनफशा ३ तोला तुरन्जबीन ६ तोला, मधुर बादाम तैल ५॥ माशा, मिश्री १॥ तोला, प्रथम सनाय तक की औषध को ३ पाव जल मे उबा ले, आधा भाग रहने पर छान लें, इसमे शशीर खिशत, मगज अमलतास, तुरजबीन, खमीरा, मिश्री मिलाकर छानकर मध्य आच पर पाक करे—गाढा होने पर बादाम तैल मिलाकर सुरक्षित रखे। मात्रा—१–१ तोला। प्रात साय अर्क गाउजबान से।

गुण—निमोनिया, खासी मे उपयोगी है, विबध नाशक है।

माजून सपिस्तान—मूसली काली, मूसली सफेद, ह बीज, बिनौलाबीज, उटगन बीज, शकाकुल मिश्री, सहलब मिश्री, मगजपिस्ता, मगजचिरौंजी १–१ तोला। मगज नारियल, मगज चिलगोजा, मगज बादाम, तज प्रत्येक २ तोला, तालमखाना १॥ तोला, पिप्पली, सोठ, बहमन दोनो, मोचरस, तिल छिले हुये प्रत्येक ३ माशा, मस्तगी अकरकरा ६–६ माशा, लसूडे, गोद कीकर २०–२० तोला, मधु उत्तम २॥ सेर, शकर सफेद १ सेर, गोघृत १० तोला, केशर ३ माशा, लसूडे और गोद को कूट कर छान घी मे भूने और दूसरी बारीक की हुई औषधि के चूर्ण मे मिला ले, फिर खाड तथा मधु के पाक मे मिलाकर माजून बनावे। मात्रा—१ तोला।

गुण—वाजीकरण तथा वीर्यप्रद है।

(यू० चि० सा० से)

श्लेष्मान्तकादि तैलम् (रा० मा०। शिरो०)—लिसोडे, नीम, दारु हल्दी, गभारी और हर्र मे से किसी एक के बीजो का तैल निकाल कर नित्य प्रति इसकी नस्य लेने और गोदुग्ध पर रहने से पलित रोग नष्ट होता है।

हुकना लय्यिना (मृदु सारिणी वस्ति) द्रव्य और निर्माण विधि—उन्नाव, लिसोडा (सपिस्ता), जौकुट किया हुआ निष्तुषीकृतयव' गुल बनफशा प्रत्येक १ मुष्टिका भर और अजीर ५ नग। सबका डेढ सेर जल मे क्वाथ करे। जब आधा रह जाय, तब उतार कर बूरा (शकर सुर्ख) १७॥ माशा, रोगन बनफशा, रोगन बादाम और तिल तैल प्रत्येक ३ तोला, काजी १७॥ माशा मिला कर रखे।

सेवन विधि—इसे कुनकुना (कोष्ण) करके दो बार वस्ति करे।

उपयोग—यह सरसाम (प्रलापक सन्निपात) और समस्त उष्ण व्याधियो मे लाभकारी है। ज्वर मे भी इससे उपकार होता है।

वक्तव्य—इसमे अमलतास का गूदा मिला लेने से उसकी शक्ति और तीव्र हो जाती है।

अहितकर—यकृदामाशय दौर्बल्यजनक है। निवारण उन्नाव—और गुलाब के पत्र। प्रतिनिधि—खतमी।

लीची (Litchi chinensis)

यह फल वर्ग और अरिष्टकादिक कुल (Sapindaceae) का एक हमेशा हरा भरा रहने वाला छोटी जाति का वृक्ष होता है। इसके पत्ते एकान्तर पत्र दण्ड विहीन एक के पश्चात् एक लगते है। पर्ण (Leaflets) २ से ८, आमने सामने अथवा एकान्तर, ऊपर की ओर से हरे, नीचे की ओर रुवाली युक्त भुरभुरी रग के। फूल छोटे कुछ सफेद रग के होते है। पु० आ० को० के पत्र ४—५, प्याले के आकार के। पु० अ० कोष के पत्र होते नही। पुकेसर ६ से १०, गर्भाशय २—३पोल वाला। फल—इसके फल भूरे रग के अखरोट से कुछ बडे होते है। फलो के ऊपर पतला छिलका रहता है। उस छिलके को निकाल देने पर भीतर से मुर्गी के अण्डे के आकार का सफेद—नीली झाई के रग का फल निकल जाता है। इस फल का गूदा बहुत मीठा और स्वादिष्ट होता है। हर एक फल के अन्दर एक बडे भूरे रग का बीज निकलता है।

उत्पत्ति स्थान—

इस फल का मूल उत्पत्ति स्थान चीन है। किन्तु आजकल भारतवर्ष में बहुत बडे पैमाने पर बाग-बगीचो में इसकी खेती होती है।

नाम—

हि०—लीची। बम्बई—लीची। गु०,म०—लीची। ता०—लीची। अंग्रेजी फ्रेंच—लीची (Litchi) ले० लीची चाइनेसिस या नेफेलियम लीची (Litchi chinensis Sonner Syn Nephelium Litchi)

उपयुक्त अङ्ग—फल, मूल त्वक और पुष्प।

लीची का फल पौष्टिक, हृदय बल्य है। फल खाने के काम मे आता है।

इसके फल मे गुलाब के फूल के समान मधुर और मीठी खुशबू आती है। इसका फल हृदय, मस्तिष्क और यकृत् को शक्ति देने वाला होता है। यह प्यास को बुझाता है। शरीर के लिये यह एक उत्तम स्वास्थ्यवर्द्धक वस्तु होती है।

इण्डोचायना मे इसके फल के छिलको को पीसकर उसको अलकोहल मे मिलाकर आतो की शिकायतो को दूर करने के लिये देते है। इसका कच्चा फूल बच्चो को होने वाली शीतला की बीमारी में दिया जाता है। इसकी जड, छाल और फूलो का काढा गले के विकारो को दूर करने के लिये कुल्ले करने के काम मे लिया जाता है।

इसके बीज वेदनानाशक होते हैं और भिन्न भिन्न प्रकार की स्नायविक वेदनाओ को दूर करने के लिए और अण्डकोप की जलन को दूर करने के वास्ते मलाया मे इनका उपयोग किया जाता है।

लीनपिन [Terminalia Pyrifolia]

यह हरीतक्यादि वर्ग और कुल (Combretaceae) का एक बडी जाति का वृक्ष होता है।

उत्पत्ति स्थान—

आसाम, भारत के पश्चिमी घाट से पेनिनसुला से [illegible] में हजारों [illegible] ७००० फीट की [illegible], [illegible], [illegible], [illegible] और [illegible]।

नाम—

हि—लीनपीन। ब्रह्मा—लिनपिन, लिनपेन। ले—टर्मिनेलिया पायरीफोलिया (Terminalia Pyrifolia Kurz)।

उपयुक्त अङ्ग—छाल।

केम, म्हस्कर और दमाक के मतानुसार इस वृक्ष की छाल एक उत्तम बलवान हृदय को उत्तेजना देने वाली वस्तु होती है।

—व. च.

लील कराठी (Polygalaa crotalarioides)

यह चुक्रादि कुल (Polygalaceae) के पौधे बरसात मे बहुत पैदा होते हैं। इसके पौधे आधे से लेकर डेढ फिट तक लम्बे हैं। इसके पत्ते और फूल सन के पत्ते और फूलो की तरह होते हैं। इस सारे पौधे के ऊपर सफेद रग का रूआ होता है।

यह वनस्पति कच्छ, काठियावाड, शिमला और चावा से सिक्किम मे ४००० से ७००० फीट की ऊचाई पर और खासिया पहाडी तथा मद्रास प्रेसिडेंसी मे पैदा होती है।

हि—लील कण्ठी। सथाली—लीलकण्ठी। ले.—पोलिगेला क्रोटेलेरिआईडस (Polygala crotalarioides Hem)।

उपयुक्त अङ्ग—पत्र और मूल।

इस वनस्पति के पत्तो का लेप नारू की सूजन पर किया जाता है। इसकी जडो को इमली के साथ पीसकर जहरी जानवरो के डक पर लगाया जाता है। इसके पौधे को औटाकर उसकी भाप ज्वर वाले को दी जाती है।

मुण्डा जाति के लोग इसकी जडो को पानी के साथ पीसकर पीते हैं जिससे गले का कफ बाहर निकल जाता है।

पहाडी लोग कफ ज्वर के अन्दर कफ को पतला करने के लिये और वमन लाने के लिये इसके पचाङ्ग का क्वाथ बनाकर देते हे।

—व. च.

लील जहरी [Geraniuna wallichianum]

यह चागेर्यादि कुल (Geraniceae) की एक वर्ष जीवी वनस्पति होती है। इस वनस्पति पर रूआं होता है।

यह वनस्पति कश्मीर, गढवाल, नेपाल, सिक्किम, कुमायू, कुर्रम वेली और खासिया पहाडियो मे पैदा होती है।

हि—लील जहरी। अफगान और पुश्तु—ममीरा। बरबी—इब्रातुराई। कश्मीर—ममीरा, काओ अयुद। ब.—शेफर्डस नीडल (Shepherd's needle)। ले—जेरेनियम वेलिचिएनम (Geranium wallichianum Sweet)।

इसमे १२ से २७ प्रतिशत टेनिक अम्ल रहता है।

उपयुक्त अङ्ग—मूल।

इस वनस्पति के अन्दर सकोचक तत्व रहते है। इसकी जड़ को पीसकर नेत्रो के ऊपर लेप करने से नेत्रो की सूजन उतर जाती है। अतिसार, पेचिस, रक्तस्राव, सुजाक, पूयमेह, मधुमेह, विशूचिका, श्वेत प्रदर, दन्तशूल, गले के जख्म, मुह के अन्दर के व्रणो पर भी इसका उपयोग किया जाता है। इसके क्वाथ की पिचकारी गुदा योनि मे भी दी जाती है।

—इ. मे मे

लुकाट (Ericbatrya Gahonica)

यह फल वर्ग और शतपत्री कुल (Rosaceae) का छोटी जाति का हमेशा हरा रहने वाला फलदार वृक्ष होता है। इसके पत्तो पर बहुत मुलायम रुआ रहता हे। पत्र बडे सुन्दर ६ से लेकर ८ इच तक लम्बे और डेढ से तीन इच तक चौडे होते है। इसके फूल सफेद रग के और सुगन्धित होते हैं। फल १ से १½ इच व्यास के गोल अन्डाकार पकने पर पीले से गहरे नारगी रग के मीठे और पतले छिलके वाले झुमखो मे आये हुये होते है।

बीज १ से १० त्रिकोणीय खट मधुर गर्भ मे ढके हुए।

इस झाड को जल और खाद की बहुत जरूरत होती है। लुकाट के झाड के ऊपर फल खूब आते है। एक अच्छे मोटे वृक्ष से ५ मन के करीब फल उतरते है। फल मे ६० से ७० प्रतिशत गूदा, १५ से १८ प्रतिशत बीज, १५ से २० प्रतिशत छाल होती है। बडा भाग लेव्युलोज, सेक्रोज, मेलिक एसिड, साइट्रिक और टार्टरिक होता है। कच्चे फल के गूदे मे एमीग्डेलीन होता हे। फल स्वादिष्ट



होते हैं और खाये जाते है।

उत्पत्ति स्थान—

इसकी कृषि भारत मे ५००० फीट की ऊचाई पर की जाती है।

नाम—

स०—लोट्टाक। हि०—लुकाट, लोकाट, लुगाट। उर्दू—लखोटा। गु०—लुकाट। ता०—इलकोट्टा, नोककोट्टा। कन्नड—लककोटे। अ०—लोकाट जापानीज मेटलर (Loquat Japanese medler) ले०—एरियोबोट्रिया जयोनिका (Eriabatrya Japonica Linde)।

उपयुक्त अङ्ग—फल।

गुण-धर्म और प्रभाव-

फल—तृषा और उल्टी बद करने वाला और शामक है।

फूल—कफघ्न है। पान का क्वाथ अतिसार मे दिया जाता है।

यूनानी मतानुसार –

यूनानी मत से इसका फल कच्ची हालत मे खट्टा और पक्की अवस्था मे मीठा होता है। यह ज्वर नाशक, उपशामक, वमन मे लाभदायक और प्यास को दूर करने वाला होता है। इसका निर्यास प्रवाहिका रोग मे बहुत लाभ करता है और इसका टिंचर अपचन रोग की बीमारी मे दिया जाता हे। इसके पत्ते सकोचक होते है और इनका उपयोग प्रवाहिका को दूर करने के लिये किया जाता है।

इसके फूल कफ निस्सारक होते है और चीन मे इसका उपयोग खासी, दमा, राजयक्ष्मा और सन्यास रोग मे किया जाता है। (आ० नि० से साभार)

लोध्र (Symplocos Racemosa)

यह हरीतक्यादि वर्ग और लोध्रादि कुल (Symplocaceae) का एक छोटी जाति का हमेशा हरा रहने वाला वृक्ष होता है। इसके पत्ते लम्बे, गोल, नोकदार, चिकने १¾ से ५ इच तक लम्बे कगुरेदार होते है। पत्र दण्ड ½ इची। इस वृक्ष की छाल बहुत मोटी और रेशेवाली होती है। पुष्प दण्ड २ से ४ इची। फूल–पीले रग के सुगन्धित और सुन्दर होते है। पुष्पस्त्वक ½ इची। फूल मे पुकेसर करीब १०० के होते है। गर्भाशय मे ३ विभाग लोम युक्त होते है। फल—आधा इच लम्बा, ½ इच चौडा शकु के आकार का होता है। फल पकने पर बैगनी रग का होता हे। इस फल के अन्दर एक कठोर गुठली रहती है। उस गुठली मे दो-दो बीज रहते है। इसकी छाल गेरुए रग की और बहुत मुलायम होती है, इसकी छाल और पत्तो से रग निकाला जाता है।

लोध्र की छाल बाजार मे अत्तारो के यहा मिलती हे। छाल ऊपर से सफेद, तुरन्त टूट जाय ऐसी और ऊपर खडे चीरे पडे हुऐ तोडने से अन्दर से सहज लाल रग की और सुगन्ध वाली होती है।

फूलने फलने का समय—नवम्बर से फरवरी तक फूल आते है और मार्च से जून तक फल आते है।

उत्पत्ति स्थान–

लोध्र के वृक्ष ब्रह्मा, आसाम, बिहार, अयोध्या के जगल, मालाबार, उत्तर पूर्वी भारत मे २५०० फीट की ऊचाई पर तेराई से कुमाऊ तक, छोटा नागपुर और हिमालय तथा खासिया पहाडियो के मैदान और नीचे के स्थानो मे पैदा होते है।

नाम–

स०–लोध्र, श्वेत लोध्र, शाबर। हि०—लोध। ब०, म०–लोध्र। गु०–लोधर। मल०–पाचोट्टी। कन्नड–बाला लोडुगिनाभारा, पाचेट्टु। कर्णाटकी—लोध। ते०—तेल्ल लोदुगचेट्टु। आसामी—भोमरोत्ती। अ०–मूगामा। अ०–लोधट्रीबार्क (Lodh tree bark)। ले०—सिम्प्लोकोस रेसिमोसा (Symplocos racemosa Rosele)

रासायनिक संगठन–

इसमे यह तीन क्षारोद होते है। (१) लोटच्युरोन ०.२४% (२) कोलोटच्युरोन ०.२% और (३) लोटच्यु-

रिडीन ०.०६%। इनके अतिरिक्त इसमे विपुल परिमाण मे एक रक्त रजक द्रव्य और छाल की राख मे १८% सज्जीखार, परन्तु कषाय द्रव्य का अभाव होता है।

उपयुक्त अङ्ग—छाल पत्र और फल।

मात्रा—त्वक चूर्ण ३ से ६ माशा तक। क्वाथार्थ—१ से २ तोला तक।

लोध—मलरोधक, हलका, शीतल, नेत्रो को हितकारी, कफ, पित्तनाशक, कषैला तथा रक्तपित्त, रुधिर विकार, रक्तातिसार और शोथ (सूजन) को दूर करता है। —भा प्र.

लोध कषैली, शीतल, वात कफ नाशक, रुधिर के विकार को दूर करने वाली, नेत्रो को हितकारी, विष विकार को हरने वाली है। —रा० नि०

लोध कषैली, नेत्रो को हितकारी, शीतल, हल्की, ग्राही, वात कफ नाशक, रक्त दोष, शोफ, पित्त, अतिसार, अरुचि, विष, प्रदर और रक्तपित्त का नाश करने वाली है। —नि० र०

लोध का फूल—पचने मे चरपरा, कषैला, मधुर, शीतल, कडवा, ग्राहक और कफ पित्त नाशक है। —शा० नि०

सक्षेप मे—लोध रस मे कषाय, वीर्य मे शीत, विपाक मे कटु और कफ पित्त दोषो की नाशक है।

लोध का प्रभाव गर्भाशय की शिथिलता पर और श्वेत प्रदर मे अच्छा है। रक्त प्रदर मे लोध कीमती दवाई है। लोध ग्राही होने से रक्त स्तम्भन रूप मे भी उपयोग मे आती है। लोध्रासव प्रदर, रक्त प्रदर मे उपयोगी है। हारित मुनि ने चलित गर्भ मे आठवें मास मे लोध्र सेवनार्थ लिखा है जो ध्यान देने के योग्य है। शोणितास्थापन, गर्भाशय मे कोई भी विकार हो, तो उसको मिटाने के लिये और गर्भास्थापन हेतु लोध उपयोगी है।

यूनानी मत से इसकी छाल कड़वी, कषैली, कामोद्दीपक, ऋतुश्राव नियामक और रक्तपित्त के रोगियो के लिये पौष्टिक होती है। आखो का दुखना, आखो से पानी का बहना तथा सब प्रकार के नेत्र रोगो मे यह बहुत उत्तम वस्तु है।

लोध सकोचक, कफ नाशक, रक्त स्तम्भक, व्रण रोपक और शोथ नाशक होती है। जिससे रक्तस्राव बन्द हो जाता है और सूजन उतर जाती है। श्लेष्मिक त्वचा को लोध से शक्ति मिलती है, जिससे कफ पैदा होना कम हो जाता है।

श्वेत प्रदर और अत्यार्तव रोग मे लोध एक उत्तम वस्तु है। इस प्रकार के रोग प्राय गर्भाशय की शिथिलता से पैदा होते है। लोध गर्भाशय की शिथिलता को दूर करती है। और वहा की रक्त वाहिनियो का सकोचन करती है। इन्ही गुणो की वजह से यह इन रोगो पर विजय प्राप्त करता है। गर्भावस्था के सातवें आठवें महीने मे गर्भपात का अन्देशा होने पर लोध को शहद के साथ देते है। इससे गर्भाशय की शिथिलता दूर होकर उसकी आकृति ठीक हो जाती है और गर्भ को सहारा मिल जाता है।

प्रसूता काल मे योनि के अन्दर क्षत पडने पर लोध का लेप करते रहने से लाभ होता है।

त्वचा के रोगो मे भी लोध का उपयोग किया जाता है। रक्तपित्त रोग मे रक्तस्राव को रोकने के लिये और कुष्ठ तथा दूसरे चर्म रोगो में लोध को खाने और लगाने मे उपयोग किया जाता है। नेत्र रोगो मे आखो की सूजन और लाली को दूर करने के लिये लोध का लेप आखो की पलको पर किया जाता है। अतिसार और रक्तातिसार रोग मे भी इसका प्रयोग किया जाता है।

हिन्दू चिकित्सा शास्त्र मे योनिपथ के रोगो को दूर करने के लिये लोध का उपयोग बहुत प्राचीन काल से होता आरहा है। आयुर्वेद मे यह वस्तु शीतल, सकोचक, आंतो की शिकायतो को दूर करने वाली और नेत्र रोगो मे लाभदायक मानी जाती है। मसूढो की सूजन और मसूढो से खून बहने पर इसके क्वाथ से कुल्ले किये जाते है।

के० सी० बोस का कथन है कि उपरोक्त सब बीमारियो पर इण्डिजिनस ड्रग कमेटी के सामने इस वनस्पति को कच्ची हालत मे चूर्ण के रूप मे, ताजा काढ़े के रूप मे एलकोहेलिक एक्स्ट्रेक्ट के रूप मे उपयोग किया गया। मगर इसका परिणाम कमजोर और असन्तोषजनक ही पाया गया। —व च से

योग—

१ रक्त प्रदर—दस रत्ती लोध को, दस रत्ती मिश्री के साथ

दिन मे तीन वार लेने से चार पाच दिनो मे गर्भाशय की शिथिलता से पैदा हुआ रक्तप्रदर मिटता है।

२ **मसूढो के रोग**—लोध के क्वाथ से कुल्ले करने से मसूढो का ढीलापन मिटता है। उनमे से रक्त का वहना वन्द हो जाता है।

३ **गर्भपात मे**-सातवे आठवे महीने मे गर्भपात के लक्षण दीखने पर लोध और पीपल वृक्ष की छाल के चूर्ण को शहद के साथ चटाना चाहिये।

४ **स्तनो की पीड़ा**—लोध को पीसकर लेप करने से स्तनो की पीडा मिटती है।

५ **नेत्र रोग**—लोध, जीरा, भुनीहुई फिटकरी, इन तीनो चीजो को पीसकर घीगुवार के गूदा मे मिलाकर कपडे मे उसकी पोटली वाघ कर उस पोटली को पानी मे भिगोकर नेत्रो पर फेरने से नेत्र पीडा मिटती है।

६ **कान वहना**—लोध के चूर्ण को कान मे भुर भुराने से उसका वहना वन्द हो जाता है।

७ **जीर्ण ज्वर**—लोध, चन्दन, पीपलामूल औरअतीस का चूर्ण शक्कर घी मधु और दूध के साथ देने से जीर्ण ज्वर मे लाभ होता है। —व च

८. **नेत्र रोग**—श्वेत लोध छाल, मुलैठी, भुनी फिटकरी एव रसाजन इनको सम परिमाण मे लेकर जल मे पीसकर लेप युक्त वनाकर नेत्र के चारो ओर प्रलेप करने से आख उठ आने से होने वाली पीडा शान्त हो जाती है।

—भा व

९. **अतिसार**—लोध का चूर्ण ३ से ६ माशा लेकर तक दही के पानी के साथ दिन मे ३ ४ वार कुछ दिन सेवन करने से अतिसार मिटता है। —भा० व०

१०. **रक्त पित्त मे**—लोध्र त्वक चूर्ण ३ माशा और श्वेत चन्दन चूर्ण ३ माशा। चावल के घोवन मे शक्कर मिला-उस जल के साथ दिन मे ३-४ वार सेवन कुछ दिन तक करने से रक्तपित्त मिटता है। —चरक

११ **श्वेत प्रदर में**—लोध्र त्वक चूर्ण ३ से ६ माशा वड़ की छाल के क्वाथ के साथ देने से श्वेत प्रदर मिटता है। —चरक चि अ ३०

१२ **दंतवेष्ट रोग**—लोध्र, रसौत और मोथे का वना मजन वहुत उत्तम है। इससे मसूढे मजवूत होते है।

—आर्य औषध

विशिष्ट योग–

१. **लोध्रादि क्वाथ** (च. स. प्रमेह ३४)—लोध, हर्र, कायफल और नागरमोथा इनके क्वाथ मे शहद मिलाकर सेवन करने से कफज प्रमेह मिटते हैं।

२ **लोध्रादि योग** (व से अतिसार)—लोध, मुलैठी और नीलोत्पल को दूध मे पीसकर उसमे खाड और शहद मिलाकर पीने से रक्तातिसार नष्ट होता है।

३. **लोध्रादि चूर्णम** (यो. र अतिसार)—लोध, धाय के फूल, वेलगिरी, नागरमोथा, आम की गुठली और इन्द्र जौ समान भाग लेकर चूर्ण वनावें।

इसे भैस के तक्र के साथ सेवन करने मे पक्वातिसार मिटता है।

४. **लोध्रादि योग १** (यो. र वालरोगा.)—लोध और छोटी पीपल समान भाग लेकर चूर्ण वनावें। यह चूर्ण वालको के अतिसार को नष्ट करता है।

५ **लोध्रादि योग २** (यो र. अतिसार)—लोध, इन्द्र जौ, धनिया, आमला, सुगन्ध वाला और नागरमोथा समान भाग लेकर चूर्ण वनावें।

इसे शहद मे मिलाकर चटाने से वालको का ज्वरातिसार नष्ट होता है।

लोध्राद्य तैलम् (वृ० यो० त० त० १२८) कल्क—लोध, खैरसार, मजीठ और मुलेठी २।।–२।। तोले लेकर सवको एकत्र पीस ले।

क्वाथ–उपरोक्त औषधिया ४०–४० तोले लेकर सवको अधकुटा करके १३ सेर पानी मे पकावे और ४ सेर पानी शेप रहने पर छान ले।

१ सेर तिल के तेल मे उपरोक्त कल्क और क्वाथ मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जव पानी जल जाय तो तेल को छान ले। यह तैल दन्तनाड़ी (दात के नासूर) को नष्ट करता है।

लोध्रादि लेप (१) (व० से०। नेत्र रोगा०)—लोध, रसौत, लाल चदन, मनसिल, कूठ और हर्र समान भाग लकर चूर्ण वनावे।

आखो के वाहर चारो ओर इसका लेप करने से नेत्राभिष्यन्द (आखो का दुखना) नष्ट होता है।

लोध्रादि लेप (२) (शा० सं० क्षुद्र रोगा०)—लोध, धनिया और वच का लेप तारुण्य पिडिका (मुहासे) को नष्ट करते है।

लोध्रादि लेप (३) (व० से० नेत्र रोगा०)—लोध को घी मे भूनकर नेत्रो के वाहर लेप करने से नेत्र पीडा शान्त होती है।

लोध्रादि लेपः (४) (व से उपदंशा.)—लोधा, रसोत, तगर, कचनार की छाल और गजकेशर समान भाग लेकर चूर्ण वनावे। इसे पानी मे पीसकर लेप करने से उपदंश के व्रण नष्ट होते हैं।

लोध्रादि गुटिका (वृ मा. नेत्ररोगा)—नीम के स्वच्छ पत्ते, चमेली के फूल और सैंधा नमक समान भाग लेकर सवको एकत्र पीसकर लुगदी वनावे और फिर लोध को वारीक पीसकर उसकी गोली वनाकर उसे उक्त लुगदी के वीच मे रखकर एक वड़ी सी गोली वना ले और उसे घी मे भून ले। तदनन्तर वहुत मुलायम रुई को काजी मे भिगोकर उसमे उक्त गुटिका लपेटकर नेत्र के ऊपर चारो ओर फिराने से नेत्र कोप (नेत्र दुखना रोग) नष्ट होता है।

लोध्रादि योग (१) (व. से. नेत्र रोगा.)—घी मे भुना हुआ सफेद लोध, स्वर्णा माक्षिक और नीला थोथा समान भाग लेकर सवको उष्ण जल मे घिसकर आंख के ऊपर सेक करने से नेत्र शूल नष्ट होता है।

लोध्रादि योग (२) (यो. र.। नेत्ररोग.)—सावर लोध और मुलेठी समान भाग लेकर चूर्ण वनावे और उसे घी मे भूनकर वकरी के दूध मे पीस ले एव उसे कपडे मे निचोड कर रस निकाले। इसे आख मे डालने से पित्त रक्तज नेत्राभिघात नष्ट होता है।

लोध्रादि सेक (१) (व से नेत्ररोग)—घी मे भूने हुये लोध के चूर्ण को पानी में पीस कर कपडे से उसका रस निचोड कर आंख मे डालने से रक्तज नेत्राभिष्यन्द नष्ट होता है।

लोध्रादि सेक (२) (ग नि. नेत्ररोगा.)—लोध, त्रिफला, मुलैठी, खाड़ और नागरमोथा समान भाग लेकर सवको एकत्र पानी मे पीसकर कपडे मे वाध कर उसका रस निचोडे। इसे आख मे डालने से रक्तज नेत्राभिष्यन्द नष्ट होता है।

लोध्राद्याश्च्योतनम् (१) (यो र नेत्रारोगा.)—लोध को नीम के पत्तो की लुगदी (कल्क) के वीच मे रखकर उस पर कपडा लपेट कर उसके ऊपर मिट्टी का लेप कर दें। इस गोले को कण्डो की मन्दाग्नि मे दवा दे, जब ऊपर की मिट्टी का रंग लाल हो जाय तो उसके भीतर से लोध निकालकर पानी के साथ या सूखा ही पीसकर स्त्री के दूध मे मिलाकर छानकर उसकी वूंदे आखो मे टपकावे। इससे पित्तज वातज और रक्तज नेत्राभिष्यन्द नष्ट होता है।

लोध्राद्याश्च्योतनम् (२) (व ,से नेत्ररोगा)—घी पकाया हुआ लोध, खैरसार (कत्था), जीरा, सरसो, सोठ, नीम के पत्ते और सैंधा नमक समान लेकर सवको एकत्र पत्थर पर पीस लें। तदनन्तर उसे सफेद कपडे मे वाधकर पोटली वनावे। इसे स्वच्छ काञ्जी मे भिगोकर आंखो मे निचोडने से कण्डु (खाज) अश्रु और आखो की किरकराहट नष्ट होती है।

लोध्रासव (ग नि. आसवा)—लोध, कचूर, पोहकरमूल, इलायची, मूर्वा, वायविडग, हर्र, वहेडा, आमला, अजवायन, चव, फूलप्रियगु, सुपारी, इद्रायन की जड, चिरायता, कुटकी, भारगी, तगर, चीता, पीपलामूल, कूठ, अतीस, पाठा, इन्द्र जौ, नागकेशर, कुडेकी छाल, नखी, तेजपात, काली मिर्च और मोथा १।-१। तोला लेकर सवको अधकुटा करके ३२ सेर पानी मे पकावे और ८ सेर पानी शेष रहने पर छान ले।

तदनन्तर उसमे ४ सेर शहद मिलाकर सवको घृत चिकने किये हुये पात्र मे भर कर उसका मुख वन्द करके रख दे और १५ दिन पश्चात् निकाल कर छान ले।

मात्रा—१० तोला। (व्यवहारिक मात्रा-२ तोले।)

इसके सेवन से कफज और पित्तज प्रमेह अत्यन्त शीघ्र नष्ट हो जाते हैं।

इसके अतिरिक्त यह पाण्डु, अर्श, अरुचि, ग्रहणी दोष, किलास और अनेक प्रकार के कुष्ठो को भी नष्ट करता



है। अहितकर—उष्ण प्रकृति के लिये। निवारण—हरीकासनी के स्वरस का फाडा हुआ पानी। प्रतिनिधि—पीली हड।

लोध पठानी (Symplocos Paniculata)

यह हरितक्यादि वर्ग और लोध्रादि कुल (Symplocaceae) का पठानी लोध्र का वृक्ष प्रायः ३० से ४० फुट ऊचा होता है। इसका तना सीधा और गोल होता है। इसके पत्ते २½ इंच लम्बे, १ से १½ इंच चौडे, डिम्बाकृति, पत्रो का अग्रभाग नोकीला, किनारे कर्तित। पुष्पदण्ड १ से ५ इंच लम्बा। इसके फूल सफेद और सुगन्धित होते है। इन फूलो की सुगन्ध से बहुत दूर तक की हवा सुगन्धित हो जाती है। फल ½ से ⅓ इंची, प्रायः गोलाकार होता है। इसकी छाल धूसर वर्ण की फटी-फटी सी व काष्ठ श्वेत वर्ण का होता है।

लोघ पठानी के वृक्ष हिमालय प्रदेश मे ६००० फीट की ऊचाई पर सिंध नदी से आसाम तक, काश्मीर, ब्रह्मा, और खासिया पहाड के निकटवर्ती स्थानो मे बहुधा पाये जाते है।

स—लोध्र, पट्टिका लोध्र। हि—लोध पठानी। बोम्बे—लोध। प—लोध पठानी। ब—पाटिया लोध। गु—पठानी लोधर। म—लोध। उर्दू—पठानी लोध। ले—सिम्पलोक्स पेनिक्युलेटा वॉल (Symplocos paniculata wall)।

उपयुक्त अङ्ग—छाल। मात्रा—२ से ६ माशा।

आयुर्वेदिक मत से पठानी लोध शीतल, हलकी, कषैली सकोचक और बलवर्द्धक होती है। इसके सब गुण दूसरी लोध के समान ही होते है मगर यह इसकी अपेक्षा कुछ विशेष प्रभावशाली होती है।

यूनानी मत मे लोध सर्द और खुश्क होती है। यह आखो को शक्ति देती है। आख के दर्द और ललाई को दूर करती है। कफ के उपद्रव का नाश करती है। मासिक धर्म को नियमित करती है, धातु को गाढा करती है, वायु और कफ को मिटाती है, दस्तो को रोकती है और गर्भाशय को शुद्ध करती है।

प्रतिनिधि—इसकी जड की प्रतिनिधि अशोक की जड होती है।

नोट—इसका उपयोग और विशिष्ट योग लोधवत है। अत उन्हे वही देखने का कष्ट करे।

(व० च० से साभार)

लोवान (Styrax Benzoin Dryand)

यह कर्पूरादि वर्ग और लोवान कुल (Styraceae) का मध्यम कद का वृक्ष होता है। वृक्ष ऊपर से घनी शाखाओ से आवृत होता है। त्वक् कुछ धूसर वर्ण और चिकनी, नई शाखाये रक्ताभ और लोमयुक्त। पत्र ३ से ५ इंच लम्बे, डिम्बाकृति, गोलाकार, शाखा के दोनो ओर होते हैं। वृन्त देश क्रमश नोकीला, पत्र का ऊपरी भाग हरे रग का, नीचे की ओर कोमल लोमयुक्त और श्वेताभ होता है।

फूल—बृहत एक स्थाने अनेक होते है। पुष्प दण्ड लम्बा और प्रशाखा विशिष्ट होता है। साधारणत पुष्पदण्ड पत्रमूल से निकलते हैं। पुष्प का बहिर्व्यास कटोरी के समान होता है। पुष्पदल श्वेत वर्ण, लोम युक्त, आभ्यन्तर फीके बैंगनी और लाल रग विशिष्ट होते है। पु केसर १ सारि मे १०होते है। गर्भाशय तीन भागो मे विभक्त।

फूल—गोलाकार, चपटा, सख्त और लाल आभायुक्त धूसर वर्ण होता है। बीज—एक एक होता है। शीतकाल के अन्त मे फूल और दूसरे वर्ष के शीतकाल मे फल होते हैं।

लोवान—इस वृक्ष की छाल मे चीरा देने से प्राप्त होता है और वायु लगने से जम जाता है।

नाम—

स—उद, श्याम धूप, कपर्दक उद। हि—लोबान, लोभान। ब—लवान। गु—कोडियो लोभान। म—उद। अ—बेंजोइन ट्री (Benjoin tree)। ले—स्टिरेक्स बैंजोइन (Styrax Benjoin Dryand)।

परीक्षा—लोवान की नकल मे यहा पर नकली लोवान

भी तैयार किया जाता है। अथवा इस असली लोवानमे दूसरी वस्तुओ की मिलावट भी की जाती है। इसलिये इसको लेते समय इसकी असलियत का हमेशा ध्यान रखना चाहिए। स्याम से आया हुआ लोवान बहुत उत्तम होता है। इसकी चौकोर टिकिया होती है। उत्तम लोवान मे बादाम के समान या कौड़ी के समान रवे होते हैं। ये एक से दो इच तक लम्बे, दूध के समान सफेद और एक दूसरे से चिपके हुये रहते हैं। हलके दर्जे के लोवान मे ये सफेद रवे न होकर इनकी जगह राल के समान भूरे रग के रवे होते हैं और छाल के टुकडे भी उसमे मिले हुए होते हैं। स्यामी लोवान मे किसी तरह का स्वाद नही होता मगर गन्ध मधुर होती है।

एक प्रकार के लोवान का रग सफेद और ललाई लिए भूरा, दागदार या चितकबरा होता है, जिसको कौडिया लोबान कहते हैं। यह सुमात्रा का लोवान है। सुमात्रा द्वीप से आने वाला लोवान स्याम के लोवान की अपेक्षा कुछ हल्के दर्जे का होता है। यह स्वाद मे कडवा और खुशबूदार होता है।

इसमे लोवानाम्ल (Benzoic acid) १२ से २०% दालचीन्याम्ल (Cinnamic acid) अत्यल्प और वनिल्लिन (Vonillin) ये तीन राल और उत्पत तेल प्रभृति पदार्थ होते है।

उपयुक्त अग—वृक्ष का गोद (लोवान) और उसके फूल

मात्रा—२ रत्ती से २ माशा तक। लोवान का सत २½ रत्ती से ५ रत्ती तक।

गुण धर्म और प्रयोग—

कफ, वात, ग्रह बाधा, उलटी, हिचकी, शिरशूल, हस्तमैथुन (मास्टरवेसन) से हुई लिंग की कमजोरी मे लोबान उपयोगी है। लोवान पौष्टिक, श्वास, कास हर, पेशाव के रोग मे उपयोगी है। पुरातन प्रमेह मे उपयोगी है। यह कफघ्न, मूत्रजनन और मूत्रशोधक है।

(आ० नि०)

लोवान पीवनाशक, त्वचा की रक्त वाहिनियों को उत्तेजना देने वाला, व्रण शोधक, व्रण रोपक, रक्त सग्राहक, कफ नाशक, मूत्रल और उत्तेजक होता है। यह पेट मे जाने के पश्चात् श्वास नलिका के द्वारा वाहर निकलता है। इसलिए श्वास नलिका की सूजन मे इसको बादाम और गोद के साथ देने से बहुत लाभ होता है। बहुत गाढा और दुर्गन्धियुक्त कफ और जीर्ण श्वास नलिका की सूजन मे यह बहुत उपयोगी होता है। इससे श्वास नलिका की श्लैष्मिक त्वचा को शक्ति मिलकर कफ पैदा होना कम हो जाता है और पूर्व सचित कफ शीघ्रता से बाहर निकल कर खासी आराम हो जाती है। क्षय और दमे के रोग मे इससे बहुत लाभ होता है। फुफ्फुस के सब प्रकार के रोगो मे लोवान का धुआ बहुत लाभदायक होता है।

आमाशय के अन्दर अन्न का पाचन ठीक नही होने की हालत मे अगर गले के अन्दर जलन होती हो और उबाक आता हो तो लोवान को देने से लाभ होता है। सुजाक और वस्ति शोथ मे भी यह लाभदायक वस्तु है।

लोवान का अर्क ताजे जख्म पर लगाने से रक्तस्राव बन्द हो जाता है। व्रण, जख्म, भगन्दर, कठमाला और हठीले व्रणो पर लोवान का अर्क मन्त्र शक्ति की तरह काम करता है। त्वचा के इन सब रोगो मे लोवान घी गुवार का रस और उत्तम स्प्रिट मिलाकर उसका उपयोग किया जा सकता है। —व च से साभार

यह हुल्लास, कलेजे मे जलन (Pyrosis) रोग और मूत्र यन्त्र की वेदना मे विशेष हितकारी है।

—भा व व

यह पीलिया रोग मे लाभकारी है और बच्चो के मूत्र विकारो मे भी। टिं० लोवान की वाष्प सूघना खासी, स्वर भङ्ग, कूकर खासी, स्वर यन्त्र की शोथ, श्वासनलिका की शोथ, श्वसनिका शोथ, दमा और क्षय मे भी उपयोगी है। इसका टिंचर खून रोकता है। इसके लिये गोज या लिंट का टुकडा भिगोकर जख्म पर रखने से जख्म से निकलता हुआ खून रुक जाता है एव जख्म ठीक हो जाता है।

—इ मे मे

वायु शुद्धि के लिये लोवान का धूप हिन्दू, बौध, ईसाई, मुसलमान अपने घरो मे उपासना स्थानो मे एव आतुरालयों, चिकित्सालयो मे लगाते है।

लोवान के अन्दर एक अम्ल स्वभावी द्रव्य जिसको लोवान का फूल कहते हैं—रहता है। सुमात्रा के लोवान की अपेक्षा स्याम के लोवान मे ये फूल ज्यादा रहते हैं।

ये गर्मी पाकर के उड जाते है। इनके निकालने की तरकीव इस प्रकार है। लोवान का चूर्ण १ सेर, स्वच्छ धुली हुई वालू पाव भर इन दोनो वस्तुओ को अच्छी तरह से मिलाकर एक मिट्टी की हडिया के अन्दर रख देना चाहिये। इस हडिया के ऊपर एक दूसरी हडिया डमरू यन्त्र की तरह जमाकर दोनो के जोड पर कपडमिट्टी कर देना चाहिये। फिर इस डमरु यन्त्र को कोयले की आच पर रख देना चाहिये। यह ध्यान रखना चाहिये कि आच वहुत हलकी हो। इस प्रकार करने से नीचे की हडिया से लोवान के फूल उडकर ऊपर की हडिया मे जम जाते है। पूरी क्रिया होने पर उस यन्त्र को वहुत आहिस्ते से उतार कर ऊपर की हांडी को अलग करके उसके अन्दर जमे हुये सफेद रवो को निकाल लेना चाहिये। ये लोवान के फूल १०० तोला उत्तम लोवान मे से १५ तोला निकलते हे।

लोवान के फूल वहुत तीव्र और उत्तम पीवनाशक, पसीना लाने वाले, मूत्रल, उत्तेजक, ज्वरनाशक, कफ नाशक और जीवन विनिमय क्रिया को उत्तेजना देने वाले होते हे। पेट मे जाकर के ये त्वचा और फुपफुस के मार्ग से वाहर निकलने समय ये त्वचा की विनिमय क्रिया को शुद्ध करते हैं और पसीना लाते है। फुपफुस से वाहर निकलते समय ये कफ का शोपण करते है और खासी को दूर करते है। लेकिन इनका कफ नाशक धर्म लोवान के कफ नाशक धर्म की अपेक्षा कमजोर होता है। मूत्रपिंड से वाहर निकलते समय ये पेशाव की तादाद को वढाते हैं जिससे जीर्ण वस्ति शोथ और मूत्र विसर्जन की खरावी से पैदा हुई सूजन दूर हो जाती है। ये फूल पेशाव के साथ मूत्राशय मे जाकर वहा की क्रिया को शुद्ध करते है जिससे क्षार युक्त और दुर्गन्धियुक्त मूत्र की शुद्धि होती है। मूत्र पिड की सूजन मे यह वहुत उपयोगी वस्तु है।

इस कार्य के लिये ये सेलिसिलिक एसिड के समान ही लाभ दिखलाते है।

योग—

१. लोवान को वादाम की गिरी तथा गोद के साथ पीसकर गाढ़े और कठिनाई से छूटने वाले दुर्गन्ध युक्त कफ में देने से कफ छूटता है और उसकी दुर्गन्धि मिटती है।

नवीन आमवात मे | लोवान के फूल (१० रत्ती मात्रा के) सेलिसिलिक एसिड के समान लाभ करता है। इसके साथ सोडावाईकार्व मिलाने से इसकी शक्ति वढती है।

माल कङ्गनी, लोवान, लौंग और गूगल का चूवा निकाले याने तैल निकालें। इसको कैपस्यूल या दूध मे मिलाकर देने से कफ, श्वास, अशक्ति मे ठीक रहता है। मात्रा २ वून्द। —आ नि

विशिष्ट योग—

१ **अर्क लोवान**—लोवान १० तोला, शिलारस १० तोला, एलुवा २ तोला, रेक्टिफाइड स्प्रिट १०० तोला, इन सव वस्तुओ को मिलाकर पटी रखनी चाहिये। उसके पश्चात कपडे मे छानकर वोतल मे भर लेनी चाहिये। इस अर्क को वादाम और गोद के चूर्ण के साथ पानी मे घोटकर देने से श्वास नलिका के जीर्ण शोथ मे वहुत लाभ होता है। ताजा जख्म पर इस अर्क को तुरन्त लगा देने से रक्त का वहना फौरन वन्द हो जाता है। इसके अतिरिक्त व्रण, जख्म, भगन्दर, कण्ठमाला और नासूर के व्रणो पर भी उस अर्क को लगाने से वहुत लाभ होता है।

२. **लोवान का मिश्रण**—लोवान के फूल और सज्जी क्षार दोनो को पानी मे मिलाकर औटाना चाहिये। दोनो चीजे विलकुल घुल जाने पर उस पानी को छानकर फिर आग पर चढाकर सुखा लेना चाहिये और शेप रहे चूर्ण को शीशी में भर लेना चाहिए। इस मिश्रण की मात्रा ३ से १५ रत्ती तक होती है। यह मिश्रण यकृत को उत्तेजना देता है। खासी, दमा इत्यादि श्लेष्मिक रोगो मे यह वहुत उत्तम वस्तु है। इससे चिकना और जमा हुआ कफ पतला होकर निकल जाता है। —व० च०

३ **लोवान सत्व योग** (र. रा सु. श्वासा.)—शुद्ध वच्छनाग ५ तोले, कौडिया लोवान २० तोले और शुद्ध सफेद संखिया ५ तोले लेकर सवको एकत्र खरल करके १ वालिश्त लम्वे थोहर (सेंड) के टुकडे के भीतर रख दे (भर दे) और फिर उसे कुचलकर एक हाडी मे रक्खें तथा उसके ऊपर दूसरी हाडी ढककर दोनो के जोड को अच्छी तरह वन्द कर दे और उसको सूखने पर इस डमरू यन्त्र को चूल्हे पर रखकर उसके नीचे तर्जनी अगुली के समान

मोटी वत्ती का दीपक जलावे और ऊपर के पात्र पर भीगा हुआ कपडा रखते रहे। तदनन्तर ४ प्रहर वाद दीपक बुझा दें और हाडी के स्वाङ्ग शीतल होने पर सावधानीपूर्वक जोड़ को खोलकर ऊपर की हाडी मे लगे हुये सत्व को निकाल ले। मात्रा २ से ४ रत्ती तक।

इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करने से श्वास और खासी का नाश होता है। यह राजाओ के योग्य ओषधि है।

यूनानी योग—

१. रोगन लोबान खास (यू. सि यो स)—द्रव्य और निर्माण विधि—कौडिया लोवान ५ तोला, दालचीनी, लौग जायफल, जावित्री, अजवायन प्रत्येक ३ माशा। इन सव को यवकुट करके पाताल यन्त्र से तेल निकाले। प्याले मे दो प्रकार का तेल मालूम होगा। ऊपर वाला तेल पतला और नीचे का गाढा। दोनो को अलग अलग रखें।

मात्रा और सेवन विधि—ऊपर वाला तेल वाह्य रूप से फुरेरी से कनपुटी और मस्तक पर लगाने के काम मे आता है। नीचे वाला गाढा तेल लोवान का तेल है। इसे एक सीक पान आदि पर लगाकर खिलायें।

गुण तथा उपयोग—पतला तेल शिरोशूल आदि पर लगाने से अति शीघ्र लाभ होता है। नीचे वाला तेल उपयुक्त अनुपान के साथ कफज रोग, नजला, श्वास और नपुसकता तथा आमवात मे परम गुणकारी है।

२ जौहर लोवान (यू. सा सं)—इसीको लोवान सत्व भी कहते है, लोवान के छोटे छोटे टुकडे करके यथा विधि जौहर उडायें।

मात्रा—चार चावल, पान मे रखकर खायें।

गुण—कफ का श्राव करता है, वाजीकर भी है।

हानिप्रद—पित्त प्रकृति को। हानि निवारक—काहू का शीरा।

अभाव—मस्तङ्गी।

लोबान (कन्दुर) (Boswelli serrata)

यह गुग्गुलवादि कुल (Burseraceae) का वृक्ष होता है। यह एक से दो तीन गज ऊचे कंटीले वृक्ष का गोद है जो कुछ कडवा एव कुस्वाद होता है।

उत्तम कुदुर (शल्लकी निर्यास) के लक्षण—ताजा, नरम, शुद्ध (अमिश्र) नर, जो ऊपर से सफेद और भीतर से लेसदार, सुनहला और टूटा न हो, ऐसा कुदुर उत्तम समझा जाता है। जो अग्नि पर शीघ्र जल उठता है वह शुद्ध समझा जाता है। लोबान (कुन्दुर) मे मस्तगी सी सुगन्ध आती हैं। इसमे बीस वर्ष तक वीर्य रहता है। ताजा कुदुर पिस नही सकता इसलिये उसे अर्क सौफ या दारचीनी जैसे किसी अर्क वा मद्य मे घोलकर और मरहमो मे सिरके मे भिगोकर डालना चाहिये।

उत्पत्ति स्थान—

इसके वृक्ष मध्य प्रदेश, दक्षिण विहार, उडीसा, राजस्थान मध्य भारत, पूर्वी प्रदेश और उत्तरी गुजरात मे मिलते हैं।

नाम—

स०—शल्लकी। हिं, ब०—लुबान, लाबान (कुन्दुर) सलाई। ते०—परांगिसाम ब्रानि। गु०—धूप गुगली। म०—पहाडी धूप, विशेष धूप। ता०—कुन्दरीकम। मल०—समब्रानी। कन्नड० गुग्गुला। कोन०—विशेष धूप। द०—कुन्दुर। वोम्बे—गन्धा विरोजा। फ०—वस्तज, लोबान। अ०—इण्डियन ओलि वेनम (Indian olibanum) ले०—बोसवेल्लिया सिर्राटा (Boswellia Serrata Rox)

रासायनिक संगठन—

इसमे एक गोद और दूसरा राल सरीखा एक द्रव्य होता है।

उपयुक्त अङ्ग—गोद। मात्रा—१½ माशे से ३ माशे तक।

गुण धर्म और प्रयोग—

यह गोद सुगन्धित और उत्तेजक होता है। इसकी क्रिया श्लैष्मिक त्वचा के ऊपर होती है। पेट मे इसको देने से यह श्वास नलिका के द्वारा बाहर निकलता है और निकलते समय वहा की विनिमय क्रिया को सुधारकर उसे उत्तेजित करता है। श्वास नलिका की प्राचीन सूजन मे इसको पेट मे भी देते है और इसका धूआ भी देते है।

इससे कफ की दुर्गन्ध मिट जाती है और कफ का पैदा होना कम हो जाता है तथा खासी की कमी हो जाती है और श्वास मे पैदा होने वाली रुकावट भी बन्द हो जाती है।

यूनानी मतानुसार–

प्रकृति—दूसरे दर्जे की आदि मे उष्ण एव रूक्ष। गुण-कर्म यह वातानुलोमन, स्मृतिवर्धक, वाजीकर, चक्षुष्य,दीपन, पाचन, सग्राही, दोषपाचन, लेखन, हृद्य, रक्तस्तम्भन और विषघ्न है।

उपयोग–वमन, सग्रहणी, अतिसार और प्रवाहिका मे इसका उपयोग करते है। गुदा, अर्शाङ्कुर और गर्भाशय इनमे से किसी से रक्तस्राव होता हो, तथा बाह्य अगो एव मस्तिष्कावरण जात रक्तस्राव तथा रक्तष्ठीवन मे इसके उपयोग से बहुत उपकार होता है। दिल की धडकन मे, बुद्धिमाद्य और विस्मृति रोग मे इसका उपयोग लाभकारी है। इसे नेत्र मे अजन करने से दृष्टि तीव्र होती है। और नेत्र व्रण का शोधन रोपण होता है आख मे जमा हुआ रक्त और कनीनिका के नीचे स्थित पूय विलीन होता है। नेत्रगत अर्म, कर्कट, नेत्रस्राव, पक्ष्मशात, नेत्रशुक्र, शिराजालक, कुकूणक, धुन्ध और दृष्टिमाद्य प्रभृतिरोग आराम होते है।

विशेषत मधु के साथ लगाने से चिप (दाखस) रोग मे इसको शहद मे मिलाकर लेप करते है। वृष्य और वाजीकरण गुण के लिए अण्डे की अर्धभृष्ट जर्दी या विशेषकर जायफल और जावित्री के साथ इसका उपयोग कराते है। विषघ्न होने से जनपदोद्ध्वमक रोगो मे इसकी धूनी देते है। वस्ति और गवीनी को बलप्रद होने से हस्तिमेह और बहुमूत्र मे इसका उपयोग करते हैं। यह रक्त और श्वेत प्रदर मे भी प्रयुक्त होता है तथा कास और श्वास में लाभकारी है और फुफ्फुस रोगो मे प्रयुक्त पेय औषधो मे पडता है।

१ सुजाक मे इसको देने से लाभ होता है। इसका मरहम ग्रन्थि शोथ को कम करने वाला और उत्तम होता है। छोटे बच्चो के फोडे फुन्सियो पर इसको लगाने से वे जल्दी पककर फूट जाते है।

२ कारबङ्कल के ऊपर कुन्दुर का मलहम एक रामबाण औषधि होती है।

कुन्दर का मलहम–कुन्दर १ तोला, खसखस का तेल १ तोला और सफेद मोम १ तोला। इन चीजो को अग्नि पर गला करके कपडे मे छान लेना चाहिये।

(व० च० से साभार)

अहितकर–उष्ण प्रकृति को। निवारण–सिकजवीन और शर्करा। प्रतिनिधि—मस्तगी।

लोलोरी (Gnetum scandens)

यह सामादि कुल (Gnetaceae) की एक बेल होती है।

उत्पत्ति स्थान—

यह सिक्किम, आसाम, खासिया पहाड, चटगाव, छोटा नागपुर, बिहार अन्डमन द्वीप, पूर्वी और पश्चिमी घाट और बरमा मे ५०० से २००० फीट की ऊचाई तक पैदा होती है।

नाम—

हि —उडिया, लोलोरी। बोम्बे—अम्बल, ग्रम्बली मल.—उला। ले.—ग्नेटम् स्कैन्डेन्स (Gnetum scandens Roxb)

उपयुक्त अग—तना और मूल।

गुण धर्म और प्रयोग—

इसकी जडे और इसकी डालिया ज्वरनाशक होती है। पेट मे किसी जानवर का सीग गड जाने से जो विदारित घाव हो जाता है उसमे इसकी डालियो का निर्यास पिलाया जाता है। —(ग्लो० इ० मे० रा० से)

—x—

लौंग (Coryphyllus Arcmaticus)

यह कर्पूरादि वर्ग और जम्वावादि कुल (Myrtaceae) का ३०–४० फीट ऊंचा सदा वहार वृक्ष होता है। इसकी वहु सख्यक नर्म और अवनत शाखाये चारो ओर विस्तृत रूप से फैली हुई होती है। छाल फीकी पीताभ धूसर वर्ण और मसृण। शाखाओ के दोनो ओर वहुत सख्या मे हरे रग के ३-४ इच लम्बाई के पत्र आमने सामने क्वचित ही अन्तर पर अखण्ड वीच मे चौडे, दोनो सिरे पर नोक वाले होते है। पत्र वृन्त पौन इच से एक इच लम्वे, पत्र डिम्बाकृति, अग्रभाग और वृन्त की ओर क्रमश नुकीले होते है। पत्र का ऊपरी भाग उज्जवल, नीचे का भाग फीकापनयुक्त वीच की शिरा स्पष्ट पान स्वाद मे तीक्ष्ण और सुगन्धित। पुष्प छोटे फीके वैंगनी तुर्रे मे शाखा के अग्रभाग मे पुष्प दण्ड पर आते है। वृन्त छोटे एक एक भाग मे तीन होते है। पुष्प वाह्यकोष ½ इन्च लम्वा चार भागो मे विभक्त त्रिकोणाकार और मासल। पुष्प पत्र ४, जो फूलो की केसर को ठीक अवस्था मे टिकाये रखते है पुकेसर अनेक। गर्भाशय वहिर्व्यास के अभ्यन्तर मे स्थित। वीजाशय एक कोषयुक्त। फल मासल, प्राय एक इच लम्वा। लम्वा वहिर्व्यास लाल वर्ण, पक जाने पर वाजार के लौगो के समान कृष्ण वर्ण के हो जाते है। वीज एक होता है, ये देखने मे वडा सारे फल मे होते हैं। इसके वृक्षो पर पुष्प की कलिया लगती है। जो खिलने के पहले उसको तोडकर सुखा लेते हैं, उन्ही को लौंग कहते है। अच्छे लौंग होने पर अगुली से दवाने पर तैल निकलता है।

विशेष—लवग के ऊपर जो चार छोटे-छोटे भाग नजर आते है। वह दल पत्रो वा पखड़ियो का अग्रभाग समझना चाहिये। यह चारो मिलकर नीचे एक नली से जुडे रहते है। इस नली के भीतर अनेक पुकेसर तथा एक गर्भ तन्तु होता है। यह शुष्क और सूक्ष्म होने से कुछ झड जाते है। और कुछ नली के भीतर रहते है। अतएव लवग को देव कुसुम या देव पुष्प कहना यथार्थ है। असली लौग वही होते है जिनमे से तेल नही निकाला गया हो।

मार्च से जून मास तक फूल और फल लगते है। वाजार मे दो प्रकार के लौग मिलते है। काले तीव्र सुगन्धी होते है, वे मूल स्थिति मे है, दूसरे भूरे रग के कुछ कड़ुवे आते है। वे वाष्प यत्र द्वारा तेल निकालने के पश्चात् हुये हैं। भारत में भी लौग वोने लगे है, किन्तु वे इतने अच्छे नही है। लौगो मे से २ प्रकार के तैल मिलते हैं। उडन शील और स्थिर। इनमे से स्थिर तेल का आपेक्षिक गुरुत्व १०४७ से १० ६० है। अत वह जल से भारी है। तैल का रङ्ग रक्ताभ पिंगल होता है।

उत्पत्ति स्थान—

लौग का आदि स्थान मोल्यु का टापु हैं। परन्तु कृषि द्वारा वडी तादाद मे उत्पादन जजीवार, पेम्वा, एम्वोयना टापुओ, मेडागास्कर मलाया, जावा, सुमात्रा, सेलेवीस द्वीप, मारिसस, वोर्नियो के द्वीप पुञ्जो मे पैदा किए जाते है। अमेरिका के अन्तर्गत व्राजिल गियाना, लङ्का द्वीप पुञ्जो मे थोडी तादाद मे कृषि द्वारा उत्पादन होता है। दक्षिण भारत मे इस समय कृषि की जाती हे। इसके वृक्ष वगाल के दो एक वगीचो मे देखे जाते है। वोटेनिकल गार्डन शिव पुर मे एक वृक्ष है। दक्षिण मे ट्रावेकोर मे वडे परिमाण मे खेती होती है' लौग का अधिकाश आयात भारत मे जजीवार और पेम्वा टापुओ से ही होता हे। नौ वर्षो मे लवङ्ग वृक्ष को पुष्प आते हे।

फूल की कलिये (फ्लावर वडझ) यही लौग है। जव मांसल पुष्पाधार जो पहले हरे रग का होता हे, ये जव लाल रग का हो जाता है तव लवग को सग्रह किया जाता है। वृक्ष के इस विकास के समय मे लौग मे अधिक से अधिक तेल का भाग होता है। जजीवार और पेम्वा मे लौग २ समय लिए जाते है। अगस्त से दिसम्वर के बीच मे, लौंग तोडने के वाद मे धूप मे सुखाए जाते हे। जहा उनकी पुष्प दण्डिकाओ से अलग किए जाते है। यह पुष्प दण्ड वाला भाग (Clove stalks) नाम से अलग वेचे जाते हे। लौग को अधिक समय तक वृक्ष पर रहने दिया जाय तो फूल खिलते है। पखुडियां खिल जाती हे। और फल



है। इसका यह गुण हृदय, रक्ताभिसरण और श्वासोच्छ्वास के ऊपर स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है। इसी कारण त्रिदोष और सन्निपात मे दी जाने वाली औषधियो मे इसको मिलाया है।

लौंग का पाचवा गुण शरीर के अन्दर की वायु नलियो का सकोच-विकास और उसकी वजह से होने वाली पीड़ा को कम करने का है। इसी से दमा इत्यादि रोगो मे इसका उपयोग किया जाता है।

लौंग का छठा गुण शरीर की दुर्गन्धी को नष्ट करने का है। इस गुण की वजह से कफ, लार और मुह मे आने वाली दुर्गन्ध को दूर करने के लिए ईसका उपयोग किया जाता है।

लौंग का सातवा गुण मूत्रल हे। इस गुण की वजह से यह मूत्र पिण्ड के मार्ग की शुद्धि करता है और शरीर के विजातीय द्रव्यो को मूत्र के द्वारा निकाल देता है।

लौंग का आठवाँ गुण यह है कि शरीर के किसी वाहरी भाग पर इसको लगाने से चेतनाकारक, वेदनानाशक, व्रणशोधक और व्रणरोपक असर वतलाता हे।

यूनानी मतानुसार—

प्रकृति तीसरे दर्जे मे गर्म और खुश्क। गुण कर्म वाहरी तौर पर लगाने से यह श्वयथु विलयन, शोणितोत्क्लेशक, स्वापजनन और कोथ प्रतिवन्धक है। आंतरिक रूप से उपयोग करने से सौमनस्यजनन, मस्तिष्क, हृदय वलवर्द्धन, श्लेष्म नि.सारक और आक्षेपहर है। तथा अन्त्र आमाशय और यकृत को शक्ति प्रदान करता है। वायु का उत्सर्ग करता है। वाजीकर एव शुक्र स्तम्भन भी है। विशेष रूप से वाजीकर, वातानुलोमन, पाचन और श्वयथु विलयन है।

नव्य मतानुसार—

स्व० डाक्टर रावागोविन्दकर के मतानुसार लौग अग्निदीपन, उत्तेजक और उदर वातहर है। ये सब गुण उडनशील तैल के हेतु से हे। तैल त्वचा पर मर्दन करने पर उत्तेजक, चर्म प्रदाहक, उग्रताजनक और प्रत्युग्रता साधक, मालिश करने पर स्थानिक केशिकाये सब प्रसारित होती है। प्रारम्भ मे मर्दन स्थान पर चिनचिनत्व और वेदना होती है। फिर स्थानिक चेतना लोप। तेल कीटाणु (परोपजीवी कीटाणु) का नाशक और व्रण पाक का निवारक (पूतिहर) है।

तैल का उदर सेवन करने पर त्वचा के सदृश मुख के भीतर चिनचिनत्व और उग्रता अनुभव होती है। मुख के भीतर की सब केशिकाये प्रसारित होती हैं। लाला निःसरण मे वृद्धि होती है। फिर स्थानिक चेतना का ह्रास होता है। स्वाद तीक्ष्णता के हेतु से जिह्वा की सब वात नाडिया उत्तेजित होती है और सुगन्ध द्वारा गन्धग्राही केन्द्र उत्तेजित होता है। आमाशय मे पहुचनेपर वहा उग्रता प्रकाशित होती है। वहा पर रही हुई केशिकाये प्रसारित होती है। आमाशय की मन्थन क्रिया वढ जाती है और आमाशय के रस श्राव मे वृद्धि होती है। इसी हेतु से क्षुधा प्रदीप्त होती है। पाचन क्रिया उन्नत होती है। परिणाम में अग्नि भी सतेज होती है। यह आमाशय स्थित वायु को वाहर निकालता है इस हेतु से इसे वातहर कहा है।

आमाशय की वातनाडियो द्वारा उत्तेजना प्रतिफलित होने पर हृदय को भी उत्तेजित करता हे। इस हेतु से नाडी मे कुछ तेजी और वल की वृद्धि होती है।

तैल द्रव्य आमाशय मे से अन्त्र मे पहुचने पर उसकी केशिकायें प्रसारित होती है। फिर लघु अन्त्र का श्राव वढ जाता है। मासपेशियो का आवरण उत्तेजित होता है। इस हेतु से अन्त्र के अनियमित आकुचन से उदरशूल चलता हो तो वह शान्त हो जाता है और अन्त्रस्थ वायु निकल जाती है और अन्त्रस्थ आक्षेप दूर होता है।

अन्त्र मे से तैल द्रव्य का रक्त शोषण होने पर रक्त के भीतर श्वेताणुओ की सख्या वढ जाती है। एव रक्त सचालन मे भी तेजी आती है। आमाशय की वातनाडियो की उत्तेजना और रक्तसचालन की उत्तेजना इन दोनो द्वारा हृदय को उत्तेजना पहुचती है।

लवग द्रव्य—वृक्क, त्वचा, श्वासनलिका, जननेन्द्रिय और मूत्र मार्ग द्वारा वाहर निकलता है। जिससे वाहर होने के समय उन स्थानो के स्राव की वृद्धि कराता है और सक्रामक कीटाणुओ को नष्ट करता है, किन्तु इस दूरवर्ति कार्य करने के उद्देश्य से प्राय लौग का उपयोग नही किया जाता। डा० देसाई लिखते है कि —लौग सुगन्धित, पाचन, वातहर, उत्तेजक, रक्तविकार नाशक, कफघ्न, पूतिहर,



(आ औ र)

दुर्गन्धहर और मूत्रल है।

प्रयोग—

विसूचिका की तृषा रोकने के वास्ते—लौंग डालकर उबाला हुआ जल पीने को देना चाहिए। (शोढल)

वात वेदना मे—लौंग की छाल को गर्म जल मे पीस कर लेप करना चाहिए।

कंठ रोग मे—दीपक की लौय पर लौंग को सेक कर मुंह मे रखने से गले की सूजन और शुष्क कास मिटती है।
(वैद्य मनोरमा)

दंत शूल पर—लौंग का तैल क्रियोसोट के समान कृमि दन्तमे रखने से दांत की पीडा मिटती है अनुभूत है।
(मोरगन कोनिन)

संधिवात मे—लौंग का तैल संधिवात के दर्द पर, शिर शूल और दन्त पीड़ा मे बाहर लगाने के वास्ते प्रयोग किया जाता है। (सखाराम अर्जुन)

गर्भवती की वमन—लौंग का चूर्ण १ माशा मिश्री की चासनी वा अनार के रस मे मिलाकर चाटने से गर्भवती की वमन और उत्क्लेश मिटती है।

ज्वर—लौंग और चिरायता दोनो समान भाग लेकर पानी मे पीसकर पिलाने से ज्वर छूट जाता है और ज्वर के पश्चात् की निर्बलता भी मिट जाती है।

स्नायविक मस्तकशूल—लौंग को जल मे पीसकर गर्म कर ललाट और कनपटियो पर लेप करने से स्नायविक मस्तक शूल मिटता है।

श्वास की दुर्गन्ध—लौंग को मुंह मे रखने से मुंह और श्वास की दुर्गन्ध मिटती है।

दमा—लौंग, आकडे के फूल और काले नमक की गोली बनाकर मुंह मे रखकर चूसने से दमा और श्वास नलिका के रोग मिटते है।

नेत्र रोग—तांबे के पात्र मे लौंग को पीसकर शहद मिलाकर अंजन करने से नेत्र के सफेद भाग के रोग मिटते है।

हृदय की जलन—लौंग को ठंडे पानी मे पीस छानकर मिश्री मिलाकर पीने से हृदय की जलन मिटती है।

कुक्कुर खांसी—लौंग को आग पर भूनकर शहद मिलाकर चाटने से कुक्कुर खांसी मिटती है।

नजले का मस्तक शूल—२ लौंग और ४ रत्ती अफीम को पानी के साथ पीसकर गर्म करके ललाट पर लेप करने से नजले की मस्तक पीडा मिटती है।

अजीर्ण—लौंग और हड का क्वाथ बनाकर उसमे थोडा सा सैंधा नमक डालकर पिलाने से अजीर्ण मिटता है और विरेचन होता है।

जी मचलना—लौंग को पानी के साथ पीसकर कुनकुने करके पिलाने से तृषा और जी मिचलाना मिटता है।

नासूर—लौंग और हल्दी को पीसकर लगाने से नासूर मिटता है।

परिवार नियोजन—१ लौंग प्रातःकाल ४० दिन खाने से गर्भ स्थिति नही होती है। (व० च०)

स्तंभनार्थ—लौंग चबाकर उसकी लाला पुरुष जननेन्द्रिय पर लगाकर स्त्री सहवास करने से स्त्री और पुरुष की संगम शक्ति बढा देता है।

अपचन—आमाशय की निर्बलता से अपचन उत्पन्न होने पर उदर मे भारीपन, दूषित दुर्गन्ध मय डकार आना, अरुचि, मुंह फीका रहना आदि लक्षण प्रतीत होते है किसी किसी को अफरा भी आ जाता है। उस पर लौंग का फाण्ट या लौंग का तैल देने से तुरन्त लाभ पहुँचता है।

यदि अन्त्र मे दूषित मल अधिक रह गया हो तो लौंग २ माशा, सौंठ २ माशा और नागपत्ती २॥ तोला लेकर २५ तोला उबलते जल मे मिलाकर ढक दे। १ घण्टा रहने दे। फिर मसलकर छान ले। इसमे से २ औंस पिला देने से २-३ दस्त आकर उदर शुद्धि हो जाती है। फिर अपचन, उदरशूल, आफरा आदि दूर हो जाते है।

सगर्भा की वमन—गर्भ धारण करने पर कितनी ही स्त्रियो को अति वमन होती रहती है, उनको लौंग का फाण्ट दिया जाता है। यदि ज्वर भी रहता हो तो न देव।

विसूचिका की तृषा—१ तोला लौंग को १२८ तोला जल मे मिलाकर उबाले। २-३ उफान आने पर नीचे उतार कर ढक देवे। इसमे से १-१ औंस जल बार-बार पिलाते रहे। इससे विषूचिका की तृषा मिटती है।

आफरा—लौंग का फाण्ट २ औंस के साथ १० रत्ती सोडा वाई कार्ब मिलाकर देवे।

प्रतिश्याय—लौंग का तैल २ बूद शक्कर के साथ देवे। लौग के तैल को कपडे पर छिडक कर सुघावे। नीलगिरी तैल का उपयोग वर्तमान मे अधिक होता है, यह सस्ता है और अच्छा काम करता है।

(गा० औ० र०)

अर्धावभेदक और शिर शूल—अर्धावभेदक एव शिर शूल मे ६ माशा लौग को बारीक पीसकर पानी मे घोलकर लेही जैसा तैयार करके किंचित उष्ण करे एव कनपटियो पर लगादें। इससे शिर शूल एव अर्धावभेदक मे लाभ होता है।

अवसीरी जुखाम—प्रतिष्याय(जुखाम) मे लौग ७ नग लेकर उनको कूटकर १० तोला पानी मे डाल काढा तैयार करे। जव २॥ तोला जल शेष रहे तव उतार कर छान ले। एव गर्म-गर्म वफारा नाक के दोनो नथुओ मे ले तथा कुछ शीतल होने पर पी ले।

क्षुधा बढाने के लिए—लौंग एव छोटी पीपल दोनो को कूट कपड छनकर चूर्ण बनाले तथा १॥ माशा की मात्रा मे प्रात साय मधु से चाटने पर ज्वर के वाद की मदाग्नि, निर्वलता इत्यादि अवश्य ही दूर होती है। उपरोक्त दोनो द्रव्यो का यथाविधि क्वाथ वनाकर भी पिया जा सकता हे।

कफ निकालने के लिये—३ माशा यवकूट लौग चूर्ण को १० तोला पानी मे डालकर औटावे, जब चौथा हिस्सा जल शेप रहे तव उतार छानकर किंचित उष्ण पी जावें। यह कफ को विखेर कर निकाल देने के लिए अत्युत्तम है। कफ के विकारो पर लौग के समान अन्य औपधिया बहुत कम हे।

वदहजमी, खट्टी डकारे एव उदर रोग मे—लौग, सौठ, मिर्च, पीपल, अजवायन १-१ तोला, सैधा नमक ५ तोला मिश्री ५ तोला। इनको पीसकर एक चीनी के पात्र मे रखे और ऊपर से नीवू का रस या सिरका इतना डाले कि सर्व औपधिया रस से भली भाति तर हो जाय। पश्चात् कुछ समय धूप दिखाकर सुरक्षित रखे। इसे ६ माशा से १ तोला तक भोजन के वाद सेवन करने से मुह का स्वाद [illegible]ता है। तथा बदहजमी, खट्टी डकारे इत्यादि विकार [illegible] होकर पाचन क्रिया सुधरती है।

मन्दाग्नि अजीर्ण एव विषूचिका मे—लौंग यवकूट किए हुए को आठ गुने जल मे डालकर काढा तैयार करे। एक हिस्सा रहने पर उतार कर छानले शीतल होने पर पिलादे।

(रसायन से साभार)

विशिष्ट योग—

लवगादि वटी—लौंग ४ भाग, सिद्धि (भांग) ४ भाग, पीपल, अकरकरामूल ६-६ भाग और मधु ८ भाग लेकर ४-४ रत्ती की गोलिया वनावे। इन गोलियो को सेवन करने से अलसक, अजीर्ण और साधारण दुर्बलता मे मूल्यवान औषधि है। [भा व]

लवगादि चूर्ण—लौंग, सोठ ५-५ भाग, अजवायन, सेंधानमक ६-६ भाग लेकर चूर्ण वनावे। यह अजीर्ण और अम्ल रोग नाशक है। मात्रा १५ ग्रेन। (भा० व०)

लवग फाण्ट—लौंग का मोटा-मोटा चूर्ण १ तोले को उवलते हुए ५० तोले जल मे मिलाकर ढक देवे। आध घण्टे पर जल छान लेवे। मात्रा १ से २ औस जल दिन मे ३ वार पिलाने से उदर वात और अपचन दूर होकर अग्नि प्रदीप्त होती है।

लवगादि वटी (कासे)—लौंग, बहेडा, कालीमिर्च, और कत्था इन सबको सम भाग मिलाकर बवूल की छाल के क्वाथ मे १२ घण्टे खरल कर २-२ रत्ती की गोलिया वना लेवे। मात्रा १-१ गोली मुंह मे रखकर रस चूसे दिन मे १० गोली तक। यह कफ को पतला कर सरलता से बाहर निकालती है और खासने मे होने वाले अधिक कष्ट को कम करती हे तथा कफोत्पत्ति को बन्द कराती है।

लवगाद्य चूर्ण—लौंग, जायफल, जावित्री और पिप्पली ६-६ माशे, कालीमिर्च २ तोला, सोठ १६ तोला और मिश्री २० तोला लेवें। इन सवको कूट छानकर चूर्ण वना लेवे। मात्रा २ से ४ माशे दिन मे ३ वार जल के साथ। उपयोग—जीर्ण मन्द ज्वर, कफ प्रकोप, पीला कफ वार वार गिरना, खासी आते रहना, प्रमेह, श्वास, अग्निमाद्य, अरुचि, उदरवात, अपचन, थोडा थोडा दस्त होते रहना,

आदि विकारो पर यह प्रयोजित होता है।

सूचना—लौंग आदि सुगन्धित औषधियो का चूर्ण आवश्यकतानुसार ताजा बना लेना चाहिए। पहले से बना कर रखलेने पर उडनशील तैल उड जाता है और स्थिर तैल रूपान्तरित हो जाता है। (गा औ र)

लघु समवती (आर्य औषधि)—लौंग, सोठ, अजवायन और सैंधा नमक समभाग लेकर इनके समान गुड लेकर गोलिया ३-३ रत्ती की बनावे। दीपन पाचन और आध्मान हर है।

लवंगादि क्वाथ (यो. र. अजीर्णा)—लौंग और हर्र समान भाग (१-१ तोला) लेकर क्वाथ बनावे। इसमे सैंधा नमक का चूर्ण मिलाकर पीने से विरेचन होता है और अजीर्ण शीघ्र ही नष्ट होता है।

लवग चतु. समम् (भै. र. बालरोगा ज्वराति)—जायफल, लौंग, जीरा और सुहागा समान भाग लेकर चूर्ण बनावे। इसे शहद और खाड के साथ सेवन करने से आमातिसार और शूल नष्ट होते है।

लवगादि चूर्णम् (१) (भै. र. राजयक्ष्मा)—लौंग, ककोल, खश, सफेद चन्दन, तगर, नीलोत्पल, सफेद जीरा, छोटी इलायची, अगर, दालचीनी, नागकेशर, पीपल, सोठ, जटामासी, नागरमोथा, अनन्तमूल, जायफल और बशलोचन १-१ भाग तथा मिश्री ८ भाग लेकर चूर्ण बनावे।

यह रोचक, तर्पण, अग्निदीपक, बलकारक, अत्यन्त वृष्य, त्रिदोष नाशक, उरोविवन्ध (छाती की जकडाहट), तमक श्वास, गलग्रह, खासी, हिचकी, अरुचि, यक्ष्मा, पीनस, ग्रहणी, अतिसार, भगन्दर, अर्बुद, प्रमेह और गुल्म को शीघ्र ही नष्ट कर देता है।

लवगादि चूर्णम् (२)—लौंग, अतीस, नागरमोथा, बेलगिरी, पाठा, सेमर की छाल, जीरा, धाय के फूल, लोध, इन्द्र जौ, सुगन्धवाला, धनिया, राल, काकडासिंगी, पीपल, सोठ, मजीठ, जवाखार, सैंधानमक और रसौत समान लेकर चूर्ण बनावे।

इसके सेवन से अग्निमाद्य, सग्रहणी, नाना वर्ण का अतिसार, शोथ, पाण्डु, कामला, अष्ठीलिका, कुष्ठ और ज्वर का नाश होता है। इसे प्रातःकाल सेवन करना चाहिए। (भा भै र.)

लवगादि चूर्णम् (३) (भै र गुल्मा)—लौंग, [illegible]-मूल, निशोत, अजवायन, सोठ, [illegible], धनिया, जीरा, हर्र, बहेडा, आमला, पीपल, कुटकी, [illegible], [illegible], जवाखार, इलायची, इन्द्र जौ और अजमोद समान भाग लेकर चूर्ण बनावें। मात्रा ३ माशा। अनुपान-उष्ण जल।

इसके सेवन से पीडा और दाहयुक्त गुल्म, अर्श, शोथ आमवात और समस्त पुराने उदर विकार शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं।

लवगादि चूर्णम् (४) (यो चि)—लौंग, ककोल, पीपल, सोठ, सफेद चन्दन, इलायची, नागरमोथा, वशलोचन, खश, अगर, नागकेशर, जायफल, कपूर, जटामासी शतावर, गोखरू, असगध, गिलोयसत और तगर समान भाग तथा खाड सबके बराबर लेकर चूर्ण बनावें।

इसके सेवन से २० प्रकार के प्रमेह नष्ट होते हैं।

लवगादि चूर्णम् (५) (वृ नि र. अजीर्ण) - लौंग और छोटी इलायची २-२ माशा (प्रत्येक ७॥ माशे), जायफल ७॥ माशे और अफीम १। माशा लेकर चूर्ण बनावे। मात्रा ३॥। माशा। अनुपान—मन्दोष्ण जल।

इसके सेवन से भयकर विसूचिका तथा शूल, अतिसार और वमन का नाश होता है। (प्रयोग मात्रा १ से २ माशा)

लवगादि चूर्णम् (१) (ग. नि चूर्ण)—लौंग, ककोल, पीपल, दालचीनी, तालीसपत्र, चव, छोटी इलायची, पीपलामूल, रेणुका, काकडासिंगी, एलवालुक, लवली (हरफा रेवडी), असगध, नागरमोथा, कालीमिर्च, जावित्री, अनारदाना, अनार की छाल, तिन्तडीक, खट्टे बेर, लोध और तुनका तेल १।-१। तोला, सोठ ५ तोला और मिश्री सबके बराबर लेकर यथाविधि चूर्ण बनावे।

यह चूर्ण रोचक, अग्निवर्द्धक, सुगन्धी, हृद्य, क्षयनाशक और बलवर्द्धक है। यह राजाओ को सेवन कराने योग्य औषधि है।

लवङ्गाद्य चूर्णम् (२) (ग. नि. चूर्ण)—लौग पीपल और जायफल १।-१। तोला, मिर्च २॥ तोला, सोठ २० तोला और मिश्री सबके बराबर लेकर चूर्ण बनावे। इसके सेवन से खासी, क्षय, अरुचि, प्रमेह, गुल्म, अर्श और सग्रहणी का नाश होता है तथा हृदय, कठ और मुख शुद्ध हो

जाता है एव अग्नि दीप्त होती है। मात्रा—३-४ माशा।

लवगादि गुटिका (भै. र अग्निमाद्य)—काली मिर्च ३॥। तोला, पीपल ३॥। तोला, अजवायन १० तोला, चीतामूल १० तोला, सेधा नमक ५ तोला, सचल ५ तोला, विड लवण ५ तोला, पीपलामूल ८॥। तोला, सोठ १२॥ तोला, हर्र १२॥ तोला, आमला ७॥ तोला, बहेडा ७॥ तोला,जीरा ७॥ तोला, चव ७॥ तोला और भाग २५ तोला तथा लौग सबसे आधी (६५ तोला ७॥ माशा) लेकर सबका वस्त्रपूत चूर्ण बनावे और उसे अदरक तथा तिन्तडीक (या अम्लवेत) के रस की ३-३ भावना देकर २॥-२॥ माश की गोलिया बनावें।

इन्हे बासे पानी के साथ सेवन करने से अग्नि दीप्त होती है। ये गोलिया वृष्य, आयुष्यवर्द्धक और अनेक रोग नाशक है।

लवंगादि गुटी (१) (वृ.नि. र श्वासा.)—लौग, सोठ, मिर्च, पीपल, शुद्ध वच्छनाग, भाग, कटेली और बहेडा समान भाग लकर चूर्ण बनावे। और फिर उसे घृत कुमारी से रस मे घोटकर १-१ रत्ती की गोलिया बनावे। इनके सेवन से श्वास नष्ट होता है।

लवगादि गुटी(२) वृ. नि. र.। श्वासा)—लौग और कालीमिर्च का चूर्ण समान भाग लेकर दोनो को एकत्र मिलाकर त्रिफला के क्वाथ तथा कीकर (बबूल) की छाल के रस मे एक-एक दिन घोटकर गोलिया बनावे।

इसके सेवन से श्वास और कफ का नाश होता है।

लवगादि वटी (१) (भै. र.। अग्निमांधा.)—लौग, सोठ, मिर्च और टकण समान भाग लेकर चूर्ण बनावे और फिर उसे १-१ दिन अपामार्ग चिरचिटे और चीते के क्वाथ मे घोटकर गोलिया बनावे।

इसके सेवन से जठराग्नि दीप्त होती है।

लवगाद्य गुटिका (ग. नि.। गुटिका ४)—लौग,तालीस पत्र, छोटी इलायची और दालचीनी २॥-२॥ तोला, अजवायन, चव्य, जीरा और धनिया ५-५ तोला, कालीमिर्च, पीपल, तिन्तडीक और अम्लवेत १०-१० तोला तथा पीपलामूल, सोठ और हर्र २०-२० तोला लेकर चूर्ण बनावे एव उसे सबसे ३ गुने गुड मे मिलाकर २॥-२॥ तोले की गुटिका बनाले। (व्यवहारिक मात्रा १ से १॥ तोला)

इसके सेवन से अर्श, पाण्डु, हृदयशूल, पार्श्वशूल, कास, गुल्म, अरुचि, श्वास, हिचकी, गलग्रह, ज्वरातिसार और तन्द्रा का नाश होता है। अनुपान—मद्य,तक्र अथवा द्याासव।

लवगादि चूर्णम् (भै. र.। स्त्री रोगा)—लौग, सुहागा, नागरमोथा, धाय के फूल, बेलगिरी, धनिया, जायफल,राल, सौफ, अनारदाना, जीरा, सैंधा, मोचरस, नीलोत्पल, रसौत, अभ्रकभस्म, बगभस्म, मजीठ, लाल चन्दन, चव, अतीस, काकडासिगी, खैरसार और सुगन्ध वाला समान भाग लेकर यथा विधि चूर्ण बनावे और फिर उसे ३ दिन भागरे के रस की भावना देकर सुखाले (मात्रा १-१॥ माशा) अनुपान—बकरी का दूध।

इसके सेवन से गर्भिणी की सग्रहणी, नाना वर्ण वाला अतिसार, ज्वर, आमातिसार, शूल और शोथादि का नाश होता है।

लवगादि चूर्णम् (वृद्ध) यो.चि.म।(अ. २)—लौग, इलायची, दालचीनी, तेजपात, नीलोत्पल, खस, जटामासी, तगर, सुगन्ध वाला, ककोल, पीपल, अगर, नागकेसर, जायफल, सफेद चन्दन, जावित्री, सफेद और काला जीरा, सोठ, मिर्च, पीपल, पोखरमूल, कचूर, हर्र, बहेडा, आमला, कूठ, वायविडग, चीता, तालीस पत्र, देवदारु, धनिया, अजवायन, मुलहठी, खैरसार, अम्लवेत, वशलोचन, अजमोद, कपूर, अभ्रक भस्म, काकडासिगी, वासा, पीपलामूल, अरणी, फूल प्रियगु नागरमोथा, अतीस, शतावर, गिलोय का सत्व निसोत और धमासा समान भाग तथा मिश्री सबके बराबर लेकर यथा विधि चूर्ण बनावे। मात्रा १। तोला।

यह चूर्ण बलवीर्यवर्द्धक, पौष्टिक, अग्निदीपक, वात-नाशक, नेत्रो को हितकारी, हृद्य, कठ और जिह्वा शोधक है। इसके सेवन से प्रमेह, खासी,अरुचि, राजयक्ष्मा, पीनस, क्षय, अर्श, ग्रहणी, त्रिदोष, हिचकी, अतिसार, प्रदर, गलग्रह पाण्डु, स्वर भेद, और अश्मरी का नाश होता है। व्यवहारिक मात्रा ४-६ माशा।

लवगादि वटी (वृहत्) रसे सा.स।(अग्निमाद्या)—लौग, जायफल, धनिया, कूठ, सफेद जीरा,काला जीरा,सोठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेडा, आमला, इलायची, दालचीनी, सुहागे की खील, कौडी भस्म, नागरमोथा, वच, अजमोद, विड, लवण और सैंधा नमक का चूर्ण १-१ भाग (२-२

तोला) तथा शुद्ध पारद, शुद्ध गधक, अभ्रक भस्म और लौह-भस्म समान भाग लेकर प्रथम पारे गधक की कज्जली बनावे और फिर उसमे अन्य औषधो का चूर्ण मिलाकर सबको पानी के रस मे घोटकर ३-३ रत्ती की गोलिया बनाले। अनुपान—उष्ण जल।

इसके सेवन से ग्रहणी विकार, आम और पीडा युक्त अतिसार (प्रवाहिका), कफज ज्वर, शूल, कुष्ठ, अग्निमाद्य, अम्लपित्त, प्रबल वायु और कोष्ठगत वायु का नाश होता है।

लवङ्गाद्य चूर्णम् (वृहत्) (भै र. ग्रहणी)—लौंग, अतीस, मौथा, पीपल, काली मिर्च, सैंधव लवण, हपुषा (हाउबेर), धनिया, कायफल, पुष्करमूल, जावित्री, जायफल, कालाजीरा, सौवर्चलनमक, रसौत, धाय के फूल, मोचरस, पाठा, तेजपत्र, तालीसपत्र, नागकेशर, चित्रक, विड नमक, धनिया, बेलगिरि, दालचीनी, छोटीइलायची, पीपलामूल, अजमोद, अजवायन, मजीठ, कुटज, सौंठ, अनार का छिलका, यवक्षार, नीमकीछाल, राल, सज्जीखार, समुद्र लवण, सुहागा, सुगन्धवाला, इन्द्र जौ, जामुन की छाल, आम की छाल, कुटकी, अभ्रक भस्म, लोह भस्म, गन्धक और पारद समान भाग लेकर यथाविधि चूर्ण बनावे।

यह चूर्ण ग्रहणी, अतिसार, ज्वर, अरुचि, मन्दाग्नि, कास, श्वास, वमन, अम्लपित्त, हिक्का, प्रमेह, हलीमक, पाण्डु, विष्टम्भ, अर्श, प्लीहा, गुल्म, उदरशूल, आध्मान, शोथ, प्रतिश्याय, आमवात, अजीर्ण, प्रदर आदि रोगो को नष्ट करता है।

मात्रा—१ माशा। अनुपान—शहद या तण्डुलोदक।

लवङ्गाद्य चूर्णम् (वृहत्) (भै. र ग्रहण्य)—लौंग, जीरा, रेणुका, सैंधव लवण, दालचीनी, तेजपात, छोटी इलायची, अजमोद, अजवायन, मोथा, सौंठ, पिप्पली, कालीमिर्च, हर्र, वहेडा, आवला, सोया, पाठा, चिरायता, गोखरु, जावित्री जायफल, दारुहल्दी, जटामासी, लाल चन्दन, मुरामासी, कचूर, सौंफ, मैंथी, सुहागा, कालाजीरा, यवक्षार, सर्जीक्षार, सुगन्धवाला, विल्व, पुष्करमूल, चित्रक, पिप्पलीमूल, विडग, धनिया, पारद, अभ्रकभस्म, गन्धक और लोहभस्म समान भाग लेकर चूर्ण बनावें। मात्रा—१ माशा। अनुपान—वातादि दोषो के अनुसार उष्ण तथा शीतल जल के साथ सेवन करने से मन्द हुई अग्नि प्रदीप्त होती है तथा आमातिसार, ग्रहणी, शूल, विष्टभ, आनाह, विषूचिका, शोथ, कामला, हलीमक, पाण्डु, कास आदि रोगों मे खाड के साथ सेवन करावें। यह चूर्ण लौंग के अनुपान के साथ आध्मान को शान्त करता है।

लवङ्गाद्य मोदकम् (भै. र. अग्निमाद्या)—लौंग, पीपल, कालीमिर्च, सौंठ, सफेद जीरा, कालाजीरा, नागकेसर, इलायची, जायफल, वंशलोचन, कायफल, तेजपात, कमलगट्टा, सफेद चन्दन, ककोल, अगर, खस, अभ्रक भस्म कपूर, जावित्री, नागरमोथा, जटामासी, इन्द्रजौ, धनिया और सौफ का चूर्ण १-१ भाग और लौंग का चूर्ण सबके बराबर (२६ भाग) लेकर सबसे दोगुनी (१०४ भाग) खाड की चासनी मे मिलाकर (३-३ माशे के) मोदक बनावे।

इसके सेवन से भयकर अम्लपित्त, अग्निमाद्य, अजीर्ण, कामला, पाण्डु, हर प्रकार की सग्रहणी और कष्ट साध्य अतिसार नष्ट होता है।

ये मोदक बलपुष्टि कारक और विशेषत शुक्रवर्द्धक है।

यूनानी योग—

अर्क करनफल (लवगादि अर्क)—सौंफ रूमी, अजवायन, लौंग, सौफ प्रत्येक ७ माशा, कस्तूरी, केशर, बाबूना पुष्प, करफस बीज प्रत्येक ३॥ माशा, दालचीनी १४ माशा कस्तूरी, केशर के सिवाय बाकी औषधियो को १६ गुना जल मे रात्रि के समय भिगोवें। प्रात काल अर्क निकाले। केशर तथा कस्तूरी को अर्क निकालते समय पोटली मे रखकर परिश्रावी नलकी के मुख पर बाध दें।

मात्रा—७ तोला। भोजनोपरान्त सेवन करे।

गुण—हृदय को बल देता है। वायु नाशक है।

(यू० चि० सा०)

अहितकर—मूत्र पिंडो को। निवारण—बबूल का गोद। प्रतिनिधि—दालचीनी, जावित्री और करजमुष्क।

लाल जड़ी (MACROTOMIA BENTHAMI)

यह श्लेमान्तकादि कुल (Boraginaceae) का हिमालय मे मिलने वाला क्षुप है जो कि विशेषतया ३३०० मी० से ४२०० मी० की ऊचाई पर उपलब्ध है। वनस्पति शास्त्र के आधार पर यह श्लेष्मान्तकादि कुल का क्षुप है जो कि प्राय एक मे ढाई फुट तक लम्बा होता है। पत्र ५ इन्च से ६ इन्च तक लम्बे भालाकार होते हैं। नीचे के पत्र लम्वे तथा अग्रभाग के छोटे होते है। स्पर्श करने पर यह कुछ खुरदरे से होते है। पुष्प कुछ बैंगनी रग के होते हैं। पुष्पो के खिलने पर इस मूलिका की आकृति बिल्ली की पूछ के समान प्रतीत होती है। मूल ६ से ७ इच तक लम्वा एव डेढ इन्च मोटा होता है। मूल को हाथो से मलने पर यह लाल रग छोडता है। इस जडी को ही लाल जडी कहते है।

पुष्पकाल—जून- जुलाई। फलकाल- जुलाई-अगस्त।

उत्पत्ति स्थान—

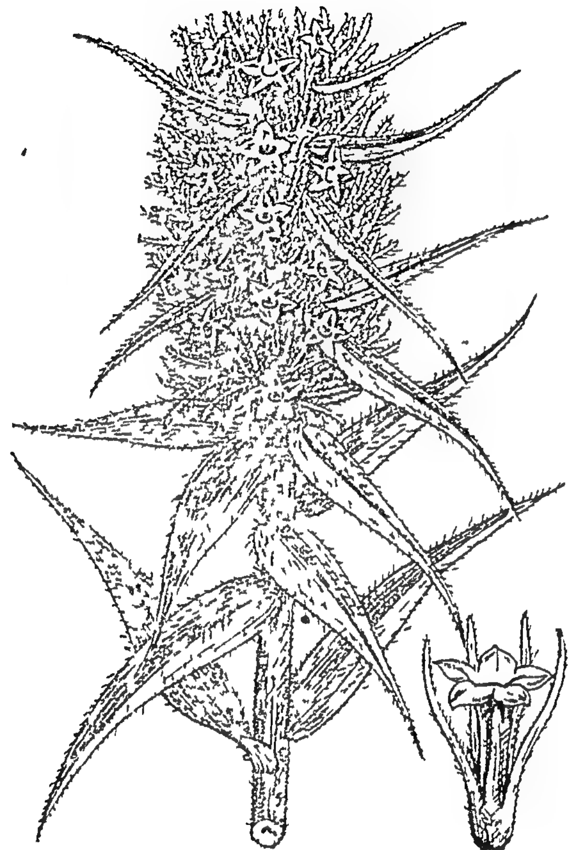
हिमालय के गढवाल क्षेत्र की भिलगना घाटी में विशेष रूप से किनकोलिया खाल, पेटारा, चौकी खर्तलिंग आदि स्थानो के खुले घास के नमदार स्थानो मे उपलब्ध होता है। जो कि ऊचाई मे ३३०० मी० से ४२०० मी० के लगभग है। इसके सिवाय पश्चिमी हिमालय मे काश्मीर से कुमाऊ तक १००० फीट की उचाई से १३०० फीट तक मिलता है।

नाम—

हिं०, गढवाली—लालजडी। भारतीय बाजार, पजावी—गाव जवान। ले०—मेक्रोटोमिया वेन्थामि (Macrotomia benthami D C.)।

उपयुक्त अङ्ग—मूल।

किम्बदन्ती (स्थानानुसार प्रयोग)—किम्वदन्ती के आधार पर यहा के ग्राम वासी लालजडी के मूल को अत्युत्तम औषध मानते हैं। यहा के ग्रामवासी इसके मूल का कटे हुए स्थानो पर या अस्थिभग्न और सधि विच्युति वाले भाग पर हेमर के साथ प्रयोग करने पर विशेष लाभ होता है।



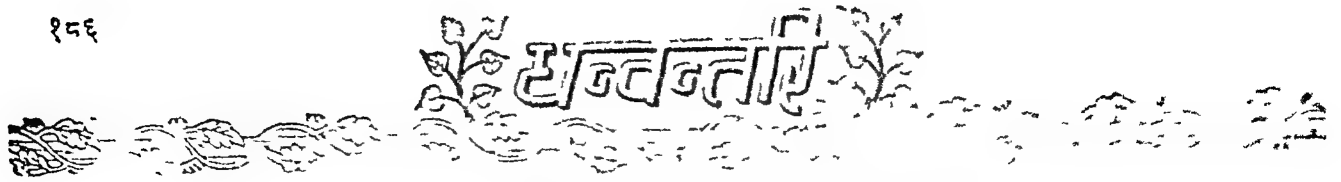
लाल जडी
MACROTOMIA BENTHAMI DC

विधि—लाल जडी, हेमर की छाल दोनो को समान भाग मे लेकर पीसकर पानी के साथ लुगदी बना लेते है और लुगदी को सक्रमित अग पर लेप करने से व्रण का रोहण शीघ्र हो जाता है तथा अस्थिभग्न वाले भाग पर भी इस लुगदी का प्लास्टर विशेष उपयोगी होता है।

वक्तव्य—सम्भवत. यह मूलिका चरकोक्त विसर्पाधिकार मे वर्णित गोजिह्वा हो सकती है।

ग्लोसरी आफ इण्डियन मेडिसिनल प्लाण्टस् आफ इण्डिया और दी इण्डियन मेटेरिया मेडिका—के एम नादकर्णी में इस वनस्पति को गले और जिह्वा से सम्बन्धित रोगो मे लाभकारी पाया है।

लेखक—श्री वैद्य मायाराम जी उनियाल, कनखल
(सचित्र आयु अक्टूबर ६६ से साभार)



वचगन्धा (Ipomoea obscura)

यह त्रिवृत्तादिकुल (Convolvulaccae) की एक जाति की लता होती है। इसकी वेलें वरसात के दिनों मे वहुत दिखाई देती है। इसके पत्ते हृदय की आकृति के और भोथरी अणी वाले होते ह । पान एकान्तर १ से ३ इन्च लम्वे और इतने ही चौडे होते हे । इनका आकार चमार दुवेली या अर्क पुष्पी के पान से मिलते हुए होते हैं। इसके फूल कुछ पीलापन लिये हुये सफेद रग के और नीचे की तरफ से बेगनी रग के होते है। पुष्प वाह्यकोप के पत्र ५, पत्र ¼ इच लम्वा, पुष्पदल के सिरे जामुनी रग के अणी वाले होते है। पुष्पाभ्यन्तर कोप के पत्र, पखडी की नली ¾ से १ इच की जामुनी होती है। पुन्केसर ५ सफेद रग की होती हैं इसमे ३ छोटी और २ लम्वी होती है। स्त्री-केसर १ सफेद रग की होती है। इमका फल ½ इच लम्वा गोलाई लिए हुए नोकदार, ४ खण्ड और ४ वीज वाला होता है। इसके पत्तो मे वच के समान गध आती है। इस वनस्पति की वेल खेतो की वाडो पर, रास्ते की वाजुओ पर और झाड़ियो मे सारे भारत के अन्दर दिखलाई देती है। देहात के लोग फोडे फुन्सी की औषधि के वतौर इस औषधि को पहिचानते हैं।

उत्पत्ति स्थान-समग्र भारतवर्ष ।

नाम—

स०—वचगन्धा । हिं०—फोदडवेल । म०—पीलीभवरी। गु —गुम्वड़वेल,गुम्वरवेल वजवेल,वाडफुदरडी । कच्छी-गुमडीयार, छटारीवेल । ता —सिरुट्टाली । ते —नल्लाकोक्किता । ने०—इपोमिया आब्सक्यूरा (Ipomoca obscura ker Gawl) ।

उपयुक्त अङ्ग —सर्वाङ्ग । मात्रा—१ से २ तोला ।

गुण धर्म और प्रयोग—

शोथघ्न और शोषण ।

उपयोग —इसके पत्तो को पीसकर वदगाठ और नाहे जैसे फोटे फुन्सियो पर लगाने से आराम हो जाता है।

जुकाम और सर्दी वालो को इसके पत्तो को मसलकर कुछ देर तक सुंघाने से सर्दी मिट जाती है।

डा० कम्मली के मतानुमार इसके पत्ते मनमोहक खुशवू वाले और सुआवदार होते है। इसके पत्तो को भून कर चूर्ण करके घी मे मिलाकर मुन्क्षत पर लगाने से वहुत लाभ होता है। (व० च०)

इसकी जड को पानी मे पीसकर मधिवान और रक्त विकार की सूजन पर लेप किया जाता है। पानो को पीस कर टिकिया वनाकर यह टिकिया फोड़ो पर वांधी जाती है। इसकी तमाम लता को पीसकर उसको तेल मे डाल कर तेल सिद्ध कर ले और वाद मे छानकर चर्म विकारो पर शरीर पर मालिश की जाती है। इसके फूल और कच्चे फलो को पीसकर पुल्टिस की तरह फोडो और गांठो पर वाधने से फोडे मिटते है। इसके पत्तो को सेक कर चूर्ण करके और घी मे तलकर आख के दर्द मे आखो पर लगाने के काम मे आता है।

(व० व० से साभार)

वटदला (Zyzyphus trinervia)

यह वदरीकुल (Rhamnaceae) की एक वनस्पति होती है। इसका वृक्ष छोटा होता है। इसके पत्ते २.५ से ७ ५ सेण्टिमीटर तक लम्वे और १ ६ से ३ ८ सेण्टिमीटर तक चौडे हाते है। इसके फूल कुछ हरापन लिए हुए पीले हाते हैं। इसके फल पकने पर पीले हो जाते है।

उत्पत्ति स्थान—

इसके वृक्ष गुजरात, पश्चिमी घाट, मद्रास प्रेसिडेन्सी, कोयम्वतूर, नीलगिरी, अनामला, इससे दक्षिणी ट्रावकोर, तक पैदा होते हैं।

नाम-

स०—वटदला । हि० —वटदला । ते०—काकूपला । कन्नड–चुचीपाली । ता०—कादिवकाई । मलय—करकाला । अ०–जागेडजुजुवे (Jagged jugube) ले०-झिफिफसट्रिनेर विया (Zyzyphus Trinervia Roxb) ।



उपयुक्त अङ्ग—सर्वाङ्ग ।

गुण धर्म और प्रभाव—

इसके पत्तो का काढा रक्त कणो की विकृति मे होने वाली दुर्बलता मे रक्त को शुद्धकरने के लिए दिया जाता है और प्राचीन मैथुन सम्बन्धी नपुन्सकता मे धातु परिवर्तक औषधि की तरह इसका उपयोग होता है ।

वटपत्री—देखिये-पाषाण भेद न०२, भाग ४ पृष्ठ १८५ पर

वट्टटाली (Acalypha hispida)

यह एरण्डादि कुल (Euphorbiaceae) की एक वनस्पति होती है । इसका पौधा छोटा होता है ।

उत्पत्ति स्थान—

यह वनस्पति भारत के बगीचो मे पैदा होती है ।

नाम—

हिं०—वट्टटाली । मल०—वट्टटाली । ले०—एकेलिफा हिस्पिडा (Acalypha hispida Burm) ।

उपयुक्त अङ्ग—पत्र, पुष्प ।

गुण धर्म और प्रयोग

इसके फूलो को पानी मे उबालकर उसका मुरब्बा बनाकर देने से प्रवाहिका और अतिसार मे लाभ होता है ।

रीड के मतानुसार इसके पत्तो को तम्बाकू के हरे पत्तो के साथ कूट कर चावल के माण्ड मे मिलाकर लगाने से प्राचीन और हठीले व्रणो मे लाभ होता है ।

(व० च०)

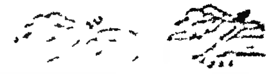
वन गोभी—देखिये—वनगोभी—भाग४ पृ० ४४० पर ।

वनगोभी असली (LAUNAEA PINNATIFIDA)

यह भृङ्गराज कुल (Compositae) का एक क्षुप होता है । यह चातुर्मास मे बहुत देखी जाती है किन्तु बहुत जगहो मे ये बारहो मास भी देखी जाती है । इसके क्षुप के पत्ते जमीन पर छाये हुए देखे जाते है । इसके पत्र कुछ मूली के पत्तो की मानीद हलके हरे रग के किनारो पर कटे हुए होते हे । पत्ते जमीन पर चक्र की तरह फैले और छाये हुये होते हैं । इसके पत्तो के चक्र के बीच मे लम्बी डडी निकली हुई होती है । इस पर छोटे पत्ते और पीले फूल होते है । फूल प्रात काल खिल कर ज्यादा करके दस बजे बाद बन्द हो जाते है । फल बहुत बारीक आते है ।

पत्र—मूल के सिरे मे निकलकर जमीन पर चक्राकार फैले हुए होते है । पत्तो की किनारे विभाजित हुई, इनकी दोनो तह चिकनी, फीके हरे रग की और इनकी कोर पर सफेद रग के करोत जैसे दाते आये हुए होते है । पान—पत्रदड के पास सकरे और ऊपर जाते हुए चौडे, मोटे ४ से ६इन्च लम्बे और $\frac{1}{2}$ से २ इच चौडे होते हैं । गन्ध उग्र, स्वाद-क्षाराश लिए हुए चिकना और पीछे से गलचटा लगता है ।

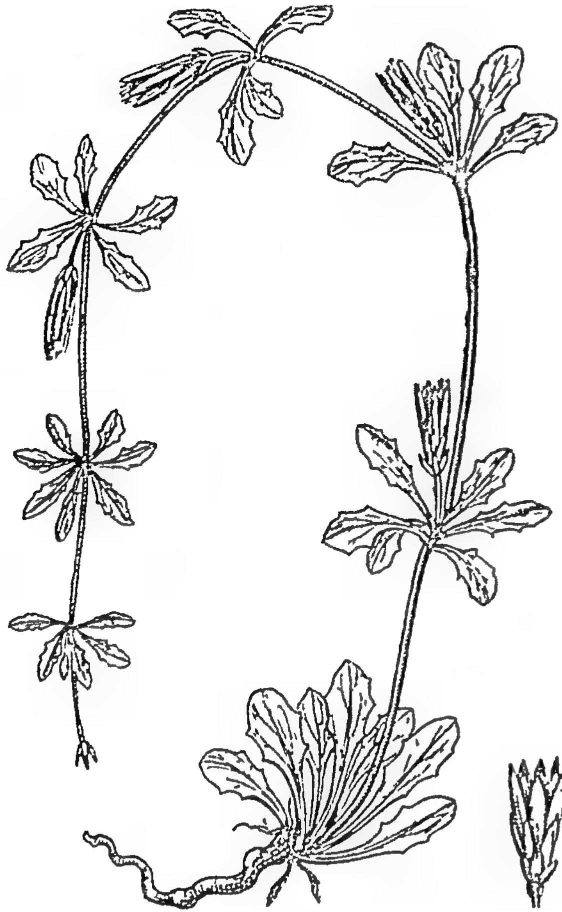
फूल—मूल के सिरे पर पानो के चक्र मे से १० से १२ पुष्प धारण करने वाली डाडी निकली हुई होती है जो चारो ओर फैलकर $1\frac{1}{2}$ से २ फीट के घेराव का छाता बन जाता है । इस पर पान और फूल आए हुए होते है । फूल—किसी समय १ या २ और किसी समय एक ही शलाका पर बहुत आए हुए होते है । फूल की सली ज्यादा करके पत्र कोण से निकली हुई होती है । फूल रग मे पीला सूरजमुख जैसा अर्थात् चक्राकार होता है । ये बहुत सूक्ष्म फूलडियो से बना होता है । फूल का व्यास $\frac{1}{2}$ से $\frac{3}{4}$ इन्च,



जितना और गन्ध सहज कड़वाम लिए होती है। पु केसर ५ स्त्री केसर १, फल बीज ½ इञ्च लम्बे और चौड़े होते है।

उत्पत्ति स्थान—

नदियो के तटो पर रेतीली जमीन मे, पानी के धारो पर, तालाबो की दीवारो और खन्दा मे तथा ऐसी ही गीली जगह मे यह सारे भारत वर्ष मे पायी जाती है।



वनगोभी असली
LAUNAEA PINNATIFIDA CASS

नाम—

हि —वन गोभी, जगली गोभी, गोजिह्वा, वनकोभ। पो गु —भोपात्री, भोपाथ्री । म —पायरटी, भोपात्री, पाथ्रा । कच्छी—गेवार । राज —जगली गोभी, वन गोभी। ले — लोनिया पिनाटीफिडा (Launaea pinnatifida casa)।

उपयुक्त अङ्ग—पचाग । मात्रा १ से २ तोला तक।

गुण धर्म और प्रयोग—

यह शीतल और रक्त स्तम्भक है।

इसके एक तोला पत्र मिश्री एक तोला के साथ पीसकर ५ तोले पानी म छानकर पिलाने से रक्तार्श का खून ५-७ मात्राओ के लेने मात्र से बन्द हो जाता है। यह योग नकसीर और अत्यार्तव को भी बन्द कर देता है। अनुभूत है। —व व से साभा

वन मल्लिका (Gasminum Rottlerianum)

यह हार सिंगारादि कुल (Oleaceae) की सुगन्धित पुष्पो वाली झाडीनुमा लता होती है। इसके फूल सफेद और सुगन्धित होते हैं। इसका फल चिकना और काला होता है।

उत्पत्ति स्थान—

यह वनस्पति पश्चिमी पेनिन्सुला मे कोनकन मे ट्रावेंकोर तक पैदा होती है।

नाम—

म —वन मल्लिका । कनाडी—वरामल्लिगे । मलयालम—कट्टुमल्लिगेई । ले —जेसमिनम रोट लेरिएनम-(Gasminum rottlerianum wall) ।

गुण धर्म और प्रयोग—

इसके पत्ते एक्जिमा नामक कठिन चर्म रोगो पर उपयोग मे लिये जाते हे।

वनप्सिका (VIOLA SERPANS WALL)

यह वनफशा कुल (Violaceae) का काण्ड हीन सर्पण शील क्षुप जाति की वनस्पति है। पत्र ताम्बूलाकार गोल एव नुकीले होते है। अध: पृष्ठ कुछ रोमश होता है। पुष्पो का दल चक्र लागूल युक्त होता है। पुष्प वर्ण मे हलके नीले एव लोहित होते हैं। इसकी अन्य प्रजाति वनफशा के नाम से बाजार मे विकती है जिसे (Vioa-l

serpena Wall) कहते हैं। पुष्पकाल—फरवरी से अगस्त । फलकाल—पुष्पकाल के बाद ।

उत्पत्ति स्थान—

यह हिमालय की गढवाल क्षेत्र की भिलगना घाटी में १६००मीटर की ऊचाई से लेकर २००० मीटर की ऊचाई तक उपलब्ध होती है। इस घाटी मे प्राय सभी स्थानो के नमदार एव छायादार स्थानो मे यह वनस्पति देखने को मिलती है । इसके सिवाय पहाडी क्षेत्रो मे भारत मे सर्वत्र पायी जाती है ।

नाम—

हिं, प वनफ्सा । कुमाऊ -थुगदु । गढवाली-डुण्डी विराली । यूनानी-बनफशा । ले वायोला सर्पन्सवाल (Viola Serpans Wall) ।

उपयुक्त अङ्ग—पुष्प, पञ्चाङ्ग ।

स्थानिक प्रयोग —(किस्वदन्ती)

१ ग्रामवासी इसके पंचाङ्ग के क्वाथ का प्रयोग प्रतिष्याय (जुकाम) मे करते है।

२ सूखी खासी मे भी गुल वनफशा का प्रयोग ग्रामवासी अदरख के साथ चाय बनाकर प्रयोग करते है ।

३. ऋतु परिवर्तन जन्य, जुकाम एव अन्य प्रकार के ज्वरो मे भी इसका क्वाथ वना कर पीते हैं ।

नोट—उक्त घाटी मे बहुत कम मात्रा मे इस वनौषधि का सग्रह किया जाता है ।



वनफ्सिका
VIOLA SERPANS WALL

(लेखक—श्री वैद्य मायाराम जी उनियाल,कनखल स क्षा अक्टूबर ६६ से साभार स०)

वन शेम्पगा (Evodialunu Ankenda)

यह सतापादिकुल (Rutaceae) का एक छोटी जाति का वृक्ष होता है । इसकी छाल मुलायम और भूरी होती है । इसके वीज काले और चमकीले होते हे ।

नाम—

स —वन शेम्पगा । मल —कनीला । ते —पिरास ले —इवोडिया लुनु एन्केन्डा (Evodialunu Andanba Merr) ।

गुण धर्म और प्रयोग

इसकी जड की छाल को तेल के अन्दर उवालकर कान्ति को वढाने के लिए उपयोग मे लिया जाता है ।

इसके पत्तो का रस ज्वर को दूर करने के लिए दिया जाता है । डण्डोचायना मे यह पौधा एक पौष्टिक पदार्थ की तरह उपयोग मे लिया जाता है । इसकी छाल और पत्ते ज्वर के अन्दर उपयोग में लिए जाते हैं । —(व च.)



वन सांगली (CRATAEGUS OXYACANTHA)



वनसांगली
CRATAEGUS OXYACANTHA,L

यह शतपत्री कुल (Rosaceae) की वनस्पति है जो उत्तरी पश्चिमी हिमालय मे सिंध से रावी तक ६००० फीट की ऊचाई से ९००० फीट तक पैदा होती है। चित्रावलोकन कीजिये।

हिं०, पं०—वनसागली, वनसागली, रिंग। ले०—क्राटाइगस ओक्सिया केन्था (Crataegus oxyacantha Linn)।

इसके फलो का तरल सत्व हृदय को वलकारी, हृदय और उसके कार्य सम्बन्धी विमारियो मे जैसे श्वास कृच्छ्रता, हृदयगति की अतिवृद्धि, हृदयावरोध की आशका में वहुत उपयोगी है।

(ग्लौ इ मे प्ला से साभार)

व्याकोटि (Urenalobata Linn)

यह कार्पासादि कुल (Malvaceae) का एक गुल्म होता है। यह गहरी शाखाओं से युक्त और इसके छोटे छोटे बाल होते हैं। पत्र १ से २ इञ्ची विस्तृत, २-३ इच लम्बा, हृत्पिण्डाकृति, गोलाकार एव कर्तित होता है। पत्र दण्ड छोटा फूल—लाल वर्ण के चमकदार, मध्य मे काले वर्ण के गुच्छ वद्ध रूप मे होते है। फल मे तीखे काटे होते है। गुल्म के फल बकरी, गाय एव अन्य बाल युक्त जानवरों के शरीर और कपडो मे लगने से फूल उनके चिपक जाते है। इसके फल वर्षा और शीत काल मे होते हैं। स्वाद में कोई जायका नही होता।

उत्पत्ति स्थान—

वङ्गाल और सारे भारत मे जङ्गलो के और रास्तो के किनारे एव पडत स्थानो मे पैदा होता है।

नाम—

सं—वनअभेंदा। हिं व्याकिटि, वचाटा। वं—वनउकडा। वो म—वन अवेन्धा। राज—भुरट। मलय—उदीरम। कन्नड़ छोटी ओटी। ता—ओट्टाटी। ते—पद्दावेन्दा। सस्थाली—भिदि जनेलेट। ले—युरेनालोवाटालीन (Urenalobata Linn)।

उपयोगी अङ्ग—मूल।

गुणधर्म और प्रयोग—

इसका मूल छोटा नागपुर क्षेत्र मे वात वेदना मे लगाते हैं।

—(केम्पवेल)

वरतुली—देखिये "वेलन्तर" भाग ५ पृष्ठ २१६ पर।

वरमूला (Magacarpea Polyandra)

यह राजिकादि कुल (Cruciferae) का २ से ३फुट लम्वा क्षुप है। काण्ड चिकना और गोल होता है। पत्र ३ से ४ इन्च लम्वे, किनारे फटे हुए होते हे। पुष्प शाखा प्रशाखाओ पर निकले रहते है। खिलने पर ये पुष्प पीले वर्ण के होते हैं। मूल १ इन्च से २ इन्च तक मोटा १० से १२ इन्च तक लम्वा होता है। पुष्पकाल—जुलाई और अगस्त।

उत्पत्ति स्थान—

यह हिमालय प्रदेश को झिलगना घाटी मे यह मूलिका ताली, किनकोलिया खाल, मगर,भूजकण्डी, गेडागली, खर्तालिग आदि स्थानो पर ३३०० मीटर से ३७०० मीटर की ऊचाई तक उपलव्व है।

नाम—

हि०—वरमूला। गढवाली—वरमूला। ले०—मेगाकारपिआ पोलि ऐंडरा (Megacarpea polyandra)

उपयुक्त अङ्ग—मूल और पत्र।

स्थानिक प्रयोग (किम्बदन्ती)—

१ यहा के ग्रामवासी इसके मूल के साथ त्रिकटु(सोंठ, मिर्च पीपल) $\frac{1}{4}$ भाग मिलाकर तक्र के साथ सूप वनाकर ज्वरो मे देने से लाभ बताते हे।

२ यदि जानवरो को लू लग जाय या गर्मी के कारण पशुओ का वाह्य चर्म लाल पड जाय तो ऐसी दशा मे इसके मूल को गुड के साथ शीतल जल मे घोलकर पिलाने से लाभ होता है।

३ वरमूला के पत्तो का शाक ज्वर मे भी देने से



वरमूला
MEGACARPEA POLYANDRA BENTH

लाभ होता है। यहा के लोग इसके पत्तो का शाक बनाते हैं।

(स० आ० से साभार स०)

लेखक—श्री० मायाराम जी उनियाल आयुदार्वेचार्य, कनखल (हरिद्वार)

वरासगी (Canthium Didymum)

यह मजिष्ठादि कुल (Rubiaceae) की हमेशा रहने वाली झाडी होती है। इमके पत्ते मे वनिये के समान गध आती है।

उत्पत्ति स्थान--

यह हिमालय मे सिक्किम के पास, खासिया जयतिया पहाड़ पर तथा मद्रास प्रेसिडेंसी मे पैदा होती है।

नाम--

हि०—वरसिंगी। वम्वई—वरसिगी। म०—अस्मुल कनाडी—रायपोटे। सथाल—गर्भा, गोजा। ता०—हिरूवट्ट, इमवरुतान। ते०—नक्किनी, नलावलासु। उडिया—गाजोरानी। अ०—सिलोनवॉक्स वुड (Ceylon box wood) ले०—कैंथियम डिडिमम (Canthium d



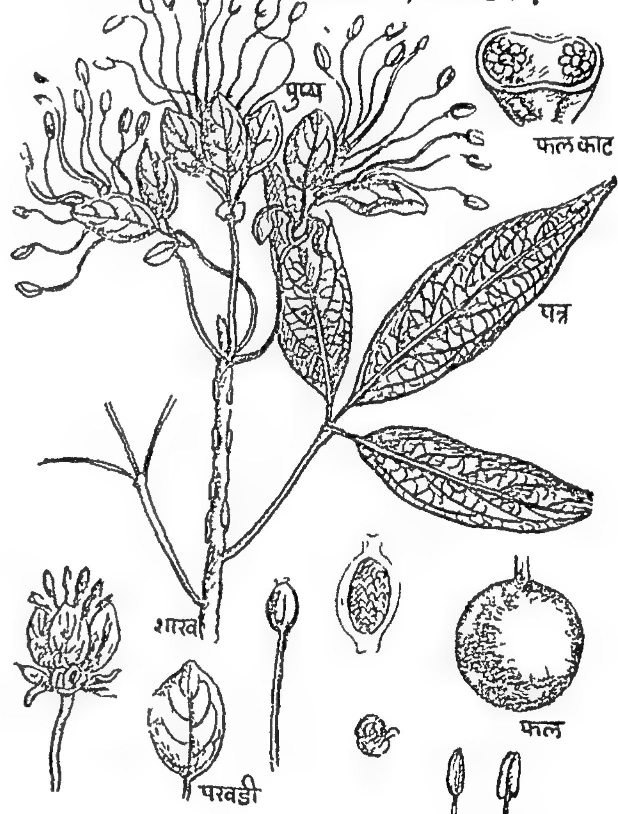
mun Gaertn) उपयुक्त अंग—छाल ।

गुण धर्म और प्रयोग—

हड्डी मे मोच आ जाने पर इसकी छाल के चूर्ण का लेप किया जाता है। ज्वर मे भी इसकी छाल लाभदायक मानी जाती है।

वरुण

सुश्रुत संहिता के सूत्र अध्याय ३८ मे वरुणादि गण का वर्णन मिलता है। निघण्टुकारो ने विभिन्न वर्गो मे मानते हुये मतैक्यता स्थापित नही की। चरक संहिता मे भी यथा सुश्रुत गणात्मकता नही मिलती। भावप्रकाश निघण्टु मे वटादि वर्ग मे इसका वर्णन मिलता है। आधुनिक वनस्पति शास्त्र दृष्ट्या इसे कैपेरीडेसी (Capparidaceae) वर्ग में गिना जाता है।



नाम—

वरुण वरण सेतुस्तिक्तशाकः कुमारकः। अर्थात् संस्कृत नाम वरुण, वरण, सेतु, तिक्त शाक और कुमारक है। इनके अतिरिक्त त्रिपर्ण, बहुपुष्प, वृत्तफल, विल्व पत्र आदि भी अनेको पर्याय हैं। परन्तु संस्कृत में वरुण नाम ही प्राय प्रसिद्ध है। अन्य भाषाओ मे नाम निम्न हैं—

हिन्दी—वरना। लेटिन—क्रटीवा नुरवाला (Crataeva Nurvala)। अंग्रेजी—थ्री लीव्ड केपर (Three leaved coper)। बंगाली—वरुनगाछ। गुजराती—वरणो फागटाकेरी। मराठी—वायवर्णा। तेलगू—उरुभत्ति। तमिल—मरलिङ्गम। मलयालम—नीरमथलम, नीवलि। कन्नड—नरुवेली।

उत्पत्ति और परिचयात्मक स्वरूप—

विशिष्टत उत्तरी भारत, मध्यभारत, बंगाल, आसाम कनारा और मालाबार आदि में पाया जाता है। भारत के अन्य क्षेत्रो मे भी सर्वत्र रोपित मिलता है। दक्षिणी क्षेत्र मे जल स्थानो के पास बहुत होता है।

वरुण का वृक्ष शाखा प्रशाखाओ युक्त मध्यमाकार का होता है। त्वक् धूसर वर्ण की और आधा इंच के लगभग मोटी होती है। इस पर अनुप्रस्थ रूप मे चीरे से लगे होते हैं। टहनियो पर श्वेत धब्बे से चिह्नित होते हैं। पत्ते ३-३ पत्रकों के साथ होते हैं। प्रदर्शनार्थ तीनो पत्रक ही दिये जाते हैं। इसीलिये इसके पत्तो को त्रिपर्णक और पर्णपाती भी कहते हैं। इन्ही नामो पर वरुण का नाम भी त्रिपर्णक, पर्णपाती, विल्व पत्र आदि पड़ा है। पत्तो का शिराजाल यूनी कॉस्टेट (Unicostate) होता है। त्रिपर्ण रूपी पत्तो का वृन्त (Petiol) ३½ से ८ से० मी० लम्बा होता है। पत्रोदर गाढे हरे और पत्र पृष्ठ कुछ श्वेताभ होते है।

पुष्प २-३ इंच लम्बे नीलाभ, श्वेताभहरित, पीताभ अथवा गुलाबी आभायुक्त वाई मिले जुले विभिन्न वरणो वाले हो सकते है। पुष्पो मे अच्छी सुगन्ध होती है। फल



छोटे वेल अथवा नीम्बू सदृश होते हैं । पकने पर फल रक्तिम हो जाते है । बीज कत्थई वर्ण युक्त काफी संख्या मे होते हे ।

रासायनिक संगठन—

पाश्चात्य मतानुसार प्रत्यक्ष रासायनिक प्रक्रियाओ के आधार पर वरुण की त्वचा (छाल) में सैपानिन तथा टैनिन पाए गए है । छाल का टिंक्चर तैल के सहयोग से पूरा दुग्धीकरण (Emulsion) कर देता है ।

गुण तथा चिकित्सा में प्रयोग—

वरुण पित्तलो भेदी श्लेष्मकृच्छ्राश्ममारुतान् ।
निहन्ति गुल्म वातास्र कृमीश्चोष्णोऽग्नि दीपन ॥
कषायो मधुरस्तिक्त. कटुको रुक्षको लघु ।

वरुण पित्तकारक, मल-भेदक, कफ, मूत्रकृच्छ्र अश्मरी वायु, गुल्म, वातरक्त, कृमि को नष्ट करने वाला, उष्ण, अग्निदीपक, कषाय, मधुर, तिक्त, कटु, रस युक्त, रुक्ष और लघु है ।

आन्त्र प्रणाली—अजीर्ण तथा आध्मान मे इसके पत्तो का क्वाथ बनाकर दिया जाता है । इससे आमाशय प्रक्षोभ, उत्क्लेश और वमन भी शान्त होते हे । अग्निमाद्य, उदर-शूल, मेद रोग और गुल्म मे भी वरुण छाल का फाट अच्छा कार्यकारी सिद्ध हुआ हे । जलोदर मे इसकी छाल, गोक्षुर तथा शुण्ठी का क्वाथ करके मधु और जल डालकर पिलाने पर बहुत उपयोगी हे । आन्त्रकृमि की चिकित्सा हेतु भी यह अच्छा काम करता हे । इसके अतिरिक्त कोष्ठवात प्रशमन, अनुलोमन, दीपन और पित्तसारण गुण भी इसमे पाये जाते हैं ।

मूत्रवह संस्थान—संस्थानात्मकता के अनुसार वरुण का सबसे अधिक प्रभाव इसी संस्थान पर पडता हे । विशेष कर अश्मरी भेदन और मूत्रल के गुण के कारण वरुण आयुर्वेद जगत मे विख्यात है। वातजाश्मरी पर जितना अच्छा प्रभाव इसका पाया गया है उतना अन्य अश्मरियो पर नही होता । इसी वाताश्मरी नाशन गुण से प्रभावित होकर सुश्रुत सहिताकार ने एक पृथक ही वर्ग ऊषकादि गण के साहचर्य से प्रस्तुत कर दिया है । यथा—

पाषाण भेदो वसुको वशिरारमन्तको तथा ।
शतावरी स्वदंष्ट्रा च बृहती कंटकारिका ॥
कपोत वङ्कार्तगल ककुभोशरि कुब्जक ।
वृक्षादनी भल्लुकश्च वरुण शाकजं फलं ॥
यवा कुलत्था कोलानिकतं कस्यफलानि च ।
ऊषकादि प्रतीवापमेषां कषायैवृत कृत ॥
भिनत्ति वातसं भूतामश्मरीं क्षिप्रमेवतु ।
क्षारान् यवाग्यूं षाञ्चकषायाजिपयांसि च ॥
भोजनानि च कुर्व्वीत वर्गेऽस्मिन्वातनाशने ।

(सु सहिता)

इस प्रकार सुश्रुतानुसार वरुण का प्रथम वर्ग मे समावेश कर चिकित्सा का निर्देश है ।

चक्रदत्त मे भी वातजाश्मरी उपचार हेतु वरुणादि क्वाथ निम्न प्रकार वर्णन हे—

वरुणस्य त्वचं श्रेष्ठा शुण्ठी गोक्षुर संयुताम् ।
यवक्षार गुड दत्वा क्वाथयित्वापिबेद्धिताम् ।
अश्मरी वातजां हन्ति चिरकालानुबन्धिनीम् ।

कफजाश्मरि मे भी वरुण को प्रशसनीय कहा है । यथा—

गणोवरुणकरिस्तु गुग्गुल्वेलाह रेणव ।
कुष्ठ भद्रादि मरिच चित्रकै ससुराह्वयै. ॥
एतै सिद्धमजार्सपिरूषकादि गणेन च ।
भिनत्ति कफ सम्भूतामश्मरी क्षिप्रमेवतु ॥
क्षारान्यवाग्यूषांश्च कषायाणि पयासि च ।
भोजनानि च कुर्व्वीत वर्गेस्मिन कफ नाशने ॥

(सु सहिता)

किन्तु पित्तजाश्मरी मे पित्तवर्धक गुण के कारण वरुण फलदायी नही है । अत अश्मरि चिकित्सा वरुण द्वारा करने से पूर्व उत्तम वद्य को अश्मरी के दोषवाहुल्यता का ज्ञान अवश्य कर लेना कीर्तिकर है ।

अश्मरी के अतिरिक्त अन्य मूत्ररोगो के लिए भी इसका प्रयोग सफल पाया गया है । यथा, मूत्रशर्करा की चिकित्सा मे भी यह निम्न प्रकार से गुणकारी पाया गया है—

वरुणत्वक् शिलाभेद शुण्ठी गोक्षुरकै कृत.
कषाय क्षार संयुक्त शर्कराच भिनत्यपि ॥

मूत्रकृच्छ्र, शिश्नशूल, मूत्राशयप्रदाह, मूत्राशय शूल प्रभृति अनेकविध रोगो में भी इसकी छाल को पुनर्नवा,

अपामार्ग, यवक्षार, गोखरू, मुलेठी आदि के साथ पूर्ण लाभप्रद पाया गया है ।

इन सबके अतिरिक्त विशिष्ट भिन्न भिन्न व्याधियो की चिकित्सा मे भी अच्छा लाभप्रद है। गण्डमाला मे वरुण की छाल पीस कर लेप करने से बहुत जल्दी लाभ दिखाई देता है । इस हेतु इसका क्वाथ मधु के साथ पीना बडा लाभदायक है । यथा—

माक्षिकाढ्य सकृत्पीत क्वाथो वरुण मूलज ।
गण्डमालाहरस्त्याशु चिरकालानुबन्धिनीम् ॥

अपक्व विद्रधि मे वरुणमूल का क्वाथ पीना बडा हितकर कहा है । यथा—

श्वेतवर्षाभुवोमूल मूलंवरुणकस्य च ।
जलेन क्वथितपीतपक्वविद्रधि जयेत् ॥

श्लेष्म-विद्रधि मे—

त्रिफला शिग्रु वरुण दशमूलाम्भसा पिवेत् ।
गुग्गुल मूत्रयुक्त वा विद्रधौ कफसम्भवे ॥

नासास्थियो की कई विकृतियो मे वरुण पत्रो का धूम्रपान भी श्रेष्ठ माना गया है ।

रक्तरोगो, व्रणशोथ, पादतल शोथ, जलन और वातरक्त मे भी वरुण लाभदायक सिद्ध हुआ है । मेदोरोग मे इसके पत्तो का साग बनाकर खिलाना अच्छा रहता है ।

आमवात मे भी वरुण का प्रयोग हितकर है । इस हेतु स्वरस भी अच्छा है । मात्रा—क्वाथ ५ से १० तोला । मूल या छाल चूर्ण—३ से ६ माशा । स्वरस १ से २ तोला ।
लेप—आवश्यकतानुसार एव अंगानुसार ।

—श्री ब्रजमोहन वाशिष्ठ ए., एम बी एम
प्रधान चिकित्सक, गवर्नमेंट आयुर्वेदिक डिस्पेन्सरी
मनिवाली, (श्री गगानगर) [राजस्थान]

वरलभोम

यह हरियादि कुल (Rhizophoraceae) का एक फल होता है ।

उत्पत्ति स्थान—

पूर्वी हिमालय, आसाम, बगाल, ब्रह्मा, दक्षिण भारत और अन्डमान द्वीप मे पेदा होती है ।

नाम—

हि०—वरलभोम । ब०—किरया । म०—पनासी । मल०—वरागा । ते०—करालो । आसाम—कायीकेरा । ले०—केरेलिया लूसिडा (Carallia lucida Roxb)

उपयुक्त अग—फल और छाल ।

गुण धर्म और प्रयोग—

फल—सक्रामक व्रणो पर काम मे आता है । त्वक् चूर्ण खुजली मे मालिश के लिए प्रयोग मे आता है ।

वल्लिपान (Lygodiam Flexosam)

यह हंसराजादि कुल (Polypodiaceae) की वनस्पति हिमालय मे ५ हजार फीट की ऊंचाई तक देहरादून कुमायू, गोरखपुर, शाहजहापुर, बगाल और दक्षिणी भारत मे ४००० फीट की ऊंचाई तक पैदा होती है ।

नाम—

हि०—वलिपान । मल०—वल्लिपान । तिरहुत—कनाभा । ले०—लिगोडियम फ्लेक्सुओसम (Lygodium flexuosum) ।

उपयुक्त अग—पचाग ।

गुण धर्म और प्रयोग—

इसका पौधा कफ निस्सारक होता है। तिरहुत मे बहुत मे इसकी ताजी जड सरसो के तेल मे औटाकर सधिवात, गीली खुजली, व्रण, एक्जिमा, कटे हुए घाव और मोच के ऊपर लगाने और मालिश करने के काम मे ली जाती है । विशेष तौर से इस तैल का उपयोग कारबकल के ऊपर लगाने के लिए होता है ।





वल्ली काजिरम (STRYCHNOS BOURDILLONI)

यह कारस्करादि कुल (Loganiaceae) की वनस्पति है। इसकी लता होती है।

उत्पत्ति स्थान—

यह ट्रावनकोर, दक्षिण कुरनूल और मैसूर के जगल, पश्चिमी घाट मे ३००० फीट की ऊचाई पर और दक्षिणी कनाडा मे पैदा होती है।

नाम—

हि०—वल्ली काजिरम। मलय०—वल्ली काजिरम। सिग०—इटाकिरिदी वेल। ले०—स्ट्रिकनस बोर्डीलोनी (Strychnos bourdilloni Brandis)।

गुण धर्म और प्रयोग—

इसकी जड का काढा सधिवात, व्रण, फीलपाव, ज्वर और मृगी के ऊपर मालिश करने के काम मे आता है।

वागटी

यह शिम्बी कुल (Leguminosae) की एक मजबूत और काटेवाली झाडी कटकरज की झाडी के समान होती है। इसकी डालिया लम्बी और तीक्ष्ण काटों वाली होती हैं। इसके पत्ते कटकरज के पत्तो के समान और फूल सिंदूरी रग के मञ्जरियो की तरह होते है। इसकी फलिया बडी-बडी होती है और हर एक फली में ४ या ५ बीज होते हैं।

उत्पत्ति स्थान—

यह पश्चिमी पेनिनसुला की पहाडियो मे पैदा होती है।

नाम—

म०—गुच्छकरज। हि०—वागटी, वाकेरी, कुडगजगा बम्बई—वागटी, वाकेरी। कोकण—वागटी। म०—वागटी वाकेरी। ते०—ओक्काडि कोढ्ढि। कन्नड—वागटी, हूलीगजी। ता०—पुलिनाक्का गंडाइ। ले०—वागेटिया स्पिकेटा (Wagatea spicata Dolz)।

उपयुक्त अङ्ग—मूल और त्वक्।

गुण धर्म और प्रयोग—

इस वनस्पति की जड निमोनिया रोग मे उपयोगी होती है और चर्म रोगो पर इसकी छाल का लेप करने से लाभ होता है। इसकी फलियो मे कषायाम्ल काफी मात्रा मे रहता है ओर इसकी छाल मे एक जाति का रग पाया जाता है।

वामी (Sarcocephalus Cordatus)

यह मजिष्ठादि कुल (Rubiaceae) का एक छोटी जाति का वृक्ष होता है।

उत्पत्ति स्थान—

इसके वृक्ष ब्रह्मा, सिलोन, मलाया और फिलीपाइन, आयसलेड और उत्तरी आस्ट्रेलिया द्वीपो मे पैदा होती है।

नाम—

हि०—वामी। सिहाली—वामी। बरमा—माउ। ले०—सरकोसेफेलस कोरडेटस (Sarcocephalus cordatus-Miq) उपयुक्त अग—छाल।

गुण धर्म और प्रयोग—

इसकी छाल पौष्टिक और ज्वरनाशक होती है।

वासन्ती (Jasminum Arborecens)

यह हारसिंगारादि कुल (Oleaceae) की वासन्ती की सुन्दर भाड़ी वृक्ष के सदृश होती है।

वर्णन—जेसमिनम=अरबी सज्ञा। आर्बोरेसन्स=वृक्ष की सदृश बढ़ने वाली। लेटिफोलियम=चौडे पान

युक्त। [illegible] लगभग [illegible] उगती [illegible] झाड की ऊँचाई ५ से ७ फुट। पान—अभिमुख, सादे, २ से ३ इञ्च लम्बे (या ३ से ५ इंच लम्बे) और २ से ३ इञ्च चौडे। लम्बगोल, तीक्ष्ण, नोकदार, पत्र वृन्त लगभग आधा इंच लम्बा, प्राय कोमल। पुष्प १ से १॥ इंच व्यास के, सफेद या गुलाबी सुगंधित। पुष्प मंजरी [illegible]दार, [illegible], ३ शाखा युक्त। पुष्पान्तर नलिका लगभग आधा इंच लम्बी। पक्व गर्भ कोष सामान्यत एकाकी, लम्बा गोल या अण्डाकार, प्राय मुडा हुआ, लगभग आधा इंच लम्बा, पकने पर काला। वसन्त काल मे होने से वासन्ती कहा गया है।

उत्पत्ति स्थान—

वासन्ती के झाड गंगा जी के उर्ध्व प्रदेश के मैदान मे ३००० फीट की ऊचाई पर, बंगाल, बिहार, मध्य प्रदेश, दक्षिणी भारत की गंजम और विजिगापटम मे अधिक होते है।

नाम—

स —वरकुन्द, नवमल्लिका मधुमादवी। हि —वासन्ती, नेवारी —निवाडी। म कुसर। गु —कुन्द। बंगला—वदकु द नवमल्लिका। सता—गदाहुउवहा। ता—नागमल्ली। ते —अदवीमल्ले, नाममल्ले। ओ —जोनामोलि, नियालो। कना—[illegible]। [illegible]। ले० [illegible] (Jasminum-Arbore[illegible] Roxb.

उपयुक्त [illegible]—पत्र [illegible], पुष्प।

गुण धर्म और प्रयोग—

[illegible] (आ. नि.)

वासन्ती—शीतल, [illegible], [illegible], [illegible], शीतल, [illegible] गुण होती है।

कफ प्रकोप मे—[illegible] पत्तो का रस, [illegible], काली मिर्च और अन्य द्रव्य मिला [illegible] निकल जाता है। [illegible] होकर घबराहट होती हो, [illegible] मे [illegible] का रस [illegible] होता है। [illegible] वासन्ती का [illegible] निकाल १ रत्ती काली मिर्च का चूर्ण और [illegible] सुहागे का फूला और [illegible] मिलाकर दिया जाता है।

क्षुधामांद्य मे—पत्तो के रस का सेवन करने पर अग्नि प्रदीप्त होती है।

मासिक धर्म मे कष्ट—[illegible] मूल [illegible] देते है।

वाकेरी—देखिए भाग ५ पृष्ठ ७१ वाकेरी मूल।

वांजि (BASSIA MALABARICA)

यह एक मधुकादि कुल (Sapotaceae) का मध्यम कद का वृक्ष पश्चिमी प्रायद्वीप मे पैदा होता है।

नाम—

हि०—वाजि। ता०—वाजि, एट्टिलाप्पाइ। मलय०- एट्टिरिप्पा। कन्नड-नानेल। ले०—वेसिया मलबेरिका (Bassia Malabarica Bedd)

उपयुक्त अङ्ग-फूल, फल और तैल।

गुण धर्म और प्रभाव—

इसके फूलो को पानी मे भिगोकर गुर्दे की शिकायतो को दूर करने के काम मे लिया जाता है। फल कृमिनाशक माने जाते है और वे सन्धिवात, पित्त विकार, क्षय और दमे के अन्दर दिये जाते हैं। इसके बीजो का तेल सधिवात के ऊपर मालिश करने के काम मे लिया जाता है।

विखारी (PITTOSPORUM FLORIBUNDUM)

यह विखारी कुल (Pittosporaceae) का एक छोटी जाति का वृक्ष होता है। इसकी छाल हलके रग की, कड़वी और सुगन्धित होती है। इसके पत्ते बरछी के आकार के होते हैं। इसके फूल कुछ पीलापन लिये हुए सफेद रग के

और फल बटुने के समान होते है।

उत्पत्ति स्थान—

यह वनस्पति हिमालय मे पजाब से लेकर सिक्किम तक ५ हजार फीट की ऊचाई तक, गंजाम, कोनकन, पश्चिमी घाट, नीलगिरी और दक्षिणी आरकोट और सलेम पर्वतो पर पैदा होती है।

नाम—

हिं०—विखारी, वेहकलि। म०—विखारी, वेखली। वम्बई-येकदी। नेपाल—टिविलोटी। ता०—ननजुनडाह, दम्माटा। ते०—रक्कामुकी। ले०—पिटोसपोरम फोरिवडम (Pittosporum Hnriburdum)।

उपयुक्त अङ्ग—छाल और तेल।

गुण धर्म और प्रयोग—

इसकी छाल कड़वी, सुगन्धित और नशीली होती है। यह ज्वर नाशक, कफ निस्सारक और सर्प विष को दूर करने वाली होती है।

इसकी प्रधान क्रिया त्वचा पर और श्वास नलिका की श्लेष्म त्वचा पर होती है।

ज्वर को नष्ट करने के लिए इसको २ से ५ रत्ती तक की मात्रा में देते हैं और सर्प विष को नष्ट करने के लिए इसको २५ रत्ती तक की मात्रा मे देते हैं। पुरानी खासी मे इसकी सूखी छाल का चूर्ण २ से ५ रत्ती तक की मात्रा में देने मे वहुत लाभ होता हुआ देखा गया है। यह एक उत्तम कफ निस्सारक पदार्थ है। मगर कभी-कभी इसके प्रयोग से रोगी को अतिसार या प्रवाहिका होने का डर रहता है।

ट्रावनकोर मे इसको आधे चाय के चम्मच की मात्रा मे कुष्ठ के रोगियो को खिलाया जाता है और इसको अरण्डी के तेल के साथ पीसकर सूखी खुजली पर लगाने के के काम मे लिया जाता है। इसका तेल धातु परिवर्तक, पौष्टिक और वाह्य उत्तेजक होता है। चर्म रोगो के ऊपर इसको लगाने से वहुत लाभ पहुंचता है। सधिवात, कुष्ठ, मोच और रगड़ गृध्रसी वात छाती के रोग,क्षय और आंखो का दुखना इत्यादि रोगो पर इसकी मालिस करने की सिफारिस की गयी है। इसको १५ बूंद से लेकर २ ड्राम तक की मात्रा मे देने से कुष्ठ, चर्म सम्वन्धी दूसरी वीमारिया, उपदश की दूसरी अवस्था और प्राचीन सधिवात मे वहुत लाभ होता है। यद्यपि यह एक वहुत प्रभावशाली औषधि है। फिर भी इसका अन्त प्रयोग करते समय वहुत सावधानी रखने की जरूरत है। ऐसा देखा गया है। कि कुछ विशेष प्रकार के वीमारो पर इसका प्रयोग करने से उनकी पाक स्थली मे जलन पैदा होकर दस्त और उल्टी शुरू हो जाती हैं।

केस और महस्कर के मतानुसार यह वनस्पति सर्प विष पर निरुपयोगी होती है। (व० च०)

विधारा—देखिए—भाग ५ पृष्ठ १४८ पर।

विष (ACONITUM FALCONERI STAPF)

यह विषवर्ग और वत्सनाभादिकुल (Ranunculaceae) का २ से २½ फुट तक लम्वा क्षुप होता है। इसके मूल से एक ही काण्ड निकलता है। वडे क्षुप मे एक या दो शाखायें निकलती है। पुष्प दण्ड सीधा तथा पुष्पो के खिलने पर ये नील वर्ण के होते है। फल—तिल के फलो के समान कोषयुक्त होते है। इसकी दो प्रजातिया यहा पायी जाती है। पुष्पकाल-अगस्त। फलकाल-सितम्बर और अक्टूबर।

उत्पत्ति स्थान—

हिमालय के गढवाल क्षेत्र की सुवाल पाइन और अलपाइन जोन और इसी क्षेत्र की भिगलना घाटी मे यह वनौषधि विशेष रूप से नाजखर्क, ताली, जल कन्दारेंज,भूज कण्डी, गगकीट, हिलसी, खडारी, खर्तलिंग आदि स्थानो पर ३००० मीटर से ३८०० मीटर की ऊचाई तक उपलब्ध है।


विष
ACONITUM FALCONERI STAPF

नाम–

हि, गढ़वाली–विष, बिस, बिख, मीठा मेलिया, मीठो विष, मीटो। ले०–एकोनाइटम फालकोनेरी (Aconitum-falconcrae stapf)।

उपयुक्त अङ्ग—मूल, [illegible] और पत्र।

गुण धर्म और प्रयोग—

(१) यहाँ ग्रामीण लोग इसके मूल को दारुण विष मानते हैं।

(२) गठिया वात (जोड़ों का दर्द) वातु रोग में मीठा के मूल से अग्नि दहन कर्म करते हैं। अग्नि दहन के लिए गर्म घी में मीठा के मूल को तपाते हैं और फिर जोड़ों पर गुल (दहन कर्म) लगाते हैं। ऐसा करने से लाभ होता है।

(३) ग्रामीण वैद्य गोमूत्र में भावना देकर इसके मूल चूर्ण को ½ रत्ती से १ रत्ती मात्रा में अतिसार, ज्वर आदि विकारों में प्रयोग करते हैं।

(४) मद्य की मादकता को तीव्र करने के लिए मीठा के पत्रों से घड़े के चारों ओर पुट देते हैं।

टिप्पणी—इस घाटी से मीठा के मूल का संग्रह किया जाता है। बाजार में व्यापारी लोग वत्सनाभ के नाम से मूल को बेचते हैं। —श्री वैद्य मायारामजी उनियाल, धनवल्ल

स आ अपट ६६ से साभार

विष कण्डारा (MORINA LONGIFOLIA)

यह विष कण्डारादिकुल (Dipsaceae) का २ से २॥ फुट तक ऊचा क्षुप (Herb) है। काण्ड सीधा, पत्र नुकीले काटेदार ३ से ३॥ इच लम्बे होते ह। पुष्प काटेदार गुलाबी वर्ण के होते है। पुष्पो के खिलने पर उग्र सुगन्ध आती है। इस उग्र सुगन्ध के कारण आदमी को नशा सा हो जाता है। इसलिए यहाँ के लोग इस क्षुप को विष कण्डारा कहते है। इसका मूल पुष्कर मूल के सदृश कन्द युक्त और सुगन्ध वाला होता है।

पुष्पकाल—जुलाई और अगस्त।

उत्पत्ति स्थान–

हिमालय पर्वत की भिलगना घाटी मे वनस्पति दुफन्द, हिलसी, खड़ारी, पवाली, ताली, किनकोलिया खाल, राजखर्क, आदि स्थानो पर २७०० मीटर से ३६०० मीटर की ऊचाई तक उपलब्ध है।

नाम–

हि०, गढवाली—विषकण्डारा। ले०–मोरिना लोगिफोलिया (Morina Longifolia Linn)।

उत्पत्ति स्थान—

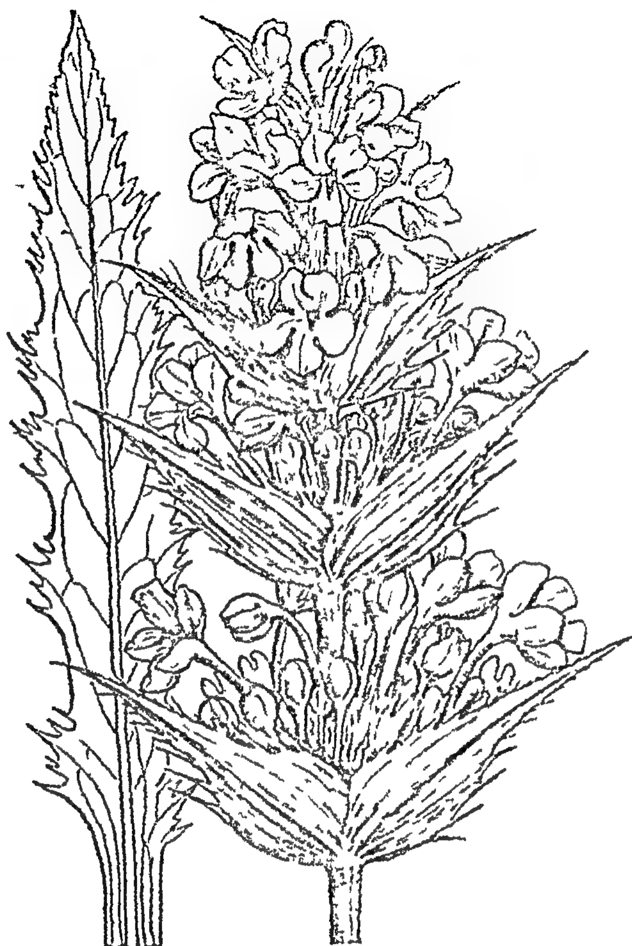
(१) विष कण्डारा के मूल को ग्रामीण लोग विशेष रूप से प्रयोग करते हैं। इसका मूल उस अवस्था में प्रयोग करते हैं यदि कोई फोड़ा निकल रहा हो तथा फोड़े के अन्दर पूय पड़ गई हो, रोगी को चीरा लगाना नहीं है तो विष कण्डारा के मूल को घिसकर बाँधने से फोड़ा फूटकर पूय बाहर निकल आती है।

(२) विष कण्डारा के पुष्पों की सुगन्ध लगातार सुंघने से मनुष्य को नशा सा आने लगता है। यह मेरा अनुभव है।

वक्तव्य—लेखक का विचार है कि कुछ हिमालय के (Alpine zone) उपलब्ध सुगन्धित पुष्प हैं जिनकी सुगन्ध मादकता से युक्त है। अत: इन पुष्पों से आयुर्वेदीय संज्ञा हरण तत्व निकाला जा सकता है।

इस विषय पर भी गवेषणा होनी आवश्यक है।

—श्री मायाराम जी उनियाल
कनखल (हरिद्वार)



विषकण्डारा
MORINA LONGIFOLIA WALL

विष्णुक्रान्ता (नीले फूल की शंखाहूली) (EVOLVULUS ALSINOIDES)

यह त्रिवृत्तादिकुल (Convolvulaceae) का नीले फूल की शंखाहूली या विष्णुक्रान्ता के क्षुप की छोटी-छोटी बेलें जमीन के ऊपर फैली हुई रहती है। यह अनेक शाखा प्रशाखा विशिष्ट बहुवर्षजीवी क्षुप है। काण्ड बहुत शाखा विशिष्ट प्राय: १ फुट से अधिक लम्बे, जमीन पर फैले हुए कोमल, तार सदृश सामान्यत: छाता सदृश धूसर रंग के। मूल २ से ६ इंच तक लम्बा, सफेद उग्रगंध युक्त, तीखी चरपरा स्वाद युक्त।

पत्र—छोटे और बड़े दोनों प्रकार के फैले हुए होते हैं। पत्तों का दण्ड छोटा ¼ से १ इंची लम्बा, जिह्वाकृति, अग्रभाग मोटा, सघन कोमल रोम से आच्छादित। इसके पौधे पर सफेद या भूरे रंग के मुलायम रोयें होते हैं।

फूल—नील वर्ण किंवा श्वेत वर्ण दोनों के अन्तर्गत, पत्तों के मूल से एक-एक पुष्प बाहर होता है। पुष्प वृन्त ½ इंची लम्बा, बीजकोष ½ से [illegible] इंची, इसमें ४ घर होते हैं प्रत्येक घर में एक बीज होता है।

वर्षा के आरम्भ में शीत व्यतिरिक्त फूलने और फलने का समय होता है।

उत्पत्ति स्थान—

समग्र भारतवर्ष में प्राय: [illegible] पैदा होती है, भागीरथी के पश्चिम के तीर [illegible] स्थानों में बहुत परिमाण में देखी जाती है। [illegible] पर्वतीय स्थानों में, सड़कों के, नालों के किनारे [illegible] तथा पथरीली भूमि में अत्यधिक परिमाण में होती है।

लोअर वरमा और अण्डमान द्वीप मे पैदा होते है।

नाम—

हि०—वीरी वादरी। ता०—वीरी वादरी। ब०—गोरशिंगिया। वरमा—ठाकुतमा। सिंहाली—डागा। मलयालय—निर्पोन्यालय। ले०—डोली केन्डोन स्पेथेसिया (Dolichandrone spathacea K Schum)

गुण धर्म और प्रयोग—

इसके बीजो को सोठ के साथ मिलाकर आक्षेप रोग के अन्दर देते है। बीज दूषकतानाशक है।

वृश्चिकाली (DALECHAMPIA INDICA)

यह एरडादि कुल (Euphorbiaceae) की एक लता होती है। वश्चिकाली की लता चातुर्मास मे वहुत देखी जाती है किन्तु कितनी ही जगहो पर वारहो मास भी देखी जाती है। इसका तना और शाखाए मुतली से स्लेट पेन जैसी मोटी खडी लाइनो वाली पीलास लिए हरे रग की और सफेद रु वाली युक्त होती है।

पान—एकान्तर फीके या गहरे रग के, दोनो ओर वालो की रोमावलि से युक्त और ३ गहरे खाचे वाले होते है। इसमे पास के दोनो खाचाओ की नीचे की किनार पत्र दड के पास गोलाई लिए मोटी या छोटे छोटे खाचाओ वाली होती है और वाकी खाचो के दोनो किनारे ज्यादा करके सकडे होते है। पान २ से ३ इच लम्वे किनारे पर दातेदार और वहुवा पतले होते है। पत्र दड १½ से ३ इच लम्वे नीम की शलाका जैसी पतली खडी लाइनो और सफेद वाल की रोमावली वाली होती है।

पत्र दड के मूल मे दोनो ओर सकुचित पतले पान होते है उन पर भी सफेद रोमावली होती है।

फूल—पुष्प धारण करने वाली शलाका पत्र कोण से निकली हुई होती है। यह १½ से २½ इच लम्वी, पत्र दड से पतली खडी रेखाओ वाली और सफेद वालो की रोमावली से युक्त होती है। इस पर एक एक फूल लगा हुआ होता है। पुष्प के नीचे दो चौडे पीले रग के किनारे वहुवा विभाजित हुए पुष्प पत्र होते है। इसमे हरे रग की खडी नसे और जाली होती है। इसके दोनो ओर सफेद वाल की रोमावली होती है। पुन्केसर वहुत और स्त्री केसर एक होती है।

फल—रोमावली युक्त, वीज गोलाई लिये हुये होते है। इस वेल को ऊट ओर वकरी खाती है।

इस वेल को स्पर्श करने से खर्ज हाथ मे लग जाती है जिससे सख्त खुजली और जलन होती है।

वक्तव्य—चरक, सुश्रुत के समय से वृश्चिकाली का प्रयोग होता है। दोनो ने तिक्त वर्ग मे वृश्चिकाली की गणना की है किन्तु दोनो मे स्वतत्र प्रयोग नही दिखाई देता। चरक मे अपस्मार मे दोवक्त, उन्माद मे एक जगह (महापैशाचिक घृत मे), उदर रोग मे एक वार, मृद भक्षणोत्पन्न पाडु रोग मे एक वक्त, दूसरे द्रव्यो के साथ वृश्चिकाली की योजना की गई है। सुश्रुत जी ने अर्कादिगण मे और विदारीगधादि गण में वृश्चिकाली की योजना की है। वात सशमन वर्ग मे भी वृश्चिकाली का नाम है। वागभट्ट मे भी चरक के समान ही उल्लेख है।

स्व० कतो भट्ट ने खाजवणी का सस्कृत नाम वृश्चिकाली रखा है। गुजराती वैद्य शोढल ने 'लघुकच्छुकरी' विशेषण वृश्चिकाली को दिया हे, इस पर ही कतो भट्ट ने खाजवणी को वृश्चिकाली ठहराया हो, क्योकि केवच के जैसी ही खुजली-जलन इस वृश्चिकाली के स्पर्श से होती है। ये ही मत आदर्श निघण्टु के कर्ता वैद्य वापालाल जी भाई को भी मान्य है।

नाम—

स०—वृश्चिकाली, कडरा दु स्पर्शा, अलिपर्णिका। हि०—वृश्चिकाली। गु०—खाजवणीनी वेल। पोरवन्दर—खाजोटी। ले०—डेलेचेम्पीआ इण्डिका (Dalechampia Indica)।

उपयुक्त अङ्ग—मूल।

गुणधर्म और प्रयोग—

वृश्चिकाली—वात को विध्वस करने वाली और सतति वर्द्धक है। वृश्चिकाली—पिच्छिल, अम्ल और अत्रवृ-

द्वि आदि दोष- (शोढल) नाशक है। (रा. नि)

वृश्चिकाली—शीत, वृष्य, पित्त वायु नाशक, सिध्म, अतिसार और वध्यादोष नाशक है [शोढल]

वृश्चिकाली—बल्य, तिक्त, चरपरी, विवर्णनाशक, हृद्य, उष्ण वस्ति शोधक, रक्तपित्त नाशक, अरुचिहर है। (नि र.)

[आ नि. से साभार]

"नानौषधि भूत जगति किञ्चिद् विद्यते" के अनुसार सृष्टि के समस्त पदार्थ प्राणिमात्र के रोगनाशन मे सहायक है। मानव का क्षेत्र सीमित है, अत उसने अपने उपयोग के लिये मुख्य मुख्य पदार्थो का सकलन कर शास्त्रो का निर्माण किया है। जब किसी वस्तु विशेष की खोज होने लगती है तो पार्श्ववर्ती अन्य पदार्थ भी प्रकाश मे आ जाते है या आवश्यकतानुसार लाये जाते है।

"वनौषधि विशेषाङ्क" के सम्पादन का शिवसङ्कल्प जो कि इस विशेषाङ्क के सम्पादन मे पूरा हो जाने की आशा है, इसके सम्पादको तथा इस संस्थान के सञ्चालको के सत्प्रयास से इन पाच विशेषाङ्को मे उन अधिकाधिक द्रव्यो का सकलन कर दिया है जिनके लिये विद्वानो को इधर-उधर भटकना पडता था। अस्तु, अब यहा पर प्रस्तुत प्रसङ्गानुसार वृश्चिकाली के सम्बन्ध मे कुछ परिचय प्रस्तुत किया जा रहा है।

मुझे सन् १९६५ मे 'मेडिसिन प्लाण्ट सर्वे यूनिट रानीखेत' के एक अधिकारी के रूप मे कार्य करने का अवसर मिलने पर उपर्युक्त दो औषधियो से परिचित होने का सुअवसर प्राप्त हुआ। नैनीताल, अलमोडा, गढवाल आदि पर्वतीय स्थानो मे यह पर्याप्त मात्रा मे देखने को मिलती है। वहा की भाषा मे वृश्चिकाली को सिसूण, सिन या विच्छूघास कहते है। इसका एक दूसरा भेद है, जिसे अवलो या अल्न कहते हैं।

वहा के निवासी सिसूण के कोमल पत्तो का और 'अलली' की फलियो का शाक बनाते हैं। इसके पत्तो तथा शाखाओ पर छोटे-छोटे काटे होते है जिनको तोडने पर भीतर से पानी निकलता है। इन काटो को छू देने पर हाथ मे फफोले पड जाते है, जलन होने लगती है यह गठिया रोग की उत्तम दवा है। आयुर्वेद मे इसका वर्णन इस प्रकार है—

वृश्चिका नक्रपर्णी च पिच्छिलाप्यलि पत्रिका।
वृश्चिका पिच्छिलाम्लाम्यादान्त्रवृद्धयादि दोषनुत् ॥
—अभिनव निघण्टु

सस्कृत मे नाम—वृश्चिका या वृश्चिकाली, नक्रपर्णी, पिच्छिला और अलिपत्रिका। हिं—बिच्छूघास। म—चिचुका। क०—इगुले, मासनाहोत्रगने।

गुण—पिच्छिल, लसदार, खट्टापन और अन्त्र वृद्धि नाशक।

इसका क्षुप स्थानानुसार ३ फीट से ६ फीट तक ऊचा देखा गया है। पत्तो का आकार पालक के पत्तो जैसा होता है। फूल—मञ्जरी के रूप मे होते है। बीज—काले, भूरे, चपटे गोल होते है। इस क्षुप के सर्वाङ्ग मे छोटे-छोटे काटे होते हैं।

ईश्वर की अपार कृपा है, जहा यह इतनी तेज लगने वाली औषधि होती है वही इसके दोष को शमन करने वाली एक बूटी होती है जिसको 'पीतमूला' कहते है। इसके पत्तो का रस चुपड देने से इसके द्वारा उत्पन्न दाह की शान्ति हो जाती है। इसका क्षुप आकार मे मूली के क्षुप के सदृश होता है।

चोट, मोच मे इसको लगाने से शीघ्र लाभ होता है। कटे स्थान से होने वाले रक्त प्रवाह को रोकता है। इसकी जड़ का क्वाथ विरेचक है। इसकी घास को खिलाने से पशुओ का दूध बढ जाता है।

विशेष—गठिया मे इसका ताजा ही प्रयोग लाभदायक होता है। पकडने की जगह के काटे चाकू आदि से खुरच ले। उसके बाद वेदना वाले स्थान पर इसको बार-बार छुआये, कई बार ऐसा करने से शीघ्र लाभ होता है।

—श्री वैद्य ब्रह्मानन्द त्रिपाठी एम ए
साहित्याचार्य, आयुर्वेदाचार्य,
अध्यक्ष—"सस्कृत विभाग"
डी ए वी कालेज, वाराणसी

वृक्षादनी—देखिये—बादा बडा, भाग ५ पृष्ठ ५० पर।

वेखरियो (INDIGOFERA TRITA)

यह शिम्बीकुल (Leguminosae) का नील की जाति का पौधा होता है। इसका पौधा २ से ३ फीट तक ऊचा होता है। इसके पत्ते तीन-तीन साथ लगते है। फूल कुछ बेगनी छाया लिए, लालरग के होते है। इसकी फलिया सीधी होती हैं और उन पर ४ से ५ खडी धारिया होती हैं। हर एक फली मे ८ से १२ तक बीज होते ह। ये बीज पीले रग के होते है।

नाम--

गु —वेखरियो, अडवा उगली। कन्नड-टोरमेथी ता —कन्दरम। ते —नक्कानाए। ले —इण्डिगोफेरा ट्रीटा (Indigofera Trita Linn)।

गुणधर्म और प्रयोग—

इसके बीज पौष्टिक होते है। इसके पौधे का रस एक पौष्टिक, रक्तशोधक और मूत्रल वस्तु की तरह दिया जाता है।

वेट्टि (APOROSA LINDEYANA)

यह एरण्डादिकुल (Euphorbiaceae) का एक छोटे या मध्यम कद का वृक्ष होता है।

उत्पत्ति स्थान—

यह पश्चिमी प्राय द्वीप और सीलोन मे पैदा होता है।

नाम—

स —वलाका। हि —वेट्टि। मलयालम—वेट्टि। ता — विट्टिल। कनाडी—सेराली। ले —एपोरोसा लिड लिएना (Aporosa Lindleyona Bali)।

गुण धर्म और प्रयोग—

इसकी जडका काढा पीलिया, ज्वर, मस्तकशूल, उन्माद और धातु दौर्बल्य मे दिया जाता है।

वेत—देखिये बेंत भाग ५ पृष्ठ १७४ पर, वेतस छोटा—छोटा वेतस देखिये भाग ५ पृष्ठ १७६ पर
वेतस बडा—देखिये वेतस बडा भाग ५ पृष्ठ १७५ पर

वेनकुरूंजी (BARLERIA COURTALLICA)

यह वासादिकुल (Acanthaceae) की एक झाडी नुमा वनस्पति है।

उत्पत्तिस्थान—

यह पश्चिमी प्रायद्वीप मे पैदा होती है।

नाम—

हि —वेनकुरू जी। मलय —वेनकुरुजी। दक्षिणी— चेयासाह चरम। ले —वार्लोरिया कोर्टेलिका (Barleria Coustailica Neet)।

गुण धर्म और प्रयोग—

इसकी जड का काढा सन्निपात और निमोनिया मे दिया जाता है और इसके पत्तो को तेल मे उबालकर उस तेल को आख और कान की बीमारी के काम मे लेते है।

वेलाईकन्द—देखिये-विदारीकद न १ भाग ५ पृष्ठ १४३ पर।

वेल्लाइन वेल (Eugenia Hemispherica)

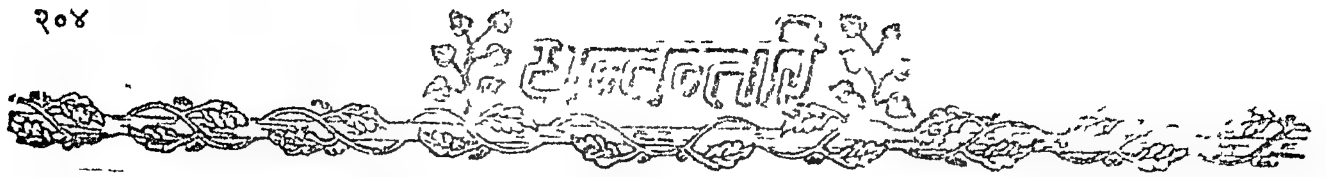
यह लवगादिकुल (Myrtaceae) का एक मध्यम कद का मुलायम छाल वाला वृक्ष होता है।

उत्पत्ति स्थान—

पश्चिमी प्रायद्वीप और सिलोन मे ४००० फीट की ऊँचाई पर होता है।

नाम—

हि —वेल्लाइन वेल। ता —वेल्लाइनवेल। कन्नड—वानेनिराले। मलय—पायनावेल। ले०—युगेनिया हेमिस्फो-



रिका (Eugenia Hemisphorica Wight)।

उपयुक्त अङ्ग–छाल।

गुण धर्म और प्रयोग—

इसकी छाल का काढा पित्त विकार और उपदंश रोग मे लिया जाता है।

वेल्लाकुरिंजी (PSYCHOTRIA CURVIFLORA)

यह मजिष्ठादिकुल (Rubiaceae) की एक वनस्पति होती है।

नाम—

हि.—वेल्लाकुरिंजी। मलय–तामिल वेल्लाकुरिंजी। ले०–सीचोट्रिया कर्विफ्लोरा (Psychotria Curviflora)

गुण धर्म और प्रयोग—

इसकी जड का काढा सन्निपात, निमोनिया, मस्तक की खराबी और आख, कान तथा गले की बीमारियो मे काम मे लिया जाता है। (व च)

वंसलोचन–देखिये–'वांस' भाग ५ पृष्ठ ५६ पर।

शकरकन्द [IPOMOEA BATATAS LAM]

यह शाकवर्ग और त्रिवृत्तादि कुल [Convolvulaceae] की एक लता होती है। कन्द सफेद और लाल दो तरह के होते है। लता जमीन मे बोयी जाती है और लता पर समय-समय पर मिट्टी चढाई जाती है और कृषि वर्षा मे की जाती है और कन्द आश्विन-कार्तिक मे मिट्टी को खोद कर निकाले जाते है। शकरकन्द भारत मे सब ओर खाने के काम मे लिया जाता है।

पत्र–कलमी शाक या नाडी शाक के मानीद। पुष्प १ इच लम्बा, बेगनी, पुष्पदल स्थानो मे अस्पष्ट होते है। पुन्केसर पुष्प के भीतर होती है। गर्भाशय ४ विभाग युक्त। बीज रोमयुक्त। यह दो प्रकार का होने से लाल या गुलाबी जाति वाले को लाल शकर कन्द और श्वेत वर्ण कन्द को शकर कन्द कहते है। शीतकाल मे फूल आते हैं। भारत वर्ष मे इसके फल नही होते। चित्रावलोकन कीजिये।

उत्पत्ति स्थान—

इसका मूल स्थान अमेरिका है और सारे भारत मे इसकी कृषि की जाती है।

नाम–

स०–स्वादुकन्दक, कन्दग्रन्थि, पिंडालु, पिंडीतक, मध्वालु। हि० शकरकन्द, मिता आलु। व०–शकरकन्द आलु, रागाआलु। गु०–साकरिया, रताल। म०—रतालु रतालु। सिंध–गाजर लाहौरी। उर्दू– शकर कन्द। प०–सरवर कन्द। फा०–लर्दक, लाहौरी जमीकन्द। ता०–विल्लि किलागु। तु०–केला गेदा। मलय—कपा कालेगा। कन्नड—गेनासु। कर्णा०–केंपिन हेडल, विलय हेडल। औत्क०–धरा आलु। अ०— स्वीट पोटेटो [Sweet potato]। ले०–इपोमिया बटाटाज Ipomoea batatas Lam]।

रासायनिक संगठन—

यह प्राय श्वेत सार, शर्करा, स्नेहादि से युक्त है। इसके सौ भागो मे ६८ प्र० श० गीला भाग, खुश्क भाग ४१ प्र० श० वसा २१ ४५ प्र० श०, कार्बोहाइड्रेटस् ६६.१८ प्र० श०, काष्ठ भाग १ ७५ प्र० श०, राख ३ १२ प्र० श० है।

लाल कन्द मे नेत्रोजन अधिक होता है। इसके सौ भागो मे १० २० भाग शर्करा और १६ ०५ भाग स्टार्च रहती है।

गुण धर्म और प्रयोग—

लाल शकर कन्द–शीतल, मधुर, श्रमनाशक, पित्त नाश, दाहनिवारण, वृष्य, बलकारक, पुष्टिजनक और भारी है।

सफेद शकरकन्द—मधुर, शीतल, मूत्रकृच्छ्र रोग नाशक, दाह निवारक, शोष नाशक, प्रमेह को हरने

वाले, वीर्य वर्द्धक, तृप्ति कारक और भारी है। यह कफ वात कारक है। (रा नि.)

यूनानी मतानुसार—

इसकी गठाने मीठी, मोटापा लाने वाली, प्रवाहिका को रोकने वाली और छाती तथा फेफडे को नुकसान पहुचाने वाली होती हैं। शकर कन्द मृदु विरेचक भी माना जाता है। मलाया मे इसके कन्द का पेय बनाकर ज्वर के अन्दर प्यास को बुझाने के लिए दिया जाता है। इसके कन्द से उत्तम जाति की शराब तैयार की जाती है। इसमे आलू की अपेक्षा शकर की मात्रा अधिक होती है मगर मांस वर्द्धक द्रव्य इसमे कम रहते है।

शकरकन्द—एक उत्तम खाद्य है। इसके कन्द कच्चे और भूनकर खाए जाते है। इसका हलुवा भी उत्तम बनता है।

शकर पिटन (EUPHORBIA ROYLEANA)

यह एरण्डादि कुल (Euphorbia Ceae) की थूहर की एक जाति होती है। इसका छोटा वृक्ष होता है। इसके हरएक अङ्ग में दूध होता है।

उत्पत्ति स्थान–

यह हिमालय मे सिन्ध से लेकर कुमाऊ तक ६ हजार फीट की ऊंचाई तक पैदा होती है।

नाम—

हि०—शकर पिटन, सेहुड, थूहर। प०—शकर पिटन थोर। रा०—थोर। देहरादून—थोर। गढवाल—सुराई लेटन—यूफोर्बिया रोयलिआना (Euphorbia Roylea-na Boiss)।

गुण धर्म और प्रयोग—

इसके दूधिया रस मे कृमिनाशक और विरेचक तत्व रहते हैं।

शकाकुल (TRACHYDIUM LEHMANI, BENTH)

यह गर्जर कुल (Umbelliferae) की वनस्पति की प्रसिद्ध जड (कन्द) है, जो आकृति मे छोटे गाजर के समान शीर्ष से निकला हुआ शल्काकार पत्र मुकुल युक्त, बाहर झुर्रीदार और लबाई के रूख गहरी रेखा युक्त और हल्के रग की, भीतर से सफेद, पिष्टमय, सहज मे टूट जाने वाली स्वाद निगारता जैसा, लेसदार और किंचिन्मधुर होता है। बाजार मे यह प्राय शकाकुल मिश्री के नाम से मिलती है और प्राय काबुल से आती है। विशेष जानकारी के लिए चित्र अवलोकन कीजिए।

उत्पत्ति स्थान—

फारस और मिश्र। यह भारत के कुछ स्थानो विशेषत: काश्मीर और अफगानिस्तान मे पाई जाती है।

नाम—

हि०—दुधाली, सताली, सँवाली, शलाकुल। अरबी—शकाकुल शस्काकुल। फा—गजरदश्ती। ले०—ट्रकीडिअम् लेहमन्नी (Trachydium Lehmani Berth)।

उपयुक्त अङ्ग—कद। मात्रा ३ माशे से ६ माशे तक।

गुण धर्म और प्रयोग—

वल्य, वाजीकर तथा स्तन्य जनन।

यूनानी मतानुसार—

प्रकृति-मल भूत द्रवयुक्त पहले दर्जे मे गर्म और दूसरे मे तर है।

शुक्रमेह और नपुसकता को नष्ट करने के लिए इसे चूर्णो और माजूनो मे डालते है। दूध बढाने के लिए इसका चूर्ण बनाकर स्त्रियो को खिलाते है। शरीर मे बलवर्द्धक और वाजीकरण के लिए इसका मुरब्बा सेवन किया जाता है।

अहितकर—क्षुधा को कम करती और शिर शूल जनक है।

निवारण—शहद। प्रतिनिधि—बूजीदान और हब्बुस्स-नोवर है।

(यू द्र. वि. से साभार)

शकाकुल मिश्री (ERYNGIUM CAERULEUM)

यह गर्जर कुल (Umbelliferae)का एक क्षुप जो बहु वर्षायु खडा नोकदार, काटेवाला, मूल लगभग गाजर सदृश सफेद पीला। ऊचाई दो-तीन फीट। नीचे अविभाजित, ऊपर प्राय नीलाभ। मूलोद्भव पान ५ इच लम्बे, पौने दो इच चौडे, लम्बे वृन्तयुक्त, हृदयाकार लम्ब गोल, अविभाजित,कगूरीदार,काटे रहित हथेली सदृश विभाजित,कुछ काटेदार खण्ड युक्त। पुष्प सामान्य गुच्छो मे प्रत्येक पुष्प पत्र युक्त पखडिया सफेद ऊपर-ऊपर। पुष्प पत्र ५-६ तारावृति। फल-लम्ब गोल, ३ मिलीमीटर ८½ इच लम्बा होता है।

उत्पत्ति स्थान--

काश्मीर, अफगानिस्तान, पर्सिया और तुर्कीस्तान।

नाम--

हिं०---शकाकुल मिश्री दूवाली। फा०--गजरदस्ती। अ०--हुसिए फतदिव। प --कण्डु, मिट्ठुआ, नुरालम, पहाडी गाजर, पोली। काश्मीर-शकाकुल। ले०---एरिन्जिअम् सीरुलिअम् (Eryngium Caeruleum Beib)।

उपयुक्त अङ्ग--कन्द। मात्रा ३-६ माशे।

गुण धर्म और प्रयोग---

शकाकुल मिश्री स्वाद मे किञ्चित मधुर लेसदार होता है। यूनानी मतानुसार यह वल्य, वातनाडी उत्तेजक, वीर्य बर्द्धक, वीर्य को गाढा बनाने वाला। कामोत्तेजक, रक्त मे लाली बढाने वाला और स्तन्य जनन है। इसका विशेष उपयोग नपुसकता, शुक्रक्षय, प्रदर और वातरोगो पर होता है। प्रसूता का दूध बढाने के लिए इसका चूर्ण दूध के साथ दिया जाता है। पर्सिया मे इसका पाक और मुरब्बा बनाते है, जो पौष्टिक और कामोत्तेजक गुण के लिए सेवन कराया जाता है। इसके अतिरिक्त इसका अर्क भी निकालते है। यह अफगानिस्तान से आती है।

क्षुधा बल से अधिक सेवन करने पर क्षुधा को मन्द करती है, और शिर दर्द की प्राप्ति कराती है।

(गा ओ र से साभार)

नोट---चकरौता मे पालीगोनेटम् वर्टिसिलेटम् (Polygonatum Verticillatum)की जड़ को शकाकुल कहते है। इसका पलाण्डु कुल (Liliaceae) का क्षुप है। तीनो का शास्त्रीय वर्णन, गुण धर्म पर अनुसधान कर आयुर्वेद जगत के सामने रखना चाहिए कि किन किन मे क्या क्या विशेषतायें है।

शजतुल बरागीस (AGRIMONIA EUPATORIA) (प्राचीन पाश्चिमात्य गाफिस)

यह गुलाब कुल (Rosaceae) का एक क्षुप है। यूनानी और रूमी हकीमो का यूपेटोरियोन एक हाथ या इससे अधिक ऊचा रोमश और कटीला क्षुप है। भॉग के पत्ते जैसे ऊपर की ओर हरे और नीचे की ओर रोमश, ५ इन्च या उससे लम्बे, ३-५ जोडे मे भालाकार दन्तुर पत्रको से युक्त, मध्यवर्ती पत्रक छोटे और अर्ध हृदयाकार एव दन्तुर (Stipules) से युक्त। पुष्पक्षुद्र पाच क्षुद्र, दलो वाले, रग मे पीले, पतले लम्बे पुष्प दण्ड पर स्थित। फल-क्षुद्र ऊर्ध्व शक्वाकार पनु का युक्त, अग्र पर अकुशाकार दृढ रोमो से युक्त, प्रत्येक फल दो बीज युक्त होते है, स्वाद- कषाय, किंचित तिक्त होता है। पुष्पकाल---जुलाई मास है। इसके शीघ्र बाद ही बीज परिपक्व हो जाते हैं।

उत्तरकालीन पूर्वात्य गाफिस की दर्यापत (खोज) मे पूर्व उसकी जगह इसी पाश्चिमात्य प्राचीन स्पेनीय गाफिस- शज्रतुल- बरागीस का उपयोग होता था। तदुपरान्त उसके स्थान मे वर्त्तमान गाफिस का (देखिये वर्णन त्रायमाण न० १ और न०२ मे भाग ३ के पृष्ठ ३८९ से ३९२ पर प्रकाशित हुआ है।) व्यवहार होने लगा। यही कारण है कि प्राचीन यूनानी निघण्टुओ मे गाफिस के वर्णन मे इन दोनो का मिलित वर्णन किया गया मिलता है, जो ठीक नही है। जान हिल एम० डी० ब्रिटिश हर्बल (सन् १७५१ ई०) मे विवरण करते है कि प्राचीनो द्वारा एग्रिमनी के प्रयोग की बहुत ही अभ्यर्थना की जाती थी, परन्तु वर्तमान व्यवहार मे वह अत्यधिक उपेक्षित एव

विस्मृत कर दी गई है।

कामला और आशयगत अवरोधो के उद्घाटन के लिए वे इसके उपयोग की अभ्यर्थना करते है।

उत्पत्ति स्थान—

समशीतोष्ण हिमालय, मुर्री और कश्मीर से सिक्किम खासिया पहाडी तक ४००० से ६००० फुट की ऊचाई पर होते हैं।

नाम—

भा०, वा०, हि०, अरवी—गज्रतुल वरागीस, शौक-तुल मुन्तिन (शौक —कण्टकी, मुन्तिन —बदबू, दुर्गन्धित), हशी शतुल गाफिस जिसे मखजन मे ऊवतरी लिखा है। फा०—सल। स्पेन—तुवाको। यू०—यूपेटोरियोन (Eupatorion)। अं० —एग्रिमनी। [Agrimony] स्टिक वर्ट (Stick wort) ले०—आग्रिमोनिआ ड्युपाटोरिआ (Agrimonia Eupatoria Linn)

वक्तव्य—पश्चिमी देश के अरव लोग इसको पहिले गज्रतुल वरागीस आदि नामो से और पीछे गाफिस नाम तथा फारस निवासियो ने यूनानियो के यूपेटोरिओन (अरवी रुपान्तर ऊवतूरी) के स्थान मे गाफिस नामक एक फारसी पौधे का ग्रहण किया, जो अद्यावधि भारतवर्ष (पूर्व) मे उक्त नाम से विकता है। भारतीय और फारसी हकीम गाफिम का वर्णन इस प्रकार करते है—

एक कटीला क्षुप जिसके पत्र भाग के पत्र की तरह और फूल लम्बे नीले रग के होते ह। उक्त वर्णन मे वे यूनानियो द्वारा दिये गए एग्रिमनी अर्थात् यूपेटोरिऔन के पौधे के वर्णन की प्रतिलिपि करते है और उसके साथ फारसी गाफिम अर्थात् जेनशन के फूलो का जिससे वे परिचित हे, आरोप करते हे। उनके द्वारा दिये गए इसके औषधीय गुण कर्म आदि गाफिस के न होकर एग्रिमनी (गज्रतुल वरागीस तुवाक) के है।

रासायनिक संगठन—

इसमे एक प्रकार का उत्पत् तैल होता हे।

गुण-धर्म और प्रभाव—

वल्य, मूत्र जनन, अवरोधोद्घाटक तथा कास, साधारण अतिसार और अन्य शैथिल्य मे गुणकारक है। २½ तोले क्षुप को एक पाइन्ट उवलते पानी मे डालकर फाण्ट तैयार कर मधु शर्करा मिलाकर आधे प्याले भर की मात्रा मे प्राय सेवन कराते हैं।

—श्री वैद्यराज हकीम दलजीत सिंह जी
आयुर्वेद वृहस्पति, आयुर्वेदीय विश्वकोषकार
चुनार (उ० प्र०)

शतावरी बड़ी (ASPARAGUS GONOCLODOS)

यह गुडूच्यादि वर्ग और पलाण्डु कुल (Liliaceae) की एक कटकीय छोटी झाडी होती है। गोनोक्लोडोस चारो ओर फलने वाली, वहुत शाखा और अच्छी तरह फैलने वाली पीताभ कुछ अग्र मे चढने वाली, काटेदार। पुष्प काण्ड कोमल नली सदृश शाखायें हरी तीन कोन वाली। पाव से आधा इच लम्बे ऊपर को मुडे हुए काटो वाली। पत्र शाखा २ से ६ तक, पौन से एक इच लम्बी, व्यास पाव इच तीक्ष्ण पत्रों वाली। पुष्प पत्र छोटे। पुष्प ⅒ इच के सफेद। तुर्रा १ से ३ इच लम्बा। फल—गोलाकार अति-सूक्ष्म, कन्द से शाखाये निकलकर चारो ओर फैलती हैं। अनन्तमूलो वाली कन्द अधिक दीर्घ स्थूल, कठोर, सफेद और मधुर। बाजार मे प्राय महा शतावरी मूल ही शुष्क होकर शतावरी के नाम से मिलती हैं। यह झाडी प्राय पर्वतो पर देखी जाती है। दोनो शतावरियो को गोल पीलु तुल्य फल आते है।

उत्पत्ति स्थान—

महाराष्ट्र, कोकण, कनाडा, मद्रास का पश्चिमी घाट।

नाम—

स०—महाशतावरी, सहस्रमूला, वरी। हि०—बड़ी शतावर। ब०—महा शतमूली। म०—बडी शतावरी। बोम्बे—शतावरी। ता०—किलावरी। ते०—पिल्लि-पिचारा। ले०—एस्पेरेगस गोनोक्लेडोस (Asparags



शतावर बड़ी
ASPAPAGUS GONOCLADOS BAKER

Gonoclados Baker) ।

रासायनिक संगठन—

महा शतावरी मे विशेष परिमाण मे शर्करा द्रव्य और गोद रहा है ।

उपयुक्त अङ्ग—मूल   मात्रा २ तोले से ४ तोले तक।

गुणधर्म और प्रयोग—

बडी शतावर हृदय को हितकारी, मेधाजनक, अग्निदीपक, शुक्रजनक, शीतवीर्य, बलकारक, वीर्यवर्द्धक, रसायन, बवासीर, सग्रहणी और नेत्र रोग को हरती है। शेष गुण इसके शतावर के समान है । (नि. र)

बडी शतावर—कफ-वातनाशक, कड़वी और रसायन कार्य मे श्रेष्ठ है । शतावरी के अकुर-कडवे, वीर्यवर्द्धक, हलके, हृदय को हितकारी तथा त्रिदोष, पित्त, वातरक्त, बवासीर, क्षय और सग्रहणी रोग का नाश करते है ।

शतावर (ASPASAGUS RACEMOSUS)

यह गुडूच्यादि वर्ग और पलाण्डुकुल (Liliaceac) की एक लता होती है । एस्पेरेगस=अति काटेदार । रेसेमोसस=चूडाकार रचना वाली । ग्रीष्मारभ मे निकलने वाली छोटी, काटेदार कन्दयुक्त बेल । १-१॥ गज बढने पर एक ओर मुडकर बाड या वृक्ष पर बहुत ऊची चढ जाती है । इसमे कुछ-कुछ अंतर पर काटे तीक्ष्ण पाव से आधा इच लम्बे, वक्राकृति होते है । शाखाये चारो ओर अत्यधिक फैली हुई । पत्र पुष्प विहीन लता देखने मे काटे वाली सफेद झाडी (तना) जैसी दिखाई देती है । पत्र शाखा एकान्तर २ से ६ इञ्च तक । पान-इसके पत्ते बहुत महीन पौन से एक इन लम्बे सोया के पत्तो की तरह होते है ।

पुष्प—इसके फूल नवम्बर मे सफेद सुगन्धित और छोटे होते है । पुष्प मजरी (तुर्रा १ से २ इच लम्बा) पुष्प व्यास १/५ से २ लाइन जितना होता है । पुष्प एक ही वक्त हजारो खिलते है जिससे इसकी सारी लता सफेद दिखाई देती हैं । वाह्यान्तर कोष ६, पुकेसर ६ पराग कोष हलका पीला और पराग रज केसरिया रग की होती है । स्त्री केसर १, गर्भाशय हरे पीले रग का ।

फल—शीतकाल के अन्त मे लाल रङ्ग के छोटे आते है । ये काली मिर्च या चने के दाने जैसे चिकने और चमकदार होते है । इनमे कुछ गोल और कुछ तिकोने होते है । बीज १ से २ तक निकलते हैं, ये रङ्ग मे काले, व्यास १/४



इची। कद मे से सैकड़ो उपमूल निकलते है, ये उपमूल अगुली जैसे मोटे १ से १॥ फीट लम्बे, धूसर, पीले, स्वाद मे कुछ मधुर, फिर कडवे, वास कुछ कड़वी। एक-एक वेल के नीचे से शत सख्या या जड़ समूहो से दश-दश सेर तक शतावरी की जड़ें प्राप्त हो जाती है। इन जडो के ऊपर भूरे रग का पतला छिलका रहता है। इस छिलके को निकाल देने पर भीतर से दूध के समान सफेद रग की जडे निकलती हैं। इस मूल के बीच मे कडा एक रेशा होता है जो गीली और सूखी अवस्था मे निकाला जा सकता है। कद के ऊपर की ओर जमीन पर वेल के तने और जमीन मे लम्बे सुतली से अगुली के समान मोटी जडे निकलती है। तने का छिलका हटाने पर अन्दर का भाग हरा होता है। कन्द प्रतिवर्ष बढता जाता है और अनेक वर्षो तक रहता है।

उत्पत्ति स्थान–

समग्र भारतवर्ष, भारत के समशीतोष्ण और उष्णप्रदेश सिलोन मे, हिमालय मे ४००० फीट की ऊचाई तक। अफ्रीका के उष्णप्रदेश, जावा और आस्ट्रेलिया मे। हुगली, हावडा, २४ परगना के जगलो के किनारे, बगाल मे वर्धमान, बाकुन्ज जिलो मे। राजस्थान मे उदयपुर जिले की अरावली पर्वत श्रेणियो मे बहुत होती हैं।

इसकी उप जाति (A. R. Javannica) दक्षिण पेनिनसुला और जावा मे होती है। अन्य उपजाति (A - R Varprainii) विहार से होती है। तीसरी उप जाति (A R. Subarose) सिक्किम मे होती हैं।

नाम—

स—शतमूली, शतावरी, सहस्र वीर्या। हि.—शतावर, शतमूली, शतावरी। व.—शतमूली। शतावरी। म—सतावर। प—सतावर। उर्दू—सतावर। फा—सतावरी। कन्नड—सतमूली। ता—सदावरी, शिमाइ, शदावरी। ते—सदावरी। मलय—शतावली। काश्मीर—सेझना। सिन्ध—तिलोरा, सातावारिप। आसाम—शतमूली। ब्रह्मी—कनयोमी। म. प्र—सितावर। अ—वाइल्ड एस्पेरागस (Wild asparagus)। राज.—नाहर काटा। सौराष्ट्र—गनवेल, हकुजकटो, एकल कंटो। सताली—केदार नली। ले—एस्पेरागस रेसीमोसस (Asparagus racemosus wild)

रायनिक संगठन—

इसमे प्रचुर प्रमाण मे शर्करा द्रव्य और लवाब होता है।

उपयुक्त अङ्ग—मूल। मात्रा—चूर्ण ३ से ६ माशा। स्वरस ½ से २ तोला तक।

नोट—उपयोगार्थ शतावरी सदा गीली लेनी चाहिये।

गुण धर्म और प्रयोग—

सक्षेप मे रस मधुर। अनुरस–तिक्त। गुण–गुरु, शीत, स्निग्ध, मृदु। वीर्य—शीत। विपाक—मधुर।

आयुर्वेद मतानुसार–शतावर भारी, शीतल, कडवी, रस और विपाक में मधुर, वीर्य मे शीत, रसायन, बुद्धि वर्द्धक, अग्निदीपक, पौष्टिक, स्निग्ध, नेत्रो को हितकारी, गुल्मनाशक, अतिसारनिवारक, कामोद्दीपक, स्तनो मे दूध वढाने वाली, बल्य, वात, रक्तपित्त और सूजन को दूर करने वाली है। —भा प्र

राज निघण्टु के अनुसार–शतावरी शीतल, कडवी, मधुर, क्षय, रक्तपित्त, वातपित्तनाशक, वीर्यवर्द्धक और रसायन कर्म मे श्रेष्ठ है।

निघण्टु रत्नाकर के अनुसार–शतावरी मधुर, शीतल, वीर्यवर्द्धक, कडवी, रसायन, भारी, स्वादिष्ट, स्निग्ध, दूध, वढाने वाली, अग्निदीपक, बलकारक, बुद्धिवर्द्धक, कामोद्दीपक, नेत्रो को हितकारी, पौष्टिक तथा वातपित्त, कफ, क्षय रुधिर विकार, गुल्म, सूजन और अतिसार को दूर करने वाली होती है। शतावरी–वातपित्त, प्रमेह, रक्तपित्त नाशक और अतिसार हर है। —राज.

महर्षि चरक के अनुसार—शतावरी अवस्था स्थापक, वृद्धावस्था से रक्षा करने वाली और वीर्यवर्द्धक होती है।

महर्षि सुश्रुत के अनुसार–शतावरी रस मे मधुर, उपरस कड़वा, वृष्य और वातपित्त शामक है।

शतावर के अकुर–कफघ्न, पित्तशामक और रस मे कडवे है।

यूनानी मतानुसार—

शतावरी किंचित मधुर कामोत्तेजक, सारक, क,फनि-

सारक, स्तन्यजनन, पौष्टिक तथा वृक्क विकार, यकृद रोग, मूत्रजनन, सुजाकजन्य मूत्रनलिका प्रदाह और सुजाक रोग मे उपयोगी है ।

नवीन मतानुसार–शतावरी, शीतल, स्नेहन, मूत्रजनन, कामोत्तेजक, बल्य, आक्षेपहर, रसायन, शुक्रजनन, अतिसार और प्रवाहिका नाशक है । विशेषत पशु चिकित्सा मे स्नेहन रूप से व्यवहृत होती है । डाक्टर खोरी ने पुष्टिकर बल्य, स्नेहन और स्तन्यजनन कहा है । एव शतावरी उपयोगी है । मूत्रावरोध–मूत्रकृच्छ्र मे अन्य मूत्र विरेचन औषध के साथ मिलाकर शतावरी दी जाती है । पौष्टिक होने से शुक्र क्षय और श्वसन संस्थान के विकारो पर प्रयुक्त होती है ।

शतावरी–आयुर्वेद की प्रसिद्ध ओषधि है। चरक संहिता के भीतर बल्य और वय स्थापन दशेमानियो मे अतिरसा (शतावरी) का उल्लेख किया है । एव आसव द्रव्य समूह, शाकवर्ग और मधुर स्कन्ध मे भी शतावरी को स्थान दिया है । इसी तरह सुश्रुत संहिता के भीतर शाकवर्ग, वात-संस्थान वर्ग, पित्त शमन वर्ग तथा विदारीकन्वादि, वरुणादि और कण्टकमूल इन गणो मे शतावरी का उल्लेख किया है ।

आयुर्वेद मतानुसार—

वात, पित्त, कफ तीन दोष मुख्य है । इनमें पित्त और कफ को पंगु कहा है । वात ही मुख्य हे । वात के आधार पर ही देह का पूरा पूरा आधार हे । वात धातु विद्युन्मय प्राण रूप है । इसका स्थान नव्य चिकित्सको की भाषा मे वात संस्थान (Nervous System) है । संस्थान का केन्द्र मस्तिष्क मे है । और वात नाडिया आदि समस्त देह मे फैले हुए है । जिस तरह वायु मण्डल मे विद्युत सर्वत्र फैला है, उसी तरह वात धातु इस संस्थान मे सर्वत्र विचरण करता रहता है । इस वात संस्थान और वातधातु को पुष्ट बनाती है । इस हेतु से मेधा, बुद्धि, मानस शक्ति और देह के अङ्ग–उपाग सब सबल बनते हैं । इस बात का अनुभव करके धन्वन्तरि और राज निघण्टुकार ने शतावरी को उत्तम रसायन रूप कहा है । एव श्री वाग्भट्टाचार्य जी ने भी लिखा है कि जो मनुष्य शतावरी कल्क और शतावरी स्वरस से सिद्ध किया हुआ गोघृत शक्कर के साथ सेवन करते रहते है । उसके देह को व्याधि रूप डाकू नही लूट सकेंगे ।

शतावरी का मुख्य गुण मधुर इसके अनुरूप प्राप्त होना है मधुर,स्निग्ध और गुरु गुरु युक्त औषधि शामक होती है । मधुर रस, तिक्त, उपरस और शीतवीर्य होने से पित्तशामक गुण दर्शाती है एव गुरु स्निग्ध और शीतवीर्य के कारण कफ धातु को पुष्ट बनाती है । इस तरह शतावरी तीनो दोषो पर प्रभाव पहुचाती है ।

मधुर रस प्रधान होने से त्रिदोष, रसादि सप्त धातु और स्तन्य आदि उपधातु, सबको शतावरी बल प्रदान करती है ।

सामान्यत जो द्रव्य रस धातु को बल प्रदान करें, वे परपरागत सब धातुओ को पुष्ट करते है । किन्तु शतावरी तो मास, शुक्र और स्तन्य को विशेष रूप से बल प्रदान करती है । इसी हेतु से चरक संहिताकार ने शतावरी की गणना बल्य और वयस्थापन महाकषायो मे की है ।

शतावरी सेवन से वात धातु और वातनाडिया सबल होने पर समस्त वातरोग, अर्दित, मन्यास्तम्भ, स्वरभेद, जिह्वास्तम्भ, हनुग्रह, बाहुपीडा, कुब्जवात, कटिवात, कम्पवात, गृध्रसी, उरुस्तम्भ,सधिवात, आमवात,अपस्मार, हिस्टीरिया और वातरक्त आदि मे लाभ पहुँचाता है ।

शतावरी मे शीतल, मूत्रजनन गुण भी उत्तम कोटि का हे । इस हेतु से रक्त मे से विष बाहर फेका जाता है और मूत्रावरोध, मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, मूत्रदाह, रक्तमेहादि प्रमेह दूर होते हे । एव आमाशय, यकृत्, फुफ्फुस और गर्भाशय पर परम्परागत लाभ पहुँचाने के कारण अम्लपित्त, वृद्ध की निर्बलता, पित्ताशय शूल, रक्तपित्त, रक्तातिसार, रतौंधी (नक्तान्ध्य), पित्तप्रदर, मासिक धर्म मे विकृति, वध्यत्व आदि को दूर करने मे अच्छी सहायता पहुचाता है। इनके अतिरिक्त शतावरी प्रधान तैल (महा विष्णु तैल और नारायण तैल) का वातरोग पर मर्दनार्थ प्रयोग होता हे । संक्षेप मे शतावरी वात, वातकफ और वातपित्त प्रधान रोगो को शमन करने मे श्रेष्ठ औषधि मानी गई है ।

रसायनार्थ–(अ) शतावरी कल्क १ भाग, गोघृत ४ भाग और शतावरी का स्वरस १६ भाग यथाविधि रूप से

सिद्ध कर, शक्कर (शक्कर या शहद) मिलाकर सेवन करते रहने से शरीर निरोगी और सबल बना रहता है। पाण्डु, हृदय की निर्बलता, दृष्टिमांद्य, शारीरिक कृशता और शुक्र की निर्बलता आदि दूर होते है।

(आ) शतावरी, मुण्डी, गिलोय, शालपर्णी और काली मूसली इन ५ औषधियो को समभाग मिला चूर्ण कर १-१ तोला रोज सुबह घृत-शहद या घृत शक्कर, के साथ सेवन करते रहने पर अकाल मृत्यु दूर हो जाती है तथा कान्ति और बुद्धि की वृद्धि होती है।

पुष्टि और कामोत्तेजनार्थ—(अ) शतावरी का स्वरस और दूध १०-१० सेर मिला उसमे एक सेर गोघृत डाल विधिवत् सिद्ध करे। फिर शहद, शक्कर और पिप्पली मिलाकर सेवन करते रहे तो शरीर सबल बनता है। वीर्य सुदृढ होता है और कामोत्तेजना उत्पन्न होती है।

(आ) शतावरी, गोक्षुर, कोच के बीज छोटे, गगेरन की छाल, असगन्ध और तालमखाना, इन ६ औषधियो को समभाग मिलाकर कपड छान चूर्ण करे। फिर दूध और शक्कर के साथ रोज रात्रि को सेवन करते रहने पर शुक्र गाढा होता है और कामोत्तेजना की वृद्धि होती है।

वातज्वर—शतावरी और गिलोय का स्वरस निकाल निवायाकर गुड मिलाकर प्रात साय लेते रहने पर ३ दिन मे वातज्वर शमन हो जाता है।

रक्तातिसार—शतावरी के कल्क को बकरी के दूध के साथ सेवन करने पर स्तनो मे दूध बढ जाता है और दूध मधुर, पौष्टिक भी हो जाता है।

वातजकास—शतावरी के मदोष्ण क्वाथ मे पीपल का चूर्ण मिलाकर प्रात. साय पिलाते रहने से वातज कास और शूल नष्ट होता है।

राजयक्ष्मा (अ)—शतावरी रस १६ सेर, दूध ४ सेर, शतावरी कल्क २० तोले और गोघृत १ सेर मिलाकर विधिपूर्वक घृतपाक करे। फिर उसमे से प्रात साय १-१ तोला या अधिक सेवन करते रहने से फुफ्फुस क्षत भरने लगते है। साथ-साथ यक्ष्मा नाशक औषधि का सेवन करना चाहिए।

(आ) शतावरी, विदारी कन्द, असगन्ध, हरड, पुनर्नवा, खरेंटी की जड, गगेरन, महदेवी की जड और गोखरु इन औषधियो को समभाग मिलाकर चूर्ण करे। उसमे घी मिलाकर चाटने योग्य लेह बना लेवें। इसमे से १ से २ तोला लेह दिन मे २ बार बकरी या गाय के दूध के साथ सेवन करते रहने पर हृदय की धडकन, हृदयरोग, शुक्रक्षय और शोष रोग दूर होते है।

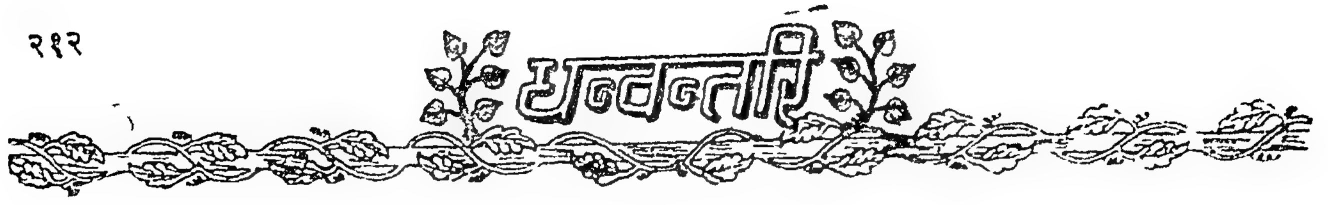
मदात्यय—शतावरी का स्वरस, पुनर्नवा क्वाथ, गोदुग्ध और गोघृत ४-४ सेर और मुलहठी कल्क ४० तोले मिला यथा विधि पाक कर घी सिद्ध करे। इस घृत का भोजन के साथ पाचन हो उतना सेवन करते रहने से शराब जनित बुद्धि ह्रास, स्मृतिनाश, यकृत्वृद्धी, श्यामवर्ण और शक्ति ह्रास आदि सब लक्षण दूर हो जाते है। शराब को छुडा देना चाहिये। पथ्य का पालन करना चाहिए और ब्रह्मचर्य का आग्रह पूर्वक सेवन करना चाहिये। [गा औ र]

रक्तपित्त [अ]—शतावरी का कल्क २½ तोले जल ४० तोले और दूध ४० तोले मिला दुग्धावशेष क्वाथ कर प्रात. साय पीते रहने से सब प्रकार के पित्त प्रकोप, दाह शूल और रक्तपित्त दूर हो जाते हैं।

[अ] शतावरी, मुलहठी, खरेंटी, कुश और बडे गोखरू समभाग मिलाकर २½-२½ तोले का क्वाथ करे। फिर शीतल कर गुड या मधु और शक्कर मिलाकर प्रात साय सेवन करते रहने पर रक्त, दाह, शूल और दाह सह ज्वर दूर होते है।

अम्लपित्त—शतावरी कल्क ४० तोले, जल और दुग्ध ५-५ सेर, गोघृत १ सेर मिला यथाविधि घृत सिद्ध करें। फिर इसमे से १ से २ तोला घी [शक्कर मिलाकर] भोजन के साथ करते रहने पर अम्लपित्त, रक्तपित्त वातपित्त प्रकोप, तृषा, मुर्च्छा, प्रतमक श्वास और घबराहट आदि दूर होते है।

जीर्ण सिरः शूल (अ)—शतावरी और जीवन्ती का रस तथा गोदुग्ध तीनो ४-४ सेर के साथ गोघृत और तिल का तैल १-१ सेर तथा शतावरी और जीवन्ती का कल्क २० तोले मिला यथाविधि यमक सिद्ध करें। इसका नस्य कराते रहने पर शिर शूल, नक्तान्ध्य, दृष्टि मांद्य, बधिरता, स्मृतिह्रास, घ्राण शक्ति ह्रास आदि विकार दूर



होते हैं। कफ पीडित रोगी प्रतिश्याय और अपस्मार के रोगी के लिए भी यह नस्य हितावह है।

[आ] शतावरी, काले तिल, मुलहठी, नीलोफर, दूव और पुनर्नवा की जड इनको समभाग मिला जल मे पीस-कर शिर पर लेप करने से सूर्यावर्त्त और जीर्ण शिर शूल दूर होते है।

स्वरभेद—शतावरी का चूर्ण गोमूत्र के साथ सेवन करने पर या शतावरी के चूर्ण के साथ कुलिंजन मिलाकर सेवन करने पर कफ प्रकोप से उत्पन्न स्वरभेद दूर हो जाता है।

अन्तरार्श—अर्श के मस्से जो बाहर से नही देखे जाते वह शतावरी का चूर्ण २-४ मास तक दूध के साथ सेवन करने पर दूर हो जाते है।

पित्ताशय शूल—जीर्ण रोगो मे रोज सुबह शतावरी का रस शहद मिलाकर पीते रहने से २-४ मासमे पित्ताशय-स्थ विकृति दूर हो जाती है फिर दाह और पित्त प्रकोप सह शूल शमन हो जाता है। हृदय शूल, वस्तिशूल और गर्भाशय शूल मे भी शतावरी स्वरस के सेवन से लाभ पहुँच जाता है।

अपस्मार—शतावरी का स्वरस ४-४ तोले दिन मे २ बार सेवन करे और दूध भात पर रहे तो २१ दिन मे अपस्मार दूर हो जाता है।

प्रमेह—शतावरी का स्वरस २-२ तोले प्रात साय दूध के साथ सेवन करते रहने से वातज, पित्तज और कफज सब प्रकार के प्रमेह दूर हो जाते हैं। सूचना-प्रमेह के रोगी प्रात साय सुविधा और शरीर बलानुसार खुली वायु मे घूमते रहें, तो विशेष लाभ पहुचाता है।

रक्तमेह—शतावरी और गोखरु का दुग्धावशेष क्वाथ प्रात साय सेवन कराने और पथ्य पालन करने पर मूत्र-मार्ग से रक्त जाना, यह विकार पीडा सह दूर हो जाता है। [च चि अ ४]

मूत्रकृच्छ्र [अ]—शतावरी के क्वाथ मे शहद मिश्री मिला कर सुबह पिलाते रहने से मूत्रावरोध, मूत्रदाह और मूत्रकृच्छ्र दूर हो जाते हैं।

[आ] शतावरी का स्वरस २ से ४ तोला और उतना ही दूध मिलाकर पिला देने से मूत्रावरोध दूर होकर तुरन्त पेशाव साफ हो जाता है।

मूत्राघात—शतावरी मूल, गोखरु मूल और भूमि आवला तीनो का स्वरस मिलाकर ४-४ तोले २-२ घण्टे पर २-३ वार लेने पर भयकर मूत्राघात [जिसमे मूत्रोत्पत्ति विलकुल वन्द हो गई हो] दूर हो जाता है।

अश्मरी—मूत्र के साथ अश्मरी कण या रेती आने पर शतावरी स्वरस को दूध मे मिलाकर या शतावरी मूल का चूर्ण जल से या शतावरी का क्वाथ प्रात. साय लेते रहने पर एक सप्ताह मे अश्मरी निकल जाती है और नयी उत्पत्ति बन्द हो जाती है। पुराना रोग हो तो २ से ४ मास तक शतवरी का सेवन करते रहना चाहिए।

मूर्च्छा—शतावरी, खरटी की जड और मुनक्का को दूध जल मे पकाकर पीने से भ्रम (मूर्च्छा), विकार दूर हो जाते है।

वातरक्त—शतावरी का स्वरस ८ सेर, शतावरी कल्क २० तोले, गोदुग्ध और गोघृत २-२ सेर मिला यथा विधि मदाग्नि पर घी सिद्ध करें। इसमें से प्रातः साय १ से २ तोले तक १-१ माशा गिलोय सत्व मिलाकर सेवन करने से सब लक्षणो सह वातरक्त और कुष्ठ शमन हो जाते है।

रक्तविकृति—शतावरी स्वरस मे दूनी शक्कर मिला कर शर्बत बनावें। उसमे केशर, जायफल, जावित्री और छोटी इलायची मिलावे। मात्रा २ से ४ तोले दिन मे दो बार दूध के साथ मिलाकर ४२ दिन तक सेवन करने पर सब प्रकार के विष जल जाते है, कुछ विष मूत्र द्वारा बाहर निकल जाते है और रक्त प्रसादन हो जाता है।

शीतला विष दमनार्थ—शीतला निकलने पर शतावरी का क्वाथ पिलाते रहने पर विष अधिक नही फैल सकता।

वात पित्तज विसर्प—शतावरी और विदारीमूल को धोये हुए घी मे घिसकर लेप करते रहने से विष नष्ट होकर विसर्प दूर होजाता है।

जीर्ण वृक्क प्रदाह—इस रोग मे पेशाव के साथ पूय, लसीका, रक्त और कभी कभी श्लैष्मिक कला के टुकडे निकलते रहते हे। पेशाव गदला और दुर्गन्ध युक्त होता है। इस रोग मे मुह पर कुछ शोथ भी आजाता है। इस

रोग पर शतावरी, गिलोय, गोखरू और पुनर्नवा का क्वाथ करके प्रात सायं ३-४ मास तक देते रहने से लाभ पहुच जाता है।

नक्तान्ध्यः—घी मे शतावरी के कोमल पानो का शाक बनाकर सेवन करते रहने पर रतौंधी दूर हो जाती है।

स्तन्य वृद्धि के लिए—शतावरी को गोदुग्ध मे पीस दूध के साथ सेवन करने पर स्तनो मे दूध बढ जाता है। और दूध मधुर तथा पौष्टिक भी हो जाता है।

हिस्टीरिया—शतावरी घृत भोजन के साथ सेवन कराने और प्रात साय शतावरी का क्वाथ पिलाते रहने से हिस्टीरिया और सब प्रकार के वात प्रकोप दूर होजाते है। साथ साथ शतावरी तैल (नारायण तैल) की मालिश भी कराते रहे, तो सत्वर लाभ पहुचता है।

वक्तव्य—प्राचीन काल मे वात रोगो पर नारायण तैल की वस्ति देते थे यह विधि अधिक हितावह है।

वन्ध्यत्व—शतावरी घृत (फल घृत) का सेवन भोजन के साथ कराते रहने से गर्भाशय और बीजाशय विकृति दूर होती है और गर्भ धारण हो जाता है।

व्रण रोपणार्थ—शतावरी के पत्तो का कल्क कर दूने घी मे तले। फिर अच्छी तरह पीसकर उसकी पट्टी लगाते रहने से पुराना व्रण भी भर जाता है।

पित्त प्रदर—पतला गर्म गर्म जल गिरता हो तो शतावरी का रस या शतावरी चूर्ण को १२ घण्टे भिगोकर किया हुआ क्वाथ प्रात. साय पिलाते रहने पर प्रदर दूर हो जाता है और शरीर सबल हो जाता है। शतावरी का चूर्ण १ तोला २० तोले दूध मे उबाले फिर मिश्री मिलाकर पिलाते रहने से १४ दिन मे सब प्रकार के प्रदर दूर हो जाते है।

वाजीकरण—शतावरी का पाक बनाकर सेवन करने अथवा दूध के साथ इसके चूर्ण की क्षीर बनाकर खाने से से मनुष्य की काम शक्ति जागृत होती है और उसका वीर्य बढता है।

सूखी खासी—शतावरी, अडूसे के पत्ते और मिश्री को औटाकर पीने से सूखी खासी मिटती है।

अनिद्रा—दूध मे शतावरी के चूर्ण की क्षीर बनाकर उस क्षीर मे घी मिलाकर खाने से अनिद्रा के रोगी को नीद आती है। (ग. च)

नहरुये पर—३ तोला शतावर की जड, १ माशा कालीमिर्च चूर्ण, इन दोनो को मिलाकर आधा सेर पानी मे क्वाथ करे जब १ छटाक पानी शेष रह जाय तब उतार छानकर दोनो वक्त मदोष्ण पिलावे। इससे नहरुआ, पूयमेह और सखिये के विष की विकृति मिटती है।
(वृ बूटी प्रचार)

स्वप्नदोषहर पेय—शतावर २ तोले, मिश्री ३ तोला, दूध आधा सेर, ताजा जल आधा सेर।

विधि—शतावर को हमाम दस्ते या पत्थर पर जौ कुट करले और चारो चीजो को नई हाडी मे औटावे या कलईदार डेगची मे, जब पानी जल जाय और केवल दूध शेष रह जाय, उतार छानकर पिलावे। इसी प्रकार प्रात साय पिलावे।

गुण—कुछ समय पीने से स्वप्न दोष का पता नही रहता, धातु ठीक हो जाती है और शरीर में नव स्फूर्ति मालूम होने लगती है आजमूदा है।

स्वप्नदोष हर चूर्ण—ताजी शतावर की जड़ का चूर्ण २० तोले, मिश्री ३० तोले कूटपीस छानकर सुरक्षित रखले। मात्रा ६ माशे से १ तोला तक। अनुपान—उत्तम शहद १ तोला और घी ६ माशा मिलाकर चाटले। गुण—प्रमेह, स्वप्नदोष दूर होकर शरीर पुष्ट होता है।
(ध. बू. चि.)

शतावरी चूर्ण (वाजीकरण)—शतावरी, मूसली सफेद, गोखरू, कौंच के बीज छोटे, कघी की छाल, तालमखाने इन छ औषधियो को जवकुटकर दूध मे डालकर पकावें और उसमे दो छुहारो में जरासी अफीम (१/३ रत्ती) रखकर छोड दे। सवा सेर दूध का डेढ पाव दूध रह जाय तब उसको उतार कर २ तोला मिश्री मिला पी लेना चाहिये।

गुण—इससे स्त्री समोग की शक्ति दूनी हो जाती है।

रक्तपित्त पर—शतावर का चूर्ण ६ माशा, बबूल के कोमल शूल नग १२, नीम की सीको का पिछला हिस्सा नग १२, गिलोय ताजा ३ माशा को औटाकर चतुर्थांश जल शेष रहने पर शहद मिलाकर ३ मात्रा करले और दिन में ३ वक्त दें। अवश्य ३-४ दिन मे लाभ होकर रक्त-

पित्त विलकुल शाद हो जायेगा ।

नोट—रक्तपित्त की पहले जाच कर लेनी चाहिए कि वास्तविक रक्तपित्त हे या फुफ्फुसावरण शोथ है या उर क्षत ।

रक्तपित्त की पहिचान—वीमार का खुन लेकर कौवे को डालना चाहिए अगर रक्तपित है तो कौवे उसे नही खायेंगे ओर रक्तपित्त नहीं हे तो कोवे उसे खाजायेगे । रक्तपित्त का निश्चय हो जाने पर निम्न प्रयोग रक्तपित्त वाले को देखकर तत्काल फायदा उठावे । फुफ्फुमो से रक्त आने पर भो इस रामवाण प्रयोग को काम मे ले ।

पथ्यापथ्य—शास्त्रानुसार ।

आघात पर बाहरी प्रयोग—आघात होने से बाहरी व्रण होकर रक्त का प्रवाह हो जाता है तो तत्काल ही शतावर का चूर्ण अनुमानत ६-४ माशा ले लो और उसमे स्फटिका चूर्ण १-२ माशा मिलावे और रुई को पानी मे भिगोकर ऊपर पट्टी वाध दे । फौरन ही खून वन्द हो जाये गा और व्रण पकेगा नही ।

भीतरी आघातो पर प्रयोग—शतावर का चूर्ण ३ माशा, शुद्ध स्फटिका का चूर्ण १ माशा, ऐसी ३ मात्रा वनाकर शक्कर के साथ दिन मे ३ बार सेवन करना चाहिए। [आ म सम्मेलन पत्रिका से]

विशिष्ट योग—

१ शतमूली क्वाथ. (ला० सं० । स्था० २ अ०३२) शतावर के मन्दोष्ण क्वाथ मे पीपल का चूर्ण मिलाकर पीने से वातज कास और शूल का नाश होता है ।

२ शतावरी कल्क (१) (ला० स० । स्था० ३ अ०२३)—शतावर, वच, सोठ, रास्ना, सफेद खैर, शल्लकी वृक्ष का गोद [या छाल] दशमूल, खरैंठी, वेल छाल, तुम्वरु [धनिया] (भेद) ओर गिलोय समान भाग लेकर सवको पानी के साथ पीसकर कल्क (पिट्ठीसी) वनावे । इसे घी मे मिलाकर सेवन करने से शरीर गत वायु नष्ट होती है । मात्रा—४ माशे ।

शतावरी कल्क (२) (भा प्र म ख २)—शतावरी के कल्क को दूध के साथ सेवन करने और दुग्धाहार पर रहने से रक्तातिसार नष्ट होता है।

शतावरी के साथ सिद्ध घृत सेवन करने से भी रक्तातिसार नष्ट होता है ।

शतावरी कल्क (३) (यो. र प्रसूत रोग)—शतावर को दूध मे पीसकर पीने से स्त्रियो के स्तनो मे दूध बढ जाता है ।

शतावरी मूल योग (हा. स स्था ३ अ ३२)—शतावर की जड को ठडे पानी मे पीसकर मिश्री मिलाकर पीने से शर्करा का नाश होता है ।

शतावरी योगः (ग नि. अपस्मारा.)—प्रात काल शतावरी की जड का रस, या शतावर का क्वाथ या चूर्ण अथवा शतावर से सिद्ध किया हुआ दूध सेवन करने से अपस्मार नष्ट होता है ।

इस प्रयोग के सेवन काल मे केवल दूध भात पर रहना चाहिए ।

शतावरी स्वरसः (भै र प्रमेहा)—शतावर के रस को दूध मे मिलाकर पीने से २० प्रकार के प्रमेह अवश्य नष्ट हो जाते हैं ।

शतावर्यादि कषाय (ब से रक्तपित्ता)—शतावर, त्रिफला, रास्ना, खभारी की छाल और फालसे की छाल समान भाग लेकर क्वाथ वनावें । इसके सेवन से रक्तपित्त शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

शतावर्यादि क्वाथः (१) (यो. र मूत्रकृच्छ्रा)—शतावरी की जड़ के क्वाथ में मिश्री और शहद मिलाकर पीने से वातज, पित्तज तथा कफज मूत्र दोषो (मूत्रकृच्छ्रादि) का नाश होता है ।

शतावर्यादि क्वाथ. (२) (यो र शूला.)—शतावर, मुलैठी, खरैटी, कुश और गोखरू समान भाग लेकर क्वाथ वनावे । इसे ठडा करके गुड, शहद या खाड मिलाकर पीने से रक्तपित्त, दाह, शूल और दाहयुक्त ज्वर का नाश होता है ।

शतावर्यादि क्वाथ (३) (भै. र. शूला,)—शतावर के स्वरस मे शहद मिलाकर प्रात काल सेवन करने से दाह, शूल और अन्य पित्तज रोगो का नाश होता है ।

शतावर्यादि क्वाथः (४) (च. द. मूत्रकृच्छ्र)—शतावर, कास, कुश की जड़, गोखरू, विदारीकन्द, शालीधान्य की जड, ईख की जड और कसेरु समान भाग लेकर क्वाथ वनावें । इसमे शहद मिलाकर पीने से दाह और पीडायुक्त



मूत्रकृच्छ्र का नाश होता है।

शतावर्यादि द्वादशांग कषायः (ग. नि वाता १६)—शतावर, पोखरमूल, नागरमोथा, हर्र, गिलोय, अतीस, रास्ना, त्रिफला, वासा, देवदारु, सोठ ओर धमासा समान भाग लेकर क्वाथ वनावे। यह क्वाथ वातव्याधि को नष्ट करता है।

शतावर्यादि पय. (यो र. मूर्च्छा)—शतावर, वला (खरैंटी) की जड और मुनक्का के साथ पकाया हुआ दूध मिश्री मिलाकर पीने से भ्रम और मूर्च्छा रोगो का नाश होता है। (औषधियां २॥ तोले, दूध २० तोले, पानी ८० तोले मिलाकर पानी जलने तक पकावें)।

शतावर्यादि योग. (ग नि. रक्तपित्ता ८)—शतावर और गोखरु पकाया हुआ दूध पीने से मूत्रमार्ग से पीडा के साथ निकलने वाला रक्त बन्द हो जाता है। (औषधिया) २॥ तोले, दूध २० तोले, पानी ८० तोले। पानी जलने तक पकावें।

शतावर्यादि रस (यो. र. अश्मर्य.)—शतावर के स्वरस को गोदुग्ध मे मिलाकर सेवन करने से पुरानी अश्मरी भी शीघ्र ही निकल जाती है।

शतावर्यादि स्वरस (१) (ग नि ज्वरा १)—शतावर और गिलोय के स्वरस को गुड से मीठा करके पीने से वात ज्वर शीघ्र ही नष्ट हो जाता हे।

शतावर्यादि स्वरस (२) (यो. र. मूत्रघाता)—शतावर की जड का रस, गोखरू की जड का रस और भुई आमले की जड का रस समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलावें। ५ तोले इसमे १ माशा जवाखार, २ माशे केशर और २ रत्ती सुहागे की खील मिलाकर पीने से भयंकर मूत्राघात भी नष्ट हो जाता है।

शतावर्यादि चूर्णम् (१) (शा. स. ख. २ अ. ७)—शतावर, गोखरु, कौंच के बीज, नागवला (गगेरन) की जड़, अतिवला (कघी) की जड और ताल मखाना समान भाग लेकर चूर्ण बनावे। इसे रात्रि के समय गोदुग्ध के साथ सेवन करने से काम शक्ति इतनी प्रवल होती हे कि वार वार स्त्री समागम करने पर भी तृप्ति नही होती (मात्रा १॥ से २ माशे)।

शतावर्यादि चूर्णम् (२) (यो. र. वाजीकरण)—शतावर, गोखरु, असगन्ध, पुनर्नवारक्त, गगेरन की जड़ और मूसली समान भाग लेकर चूर्ण वनावे। इसमे घी और खाड मिलाकर सेवन करने से क्षीण पुरुष भी हाथी के समान वल वाले होजाते हे।

शतावर्यादि चूर्णम् (३) (यो. र. वाजीकरणा)—शतावर, गगेरन, विदारीकन्द, गोखरू और आमले का चूर्ण पृथक-पृथक या समान भाग मिलाकर खाड, घी और शहद के साथ सेवन करने से अत्यन्त वीर्य वृद्धि होती है मात्रा ३ से ६ माशे।

शतावर्यादि चूर्णम् (४) (ब से. रसायना)—शतावर, मुण्डी, गिलोय, हस्तिकर्णा ओर ताल मूली समान भाग लेकर चूर्ण बनावे। इसे घी और शहद मे मिलाकर सेवन करने से जरा, व्याधि ओर अकाल मृत्यु का नाश होकर काति वल और वुद्धि आदि की वृद्धि होती है।

शतावर्यादि चूर्णम् (५) (वै. मृ. विषय १८)—शतावरी गगेरन कौंच के बीज, तालमखाना, गोखरू, तिल और उडद समान भाग लेकर चूर्ण वनावे। इसे मिश्री मिले दूध के साथ रात्रि के समय सेवन करने से काम शक्ति इतनी अधिक बढ जाती है कि मनुष्य सैंकडो स्त्रियो से समागम कर सकता है। मात्रा ३ से ६ माशा।

शतावर्यादि चूर्णम् (६) (यो. र वाजीकरणा)—शतावर, असगन्ध, कौंच के बीज, मूसली ओर गोखरू समान भाग लेकर चूर्ण बनावे। इसे खाड मिले हुए दूध के साथ सेवन करने से नपुंसकता नष्ट होती है। मात्रा ३ से ६ माशा।

शतावरी गुग्गुलु [र र. स उ. अ. २१]—शतावर गिलोय, प्रसारिणी, गोखरु, पीपल, सोया, अजवायन, रास्ना असगध, चोरपुष्पी, कचूर और सौंठ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें और सबके बरावर शुद्ध गूगल लेकर उसमे आवश्यकतानुसार घी और थोडा-थोडा यह चूर्ण मिलाकर खूब कूटे। यहा तक कि सब चीजें मिलकर एक जीव हो जायें। यह गूगल वातव्याधि को नष्ट करता है।

शतावरी गुडुच्यादि घृतम् [र. र. वातरक्ता.]—शतावरी का रस ८ सेर, शतावर का कल्क २० तोले तथा गोदुग्ध २ सेर और गो घृत २ सेर लेकर सवको एकत्र मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावे। जब जलांश शुष्क

हो जाय तो घृत को छानले। इसके सेवन से वातरक्त और कुष्ठ का नाश होता है। मात्रा—१ तोला।

शतावरी घृतम् [१] [ग. नि. घृता. १]—६। सेर शतावर को ६४ सेर पानी मे पकावे ८ सेर शेष रहने पर छान लें।

कल्क—जीवनीयगण की प्रत्येक औषधि, रास्ना, गोखरू, सोया, बच, कूठ, सरल काष्ठ (चीर) पुनर्नवारक्त, सफेद चदन, तगर, जटामासी, पद्माक, लाल चदन, तुलसी, सोठ, पीपल, वायविडङ्ग, सोठ और नीलोत्पल १।–१। तोला लेकर सबको पानी के साथ एकत्र पीसले।

२ सेर घी मे उपरोक्त क्वाथ और कल्क तथा ८ सेर दूध मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावे। जब जलाश शुष्क हो जाय तो घृत को छान ले। यह घृत वृष्य है और वात,पित्त, क्षत, शोथ और ज्वर को नष्ट करता है। यह घृत, पगुता र्षादित, नपुसकता और वन्ध्यत्व मे भी उपयोगी है तथा बल, वर्ण और प्रजा (सन्तान) की वृद्धि करता है। मात्रा-१ तोला अनुपान–दूध।

शतावरी घृतम् [२] [च. द. स्त्रीरोगाः]—कल्क–जीवनीय गण की औषधिया, मुलैठी, सफेद चदन, पद्माक, गोखरू, कौंच के बीज, खरैंटी, नागबला, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी विदारीकन्द, दो प्रकार की सारिवा, खाड और खभारी के फल प्रत्येक औषधि बडे गूलर के समान (१। तोला) लेकर सबको पानी के साथ एकत्र पीस ले।

२ सेर घी मे उपरोक्त कल्क, २ सेर शतावर का रस और ४ सेर दूध मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावे। जब जलाश शुष्क हो जाय तो घृत को छान ले।

यह घृत रक्तपित्त विकार, वातरक्त, क्षयकास, श्वास, हिक्का, रक्तपित्तजनितअङ्गदाह, शिरोदाह, सर्व दोषज, रक्त प्रदर और भयकर मूत्रकृच्छ्र को शीघ्र नष्ट करता है। मात्रा—१ तोला।

शतावरी घृतम् [३] [च. द. गुह्य रोग.]—२५ सेर शतावरी मूल को कूटकर रस निकाले और फिर उसमे उसके बराबर दूध तथा ८ सेर घी और निम्न लिखित कल्क मिलाकर मन्दाग्नि पकावे। जब पानी शुष्क हो जाय तब घी को छान ले।

कल्क द्रव्य—जीवनीयगण की औषधिया, शतावर, फालसा, मुनक्का, पियाल (चिरौंजी का फल) और मुलैठी १।–१। तोला लेकर सबको पानी के साथ एकत्र पीसले। जब घृत ठण्डा हो जाय तो उसमे ४०–४० तोले शहद और पीपल का चूर्ण तथा ५० तोले मिश्री मिलाकर सुरक्षित रखे। मात्रा—१। तोला।

यह घृत रक्तप्रदर और शुक्रदोष नाशक, वृष्य तथा क्षत, क्षय, रक्तपित्त, कास, श्वास हलीमक, कामला, वातरक्त, बिसर्प, हृदग्रह, शिरोग्रह उन्माद, आयाम और वातपित्तज सन्यास को नष्ट करने वाला है।

शतावरी घृतम् [४] [भै. र. मूत्रकृच्छ्रा]—शतावर, कास की जड, कुश की जड, गोखरू की जड, विदारी कन्द, ईख की जड और आमला इनके कल्क और क्वाथ से घृत सिद्ध करे। इसे दूध मे डालकर या मिश्री मिलाकर सेवन करने से पित्तज मूत्रकृच्छ्र नष्ट होता है। मात्रा १ तोला।

कल्कार्थ—सब औषधिया समान भाग मिश्रित १० तोले।

क्वाथार्थ–सब औषधिया समान भाग मिलाकर २ सेर पाकार्थ जल १६ सेर, शेष क्वाथ ४ सेर घी १ सेर।

शतावरी घृतम् [५] [यो र. पानात्ययः]—शतावरी का रस २ सेर, दूध २ सेर, पुनर्नवा का क्वाथ २ सेर और मुलैठी का कल्क २० तोला सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब पानी जल जाये तो घी को छान ले। यह घृत पानात्यय को नष्ट करता है।

शतावरी घृतम् [६] (भै. र.। वातरक्ता.)–शतावर काकल्क १० तोले, घी १ सेर, शतावर का रस ४ सेर, दूध १ सेर। सबको एकत्र मिलाकर पानी जलने तक पकावे। यह घृत वातरक्त को नष्ट करता है। मात्रा—एक से दो तोला।

शतावरी घृतम् [७] (व. से. वाजी.)—शतावर का कल्क १० तोले, घी १ सेर, और दूध १० सेर। सबको एकत्र मिलाकर दूध जलने तक पकावे।

यह घृत शुक्रशोधक और आर्त्तव दोषनाशक है। मात्रा २ तोले।

शतावरी घृतम् [८] (यो. र. वाजीकरण)–१ सेर घी मे १० तोले शतावर का रस और १० सेर दूध मिलाकर पकावें। जब दूध जल जाय तो घी को छान ले एव उसके ठण्डा होने पर उसमे ७–७ तोले शक्कर, पीपल का चूर्ण और शहद मिलाकर रखे। यह घृत वृष्य है।

शतावरी घृतम् [९] (यो.र. मूत्रकृच्छ्रा)—शतावर का रस ४ सेर, घी २ सेर, बकरी का दूध ८ सेर छोटे और बडे गोखरु का रस २०–२० तोले तथा गिलोय, अनन्तमूल, काम की जड़ और कटेरी का रस २०–२० तोले एव निम्नलिखित कल्क एकत्र कर पकावें जब पानी जल जावे तब घी को छानले ।

कल्क—मुलैठी, सोंठ, मिर्च, पीपल, गोखरु, मेंहदी, क्षीरकाकोली, शिलाजीत, पापाण भेद, दालचीनी, छोटी इलायची और तेजपत्र २।।-२।। तोले लेकर सवको एकत्र मिलाकर पीसले ।

जब घी ठण्डा हो जाय तो उसमे १० तोला खाड और आधा सेर शहद मिलाकर सुरक्षित रक्खे । यह घृत समस्त प्रकार के मूत्रकृच्छ्र, मूत्रदोप और अश्मरी को नष्ट करता है । मात्रा १-२ तोला ।

शतावरी घृतम् [१०] (भै. र. अम्लपित्ता.)—शतावर की जड़ १० तोला, घी १ सेर, पानी १ सेर और दूध ४ सेर लेकर सवको एकत्र मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावे । जब जलांश शुष्क हो जाय तो घी को छान ले । इसके सेवन करने से अम्लपित्त, वातपित्तज रोग, रक्तपित्त, तृषा, मूर्छा श्वास और सताप का नाश होता है मात्रा १-२ तोला ।

शतावरी घृतम् [११] (वं. से ग्रहणीरोगा)—कल्क शतावर, सफेद चन्दन, पद्माक, नीलोत्पल, फूलप्रियगु, पाठा, पीपल, शालपर्णी, वेल की छाल, अजमोद, अतीस मजीठ, जीवन्ती, चित्रक और इन्द्रजौ दो–दो तोला लेकर सवको एकत्र पीसलें ।

क्वाथ—४ सेर इन्द्रजौ को ४८ सेर पानी मे पकावे और १२ सेर शेप रहने पर छान ले । ३ सेर घी मे उपरोक्त कल्क और क्वाथ मिलाकर पानी जलने तक पकावे । इसके सेवन से त्रिदोपज, ग्रहणी, पित्तातिसार, रुधिरस्राव और अर्श का नाश होता है । मात्रा—१ से २ तोला ।

शतावरी घृतम्[१२] (लघु) (यो र. । रक्तपित्ता)—कल्क—शतावर, अनारदाना, तिन्तडीक, काकोली, मैदा, मुलैठी, विदारी कन्द और विजोरे की जड १।–१। तोला लेकर सवको पानी के साथ पीस ले । १ सेर घी मे यह कल्क और ४ सेर दूध मिलाकर दूध जलने तक पकावें । यह घृत, कास, ज्वर, आनाह, विवन्ध, शूल और रक्तपित्त को नष्ट करता है ।

शतावरी घृत [१३] (भै र.। वाजीकरण:)—कल्क—जीवक, ऋपभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीर काकोली, मुनक्का, मुलैठी, मुद्गपर्णी, मापपर्णी, विदारीकन्द और लाल चन्दन २०-२० मासे लेकर सवको एकत्र पानी के साथ पीसले । २ सेर घी मे यह कल्क ४ सेर शतावर का रस और ४ सेर दूध मिलाकर पकावे । जव जलांश शुष्क हो जाय तो घी को छान लेवे और उसमे १०-१० तोले खाड और शहद मिलाकर सुरक्षित रखे ।

यह घृत रक्तपित्त, वातरक्त, शुक्र क्षीणता, अङ्गदाह, शिरोदाह, पित्तजज्वर, योनिशूल, योनिदाह और पैत्तिक मूत्रकृच्छ्रता को नष्ट करता है । यह उत्तम वाजीकरण है । वल, वर्ण और अग्नि को वढाता है । मात्रा १ तोला ।

शतावर्यादि घृतम् (भै र । रक्तपित्ता)—शतावर का कल्क २० तोले, दूध २ सेर, गाय का घी २ सेर और मिश्री २० तोले लेकर सवको एकत्र मिलाकर पकावे । जलाश शुष्क हो जाय तो घी को छान ले । यह घृत रक्तपित्त, अम्लपित्त, क्षय ओर श्वास को नष्ट करता है । मात्रा २।। तोला -

शतावर्यादि यमकम् (वा. म. : उ अ २४)—शतावर का रस और जीवन्ती का रस तथा गोदुग्ध ४-४ सेर, घी और तिल्ली का तैल १।।-१।। सेर एव जीवनीय गण का कल्क ३० तोले लेकर सवको एकत्र कर पकावे । जब जलाश शुष्क हो जाय तो स्नेह को छानले । इस घृत की नस्य से समस्त ऊर्ध्व जत्रुगत रोग नष्ट होते है ।

शतावर्यादि लेह (ग. नि राजयक्ष्मा ६)—शतावर, विदारीकन्द, असगन्ध, हर्र, पुनर्नवा रक्त, खरैटी की जड, नागवला (गगेरन) की जड, और गोखरू समान भाग लेकर चूर्ण वनावे और उसमे घी तथा शहद मिलाकर चाटने योग्य वनाले । इसके सेवन से क्षय का नाश होता है ।

शतावरी तैलम् १ (शा. स. वात)—क्वाथ शतावर वला, अतिवला, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, एरन्ड की जड, असगन्ध, गोखरू, वेलछाल, कास की ओर कटसरैया ७।।-७।। तोला लेकर सवको एकत्र कूटकर ८ गुने पानी से पकावे और चौथा भाग शेप रहने पर छान ले । अन्य द्रव

पदार्थ—दूध २ सेर, शतावर का रस दो सेर और पानी दो सेर।

कल्क—शतावर, देवदारु, जटामासी, तगर, सफेद चन्दन, सोया, खरैंटी की जड, कूठ, इलायची, भूरि छरिला नीलोत्पल, ऋद्धि, मेदा, मुलैठी, काकोली और जीवक १।-१। तोला लेकर कल्क बनावे। तथा यथाविधि तैल सिद्ध करलें। यह तेल सभी वातविकारो को नष्ट करता है।

फल कल्याण घृतम् ६ (भै. र. स्त्री रोगा.)—एक वर्ण वाली तथा जीवद्वत्सा (जिसका वछडा जीता है) गौ के दूध का घी २ प्रस्थ। शतावर का रस ८ प्रस्थ। कल्कार्थ—मजिष्ठा, मुलहठी, कुष्ठ, त्रिफला, खाड, वला, मेदा, क्षीर, विदारी, क्षीर काकोली, असगन्ध की जड़, अजमोदा, हल्दी, दारुहल्दी, हीग, कुटकी, नीलोत्पल, कुमुद, द्राक्षा, काकोली लाल चन्दन, श्वेत चन्दन; प्रत्येक २-२ तोले।

जगली उपलो की अग्नि से यथाविधि घृतपाक करे। चिकित्सक इस घृत मे कल्क द्रव्यो के साथ ही २ तोले लक्ष्मणा मूल भी डालते हैं। इस घृत के सेवन से पुरुष बल वीर्यादि सम्पन्न होता है और स्त्री बुद्धिमान एव सुरूप पुत्रो को जनती है। जिस स्त्री के गर्भस्राव हो जाता हो अथवा गर्भ स्थिति न होती हो अथवा गर्भ स्थिति हो भी जावे परन्तु मृत शिशु ही उत्पन्न हो अथवा वह सतान अल्पायु हो अर्थात् कुछ दिनो वाद मर जाय तथा जिस स्त्री के कन्याये ही पैदा हो, उसे यह घृत सेवन करना चाहिये। यह घृत योनिदोष, रक्तदोष तथा परिस्राव मे प्रशस्त है। यह सन्तानोत्पादक, आयुष्कर, तथा ग्रहदोष नाशक है। मात्रा ½-१ तोला।

महानारायण तैलम् (भै. र.) वातव्याधि)—शतावर, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, कचूर, वच, एरण्ड मूल, छोटी कटेरी, बडी कटेरी, कुरण्टक (पियावासा) की जड, करज की जड, अतिवला (कघी) की जड, प्रत्येक १०-१० पल (५०-५० तोले) लेकर सवको अधकुटा करके ३२ सेर पानी मे पकावे। जब ८ सेर पानी शेष रह जाय तो छानकर उसमे ४-४ सेर गाय और बकरी का दूध, २ सेर शतावर का रस, २ सेर दूध, २ सेर तैल और नीचे लिखा कल्क मिलाकर पिलावे। जब पानी जल जाय तो तैल को छान लें।

कल्क—पुनर्नवा, वच, देवदारु, सोया, सफेदचन्दन, अगर, छरीला, तगर, कूठ, इलायची, जटामासी, बला, असगन्ध, सेंधानमक और रास्ना। हरेक २॥-२॥ तोले लेकर चूर्ण करलें। यह तैल घोडे, हाथी और मनुष्यो के वात विकारो को नष्ट करता है। इसे पीने मे पुरुषत्वहीन पुरुष पौरुषयुक्त हो जाता है। वन्ध्या को पुत्र की प्राप्ति होती है। इसके अतिरिक्त यह हृदयशूल, पार्श्वशूल, अर्धावभेदक, अपची, गण्डमाला, वातरक्त, हनुग्रह, कामला, पाण्डु और अश्मरी इत्यादि रोगो को भी नष्ट करता है।

नारायण तैलम् (मध्य) (शा. स.। म. अ. ९)—असगन्ध, वला, वेलछाल, पाढल, कटेली, वडी कटेली, गोखरू, अतिवला, नीम की छाल, सोनापाठा (श्योनाक), पुनर्नवा, प्रसारिणी, अरनी। हरेक १०-१० पल (५०-५० तोले) लेकर कूटकर सवको १२८ सेर पानी मे पकावें। जब ३२ सेर पानी शेष रह जाय तो क्वाथ को छान लें। तत्पश्चात् ८ सेर तिल का तैल, ८ सेर शतावर का रस, ३० सेर गाय का दूध और निम्नलिखित कल्क तथा उपरोक्त क्वाथ को एकत्र मिलाकर पकावे। जब तैल मात्र शेष रह जाय तो उसे छानकर सुरक्षित रक्खे।

कल्क—कूठ, इलायची, सफेद चदन, मूर्वा, वच, जटामाँसी, सैंधव, असगध, खरैंटी, रास्ना, मोथा, देवदारु, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, मुद्गपर्णी, मापपर्णी और तगर। हरेक १० तोले लेकर सवको पानी के साथ पीसले। इस तैल की नस्य लेने, मालिश करने, इसे पीने और वस्ति द्वारा प्रयुक्त करने से पक्षाघात, हनुस्तम्भ, मन्यास्तम्भ, गलग्रह खालित्य (गज), वधिरता, गतिभग (चलते समय पैर अव्यवस्थित पडना) अङ्गो का सूखना, इन्द्रियो की शक्ति का नष्ट पोना, शुक्र के साथ रक्त आना, ज्वर, क्षय, अडवृद्धि, दतरोग, शिरोग्रह, पसली का दर्द, पगुता, वुद्धि की मन्दता, गृध्रसी तथा अन्य कष्टसाध्य वातज रोग नष्ट होते हैं।

इसके प्रभाव से वन्ध्या स्त्री को भी पुत्र प्राप्त होता है। इसकी मालिश न केवल मनुष्यो के लिए अपितु हाथी और घोड़ो के लिए भी हितकारी है।

शतावरी तैलम् (ग. नि. तैल २)—२ सेर तेल मे शतावर का रस २ सेर, दूध २ सेर तथा निम्नलिखित

पर हमने अनुसधान करके सफलता पाई है अथवा इन-इन रोगो पर शास्त्र मे शोभाञ्जन का प्रयोग मिलता है।

जब अन्त विद्रधि मे इसका प्रयोग करना हो तो तात्कालिक अथवा शीघ्र लाभ के लिए इसको बाह्य (Local) स्थानीय तथा आभ्यान्तरिक (Internal) दोनो प्रकार से कल्पवत् "पान भोजनलेपेषु मधु शिग्रु प्रयोजित ।" के अनुसार पीने, भोजन तथा लेपार्थ प्रयोग करे।

इसकी ताजी त्वचा को खरल मे या सिल पर पीसकर निचोडकर स्वरस निकाल लेना चाहिये, उसे प्रात साय बलाबल के अनुसार युवा को दो तोले के लगभग बालको को उनकी अवस्था के अनुसार १ माशे से ६ माशे तक या १ तोले तक मधु मिलाकर देना चाहिये। इसे पीने के एक घण्टे पूर्व या बाद मे भोजन नही करना चाहिए, ताकि औषधि अपना प्रभाव खाली पेट कर सके।

दूसरी प्रयोग विधि यह है कि उस रोगनाशक औषधि के साथ इसे अनुपान रूप मे देना चाहिए, उपरोक्त मात्रा का ध्यान रखना आवश्यक है।

तीसरी विधि जो हम प्रयोग करते हैं वह यह है कि सुबह शाम एक एक रत्ती सम गधक मिलित कज्जली को खिलाकर ऊपर से इसके स्वरस को पिला देते है, इसके अभाव मे रस सिन्दूर भी दिया जाता है तथा चन्द्रोदय, मकरध्वज भी देय है, क्योकि योगवाही होने से वह प्रभाव को बढा देता है। यह हमारे पूज्य कविराज उपेन्द्र नाथ दास जी देहली वालो की प्रयोग विधि थी, जिसे मै अपनाए हुए हूँ। जब इसका प्रयोग कराया जाता है तो उस समय (Sulphanilanimide) के प्रयोग विधि मे वर्णित आदेशानुसार रोगी के रक्त मे औषधि प्रचुर मात्रा मे एकत्रित हो जाने पर ही लाभ की सूरत दिखाई दे सकती है, हम अपने शोभाञ्जन को भी रोगी के रक्त मे अधिक मात्रा मे पहुँचाने की चेष्टा करते है कि जिससे प्रभाव शीघ्र दृष्टिगोचर हो। प्रयोग करके भी देख लिया गया है कि न्यून मात्रा मे औषधि कभी-कभी आशुफलप्रद साबित नही होती, परन्तु जब मात्रा बढ़ायी जाती है तो रोग नाशक प्रभाव कुछ घण्टो मे ही दिखायी देने लगता है। चिकित्सको को इसका प्रयोग जैसा कि ऊपर कहा जा चुका हैं निसकोच करना चाहिए।

इसमे विशेषता यह है कि जो (Sulphonamide) मे नहीं है, यह उसकी तरह हृदय को हानि नही पहुचाती क्योकि हृदय रोग (हृदयविद्रधि) पर इसे प्रयुक्त करने की आज्ञा दी गई है। विशेषकर वहा जहां हृदय विकार जन्य तमक श्वास हो।

ग्रन्थकर्त्ता का भी आदेश है—

पान भोजन लेपेषु मधु शिग्रुः प्रयोजित ।
दत्तावापो यथादोषमपक्वं हन्ति विद्रधिम् ॥

विद्रधि तो दूर हो ही जायेगी चाहे कही की भी हो। पूर्ण प्रमाण मिलता है कि हृदय के शोथ (Carditis) से लगाकर हृदय विद्रधि तक के लिए यह उपयोगी है। ये गुण आज सल्फानिलामाइड मे नही है, उनको प्रयुक्त करते समय ध्यान रक्खा जाता है कि कही इसके अति या मिथ्या प्रयोग से हृदयज विकार न हो जायें, और इसके शोधित प्रयोगो को प्रयुक्त करना पडता है। किंतु इसमे कोई परेशानी नही है। योग्य चिकित्सक इससे नस्य लेप, वस्ति तथा भोजन की कल्पना कर सकता है। हम लेप के लिए भी त्वचा का केवल चटनी की तरह पिसा हुये कल्क का स्थानीय लेप उपचार स्वरूप करते है। तथा कभी-कभी इसके स्वरस मे कपडे की गद्दी तर करवा कर रखवाते है, जिससे आशातीत लाभ होता हैं।

भोजन मे रोगियो के विशेषकर उदरस्थ विकारो मे इनकी फलियो का शाक खाया जासकता है, लेकिन जब तक वह कडी और रेशेदार न हो अर्थात् कोमल रहे। क्योकि उनके रेशो से पेट मे गैस पैदा होकर आध्मान इत्यादि हो आते है। अतएव कोमल रहते इसका प्रयोग सर्वथा उचित है। इसके अतिरिक्त सहज उपाय यह है कि या तो इसके स्वरस को साबूदाना, दलिया, खीर, खिचड़ी मे मिलाकर देना चाहिए या फिर क्षीर पाक विधि से इसका दूध साधित करके रोगी को देना चाहिए। हम तो प्रायः इसी विधि को प्रयुक्त करते है।

(सचित्र आयुर्वेद सितम्बर १९५१)

नोट—अन्दरूनी इस्तेमाल मे मीठा सहजना (मधुशिग्रु) देना चाहिये और बाहरी प्रयोग मे कडवा सहजना काम मे लाना चाहिए।

(सपादक)

उपयोग—

जलोदर—सहजने की जड़ की छाल का स्वरस अथवा क्वाथ बनाकर पिलाने से जलोदर, तिल्ली, यकृत, भीतर की सूजन पथरी इत्यादि मे फायदा होता है ।

कान की पीडा—इसकी छाल के ताजा रस को कान मे डालने से कान की पीडा मिटती है और इसके गोद का चूर्ण कान मे भुर भुराने से कान से पींव वहना बन्द हो जाता है ।

मूत्रवृद्धि—इसके फूलो को पीसकर मिश्री मिलाकर पीने से मूत्रवृद्धि होती है ।

शर्कराश्मरी—इसकी जड़ के रस को दूव मे मिलाकर पिलाने से शर्कराश्मरी मिटती है और मूत्रवृद्धि होती है।

दमा—अद्रक के रस मे सहजने की जड का रस मिला कर पीने से दमे मे वहुत लाभ होता है ।

सूजन—इसकी जड़ को पीसकर पुल्टिस वाधने से सूजन उतर जाती है, मगर इससे त्वचा मे वहुत दाह होती है, यहा तक कि फुन्सिया भी हो जाती हैं, इसलिए इसका प्रयोग समझ वूझ कर करना चाहिए ।

आंतो के कीडे—सहजने की फली का शाक खाने से आतो के कीडे मर जाते हैं ।

गठिया—इसके पौधे की जड़ का क्वाथ पिलाने से पुरानी गठिया, अर्द्धाङ्ग और जलोदर मिटता है । इसके वीजो को यन्त्र मे दवाकर निकाले हुए तेल की मालिश करने से छोटे जोड़ो की सूजन और गठिया की तीव्र पीडा मिटती है । इसकी ताजी जड़, सरसो और अदरक को पीस कर लेप करने से गठिया मिटती है ।

मुंह के छाले—इसकी जड़ के क्वाथ से कुल्ले करने से मुह और गले के छाले मिटते हैं ।

दांतो का सड़ना—इसका गोद मुह मे रखने से दातो का सड़ना बन्द हो जाता है।

वाइटे—इसकी जड़ की छाल का क्वाथ पिलाने से वाइटे मिटते हैं ।

गर्भाशय का छोड़—सहजने की १। तोले छाल अथवा जड़ का क्वाथ पिलाने से गर्भाशय का छोड निकल जाता है।

गठान—गठान की सूजन बिखेरने के लिए इसके गोद का लेप किया जाता है ।

उदरशूल—इसकी छाल, हीग और सोठ इन तीन चीजो को जल के साथ पीसकर गोलिया वना लेना चाहिए इन गोलियो का दिन मे दो तीन वार देने से पेट की वादी की पीड़ा, शूल और अफरा मिटता है ।

जलोदर—सहजने की जड़ का हिम या फाण्ट बनाकर पिलाने से मूत्रवृद्धि होकर जलोदर मिटता है ।

रतौंधी—सहजने की कोमल डालियो के रस मे शहद मिलाकर नेत्रो मे टपकाने से रतौंधी मिटती है ।

मूत्रकृच्छ्र—सहजने के एक तोले गोद का चूर्ण नित्य दही के साथ ७ दिन तक खाने से मूत्रकृच्छ्र मिटता है ।

सन्तान निग्रह—सहजने के बीजो को बारीक पीसकर गाय के घी और शहद मे मिलाकर बत्ती बनाकर मासिक धर्म से शुद्ध होने के पश्चात् योनि मे रखने से गर्भ धारण की शक्ति नष्ट हो जाती है ।

घुटनो की पीडा—सहजने के बीजो को पानी मे पीस कर कुनकुना कर लेप करने से घुटनो की पुरानी पीडा मिटती है ।

कान की सूजन—सहजने की छाल और राई को पीस कर लेप करने से कान के नीचे की सूजन मिटती है ।

अन्तर्विद्रधि—सहजने की जड के रस मे शहद मिला कर पिलाने के अन्तर्विद्रधि मिटजाती है । (चक्रदत्त)

पथरी और पेशाव मे रेती जाने पर—सहजने की छाल का क्वाथ उक्त व्याधि मे अत्यन्त हितकर है ।

। (च चि २६ अ)

नेत्र रोग में—वात, पित्त, कफ मे से किसी दोष से आख दुखने आयी हो तो सहजने के पत्तो के रस में समान भाग उत्तम मधु मिला इसकी बूदे आख मे डालने से तुरन्त वेदना कम हो जाती है । (वाग्भट चि. १६)

कर्ण शूल मे—सहजने के मूल का रस कान मे डालना।

कलेजे के दर्दो मे—सहजने की जड या सहजने की छाल वरणा की छाल, और पुनर्नवा इन तीनो का क्वाथ हमारा प्रिय प्रिस्क्रिप्सन है ।

विशिष्ट योग—

सहजने का अर्क—सहजने की जडकी ताजी छाल १० तोला, सतरे की सूखी छाल ५० तोला, जायफल का चूर्ण १½ तोला, शराब (९० प्रतिशत) १ गैलन और पानी २ पिण्ट।

इन सब चीजो का भभके से हलकी आच पर अर्क निकाल लेना चाहिए। इस अर्क की मात्रा २ से ४ ड्राम तक है। यह अर्क उत्तेजक होता है।

सहजने की फाण्ट—सहजने की ताजी कूटी हुई छाल १ औंस, कूटी हुई राई एक औस, खौलता हुआ पानी १ पाइन्ट, इन सबको २ घण्टे तक वन्द बरतन मे रख कर छान लेना चाहिए और इसमे उपरोक्त अर्क भी एक औस मिला देना चाहिए। इस फाण्ट की मात्रा १ औंस से २ औंस तक होती है। यह फाण्ट भी एक मूल्यवान उत्तेजक वस्तु है।

सहजने का पाक—सहजने का गोद पावभर लेकर उसे घी मे तल लेना चाहिये, फिर गेहू का आटा आधा सेर लेकर घी आधा सेर मे भून लेना चाहिये। फिर गुड आधा सेर और सोठ४ तोला पीसकर सबको मिलाकर लड्डू बना लेना चाहिये। इन लड्डुओ का सेवन करने से गरम वायु, सर्द वायु, फूलनी वायु, उरुस्तम्भ, गृध्रसी आदि रोग मिटते हैं। (व. च. से साभार)

शिग्रु मूलादि लेप (१) (व से० अर्बुदा)—सहजने के वीज, मूली के बीज, सरसो, चीड का काष्ठ, जौ और कनेर की जड समान भाग लेकर चूर्ण बनावें। इसे तक्र मे पीसकर लेप करने से अर्बुदादि का नाश होता है।

शिग्रु मूलादि लेप (२) (यो र : स्नायु.)—सहजने की छाल और पत्ते तथा सैंधा नमक समान भाग लेकर सबको काजी मे पीसकर लेप करने से स्नायुक का नाश होता है।

शिग्र्वादि लेपः (भा प्र म.खं २। वातरक्ता.)—सहजने की छाल और वरने की छाल को काजी मे पीसकर लेप करने से वातरक्त की पीडा नष्ट हो जाती है यह एक सिद्ध योग है। इसके विषय मे सदेह नही करना चाहिए।

सौभाञ्जनादि लेप. (ग नि. ग्रन्थ्य.१)—सहजने की छाल और देवदारु के चूर्ण को काजी मे पीस कर मंदोष्ण करके लेप करने से अपची (गण्डमाला भेद) का अवश्य नाश हो जाता है।

शिग्रुमूलाद्यं नस्यम् (ग नि.। ज्वरा १)—सहंजने की जड़ का रस और तुलसी के पत्तो का रस (या चूर्ण) एकत्र मिलाकर नस्य देने से सन्निपात की मूर्च्छा जाती रहती है।

सौभाञ्जन स्वरस योगः (वृ.मा.। कर्ण.)—सहजने के (पत्तो या छाल के) स्वरस मे तिलका तेल मिलाकर उष्ण करके कान मे डालने से कर्ण शूल नष्ट होता है।

अहितकर—उष्ण प्रकृति के लिए। निवारण—सिरका।

इसी साखु—देखिये 'साल' (Shorea robusta gartu) भाग मे

सागवान (TECTONA GRANDIS)

यह वटादि वर्ग और सभालु कुल(Verbenaceae) का वृक्ष बहुत ऊचा और एक दम सीधा होता है। इसके पत्ते बहुत वडे-वडे करीब डेढ फुट लम्बे और इतने ही चौडे होते है। इसकी लकडी की दरारो में एक प्रकार का सफेद क्षार जम जाता है वह चूने की जगह खाने के काम मे आता है। मूल पृथ्वी मे गहरी उतरी हुई मोटी। तना-हलका कपिश या पाण्डुवर्ण युक्त विषम भग्नु शाखा—कपिश वर्ण युक्त, चतुष्कोणीय। पत्र—अभिमुख अण्ड़ाकारी पुष्प—श्वेत, सीधे, रोमश। फल— स्निग्ध,०-५ से० मी० व्यास युक्त रोमश, बाह्यावरण कोमल और आभ्यन्तरिक भाग कठोर। बीज—एक या दो बीज। वानस्पतिक विकृतिया—इसके पत्तो के मध्य में खण्डाकृति के श्वेत दाग पड़ जाते है। पुष्पकाल— वसत। बीज काल—ज्येष्ठ।

इसके काष्ठ से टार (Tar) निकाला जाता है जो अलसी के तैल का प्रतिनिधि है।

उत्पत्ति स्थान

यह भारत मे मध्य प्रदेश, राजस्थान, दक्षिण प्रदेश और अन्य प्रदेशो के प्रधान-प्रधान पहाडो मे सब जगह

होता है। इसकी इमारती लकडी सारी दुनिया मे प्रसिद्ध है।

नाम—

स —शाक, क्रकचपत्र, श्रेष्ठकाष्ठ, अर्जुनोपम, शाकतरु। हिं —सागवान, सेगोन, सागी। ब. सेगुन। म.—सागवान, साग। गु.—साग। पं —सागुन, सागवान। ता.-सागम, तेक्कु। ते.—टेकु। उर्दू—सागुन। फारसी—साज। अ.—टिक (Teak)। ले —टिक्टोना ग्रैण्डिस (Tectona grandis Linn F.)।

उपयुक्त अङ्ग—त्वक्, पत्र, पुष्प, वीज, बीज तैल।

मात्रा—चूर्ण २ से ४ माशा। क्वाथ—५ से १० तोला। गोद १ से २ माशे।

गुण-धर्म और प्रयोग—

सक्षेप मे—रस, कषाय,। गुण—रूक्ष, विशद, खर। वीर्य—शीत। विपाक—कटु। दोषशमन—कफवात। शारीरिक अङ्गो पर प्रभाव—सर्व शरीर। रोगोपयोग—प्रमेह, कुष्ठ, रक्तपित्त, शोथ, कृमि।

आयुर्वेदिक मत से सागवान कसैला, शीतल, रक्तपित्त-नाशक, गर्भ को स्थिर करने वाला तथा वातपित्त, ववासीर, कोढ और अतिसार को दूर करने वाला होता है। इसके फूल—कडवे, कसैले, विशद, रूखे, हलके, वात को कुपित करने वाले तथा कफपित्त और प्रमेह को दूर करने वाले होते है। इसकी छाल मधुर, रूखी, कसैली और कफ नाशक होती है।

इसकी जड मूत्र की कमी (Anuria) और मूत्र की रुकावट को दूर करने के लिए दी जाती है। इसकी लकड़ी कसैली, शीतल, मृदुरेचक, गर्भवती के गर्भाशय के लिए उपशामक तथा पित्तविकार, ववासीर, धवलरोग और अतिसार मे लाभदायक होती है।

यूनानी मतानुसार—

इसकी लकडी खराव स्वाद वाली और गन्धवाली होती है। यह मस्तक शूल, पित्त विकार और यकृत के नीचले भाग में होने वाले जलन युक्त शूल को दूर करती है। प्यास को बुझाती है, कृमियो को नष्ट करती है, कफ नि.सारक होती है। इसकी राख सूजी हुई आख के पलकों पर लेप करने के काम मे ली जाती है। इसके फूलो से निकाला हुआ तेल बालो को बढाता है और खुजली में लाभ पहुँचाता है।

डाक्टरी मतानुसार—

डाक्टर देसाई के मत से सागवान के फूल और बीज मूत्रल होते हैं, इसके वीजो का तेल केशवर्धक और खुजली नाशक होता है, इसके पत्ते पित्तशामक, रक्तस्राव रोधक और छोटी रक्त वाहिनियो का सकोचन करने वाले होते है इसकी छाल पित्तशामक, कुछ स्तम्भक और सूजन तथा कृमियो को नष्ट करने वाली होती है।

मूत्र के रुक जाने की हालत मे इसके फूलो को पानी मे बाफ कर पेडू पर वाधते है और इसकी फाण्ट बनाकर पिलाते हैं। इससे रुका हुआ पेशाव खुल जाता है। इसके वीजो का तेल चर्म रोगो पर खुजली को कम करने के लिए लगाया जाता है। इस तेल को रोज वालो में लगाने से वाल काले, लम्बे और मुलायम हो जाते हैं। गर्मी या पित्त की वजह से सिर मे दर्द हो रहा हो, अथवा शरीर के किसी भाग मे सूजन आ रही हो तो इसकी छाल का लेप करने से बहुत लाभ होता है। पित्त प्रकोप और अपचन रोग मे इसकी छाल का चूर्ण ६ माशे से १ तोले तक की मात्रा मे दिया जाता है।

प्रयोग—

श्वेत प्रदर—सागवान की छाल का हिम बनाकर पिलाने से श्वेत प्रदर मे लाभ होता है।

मस्तक पीड़ा—इसकी लकडी को घिसकर लेप करने से पित्त की मस्तक पीडा मिटती है।

पित्त की सूजन—इसकी लकड़ी को घिसकर लेप करने से पित्त की सूजन उतरती है।

आंख के पपोटो की सूजन—इसकी लकडी के कोयले को पोस्त के पानी मे बुझाकर पीसकर लेप करने से आख के पपोटो की सूजन उतरती है।

अतिसार—इसके छाल के चूर्ण की फक्की लेने से अतिसार मिटता है।

खुजली—इसके बीजो के तेल की मालिश करने से खुजली मिटती है।

दाह युक्त सूजन—इसकी लकडी को जल मे घिसकर लगाने से भिलावे के तेल अथवा काजू के छिलके के तेल से पैदा दाह युक्त सूजन उतर जाती है।

मूत्रावरोध—इसके फल को पीसकर पुल्टिस बनाकर पेडू पर बाधने से मूत्र फौरन उतर जाता है। —व. च.

सागूदाना (SAGUS LAEBUS)

यह तालादि कुल (Palmae) का Metroxylonrus mphii नामक वृक्ष के तने का गूदा है जिसको लेटिन मे Sagus laevus कहते हैं। जो पहले आटे के रूप मे होता है और फिर कूट पीसकर छोटे-छोटे दानो के रूप मे बनाकर सुखा लिया जाता है। ये दाने पोस्त के दाने से बडे और सफेद होते है। चित्रावलोकन कीजिए।



साबूदाना
SAGUS LAEVUS

उत्पत्ति स्थान—

यह जावा, सुमात्रा, बोर्नियो आदि मे अधिकतया होता है।

नाम–

हि.—सागूदाना, साबूदाना। अ—सैगो (Sago)। ले—सेगस लीवस (Sagus laevus)।

उपयुक्त अङ्ग—गूदा। मात्रा—१ तोला से २ तोले तक जितना पच सके।

गुण-धर्म और प्रभाव–

प्रकृति–दूसरे दर्जे मे गरम और तर। गुण-कर्म तथा उपयोग—सागूदाना लघु आहार है तथा हलका सारक भी है रोगी और दुर्बल लोगो के लिए पथ्याहार है। सागूदाना अधिकतया दूध मे पकाकर चीनी या मिश्री मिलाकर पिलाया जाता है। यदि दूध अहितकर हो तो इसे बादाम की गिरी और कद्दू के बीज की गिरी को शीरे या जल मे पकाकर मीठा मिलाकर पिला सकते है। यह विशेषकर वाजीकर एव वृंहण है। (यू द्र वि से साभार)

सातर (ZATARI A MULTIFLORA)

यह तुलस्यादि कुल (Labiatae) का मरुए की जाति का एक क्षुप है जिसकी पतली शाखाये और पुष्प मिले हुए सूखे पत्र बाजार मे मिलते है। पत्र लगभग गोल, गन्धयुक्त, चर्मवत्, पत्र प्रान्त अखण्ड, पुष्प क्षुद्र रक्त वा नील वर्ण, स्वाद तीक्ष्ण एव सुगन्धित होता है। जगली, पहाडी और बागी भेद से यह तीन प्रकार का होता है।

उत्पत्ति स्थान–

अरब, फारस, खुरासान, अफगानिस्तान, बलूचिस्तान, और पश्चिमी हिन्दुस्तान मे पैदा होती है।



नाम—

हि—सातर, साथर। अरबी—सातर। ले.—जटेरिआ मल्टिफ्लोरा (Zataria multiflora, Boiss)।

रासायनिक संगठन—

पत्र मे पुदीने की गन्धवाला एक उत्पत् तेल, एक लाल रग का स्वाद रहित अम्ल, राल और कुछ कषाय द्रव्य प्रभृति उपादान होते हैं।

उपयुक्त अङ्ग—पञ्चाङ्ग। मात्रा—५ माशे से लेकर ७ माशे तक।

गुण धर्म और प्रभाव—

प्रकृति—दूसरे दर्जे मे गरम खुश्क।

गुण-कर्म—सातर छेदनीय, विलयन वातानुलोमन, वेदना स्थापन, श्वयथु विलयन, श्लेष्म नि सारक, अश्मरी निर्हरण मूत्रार्तवजनन, उदरकृमि विशेषकर कद्दूदाने के लिए घातक है, तथा अन्त्र, आमाशय और यकृत को द्रवो से शुद्ध करता है, विशेष रूप से वाजीकर, क्षुधावर्द्धक, रुचिकारक एव वाष्पघ्न है।

उपयोग—

प्लीहा की सूजन दूर करने के लिए इसे सिरके के साथ पीसकर लेप करते और सिरके मे भिगोकर पिलाते हैं। दूसरे प्रकार के शोथो को मिटाने के लिये इसे शहद के साथ पीसकर लगाते है। दतशूल में इसके काढे से गण्डूष कराते और कूल्हे के दर्द, वस्तिशूल और जरायुशूल मे पिलाते तथा लेप करते हैं।

कास और श्वास में फुफ्फुसो से कफोत्सर्ग के लिए इसे सूखे अजीर के साथ उपयोग करते है। अश्मरी के उत्सर्ग के लिए इसे उपयुक्त औषधियो के साथ पिलाते हैं। कर्णशूल निवारण के लिए इसका रस निचोड़ कर कान मे टपकाते है। नेत्र के जाले और फूले को नष्ट करने के लिए इसका नेत्र मे आश्चोतन करते है।



सातर
ZATARIA MULTIFLORA BOISS

अहितकर—फुफ्फुस के रोगो में। निवारण—अजीर, सिरका, शहद और लेप मे जैतून का तेल। प्रतिनिधि—पहाड पुदीना। (यू. द्र वि से साभार)

सातला—देखिए 'शिकाकाई' इसी भाग मे। मातल—देखिए 'अगुलिया थूहर' भा. ३ पृष्ठ४०९ पर। सादडा—देखिए 'आसन न १' भा० १ पृष्ठ ४२०पर। सदा सुहागिन—देखिए "लटकन" के वर्णन मे इसी भाग मे।

साबूनी (SAPONARIA VACCARIA)

यह साबूनी कुल (Caryophyllaceae) का क्षुप होता है। इसका क्षुप ३० से मी से ९० से मी (१ से ३ फुट ऊचे होते है। पत्तिया अभिमुख, भालाकार अथवा रेखाकार आयताकार, काण्ड सशक्त और चिकनी होती हैं। पुष्प गुलावी सवृन्त और २-३ विभक्त मजरी मे; बाह्यकोष संयुक्त, नलिकाकार और उसके बल कूबडदार, आभ्यन्तर दल अभि-लट्वाकार और दल दण्ड नखराकार [Claw]होते है। समस्त पौधे का स्वाद तिक्त एवं क्षारीय



होता है। जड—बहुत लम्बी, वेलनाकार और लगभग शाही के कांटे [Quill] के आकार की, जिसकी छाल वाहर से ललाई लिए और सरलता से टूटने वाली और भीतर से सफेद एव दृढ होती है।

उत्पत्ति स्थान–

समस्त भारत वर्ष (प्राय उत्तरी भाग के खेतो में जाडो की फसल के साथ), और मध्य यूरोप के गेहू के खेतो में होती हे। कैम्पवेल के अनुसार मानभूमि मे तेल-हन के रूप मे इसकी खेती होती हैं।

नाम–

हिं–सावुनी, सावूनी, वडगोहुआ, मुसना। सथा., सिंघ, ब–सावूनी। अरवी–अलसावूनिय नवातुस्सावूनिय। यू–स्ट्रोन्यिओन। रूस–स्ट्रूथिअम (Struthium)। अ.—परफोलिएट सोपवर्ट (Perfoliate Soapwost) ले—सापोनरिआ वाक्कारिआ (Saponaria vaccaria Linn)।

उपयुक्त अङ्ग–मूल।

भेद—विदेशी सावूनी [१] (Quillaja Saponaria) यह गुलाव कुल (Rosaceae) की वनस्पति होती है। इसके पुष्प गुलावी होते हैं।

उत्पत्ति स्थान—

यह चिली और पेरु की निवासी है। चिली-दक्षिण अमरीका के पश्चिम तट पर स्थित एक प्रदेश है।

नाम—

हिं—विदेशी सावूनी अ.–क्विललैया सोप [Quillaia Soap], पनामा वार्क [Panama bark] कुल्लै–[Cullay-Native], ले.–क्वील्लाजा सापोनारिआ [Quillaja Saponaria Mol]।

वक्तव्य—क्विल्लाया [Quillaia] या क्विल्लाजा [Quillaja] चिली भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ 'प्रक्षालन या धोना' है। चिली निवासी इसकी छाल को सावुन और रीठे की भाति वस्त्र आदि प्रक्षालनार्थ प्रयोग करते। हैं। इसलिए उक्त नाम से अभिहित हुई है।

विदेशी साबूनी (SAPONARIA OFFICINALIS)

यह साबुनीकुल (Coryophyllaceae) की वनस्पति है इसके पुष्प गुलावी होते है।

उत्पत्ति स्थान–

यूरोप और ग्रेट ब्रिटेन।

नाम—

अ॰—सोपवर्ट (Soapwort) ले॰—सापोनारिआ आफ्फी सिनालिस (Saponaria officinalis Linn)

इतिहास–

प्राचीन यूनानी वैद्यो ने 'स्ट्रोथियम' के नाम से सापोनारिआ आफ्फी सिनालिस (Saponoria off cinalcis) अर्थात् उश्नान या गासूलका या सापोनारिआ वाक्कारिआ (Saponaria vaccaria) अर्थात् साबूनी बूटी का उल्लेख किया है। इन दोनो मे भी सेपोनीन सत्व विद्यमान होता है।

रायनिक संगठन—

इसमे सेपोनीन (Saponin) होता है जिस पर इसके गुण-धर्म अवलवित हैं। यह सत्व तीव्र शिरो विरेचन, कफ निस्सारक, मूत्रजनन और मलोत्सर्जक और वडी मात्रा में हानिकारक होता है।

नव्यमत–

खाज मे पौधे का उपयोग होता है।दीर्घ कालीन मद ज्वरो मे पौधे का सार या रस ज्वरहर एव वल्य समझा जाता है। विदेशीय साबूनी—लेखन, छेदन और रसायन है। प्रायः कठमाला और त्वचा के रोगो मे सामान्यतया प्रयुक्त सार्सापरिल्ला से यह श्रेष्ठ वतलायी जाती है।

लेखक—वैद्य हकीम दलजीत सिंहजी
आयुर्वेद विश्वकोषकार, चुनार

सामा घास (PANICUM FRUMENTACEUM)

यह तृणधान्यादि कुल(Gramineae)का एक जाति की घास होती है जो बरसात के दिनो मे जल के किनारे बहुत पैदा होती है। इसके बीजों को गरीब लोग खाते हैं। सामा घास की कुल ५५ जातिया होती है। इस घास को ढोर बडे शौक से खाते हैं। इस घास से कागज भी बनाये जाते है।

सामाघास की एक दूसरी जाति (Echinochloa crusgalli) रक्त रोधक और तिल्ली के विकारो को दूर करने वाली होती है।

नाम—

सं०—श्यामक, श्यामा, सुखमारा, अविप्रिया, राजधान्य, त्रिबीज, तृण बीजोत्तम। हिं०—सामाघास, समाक, सावा। राज०—सावा। ब०—सावा, शामुला, स्यामघान। बिहार—सावा। गु०—सामोघास। म०—जगली सामा। प०—चन्द्रा, सामा सोक। ब०—वाक्टो। फारसी-बाजरी। ले०—पेनिकल फ्रुमेण्टासियम (Panicum frumentaceum Roxb)

गुण धर्म और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत से सामाघास मधुर, स्निग्ध, कसैली, हलकी, शीतल, वातल, कफपित्त नाशक, मलरोधक और विष के दोषो को दूर करने वाली होती है। (ब० च०)

सारिवा जंगली (SMILAX ZEYLANICA)

यह रसोवकुल (Liliaceae) की विशाल स्निग्ध कटक युक्त आरोहिणी लता की वनस्पति है। पत्र एकान्तर, चमकीले, श्लक्ष्ण, नोकदार ६ से १२ इच लम्बे और उतने ही चौडे होते है। मुख्य सिरायें ७ से ६ होती है। पुष्प—बहु गुच्छदार, एक लिंगी। फल—मटर के समान आकार युक्त हरित (अपक्व) रक्त (पक्व) होते है। फल गुच्छो मे होते है तथा प्रत्येक फल मे १ से ३ बीज होते हैं।

मूल—छोटी, साधारण रक्ताभ गुच्छो में होता है यथा उससे अनेक उपमूल निकले रहते हैं। चित्र अवलोकन कीजिये।

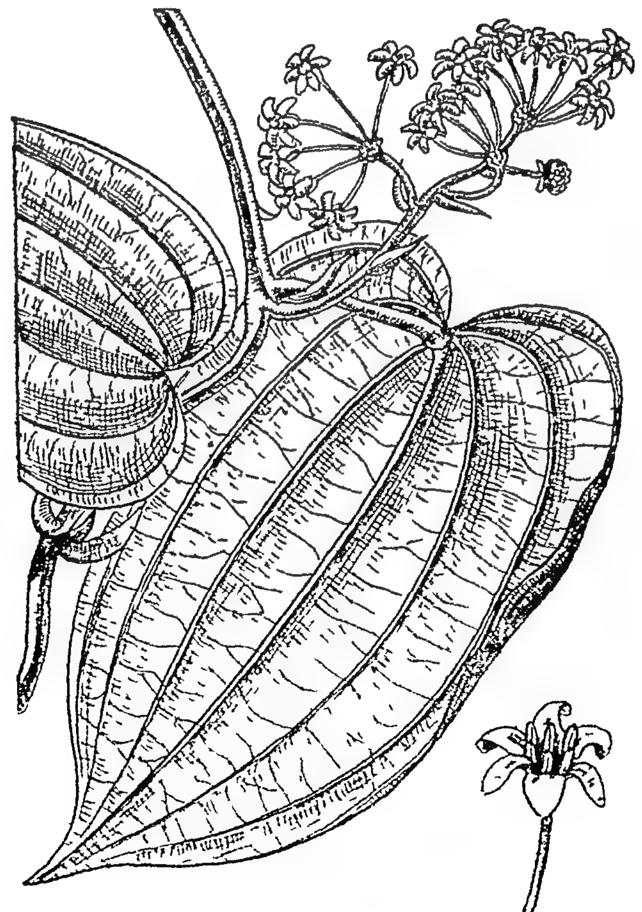
वक्तव्य—सारिवा बिलायती (Smilax officinelis) जिसे हिन्दी मे सालसा कहते हैं,विदेशी द्रव्य है और दक्षिण तथा मध्य अमेरिका में होता है। उसके प्रतिनिधि रूप मे यह द्रव्य प्रयुक्त होता हैं।

उत्पत्ति स्थान—

यह भारत और जावा के आर्द्रता युक्त पार्वत्य प्रदेश मे होता है।

नाम—

हिं०—सारिवा जगली, जगली उशवा। ब०—कुमारिका, सालसा। बोम्बे और महाराष्ट्र मे—घोटवेल। ता०—मालाइट्टामाराइ। ते०—कोण्डा तसारा। मलय०—कल्त॰



सारिवा भारतीय
SMILAX ORNATA LEM.

मारा । ले०—स्माइलेक्स जिलेनिका (Smilax zeylanica Linn)

उपयुक्त अङ्ग—मूल ।

मात्रा—चूर्ण ३ से ५ माशे, क्वाथ ५ से १० तोला ।

गुण धर्म और प्रयोग-

रस—किञ्चित मधुर । गुण—स्वेदजनन, मूत्रजनन, पौष्टिक और रसायन । वीर्य—शीत । विपाक—मधुर । दोषशमन—कफ । शारीरिक अङ्गो पर प्रभाव—मूत्राशय और जननेन्द्रिय पर । रोगोपयोग—उपदंश की द्वितीयावस्था, सन्धिवात, अस्थिशोथ, पूयमेह, त्वग्रोग, फिरंग रोग ।

विशेष—(१)—कभी-कभी यह पूयमेह की चिकित्सा मे Sarsaparilla के प्रतिनिधि रूप में व्यवहृत होती है ।

(२)—छोटा नागपुर मे यह वनस्पति प्रवाहिका मे प्रयुक्त की जाती है । (वनस्पति परिचय से साभार)

विशिष्ट योग—माजून उश्बा ।

सारिवा विलायती (SMILAX OFFICINALIS)

यह रसोनकुल (Liliaceae) की एक लता जाति की वनस्पति है जो दक्षिण तथा मध्य अमेरिका मे होती है और होन्डुरास से यहा आती है । इसकी जड को ही Sarsaradix कहते हैं और हिन्दी मे सालवा, सारिवा विलायती कहते है और विलायत से आने वाली सच्ची सालसा या सारसा परीला इसी लता की मूलिया है इसी को जमेका सारसा परीला (Sarsaparilla) कहते हैं ।

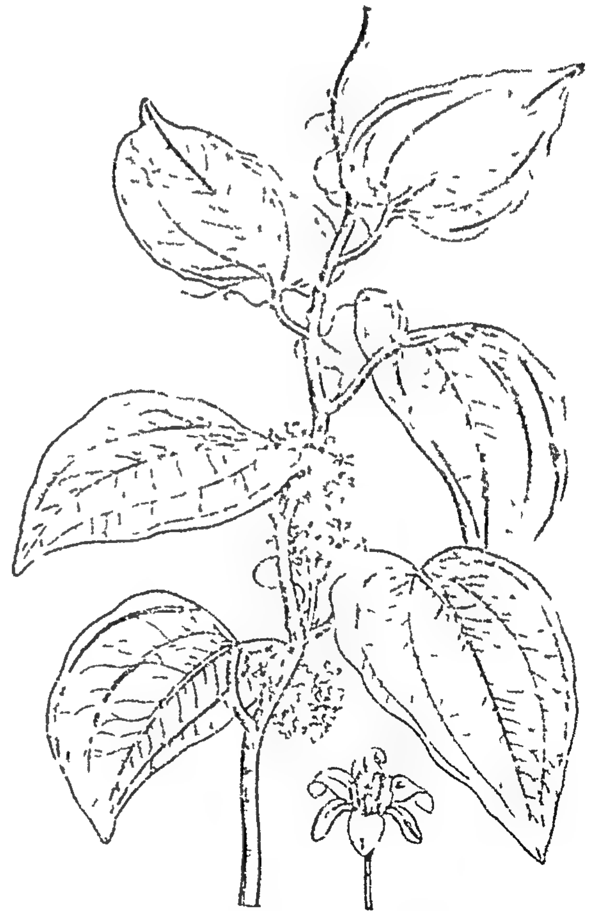
यह उत्तम रक्त शोधक है । इसका चित्र अवलोकन कीजिये ।

विशेष—गुण—धर्म और प्रयोग कृपया 'अनन्तमूल वगाल का' प्रकरण भाग १ के पृष्ठ १४०, १४१ पर अवलोकन करें । (व० व० से साभार)

नोट—इसकी एक भारतीय जाति होती है जिसको (Smilax ornata) कहते है तथा इसकी कृषि जमेका मे की जाती है । इसको भी 'जमेका सालसा पारिला' के नाम से पुकारी जाती है और सारसा पारिला के नाम से ब्रिटिश फार्माकोपिया के अन्तर्गत औषधि निर्माणार्थ सप्लाई की जाती है । चित्रावलोकन कीजिये ।

(इ०मे०मे०आ०यु० से साभार)

इन दोनो जातियो की कृषि भारत मे की जानी चाहिए । (स०)



सारिवा विलायती
SMILAX OFFICINALIS GRISEB

सालपन (FLEMINGIA CHAPPAR)

यह शिम्बीकुल (Leguminosae) की एक झाड़ी नुमा वनस्पति होती है, इसकी ऊंचाई ६ से १२ मीटर तक

होती है। इसके पत्ते छोटे और कुछ पीले रग के होते है।

उत्पत्ति स्थान--

यह वनस्पति बगाल, बिहार, दक्षिणी भारत और बरमा में पैदा होती है।

नाम-

हि.-सापन। ब-सालपन। देहरादून-छन्चरा। अवध-कसरौट। ले.-फ्लेमिगिया चापार (Flemingia Chappar Ham)

गुण धर्म और प्रभाव—

सन्थाल जाति के लोग इसकी जड को मृगी रोग के अन्दर देते हैं। नीद लाने के लिए भी इस औषधि का प्रयोग किया जाता है।

सालपन बड़ा

(FELEMINGIA NANA)

यह शिम्बीकुल (Leguminosae) की छोटी जाति की वनस्पति ६ से लेकर ८ इन्च तक ऊची होती है।

उत्पत्ति स्थान—

यह गङ्गा के उत्तरीय मैदानो मे तथा बिहार और छोटा नागपुर मे पैदा होती है।

नाम-

हि—सालपन बडा। ब—बडा सालपन। ले०—फ्लेमिंगिया नाना (Felemingia nana Roxb)

गुण धर्म और प्रभाव—

इसकी जड घाव और सूजन पर लेप करने के काम मे ली जाती है। —व च

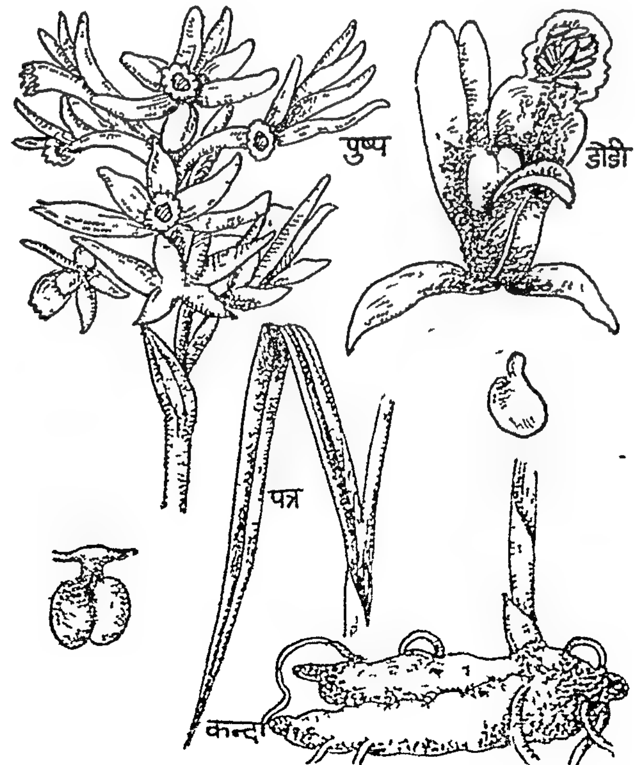
सालम मिश्री

(ORCHIS LATIFOLIA)

यह सालिमकन्दादि कुल (Orchidaceae) का एक क्षुप है जो कि पुष्पकाल मे १ से २ फुट तक लम्बा होता है। पत्र मूल के पास से निकलते हे। पत्र सीधे गोल एव भालाकार ढाई इच से पाच इच तक लम्बे होते है। पुष्प २-३ इच लम्बे गुलाबी रग के होते हे जो कि पुष्प दण्ड पर समूह रूप से खिलते हैं। मूल—श्वेत कन्द युक्त और आकृति मे हाथ के पन्जा के समान होता है। इसीलिए इसे सालमपन्जा कहते हैं। पुष्पकाल-जुलाई-अगस्त। फलकाल—अगस्त-सितम्बर।

चित्रावलोकन कीजिये।

सालम मिश्री (भारतीय सालम)
EULOPHIA CAMPESTRIS WALL.



उत्पत्ति स्थान-

यह वनौषधि भी उत्तराखण्ड के भिलङ्गना घाटी और केदारनाथ की घाटियो मे मिलती है। केदारनाथ की घाटी मे गौरीकुण्ड से केदारनाथ मार्ग के आस-पास खुले घास के मैदानो मे मिलता हे। भिलङ्गना गाटी मे पवाली, राजखर्क, सहस्त्रताल, गगी आदि स्थानो मे मिलता है जो कि समुद्र की सतह से ३००० मीटर से ३६०० मीटर हे।

इस मूलिका की उत्पत्ति स्थान के विषय मे चरक सहिता के टीकाकार चक्रपाणि तथा सुश्रुत सहिता के टीका-

कार डल्हणाचार्य ने भी इसे उत्तरी हिमालय मे मिलने वाला स्वल्प कन्द लिखा है ।

(वैद्य मायाराम जी उनियाल कनखल)

सालमपञ्जा—अफगानी स्थान से उत्तर अफ्रीका तक और एटलाण्टिक प्रदेश और उत्तर एशिया तक भी पायी जाती हैं ।

पञ्जासालम के नाम—स —मुञ्जातक, सुधामूली, पीयूषोत्थ, अमृत, वीरकन्दा । हिं.—सालममिश्री, पञ्जासालम, सालमपञ्जा । गढवाली—गरुडपञ्जा, हथ्थाजोडी । गु —पजाबीसालम । म —सालममिश्री । अरबी—सालबमिश्री । यूनानी—खसतीयाल लहसब । उदू—सालेप । अ —मार्शओर्चिड, सालेप (Marsh orchid, Salep) । स्पेनिश—पामाक्रिस्टी (Palma christi) । ले —ओर्किस लेटिफोलिया (Orchis latifolia Linn) ।

वक्तव्य—इसके अतिरिक्त इस आर्किस जाति समूह की दो जाति विदेशो से यहा आती है वो निम्न हैं ।

सालम लहसुनी (Orchis laxiflora Lam) सालम लहसुनिया या अबुशाहरी इसके कन्द का आकार लहसुन की गाठ की तरह होता है । इसके भीगने पर लहसन जैसी गन्ध आती है ।

उत्पत्ति स्थान—

इसका आदि स्थान मध्य और दक्षिणी यूरोप, तुर्की, काकसस, एशियामाइनर पर्शिया, अफगानिस्तान और तिब्बत मे होती है ।

नाम—

हिं., ब —सालपमिश्री । म —शालामिश्री । ले —आर्किस लक्सिफ्लोरा (Orchis laxi flora Lam)।

सालेम बादशाही उर्फ बसरा (Orchis mascula) ।

उत्पत्ति स्थान—

मध्य और दक्षिणी यूरोप, एशिया माइनर और पर्शिया में पैदा होती है ।

नाम—

ब —सालपमिश्री । बोम्बे—सालम । ले —ओर्किस मासक्युला (Orchis mascula Linn) ।

बसराई सालिब का रूसिया मे अधिक प्रचार है । इस जाति के कन्द के चपटे टुकडे मिलते हैं । यह जातिया भारतीय की अपेक्षा अधिक गुणकारी है । इसका मूल्य भी अधिक है । विशेषत यह श्री मन्तो के उपयोग मे ही आती है ।

ये विदेशी जातियां अफगानिस्थान, इराक, तुर्कस्थान और इजिप्ट मे उत्पन्न होती है । सालिब मिश्री के मूलो को जमीन से निकाल गरम जल से धो खादी या मोटे खुरदरे कपडे से मसलकर त्वचा को निकाल देते है । जिससे वे सफेद पीले प्रतीत होते हैं । फिर उनको तावे के तवे पर थोडा सेक लेते है ।

इनके अतिरिक्त आर्किस जाति समूह की १२ से अधिक जातियो के कन्द सालबमिश्री के नाम से यूरोप और एशिया के बाजारो मे बिकते हैं ।

रासायनिक सङ्गठन—

उत्तम प्रकार के सालब मे गोद प्रधान मांसवर्द्धक द्रव्य (Bassorin) ४८%, श्वेतसार २७%, शक्कर १% और ताजे शालिब मे से कुछ उड्डयनशील तैल मिलता है । राख २% होती हैं, उसमे फास्फेट क्लोराइड आफ पोटाशियम, केलशियम और नत्रल प्रधान द्रव्य मिलते हैं ।

उपयुक्त अङ्ग—कन्द ।

मात्रा—चूर्ण ३ माशे से ५ माशे तक ।

गुण धर्म और प्रयोग—

सक्षेप मे—रस—मधुर । वीर्य—शीत । विपाक—मधुर । गुण—अग्निदीपक, शुक्रल, बल्य, पौष्टिक, कामोद्दीपक । शारीरिक अङ्गो पर प्रभाव—मस्तिष्क । रोगोपयोग—रक्त रोग, अतिसार, अपचन, कफरोग ।

भावप्रकाशकार के मतानुसार जीवक, ऋषभक—बल्य, शीतवीर्य, शुक्र-कफप्रद, मधुर विपाकी, पित्तशामक, दाहहर, कृशतानाशक, वातशामक और क्षयहर है ।

जीवक ऋषभक का उल्लेख चरकसहिता के भीतर जीवनीय दशेमानि मे तथा सुश्रुत सहिता के भीतर विदारी गन्धादिगण और काकोली आदि गण मे किया है ।

निघण्टु रत्नाकर के मतानुसार सालिमकन्द उष्णवीर्य वृष्य, रस विपाक मे मधुर, धातुवर्द्धक, उपरस कडवा, गुरु, रसायन और पौष्टिक है । एव क्षय हृद्रोग, मेह, पित्त

विकार, रक्तविकार, आमदोष, कामला और कुम्भ कामले का नाश करता है ।

यूनानी मतानुसार—

प्रकृति—पहले दर्जे मे गर्म और तर । गुण-कर्म—नाड़ी बलदायक, वाजीकर, शुक्रल और बृंहण है । उपयोग—वीर्य उत्पन्न एव पुष्ट करने और वाजीकरण के लिए सालममिश्री का चूर्ण दूध के साथ खिलाते हैं । इसे प्राय वाजीकर माजूनो मे डालते तथा अन्य उपयुक्त औषधियो के साथ इसका हरीरा बनाकर पिलाते है ।

—यू द्र वि

डाक्टरी मतानुसार-

डाक्टर देसाई के मतानुसार सालिब मिश्री मस्तिष्क और नाडियो की उत्तेजक और पौष्टिक है तथा संग्राहक, स्तम्भन, जीवन और बृंहण (शरीर को मोटा बनाने वाला) और वयः स्थापन है। पचन नलिका के प्रदाह युक्त रोगो मे सालिब हितकर हे । इसके सेवन से कफ और आम की उत्पत्ति कम होनी है, क्षतो का रोपण होता है और निर्बलता दूर होती है यह पचने मे हलका और ग्राही हे ।

अतिसार, प्रवाहिका, सगर्भा का अतिसार और अपचन मे उत्तम आहार है । प्रसव होने के पश्चात् तथा अति मानसिक श्रम और मैथुन आदि से उत्पन्न थकावट को दूर करने मे सालिब मिश्री अति हितावह है ।

उपयोग—सालिब मिश्री का उपयोग दीर्घकाल से हो रहा है। फिर भी यह निश्चित नहीं कह सकते कि, यह मुञ्जातक है या जीवक ऋषभक । अष्टवर्ग के जीवक ऋषभक के स्थान पर दो या तीन प्रकार के सालिब को लेने पर प्रयोग विशेष पौष्टिक बनता है, यह अनुभव सिद्ध है ।

सालम मिश्री यह एक अत्यन्त पौष्टिक वस्तु है। इसका सिर्फ एक तोला चूर्ण प्रौढ मनुष्य के लिए चौवीस घण्टे तक पूरी खुराक का काम दे सकता है ।

इतनी थोड़ी मात्रा में मनुष्य की जीवन रक्षा करने वाला कोई दूसरा अन्न नही होता । इसीसे कई लोग अष्टवर्ग मे वर्णित जीवक इसी को मानते हैं । इस औषधि मे मस्तिष्क और मज्जा ततुओ के लिए उत्तेजक सग्राहक, पौष्टिक और रक्त स्तम्भक धर्म भी रहते है । मतलब यह है कि सालम जीवनी शक्ति वर्द्धक, कामोद्दीपक और अवस्था स्थापक होती है । ऊपर वर्णित की हुई सालम की सभी जातियो मे ये गुण कम अधिक मात्रा मे रहते है मगर इन सब मे सालम पञ्जा सर्वोत्कृष्ट होती है और मद्रासी तथा देशी लहसनिया सालब कनिष्ट दर्जे की होती है ।

मस्तिष्क और मज्जा ततुओ मे अधिक दिमागी काम करने की वजह से कभी कभी बहुत थकावट आ जाती है और उसकी क्रिया मे अव्यवस्था उत्पन्न हो जाती है । ऐसे समय मे सालम का उपयोग करने से मस्तिष्क की क्रिया सुव्यवस्थित हो जाती है । कोमल प्रकृति की स्त्रियो मे प्रसूति काल के पश्चात अथवा अतिशय आयास और अतिशय मैथुन से जो थकावट पैदा हो जाती है उसमे भी सालम बहुत अच्छा काम करती है ।

सालिब मे उत्तम बृंहण, वातनाडी, बल्य, शुक्रवर्द्धक, शुक्रस्तम्भक, पाचन और ग्राही गुण रहा है । पाचन गुण के हेतु से पाचन सस्थान की विशेषत आन्त्र की निर्बलता से उत्पन्न अपचन, अतिसार और अग्नि-माद्य मे रोगहर और शक्ति वर्धन गुण के हेतु से व्यवहृत होता है । एव उत्तम बृंहण और वृष्य गुण हेतु से शीतकाल मे सामान्य जन समाज इसका पाक बनाकर सेवन करते रहते हैं ।

अधिक दिनो तक समुद्र मे रहने से नाविक (मल्लाह) लोगो को अनेक बार कफ रक्तज (Sea Scurvy) रोग हो जाता है । उनको सालिब चूर्ण का दूध या मट्ठे के साथ सेवन कराने से लाभ हो जाता है । कतिपय यूरोप वासी समुद्र के सफर मे प्रतिदिन प्रात काल १ औ० सालबमिश्री के चूर्ण को आधे गेलन जलन मे उबाल शक्कर मिलाकर पीते हैं । जिससे उनको स्फुर्ति रहती है । क्षुधा नही सताती और शरीर बल की वृद्धि भी होती है । यूरोपीय जनता की मान्यता है कि सालब चूर्ण १ औ० से २४ औ० गहूँ जितना पोषण मिलता है ।

सालिब के उत्तम पौष्टिक गुण के हेतु से इजिप्ट, तुर्किस्तान और अरब स्थान वासी लोग भी सालिब का सेवन दिनो तक आहार रूप से करते रहते हैं । उन लोगो की भी

मान्यता है कि सामान्य मनुष्यो के लिए २½ तोला चूर्ण दूध के साथ सेवन करने पर२४घण्टे के भोजन का पूरा पूरा काम चल जाता है। —गा औ र

प्रयोग—

प्रदर और शुक्रमेह—दोनो प्रकार के सालिब और दोनो प्रकार की मूसली समभाग मिला कपड छान चूर्ण करे। इसमे से तीन तीन माशे चूर्ण, छटाक भर दूध और आवश्यक शक्कर मिलाकर प्रात साय सेवन करते रहने से थोडे ही दिनो मे स्त्रियो के श्वेत प्रदर और पुरुषो के पेशाव मे धातु का स्राव दूर होते है और शरीर मोटा वन जाताहे।

जीर्ण अतिसार—सालिब का चूर्ण ३-३ माशे मट्ठे के साथ दिन मे ३ बार देवें। भोजन—दही, भात । इस प्रकार २१ दिन सेवन करने पर आम प्रकोप, पुराना अतिसार, पुराना पेचिश और सग्रहणी दूर हो जाते हैं।

वात प्रकोप—थोडे परिश्रम मे श्वास बढने वालो को और कफ विकार वालो को सालिबमिश्री का चूर्ण और थोडा पीपल का चूर्ण बकरी के दूध के साथ प्रात साय सेवन कराने पर कफ का ह्रास और श्वास प्रकोप भी दूर हो जाता है। —गा औ र

विशिष्ट योग—

सालम चूर्ण—सालम मिश्री का चूर्ण १ तोला और बादाम का चूर्ण ३ तोले को घी मे सेकें। फिर १० तोले दूध और इच्छानुसार शक्कर मिला लेवे। इस प्रकार खीर बनाकर प्रात काल १४ दिन सेवन कराने से निर्बलता दूर होती है। अधिक सन्तान होने से जिन माताओ को निर्वलता आई हो उनके लिए यह खीर अति हितावह है।

सालम पाक—१ सेर सालम मिश्री के चूर्ण को १ मन दूध मे मिलाकर खोवा करें। फिर ३ सेर घी मे मावे को सेकें। फिर१५ सेर शक्करकी चासनी करे चाशनी मे पहले साफ की हुई १ सेर काली मुनक्का डाले पकजाने पर भुना हुआ मावा मिला लेवे और ऊपर से ७ सेर घी मिला लेवें एव बादाम, पिस्ता, चिरौजी, खसखस, जायफल, जायपत्री, केशर, इलायची छोटी आदि इच्छानुसार मिलाकर थाल मे जमा देवें। इसके ऊपर सोना, चादी के वर्क लगाये जाते है। एव थाल में भस्म (लोह, अभ्रक, सुवर्ण, बङ्ग) भी मिला सकते है। मात्रा—२½ से ५ तोले तक।

गुण—यह पाक कृश, निर्वल, शुक्रदोष वाले, नपुसक और वात वात व्याधि से पीडित मनुष्यो के लिए अति हितावह है। —गा औ र

कामोद्दीपक चूर्ण—सालम मिश्री, तोदरी सफेद, कौंच के बीजो की गिरी, इमली के बीजो की गिरी, तालमखाना, सरवाली के बीज, मूसली, कालीमूसली, सेमर मूसली, बहमन सफेद, बहमन लाल, शतावर, बबूल का गोद, बबूल की कच्ची मूडी फली, ढाक की नर्म कली, इन सब चीजो को समान भाग लेकर बारीक पीस लेना चाहिये फिर सारे चूर्ण का जितना वजन हो उतनी ही मिश्री मिलाकर बोतल मे भर लेना चाहिये।

इस चूर्ण को एक तोले की मात्रा मे सवेरे शाम मिश्री मिले हुये गाय के दूध के साथ सेवन करना चाहिये। कुछ दिनो तक लगातार इसका सेवन करने से नये और पुराने प्रमेह, काम शक्ति की कमजोरी, शीघ्र पतन, सिर का दर्द, कमर का दर्द इत्यादि रोग नष्ट होते हैं। पुरुष की स्त्रियो के साथ रमण करने की शक्ति बढती है। इस चूर्ण को कम से कम ४० दिन तक सेवन करना चाहिए और सेवन करते समय स्त्री प्रसग, खटाई तथा तेल इत्यादि गर्म वस्तुओ से परहेज करना चाहिए।

सालम पाक न०२—सालम पजा १० तोले, सफेद मूसली, विदारी कन्द, चोवचीनी, गोखरू, केवाच के बीज, ताल मखाना, शतावरी, खरैटी के बीज गगेरन की जड़की छाल, सेमर मूसली और आंवला, ये सब चीजे ५-५ तोला लेकर सबका महीन चूर्ण करके ५ सेर गाय के दूध के साथ सबका खोवा बनाकर उस खोवे को घी मे भून लेना चाहिए। फिर वशलोचन, इलायची, पीपर, पीपलामूल, जायफल, जायपत्री, अकरकरा ये सब चीजें ढाई, २ तोला, गिलोय सत्त्व २ तोला, प्रवाल पिष्टि २ तोला, अभ्रक ६ माशा, कान्तिसार ६ माशा, बग भस्म ६ माशा, बादाम की मगज २० तोला, पिश्ता १० तोला, नारियल की गिरी २० तोला, चिरोंजी १० तोला और तला हुआ बबूल का गोद १० तोला। इन सब चीजो को खोवे मे



मिलाकर ५ सेर गक्कर की चाशनी मे उस औषधि मिश्रित खोवे को और १ तोला घुटी हुई केशर को मिलाकर छटांक-छटाक भर के लड्डू बना लेना चाहिए ।

प्रतिवर्ष जाडे के दिनो मे ४० दिनो तक एक लड्डू सवेरे और एक लड्डू शाम को खाकर ऊपर से मिश्री मिला हुआ दूध पी लेना चाहिए ।

गुण—इस पाक के सेवन से मनुष्य की काम शक्ति, मेधाशक्ति जीवन शक्ति तथा रोग निवारण शक्ति [Immunity Power] एक वर्ष तक सुरक्षित रहती है । स्त्रियो के साथ रमण करने से, दिमागी मेहनत करने से तथा दूसरे परिश्रम से मनुष्य जो शक्ति खर्च होती है वह इसके सेवन से कई अगो से पुन प्राप्त हो जाती है ।

इसके सेवन मे मनुष्य के रक्त मे रोगो से मुकाबला करने वाले तत्त्व बढ जाते हे. जिससे किसी भी रोग का हमला उस पर कठिनाई से होता है । यह बहुत उत्तम योग है । [व च से साभार]

सालब पाक (न त व लिट्ट प्र स भा. १)—सालम पजा ४० तोले, पिस्ता २० तोले, बादाम २० तोले, चिरौंजी ८ तोले , अखरोट १ तोला, सफेद मूसली ६ तोले, गोखरू ४ तोले, असगध, तालमखाना, शतावर, रूमी मस्तङ्गी, कौंच बीज २-२ तोले, केशर, जायफल जावित्री लौंग, शीतल मिर्च बशलोचन, दाल चीनी और बिहदाना १-१ तोले, मिश्री १२८ तोले, और घी ४० तोले ले । पहले सालब के बारीक चूर्ण को २० तोले धी मे भून ले । फिर मिश्री की चाशनी कर, केशर, सालब मिश्रित भुने हुए चूर्ण को मिलावे । अन्त मे शेष औषधियो का कपड छान चूर्ण को मिलाकर ४-४ तोले के लड्डू बाधे ।

मात्रा—१ से २ लड्डू खाकर ऊपर २० तोले दूध पीवे ।

उपयोग—यह पाक अत्यन्त वीर्य वर्द्धक और पौष्टिक है । अण्डकोष की नसो के दोष से वीर्य का पतलापन, नपुसकता, शारीरिक निर्बलता, मस्तिष्क की निर्बलता, अधिक निद्रा, आलस्य और मन्दाग्नि आदि सब दोषो को दूर करता है । यदि भस्म मिलाना हो, तो रस सिदूर पीसा १ तोला, सुवर्ण भस्म एक तोला, अभ्रक भस्म दो तोले और वग भस्म २ तोले मिला लेने से पाक विशेष लाभदायक बनता है ।

यूनानी विशिष्ट योग—

सफूफ बन्द कुशाद (यू. सि. यो स.)—सालम मिश्री, सिरस के बीजो की गिरी और धोई हुई लाख (लुक मग्सूल) प्रत्येक दो तोला । इनको कूट पीस कर एक पाव वट क्षीर मे खरल कर ले । जब गाढा होकर गोलियां बधने योग्य लुगदी हो जाय तब जगली बेर के बराबर गोलिया बना लें ।

मात्रा और सेवन विधि—प्रतिदिन सवेरे १ गोली ७ दिन तक खावें ।

गुण तथा उपयोग—यह मूत्र मार्ग विस्तृत (बन्द कुशाद) और शुक्र श्राव मे परम गुणकारी और परीक्षित है ।

प्रमेह हर चूर्ण (१) (यू चि. सा.) साहलबमिश्री, तालमखाना, अश्वगन्धा, मस्तगी, नेत्रवाला, छोटी इलायची के बीज, निशास्ता, भोफली (बहुफली) तज, बगभस्म, बड़ी इलायची, सब समान भाग लेकर कूटछानकर सम भाग खाड मिलावे ।

मात्रा—६ माशा, दूध के साथ प्रयोग करें ।

गुण—प्रमेह, शीघ्र पतन, वीर्य का पतलापन तथा स्वप्नदोष मे उत्तम है ।

प्रमेह हर चूर्ण नं. (२) सिघाडा शुष्क, गोद कीकर १-१ तोला, माजू, रूमीमस्तङ्गी प्रत्येक ६ माशा, ताल मखाना, साहलब मिश्री, निशास्ता प्रत्येक आठ माशा, सब औषधि को कूटछान कर समभाग खाड मिलाले ।

मात्रा—१-१ तोला, प्रात साय गौदुग्ध से दे ।

गुण—कोष्ठ बद्धता को ठीक करके इस चूर्ण को प्रयोग करे तो प्रमेह मे अत्यन्त उत्तम है ।

प्रमेह हर चूर्ण (३) साहलब मिश्री, बोजीदान, शीतल चीनी, दारचीनी, सुरजान मधुर, मस्तगी रूमी, गोखरू समभाग लेकर कूटछानकर चूर्ण करे, समभाग खांड मिलालें ।

मात्रा—१ तोला, गौदुग्ध से प्रयोग करे ।

गुण—प्रमेह मे उपयोगी है ।

माजून बन्द कुशाद—तालमखाना, मैंदालकडी,

उटगन बीज, मगज कौच, मूसली काली तथा सफेद, बीजबन्द गुजराती, साहलब मिश्री, प्रत्येक ३ तोला, शकाकुल २ तोला, तज, जावित्री, सोठ, मोचरस, जायफल, दारचीनी १-१ तोला, पिप्पली ६ माशा सब औषधि को कूट छान कर चूर्ण बनावे ।

गो दुग्ध का खोया १ सेर लेकर भून लें, अब मधु आध सेर, खांड १॥ सेर का पाक करके खोया और शेष सब औषधि इसमें मिला दे। मात्रा—१ तोला। गुण—वाजीकरण तथा स्तम्भक है।

माजून साहलब—कस्तूरी १॥। माशा, जुन्द बदस्तर, दरूनज अकरबी, चादी पत्र, अम्बर प्रत्येक ३॥ माशा, बालछड़, बडी इलायची, ऊदखाम, कजमाजज, गोद कीकर प्रत्येक ५। माशा, पनीर माया शुत्र अहराबी, गाऊजबान पत्र, बादरज बोया, फरज मुशक, रेगमाही, चिडे का शिर का मगज भुना हुआ, मगज चलगोजा, मगज नारियल, मगज बादाम, मगज पिस्ता, मगज फिन्दक प्रत्येक ७ माशा, बोजीदान, सुरजानमधुर, दोनो तोदरी, दोनो बहमन, सोठ, पोदीना शुष्क, गोक्षरू (दूध मे भिगोकर शुष्क किया हुआ) खशखाश बीज, सफेद तिल छिले हुए, गाजर बीज, पिप्पली कचूर, मस्तगी (पृथक खरल करें) जायफल, जावित्री केशर, कूठ मधुर, मगज तुखम खरबूजा प्रत्येक १०॥ माशा, इन्द्र जौ, दारचीनी, लौंग, छोटी इलायची प्रत्येक १४ माशा, पान जड, शकाकुल मिश्री, खसतीयल सहलब, अजवायन खुरासानी, प्रत्येक १॥ तोला, कूट छानकर त्रिगुण मधु का पाक कर मिलावें। मात्रा—७ माशा। गुण—वाजीकरण है, प्रमेह मे उपयोगी है।

माजून मगलज—कस्तूरी ६ रत्ती, अम्बर ३॥ माशा, मगज हब्ब किलकिल १०॥ माशा, दालचीनी, साहलब मिश्री, शकाकुल मिश्री, जायफल, इन्द्र जौ, मस्तगी रूमी, केशर, बोजीदान, गुलाब पुष्प, दोनो बहमन, हालों बीज, गाजर बीज प्रत्येक ६ माशा, भाग ६ तोला ४॥ माशा, मधु त्रिगुण, यथा विधि माजून तैयार करे। मात्रा—७ माशा।

गुण—शिश्न मे दृढता तथा उत्तेजना उत्पन्न करता है। (यू चि सा)

अहितकर—उष्ण प्रकृतियो मे, विशेषकर छामाशयिक द्वारा के लिए। निवारण—सिकजबीन और कासनी का स्वरस। प्रतिनिधि—बूजीदान।

सालम लाहौरी (Eulophia campestris)

यह सालम मिश्री कुल (Orchidaceae) का क्षुप है जो कि पुष्प काल मे ८ से १४ इच ऊचा होता है। इसके मूल मे कन्द होता है। जो देखने मे शृग के समान और खाने मे मधुर होता है। इसके मूल से ही पत्र निकलते है पत्र की आकृति भालाकार पत्र का अग्रभाग क्रमश नोकीला। पुष्प काल मे मूल से ही पुष्प दण्ड बाहर आता है वो १ से ३ फीट सख्त और साफ जिसके ऊपरीभाग मे पुष्प खिलते हैं। फल बहुत होते हैं। फूल कुछ नीचे झुके हुए श्वेत किंचित पीत रग के होते है। पुट चक्र कुछ फैला हुआ एव दल चक्र की अपेक्षा छोटा होता है यह सालम मिश्री की एक देशी जाति है।

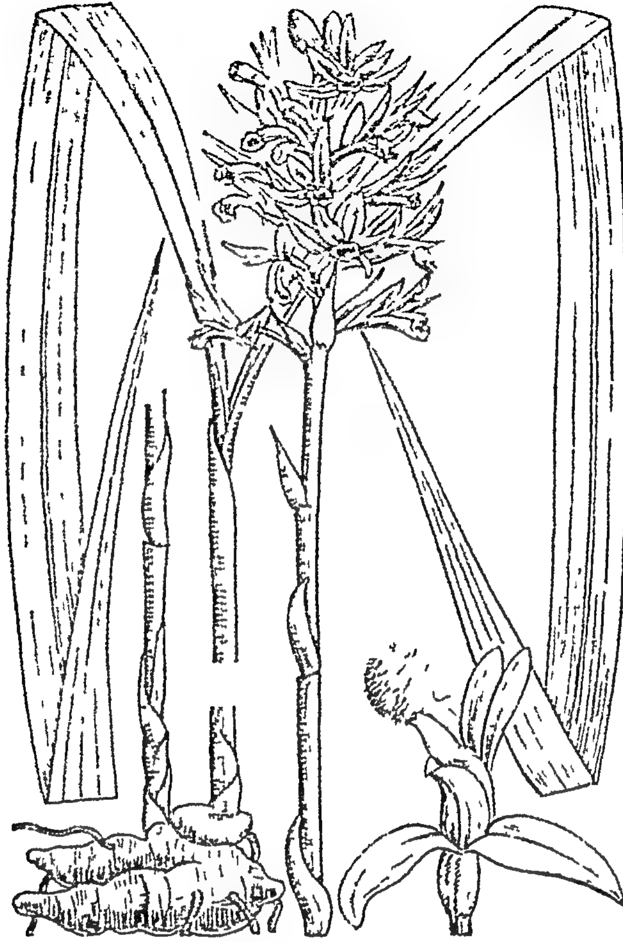
फूलने का समय—मार्च मास मे फूल होता है। चित्र अवलोकन कीजिए।

वक्तव्य—इसके सम्बन्ध मे सर जार्ज वाट साहब लिखते है कि जो बाजार मे सालम मिश्री लाहौरी विक्रय होती है वो उपरोक्त क्षुप से एव Eulophia nuda Linbl व Eulophia virens R Br क्षुपो से सगृहित की जाती है। सालम मिश्री वर्त्तमान मे अफगानिस्तान, पारस्य व बोसारा के पहाड से सग्रह की जाती है। हाल मे नील गिरी पहाड व लङ्का से भी आती है। फूल आजाने पर मूल को निकाल लेते है ओर कन्द को भली प्रकार धोकर साफ करके धूप मे सुखा कर बाजार मे बिक्री की जाती है। (भा व)

उत्पत्ति स्थान—

यह उत्तराखण्ड मे विशेष रूप से मिलता है। उत्तराखण्ड के भागीरथी घाटी, भिलगना घाटी और केदार नाथ की घाटियो मे उपलब्ध है।

भिलगना घाटी मे पवाली, मास्या, राजखर्क आदि स्थानो



सालम लाहोरी
EULOPHIA CAMPESTRIS Wall

के नमी और छायादार स्थानो पर घास के मैदानो मे विशेष रूप से पाया जाता है। इन स्थानो की ऊचाई समुन्द्र की तरह से ३००० मीटर से ३६०० मीटर तक है। इसके सिवाय भारत की समतल भूमि मे पजाव से अयोध्या, नैपाल, सिक्किम चटगाव, वगाल, दक्षिण, तिरुहत, आबू पर्वत पर और रुहेल खण्ड मे पैदा होती है।

नाम—

व० हिं०—सालम मिश्री, भारतीय सालम, सालिब मिश्री लाहौरी। गढवाली—गरुड पंजा, हथथाडजो सु र्गमिश्री। सथाली—वङ्गतेली, भोगाटेनी। गु०—सालूमी मिश्री। प०—सालिव मिश्री। वोम्वे—सालम। राज०—मालमलाहौरी। म०—सालम मिश्री। फा०—सग मिश्री। नेपाल–हत्तिपेला। उर्दू—सालिव मिश्री। ले०—इलोफिया कम्पेस्ट्रिस (Eulophia camdoestris well)

उपयुक्त अङ्ग—कन्द। मात्रा—३ माशे से ५ माशे तक।

गुण-धर्म और प्रभाव—

आयुर्वेद के मत से इसकी गांठ (कन्द) भूख वढाने वाली,अग्नि वर्द्धक, मीठी, वसैली, उष्ण वीर्य, भारी, रसायन कामोद्दीपक, धातु परिवर्त्तक, रक्त शोधक और हृदय रोगो मे लाभ पहुचाने वाली होती है।

यूनानी मतानुसार—

इसका कन्द कामोद्दीपक, सकोचक, पौष्टिक, अग्नि-वर्द्धक और पक्षाघात मे लाभ पहुचाने वाला होता है। सालम मिश्री शरीर को सुखाने वाले क्षय रोग तथा दूसरे रोगो मे बहुत लाभदायक होती है इसके प्रयोग से शर्करा-श्मरी मिटती है। मिश्री के साथ इसके चूर्णकीफक्की ½ से १ तोला की मात्रा मे लेने से वीर्य की कमजोरी दूर होती है। इसको पीसकर दूध मे औटाकर पिलाने से आमातिसार मिटता है। स्नायु जाल की कमजोरी को मिटाने के लिये सूखी सालम मिश्री का चूर्ण दूसरी उपयुक्त औषधियो के साथ देना चाहिये। पक्षाघात रोग मे भी इसके प्रयोग से लाभ होता है।

(व. च)

सालम मद्रासी (Eulophia nuda)


सालम मद्रासी
EULOPHIA NUDA LINDL

यह सालम मिश्रीकुल (Orchidaceae) का क्षुप होता है जो हिमालय मे नेपाल से आसाम तक और दक्षिण मे कोकन से दक्षिणी तटवर्ती स्थानो तक होता है।

नाम—

स —मान्या। हि.–गोरुमा, सालम मद्रासी। व —बुदवार। वोम्वे–मानकन्द। ले —युलोफिया नुडा (Eulophia nuda Lindl)।

उपयुक्त अङ्ग–मूल। मात्रा–३ माशे से ६ माशे तक।

गुण धर्म और प्रयोग—

यह कृमिघ्न है और कठमाला के कीटाणुओ को नष्ट करने के लिए दी जाती है। इससे खाँसी ठीक होती और शरीर के रक्त की शुद्धि होती है तथा कृमियो का नाश होता है। (ग्लो इ मे. प्ला)

साल शाई बबूल (Acacia tomentosa)

यह शिम्बीकुल (Leguminosae) का मध्यम दर्जे का छोटा झाड होता है। पत्र—धूसर वर्ण व सूक्ष्म लोम युक्त, १ से २ इञ्ची लम्बा; पत्रिका $\frac{1}{6}$ से $\frac{1}{4}$ इ ची, धूसर व सब्ज वर्ण। काटा १ से २ इ ची लम्बा, विस्तृत व धूसर वर्ण, काटे के अग्रभाग का रङ्ग बैंगनी होता है। फली–वक्र, धनुष के अनुसार, ४ से ६ इ च लम्बी एव आध इ च चौडी और दण्ड छोटा। फली मे ६ से १० तक बीज होते हैं। बीज बबूल के बीज की अपेक्षा छोटे। फल-गाढा धूसरवर्ण का। ऊपर का काष्ठ पीका और धूसर वर्ण का, भीतर का काष्ठ कुछ गाढा धूसर वर्ण का। वृक्ष में प्रायः करके सार नही होता है। काष्ठ जलाने के काम मे आता है। ग्रीष्मकाल मे फूल और वर्षाकाल मे फल या फली होती है।

उत्पत्ति स्थान–

इसके वृक्ष भारत के दक्षिण पश्चिम भाग, मध्य बगाल, सुन्दर वन, हुगली, हावडा, २४ परगना और वोटे निकल गार्डन शिव पुर मे देखे जाते हैं।

नाम—

हि०—सालशाई बबूल। व.–सालाशहि बावला, साल शाई वावला। ले०–एकेसिया टोमेन्टोसा (Lcacia



tomentosa Willd)।

उपयुक्त अङ्ग–त्वक, फली, बीज, मूल और छाल।

गुण धर्म और प्रभाव–

औषधार्थ व्यवहार बबूल के समान है।

सावनी (Lagerstroemia Indica)

यह मेन्दिकादि कुल (Lythraceae) का एक बडी जाति का वृक्ष होता है। इसके पत्ते २ से लेकर ३ इंच तक लम्बे होते है। इसके फूल मध्यम कद के सफेद और लाल रङ्ग के होते हैं। इसके बीज भूरे रङ्ग के होते हैं।

उत्पत्ति स्थान—

यह वनस्पति आसाम, चटगांव, लोअर बर्मा और पश्चिमी घाट मे पैदा होती है।

नाम—

हि—सावनी, तेलिंगाचिना, फुरुश। ब—फुरुश, तेलिंगाचिना। बम्बई—धायटी। ता—सिनाप्पु। ते.–चिनानोरेंटा। अ०–इण्डियन लिलाक (Indian Lilac) ले०–लेजेस्ट्रोमिया इण्डिका (Lager stroemia indica Linn)।

गुण धर्म व प्रयोग—

इसकी छाल उत्तेजक और ज्वरनाशक होती है। इसकी, छाल पत्ते और फूल विरेचक, जल निस्सारक और तेज दस्तावर होते है। [ब च]

सास फरास (SASSAFROS OFFICINALE)

यह जयपत्र कुल (Lauraceae) का एक गुल्म है। सासफरास उत्तरी अमेरिका के पूर्वी क्षेत्रो का आदिवासी पौधा है। वृक्ष एव पत्तो के स्वरूप मे बहुत अनेक रूपता पाई जाती हैं। सामान्यतया इसके गुल्म २० से ३२ मीटर ऊंचे होते ह। किन्तु कही-कही इसके (२२ से ३५ गज) ऊचे वृक्ष भी पाये जाते हे। एक ही वृक्ष की पत्तियो की रूप रेखा मे बहुत अन्तर पाया जाता है। कोई-कोई लट्वाकार तथा अखण्डित किन्तु उसी वृक्ष मे अनेक पत्तिया २-३ खण्डो वाली भी होती है। सासफरास की जड जो साधारणतया काण्ठीय (कठोर) होती है, भूरापन लिए सफेद रग की चिपियो (Chips) के रूप मे बिकती है। जड़ का स्वाद एव गन्ध सासफरास जैसा विशिष्ट होता है, जो काण्ड मे नही पाया जाता। जड की छाल चमकीले मुर्चई भूरे रग की विषमाकार टुकड़ो के रूप मे तथा कोमल और भगुर होती है। अनुप्रस्थ विच्छेद छोटा कार्कवत निश्चित स्तरो वाला होता है, जिसमे असख्य तैलकोष दिखाई देते है। स्वाद कुछ-कुछ मधुर, कषैला तथा सुगन्वित होता है।

उत्पत्ति स्थान–

पूर्वी सयुक्त राज्य अमेरिका और कनाडा।

नाम–

हि—सासफ्रास। अरबी—सासफ्रास। अ–सासाफ्रास (Sassafras)। ले—शास्सा फ्रास अफीसिनाले (Sassafras officinale) या सास्साफ्रास वारी फोलिउम (Sassafras variifolium kuntze) पर्याय Sassafras albidum (Nultall) Nees.

वक्तव्य—सासफरास उस व्यक्ति का नाम है, जो सर्वप्रथम इसे अपने उत्पत्ति स्थान से लाया था। अस्तु, उसी के नाम पर इसका सासफरास नाम रखा गया। फ्लोरिडा मे सन् १५१२ ई० के बहुत पूर्व से ही सासफरास का व्यवहार चिकित्सार्थ वहा के निवासियो द्वारा किया जाता था।

रासायनिक संगठन–

एक उत्पत् तैल रोगन सासफरास (सासा फरास ऑयल) जो स्टीम आसवन (Distilled with steam) द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसका ग्रहण यूनाइटेड स्टेट्स फार्माकोपिया (U. S P.) मे भी किया गया है।

उपयुक्त अङ्ग—मूल, मूलत्वक तथा मूल से प्राप्त सुगन्वित उत्पत् तैल (सासाफरास आयल Sassafras oil)

मात्रा—प्रवाहीसार ½ से १ ड्राम। रोगन सासफरास ½ से ५ विंदु।

गुध धर्म और प्रभाव–

प्रकृति—छाल तीसरे दर्जे के आरम्भ में और काष्ठ दूसरे दर्जे में गरम और रूक्ष है।

गुण-कर्म—उत्तेजक, रसायन, स्वेदल, आर्तवजनन और मूत्रल।

उपयोग—

त्वक विस्फोट, आमवात, फिरग के परिणाम और वातरक्त आदि मे इसका सफलतापूर्वक प्रयोग होता है। किन्तु चूर्ण वहुत कम, अधिकतया फाण्ट या क्वाथ करके प्रयोग किया जाता है। नेत्राभिष्यन्द और शोथ आदि मे, नेत्रो के लिए धावन रूप में इसका काढा उपादेय होता है। लगभग डेढपाव (एक पाइन्ट) उवलते जल मे २½ तोले इसकी कुचली हुई छाल का फाण्ट बनाकर मदिरा पीने के गिलासभर की मात्रा में बारम्वार लिया जाता है। इसे साधारणतया अन्यान्य औषधियो के साथ देते हैं। दन्तशूल, चौथिया ज्वर, जीर्णकास, मिचली, वमन, विसूचिका, आमाशय, यकृत्, वस्ति, वृक्क की सर्दी और कफज सधिशूल और मूत्रावरोध मे यह औषधि गुणकारक है। ज्वर का दौरा रोकती है। रूक्ष सारक और विरेचन होने पर भी यह मूत्र नलिका मे अवरुद्ध वायु को विलीन करती है। अगद गुण विशिष्ट होने के कारण विषैले रोगो विशेषकर प्लेग मे यह बहुत गुणकारक है। दूषित वायु का शोधन करती है। इसको उश्वा और चोवचीनी के समाय पिया जाता है।

अहितकर—उष्ण एव रूक्ष प्रकृति को।

ले०—वैद्य—हकीम श्री दलजीत सिंह जी
आयुर्वेद वृहस्पति, चुनार (उ. प्र.)

सिन्कोना [Cinchona officinalis)

यह मजिष्ठादिकुल (Rubiaceae) का चिर हरित वृक्ष ३० से ३५ फुट ऊचा होता है। काड गोलाकार और लम्वा, वृक्ष का अग्रभाग पत्रमय, छाल वाहर से धूसर, सफेद और काले दागो से युक्त तथा भीतर पीत वर्ण होती है। प्रारभिक शाखें किंचित चपटी और नरम होती हे। पत्र-विपरीत, ३-४ इच लम्वे विस्तृत, चिरहरित वर्ण तथा पत्र वृन्त रक्ताभ होता है। पुष्प दण्ड छोटा अनेक शाखा प्रशाखायुक्त होता है जिसमे गुच्छो मे गुलावी रग के मध्यमाकार के फूल कुछ सफेदी लिए होते है।

फल—¾ इच लम्वा, रक्ताभ, धूसर स्वत स्फोटी होता है जिसके भीतर अनेक छोटे, चपटे, धूसर वीज होते हैं। फल के फटने पर पतले वीज हवा मे उड जाते है।

फूलने फलने का समय—ग्रीष्म पुष्प तथा वर्षा मे फल लगते हैं।

जाति—इस वृक्ष की अनेक जातिया (लगभग ३०-४०) होती हैं। जिनमें पीत कुनैन (१) C Calisaya Weddell) यह भी एक प्रकार का कुनैन का वृक्ष है इसको Yellow cinchona कहते है। इस जाति का वृक्ष वड़ा होता हे, छाल पोचा, श्वेताभ। पत्र ३ से ८ इची विस्तृत, लम्वा डिम्वाकृति, अग्रभाग मोटा, पत्र दण्ड की ओर क्रमश नोकीला, ऊपर का भाग उज्वल हरित वर्ण कभी कभी लाल चिन्ह दिखायी देते हैं। फूल–C officinalis के समान, किन्तु कुछ कम होते हैं, फूल-गुलावी। वीज कोष ½ इंची लम्वा। ये देखने मे पहले के समान दिखाई देते हैं। जनवरी से अप्रैल मास तक फूल व फल लगते है।

(२) C Ledgeriana Moens कोई कोई इसको C Calisaya क ा ही वा एक भेद कहकर विवेचना करते करते है। यह वृक्ष C Calisaya के ही अनुरूप होता है। इसके पत्र अपेक्षाकृत छोटे व नुकीले। जुलाई मास में इसके फूल लगते हैं और सितम्बर– अक्टूवर ल लगते है। इस जाति का वृक्ष ही सर्व्वापेक्षा उत्तम है और विशेष परिमाण मे क्वीनाइन देता है।

(३) C Succirubra Pavon इसको लाल सिकोना कहते है। यह वृक्ष ५० से ८० फुट ऊचा होता है, किन्तु साधारणतया २०-४० फुट से अधिक ऊचे नही होते है। काड सरल, वृक्ष की छाल धूसर वर्ण, इसमे श्वेत वर्ण के दाग होते है, नवीन शाख मुलायम। पत्र ३ से ६ इच

लम्वा, गोलाकार, डिम्वाकृति, अग्रभाग कुछ वडा, वृन्त की ओर क्रमश नोकीला, पतला, गहरे हरित वर्ण का। फूल पूर्व वर्णित सिंकोना के वृक्ष के समान। फल ¾ से १½ इची लम्वा। वीज-अन्यो के समान। यह जुलाई और अगस्त मास में फूलता फलता है।

C Cardifolia Mutis इसको कोलवियन छाल कहते है। यह वृक्ष मध्यम कदका, काण्ड सरल। शाखा विस्तृत। छाल धूसर वर्ण और कटी कटी। पत्र वृहत् विस्तृत, वृन्त १ से १॥ इची लवा, लालवर्ण, पत्र ६ से ८ इची लवा, प्रायः गोलाकार अग्रभाग नोकदार, वृन्तकी ओर गोलाकार किन्तु हृत्पिण्डाकृति। फूल—अन्य सिकोना जातियो के वृक्षो के समान। पुष्पदण्ड—शाखा—प्रशाखा विशिष्ट, अतिशय गुच्छो मे फूल होते हैं देखने मे लाल वर्ण के फल-डिम्वाकृति लम्वा। वीज अन्यो के समान होते हैं।

उत्पत्ति स्थान—

इसका आदिम खास स्थान दक्षिण अमेरिका है। १६-३९ ई० मे पेरू देश की रानी काउण्टेस सिनकान (Countess Cinchoi) ने इसका व्यवहार किया और ज्वर मुक्त हुई। तव से इसका प्रचार वढा और वहा यूरोप मे फैला। क्रमश भारत मे भी इसका प्रवेश हुआ और अव नीलगिरि, आसाम, दार्जिलिंग मे इसकी खेती होती है। यह हिमालय मे ७००० से २३००० फीट की ऊंचाई तक सर्वत्र और वर्मा, जावा मे भी यह प्रचुर होता है।

हाल मे भारत मे नीलिगिर, उटकमड के पास, हिमालय प्रदेश में, लङ्का मे, वङ्गाल मे, दार्जिलिंग आदि स्थानो मे सिकोन के लाखो वृक्ष लगाये गए हैं। दार्जिलिंग के पास सिक्किम मे रंग वीनी खीण मे करीवन ५०-६० लाख वृक्ष सरकार ने लगाए है। नीलगिरि के ऊपर भी इतनी ही वडी सख्या मे लगे हुए है। इन वृक्षो की छाल से ही सल्फेट आफ क्वीनाइन और सिकोना फेव्रीफ्युज वनाया जाता है। हाल में भारत में सरकार ने कोई १३ जातिया लगायी है। 'सिकोना ओफीसीनेलीस' से अन्दाजन ४॥% क्वीनाइन निकलती है और १॥% क्वीनीडीन मिलती है। (C calisaya) की छाल पीली होती है और उसमे से क्वीनाइन वडे प्रमाण मे मिलती है। सिकोना की छाल ऊपर से खरवचड़ी, कुछ लाल भूरी, कुछ मोटी और अन्दर से ललाई लिए होती है। इसमे कोई खास सुवास नही होती है। छाल का चूर्ण अच्छे लाल रग का होता है।

स्वाद मे मामूली कषैला रस के साथ कडवा स्वाद आता है।

यह छाल हाल मे आधुनिक चिकित्सा में विविध प्रकार से प्रयोग मे आती है। इसमे से आफिसियल और आफिसियल अनेक वनावटें वनाई गई है और चिकित्सक उनको ठीक मात्रा मे प्रयोग करते है। इस छाल मे से कुनैन वनाया जाता है। वर्तमान मे कुनैन नही पहिचानता हो ऐसा कोई व्यक्ति भारत मे भाग्य से ही हो सकता है। इसके प्रचार के लिए सरकार ने सेनीटरी कमेटिया, म्युनिसिपलयुटियो आदि प्रजा हित की सस्थाओ ने वडा परिश्रम किया है।

नाम—

स०—किंकिणी। गु०, म०, रा० सिन्कोना। ब०—सिकोना अ०—सिकोना (Cinchona) ले०—सिकोना आफिसिनेलिस (Cinchona Officinalis Linn)

रासायनिक संगठन—

इसकी छाल मे मुख्यत. पांच स्फटिकीय क्षार तत्व होते है। (Quinine) सिनकोनीन (Cinchonine) क्विनिडिन (Quinidine), सिनकोनिडिन (Cinchonidine), हाइड्रोक्वीनीन (Hydroquinine)

इनके अतिरिक्त लगभग २२ अस्फटिकीय क्षार तत्व होते हैं। चाइनिक या क्विनिक अम्ल (Chinic or quinic acid), चाइनोविक अम्ल (Chinobic acid) और सिनकोटैनिक एसिड (Cinchotannic acid) ये तीन अम्ल, एक ग्लुकोसाइड् (चायनोविन Chinovin), रञ्जक द्रव्य तथा किंचित उडनशील तैल होते है।

क्षार तत्त्वो की उपस्थिति पर ही छाल की कार्यकारिता निर्भर है। क्वीनीन सवसे अधिक रक्त जाति (Red cinchona) मे होती है।

उपयुक्त अङ्ग—छाल और सत्व।

मात्रा—त्वक चूर्ण १-२ माशे, सत्व १ से ५ रत्ती। द्रव्य र ५ से १५ रत्ती। सुरासार—३० से ६० विन्दु



घनसत्व १ से ४ रत्ती ।

गुण धर्म और प्रयोग–

रस—तिक्त । गुण—रूक्ष । वीर्य—उष्ण । विपाक–कटु । दोषशमन—वातकफ । शारीरिक अङ्गो पर प्रभाव–समस्त शरीररोगोपयोग—शिरःशूल, रजः कृच्छ्रता, विषम ज्वर, शीतज्वर । सिकोना छाल—कषाय, ग्राही, कटु पौष्टिक, ज्वरघ्न और ज्वर को रोकने वाली है ।(आ नि)

कर्म—यह त्रिदोष शामक भी है । उष्ण होने से कफ वात का तथा तिक्त होने से पित्त का शमन करता है ।

संस्थानिक कर्म बाह्य – यह जन्तुघ्न और वेदना स्थापन है । आभ्यन्तर पाचन संस्थान—यह दीपन, आमपाचन, स्तम्भन कृमिघ्न है ।

रक्तवह संस्थान–यह हृदयोत्तेजक तथा रक्तशोधक है । प्लीहा को संकुचित करता है तथा श्वेत कणो को बढाता है ।

श्वसन संस्थान—कफघ्न है ।

प्रजनन संस्थान—गर्भाशयोत्तेजक है ।

तापक्रम–ज्वरघ्न और शीत प्रशमन है । विशेषत नियतकालिक ज्वर प्रतिबन्धक है ।

सात्मीकरण यह कटु पौष्टिक है ।

उत्सर्ग–इसका मुख्य उत्सर्ग मूत्र से होनाहै ।

प्रयोग–त्रिदोषज विकारो मे इसका प्रयोग करते हैं ।

संस्थानिक प्रयोगबाह्य–बाह्य कृमियो मे तथा वेदना प्रधान रोगो मे छाल का लेप करते है । कर्ण श्राव मे कान मे डालते है । मुखपाक तथा गल शोथ मे इससे कुल्ला करते है ।

आभ्यन्तर पाचन संस्थान—अग्निमाद्य, आमदोष, यकृद्विकार, प्रवाहिका तथा कृमि मे देते हैं ।

रक्तवह संस्थान–हृद्दौर्बल्य तथा रक्त विकार मे प्रयुक्त होता है ।

श्वसन संस्थान—प्रतिश्याय तथा कास मे दिया जाता है ।

प्रजनन संस्थान–यह रजोरोध मे तथा गर्भाशय शोधन के लिए प्रसव के बाद देते है ।

तापक्रम–विषम ज्वर मे यह श्रेष्ठ औषधि है । ज्वर आने के पूर्व देने से ज्वर का वेग रुक जाता है । जीर्ण विषम ज्वर मे देने से ज्वर उतरता है, यकृत् प्लीहा की वृद्धि शांत होती है, रोगी की अग्नि और बल की वृद्धि होती है ।

सात्मीकरण उपरोक्त दौर्बल्य मे दिया जाता है ।

(द्र वि म)

सिकोना छाल से प्रधानत Quinine, sulphate of Cinchonidine एवं Cinchona Febrifuge प्रस्तुत होता है । क्वीनाइन अविराम ज्वर और मलेरिया ज्वर की अव्यर्थ महौषधि है । ये (Typhoid, Typhus) वसन्त, प्रबल वात व वक्ष प्रदाह रोगो की प्रतिषेधक और निवारक है । यह गुल गुनिया, नर्दि, निमोनिया प्रभृति रोगो में विशेष हितकर है ।

कुनैन सल्फुरिक एसिड के योग से सेवन करने से शीघ्र लाभ होता है एवं कलम्बा प्रभृति कडवी औषधियो के साथ व्यवहार करना चाहिए । कहीं कहीं कुनैन सेवन करने की अपेक्षा उसका इंजेक्शन लेने से शीघ्र लाभ होता है ।

(भा. व व)

मेजर अेकमर की शोध खोज के अनुसार क्वीनाइन सल्फ विषम ज्वर मे प्रयोग करने की उत्तमोत्तम औषधि है और चौथिया, तिजारी ज्वरो मे उत्तम कार्य कर है ।

प्रयोग—

सिन्कोना की फाण्ट— सिकोना की छाल का वस्त्र पूत चूर्ण २॥ तोला । नीबू का रस १$\frac{1}{4}$ तोला । दालचीनी का चूर्ण $\frac{3}{4}$ तोला । सोठ का चूर्ण $\frac{3}{8}$ तोला ।

इन सबको ५० तोले उबलते हुए जल मे डालकर बरतन को ढक दें, ठण्डा होने पर छानकर शीशी मे भरले ।

मात्रा २॥ से ५ तोला । दिन मे ३-४ बार दे । ज्वर-के लिए यह प्रयोग उत्तम है । (आ० नि० से)

विषम ज्वरहर वटी—एकतरा, तिजारी ज्वर की अचूक औषधि

(अ यो. चि)

सिन्कोना फेब्रीफ्युज को गोद के जल मे या ग्वार पाठे के रस मे घोटकर चने समान गोलिया बनावें । ज्वर आने के पूर्व २–३ गोली दिन मे ३ बार देवे ।

३. तिजारी की अक्सीर वटी—कुनैन सल्फ २० ग्रेन, एक्सट्रेक्ट नक्सवोमिका १ ग्रेन, एला बीज २ ग्रेन, सबको

पीस गोद के पानी से ४ गोली वनावे । १ गोली दूध के साथ, प्रात २ गोली ज्वर से २ घण्टा पहले खिलादो । उसी दिन ज्वर रुक जायगा वरना दसरे दिन इसी प्रकार । निश्चय ही रुकेगा । —अ० यो० चि० से

४. मलेरिया वटी(र. सि. सं.)—क्विनाइन वाई हाइड्रोक्लोराइड ७॥ मासे, गिलोयसत्व २ तोले, वशलोचन १ तोला, छोटी इलायची के दाने ६ माशे और केशर १ माशा मिलाकर खरल करें । पश्चात् नीम गिलोय २ तोला, धनिया १ तोला, लाल चन्दन पद्माख और नीम की कोमल पत्ती ६-६ माशे मिलाकर क्वाथ करें । उस क्वाथ मे औषधि को खरल करके १-१ रत्ती की गोलियां वनावे । —श्री डा० रामरक्षपाल जी शुक्ल

मात्रा—२ से ४ गोली दिन मे २ समय दूध या जल के साथ। जिनको क्विनाइन सहन न होता हो, उनको दूध पिलाकर देवें और ऐसे रोगियो को जीर्ण ज्वर और मन्द ज्वर मे भोजन के वाद देवें ।

उपयोग—यह वटी सव प्रकार के विषम ज्वर, जिसमे दाह और ठण्डी दोनो रहती हो, ऐसे एकाहिक, द्वयाहिक, तृतीयक, चातुर्थिक आदि सव ज्वरो का नाश करती है, प्लीहा वृद्धि को कम करती है, और शरीर मे शान्ति लाती है ।

५ ज्वर मुरारि अर्क (र सि सं.)—वनावट—क्विनाइन सल्फास (हावर्ड) २ औं०, एसिड सल्फ्युरिक डाइल्युट ४ औं०, टिकचर नक्सवोमिका १½ औं०, टिंचर डिजिटेलिस ४ ड्राम, आइल पीपरमिंट २० मिनिम, मेगनिशिया कार्व २ ड्राम और डिस्टिल्ड वाटर (वाष्प जल) २० औं० लें । क्विनाइन को थोडे वाष्प जल मे मिला, फिर एसिड के साथ मिलावें तथा आयल पीपर मिंट को मेगनिनिशिया कार्व के साथ मिलाकर उसमे वाष्प जल मिला पश्चात् सवको मिला लेवें । रङ्ग मिलाना हो तो १ औं० अर्क मे ३० वून्द के हिसाव से रामवरी कलर मिला लेवे ।

एसिड सल्फ्यूरिक डाइल्यूट वनाने के लिए १ औं० वजन किए गन्धक के तेजाव को ९ औं० जल मे मिलाना चाहिए । जल को तेजाव पर न डालें । तेजाव को जल पर डाल दें, फिर चलाकर रहने दे । जल शीतल हो जाने पर काम मे लावें । १० औं० जल मे जितना कम रहा हो उतना (३ ड्राम) जल मिला लेवे । अथवा १ औं० नाप से लिए हुए गन्धक के तेजाव को १४½ औस जल मे मिला लेने से डिल्युट हो जाता है ।

सूचना—अर्क तैयार होने पर शेष उतना वाष्प जल मिला लेवें कि एक मात्रा मे क्विनाइन ४ ग्रेन हो जाय, अर्थात् १ पौण्ड क्विनाइन से २० पौण्ड अर्क तैयार हो जायगा ।

मात्रा—½ से १ ड्राम तक १-१ औ० जलके साथ दिन मे ३ वार दें । वालको को मात्रा कम दें । पित्त प्रधान प्रकृति वालो को पहले दूध पिलाकर ऊपर से अर्क पिलावें ।

उपयोग—ठण्ड लगकर आने वाले ज्वर, सव प्रकार के विषम ज्वर, एकाहिक, तृतीयक, चातुर्थिक आदि एक दिन मे ही चले जाते हैं । पाली के वुखार मे जिस दिन की पाली हो, उस दिन रोगी को खाने को कुछ भी न दें । अति निर्वल रोगी हो या वालक हो तो थोडा दूध पिलावें और वुखार आने के ५ घण्टे पहले औषधि की एक मात्रा दे दे । फिर २-२ घण्टे पर दो वार औषधि देने से एक ही दिन मे ज्वर रुक जाता है । ज्वर का समय चला जाने पर रोगी को क्षुधा लगने पर दूध दें । भोजन दूसरे दिन करावें । उस दिन स्नान भी नही कराना चाहिए । पाली के दिन से अन्य दिनो मे औषधि दिन मे ३ वार देते रहे ।

यूनानी योग—

हब्व वुखार नं १—कुनैन सल्फ (Quinine Sulphas), गिलोय सत्व ६-६ माशे, वशलोचन २ तोले, गोंद कीकर ३ माशे, कूट पीस छान मूग समान वटी करे ।

मात्रा—ज्वर आने से पूर्व १ वटी प्रात, मध्याह्न साय काल प्रयोग करें ।

गुण—विषम ज्वर मे उपयोगी है । विरेचन के वाद प्रयोग करने से अधिक लाभप्रद सिद्ध होगी ।

हब्बवुखार नं २—कुनैन सल्फ, गिलोय सत्व, जहर, मोहरा, वशलोचन१-१ तोला, एस्प्रीन (Aspirine), पोटेशियम ब्रोमाइड (Potassium Bromide) ६-६ माशे

सबको वारीक पीसकर चने समान वटी करे। मात्रा—६ वटी। प्रतिदिन २-२ की मात्रा मे अर्क गाऊजवान-सौफ अर्क, अर्क खस, अर्क सन्दल प्रत्येक ४ तोले, शरवत वजूरी ४ तोले के साथ प्रयोग करे। गुण—वारी के ज्वरो मे लाभप्रद है। (यू चि सार से)

एलोपैथिक योग

कुनीन के भेद—१ कुनीन सल्फेट—यह श्वेत वर्ण की दानेदार रेशम के सूत्र के समान प्रतीत होती है। स्वाद मे अत्यन्त तिक्त है। कुनीन अल्प मात्रा से सेवन करने पर बलकारक और अग्निवर्द्धक है। अधिक मात्रा मे विष तुल्य लक्षण पैदा करती है। ज्वर मे अधिक मात्रा मे सेवन करने पर लाभ करती है। इसमे विषम ज्वर को शमन व निवारण करने की अद्भुत शक्ति है। मलेरिया के मैदानो मे प्रतिदिन १ रत्ती से १½ रत्ती तक सेवन करने से मलेरिया ज्वर का आक्रमण नही होता है।

मृदु प्रकृति वाले को शीत ज्वर मे थोडी मात्रा से कुनाइन ४-५ बार तक देवें। किंतु, तीक्ष्ण प्रकृति वाले को ज्वर मे अधिक मात्रा से देवें। इस अवस्था मे ज्वर आने के १ घन्टा पहले अनेक चिकित्सक १० से २० ग्रेन तक कुनाइन का प्रयोग करते है, किंतु एक बारगी अधिक मात्रा मे नही देना चाहिए। पहली मात्रा से ६ घन्टे का अन्तर देकर ५ से १० ग्रेन कुनाइन नियमित रूप से देने पर बहुत लाभ होता है। किसी-किसी चिकित्सक का मत है कि स्वेदावस्था उपस्थित होने पर एक बार मे दश ग्रेन कुनाइन का प्रयोग करें। दूसरी बार ज्वर आने के पूर्व मे ५ घन्टे के अन्तर से इसी मात्रा मे सेवन करने पर विशेष लाभ होता है। सन्तत ज्वर मे शरीर की गर्मी कम होने पर ५ से १० ग्रेन की मात्रा मे कुनाइन लाभ करता है। किंतु, ज्वर के विराम काल की अपेक्षा नही करके एक बार मे अधिक मात्रा से प्रयोग करने पर, इस ज्वर मे विशेष लाभ होता है। मलेरिया ज्वर से उत्पन्न हुई आमाशय की पीडा मे पहले पूरी मात्रा मे देवें। बाद को इपिकाक के प्रयोग करने से लाभ होता है और मलेरिया ज्वर से उत्पन्न होने वाले सब उपद्रवो को कुनाइन शान्त करता है। कुनाइन शीतल जल मे घुलता नही है, किंतु सुरा, ईथर, क्लोरोफार्म मे यह घुल जाता है। विशेष करके कुनाइन सल्फेट और सम भाग मृदु गन्धकाम्ल (डाइल्यूट सल्फ्यूरिक एसिड) मे घुल जाता है। अधिकतर मिक्सचर के रूप मे ही इसको देते है।

२. क्वीनीन बाइसल्फ—अधिकतर इसकी गोली प्रयोग में आती है।

३ क्विनीन हाइड्रोक्लोरस–क्विनीन म्यूरियस–इस को सम भाग मृदु लवणाम्ल (डाइल्यूट हाईड्रोक्लोरिक एसिड) मे घोलकर प्रयोग करना चाहिये। यह अधिकतर पार के विषम ज्वर की चिकित्सा मे गोली रूप मे भी देते हैं। मात्रा १ से १० ग्रेन तक।

४. क्विनीन क्लोराइड—यह अधिकतर सूचीवेध चिकित्सा मे प्रयोग की जाती है।

५. क्विनीन हाइड्रोब्रोम्स—यह हाइड्रोब्रोमिकाम्ल के सहयोग से प्रस्तुत किया जाता है। यह देखने मे श्वेत वर्ण का है किंतु इसके दाने छोटे होते है। क्रिया–आमयिक प्रयोग क्विनीन सल्फेट के तुल्य ही हैं। इसकी दूसरी मात्रा से क्विनीनिज्म नही होता है। मात्रा—१ से ५ ग्रेन तक है। इससे खुश्की बहुत कम होती है।

६. **क्विनीन वेलिरियन्स**—(Quinine valerians) सल्फेट आफ क्विनीन को एमोनिया से अलग करते है, उससे जो क्विनीन निकलता है, उसमे वेलिरियनिक एसिड आफ क्विनीन तैयार होता है। यह श्वेत और दानेदार होता है।

क्रिया—यह नाडी सम्बन्धी शिरोवेदना आदि मे हितकारी है।

मात्रा—१ से ४ ग्रेन तक।

७ **क्विनीन सल्फोकार्वोलिस**—(Quinin Sulphocarbolous) यह एक भाग सल्फेट आफ क्विनीन और दो भाग कार्वोलिक एसिड सहयोग से वनता है। इसमे उपरोक्त दोनो दवाइयो के गुण रहते हैं।

क्रिया—सूतिका ज्वर मे यह विशेष लाभदायक है।

मात्रा—१ से ५ ग्रेन तक।

८. **क्विनीन सेलिसिलास** (Quinine Salicylas)—

यह सफेद दानेदार होती है।

क्रिया—यह सतापहारक, अवसादक और पर्याय (पारी) ज्वर नाशक है इसे अनेक ज्वरो मे शरीर की गर्मी कम करने के लिए दिया जाता है।

मात्रा—२ से ६ ग्रेन तक।

६. यूक्विनीन—यह बच्चो के लिए दिया जाता है। इसका कारण यह है कि यह कडवा नही है। किंतु, अम्लो मे घोलने से तिक्त हो जाता है। अत बच्चो को सोडा बाई कार्ब अथवा मिल्क शुगर मे मिलाकर देवें। क्विनीन के बहुत भेद हैं, किंतु मलेरिया के लिये प्राय. ये ही बर्ते जाते हैं।

क्विनीन का उपयोग—१ मुख द्वारा (Oral) २ गुदा द्वारा (Rectal ३. मास द्वारा (Intramuscular) ४. रक्त नली द्वारा (Intravenous) और ५. श्वास द्वारा होता है।

प्रथम विधि—मुख द्वारा—चूर्ण, गुटिका, कैप्सूल (Capsule) और ओयेफर (कागज की पुडिया) में रख कर, मिक्सचर (Mixtur) के रूप मे क्विनीन का व्यवहार होता है।

चूर्ण विधि— क्विनीन का चूर्ण ५ ग्रेन, सोड़ा बाई कार्ब ५ ग्रेन दोनों को मिलाकर ज्वर आने के पहले ३-३ घण्टे का अन्तर देकर सेवन करें।

गुटिका विधि—क्विनीन बाई सल्फ की गोली प्राय. दी जाती है और क्विनीन बाई हाईड्रोक्लोर की भी गोली दी जाती है। किंतु इसमे इतना दोष है कि कभी-कभी गोली पेट मे घुलती नहीं है और मल में ज्यो की त्यो निकल जाती है। यदि गोली ही देनी हो, तो ताजी गोली बनाकर दें, अथवा दातो से तोडकर उसे निगल ले।

विधि—सल्फेट क्विनीन ५ ग्रेन, सोडा बाइकार्ब ५ ग्रेन मे जरासा शहद मिलाकर गोली बाध लेवें। इस भांति प्रतिदिन ४ मात्रा सेवन करें।

मिश्रण विधि—क्विनीन का मिक्चर सेवन करने पर कोई हानि नही है।

विधि—सल्फेट क्विनीन ५ ग्रेन, मृदु गन्धकाम्ल ५ बूंद, मगनेशिया सल्फास ६ माशे, पोटेशियम ब्रोमाइड ५ ग्रेन, शर्बत नारङ्गी ४ माशे, टिंचर कार्डामम् ३ बूंद। यह युवा मनुष्य के लिये एक मात्रा है। इसको ३-३ घन्टे के पीछे देवें।

३. साधारण क्विनीन मिक्चर—क्विनीन सल्फेट ५ ग्रेन मृदु गन्धकाम्ल ५ बूंद, परिश्रुत जल २½ तोला।

विधि—पहले शीशी मे जल डालकर, क्विनीन डाले। फिर मृदुगन्धकाम्ल डालकर शीशी को हिलावे। यह एक मात्रा है।

४. क्विनीन मिश्रण—योग—परिश्रुत जल २½ तोला, निम्बू शरवत १ तोला, मृदुगन्धकाम्ल ५ बूंद, क्विनीन २ रत्ती।

विधि—इन सबको शीशी मे डालकर हिला देवे, यह एक मात्रा है। इसी भाति ३-३ घण्टे के अन्तर से इसको लेवें। जब तक ज्वर न चढ़े तब तक इसी क्रम से पीवे। ३ मात्रा पर्याप्त हैं। इससे कीटाणुजन्य मलेरिया नष्ट होता है।

५ क्विनीन वटिका—इलायची छोटी १ तोला, वंशलोचन १ तोला, प्रवाल भस्म १ तोला, टाटरी १ तोला, क्विनीन १ तोला।

विधि—गुलाब के अर्क से घोटकर २-२ रत्ती की गोली बनावे।

मात्रा—एक गोली, गावजवान के अर्क से अथवा गरम दूध से प्रात, मध्याह्न और सायकाल तथा रात्रि मे लेवें। तीन दिन मे मलेरिया ज्वर नष्ट हो जाता है।

—सक्रामक रोग विज्ञान से साभार

६. कुनीन मिक्चर नं० २.—कुनीन सल्फेट १० ग्रेन, एसिड सलफ्यूरिक डायल्यूट १० बूंद, सीरप आरेनशियाई २ ड्राम, टिंक्चर जेलसीमियम १० बूंद एक्कुआ १ औ०। नियमानुसार तैयार कर एक ही बार पिला देवें।

७. कुनीन मिक्चर न० ३—कुनीन सल्फेट १५ ग्रेन, एसिड सलफ्यूरिक डायल्यूट ३० बूंद, टिंचर आरेनशियाई २ ड्राम, एकुआ मेथापीप २ आउन्स।

विधि—नियमानुसार तैयार कर, इसमे से आधा ज्वर उतरने के बाद ही और आधा ज्वर चढने से ४ घण्टे पहले पिला दें।

८. कुनीन पिल्स—कुनीन सल्फेट ३० भाग, ग्लिसरीन ४ भाग, एसिडटारटेरिक १ भाग, गम ट्रागाकथ १

भाग ।

विधि—सबको मिलाकर दो दो रत्ती की गोलिया बना लो ।

मात्रा—१ से ४ गोली तक । सरकारी शफाखानो मे प्राय' यही कुनीन की गोलिया काम मे आती है ।

—मलेरिया पुस्तक से

९. क्विनाइन मिश्रण—कुनीन सल्फ ५ ग्रेन, एसिड सल्फ्युरिक डिल १० मि०, मैगसल्फ ३० ग्रेन, टिं० कार्डेमम क० १५ मि०, एक्वा कुल १ औस ।

विधि—ऐसी १ मात्रा दिन मे १ बार (बुखार को रोकने के लिए) । —वर्मा एलो. योग रत्नाकर

१० विषम ज्वरो पर डाक्टरी मे निम्नानुसार औषधि दी जाती है ।

क्विनाइन सल्फास ५ ग्रेन, एसिड सल्फ्युरिक डिल्युट ५ बू द, लाइकर आर्सेनिकेलिस २ बू द, जल १ औ० । इन सबको मिलाकर पिला दें । इस तरह दिन मे ३ समय देने से मलेरिया ज्वर शमन हो जाता है ।

११ क्विनाइन बाई सल्फास १२८ ग्रेन, स्ट्रिक्नीन सल्फास २ ग्रेन, एसिड आर्सेनिक २ ग्रेन, फेरीसाइट्रास १२८ ग्रेन, एक्सट्रैक्ट जेन्शन आवश्यकतानुसार ।

जरूरत मुताबिक एक्सट्रैक्ट जेन्शन मिला ६४ गोलिया बना लें । इनमे से दिन मे ३ समय १-१ गोली दूध पिलाकर देने से जीर्ण विषम ज्वर भी दूर होजाता है ।

१२. टोनिक मिक्सचर—मारक (Pernicious) विषम ज्वर के लिए—

टिन्चर फेरी परक्लोराइड १० बू द, क्विनाइन सल्फास ५ ग्रेन, लाइकर आर्सेनिक २ बू द, लाइकर स्ट्रिकनिया हाइड्रोकल० ३ बू द । जल १ औ० ।

इन सबको मिलादें । इस तरह दिन मे ३ बार देवें । बुखार या अन्य रोगो के पश्चात् आने वाली कमजोरी मे यह अत्यन्त लाभप्रद है । भोजन के पश्चात् सेवन करें ।

१३. प्लीहा वृद्धि सह जीर्ण ज्वर हो तो—क्विनाइन सल्फास ३ ग्रेन, फेरी सल्फास २ ग्रेन, एसिड सल्फ्युरिक डिल्युट ५ बू द, मेगनेशिया सल्फास २ ड्राम, एक्वा मेन्था पीप १ औ० ।

इन सबको यथाविधि मिलाकर पिला दे । इस तरह दिन मे तीन बार दे । इसको मिक्चर सल्फेट कहते है ।

१४. पाण्डु सह जीर्ण विषम ज्वर (Malarial cachexia) पर—

क्विनाइन सल्फास ४ ग्रेन, एसिड नाइट्रोहाइड्रो क्लोरिक डिल ५ बू द, एमोनिया क्लोराइड १० ग्रेन, लाइकर आर्सेनिक २ बू द, ग्लिसरीन १ ड्राम, जल १ औ० ।

इन सबको मिलादे । इस तरह दिन मे ३ समय दे । क्विनाइन का विषाक्त असर—

डाक्टरी ग्रन्थकार सर हेनरी लेघर बी टाइडी ने निम्नानुसार दर्शाया है—

क्विनाइन की अधिक मात्रा देने से वात की वृद्धि हो जाती है और पहले उबाक (चक्कर आना, बेचैनी और कर्ण गुन्ज अव्यक्त ध्वनि) होता है । फिर वमन, बधिरता (कभी कभी स्थायी बधिरता), हृत्स्पन्दन वृद्धि, त्वचा पर पिटिकाये निकलना, स्वभाव मे भेद हो जाना, पेशाब के साथ रक्त जाना और दृष्टिमांद्य आदि लक्षण उपस्थित होते है ।

उबाक, खट्टी वमन, छाती मे जलन आदि पित्त प्रकोप के लक्षण होने पर क्विनाइन देने पर लाभ नही पहुँचता, प्रत्युत हानि होती है ।

उपचार—वातशामक स्निग्ध—मधुर द्रव्यो (दूध, फल आदि) का सेवन करना चाहिए । —द्र. गु वि

सिगड़ियो (Periploca Aphylla)

यह अर्कादिकुल (Asclepiadaceae) के सिगड़िये या दुधाली नाम के क्षुप ३ से लेकर ५ फीट तक ऊंचे होते हैं, इनमें बहुत सी शाखायें निकली हुई होती है । ये शाखायें हरे रङ्ग की चमकदार और दूध से भरी हुई होती है । इसके पत्ते मोटे, दलदार, ढोकले के समान और बिना नसो के होते हैं । इसके फूल अत्यन्त सुन्दर, सुगंधित आधे इ च

व्यास के और बैंगनी रग के होते है। इसकी फलिये आमने मामने लगती हैं, ये पतली और तीखी नोंक वाली होती है, इसके बीजो पर मुलायम वालो की पीछी होती है।

उत्पत्ति थान—

यह वझिरीस्तान, ब्लूचिस्तान, पजाव का मैदान, झेलम का पश्चिमी भाग, हिमालय की पर्वत श्रेणिया, रावलपीडी से हझारा के पर्वतो मे ४००० फीट की ऊचाई पर पाया जाता है।

नाम—

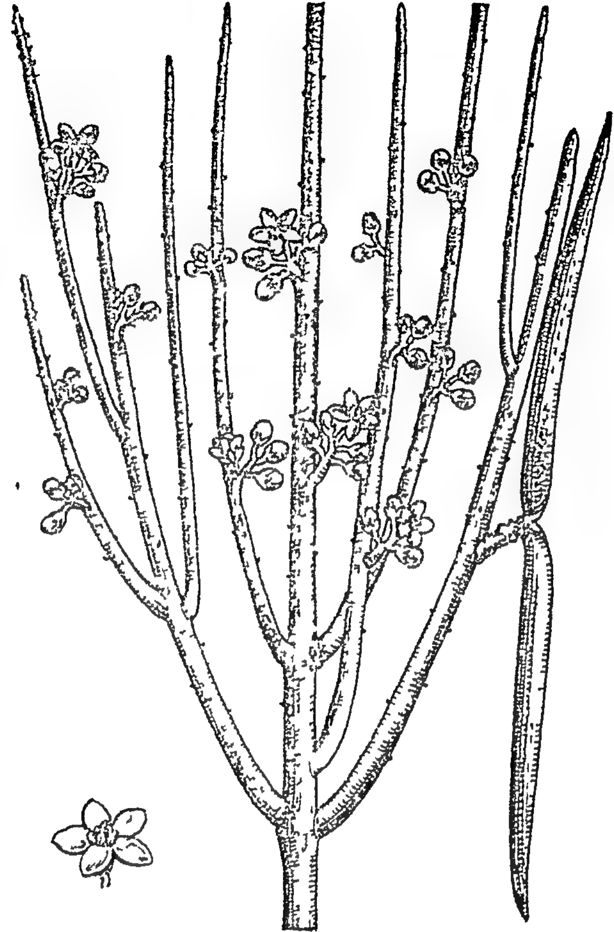
हि०—सिगडियो। कच्छी—सिगड़ियो, थोरियों, छिरियार खीप, रत्ती खीप। गु—दुवाली खीप, थोरियु, होम, प०—वर्री। वोम्वे—वुराइ। ले०—पेरीप्लोका अफेला (Periploca Aphylla Decne)।

गुण धर्म और प्रयोग—

पागल कुत्ते का विष और सिगडियो—पागल कुत्ते के विष पर यह वनस्पति उपयोगी सिद्ध हुई है। इसका यह उपयोग कच्छ के किसी मुसलमान को एक फकीर ने वतलाया था और जिसका उल्लेख सुप्रसिद्ध वनस्पति शास्त्री जय कृष्ण इन्द्रजी ने अपनी 'कच्छनी वनस्पतियो' नामक ग्रन्थ मे किया है, इसके उपयोग की विधि इस प्रकार वतलाई गई है—

(१) जिसको पागल कुत्ते ने काटा हो मगर उसके विष के लक्षण (हडकाव) पैदा न हुए हो, उसको इस क्षुप के पत्ते और डठल पानी के साथ महीन पीसकर उनको थोडे पानी मे छानकर हर तीसरे दिन करीवन ५ तोले पिलाना चाहिए।

(२) अगर उसको विष के लक्षण या हडकाव पैदा हो गया हो, तो उसको ऊपर लिखी हुई दवा का एक वाइन ग्लास (करीवन ५ तोले) भरकर तुरन्त पिलाना चाहिए



सिगडियो
PERIPLOCA APHYLLA Dcne

और यदि चार घण्टे मे कुछ लाभ दृष्टिगोचर हो तो उसके अनुसार कुछ कम मात्रा करके फिर पिलाना चाहिए। अगर कुछ लाभ दिखलाई न दे तो १-१ घण्टे मे एक एक वाइन ग्लास भरकर तब तक पिलाना चाहिए जब तक कि फायदा न हो। फायदा शुरु होने पर दवा की मात्रा क्रमश कम करते जाना चाहिए। इसको उपरोक्त मुसलमान ने पागल कुत्ते के कुछ रोगियो पर वि सं १९६१ मे उपयोग मे लिया और प्राय सब रोगियो को इससे लाभ हुआ।

सिंघाड़ा (Trapa Bispinosa)

यह फल वर्ग और शृङ्गाटकादि कुल (Onagraceae) की सिंघाडे की वेले तलावो मे जल के अन्दर पैदा होती है। इन वेलो के ऊपर तीन धार वाले फल लगते है जो कच्ची हालत मे हरे पकने पर काले होजाते है। इन फलो के दोनो किनारे तेज कांटेदार रहते है। इस फल के भीतर सिंघाड़ा रहता है, यह कच्ची हाल त मे दूधिया रसदा



और सूखने पर सख्त होजाता है। औषधि प्रयोग मे इसका फल ही काम मे आता है।

उत्पत्ति थान —

समस्त भारतवर्ष।

नाम—

स —श्रृङ्गाटक, जलफल, त्रिकोणफल, जलकटक। हि –सिंघाडा। ब –पानीफल। म. शेंगाडा। गु.–सिंगोडा। राज –सिघोडा। काश्मीर—गौनरी। प –गौनरी, सिंघाडा। ता.–सिघाडा। उर्दू—सिंघाड़ा। अ –सिघाडा नट (Singharanut) ट्रेपा विसपिनोसा (Trapa bispinosa Roxb)।

रासायनिक संगठन—

इसमे पुष्कल मन्गनीज और पिष्ट होता है।

उपयुक्त अङ्ग—फल।

मात्राचूर्ण—२ से ५ तोला तक। अनुपान–जल या दूध।

गुण धर्म और प्रयोग--

सक्षेप मे–रस मधुर। वीर्य-शीत। विपाक मधुर। गुण—गुरु, विष्टम्भी, वाजीकरण, रूक्ष और ग्राही। दोष शमन पित्तहर, वात कफ हर। शारीरिक अङ्गो पर प्रभाव सर्व–शरीर। रोगोपयोग–अतिसार, रक्तप्रदर, रक्तपित्त, फुफ्फुस रोग, दाह आदि।

आयुर्वेद मतानुसार—सिंघाडे शीतल, स्वादिष्ट, भारी वीर्यवर्द्धक, कसैले, मलरोधक, वातकारक, कफनाशक, तथा रक्तपित्त और दाह को दूर करने वाले होते है। राजनिघण्टु के अनुसार—सिघाडे–रक्तपित्त नाशक, हलके, कामोद्दीपक, त्रिदोषनाशक, ताप निवारक, श्रमहारक, रुचिकारक और लिंग को दृढ करने वाले होते है।

निघण्टु रत्नाकर के मत से—सिघाडा अत्यन्त कामोद्दीपक, हलके, मलरोधक, रुचिकारक, वीर्यवर्द्धक, वात और कफ को पैदा करने वाले, लिंग को दृढ करने वाले, कसैले, मधुर, शीतल, तृप्तिकारक, स्वादिष्ट, पित्तनाशक तथा दाह, त्रिदोष, प्रमेह, रुधिरविकार, भ्रम, सूजन और सताप को हरने वाले होते है।

यूनानी मतानुसार—

प्रकृति—ताजा सिंघाड़ा सर्द एव तर और सूखा सर्द एव खुश्क है। गुण-कर्म—सतापहर, शुक्रल, शुक्रसान्द्रकर, वायुकारक, धारक, सग्राही, प्रशमन एव तृष्णाहर है।

उपयोग—ताजा सिघाडा प्यास को बुझाता है। अग-दाह और कठ के शोष एव खरत्व को दूर करता है।

शुक्रल होने से कामावसाद एव शुक्र प्रमेह की औषधियो मे उपयोग किया जाता है। वायुकारक, धारक और सग्राही होने केकारण यह गुरु, विष्टभी, दीर्घपाकी, अवरोधकारक एव अश्मरीजनक है। कभी-कभी इसके प्रचुर खाने से शूल और मूत्रावरोध हो जाता है।

आधुनिक मतानुसार—इसके फल मे स्टार्च और मैंगनीज होता है। कम्बोडिया के लोग इसके फल को पौष्टिक और ज्वरनाशक मानते है।

उपयोग—

(१) सिघाडा एक मामूली फल होते हुए भी यह बहुत लाभ करता है। कच्चा सिघाड़ा रक्तपित्तनाशक है। यदि गुदा से रक्तस्राव होता हो तो इसे कुछ समय तक लगातार खाने से रक्तस्राव बन्द हो जाता है। यह रक्तस्राव में बहुत लाभ करता है।

(२) यह अत्यन्त वीर्यवर्द्धक और कामोद्दीपक है। जिन युवको का वीर्य कुचेष्टाओ के कारण पतला पड गया हो उन्हे इसका सेवन अवश्य करना चाहिये। अर्थात् यह शुक्रवर्द्धक है।

स्त्रियो के लिए परम पवित्र तथा अद्भुत शक्ति प्रदान करने का गुण इसमें है।

(३) जिन स्त्रियो का गर्भाशय निर्बल हो गया हो गर्भ नही ठहरता या गर्भस्राव हो जाता हो, उन्हे इसक अवश्य सेवन कराना चाहिए।

श्वेत-रक्त प्रदर से पीडित महिलाओ को यदि सूखे सिंघाडो के आटे का हलवा बनाकर खिलाया जाय तो वे इन दु खदायी रोगो से शीघ्र छुटकारा पा जाती है तथा शरीर भी पुष्ट हो जाता है।

सिंघाडे की पेय बनाकर अतिसार, आव और प्रदर रोग मे देते हैं। इसके सेवन से कफ पडना और रक्त बहना कम हो जाता है। और रोगी का रग फीका नही होता, गर्भवती स्त्रियो को भी यह बेखटके दी जा सकती है। पित्त प्रकृति के मनुष्यो के लिए यह पेय बहुत गुणकारी



होती है।

सिघाडे का फल एक खाद्य पदार्थ की तरह पयोग मे लिया जाता है। हिन्दू लोग एकादशी के व्रत मे इसको फलाहार के रूप मे लेते है। यह मीठा और शीतल होता है। पित्तविकार और अतिसार मे इसका उपयोग किया जाता हैं। पुलटिस के रूप में इसका वाह्य उपयोग भी होता है।

कम्बोडिया के लोग इसके फल को पौष्टिक और ज्वर नाशक समझते है। वे इसका निर्यास मलेरिया और दूसरे ज्वरों की कमजोरी को दूर करने के लिए देते है।

(१) अतिसार—सिंघाटे का सेवन करने से अतिसार मिटता है।

(२) रक्तप्रदर—सिंघाटे के आटे की रोटी वनाकर खाने से रक्तप्रदर मिटता है।

(३) दाह—सिंघाडे की वेल को पीसकर लेप करने से दाह मिटती है।

वीर्य वर्द्धन—सिंघाडे के आटे की दूध के साथ फक्की लेने से अथवा इसका हलवा वनाकर खाने से वीर्य वढता है। [व. च. से]

विशिष्ट योग—

सिंघाडे का हलवा वनाने की विधि—पके हुये सिंघाडो को लेकर गिरी निकाल लें और धूप में सुखाले। पुन. इन गिरयो को चक्की मे पिसवा कर (अच्छा तो यह है कि जिस स्त्री को खिलाना हो वह स्वय चक्की से पीसे) आटा बनालें। उस आटे को घी मे भूनकर और इच्छानुसार हलवे की तरह चाशनी डालकर हलवा तैयार करें। इस हलवे में किसी अच्छे वैद्य से निम्नलिखित औषधिया लेकर मिला ली जाए तो लाभ कई गुणा बढ जाता है और रोगिणी शीघ्र लाभ प्राप्त करती है। जैसा कि मेरा अपना अनुभव है—

रस सिन्दूर १ रत्ती, मुक्ता शुक्ति भस्म २ रत्ती, मण्डूर भस्म २ रत्ती इनकी एक मात्रा लेनी चाहिए और उपरोक्त लिखित हलवे मे मिला दिया जाय या पहले शहद मे सेवन करके ऊपर से हलुवा सेवन कर लिया जाय।

इस हलवे को खाकर ऊपर से दूध पी लेना चाहिए। इसके सेवन से श्वेतप्रदर, रक्तप्रदर, गर्भाशय की निर्बलता, बच्चा पैदा होने के बाद की निर्वलता अवश्यमेव ठीक हो जाती है। स्त्री होने के नाते यह योग मेरा कई रोगियो पर सिद्धिप्रद हो चुका है। गर्भवती स्त्री भी इसे नि सकोच हर मौसम मे प्रयोग कर सकती है।

—राजकुमारी सचदेव, वैद्य विशारदा
सचित्र आयुर्वेद जून १९५३ से साभार

अहितकर—शीतल प्रकृतियो के लिये। निवारण—नमक, कालीमिर्च और चीनी।

सिञ्चितिका फल—देखिये 'सेव' इसी भाग मे।

सिताब ((RUTA GRAVEOLENS)

यह सितावादि कुल (Rutaceae) का एक क्षुद्र क्षुप है। पत्र धूए रग के, तिकोने अण्डाकार पुन पुन विभाजित वारीक तिक्त एव उत्क्लेशकारक, स्वादयुक्त तथा अप्रिय तीक्ष्ण दुर्गन्धयुक्त, फूल—हरे पीले तूरें जैसी कलगी मे। वाह्य पुष्प पत्र दल ४ त्रिकोणाकार। आभ्यन्तर कोष (पंखडिया) ४। पुकेसर १०। वीज ३, त्रिकोणाकृति कत्थई रग के होते है।

जगली और वागी भेद से यह दो प्रकार की होती है। रूटा अगस्टिफोलिआ (Ruta Angusti folia,pess) उक्त वनस्पति का ही एक भेद हैं।

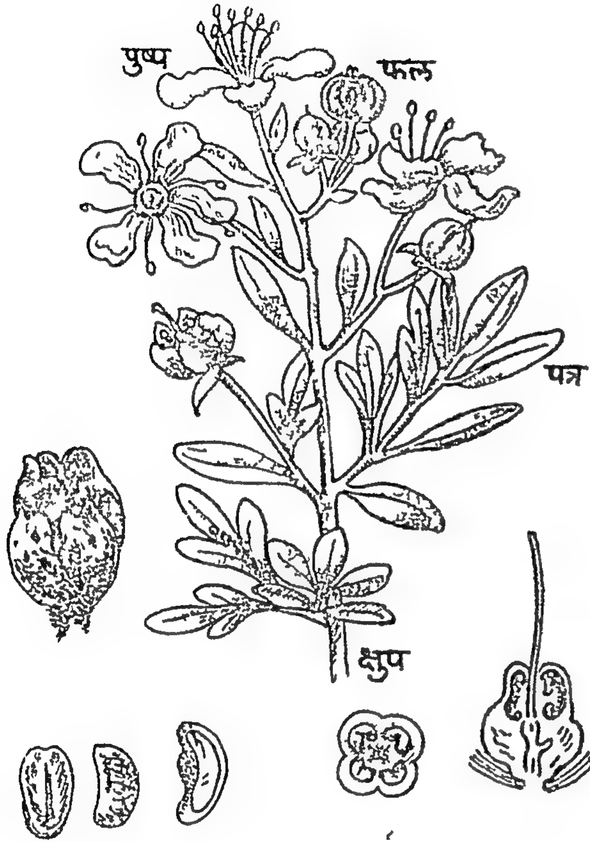
१ इस कुल मे विशेषकर क्षुप होते है। जिनके पत्र एकान्तर आए हुये होते हैं। पत्र सादे अथवा भग्न हुए होते हैं। पु. वा कोष के पत्र ४ से ५ होते है। पु अ कोष की पखड़िये ४ से ५ होती है। पु केशर २ से १५ होते है। स्त्री केशर १ होती है जो ३ से ५ विभाग वाली होती है।

इस कुल की चिरा गुणकारी, पौष्टिक, मादक तथा कफघ्न और शोथघ्न गुणवाली होती है। —व वर्णन

उत्पत्ति स्थान—

फारस आदि विदेश। भारत के वगीचो मे इसके क्षुप लगाते हैं। भारतवर्ष मे इसका आयात फारस से भी होता है।

सुदाब (सुदाब)
RUTA GRAVEOLENS, LINN.



नाम–

स.—गुच्छापत्र, पीतपुष्पा, सदापहा, सर्पदण्ट्रा । हिं.—सिताब, सुदाव, मद्राव, सांवत, सातरी । बम्बई-सताप । प.-सुदाव कन्नड–सदाब्रु । ता.—अर्वद । ते.—अरुदा । मला.—अरून । लका—अरूद । अरबी—फैजन, सुजाब । फा.—सदाव, सुद्दाब । यूरोप–पिर्गानोस । ईरान–सुदाब । अं.—गार्डेन रु (Garden Rue) । ले.—रूटाग्रेविओलेस (Ruta Greveolens, Linn) ।

रासायनिक संगठन–

ताजे पत्र मे अल्प प्रमाण मे एक ग्लुकोसाइड, रुटिन (Rutin) और गन्धक युक्त उत्पत् तेल होता है । तेल मे ९०% मीयिलनानिलकीटोन होता है ।

उपयुक्त अङ्ग–समस्त क्षुप और उससे निकाला हुआ तेल (रोगन सुदाव) ।

मात्रा—स्वरस २ ग्राम से ३ ग्राम तक । सूखी वनस्पति का चूर्ण ½ ग्राम से १ ग्राम तक दिन मे २ बार शनैः शनै मात्रा २ ग्राम तक बढावें । फाण्ट १ से २ तोला, तैल १ से ५ बूंद तक ।

गुणधर्म और प्रयोग—

शरीर मे—रस तिक्त । गुण—लघु, रूक्ष, तीक्ष्ण, सारक । वीर्य-उष्ण । विपाक—कटु । दोषघ्नता-कफ वात शामक है ।

आयुर्वेद मतानुसार—सिताब का तीखा, कडवा, मृदु विरेचक, शरीर मे गरमी पहुचाने वाला और कफ तथा वात को नष्ट करने वाला होता है ।

यूनानी मतानुसार–

प्रकृति–दूसरे दर्जे मे गरम और खुश्क । गुण-कर्म-उष्ण छेदन, विलयन, प्रमाथी, प्रवर्तक, वातानुलोमन, उपशोषण, अगद गुण सहित, संग्राही, मूत्रार्तवजनन एवं वात विलयन है । उपयोग—यह आहार को पाचन करता, भूख-लगाता, शीतल, आमाशय को शक्ति देता, उसके आनाह को दूर करता, वायु को विलीन करता और आमाशय, यकृत एव प्लीहा की शीतल विप्रकृति (सूए मिजाज बारिद) के लिए गुणदायक है । यह शारीरिक मलो को उत्सर्गित करता है, इसी कारण कब्ज पैदा करता है । पेय और फलवर्ति के रूप मे यह आर्तवजनन है । माद्र दोष विलयन और उष्णताजनन होने के कारण यह गृध्रसी, वातरक्त तथा चिरज वेदनाओ मे गुणदायक है । यह शरीर को विषो से सुरक्षित रखता है । साप, बिच्छू, भिड और कुत्ते के दंश स्थान पर इसका पतला लेप गुणकारक है । उपशोषण होने के कारण यह शुक्र तथा अन्य द्रवों को शुष्क करता है । शोफ और सर्वाङ्ग शोथ मे यह तिला और लेप की भाति प्रयुक्त होता है । (यू. द्र. वि.)

नव्य मतानुसार–

सिताब-दीपन, वातहर, उत्तेजक, कृमिघ्न, आक्षेपहर, स्वेद जनन, वातवाहिनियो को उत्तेजक, मूत्रजनन और आर्तवजनन है । त्वचापर लगाने या उदर मे सेवन कराने पर दाह होता है ।

इसके तेल से नाडी की गति अधिक बढती है, किन्तु उसका दवाव कम हो जाता है।

शुष्क सिताव के फाट से नाड़ी की गति मन्द होती है। लगभग ३ घण्टे मे ७०-८० स्पन्दन कम होने लगते हैं। बडी मात्रा मे नाड़ी अशक्त होती है।

सिताव की उत्तेजक क्रिया त्वचा, वातसस्थान और गर्भाशय पर विशेष होती है। इससे अधिक प्रस्वेद आता है। विचार शक्ति बढती है, कमर में अवस्थित इन्द्रियो पर इसकी क्रिया प्रत्यक्ष होती है। सगर्भा को देने से बार बार पेशाव होता है, कमर मे पीडा होती है, गर्भाशय नीचे उतरता है तथा प्रतिदिन देते रहने से लगभग १० दिन मे प्रसव वेदना प्रारम्भ होकर गर्भपात होजाता है। सिताव से गर्भपात होने के उदाहरण बार बार मिलते हैं। बडी मात्रा मे वेदना होकर वमन होती है, अति थकावट आजाती है, विचार शक्ति कम होती है, दृष्टि मन्द होती है, नाडी अशक्त होकर शनै शनै चलती है, हाथ पैर शीतल होजाते है। आक्षेप आते हैं। ताजी और सूखी वनस्पति की क्रिया मे, कुछ अन्तर पड़ता है। अगर बुद्धिमानी के साथ इसका उपयोग किया जाय तो सिताव एक उत्तम और प्रभावशाली वस्तु है। स्त्रियो और बच्चो के रोगो मे यह विशेष रूप से काम मे आती है। इसको ज्वर मे देने से पसीना होता है, पेशाव अधिक उतरता है, नाडी की चाल धीमी होती है और रोगी को उत्तेजना मिलती है, ज्वर मे इसकी फाट बनाकर देते है।

'बच्चो के आक्षेप रोग मे सिताव का स्वरस गोरोचन के साथ दिया जाता है। अर्धाङ्ग वायु मे इसके रसकी शरीर पर मालिश करते है, कर्णशूल मे इसके रस को कान मे टपकाते हैं।

रुके हुए मासिक धर्म को चालू करने के लिए इसकी फाट बनाकर देते है। वेदनायुक्त मासिक धर्म मे भी इसको देने से मासिक धर्म साफ होकर वेदना दूर हो जाती है।

गर्भवती स्त्रियो को यह औषधि कदापि नही देनी चाहिए। बच्चो की खासी, जुकाम और कुक्कुर खासी मे सुदाव के स्वरस मे थोडी हीग मिलाकर देते है। अफरा, उदरशूल और अपचन रोग मे इसको लौंग, सोंठ इत्यादि सुगन्धित द्रव्यो के साथ देते हैं। सुदाव एक उग्र और नशीला विष होता है। इसके ताजे रस को लगाने से यह अपना उत्तेजक असर बतलाता है। इसकी मालिश करने से यह त्वचा पर ललाई, सूजन और फुन्सिया पैदा करता है। इसका अन्त' प्रयोग हिस्टीरिया, मृगी, वात जनित उदरशूल इत्यादि रोगो मे किया जाता है और इसका बाह्य प्रयोग एक चर्मदाहक वस्तु की बतौर किया जाता है।

यह वनस्पति और इसका तेल दोनो उत्तेजक होते हैं। विशेषकर गर्भाशय और स्राव तन्तुओ के ऊपर इसकी उत्तेजक क्रिया विशेष जोरदार होती है। सिताब हर हालत मे गर्भवती स्त्रियो के लिये बहुत खतरनाक होता है।

बच्चो के जुकाम को दूर करने के लिए इसके सूखे पत्तो की धूनी दी जाती है। अजीर्ण और अपचन रोगो मे इसका चूर्ण दूसरे सुगन्धित द्रव्यो के साथ मिलाकर दिया जाता है। इसके ताजे पत्तो से बनाया हुआ टिंक्चर पक्षाघात की प्रथम स्थिति मे मालिश करने के काम में लिया जाता है। पजाब के अन्दर इसके पत्ते सधिवात तथा गठिया के उपचार में लिये जाते हैं।

मध्य प्रदेश के अन्दर सिताब के पत्तो को नमक के साथ पानी में पीसकर बिच्छू के काटे हुए स्थान पर लगाते हैं।

इण्डोचायना मे यह वनस्पति एक ऋतुस्राव नियामक वस्तु की तरह काम मे ली जाती है।

दक्षिणी अफ्रीका मे इसके पत्तो का काढा ज्वर के अन्दर दिया जाता है। इसके पत्तो का रस छोटे बच्चो के आक्षेप रोग मे दिया जाता है। इस वनस्पति को पीसकर दातो पर लगाने से दत शूल और कान मे डालने से कर्णशूल मिटता है। इसका शीत निर्यास अधिक उम्र के लोगो को श्वास सम्बन्धी रोगो मे तथा हृदय रोगो मे देते हैं। ट्रासवाल मे इसके पत्तो की शहद हृदय की खराबी से होने वाले दमे मे लाभदायक समझी जाती है और इसके कुचले पत्ते पीलिया रोग और बच्चो के अतिसार मे उपयोगी माने जाते हैं।

कोमान के मतानुसार इस पौधे के अन्दर बहुत उत्तम और प्रभाव शाली आक्षेप निवारक तत्व रहते हैं। इसका रस वेस्ट कास्ट मे आमतौर पर बच्चो के आक्षेप रोग, तीव्र



ब्रोङ्काइटीज और निमोनिया मे दिया जाता है। निस्सदेह इस वनस्पति मे आक्षेप निवारण और कफ निस्सारक धर्म बहुत प्रभावशाली रूप मे रहते हैं। मैने इस वनस्पति को बच्चो के जुकाम और तीव्र ब्रोङ्काइटीस में बहुत उपयोगी पाया। (व० च०)

प्रयोग—

ज्वर—इसका फाण्ट देने से पेशाव आता है, प्रस्वेद बढता है, नाडी की गति मन्द होती है और रोगी को उत्तेजना मिलती है, फिर ज्वर वेग कम हो जाता है।

बालको के धनुर्वात (आक्षेप)—इसका स्वरस गोरोचन के साथ दिया जाता है।

वात रोग—वात प्रकोप से चक्कर आना, अफारा, अपतत्रक, अपस्मार और उदरशूल होने पर इसके फाण्ट का सेवन कराया जाता है। अर्द्धाङ्गवात पर स्वरस की मालिश भी करायी जाती है। देह के किसी भी भाग मे वेदना होती हो, तो फाण्ट देने पर दूर होती है।

कर्ण पीड़ा—कान मे दर्द होने पर इसका स्वरस कान मे डालते हैं।

कष्टार्तव और अनार्तव—(अ) मासिक धर्म नही आता है या मासिक धर्म मे कष्ट होता हो तो दिन मे ३ बार ३ दिन तक इसका फाण्ट देने से मासिक धर्म साफ आ जाता है। इससे वेदना भी कम हो जाती है।

(आ) सिताव के पानो का रस २-२ ड्राम दिन मे २ बार थोडी शक्कर मिलाकर मासिक धर्म आने के एक सप्ताह पहले से प्रारम्भ करने से मासिक धर्म बिना कष्ट साफ आ जाता है।

(इ) सिताव के सूखे पानों का चूर्ण ३-३ माशे, शहद के साथ दिन मे २ बार सप्ताह तक देते रहने से मासिक धर्म बिना कष्ट के साफ आ जाता है।

बालको की खांसी और जुकाम—सामान्य खासी आदि पर इसका स्वरस दिया जाता है। खासी मे स्वरस के साथ थोडी हीग और फिटकरी का फूला दिया जाता है। प्रतिश्याय पर धूआ दिया जाता है।

बालको का डब्बा रोग—बालको के डब्बा रोग और कफ प्रकोप पर उसके पानो का रस १०-२० बून्द माता के दूध के साथ मिलाकर पिलाया जाता है। इस प्रयोग से ज्वर और खासी भी दूर हो जाती है।

अग जकड जाना—वायु से किसी भी भाग मे वेदना होतीहो, सावे जकड गये हो या नया पक्षाघात हुआ हो तो शराब के साथ या सरसो के तेल के साथ मिलाकर मालिश करने पर वेदना और जकड़ाहट दूर होती है। पक्षाघात हुआ हो तो उसे अङ्ग मे बल आकर विकार दूर हो जाता है।

सक्रामक रोग—इनफ्लुएन्जा, शीतला, रोमांतिका आदि सक्रामक रोग, जो कीटाणुजन्य होते है और सम्भाल न रखने पर सेवा करने वालो को भी हो जाते हैं। ऐसे रोगो मे बीमार मनुष्य के कमरे मे रोज सिताव के पानो का धुआ करने से कमरे मे और वातावरण मे फैले हुए कीटाणु नष्ट हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त घाव और व्रणो को इसका धूम्र (धूआं) देने से उस स्थान के कीटाणु नष्ट हो जाते है।

सुदाब तेल का उपयोग—सिताव से जो उड़नशील तेल मिलता है,उसे सुदावतेल(Oil of Hookworms)को मिला कर के लिए प्रयुक्त होता है। उदरशूल मे अफरा आने पर २०बूद तैल को २-४ औंस मैदे की पतली पेया● मे मिला बस्ति देवें। १५ मिनिट बाद २० औस साबुन जल की बस्ति दी जाती है। कृमिघ्न रूप से १ से ५ बूद तक दिया जाता है। (गा औ र)

अहितकर—शिर शूलकारक और दृष्टिदौर्बल्यकारक है। निवारण—सिकजबीन और अनीसून।

प्रतिनिधि—सातर फारसी और नाना।

सिंदूरिया—देखिए 'लटकन' इसी भाग मे।

सिंदुवार—देखिए 'निर्गुण्डी न० २' भाग ४ पृष्ठ ७५ पर।

●पेया—मैंदा ८ माशे को थोड़े शीतल जल मे मिलाकर लेई बनावें। फिर उसे उबलते हुऐं ३० औंस जल में मिलाकर उथलापुथल कर एक जीव करे। सफेद रग दूर होकर पारदर्शक बनने पर उपयोग में लेवे।

सिपाम [GYMNOPETALUM COCHINCHINENSE]

यह पटोलादिकुल (Cucurbitaceae) की वनस्पति मलाया, पेनिनशूला, चीन, सिक्किम, कच्छार, बंगाल और छोटा नागपुर मे २००० फीट की ऊंचाई पर होती है।

नाम—

हिं०, मलयालम—सिपाम। ले०—जिम्नो पेटेलम कोचीनचिनेन्स (Gymmopetalum Cochinchinen se kuaz)।

गुण-धर्म और प्रयोग—

छोटा नागपुर की मुण्डा जाति के लोग इसकी जड की गठान को कुचलकर उसे गरम पानी मे मिलाकर किसी भी दर्द के स्थान पर दर्द को दूर करने के लिए मालिश करते है। शरीरो के अवयव की क्षीणता को दूर करने के वास्ते भी इसका उपयोग किया जाता है।

सिमेना विरुंजी [STACHYTARPHETA INDICA]

यह सभालुकुल(Verbenaceae)की एक छोटी जाति की वर्ष जीवी वनस्पति होती है। कही कही इसकी खेती भी की जाती है।

नाम—

हिं०, ता०—सिमेना विरुजी। म०—सिमेना युरुवी। कन्नड़—कारीयुत्तरनी। मलय०—कटा पुनुट्ट। ले०—स्टेचिटार फेटा इण्डिका ((Stachytarpheta Indica vahl)

गुण धर्म और प्रभाव—

ब्राझील मे यह वनस्पति बहने वाले व्रणो के ऊपर लगाने के काम मे ली जाती है तथा ज्वर और सधिवात मे इसको खिलाई जाती है। गायना मे अतिसार के अन्दर इसको देते है। लारियुनियन मे इसके पत्ते फोडो को पकाने के लिए बान्धे जाते है। गोल्ड कास्ट मे इसके पत्तो का रस नेत्र रोगो को दूर करने के लिए आखो मे टपकाया जाता है। हृदय रोगो मे भी यह उपयोगी मानी जाती है।

(व च से)

सिरन (पीला सफेद सिरस) [ALBIZZIA STIPULATA]

यह वटादि वर्ग और शिम्बी कुल [Leguminosae] का सिरस की जाति का हमेशा हरा रहने वाला ऊचा वृक्ष होता है।

नाम—

हिं०—सिरन। ब०—अमलुकी, चाकुआ। बबई—उदाला। कोकण—फलारी। मद्रास—कटतुरानजी। प०—सिरस, ओई, कसीर। ता०—सिलाई वागी। ते०—चिण्डाया। ले०—एलबीझिआ स्टिप्यूलेटा [Albizzia stipulata Boivin.]।

गुण धर्म और प्रभाव—

इसकी छाल का शीत निर्यास लोशन की तरह घाव, खुजली और दूसरे चर्म रोगो पर उपयोग किया जाता है। इसका गोद उपयोग में आता है।

सिरयारी (सफेद मुर्गा) (CELOSIA ARGENTEA)

यह तण्डुलीयादि या अपामार्गादि-कुल (Amaranthaceae)का वर्षायु क्षुप होता है। ऊचाई १ से ५ फुट। तना खडा, सादा या चढने वाला। शाखाएं ललाई लिये हरी, चिकनी और लम्बी, ऊचे चढने वाली नरम शाखाए कभी दीप वृक्ष (Chandilier) के समान सुशोभित। पाव १ से ८ इच लम्बे, ¼ से १¼ इच चडे विविध आकार के नोकदार, अखण्ड चिकने और किनारो से लाल होते हैं। पुष्प पहले गुलाबी आभा वाले फिर तेजस्वी सफेद। तुर्रे १ से ६ इच लम्बे, ¾ से १ इंच व्यास के। कभी-२ मुर्गे की चोटी के समान ऊपर शाखायुक्त। फली ⅙ इच लम्बी।

वर्तुलाकार बीज ४ से ८ काले, चिकने, लगभग वृक्काकार। मूल सफेद पेंसिल से अंगुष्ट जितना मोटा। कुछ सुगन्ध युक्त। पुष्पकाल और फलकाल—शीतऋतु। इसके पानो का शाक भी होता है। इसके बीज ही औषधि के काम आते है, जिन्हे तुख्म सरवाली कहते हैं।

उत्पत्ति स्थान–

यह सिलोन, एशिया के उष्ण कटिबन्ध में आपही होती है। अमेरिका मे यह बोयी जाती है। समस्त भारत वर्ष मे साधारणतया ज्वार, बाजरा, मकई के साथ उत्पन्न होती है।

नाम–

स०—शितिवार, सुनिषण्क, वितुन्नक। हि०—सफेद मुर्गा, सिरियारी, सिरयारी, सुरवाली, सुर्याली, शुरुआरी। व०—सुसुनी शाक, श्वेतमुर्गा। गु०—लांपड़ी। म०—कुरडु। प०—चिलचिल, सलगर। सरहद—सरवाली। सि०—शिरआ, सुरवाली। विहार—सिरवारी। क०—गोरजि। ते०—गुरुगु, पचे चेट्टु। वरार—शाह मेढ़े। राज०—कुकुरडी। अ०—सिल्वर स्पिकेड (Silver spiked) कोकस् कोम्ब (Cock's comb)। ले०—सिलोसिआ आर्जेन्टिआ (Celosia argentea Linn)।

उपयुक्त अङ्ग—पत्र, बीज। मात्रा—बीज ३ माशा से ५ माशा।

गुण धर्म और प्रयोग–

राज निघण्टु के मतानुसार शितिवार रस मे कसैला, उष्णवीर्य, ग्राही, त्रिदोषघ्न, मेधाप्रद, रुचिकारक, दाहहर, ज्वरघ्न और रसायन है।

धन्वन्तरि विघण्टुकार ने अग्निदीपक, वृष्य और गुरु गुण अधिक दर्शाये है।

निघण्टु रत्नाकर ने शीतवीर्य, रूक्ष, अविदाही, लघु, हृद्य तथा ज्वर, मेह, श्वास, दाह, मेद, कुष्ठ, भ्रम और अरुचि का नाशक कहा है।

यूनानी मतानुसार—

बीज कडवे, क्षतरोपण और कामोत्तेजक है। प्रकृति—शीत एव रूक्ष है। गुण-कर्म—वीर्य पुष्टिकर, संग्राही, बल्य, नितम्ब और स्वर एव शुक्र प्रमेह में गुणकारी हैं। उपयोग—शुक्रमेह के योगो मे सुरवाली के बीज डाले जाते है तथा इनको अकेले भी चूर्ण करके दूध के साथ खिलाया जाता है। संग्राही होने के कारण यह आर्तव शोणित, रक्तार्श बहुमूत्र और गुदभ्रंश मे गुणकारक है।

सुरवाली की पत्ती का साग पकाकर खाना पित्त का शमन करता और मधुमेह मे लाभ करता है।

नव्य चिकित्सको के मतानुसार—इसके बीज शीतल, स्नेहन और पौष्टिक है।

उपयोग—सफेद मुर्गा दीर्घकाल से घरेलू औषधि रूप से व्यवहृत होता है। प्राचीन संहिताओ मे इसका वर्णन नही मिलता।

इसके मूल को मूत्रल क्वाथ मे मिलाते है। पानो को पीस पुल्टिस बना फोडे पर बांधते हैं।

रक्त विकार और विषैले जन्तुओ के विष पर इसके पानो का लेप किया जाता है। इसके पचाङ्ग की राख शहद के साथ देने से कफ दूर होता है। एव कास और श्वास मे लाभ पहुँचता है।

मूत्रकृच्छ्र और अश्मरी—बीजो के चूर्ण मे थोडी मिश्री मिलाकर जल या दूध की लस्सी के साथ देवे। इस तरह १–१ घण्टे के बाद २–३ बार देने से पेशाब साफ आ जाता है। मूत्रावरोध को दूर करने के लिये उत्तम और निर्भय औषधि है।

भाग या गाजे का नशा—सफेद मुर्गे के मूल को जल मे घिसकर शक्ति के अनुसार पिलावे।

अतिसार—बीज का चूर्ण ३–३ माशा दिन मे २–३ बार देने से मल बध जाता है और दस्त रुक जाते है।

रसायनार्थ—सिरयारी के बीज १ तोला, मिश्री १ तोला, एक पाव दूध के साथ रोजाना सेवन करने से उत्कृष्ट रसायन का कार्य करता है। (डीमक)

—भा व व.

अहितकर—मिचली उत्पन्न करती है निवारण—उन्नाव या उन्नाव का शर्बत। प्रतिनिधि—चकुन्दर की पत्ती का रस।



सिरु (सरघास) (Imperata Arundinaca)

मह तृण धान्यादिकुल (Gramineae) का एक वास होता है। यह घास १ से ३ फीट ऊचा होता है । इसके फूल की चमरी पतली लम्बी डाडी के सिरे पर निकली हुई होती है। ये चमकीली राफेद रग की श्रीर बहुत मुलायम होती है। ये दूर से ही बगुला के पंख जैसी अत्यन्त सुन्दर दीखती है। इस घास को पशु कदाचित ही खाने हे किंतु इसके क्षुप घरो को छाने के काम मे आते हैं। वर्षा काल मे फूल एव शीतकाल मे वीज आते हैं,

उत्पत्ति स्थान --

बगाल मे सर्वत्र, पृथ्वी के उष्णता प्रधान स्थानो मे पैदा होता है, कलकत्ते की ओर खूब उगता हे।

नाम--

स--दर्भ। हिं०--सिरु, शिर, उल्लु। पोरबन्दर, गुज०--वोलीसर, सरघास। व०--उटालु ले०--इम्पिरे-अरुण्डीनेसिया (Imperata arundinacea Cyrill)।

उपयुक्त अङ्ग--मूल।

गुण धर्म और प्रभाव--

इसके मूल का क्वाथ मूत्रकर और शान्ति कर हे। एव गोनोरिया रोग मे अतिशय लाभकारी है। इसकी जड सधिवात के क्वाथ मे काम ली जाती है।

(व० व० गुजराता)

सिराल (GREWIA MICROCOS)

यह परुषकादि कुल (Tiliaceae) की एक झाडीनुमा वनस्पति पूर्वी बगाल, असम, पश्चिमी प्राय द्वीप और सिलोन मे पैदा होती है।

नाम-

हि०, बम्बई--सिराल, अनसेल। व०--असार। ता०--विसालम, कदाम्वु। ले०--ग्रेविया मायक्रोकास (Grewia microcos Linn)।

गुण धर्म और प्रभाव-

यह वनस्पति वदहजमी, एक्जीमा, खुजली, चेचक, टाइफाइड, ज्वर, अतिसार, उपदश जनित मुह के व्रण इत्यादि अनेक प्रकार के रोगो मे लाभ पहुचाती हे।

सिरस काला (ALBIZZIA LEBBECK)

यह वटादि वर्ग और शिम्बी कुल (Leguminosae) का वृक्ष है। आल्बिजिया--इटालियन वनस्पति शास्त्री (Avl-beetzy) के समानार्थ सज्ञा। लेबेक--दक्षिण अफ्रीका की भाषा का सिरस का नाम। काटे रहित, पतनशील पान वाला ऊचा छायादार वृक्ष है। ऊचाई ५०से६० फुट। छाल गहरी घूसर अनियमित फटी हुई। नया अकुर रुए-दार। पान फटे हुए के सदृश द्विपक्षाकार (2-Pinnate) पर्ण ३ से ८ जोडी, १ से २ इंच लम्बे आधा से एक इंच चौडे, आवला या इमली के पत्तो से बहुत बडे हलके हरे, नोक रहित, अति छोटे वृन्तियुक्त। पुष्प प्राय हरापन लिये पीत वर्ण श्वेताभ, बहुत ही कोमल अतिसुगन्धित, डेढ इंच लम्बे, फली ६ से १२ इञ्च लम्बी, १ से २ इंच चौडी, पतली, चपटी। फली मे वीज ६ से १० तक रहते हैं। बीज अमलतास के बीजों के सदृश किन्तु उनसे किंचित छोटे और बहुत सख्त होते हैं।

मूल अति दृढ, लम्बा और मोटा, अनेक शाखा युक्त रक्ताभ, काले गर्भ युक्त। मूल की छाल की वास उग्र कसैली। तना--स्तर विभिन्न, पिण्ड गोल। पान का स्वाद चरपरा, कडवा बीजों को तोडने पर उग्रवास युक्त स्वाद कडवा। पुष्पकाल--पजाब और बिहार मे अप्रैल से जून तक। पर्ण--बसन्त मे पतनशील, लकडी सस्ते फर्नीचर मे उपयोगी, भीतर काली घूसर, कठिन, अतिटिकाऊ, सुन्दर, एक घन फुट का वजन ३० से ४० पोंड। इस वृक्ष पर लाख भी होती है। फलकाल--जनवरी मे। फल-पतन--माघ अप्रैल मे।

सिरस की दो और जातिया है। जिन्हे सिरस सफेद (Albizzia Procera) और पीला सिरस (Albizzia Odoratissima) कहते है। इन दो जातियो से पूर्वकथित सिरस काला कहलाता है। (वृक्ष विज्ञान)

सिरस का वृक्ष अधिकतर उष्ण तथा समशीतोष्ण स्थानो मे होता है। फलिये जब पक जाती है और हवा से हिलती है तब मर्मर ध्वनि सुनने का आनन्द आता है। इसकी बहुत सी जातिया है। कई प्रकार के पुष्प आते है। कितनेक मे सफेद, कितनेक मे पीले, कितनेक मे लाल। इसी प्रकार फलियो मे भी भेद ज्ञात होता है। ब्रेन्डीस ने Albizzia की १४ जातिया नोट की है। इनके अलावा वैद्यक मे अम्बु शिरीष और कटकीय शिरीष ऐसे दो भेद और लिखे है। कटकीय शिरीष के वृक्ष गुरुकुल कागडी के बाहर लगे हुए है किंतु इनकी महत्वता ज्ञात नही होती।

उत्पत्ति स्थान—

भारत मे सर्वत्र ४००० फीट की ऊचाई तक और एशिया के उष्ण तथा समशीतोष्ण प्रदेशो मे होता है।

नाम—

स०—शिरीष, कृष्ण शिरीष, कलिम, कपीतन, मृदुपुष्प। हि०—सिरस, सिरीस, काला सिरस। ब०—शिरीष म०—शिरीष, काला शिरस। गु०—कालोसडसडो, कालियो सरस, कालोशिरीष, कालो काश्रकियो। राज०—कालियो, कालियो सरस। कोकण—गारसो। फा०—दरख्ते जकरिया। अरबी—सुलतानुल असजार। उर्दू—दराश। ता०—सोनागम। तै०—सिरशामु। सिंधी—महार। मला०—काण्तुवाक, वाक। ओ०—शिरसन, सिरिसो। अ०—सिरिस ट्री(Siris tree)। ले०—आल्बीझिया लेब्बेक (Albizzia lebbeck Benth)।

रासायनिक संगठन—

छाल मे कषाय द्रव्य ७% और राल १४% छाल की राख ६% होती है।

उपयुक्त अङ्ग—बीज, त्वचा।

मात्रा—छाल ५ माशे से ७ माशे तक, बीज २ माशा से ४ माशे तक। छाल क्वाथ के लिये ½ से १ तोला। पुष्प स्वरस ½ से १ तोला।

गुण धर्म और प्रयोग—

संक्षेप मे—रस मधुर, तिक्त, कषाय। गुण—ग्राही, रूक्ष, तीक्ष्ण, स्तम्भक (बीज)। वीर्य - उष्ण। विपाक—कटु। दोष शमन—त्रिदोष। शारीरिक अङ्गो पर प्रभाव—त्वचा, नेत्र। व्याधि निवारण—विष, त्वचा रोग, दद्रु, पामा, शोथ।

धन्वन्तरि निघण्टु के अनुसार—सिरस रस मे कटुया उष्णवीर्य, विषहर वर्ण्य, त्रिदोषघ्न, लघु तथा कुष्ठ,कण्डू, चर्मरोग, श्वास और कास का नाशक है। राज निघण्टुकार ने—वातहर तथा भावप्रकाश ने शोथहर, विषर्प नाशक व्रणहर ये गुण अधिक लिखे हैं। राजनिघण्टु, भावप्रकाश, कैयदेव, तीनो निघण्टुकारो ने शीत वीर्य माना है। कैयदेव और भावप्रकाशकार ने उपरस कषाय भी लिखा है। एव चरक सहिताकार और सुश्रुत सहिताकार ने शिरीष को कषाय गुण प्रधान माना है। इसकी जड सूर्य्यावर्त या आधाशीशी रोग मे लाभ पहुँचाती है। इसकी छाल, कडवी शीतल, विषनाशक, कृमिनाशक, वात, रक्त रोग, बवासीर, सूजन, विसर्प, खासी और चूहे के विष को दूर करती है। इसके पत्ते आख के दुखने को अच्छा करते है। इसके फूल दमा और सर्पविष मे उपयोगी होते हैं और इस वनस्पति के सभी अङ्ग लाभ पहुँचाते है। (व. च.)

यूनानी मतानुसार—

प्रकृति—दूसरे दर्जे मे गरम और खुश्क। गुण-कर्म—लेखन, विलयन, उपशोषण और रक्त शोधक है। सिरस का बीज लेखन बल्य, वीर्यपुष्टिकर और दातो को दृढ करने वाला है। उपयोग—रतोंधी नष्ट करने के लिए सिरस के पत्तो का रस नेत्र मे आश्च्योतन करते है। व्रण शोषण के लिये इसकी छाल को महीन पीसकर छिडकते है। दतशूल निवारण तथा मसूढो को दृढ करने के लिए इसकी छाल के काढे से कुल्ले कराते हैं और जल मे पीसकर मुहासो को दूर करने और फोडे फुन्सिओ को नष्ट करने के लिए लगाते है। रक्त विकार जनित रोगो में इसको पिलाते है। सिरस की छाल का क्वाथ पीना शारीरिक शोथो को विलीन करता है सिरस के बीजो को हुलासो मे डालकर प्रसेक और प्रतिश्याय मे सुघाते और

महीन खरल करके रतौंधी, फूला तथा नेत्र कण्डू मे लगाते हैं। इसका चूर्ण नपुंसकत्व और शुक्र तारल्य को दूर करने के लिये खिलाते है। इ का माजून खिलाना कठमाले को नष्ट करने के लिए लाभप्रद है। (यू. द्र. वि)

"मखजन-अल-अद्विया के कर्त्ता लिखते है कि शिरीष छाल का चूर्ण १ माशा, ३ से ४ तोले घी के साथ सेवन कराने पर बलवृद्धि होती है। फूल का चूर्ण स्वप्न दोष को रोकता है और वीर्य को गाढा बनाता है। बीज का चूर्ण ४ माशे दूनी शक्कर के साथ मिला दूध के साथ सेवन करने पर वीर्य गाढा होता है। एव शिरीष के बीजो का लेप गले की गाठो (कण्ठमाला की गांठो) पर किया जाता है।

आधुनिक मतानुसार—

डाक्टर खोरी के अनुसार वीर्य-ग्राही, पौष्टिक अतिसार और वीर्य की निर्बलता मे उपयोगी है। पान-फोडे, त्वचा की लाली और शोथ पर पुल्टिस रूप से उपयोगी हैं। छाल—नेत्ररोग मे अजन रूप मे उपयोगी है। इसका क्वाथ मुखपाक मे हितावह है। उदर सेवन करने पर पौष्टिक और रसायन है। आजकल वीर्यदौर्बल्यता मे इसका प्रयोग विशेष होता है। छाल और कलियें बल्य और ग्राही है। छाल का क्वाथ वातरक्त, गलगण्ड, त्वक रोग और व्रण मे दिया जाता है। कठमाला जैसे रोगो मे छाल चूर्ण सोठ और चावलो के धोवन के साथ दिया जाता है। अनार के फूल छाल के क्वाथ के कुल्ले गले के व्रणः मे किये जाते हैं कलियो का क्वाथ रक्तार्श और रक्तातिसार मे उपयोगी माना जाता है। (खोरी)

उपयोग -

चरक मे विषघ्न और वेदनादशेमानियो मे सिरस का उल्लेख किया है, कषाय स्कन्ध मे लिखा है। शिरो विरेचन में बीज बताये है। सार आसव की गिनती मे किया है। मेढक के विष मे सिरस के बीजो को थूहर के दूध मे पीसकर लगाने को लिखा है। शिरीष. विषघ्न नाम। चरक सू २५। विषेशुकतरु (अ० हृदय)

सुश्रुत ने--मालसारादिगण मे शिरीष का उल्लेख किया है। विष मे सिरस आसव उपयोगी बताया है। आंख के बहुत से अजनो मे और दूसरे प्रयोगो मे बीज और रस का उल्लेख मिलता है।

स्वर्गीय तिलकचन्द ताराचन्द जी वैद्य का अनुभव—

यह वृक्ष मनुष्य के लिये बहुत उपयोगी है। इस वृक्ष के पास जमीन मे गजभर का गड्ढा खोदने से नीचे से मुलायम रुई जैसी छाल अन्तर छाल आती है उसको लेकर पीसकर वस्त्रपूत चूर्ण करके सुखाले। किसी के घाव लगा हो शिर फूटा हो, कट गया हो, जिससे खून निकल रहा हो, तो ऐसे समय उपरोक्त चूर्ण को दवा देने से खून का निकलना बन्द हो जाता है। और ये व्रण एक ही पट्टे मे मिल जाता है।

इसके बीजो का हार दात निकलने वाले बचो को पहिनाने से बच्चो के दात बिना कष्ट से निकलते हैं और इस समय जो तकलीफे उनको होती है वो नही होती इसके पत्तो की पुल्टिस चाहे जैसी गाठो पर आध आध घण्टे पर बदल कर बाधने से उनको ऊपर लाकर पकाकर फोड देती है। पत्तो की राख घी या तेल मे लगाने से सिफलिस की चादी को जल्दी से सुखा देती है।

इसका क्वाथ मिश्री मिलाकर पिलाने से पेशाब के रास्ते से जाने वाली धातु रुक जाती है।

(आ नि मा भा २ पृष्ठ ९९९)

प्रयोग—

श्वास में—सिरस के फूलो का रस, पीपल और शहद मिलाकर पीना। (च चि २१-१११)

चूहे का विष—सिरस का सार, फल, छाल आदि का चूर्ण मधु के साथ २-३ मास तक लेते रहने से चूहे का विष शरीर से निवृत हो जाता है। (शु० क ७-२०)

सर्प विष—सिरस के पचाङ्ग का क्वाथ त्रिकुट, सैंधानमक और मधु मिलाकर पीने से चाहे जैसा सर्पविष हो उतर जाता हैं।

(सु क ६ ८१)

रक्त विकार—सिरस की छाल का चूर्ण शहद के साथ प्रात साय लेते रहने से २१ दिन मे सब प्रकार के रक्तगत विष जल जाते है।

दुष्ट व्रण—सिरस की छाल के क्वाथ से धोते रहने और पानो की राख का मरहम लगाने पर व्रण शुद्ध होकर भर जाता है।

व्रण रोपणार्थ—सिरस की छाल, रसाजन और हर

का चूर्ण छिड़के या शहद मिलाकर लगावे ।

शोथ—किसी जन्तु के काटने आदि से आई हुई सूजन व्रणशोथ, विषदोष, विस्फोटक, विसर्प आदि पर सिरस की छाल के चूर्ण के साथ थोडा घी मिलाकर जल मे पीस लेप करने से (या दशाङ्ग लेप लगाने से) सब प्रकार के शोथ और दाह पीडा सह दूर हो जाते है ।

प्रदर—शिरीष की छाल का चूर्ण घी मिलाकर प्रात सायं सेवन करावे या क्वाथ पिलाते रहने से थोडे ही दिनो मे दुर्गन्धियुक्त प्रदर दूर हो जाता है ।

उदर कृमि—शिरीष और अपामार्ग का रस शहद मिलाकर दिन मे दो बार पिलाते रहने से थोडे ही दिनो मे कृमि गिर जाते है और नई उत्पत्ति बन्द हो जाती है ।
(गा औ र)

अर्बुद—सिरस केबीज गठानो (अर्बुद Tumour) को गलाने मे लाजवाब है । (वृक्ष विज्ञान)

विष विकार—शिरीष की छाल, मूल छाल, बीज और फूलो के चूर्ण को गोमूत्र के साथ दिन मे ३ बार पिलाने से सब प्रकार के विष विकार मे लाभ होता है ।
(व० च०)

विशिष्ट योग-

दशाङ्ग लेप—काला सिरस की छाल, मुलैठी, तगर, लाल चन्दन, जटामासी, लोद, दारुहल्दी, इलायची, कूठ और खस इनको समभाग लेकर वस्त्रपूत चूर्ण कर रक्खे । फिर आवश्यकतानुसार लेकर जल के साथ पत्थर पर पीसकर लेप करें ।

गुण—दशांग लेप लगाने से दुष्ट व्रण के आस पास का वर्म, विस्फोट की सूजन, इसी प्रकार कोई भी जहरी चीज लगने से उत्पन्न शोथ पर लगाने से सूजन उतर जाती है । जिन गाठो मे वर्म से जलन होती है उन पर दशाग लेप लगाना उचित है । विना सूजन के जब किसी भाग मे दाह होती हो, वहा दशाग लेप के लगाने से दाह की शांति होती है । पैतिक गलगण्ड मे जिसमे जलन होती ही रहती है उसमे दशाग लेप बहुत उपयोगी सिद्ध होता है । माथा के सख्त दर्द मे, इसी तरह वातरक्त की दाह मे दशाङ्ग लेप लगाना उत्तम है । दशाङ्ग लेप लगाते समय उसमे मामूली घी या मक्खन मिला देना चाहिये । —व० व०

शिरीषादि चूर्णम् (वृ. यो. वृ. त १०९)—सिरस की छाल, गूलर की छाल, पीपर वृक्ष की छाल, वटकी छाल और पिलखन की छाल समान भाग लेकर बारीक चूर्ण बनावे ।

इसे मसूरिका की क्लेद (चिपचिपाहट) युक्त फुन्सियों पर छिड़कने से लाभ होता है ।

शिरीषादि योग (यो. र । विषा.)—सिरस के फूलो के (या पत्तो के) स्वरस मे सहजने के बीज (श्वेत मिर्च) भिगो दें और एक सप्ताह तक भीगे रहने दें एव तदनन्तर (छाया मे सुखाकर) पीस ले । इसे पिलाने, इसकी नस्य लेने और इसका अंजन लगाने से सर्प विष नष्ट होता है ।

शिरीषाद्युद्वर्तनम् (रा. मा कुष्ठा द.)—सिरस की छाल, कूठ, खस और लोध समान भाग लेकर सबको एकत्र पीसकर चूर्ण बनावे ।

इसे शरीर पर मलने से ग्रीष्मकाल मे भी शरीर से पसीने की दुर्गन्ध नही आती ।

शिरीष बीजादि लेप (ग नि अर्शो. ४)—सिरस के बीज और कलियारी की जड को पानी से पीसकर लेप करने से अर्श का नाश होता है ।

शिरीष बीजाद्य लेपत्रयम् (ग. नि. अर्शो. ४)—

(१) सिरस के बीज कूठ, आक का दूध, पीपल और सैंधानमक समान भाग लेकर सबको एकत्र पीसले ।

(२) कलियारी की जड, सज्जी, दन्ती मूल और चीता समान भाग लेकर सबको गोमूत्र के साथ पीस ले ।

(३) मुरगे की बीट (विष्टा), गुञ्जा (चौटली) हल्दी, पीपल समान भाग लेकर सबको पानी के साथ बारीक पीसकर लेप बनावे । ये तीनो लेप अर्श को शीघ्र नष्ट कर देते है ।

शिरीष वल्कलादि लेप (वृ मा. विस्फो.)—सिरस की छाल, तगर, जटामासी, हल्दी और कमल समान भाग लेकर बारीक चूर्ण बनावे ।

इसे ठण्डे पानी मे पीस कर लेप करने से समस्त विस्फोटक नष्ट होते है ।

शिरीषादि लेप (१) (यो र. विषा.)—सिरस की जड, छाल, पत्र पुष्प और बीजो को गोमूत्र मे पीसकर लेप करने से विष नष्ट होता है ।

शिरीषादिलेप (२) (व. से. विस्फोटा.)—सिरस की छाल और जामन की छाल का लेप करने तथा इनके क्वाथ का अवसेक (सिंचन) करने से या लिहसोडे की छाल का लेप करने और उसके क्वाथ को आख मे डालने से विस्फोटक मे लाभ होता है।

शिरीषादि लेप. (३) (वं. से. विषा)—सिरस की जड चावलो के पानी मे पीसकर शहद मे मिलाकर लेप करने से अथवा अकोट की जड को बकरी के मूत्र मे पीस कर लेप करने से एव इन्ही दोनो योगो को पिलाने से हर प्रकार का आखु विष (चूहे का विष) नष्ट होता है।

शिरीषादि लेपः (४) (ग. नि. विस्फो ४०)—सिरस की छाल, खस, नागकेसर और जटामासी समान भाग लेकर, (पानी के साथ) बारीक पीसकर लेप करने से विसर्प, विष विकार और विस्फोटक अवश्य शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं।

शिरीषादि लेप (५) (बृ. मा.) मसूरिका.) शिरीष की छाल, गूलर की छाल, पीपल वृक्ष की छाल, लिहसोडे की छाल, वड की छाल और कुडे की छाल समान भाग लेकर बारीक पीसकर घी मे मिलाकर लेप करने से व्रण, विसर्प और दाह का शीघ्र ही नाश होता है।

शिरीषाष्टक (ग नि। मसूरिका. ४१)—हल्दी, दारु-हल्दी, खस, शिरीष की छाल, नागरमोथा, लोध, सफेद चन्दन, नागकेसर समान भाग लेकर लेप बनावें। यह लेप मसूरिका मे हितकारी है और प्रस्वेद, विस्फोटक, विसर्प, कुष्ठ तथा दुर्गन्ध को नष्ट करता है।

शिरीषाद्यञ्जनम् (भै र.। सन्निपाता)—शिरीष के बीज, पीपल, काली मिर्च, सेंधानमक, मनसिल और बच का बारीक चूर्ण तथा लहसुन समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर गोमूत्र मे खरल करके अ जन बनावे। इसे लगाने से सन्निपात की मूर्च्छा नष्ट होजाती है।

शिरीषाद्य नावनाञ्जनम् (यो र। उन्मादा०)—शिरीष के बीज, मुलैठी, हीग, लहसुन, सोठ, वच और कूठ समान भाग लेकर सबको बकरे के मूत्र मे घोटकर अ जन बनावे। इसकी नस्य देने तथा इस का अ जन लगाने से उन्माद रोग नष्ट होता है।

शिरीषादि योगः (यो. र.। शिरोरोगा०)—शिरीष के फूल, मूली और मैनफल को पीसकर कपडे से निचोड़कर रस निकाले।

यह रस नाक मे टपकाने से अर्धावभेदक (आधा सीसी) का दर्द नाश होता है।

यूनानी विशिष्ट योग—

गण्डमाला हर औषध—शिरीस के बीज १ भाग को लेकर चूर्ण कर दुगुना मधु मे मिलाकर कोरी हाडी मे डालें, मुख बन्द करके कपरौटी करके दो सप्ताह तक धूप मे रखें, दो सप्ताह के बाद निकालकर प्रति दिन १ तोला प्रयोग करें।

गुण—कण्ठमाला, गलगण्ड, अपची मे अत्यन्त लाभप्रद योग है। (यू चि. सा)

नेत्र का अजन—मिश्री ७ माशा, मिर्च सफेद, सुरमा, छोटी इलायची, सग बसरी, मगज शिरस बीज, फिटकरी, मवजकॉच प्रत्येक १४ माशा, कोड़ी पीली ८ नग। सबको सुरमा समान पीस लें और आवश्यकतानुसार आंख मे लगावे।

गुण—फोला, नाखूना, धुन्ध, जाला मे बहुत उपयोगी है।

अहितकर—रूक्ष- प्रकृतियो को। निवारण—गोघृत। (यू० चि० सा०)

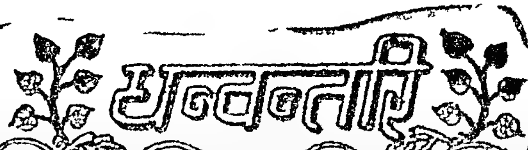
सिरस पीला (सफेद सुगन्धित) (Albizzia odoratissima)

यह वटादि वर्ग और शिम्बी कुल (Leguminosae) की सिरस की एक जाति होती है। इसके वृक्ष काला सिरस से छोटे होते है। ये पहाडो मे झरनो के पास कही-कही उगते हैं इसका तना और शाखाओ की छाल पीलास लिये सफेद होती हैं।

पान—काला सिरस से बडे और फूल तथा फलियें उससे छोटी होती है। फलियें पीलास लिए हुए रग की और जाडी होती है।

उत्पत्ति स्थान—

भारत मे सर्वत्र।



नाम—

स—पीत शिरीष । हिं०—सिरस पीला (सफेद सुगन्वित) ले०—एलबीझिया ओडोटिस्सिमा (Albizzia odoratissima Benth) ।

उपयुक्त अङ्ग—सर्वाङ्ग ।

गुण धर्म और प्रभाव—

इसकी छाल को पीसकर लेप करने से कुष्ठ और हठीले व्रण मे लाभ होता है । इसके पत्तो को घी मे भूनकर देने से खांसी मिटती है ।

कुष्ठ—इसकी छाल का लेप करने से कुष्ठ मे लाभ होता है ।

फोडे—पुराने और कठोर फोडो पर इसका लेप किया जाता हैं ।

वात पीडा—सिरस के पत्ते, निगुंण्डी के पत्ते और सहजने के पत्ते इन सबको पानी मे औटाकर इनका बफारा देने से और उनको बांधने से वातपीडा मिटती हैं । (व.च,)

सिरस लाल (Albizzia Julibrissin)

यह वटादि वर्ग और शिम्बी कुल (Leguminosae) का सिरस के एक जाति का वृक्ष होता है ।

उत्पत्ति स्थान—

यह बाहरी हिमालय के साथ ६००० से ७००० फीट की ऊचाई पर सिंधु नदी के पूर्व से सिक्किम तक होता है ।

नाम—

हिं—सिरस लाल । ब०—कालकोडा । प० सिरिन । ता०—सेलाइ वगाइ । ते०—नल्लासिंदुगा । ले०—एलबीझिया जुलिब्रिस्मिन (Albizzia julirissin Durazz) ।

गुण धर्म और प्रभाव—

इसका भी सिरस के प्रतिनिधि रूप से प्रयोग होता है । (ग्लो० इ० मे० प्ला०)

सिरस भूरा (Albizzia amara)

यह वटादि वर्ग और शिम्बी कुल[Leuminosae] की शिरीष की एक जाति है जिसका वृक्ष मध्याकार, काटा शून्य होता है । शाखा घन और नरम लोम युक्त । पत्र ८ से २०, १ से ३ इची लम्बा, पत्रिका $\frac{1}{8}$ से $\frac{1}{3}$ इची लम्बी, पत्र दण्ड कोमल लोमयुक्त । पुष्प दण्ड मुलायम, पीतवर्ण और सूक्ष्म लोमयुक्त । फली ६—७ इच लम्बी $\frac{3}{4}$ से १ इच चौडी, बीज फली के अन्दर १०—११ होते हैं, देखने मे धूसर वर्ण के । काष्ठ सख्त, छाल के भीतर का काष्ठ श्वेत वर्ण । ग्रीष्म काल मे फूल और शीतकाल मे फली आती है ।

उत्पत्ति स्थान—

उड़ीसा, भारत के विभिन्न स्थानो में इसको लगाया गया है ।

नाम—

स , ब०—कृष्ण शिरीष । हिं०—सिरस भूरा । ता—थुरिंजी । ते० सिगारा । वोम्बे—लुलाई । ले०—एलबीझिया अमारा (Albizzia Amara Boivin)

उपयुक्त अङ्ग—बीज, पत्र और फूल ।

गुण-धर्म और प्रयोग—

यह स्निग्ध कर तथा आखो और व्रणो के लिए हितकारी है । (दत्त)बीज-ग्राही,यह अर्श,उदरामय और सुजाक रोग नाशक है । बीजो का तेल कुष्ठ रोग मे हितकारी है।

फूल—स्निग्घ कर है । इसका पुल्टिस फोडे पर बांधने से फोडा फट जाता है । इसके पत्तो का लेप आख उठने पर लगाया जाता है ।

सिरस सफेद (गुराड़) (ALBIZZIA PROCERA)

यह वटादिवर्ग और शिम्बीकुल (Leguminosae)की सिरस की एक जाति होती है ।

नाम

हिं०—सफेद सिरस, बाड़ो, गारसो, गुराड़ । ब०—



कोराई । बवई–किनाई, तिहिरी, करालु । दक्षिण–कनालु । म०—किनहाई । मद्रास–कोण्डा वागी । अ०—व्हाइट सिरिस (White siris) ले०—एलवीझिया प्रोसेरा (Albizzia Procera(Roxb) Benth)

सिहोरा–देखिए 'रूसा' (Streblus asper, Lour) इसी भाग मे ।

गुण धर्म और प्रयोग—

इसके पत्ते कृमि नाशक होते है, इसका पुल्टिस बनाकर व्रणो पर बाधा जाता है ।

सीताफल (ANNONA SQUAMOSA)

यह फल वर्ग और सीता फलादिकुल(Annonaceae) का छोटा चिकना वृक्ष है । ऊचाई लगभग २० फीट पान-मोटे, भल्लाकार, लम्ब गोल, चलकते२ से ३ इंच लम्बे, पौन से डेढ इच चौडे । पुष्प एकाकी पान के सामने ३ सकडी, लम्ब गोल पखड़ियो वाला । पुष्प वाह्य कोष के पत्र मोटे, जाडे ६ होते है । फल–मोटा, गोल । फल की आकृति वाहर से फोडे जैसी । फल कच्ची अवस्था मे हरा, पकने पर प्रत्येक खड्ढे के पास गुलावी रग का और सहज पीलापन लिए हो जाता है । फल के अन्दर का गर्भ स्वादिष्ट होता है । फूल—ग्रीष्म मे फल–आश्विन—कार्तिक मे पकते हे । बीज–काले चिकने और लम्बे होते है । सीता फल एक सुप्रसिद्ध फल है जिसका गूदा सारे भारत मे बडे चावसे खाया जाता है ।

उत्पत्ति स्थान—

सर्वत्र, यह वेस्ट इण्डिज का अमल वतनी माना जाता है ।

नाम–

स०—सीताफल, गण्डगात्र, वहुवीजक, आतृव्य । हिं-सीताफल, शरीफा । म०, गु०, क०, राज०—सीताफल । ब—आता, लुना । ता—सीताफलम । मला०—आताचीचा । प—शरीफा । वृज०–सीताफल । फा—काज, शरीफा । ते०–सीताफलामु । अ०—कस्टर्ड एपल (Castard apple) ले०–अनोना स्क्वामोसा (Annona squamosa, Linn)

रासायनिक संगठन–

फल मास मे आर्द्रता ६४-६२%तथा शर्करा ६.५५% होता है । बीजो मे एक तेल तथा राल होती है । बीज पत्र तथा कच्चे फल में एक कटु तत्व क्षार सरल तथा विषाक्त राल होती है ।

उपयुक्त अङ्ग—पत्र, फल, बीज ।

गुण धर्म और प्रयोग—

रस–मधुर । वीर्य-शीत । विपाक-मधुर । दोषाघ्नता-वातपित्त ।

सीताफल-तृप्तिजनक, रक्त वर्द्धक, स्वादिष्ट, शीतल, हृदय को हितकारी, वलवर्धक,मांस वर्द्धक, दाह, रक्तपित्त और वात विनाशक है ।

सीताफल(शरीफा) मधुर, शीतल, हृदय को हितकारी, वलवर्द्धक, वातकारक, कफ कारक, स्वादिष्ट, पुष्टिकारक और पित्त नाशक है ।

इसका फल स्वादिष्ट, पौष्टिक, रक्त को वढाने वाला, मांस पेशियो को दृढ करने वाला होता है । (ब च)

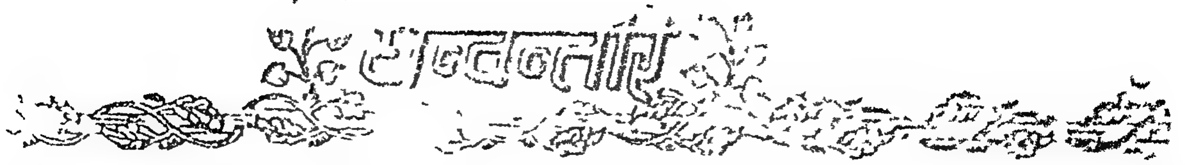
यूनानी मतानुसार–

प्रकृति–दूसरे दर्जे मे गरम और तर है। गुण-कर्म तथा उपयोग-शरीफा एक मेवा की भांति खाया जाता है। इसका रस सर है और सीठी (फोक) कब्ज पैदा करती है । इसके गूदे से रस चूस कर सीठी को फेक देना चाहिए । यह सौम नस्य जनन, हृदय वल वर्द्धक और दिल की धडकन को दूर करने वाला है । यह वाजीकरण और वृहण भी है । यह विशेष रूप से सारक है । (यू द्र वि.)

उपयोग—

वीजनेत्र मे डालने पर दाह कारक, बीज पशुओ के घाव भरने मे उपयोगी है । कच्चे फल अतिसार और पेचिस मे हितकारक है । ग्रामवासी मस्तिष्क के वालो मे जू मारने के लिये कच्चे फल या वीजो का चूर्ण रात्रि को शिर पर पीसकर लगा लेते है ।

पानो को पीसकर रस निकाल, हिस्टीरिया से मूर्च्छित रुग्णा के नाक में कुछबून्द डालने से चेतना लाने में सहायता



पहुचाती है। एव इसके बीजो की गिरी को पीस कपडे मे डाल वत्ती बना जलाकर धुआ का नाक मे प्रवेश कराने से हिस्टीरिया और मृगी की वेहोशी दूर हो जाती है। पानो को कूट चटनी वना, सेधा नमक मिला व्रण पर पुल्टिस रूप से बांधने से कृमि मर जाते हैं। कच्चे फोडो पर इसकी पुल्टिस बाधने से वह जल्दी पक जाता है और पूय को खेंचकर व्रण का शोधन कर देता है। पक्व फल की छाल मे भी व्रणो को शोधन, रोपण और कीटाणुओ का नाश करने का गुण रहा है। कीडे मारने के लिये कितने वैद्य सीताफल के पत्ते तम्बाकू और बिना बुझे चूने को शहद के साथ मिला घाव पर बाध देते है। कितनी स्त्रिया गर्भपात करने के लिये बीज के चूर्ण का उपयोग करती हैं। बीजो की गिरी की वर्तिनष्टार्तव मे मासिक धर्म लाने के लिये योनि मे रखी जाती है। उन्माद मे इसके मूल का चूर्ण दिया जाता है। जिससे विरेचन होकर विकार निकल जाता है। मूल—तीव्र रेचक है। सम्हाल पूर्वक उपयोग करना चाहिये। [गा. औ र]

इसके बीजो का चूर्ण आखो के लिये एक अत्यन्त घातक वस्तु है उसके आख मे पड जाने से आखें फूट जाती है, उससे आखो को बहुत बचाना चाहिये। [illegible] बच्चों के पेट में जो लम्बे-लम्बे कृमि पड जाते है वे सीताफल के पत्तो को पिलाने से मर कर निकल जाते है।

[व० च०]

फल—कफ प्रकृति तथा जिनके कफ की वृद्धि हुई हो उनको नही खाना चाहिये। पित्त और वायु मे फल खाना लाभदायक है। (आ० नि०)

प्रयोग—

गठान—पके हुए सीताफल को कूटकर उसमे नमक मिलाकर बाधने से दुष्ट वायु, जल और पृथ्वी से पैदा हुई साघातिक गठाने जल्दी पककर फूट जाती हैं।

काच निकलना—इसके पत्तो को हिम या फाण्ट से गुदा धोने से बच्चो को काच निकलना बन्द हो जाता है।

प्रसूति कष्ट—इसके बीजो को पीसकर गर्भाशय के मुह पर लगाने से बालक सुख से पैदा हो जाता है।

अहितकर—सौदा के रोग उत्पन्न करता है। निवारण सिकज वीन और अम्ल पदार्थ।

सीसालियूस (Myrrhis odorata Scop)

यह गृञ्जानादि कुल (Umbelliferae) का सामान्य पौधा है। पत्र बडे, त्रिपक्ष, पत्रक अच.स्थित शिराओं पर और पत्र प्रान्त पर लोमश, पत्रवृन्त फैले हुये रोम युक्त, पत्र लट्वाकार अपेक्षाकृत भालाकार बडे पत्रको के आधार के समीप साधारणत सफेद छीटे युक्त, स्वाद मधुर अनीसू की तरह जड सफेदी लिये १ २५ से ३ ७५ से०मी० (आधा से डेढ इच) चौडी होती है।

उत्पत्ति स्थान—

ब्रिटिश बगीचो का सामान्य पौधा है। इसकी एक जाति मेउमडी फ्यूजुम (Meumdiffusum) भारत वर्ष मे भी होती है।

नाम—

यू० (Sesel (D 4 108), अ०, यू०—सीसाली, ग्रलसी मे सालियूस। इ०, बै०—सासाली, सासालियूस। फा०—अजुदान रूमी, काशिम रूमी। अ०—स्वीट या स्मूथर सिसेली (Sweet or Smoother cicely), स्वीट शेर्विल (Sweet Chervil), सेसेली (Sesel) । ले०—मीर्हिस ओडोराटा (Myrrhis odorata scop)।

कायमी के लेखक के अनुसार यह आयुर्वेदोक्त भारङ्गी है।

उपयुक्त अङ्ग—जड या पचाङ्ग।

गुण धर्म और प्रभाव—

प्रकृति—दूसरे से तीसरे दर्जे तक गरम और रूक्ष।

गुण-कर्म तथा उपयोग—यह मूत्र जनन, आर्तव जनन, अवरोधोद्धाटन कर्ता, दीपन, पाचन, वाजीकर और वेदना स्थापन है तथा पेट के दर्द, श्वासकृच्छ्र (सास की तगी), मूत्रकृच्छ्र (बिंदुमूत्र) और गर्भाशय के दर्द को दूर करता है। तथा वस्ति एव वृक्क रोगो मे अत्यन्त गुण कारक है। इसके बीज शरीर के भीतर की पीडा को शात करते है और कफ का नाश करते है। इनसे मूत्र और आर्तव का खूब प्रवर्तन होता है और अवरोधो का उद्धाटन होता है।



इसके खाने से गर्भपात हो जाता है। ४॥ माशे इसके बीज मद्य के साथ खाने से यात्रा मे होने वाले वायुजन्य विकार एव शीत से रक्षा होती है। अपस्मार मे भी यह गुणकारक है। इसकी जड और वीजो के खाने से पुरानी खासी जाती रहती है। इसकी जड को पीसकर मधु मे मिलाकर चाटने से छाती से पिच्छिल द्रवो का उत्सर्ग होता है। कुक्षि (कोख), वक्षण और नितम्ब (चूतड) आदि गत वायु का नाश होता है और भोजन हजम हो जाता है। आमाशय के लिये यह सात्म्य है। यह पेट के वायु और मरोड का नाश करती है। चौपायो के लिये भी यह सुख प्रसव कारक है। अपतत्रक मे इसके उपयोग से उपकार होता है। इसकी ताजी जडी और बीज को कूटकर रस निकालकर दो अढाई माशे की मात्रा मे मद्य के साथ खाने से और इस प्रकार दश दिन तक सेवन करते रहने से वृक्क शूल जाता है। इसे मधु के साथ चाटने से भी उक्त लाभ होता है। वस्ति रोगों मे भी यह रस लाभ पहुचाता है। कासमी के रचयिता के अनुसार भारगी कटु तिक्त और उष्ण है तथा कफज कास दमा और शोथ को नष्ट करती है। उदर कृमियो को नष्ट करती और ज्वर का नाश करती है तथा अप्राकृत उष्मा को लाभकारी है।

नव्यमत—

वातानुलोमन, दीपन और कफ नाशक है। ताजी जड स्वतत्रता पूर्वक खाई जा सकती है। खासी और आध्मान मे यह गुणकारी पाई गई है तथा अजीर्ण और आमशयिक विकारो मे मृदु उद्दीपक भी है। जड का काढ़े और क्षुप का फाण्ट के रूप मे उत्कृष्टतम प्रयोग होता है तथा यह युवा कन्याओ के लिये उत्तम वल्य औषधि है प्लेग कालीन सक्रमण रोकने के लिए सिसली की जड और सबुल खताई



सीसा लियूस
MYRRHIS ODORATA SCOP

(Angelica) का प्रयोग किया जाता था।

(पाटर्स न्यूसाइ क्लोपीडिया पृ ८१)

लेखक—वैद्य हकीम दलजीत सिंह जी
आयुर्वेद वृहस्पति, आयुर्वेद विश्वकोषकार
चुनार (उ. प्र.)

सुनिषणक:शाक (MARSILEA GRANDIFOLIA)

यह सुनिषणक शाककुल(Marsi leaceae)का जलज उद्भिद-तालावो केकिनारे होता है। क्षुप १ फुट से ऊचा नही जाता। पत्रो का वृन्त नोकीला व पत्र ४ भागो मे विभिक्त, यह कर्दम के ऊपर फैला होता है। आकार मे चागेरी (खट्टी वूटी) के तुल्य होता है, केवल पत्रों मे ग्रम्लत्व नही होता। शीतकाल मे (Spore) वा बीज होते हैं। 'शाको जलान्विते देशे चतुष्पत्रीति चोच्यते'। यह भाव मिश्रोवत वर्णन अति सुन्दर है। वग देश मे सुनिषणक

शाक अधिक खाया जाता है।

सुनिषण-(अच्छी तरह बैठा हुआ वा झुका हुआ), चतुष्पत्र (चारपत्तो वाला), शितिवार (श्याम पत्तो वाला), स्वस्तिक (स्वस्तिकाकार Cross like आमने सामने पत्र हैं, जिसके), सिति (श्याम), चागेरीपत्र सदृशपत्र (चागेरी के तुल्य ४ पत्रो वाला), शूल्या (शिव सूलाकार Cross like), वायस (काकवत् काला)।

उत्पत्ति स्थान—

बङ्ग देश में तालाबो के किनारे, गीली जमीन मे, चावल के खेतो मे सर्वत्र पैदा होता है।

नाम—

स०—सुनिषणक, सुनिषण्णक। हिं०—शिरिआरी, चौपतिया, शितिवार। व०—शुषुनिशाक। ले०—मार्सिलिआ ग्रान्डिफोलिया (Marsilea grandi folia Linn) या मार्सिलिआ क्वाड्री फोलिया(Marsilea quadri folia Linn)।

उपयुक्त अङ्ग—पत्र।

गुण धर्म और प्रभाव—

सुनिषण शाक—हिम, स्वादु, कषाय, दीपन, लघु, अविदाही, त्रिदोषघ्न, रूक्ष, हृद्य, वाजीकर, ग्राही होता है। और ज्वर, श्वास, कुष्ठ, प्रमेह, अरुचि तथा भ्रम नाशक है। (कै० नि०

वात और कास रोगी के सुषुनिशाक सेवन करने से वात का शमन होता है। (चरक)

विष दोष मे इस शाक का पथ्य रूप मे व्यवहार करने से यह विष का नाशक है। पक्वसुनिषण शाक, तिल तैल और विना नमक के भोजन करने से उरुस्तम्भ आराम होता है। सुनिषण शाक के बीजो को तक्र मे ही पीसकर फिर तक्र में ही मिलाकर पान करने से मूत्रकृच्छ्र आराम होता है। —चरक

सुनिषण शाक (शितिवार) को घृत मे छोंककर या तल करके सेवन करने से रक्तपित्त आराम होता है। —सुश्रुत

सुषुनिशाक के सेवन करने से या खाने से निद्राहीन व्यक्ति को निद्रा आ जाती है। —भ. ब व से साभार

नोट—इसके सम्बन्ध मे पूज्य वैद्य बापालाल जी भाई ने आदर्श निघण्टु भाग २ के पृष्ठ २०३ पर लिखा है कि "जब कच्छ मांडवी वाले सेठ रा० गोकुलदास खीम जी ने मुझे खडाला टैंक (पोरवन्दर) के आगे जल वाले स्थानो मे उगा हुआ एक बराबर चागेरी के पान के समान पान वाला और वैसा ही आकार का एक चार पत्तो वाला क्षुप दिखलाया तब सच्चा सुनिषण्णक यह नया क्षुप ही, ऐसा मुझे ज्ञात हुआ। इस छोटे क्षुप को रा० जय कृष्ण भाई जल कपासिया (Marsilea quadrifolia N o Marsileaceae Dalzell p 301) कहते है। जो जल मे ही होता है। बराबर चागेरी (Oxalis corniculata, No Oxaideae) जैसे ही पत्ते होते हैं।"

इससे स्पष्ट है कि आपका सच्चा 'सुनिषण्णक शाक या शितिवार शाक (Marsilea grandifolia Linn) ही है। जिसका कि चित्र आपके समक्ष है।

सुख दर्शन (Crinum Zeylanicum)

यह नाग दमनी कुल (Amaryllidaceae) का एक गुल्म जाति का उद्भिद है,यह बहुत वर्षों तक जीवित रहता है। कन्द ५ से ६इञ्ची गोलाकार वा डिम्बाकृत, गला मोटा व छोटा। पत्र-२¾फीट लम्बा ¾ इची चौडा, अग्रभाग नोकीला पुष्प दडका पत्र ३-४इच लम्बा। फल-श्वेतवर्ण कुछ बेंगनी किंवा घोर लाल वर्ण के दाग होते हैं। पुष्प की पु केसर की अपेक्षा स्त्रीकेसर अधिकलम्बा। फल कुछ गोलाकार। डा रम फियस इसको Tulip gavanica कहते हैं। ग्रीष्म और वर्षा काल मे फूल और बाद मे फल होते है।

उत्पत्ति स्थान—

उडीसा, छोटा नागपुर के जगलो मे, बगाल तथा सारे भारत के जगलो और बगीचो मे होता है।

नाम—

स.—सोमावल्ली, वृषकर्णी। हिं—सुखदर्शन। ब.-



सुख दर्शन । ता —विष मु गिल । वम्बई—गदाम्बो कद ।

ले.—क्रिनम झिलेनिकम (Crinum zeylanicum Linn) ।

उपयुक्त अङ्ग—कन्द ।

गुण धर्म और प्रयोग—

इसके पत्तो का रस कर्णशूल मे व्यवहृत होता है। इसके कन्द को पीसकर गरम करके अर्श व फोडे को गैठाने मे बहुत उपकार करता है। पके फोडे पर इसके कन्द की पुल्टिस लगाने से से फोडा फूट जाता है। (भा. व. ब. से)

सुपारी (Areca Catechu)

यह फलादि वर्ग और नारियल कुल (Palmae) का वृक्ष लगभग ताड या नारियल के समान ऊचे और शाखा हीन सवसे सुन्दर होते है। स्कन्ध एकाकी विलकुल सीधा ऊंचाई ३० से ६० फुट। मोटाई २ फुट तक। पान ४ से ६ फुट लम्बा। पर्णा दल पान पर अनेक, १ से २ फुट लम्बे, ऊपर चिकने। बडे रंगीन पुष्प पत्र से बना हुआ, पुष्पकोष (Spathe) दोहरा, दवा हुआ, चिकना। स्थूल मंजरी (Spadix) बहुत शाखा युक्त नरपुष्प और मादा पुष्प वाली। नर पुष्प एक स्थान मे अनेक, वृन्त रहित, पुष्प पत्र हीन। पुष्प पीले रङ्ग के सफेद से गुच्छो मे लगते हैं। उसका पुष्प वाह्यकोष १ पान का. छोटा, ३ कोन युक्त, ३ विभाग वाला। पुष्पाभ्यन्तर दल ३ पु केसर ६। मादा पुष्प एकाकी, २ या ३। ये सब स्थूल मजरी के अग्र भाग में वृन्त और पुष्प पत्र रहित वाह्य दल और आभ्यन्तर दल ३-३। मिथ्या पु केसर ६ और पराग वाहिनी मुख ३ युक्त। फल कच्चा होने पर हरा पकने पर सतरे जैसा या लाल रग का २-२॥ इच लम्बा १॥-२ इच मोटा, चिकना। इसका ऊपरी खोल सूत्रो से बना होता है, जिसको हटाने पर सुपारी निकलती है। सुपारी जहाजी, मानकचन्दी, श्री वर्द्धिनी इत्यादि अनेक प्रकार की होती है। पुष्प-काल- वर्षाऋतु। फल-काल—शीतऋतु।

विवेचन—जो सुपारी बाजार मे मिलती है वह फल की गुठली है। ऊपर के रेशे मय कवच (फल) को निकाल दिया जाता है। एव गुठली के ऊपर रही हुई कठोर झिल्ली को भी उपयोग करने के पहले हटा देते हैं। फल—नारियल व खजूर के समान गुच्छो में लगते हैं। फल अण्डाकार होता है। मैसूर मे फल १०-१२ वर्ष का वृक्ष होने पर और बंगाल में ६-वर्ष का होने पर मिलते हैं। मैसूर मे सुपारी अगस्त से जनवरी तक उतारी जाती है। बगाल मे अक्टूवर से जनवरी तक। बबई और लका मे उतारने का मौसम अगस्त से मार्च तक रहता है एक मौसम मे ये फल २ या ३ वार उतारे जाते हैं।

१ वर्ष मे २-३ गुच्छे लगते हैं। इनमे २००-२५० फल होते है। १०० फलो का वजन १½ से २ सेर तक होता है। सुपारी की अनेक जातियो में मैसूरी सुपारी श्रेष्ठ है। इन सुपारियो को विशेषत उबाल करके उपयोग में ली जाती है। इस तरह तैयार करने पर टैनिन (कषायाम्ल) का अधिकांश कम होजाता है।

सुपारी मे सामान्यत कषायाम्ल २१ ६ से ३०.२ तक रहता है। तैयार करने पर ८.६ से १५ १ शेष रह जाता है। सुपारी को वृक्ष पर अधिक पकने नही देते। अन्यथा वे कडी होजाती हैं। कच्ची भी नहीं तोडते। अन्यथाफल सिकुड जाता है। मैसूर की उत्तम जाति को श्री वर्द्धन सज्ञा दी है। इसके नाम के अनुरूप ३ विभाग है। विशेष ए १ और ए २।

उत्पत्ति स्थान—

मुख्य स्थान अनिश्चित। वर्तमान मे ईस्ट इण्डिज के टापू फिलीपाइन जावा, वर्मा, लंका आदि विदेशो मे तथा मद्रास, मैसूर, बगाल, आसाम, बम्बई इलाके के दक्षिण भाग आदि मे सुपारी बोयी जाती है। एव माडागास्कर और पूर्व अफ्रिका मे भी इसका विस्तार होरहा है।

नाम—

स०—पूग, क्रमुक। फल—पूगफल, घोण्टाफल, चिक्कणा। हि०—सुपारी, सुपाडी। म०, व०—सुपारी। गु०—सोपारी। ओ०, गोआ—पुगो, सुपारी। ते०—वाक्का, चिकिनमु, चिकिनी क्रमुकमु, पुगमु। ता०—

कण्डी, कमुगु, पाक्कु। मला०—अटेक्का, अडक्का, चेम्पल्लुका, घोण्टा। क०—अड़िके, वेट्टे, पूग, पुगीफल। अ—फोफल। फा०—पोपला। इ०—अरेका नट पाम (Areca nut palm)। ले०—अरेका केटेच्यू (Areca catechu Roeb)।

रासायनिक संगठन—

फल मे आर्द्रता ३१ ३, प्रोटीन ४ ९, वसा (या सत्व) ४.४, कार्बोहाइड्रेटस ४७ २ और खनिज द्रव्य १ ० मिलते हैं। सुपारी मे प्रबल विषमय एर्कोलाइन (Arecoline) आदि कई क्षारीय द्रव्य मिलते हैं। इन क्षारो का असर केन्द्रीय और पेरी फेरल वातनाडी मस्थान पर होता है। इन सबका पक्षाघात होता है। इस विष का अन्त क्षेपण १ ग्रेन की मात्रा मे घोड़े को क्रिया जायगा, तो जुलाव ला देता है।

उपयुक्त अङ्ग—फल।

मात्रा—सुपारी फल कल्क वा चूर्ण ½ से १ तोले तक। कृमिरोग मे मात्रा अधिक दी जाती है। अनुपान मक्खन।

गुण धर्म और प्रयोग—

सुपारी मोहक, स्वादिष्ट, रुचिजनक, कसैली, रूखी, सारक, मधुर, भारी, पथ्य, दीपन, किंचित चरपरी, मुह के जायके को सुधारने वाली तथा वमन क्लेद, त्रिदोष, मल, वात, कफ और दुर्गन्ध को दूर करने वाली होती है।

कच्ची सुपारी कठ शोधक, अभिष्यन्द, सारक, भारी, दृष्टि शक्ति नाशक, मन्दाग्नि कारक तथा रक्तविकार, मुह की दुर्गन्ध, पित्त, आम, कफ, आध्मान और उदर रोग को नाश करती है। सूखी हुई सुपारी रुचिकारक, पाचक, रेचक, स्निग्ध, वादी तथा कण्ठरोग और त्रिदोष को नाश करने वाली होती है। बिना पान की सुपारी खाने से सूजन और पाण्डु रोग उत्पन्न होता है।

आन्ध्रदेश मे उत्पन्न होने वाली सुपारी पचने मे मधुर किंचित अम्ल, कसैली तथा कफ वात नाशक और मुख मे जडता पैदा करने वाली होती है। चम्पापुर की सुपारी पाचक, अग्निदीपक, बलवर्द्धक, रसयुक्त और कफनाशक होती है। चन्दापुरी सुपारी रस मे मधुर, चरपरी, कसैली रुचिकारक, स्वादिष्ट, अग्निदीपक, पाचक और कफ नाशक होती है। गुहागरी सुपारी मधुर, कसैली, हलकी, चरपरी, पाचक, विशद, मलरोधक तथा आफरा और वात को नष्ट करने वाली होती है। सुपारी के पेट का गोद मोहजनक शीतल भारी, पचने मे उष्ण, पित्त कारक, नरपरा मट्ठा और वात नाशक होता है। (व. च)

भगवान धन्वन्तरि के मतानुसार सुपारी कफ पित्तहर रूक्ष, मुह के चिकनेपन और मल को दूर करने वाली, कसैली, किंचित मधुर और किंचित सारक है। भाव प्रकाश के मतानुसार सुपारी गुरु, शीतलरूक्ष, कसैली, कफ पित्तहर, मोह जनक, दीपन, रुचिकर और मुख की विरसता नाशक है।

भाव प्रकाश लिखते हैं कि कच्ची (बिना उबली हुयी) सुपारी, गुरु, अभिष्यन्दी तथा जठराग्नि और दृष्टि को हानि पहुँचाने वाली है। उबाली हुई चिकनी सुपारी त्रिदोष हर है, इनमे भी जिनका मध्य भाग दृढ हों, वह श्रेष्ठ मानी जाती है।

कैवदेव जी ने—कच्ची (अपक्व-कोमल) सुपारी को जठराग्नि और नेत्र दृष्टि को बल देने वाली लिखा है। पक्की और गीली सुपारी को गुरु और अभिष्यन्दि तथा कच्ची आर्द्र सुपारी को कफ-पित्त हर लिखा है। शार्ङ्गधर जी ने विकाशी द्रव्यो का उदाहरण सुपारी दिया है।

सुपारी के उबालने पर जो जल निकलता है उसे उबालकर सुखा लिया जाता है। उसे सुपारी के फूल (Chogaru) कहते हैं। इसमे कषायाम्ल अधिक आजाता है जिससे ग्राही गुण दर्शाता है मसाले की सुपारी बाजार मे मिलती है उसमे सुपारी के इन फूलो का उपयोग विशेषतः होता है। एव यह कत्था रूप से बम्बई के बाजार में बिकता भी है।

सुपारी मुख शुद्धि रूप से भोजन कर लेने पर ली जाती है मुख शुद्धि के अतिरिक्त मसूढो को दृढ करती है और दातो के मल को दूर करती है। मुख शुद्धि के लिये सुपारी कतरकर या टुकडे करके खायी जाती है। पान के साथ भी मिलायी जाती है। इसके अतिरिक्त सुपारी को रेती से भूनकर भी खाया जाता है वह अधिक स्वादु बनती है। सुपारी को कूट चूर्ण कर खाने की अपेक्षा मुह मे टुकडा रखकर रस निगलते रहने से मुख शुद्धि विशेष होती है, दातो को लाभ पहुँचाता है और लाला स्राव अधिक होने से पचन क्रिया मे भी लाभ पहुँचाता है। सुपारी नयी हो और उबाली न हो ऐसी सुपारी अधिक खाने पर मुह मे



छाले हो जाते है जिह्वा फट जाती है और छाती मे घबराहट भी हो जाती है। ४ मास व्यतीत हो जाने पर ऐसा कष्ट नही पहुँचाती। सुपारी खाने का अभ्यास न होने पर मात्रा अधिक ली जाती है। प्रारम्भ मे हृदय कला का प्रदाह होता है एव हृदय मे भारीपन, व्याकुलता और चक्कर आना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। अधिक लापरवाही करते रहने पर मुंह मे कर्कस्फोट (केन्सर) हो जाता है।

यूनानी मतानुसार—

सुपारी दूसरे दर्जे मे शीतल और रूक्ष एव पाचन, ग्राही, मूत्रल, शोथहर, हृदय पौष्टिक और ऋतु श्रावक गुण दर्शाती है। तथा नेत्र अभिष्यन्द, चक्कर आना, सुजाक पर उपयोगी है। यह पूय को नष्ट करती है।

नव्य चिकित्सको के मतानुसार सुपारी का चूर्ण ५से ८ रत्ती तक ३—३ या ४-४ घण्टे पर देते रहने से अपचन जनित अतिसार दूर हो जाता है। शुक्र सस्थान की विकृति पर सुपारी हितकर है एव इससे कामोत्तेजक गुण की भी प्राप्ति होती है।

कोमान के मतानुसार कोमल सुपारी छोटी मात्रा मे मृदु विरेचक होती है।

सुपारी का सेवन करने पर वातवाहिनियां सबल बनती है, मासिक धर्म साफ आता है इसके अतिरिक्त सुपारी के कपाय का उपयोग नेत्र विन्दु रूप से करने पर ग्राही गुण दर्शाता है और वेदना भी दूर होती है। जो व्रण दूषित हो गया हो, जिसमें से दुर्गन्ध निकलती हो और न भरता हो, उस पर सुपारी को गोमूत्र मे घिसकर लेप किया जाता है।

कटिवात की वेदना मे सुपारी को तैल मे उवाल, उस तैल की मालिश की जाती है। सुपारी के मूल का क्वाथ करके कुल्ले कराने पर होठो के भीतर हुआ क्षत मिट जाता है।

उपयोग—

सुपारी के फल का चूर्ण ५ रत्ती से लेकर १ माशे तक की मात्रा मे निर्बलता से होने वाले अतिसार मे तीन तीन चार चार घण्टे के अन्तर से दिया जाता है। मूत्र सम्वन्धी बीमारियो मे भी यह वहुत लाभदायक होता है। इसमे कामोद्दीपक तत्व भी रहते है। इसके सूखे फल के टुकड़ो को चूसने से शरीर मे उत्तेजक और आनन्ददायक प्रभाव होता है।

सुपारी स्नायु जाल को शक्ति देने वाली और ऋतु स्राव नियामक होती है और इसका लोशन एक सकोचक द्रव्य की तरह आखों मे डालने के काम मे लिया जाता है। यह आंतो की शिकायत और खराब व्रणो के अन्दर भी उपयोग मे ली जाती है।

सुपारी के कोमल पत्तो का रस निकालकर मर्दन करने से कमर की स्नायु पीड़ा मिटती हैं और इसकी जड़ का काढा होठ के व्रण को मिटाने वाला माना जाता है।

सुपारी के चूर्ण का मजन करने से अथवा इसके छोटे छोटे टुकडे मुह मे रखने से मसूढो से रुधिर का निकलना वन्द हो जाता है। इसके चूर्ण की पोटली बाधकर योनि मे रखने से योनि से पानी का वहना वन्द हो जाता है। दूध के साथ सुपारी के सवा तोले चूर्ण की फक्की देने से पेट के गोल और चपटे कृमि (Tape worm) मर जाते हैं इसके ४ माशे चूर्ण को मक्खन के साथ देने से पेट के कीडे निकल जाते हैं।

सीलोंन के अन्दर सुपारी को घिसकर जख्म के ऊपर लगाया जाता है। यह मसूडो को शक्ति देने वाली मानी जाती है। पशुओ के पेट के कीड़ो को नष्ट करने के लिए भी यह दी जाती है।

मलाया की स्त्रिया छोटी उम्र मे गर्भ रह जाने पर सुपारी के हरे और कोमल पत्तों को गर्भ घातक औषधि की तरह काम मे लेती है। चीन मे सुपारी पौष्टिक, सकोचक और कृमिनाशक मानी जाती है। इसके छोटे टुकड़ो का काढा वनाकर आतो की अनेक प्रकार की शिकायतो को दूर करने के लिए पिलाया जाता है।

कम्वोडिया मे सुपारी के पत्ते खांसी को मिटाने के लिये पिलाये जाते है और कटिवात को दूर करने के लिये इनका वाहरी लेप किया जाता है। इसका फल अफीम के साथ अतिसार को दूर करने के लिए दिया जाता है और इसकी जडयकृत की वीमारियो मे उपयोगी मानी जाती है।

प्रयोग—

वमन—सुपारी और हल्दी के चूर्ण में शक्कर मिला-

कर फक्की देने से वमन बन्द हो जाती है।

उपदंश—सुपारी का बारीक चूर्ण भुर भुराने से उपदंश का घाव मिटता है।

मुखपाक—सुपारी और बडी इलायची की भस्म को मुह मे भुर भुराने से मुह के छाले मिटते है।

रज रोग—सुपारी का पाक खाने से स्त्रियो के योनि और रज सम्बन्धी बहुत से रोग मिटते हैं। —व० च०

उदावर्त—(गैस प्रकोप) (A) सुपारी का कल्क या तैल सिद्ध करके रोज रात्रि को सोते समय १-१ औंस तैल की बस्ति १ सप्ताह तक देने से आतो मे रुकने वाली वायु दूर हो जाती है और आत सबल बन जाती है।

(B) चिकनी सुपारी के चूर्ण को मट्ठे या कांजी मे पीस, चटनी बनाकर १½ से ६ माशे चटनी रोज सुबह मट्ठे या कांजी के साथ लेते रहने से आमाशय मे वायु (डकार) का निरोध हो तो वह दूर हो जाता है।

छर्दि पर—सुपारी के कवच या सुपारी की अन्तर्धूम भस्म और नीम की लकडी की काली राख, दोनो को जल मे मिला छानकर थोडा थोडा पिलाने से अपचनजनित वमन रुक जाती है।

ऊर्ध्व रक्तपित्त—सुपारी का चूर्ण चन्दन के अर्क या या चावलो के हिम के साथ सेवन कराने पर नाक, आख और मसूढे से आने वाला रक्त बन्द हो जाता है।

इक्षुमेह—सुपारी और खैर की छाल का क्वाथ कर शहद मिलाकर पिलाते रहने से मूत्र के साथ शक्कर जाती हो तो बन्द हो जाती है।

मसूरिका—शीतला निकलने पर सुपारी का चूर्ण जल के साथ लेलेने पर विष सरलता से बाहर निकल जाता है।

विसर्प—रात्रि को सुपारी को उबलते हुए जल मे भिगोवे। सुबह रुई को उस जल मे भिगोकर दिन मे ४-६ बार लगाते रहने से विसर्प दूर हो जाता है।

पामा—सुपारी की अन्तर्धूम राख में थोडा तिल तेल वा थोडा घी मिला मलहम बनाकर लेप करते रहने से खुजली के पीले फाले दूर हो जाते है।

सुपारी का मद (विष) चढ़ना—गुड खाकर जल पीने से या शरबत मिला जलपान करने से घबराहट दूर हो जाती है।

मसूढे से रक्त स्राव—सुपारी को जलाकर काली राख (या अन्तर्धूम राख) बनाकर मंजन रूप मे उपयोग करने पर मसूढे से होने वाला रक्त स्राव बन्द हो जाता है, एवं दात दृढ बन जाते हैं।

श्वेत प्रदर—गर्भाशय की शिथिलता के हेतु से श्वेत प्रदर का स्राव होता रहता हो, तो सुपारी के चूर्ण की पोटली बनाकर योनिमार्ग मे धारण करायी जाती है।

उदर कृमि—गोल कृमि और चपटे कृमियों के मारने के लिए देह के वजन प्रति पौण्ड पर १ से २ ग्रेन के हिसाब से सुपारी के चूर्ण का सेवन मक्खन के साथ कराया जाता है यह चूर्ण एक ही समय में दे देना नही चाहिये। थोडा-थोडा ४-६ बार देना चाहिये। (गां. औ. र)

विशिष्ट योग—

पूग खण्ड (भै. र. शूला)—सुपक्व उत्तम सुपारी के छोटे-छोटे टुकडे करके उन्हें जल मिश्रित दूध मे पकावे और फिर उन्हे पानी से धोकर धूप मे सुखाकर चूर्ण करलें। तत्पश्चात् आठपल (४० तोले) उस चूर्ण को ४० तोले घी में भूने और फिर उसमें ४०-४० तोले शतावर और आमले का रस ४ सेर दूध और ३ सेर १० तोले खाण्ड मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब अवलेह तैयार होजाय तो उसमे निम्नलिखित चीजो का चूर्ण मिलावें—

नागकेसर, नागरमोथा सफेद चन्दन, सोंठ, मिर्च, पीपल आमला, चिरौंजी, दालचीनी, तेजपात, इलायची छोटी, दोनो जीरे, सिघाड़ा, वसलोचन, जावित्री, जायफल, लौंग, धनिया ककोल, रास्ना, तगर, सुगन्धवाला, खस, भंगरा और असगध २½-२½ तोले।

इन सब चीजो का चूर्ण मिलाकर थोडी देर करछी से चलावे और फिर चिकने पात्र मे भरकर रखदें।

गुण—इसके सेवन से शूल, अजीर्ण, गुदा से रक्त आना, कष्ट साध्य अम्लपित्त, तृष्णा, छर्दि, मूर्च्छा, पाडु और मल तथा मूत्र का अवरोध आदि रोग नष्ट होते हैं। यह जरा हर, वृष्य, अग्निवर्द्धक, बल वर्ण को बढाने वाला, दृष्टि को तीक्ष्ण करने वाला और गर्भप्रद तथा यक्ष्मा के रोगी और क्षीण पुरुषो के लिये हितकारी है।

पूग खण्ड (अपर) (२) (भै. र. शूला.)—१ सेर

सुपारी के चूर्ण को ८ सेर दूध मे पकावे। जब खोवा (मावा) हो जाय तो उसे १ सेर घी मे भूने और फिर ६। सेर खाड की चाशनी करके उसमे यह खोवा (मावा) और निम्न लिखित चीजो का चूर्ण मिलावे।

दालचीनी, तेजपात, इलायची, नागकेशर, सोठ, काली मिर्च, पीपल, लौंग, सफेद चन्दन, जटामासी, तालीसपत्र, कमलगट्टे की गिरी, निलोत्पल, वशलोचन, सिघाडा, जीरा विदारीकन्द, गोखरू, शतावर, मालती पुष्प और आमला। प्रत्येक १।-१। तोला।

इन सब चीजो का चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह आलोडन करें। जब पाक डण्डा हो जाय तो उसमे २।। तोले कपूर मिलाकर चिकने पात्र मे भरकर रखदे।

इसे नित्य प्रति प्रात. काल ६ माशे की मात्रानुसार सेवन करने से छर्दि, अम्लपित्त, हृदय की दाह, भ्रम मूर्च्छा, सर्वप्रकार के शूल, आमवात, प्रमेह, मेद, प्लीहा, पाडु, पथरी, मूत्रकृच्छ्र और गुदा मार्ग से रक्त जाना इत्यादि रोग नष्ट होते हैं।

यह वीर्य वर्द्धक, हृदय के लिये हितकारी, पौष्टिक और कामशक्ति वर्द्धक है।

इसके सेवन से वन्ध्या स्त्री को पुत्र प्राप्त होती है और वृद्ध पुरुष पुन युवा के समान हो जाता है।

इससे उत्तम अन्य वाजीकरण औषधि कोई नही है।

(नोट—कपूर को थोडे से घी मे मिलाकर डालना चाहिये)।

पुग पांसुर्योगः (पूगपाक) (यो० चि० अ०१) —सुपारी के ८ पल (४० तोले) चूर्ण को ५ सेर दूध मे पकावे जब खोवा हो जाय तो उसे ४० तोले घी मे भून लें और फिर ५० पल (३ सेर १० तोले) खाण्ड की चासनी मे यह मावा तथा निम्नलिखित चीजो का चूर्ण मिलावें—

आमला और शतावर २०-२० तोले, तथा नागकेसर नागरमोथा, सफेदचन्दन, सोठ, काली मिर्च, पीपल, आवला, चिरौजी, बेरकी मिंगी, लज्जाजु, दालचीनी, तेजपात, इलायची, दोनो जीरे, सिंघाडा, वशलोचन, जावित्री, लौंग, धनिया। प्रत्येक का चूर्ण सवा-सवा तोला। सबको अच्छी तरह मिलाकर चिकने पात्र मे भर कर रक्खे।

इसे नित्य प्रातः सेवन करने से प्रमेह, जीर्णज्वर, अम्लपित्त, गुदामार्ग, आख, नांक, मुह से रक्त श्राव होना और रक्त प्रदर आदि रोग नष्ट होते तथा बल, अग्नि और वीर्य की वृद्धि होती है। इसके सेवन से स्त्रियो को गर्भ प्राप्ति होती है। (मात्रा—६ माशे।)

रतिवल्लभपूगपाक (यो॰ र०। वाजीकरणा)—१० पल (५० तोले) दक्षिणी सुपारी लेकर उनके छोटे-छोटे टुकडे करके पानी में भिगो दें और फिर जब वे फूल कर कोमल हो जाय तो उन्हे अच्छी तरह कूटकर सुखा लें और फिर कपडछन चूर्ण तैयार कर ले। तदनन्तर उसमें १० सेर गो दुग्ध और ४० तोले घी डालकर पकावे। जब गाढा हो जाय तो उसमे ३ सेर दस तोले खाण्ड मिलाकर थोड़ी देर और पकावे। पाक लगभग तैयार हो जाने पर अग्नि से नीचे उतार कर उसमें निम्नलिखित चीजो का चूर्ण मिलाकर ५-५ तोले के मोदक बनाले।

चूर्ण की औषधिया—इलायची छोटी, नागबला (गंगेरन) खरैटी, पीपल, जायफल, शिवलिङ्गी, जावित्री, तेजपात, तालीसपत्र, दाल चीनी, सोठ, खस, सुगन्धवाला, नागर मोथा, हर्र, बहेडा, आवला, वशलोचन, शतावर, कौच के बीज, मुनक्का, तालमखाना, गोखरू, बडी खजूर खिरनी धनिया, कसेरु, मुलैठी, सिंघाडा, जीरा, बडी इलायची, अजवायन, कुसुम्भ के बीज, जटामासी सौंफ, मैंथी, विदारीकन्द, मूसली, असगध, कचूर, नागकेसर, काली मिर्च, चिरौजी, सेमल के बीज, गजपीपल, कमलगट्टा, सफेद चन्दन और लौंग, प्रत्येक का चूर्ण ५-५ तोले तथा रस सिंदूर, बगभस्म, शीशा भस्म, लोह भस्म, अभ्रक, कस्तूरी, कपूर यथोचित परिणाम मे लेकर सबको एकत्र मिलालें।

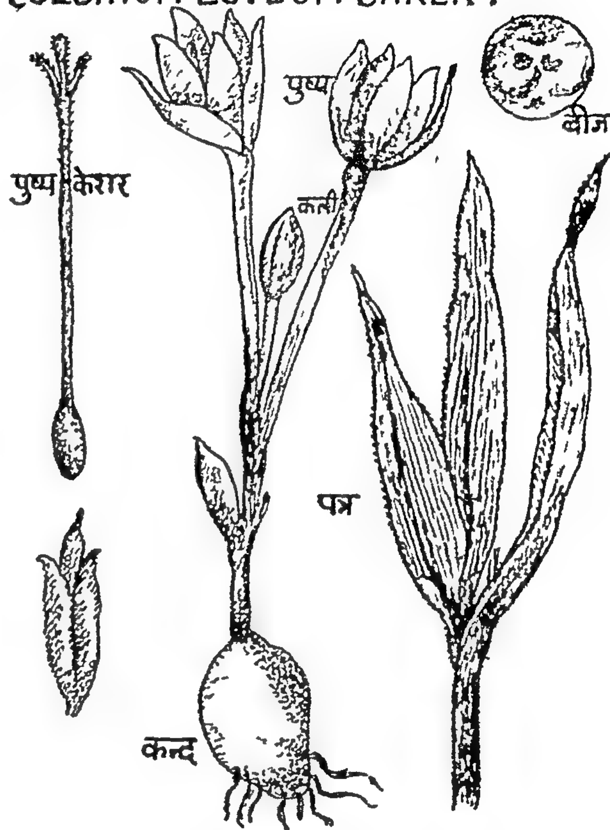
इन्हे यथोचित मात्रानुसार प्रथम बार किया हुआ भोजन पच जाने के पश्चात् और दूसरी वार के भोजन से पूर्व खाना चाहिये। अपथ्य—अम्ल पदार्थ। ये मोदक अत्यन्त वीर्यवर्द्धक और वाजीकरण है। इनक सेवन से अग्नि दीप्त होती, बल बढता तथा झुर्रिया नष्ट हो जाती है। एव वृद्ध पुरुष भी युवा के समान हो जाती है।

अहितकर—उर. खरत्वकारक और अश्मरी जनक है।

निवारण—कतीरा और इलायची। प्रतिनिधि—चन्दन। सुमाक(Rhus parviflora Roxb) देखिये 'रायलुग इसी भाग मे।

सुरिंजान कड़वी (COLCHICUM LUTEUM)

यह लहसुन कुल (Liliaceae) का एक छोटी जाति का क्षुप जिसका तना किंचित चतुष्कोणीय होता है। लुटेयम = उसारे रेवन सदृश पीले केसर युक्त। कोलचिकम = चरागाह मे उत्पन्न केसर वाचक सज्ञा के आधार से। भूमिस्थ, कठोर, स्फीत, मासलकाड, उन्नतोदर, अण्डाकार। उसकी छाल गहरी भूरी। पान एकातर थोडे, रेखाकार, लम्बगोल या भीतर की ओर भल्लाकार, तीखे कगुरेदार तीन एक शलाका मे। पुष्पो के साथ प्रतीत होने वाले नोकरहित, छोटे, फल काल मे ६ से १२ इन्च लम्बे और ½ इन्च लगभग चौडे। पुष्प—श्वेताभ पीत, १ से १५ इन्च व्यास के, विकसित होने पर सुवर्णसदृश रग के। वाह्यान्तर युक्त कोष नलिका ३ से ४ इन्च लम्बी ६ विभाग युक्त, नोक रहित अनेक सिरा युक्त। पु केसर ६, वाह्यान्तर युक्त कोष से छोटे। तन्तु पीले, परागकोष की अपेक्षा वहुत छोटा। गर्भाशय वृन्त हीन, ३ गर्भकोष युक्त। फली १ से १½ इन्च लम्बी। वीज—लगभग गोलाकार। पुष्प काल—मई।



सूरिंजान एक प्रसिद्ध कन्द है जो पीला और स्वाद मे तिक्त होता है। मीठे सुरजान से यह निम्न बातो मे भिन्न होता है। स्वाद मे तिक्त, आकार मे उसकी अपेक्षा छोटा, रग मे उससे गहरा और कद जालीदार लकीर वाला होता है। वाजार मे इससे वनायी हुई गहरे भूरे रग की रस क्रिया 'हरन तूतिया' नाम से मिलती है। अफगास्तिान तथा भारत वर्ष मे यह एक वहुत प्रसिद्ध औषधि है।

इसका सग्रह गरमी के आरम्भ मे करते है उसे ६५% गरमी से सुखा लिया जाता है। यह कद एक ओर पोला और दूसरी ओर गोल होता है वाह्य त्वचा पतली, भूरी और कोमल होती है। भीतर की छाल रक्ताभपीत, भीतर मे सफेद, ठोस, स्वाद मे अप्रिय कड़वी और श्वेताभ दुर्गन्धयुक्त, रस मय होती है। सुखाये हुए टुकडे पीताभ, श्वेत सार युक्त, वृक्काकार, कडवा और गन्धहीन होता है। [गा० औ० र०]

वक्तव्य—मसीही और अन्य पुराकालीन अरवी हकीमों ने इन तीन प्रकार के सूरजान का उल्लेख किया है—(१) सफेद, (२) पीला और (३) काला। इनमे सफेद को निर्विषैल माना जाता है और यह खाने की दवा मे काम आता है। इसी को सूरिंजाने शीरी (Merendra persica) कहते है। पीला एव विशेषकर काले को विषैला माना जाता है। इसको सूरिंजानेतल्ख कहते हैं। इसकी विदेशी जाति को लेटिन मे कॉल्चिकम् आटम्नेली (Colchicum autumnale) और देशी जाति को लेटिन मे काल्चिकम् ल्यूटिअम (Colchicum luteum) कहते हैं। यूनानी हकीमइसका उपयोग खाने की दवाइयो मे नही करते, अपितु केवल तेलादि मिलाकर मालिश के काम मे लेते है। किंतु आधुनिक अन्वेषणो से यह ज्ञात हुआ है कि सूरिंजान तल्ख गुण-कर्म मे सूरिंजाने शीरी की अपेक्षया अधिक वीर्यवान

है। पाश्चात्य वैद्यक मे सूरिंजाने तलख का ही उपयोग होता है जिसे कालिचकम आटमनेली कहते है।

उत्पत्ति स्थान–

विदेशी जाति मध्य एव दक्षिणी यूरुप, इगलैण्ड और आयर्लैण्ड की आर्द्र चरागाहो मे तथा इटली कालिचक (ग्रीक) और मिश्र आदि देशो मे होती है।

देशी जाति का ल्चिकम् ल्युटिश्रम् इसी की एक उपजाति है जो अफगानिस्तान, तुर्किस्तान और भारत वर्ष मे पश्चिमी हिमालय के समशीतोष्ण प्रदेशो मे, पहाडो की ढाल पर, घासो के बीच तथा मुरी की पहाडियो से काश्मीर और चवा तक तथा पजाब मे इसके पौधे उगते है।

नाम—

स०—सुरञ्जन, हिरण्य तूथा। हि०—सुरञ्जान। (भा० वाजार)—सुरिञ्जान। काश्मीर—विरकम। पर्शियन—सुरञ्जाने तल्ख। अ०—असाव अहुर्मुस। म०—सुरजा। अ०—कालिचकम्(Colchicum)। ले०—कालिचकम् ल्युटिश्रम् (Colchicum luteum Baker)

रासायनिक सङ्गठन—

भारतीय सुरञ्जान के कन्द मे श्वेत सार अधिक और प्रधान वीर्य (क्षारोद) कालिचसीयन (Colchicine)२५% तथा वीज से .४१ से ४३% मिलता है। इनके अतिरिक्त गोद, शक्कर और कपाय द्रव्य मिलता है।

उपयुक्त अङ्ग—कन्द। मात्रा—१ रत्ती से ३ रत्ती तक।

गुण धर्म और प्रयोग—

रस—तिक्त। गुण—वामक, रेचक। वीर्य—शीत। विपाक–कटु। दोष शमन–त्रिदोष।

यूनानी मतानुसार—

प्रकृति–तीसरे दर्जे मे गरम और खुश्क। गुण-कर्म—कडवा सुरुञ्जान का मूल कड़वे खराव स्वाद युक्त, सारक, कामोत्तेजक, प्रदाह हर, मस्तिष्क और हृदय की वेदना हर, जीर्ण अर्श पर लगाने मे लाभदायक, वेदना हर, आगन्तुक व्रण रोपक तथा शिरदर्द, वातरक्त, आमवात और यकृत प्लीहा के रोगो मे उपयोगी है। इसकी क्रिया शरीर पर कालिचकम के समान होती है। डाक्टरी मे, सुरञ्जान का विशेष उपयोग हो रहा है। उनके मत मे बाह्य और अन्तर उपयोग के गुण निम्नानुसार हैं—

वाह्योपयोग—सुञ्जान का वाह्योपयोग करने पर त्वचा और श्लेष्मिक कला पर उग्रता लाता है। वह स्थान लाल और पीडित बनता है। इसके चूर्ण से छीके आती है और आंखो मे पानी आ जाता है।

अन्तरोपयोग—डाक्टर घोष ने लिखा है कि मुंह मे देने और अन्त: क्षेपण करने पर आमाशय और अन्त्र में रसोत्पत्ति वढाता है। किन्तु यह असर प्रत्येक व्यक्ति मे नियम पूर्वक प्रतीत नही होता। मध्यम मात्रा मे यह वमन विरेचन कराता है ओर उदर मे वेदना उत्पन्न करता है। बड़ी मात्रा मे यह आमाशय अन्त्र के भीतर अति उग्रता ला देता है। यदि औषधि की वडी मात्रा ली है, तो यह लक्षण कुछ घटो तक रहते है। यह लक्षण वहुधा सुरञ्जान सत्व के परिवर्तन के हेतु से होता होगा।

वात नाडी सस्थान—सुरञ्जान का विप प्रकोप होने पर सज्ञाप्रद और सचालक, दोवो प्रकार की नाडियो का वध होता है और श्वमन स्थान और रक्त वहन संस्थान की नाडियों का वध होने पर मृत्यु हो जाती है। अभिसरण और श्वसन सुरञ्जान अभिसरण और श्वसन क्रिया का ह्रास करता है। नाडी, निर्बल, कोमल और तेज बन जाती है। यह प्रभाव हृदय और फुफ्फुस यन्त्र के पीड़ित होने पर होता है। परिणाम मे गम्भीर आमाशय अन्त्र प्रदाह उपस्थित होता है। वृक्क—सुरञ्जान का वृक्क पर प्रभाव अनिश्चित है। कतिपय व्यक्ति पूर्ण मूत्रावरोध (Anuria–मूत्राघात) से पीडित होते हैं, तब कतिपय रोगियो को मूत्रोत्पत्ति मे वृद्धि हो जाती है

विषाक्त असर—मुख्य लक्षण घातक रूप मे आमाशय-अन्त्रप्रदाह, कण्ठ, अन्ननलिका और आमाशय मे भयकर जलन, तृषा वृद्धि और घातक वमन विरेचन सह उदर पीडा होती है। पहले मल जल मय तरल फिर कीचड सदृश गाढा और पश्चात् रक्त युक्त हो जाता है। अति निर्बलता, तीव्र गति युक्त निर्बल और डोरे सदृश नाडी स्वेद से भीगी हुई शीतल, मन्द और श्रमप्रद, श्वसन सस्थान का वल क्षय होकर मूर्च्छा आती है और मृत्यु हो जाती है।

सुरञ्जान निष्कर्ष (Tincture Colchicum) सुरञ्जान कन्द का चूर्ण ३० नम्बर की चलनी से छाना हुआ १०० तोले और ७०० तोले मद्यार्क ७०% लेवें। पहले ५०० तोले मद्यार्क में भिगो दे, फिर और मद्यार्क मिलाते रहे। १००० तोल अर्क निकल आवे, उतने तक नया मद्यार्क मिलाते रहे। मात्रा ५ से १५ बूद।

उपयोग—कर्नल चोपरा ने लिखा है कि भारतीय सुरजान का गुण-उदर वेदना हर, सारक, वृष्य रसायन और विरेचन है। इन गुणो के लिए वातरक्त आमवात और यकृत प्लीहा व्याधि पर दिया जाता है। एव इसका बाह्य उपयोग भी प्रदाह और वेदना कम कराने के लिए किया जाता है।

डा. घोष ने लिखा है कि कडवे सुरजान के निष्कर्ष Tr. Colchicum) की १५ से ३० बूद की एक मात्रा आशुकारी वातरक्त पर कुछ घण्टो मे आश्चर्यप्रद परिणाम लाता है। अत्यधिक बढी हुई वेदना और प्रदाह, कुछ घण्टो मे अवश्य कम हो जाते है। यह सफलता पूर्वक मासल दृढ रोगी के प्राथमिक आक्रमण को दूर करा देता है। यद्यपि इसे होने वाले आक्रमण तक चालू रक्खा जाय, फिर भी पुनरावर्तन का यह प्रतिबन्ध नही कर सकता। अत यह निर्णीत नही हो सका कि इस औषधि का इस रोग पर क्या प्रभाव पहुँचता है ? फिर भी प्रयोग द्वारा यह विदित हुआ है कि सुरजान सग्रहीत यूरीकाम्ल पर कार्य नही करता। इसके अतिरिक्त वातरोग के लक्षण अपचन, शिर दर्द, यकृत मे वृद्धि, वातनाडी पीड़ा आदि जो प्रतीत होते हैं उन पर सुरजान तत्काल अपना प्रभाव दर्शा देता है। इस हेतु से चिरकारी जीर्ण वातरक्त के दुर्बल वृद्ध रोगी को यह लाभ नही पहुचा सकता।

नव्य अनुसधान द्वारा विदित हुआ है कि कर्क स्फोट (Cancer) रोग पीडितो को सुरजान का सेवन कराने पर कोषाणुओ की क्षमता मे वृद्धि होती है। विशेष अनुसधान हो रहा है।

वात रक्त रोग के अन्दर यह एक खास औषधि मानी जाती है।

शरीर की जीवन विनिमय क्रिया बिगड़ने से कभी कभी शरीर के जोड़ो मे क्षार जम जाता है और उससे सूजन होकर असह्य वेदना होती है, रक्तवाहिनियो मे मोटापन आने से हृदय अशक्त होकर फूलता है और पेट मे सूजन आजाती है, पेशाब गाढा होने लगता है और उसमें लाल रग का क्षार बहुत मात्रा में जाने लगता है। ऐसी स्थिति में सुरजान तत्व देने से अच्छा लाभ होता है। इस औषधि को पूरी मात्रा मे देने से यह तुरन्त अपना प्रभाव बतलाती है, मगर यदि दो तीन बार देने पर भी इसका प्रभाव दिखाई न दे तो फिर इस औषधि को देना बन्द कर देना चाहिए। वातरक्त में तरह तरह के चर्म रोग भी होते हैं उनमें भी यह औषधि लाभ पहुचाती है। इसकी जड़ को पानी अथवा शराब मे पीसकर उसमे केशर मिलाकर जोड़ो की सूजन पर लेप करते हैं। आमवात मे भी यह औषधि दी जाती है मगर इस रोग की यह खास दवा नही है। सुजाक के अन्दर भी इसका उपयोग किया जाता है।

(व. च. से साभार)

प्रयोग—

रोगन गुल आक द्रव्य और निर्माण विधि—मदार पुष्प, कडवा सुरजान, सोठ और खुरासानी अजवायन प्रत्येक १ तोला, तिल तैल ५ तोला। समस्त द्रव्यो को तिल तैल मे डालकर जलायें और तेल छानकर सुरक्षित रखें।

मात्रा और सेवन विधि—पीड़ित स्थान पर अभ्यङ्ग करें और सेक कर रुई बांध दे।

गुण तथा उपयोग—आमवात, वातरक्त, कटि और शीत जन्य वेदनाओ मे अतीवगुणकारी है।

सुरजानी—हरमल २ तो शुद्ध गूगल ३ तो शुद्ध कुचला ३ तो, मालकगनी २ तो, सुरंजान कडवी १ तो, मुसब्बर १ तो, सबका चूर्णकर शुद्ध गुग्गुल मे मिलाकर अच्छी तरह से कूटकर ४-४ रत्ती की वटी करें। मात्रा—१ से २ वटी। गुण—आमवात, गृध्रसी, वात पीडा मे अत्यन्त उत्तम योग है।

सूचना—(अ) सुरजान का उदर में सेवन निर्बलों को नही कराना चाहिए। अथवा अति कम मात्रा मे सम्हाल पूर्वक कराना चाहिए। हृदय यन्त्र की निर्बलता चिरकारी अतिसार चिरकारी प्रवाहिका अथवा शूल रोग से पीडितो को सुरजान नहीं देना चाहिए।

(आ) आशुकारी वातरक्त (Acute gout) पर दो

रत्ती से इसका सेवन कराया जाता है। इसका अर्क पूर्ण मात्रा अर्थात् १५ बूंद देवे और प्रत्येक २-३ या ४ घण्टे पर छोटी छोटी मात्रा (५-५ बूंद) पुन पुन देवें। साथ मे किसी भी प्रकार का अम्ल (Acid) न मिलावे। क्षार के साथ मिलाने पर सरलता पूर्वक कार्य करता है। भूमिस्थ कांड का अर्क देवे बीजो का नही, क्योकि बीजो का अर्क अधिक तेज है यह हृदय को निर्बल बनाता है।

(इ) वर्तमान मे डाक्टरी मे कोलचिसीन से सेलि मिलीक का उपयोग अधिक हो रहा है।

(ई) सुरजान का उदर मे सेवन कराने पर उदरशुद्धि नियमित होनी चाहिए। अन्यथा पचन सस्थान मे सुरजान विष का सग्रह होजाता है। (गा. औ र)

अहितकर—यकृत और आमशय के लिए। निवारण-सोंठ और काली मिर्च।

सुरंजान मीठी (Merendera persica)

यह सुरिजानादि कुल (Colchiceae) का एक प्रसिद्ध कन्द है। सिंघाडे सदृश होता है। इसमे ३ वर्ष तक औषधीय वीर्य रहता है।

उत्पत्ति स्थान—

फारस, एबिसिनिया, अफगानिस्तान और ईरान मे उत्पन्न होती है।

नाम—

हिं.—सुरञ्जान मीठी। फा० भारतीय बाजार—सुरिञ्जानेशीरी। अ.—स्वीट हर्मोडक्टिल (Sweet Hermodactyl)। ले०—मेरेंडेरा पर्सिका (Merendera persica)।

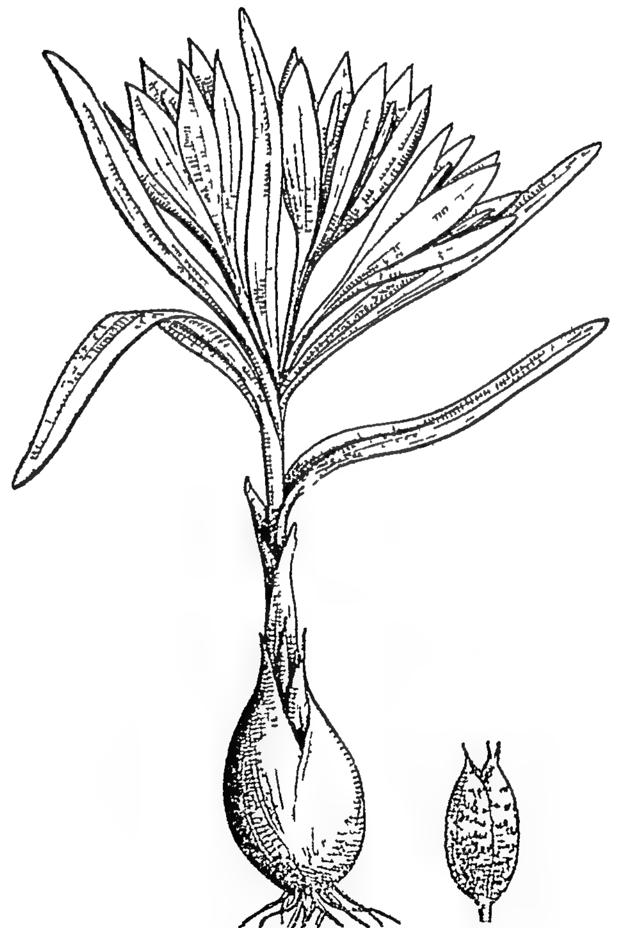
इसमे भी अल्प प्रमाण मे एक प्रकार का क्षारोद होता है जो गुण कर्म की दृष्टि से अकार्य कर है।

उपयुक्त अङ्ग—कन्द। मात्रा—२ से ३ माशे।

गुण धर्म और प्रयोग—

सुरञ्जान मीठा प्राय खाने के काम मे लिया जाता है। यह शरीर के कफ को दस्तो के द्वारा निकाल देता है। सुद्दे निकलता है। शरीर के दोषो को बाहर निकाल देता है। —आ द्र गु. वि

प्रकृति—मलभूत द्रव सहित गरम और खुश्क है। गुण-कर्म—प्रमाथी, श्लेष्म विरेचनीय, सशमन, विलयन, वाजीकर और आमवात नाशक है। उपयोग—आमवात, वातरक्त और गृधसी मे इसका आन्तरिक रूप से उपयोग किया जाता है। यह नपुसकता मे भी प्रयुक्त होता है। श्वयथु और विलयन और वेदनाशमन के लिए केसर के साथ इसका लेप करते हैं।



सुरञ्जान मीठी
MERENDERA PERSICA BOISS

प्रयोग—

सफूफ सुरंजान—द्रव्य और निर्माण विधि— मीठा सुरञ्जान १½ तोला, सनाय मक्कीपत्र १० माशा, श्वेत त्रिवृत ४ माशा, कृष्ण जीरक ४ माशा, शुष्क पुदीना ४ माशा, कालीमिर्च ४ माशा।

इन सबको कूटकर कपड छान चूर्ण बनावे ।

मात्रा और सेवन विधि—रात को सोते समय ५ माशा यह चूर्ण ताजा जल के साथ खिलावे ।

गुण तथा उपयोग—यह वातनाडी शोथ और आमवात मे लाभकारी है, एव कब्जकुशा (मलावरोध हर) भी है ।

माजून सुरंजान-द्रव्य और निर्माण विधि—श्वेत सुर- १ तोला ९ माशा, वूजीदाना, माही जहरज, कबर की जड श्वेत जीरा और चीता प्रत्येक ७ माशा, पीली हरड २ तोला ४ रत्ती, अजमोदा (तुख्म करफस), सौंफ, श्वेत मरिच, एलुआ, सातर, सैंधव लवण (नमक हिंदी), मेहदी, के पत्र, समुद्र झाग प्रत्येक ५¼ माशा, श्वेत त्रिवृता ४ तोला ४½ माशा, मधु ४३ तोला ९ माशा, वादाम का तेल १½ तोला त्रिवृता व निशोथ को कपड छान चूर्णकर वादाम के तेल मे स्नेहाक्त करे । फिर शेष द्रव्यो को कूट छानकर मधु के साथ माजून बनाये ।

मात्रा और अनुपान—७ माशा माजून जल से अथवा अर्क उसवा से लेवे ।

गुण तथा उपयोग—यह कफज और पित्तज गृध्रसी के लिये गुणकारी हे तथा आमवात और वातरक्त मे भी लाभकारी है ।

हब्ब निकरिस-द्रव्य और निर्माण विधि—अफतीमून, कृष्णजीरक, श्वेतमरिच, पीपल, कुमुम के वीज की गिरी प्रत्येक ७ माशा, तज ३½ माशा, सोठ, फरफियून, प्रत्येक १४ माशा, मस्तगी २१ माशा, मीठा सुरञ्जान ५ तोला, १० माशा, लिथिआई मैलिसिलास ८½ तोला । सबको जीरक फाण्ट मे पीसकर ५–५ रत्ती की गोलिया बनाले ।

मात्रा और सेवन विधि—१–१ गोली सवेरे शाम ताजे जल के साथ सेवन करें ।

गुण तथा उपयोग—यह आमवात और वातरक्त मे असीम गुणकारी है ।

गुलामे सुरजान शीरी—द्रव्य और निर्माण विधि—मीठा सुरञ्जान की ताजी जड आवश्यकतानुसार लेकर इमाम दस्ता में कूट लें और कपडे मे डालकर उसका रस निचोडें उस रस को कुछ काल पडा रहने दें । जव स्थुलांश नीचे बैठ जाय तब ऊपर से नितार लें और उसे तीव्र अग्नि पर पकाकर फलालैन के छनने मे पुन छानले । इस प्रकार प्राप्त सूक्ष्म द्रवाश को पुन सामान्य अग्नि पर पकावे । जव मृदु रस क्रिया (रुव्व) का पाक हो जाय तव उतार लें ।

मात्रा और सेवन विधि—¼ ग्रेन (½ रत्ती) से १ ग्रेन (½ रत्ती) तक उपयुक्त औषधियो के साथ गोली वनाकर दे ।

गुण तथा उपयोग—यह मूत्र प्रवर्तक है, वातरक्त, आमवात, आमवातिक शिर शूल, श्वास और अग्निमाद्य एव अजीर्ण मे गुणदायक है ।

हब्ब वजउल मफासिल—द्रव्य और निर्माण विधि—पीत एलुआ, अस्थिदूर की हुई निशोथ प्रत्येक २८ माशा, पीली हरड का छिलका, वूजीदान (मीठा अकरकरा) सुरञ्जान प्रत्येक ७ माशा, गूगल ५¾ माशा । इन सबको पीस कर हरा गन्दना के पत्र स्वरस मे गूंध कर गोलिया बनाले ।

मात्रा और सेवन विधि—१०½ माशा यह गोलिया उष्ण जल के साथ सेवन करे और शरीर पर रोगन वजउल मफासिल का अभ्यङ्ग करें ।

गुण तथा उपयोग—आमवात मे यह गोलिया वहुत गुणकारी है ।

हब्बवज उल मफासिल (जदीद)—द्रव्य और निर्माण विधि—अयारज फैकरा ३½ माशा, मीठा सुरजान, पीली हड का छिलका प्रत्येक ३ माशा, गुलाब पुष्प, रूमी मस्तगी-प्रत्येक १½ माशा । सबको कूट छान कर ऐस्पिरिन २½ रत्ती मिलित करके चना प्रमाण की गोलिया बना लें ।

मात्रा और सेवन विधि—यह सव एक मात्रा है । ऐसी एक मात्रा प्रतिदिन रात्रि मे सोते समय या सवेरे जल से खिलावे ।

गुण तथा उपयोग—यह आमवात, वातरक्त और अन्यान्य वातज वेदनाओ मे वहुत गुण कारक है ।

[यू सि यो से साभार]

सुरंजान आदि चूर्ण-केशर १¾ माशा, सकमूनिया ३½ माशा, हरड वादाम मगज छिला हुआ प्रत्येक १०½ माशा, फूल गुलाव २१ माशा, सनाय २४½ माशा, सुरजान मधुर ३५ माशा, खाण्ड ८ तोला ९ माशा, सबको कूट छान चूर्ण करे । पीछे खान्ड मिलाले ।

मात्रा—६ माशा। यदि कफ की अधिकता हो, तो त्रिवृत्त सफेद २२½ माशा मिला ले, और सकमूनिया १¾ माशा अधिक डालें।

गुण—आमवात, गृध्रसी और वात रक्त मे उत्तम है।

माजून फालिज—द्रव्य तथा निर्माण विधि—ऊद बलसां, हब्बवलसा, तगर ईरमा, रूमी मस्तगी, कलमी तज, जराविन्द गोल ६-६ माशा, जुन्द बदस्तर, केसर ३-३ माशे मधुर मुरजान, बोजीदान, बाबूना फूल, सोंठ १-१ तोला, हरमल, अकर करा, लौंग, दालचीनी, जायफल, मिर्च, पिपप्ली, कीली जीरी, पान जड १-१ तोला, हरड का मुरब्बा [गुठली निकाला हरीकी फल- खन्ड], बीज रहित, दाक्षा प्रत्येक ६-६ तोला, मधु तया खान्ड १५-१५ तोला, मधुओर खांडका अर्क सौंफ [मिश्रेयार्क] में पाक करें [मिश्रेयार्क आवश्यकतानुसार ले लेवें] बाकी औषधि का वारीक चूर्णकरपाक सिद्धि होने पर पाक मे मिला देवें, पीछे उत्तम कस्तूरी ३ माशा। वारीक पीसकर मिला दे, तैयार है।

मात्रा और अनुपान—३ माशा। मधु जल से ले।

गुण—वातरोग, वात कफ रोग, पक्षवध, अर्द्धाङ्ग आदि मे अत्यन्त उत्तम है।

अकसीर ओजा—शुद्ध हिंगुल १ तोला, अहिफेन १ तोला कुचला शुद्ध २ तोला पिप्पली, चाकसू, सुरजान मधुर, अजवायन, रसौत, कालीमिर्च, सोठ २-२ तोला, शुद्ध गुग्गुल ६ तोला, सबको मिलाकर यथा विधि हरमल के क्वाथ से भावित कर १-१ रत्ती की वटी करें।

मात्रा—१ से २ वटी, प्रात साय २ तोला घृत से दें।

गुण—वात कफज पीड़ा, गृध्रसी, आमवात, कटिशूल मे अत्यन्त प्रभावशाली औषधि है। (यू. सा. स)

अहितकर—यकृत और आमाशय को। निवारण—कतीरा, शर्करा और केसर।

सुरिंद (गेवा) (EXCAECARIA AGALLOCHA)

यह थूहर कुल (Euphorbiaceae) का एक छोटी जाति का विषैला और हमेशा हरा रहने वाला वृक्ष होता है। इसके हर एक अङ्ग मे सफेद रग का बहुत तीक्ष्ण स्वाद वाला दूधिया रस रहता है। इसके पत्ते सफेद कूडे के पत्तो के समान मगर उन से कुछ मोटे, लम्बे और मुलायम रहते हैं। पत्तो के डठल लम्बे और लाल रग के होते हैं। इसके फूल पीले और सुगन्धित, छाल ऊबड-खावड़ और लकडी सफेद एव मुलायम होती है। इसकी जड के टुकडे नरम, हलके लाल और बूच [काग] की लकडी के समान होते हैं। इनको पानी मे डालने से ये पानी का शोषण कर लेते है मगर बाहर से सूखे ही नजर आते है। चाकू से चीरा लगाने पर इनका शोषण किया हुआ पानी बाहर निकल आता है। इस वृक्ष की छाल और इसका दूध औषधि प्रयोग मे काम आता है।

उत्पत्ति स्थान—

यह वनस्पति सुन्दर वन, वर्मा और पश्चिम प्रायद्वीप मे पैदा होती है।

नाम—

हि०-सुरिंद। स-सुरिन्द, गेवा, फुगली, हुरा। वम्बई-गेवा, गऊर, गगवा, गेरिया, गोरिया। कन्नड़-हरो, हुरा। उड़िया-गुन। तै.-चिल्ल। ता-तिल्लेचेदि। इ-ब्लाइण्डिग ट्री [Beinding tree] ले-एक्सी केरिया एगेलोचा [Excaecaria agallocha Linn]

उपयुक्त अङ्ग—पत्र, मूलत्वक, क्षीर।

गुण धर्म और प्रयोग—

इसका दूधिया रस जो कि इसकी छाल से निकलता है ताजी हालत मे बहुत तीक्ष्ण और आखो को हानि पहुँचाने वाला होता है, इसलिये इसको अग्रेजी मे ब्लाइडिंग ट्री कहते हैं। यह तीव्र विरेचक और त्वचा पर लगाने से त्वचा मे दाह पैदा करने वाला होता है। स्वय विषैला होने पर भी यह दूसरे विषो को नष्ट करता है। बिच्छू के डक पर इसका लेप करने से वेदना कम हो जाती है। रक्त पित्त, व्रण और दूसरे चर्म रोगो पर इसको तेल मे मिलाकर लगाते हैं और इसके पत्तो के काढ़े से व्रणो को धोते हैं। खासी मे इसका दूध चावल के आटे मे मिलाकर गोली बाध कर दिया जाता है। आख मे अगर यह चला जाय तो इसकी वेदना को शांत करने के लिये आखो मे दही आंजना चाहिये और दही की पट्टी आंखो पर बाधना चाहिये।

भारतीय चिकित्सक इसके पत्तो का काढा मृगी रोग को दूर करने के लिए देते है। यह दिन मे दो वार चौथाई चाय के प्याले की मात्रा मे दिया जाता है। इसका काढा व्रणो के ऊपर भी लगाया जाता है।

इसकी जड़ो का नीचे का हिस्सा जो मुलायम, हलका, लाल और काग की तरह होता है, वह पश्चिमी भारत के औषधि विक्रेताओ के द्वारा "तेजवल" के नाम से बिकता है और कामोद्दीपक औषधि की तरह काम मे लिया जाता है। फिजी द्वीप के अन्दर यह वनस्पति गलितकुष्ठ की चिकित्सा में काम मे ली जाती है। वहा पर इसको काम मे लेने का तरीका भी वडा विचित्र है। पहले रोगी का शरीर हरे पत्तो से रगडा जाता है, फिर उसको एक छोटे कमरे मे लेजाकर उसके हाथ पैर बाध देते हैं और इस वृक्ष के लकडी के टुकडो से थोडी आग जलाते है। जिससे गहरा धुआं निकलता है, उस अग्नि से कुछ ऊपर उस बीमार को टाग देते हैं और कुछ घण्टो तक उस जहरीले धुए मे उसे रखते हैं। इस दशा मे रोगी को वेहद वेदना और त्रास होता है, वह वेहोश हो जाता है। खूब धुआ लग जाने पर उसको वहा से निकालते है और उसके शरीर पर जमे हुए क्षार को छील छालकर निकालते हैं जिससे उसकी चमडी भी छिल जाती है। इस चिकित्सा मे गलित कुष्ठ के कुछ केस आराम हो जाते हैं मगर वहुत से इस अग्नि परीक्षा मे ही मृत्यु के मुख मे चले जाते हैं।

(व. च. से साभार)

सुलतान चम्पा (CALOPHYLLUM INOPHYLLUM)

यह नागकेशर कुल (Guttiferae) का सदा हरित और पत्राच्छादित सुन्दर वृक्ष २० से २५ फीट ऊचा होता है। वृक्ष की छाल धूसर वर्ण, काष्ठ लाल आभायुक्त धूसर वर्ण व श्वेतवर्ण । पत्र—पत्र डिम्बाकृति, पत्र का शीर्ष भाग गोल व कुछ दबासा। पत्र ४ से ५ इची लम्बा, ३ से ४ इची विस्तृत, पत्र दण्ड की ओर क्रमश. नोकीला। पत्र दण्ड $\frac{1}{2}$ से $1\frac{3}{4}$ इची लम्बा। पत्र दोनो ओर से मसृण ऊपरी भाग गहरा हरा व चमकीला और शिराये अनेक होती हैं। फूल का दण्ड छोटा, ऊपरी भाग खुला हुआ। फूल सुगन्ध युक्त, श्वेत वर्ण, व्यास $\frac{3}{4}$ से १ इची। वहिर्व्यास ४, पु केसर वहुत, गर्भदण्ड पु केसर की अपेक्षा वडा। पक्वफल पीत वर्ण और गोलाकार, व्यास $\frac{1}{2}$ से १ इची चिकना। वीजो से जलाने का तेल प्राप्त होता है। श्रावण मास में फूल और भाद्रपद-आश्विन मास मे फल लगपे हैं।

उत्पत्ति स्थान—

उडीसा मे समुद्र के निकट, लका, अण्डमान द्वीप पुञ्ज, बगाल और सारे भारत मे वगीचो में, वोटॉनिकल गार्डन शिवपुर मे भी लगाया हुआ मिलता है, यह देखने मे वैसा ही लगता है जैसा कि एक झेवरो का वृक्ष हो।

नाम—

म०—पुन्नाग। हि०—सुलतान चम्पा। ब०—पुन्नाग, सुलतान चापा, काठ चाँपा। उडिया—पुन्नाग। ता०—पुन्नागम्। ते०—पुन्ना वितुलु। वोम्वे—उन्डी। मल०—पुन्ना। अ०—एलेक्जेन्डियन लोरेल (Alexandrian Laurel)। लें०—केलोफाइलम इनोफाइलम (Calophyllum inophyllum Linn]।

उपयुक्त अङ्ग—तेल और वीज।

गुणधर्म और प्रभाव—

इसका तेल वात और दुरारोग्य क्षतो की महौषधि है। वृक्ष की छाल, दूध, पत्रो को जल मे क्वाथ करने से जो तेल के समान ऊपर तिर कर आवे उसको चक्षुओ के क्षत मे काम मे लिया जाता है। तेल प्रमेह और वात व्याधि मे उपयोग किया जाता है। वीजो को दरदरे करके अग्नि के उत्ताप पर गरम करने से जो दूध के समान पदार्थ निकले उसको गठिया वायु के दर्द के स्थान पर लगाने से वो स्थान आरोग्य हो जाता है। सामान्य परिमाण में इसका तेल प्रमेह रोगी और वातु रोग गृसित व्यक्ति को खिलाने से आधा घण्टा के अन्दर उक्त रोग शमन हो जाता है।

(मुड़ीन शरीफ)

आयुर्वेद मतानुसार इसकी छाल धारक व आभ्यान्तरिक रक्त-स्राव मे विशेष शान्तिकारी है। (यू सी दत्त)

भारतीय ज्न इसके तेल को वायु रोग मे मालिश करते हैं। (वाट) (भा. व व से साभार स.)



सूर्य्य भिंडा (BARLERIA LONGIFLORA)

यह वासकादि कुल (Acanthaceae)की एक भूरे रग की मखमली झाडी होती है। इसकी लम्बाई २४ से लेकर ४८ इच तक होती है। इसके पत्ते छोटे-छोटे एक से लेकर दो इंच तक लम्बे होते हैं। इसके फूल सफेद रग के होतें है यह वनस्पति दक्षिणी भारत और कर्नाटक मे पैदा होती है।

नाम—

स०—सूर्य्य भिरा, अद्यान्दा। हि०—सूर्य्यभिडा। ते०—पिन्नागोरोटा। उडिया—कोई लेखा। ले०—बारलेरिया लोगिफ्लोरा (Barleria longiflora Linn)।

गुण धर्म और प्रभाव—

इसकी जड का काढा, जलोदर और पथरी रोग मे दिया जाता है।

(व. च)

सूरज कांति (BELAMCANDA CHINENSIS)

यह कुकुमादिकुल (Iridaceae) की वनस्पति का मूल उत्पत्तिस्थान चीन है मगर भारतवर्ष मे भी इसकी खेती की जाती है।

नाम—

हि०—खासामी, सूरजकाति। अं०—लियोपोर्डलिली (Leopard Lily) ले०—वेलमकेण्डा चाइनेन्सिस (Belamcanda Chinensis D C)

गुण-धर्म और प्रयोग—

रीड़ के मतानुसार मलावार मे इसकी जड विष नाशक पदार्थ की तरह उपयोग मे ली जाती है। जिन लोगो को कोवरा नामक भयकर विषधर साप काटता है उनको यह दी जाती है। ऐसे पशुओ पर भी जो कि जहरीली वनस्पतियां खाकर विष ग्रस्त हो जाते है, इसका उपयोग किया जाता है।

लखीमपुर मे इसकी डालियो को पीसकर उदरशूल को दूर करने के लिये देते है।

इसकी जडो मे मृदु विरेचक और फोडे को गलाने वाले तत्व रहते है। यह रक्त शोधक होती है और गले की पीडा मे यह विशेष रूप से उपयोगी होती है।

इसकी जड़ का कन्द चीन के अन्दर बहुत उपयोग मे लिया जाता है। वहाँ यह कफ निस्सारक, शांतिदायक और बाधा नाशक माना जाता है। यह यकृत के रोग, रक्त रोग और फुफ्फुस सम्बन्धी रोगो में उपयोग मे लिया जाता है। मलाया मे यह सुजाक के अन्दर उपयोग मे लिया जाता है। भूल लोग इस वनस्पति को जवान लडकियो को होने वाले हिस्टीरिया रोग मे देते हैं।

(व०च०)

सूरज कौल (SAUSSUREA OBUALLATA)

यह भृङ्गराजादिकुल (Compositae) का २ से ३ फुट तक लम्बा क्षुप (Herb)है। पत्र-लम्बे और सुगन्धित होते हैं। पुष्प-काफी वडा, श्वेत वर्ण का तथा उग्र सुगन्ध वाला होता है। खिलने पर ये पुष्प अति सुन्दर लगते है।

पुष्पकाल—अगस्त और सितम्बर।

उत्पत्ति स्थान—

हिमाचलप्रदेश मे गढवाली क्षेत्र की भिलेगना घाटी मे यह वनस्पति सहस्रताल, खत लिंग, गैंडागली आदि स्थानो पर ३६०० मीटर से ४५०० की ऊचाई पर उपलब्ध है।



सूरज कोल
SAUSSUREA OBUALLATA WALL

नाम-

स —ब्रह्मकमल । हि —ब्रह्मकमल, सूरजकौल गढ़-वाली-सर्ज कौल । ले —सोसुरिया ओबुआल्लाटा (Saussurea obuallala)

उपयुक्त अङ्ग—पुष्प और मूल ।

स्थानिक प्रयोग (किम्वदन्ती)-

१ यहां के ग्रामवासियो का यह मांगलिक पुष्प है । यहा के लोग अपने इष्ट देव की यात्रा के समय देवता को इस पुष्प का चढाया शुभ शकुन मानते है ।

२ यहा के ग्रामीण लोग इसके पुष्पो की भस्म प्लीहा वृद्धि मे मधु के साथ देते है ।

३ मृगी आदि मानसिक रोगो में इसके पुष्पो से साधित तैल को शिर मे लगाने से लाभ होता है ।

४ स्थल कमल के कई प्रकार यहां मिलते हैं जिनमे फेन कमल, हेमकमल, नीलकमल आदि भेद प्रमुख है वनस्पति शास्त्र के आधार पर ये सभी कमल(Saussuca Sp.) प्रजातिया है ।

वैद्य श्री मायारामजी उनियाल
(स आयु अक्ट ६६ सेसाभार सकलित)

सूरज मुखी HELIANTHUS ANNUUS)

यह भृङ्ग राजादिकुल (Compositae) का एक वर्ष जीवी प्रसिद्ध पुष्प क्षुप, प्राय सब प्रदेशो की वाटिकाओ मे रोपण किया जाता है । इसके क्षुप ४-५ हाथ ऊचे होते है । पत्ते डडी की ओर चौडे, आगे को सकुचित, लम्बे, खरदरे और पुराने होने पर झालर के समान कटे किनारीदार होते है । इन पर रोये होते है । फूल बडे-बडे सूर्याकार गोल अनेक दल सहित नारगी रग के दिखाई देते है । कितने ही मनुष्य "राधापद्म" को (जिसके फूल पीले होते हैं और आकृति सूरजमुखी फूल से बडी होती है तथा दल कम होते हैं) सूर्यमुखी मानते है । सूरजमुखी फूल का मस्तक भोर के समय पूरब तरफ रहता है, सूर्य की गति के साथ ही साथ यह ऊचा होकर दिन के शेष भाग मे पश्चिम की ओर नत हो जाता है । सदा सर्वदा सूर्य की ओर इसका मुख रहता है, इसी कारण इसको सूरजमुखी कहते हे । फूलो के मध्य भाग मे केसर कोष रहते है और इनके बीच कसूम के बीज के समान सफेद बीज रहते है ।

इसके पौधे बीज से ही उत्पन्न होते है और हर समय इसको रोपण किया जा सकता है परन्तु शीतकाल और ग्रीष्म ऋतु ही बीजो को रोपण करने का अच्छा समय है । बीज वपन करके ऊपर मिट्टी का चूरा छीट कर कई दिनो तक थोडा-थोडा जल का छीटा देकर जमीन को सरस रखना चाहिए । बीज बोने के पहले मिट्टी के साथ खभी या

गोवर का चूर्ण मिलाने से पौधे सतेज होते हैं।

उत्पत्ति स्थान—

यह अमेरिका का आदिवासी है और भारत मे सर्वत्र वाटिकाओं मे इसको लगाया जाता है।

नाम-

स.—आदित्य पर्णिका, आदित्य पर्णिनी, आदित्य भक्ता, रवि प्रीता। हिं—सूरजमुखी, सूर्य्यमुखी। ब—सूरजमुखी। बोम्बे-सूरजमुखी। म-सूर्यफूल। उर्दू-सूरजमुखी। ते. आदित्यभक्ति चेट्टु। मलय-सूर्यकन्दी। फा—गुल आफताब परस्त, गुले आफताब परस्त। अरबी—अंदियून, अर्फ़वान। अ—सनफ्लावर (Sunflower) ले—हेलिएन्थस एन्युएस (Helianthus annuus Linn)

उपयुक्त अङ्ग--पचाङ्ग। मात्रा १ से ३ माशे।

गुण धर्म और प्रयोग-

आयुर्वेद मतानुसार-गरम, अग्निदीपक, रसायन, चरपरी, कड़वी, कसेली, रेचक, रूक्ष हलकी, स्वर को शुद्ध करने वाली, कफ, वात, रुधिर विकार, श्वास, कास, ज्वर, विस्फोटक, कुष्ठ, प्रमेह, अरुचि, योनिशूल, पथरी, मूत्रकृच्छ पाडु और गुल्म रोग का नाश करने वाली है।

इसकी जड़ का काढा दांतो को मजबूत करता है और दन्त शूल को नष्ट करता है। इसके पत्ते वमन कारक होते है और कमर की पीडा को दूर करते हे। इसके फूल कडवे और खराब स्वाद वाले होते है। ये पौष्टिक ऋतुस्राव नियामक, कामोद्दीपक और सूजन को नष्ट करने वाले होते हैं। ये पागलपन और भ्रम के अन्दर दिये जाते हे। छाती यकृत और फेफडो की तकलीफ मे इनका लेप किया जाता है। बवासीर, नेत्रशुक्ल, जलोदर और गुर्दे के रोगो मे भी इनका उपयोग किया जाता है।

इसके वीज मूत्रल और कफ निस्सारक होते हैं। यह वनस्पति खांसी, जुकाम, फेफडे की विकृति, कण्ठ नाली की खरावी इत्यादि रोगो मे सफलता के साथ उपयोग मे ली जाती है। [व च]

यूनानी मतानुसार-दूसरे दर्जे मे गर्म और रूक्ष, शोथ को लयकारक, कान्तिजनक, मस्तिष्क को शोधन करनेवाली, मस्तिष्क और हृदय के रोध को खोलने वाली, आमाशय, यकृत



सूरजमुखी
HELIANTHUS ANNUUS Linn

और ओज को बलकारी, बवासीर, पीलिया, जलोदर और वाय गोले को गुणकारी, पथरी को तोडने वाली, इसका लेप पैर की अगुली की पीडा को गुणकारी तथा यह उष्ण प्रकृति और तिल्ली वालो को हानिकारक।

दर्पनाशक—सीकञ्जवीन और मधु। प्रतिनिधि—तज और केसर। मात्रा १ से ३ माशे।

डाक्टरी मतानुसार—

इसके पौधे मे दूपित और रोगोत्पादक वायु को शुद्ध करने की विचित्र शक्ति है। भूमि से जो विष समान भाप उठकर सक्रामक मलेरिया ज्वर रूप से देश भर मे फैलती है, इसके ही पौधे उस विप रूपी मलेरिया भाप को नष्ट करते हैं। डाक्टरो ने परीक्षा की है कि जिस प्रकार गुलाब के फूलो से बढिया गुलाब जल तैयार किया जाता है, उसी प्रकार इसके फूलो मे भी एक प्रकार का सुवासित जल

तैयार हो सकता है। घाम के रग का इसके बीजो से चौथाई तेल निकलता है, जो बहुत ही उपयोगी और लाभदायक होता है और खाने के काम मे आ सकता है, एवम् इससे मोमबत्तिया भी बन सकती है।

१ दस्त कराने के लिए इसका तेल नाभि पर लगाना चाहिए और दस्त बन्द कराने के वास्ते इसी तेल को कूल्हो के ऊपर की अस्थिसन्धि पर लगाना चाहिए।

२. बिच्छु के विष पर—इसके पत्तो को पीसकर लेप करने से और उसी का रस नाक मे टपकाने से पीडा शान्त होती है।

३ स्त्रियो की योनि [गर्भाशय) भ्रंश पर तीन दिनो तक इसके फूलो का रस हाथ मे लगाकर गुह्य द्वार के अग्र पर लगाने से उपकार होता है।

४ माता के दूषित दूध मे अथवा गाय, भैस के दूषित दूध पिलाने से जो बालको के पेट मे कफ जन्य उदर वृद्धि हो जाती है उसको नष्ट करने के लिए सूरज मुखी के फूल का १० बून्द तक रस दूध के साथ देना चाहिए।

—व० बू० दर्पण

सूरणकन्द—देखिए 'जमीकन्द' भा० ३ पृष्ठ १७४ पर।

सेंटोनीन (ARTEMISIA CINA BERG)

यह हरीतक्यादि वर्ग और भृङ्गराज कुल (Comositae) के छोटे छोटे गुल्मक, पुष्पमुडक आयताकार, अण्डाकार, १–१ ५ मि०मी० व्यास युक्त । इन मुडको को विकसित होने के पूर्व सग्रहित किया जाता है। विशेष वर्णन के लिए चित्रावलोकन कीजिये । इसकी १–२ जातिया कश्मीर मे उत्पन्न होती है।

उत्पत्ति स्थान—

आर्टमीसिआ सीना के क्षुप तुर्किस्तान एव फारस 'किरमान' प्रदेश मे प्रचुरता से होवे हैं।

नाम-

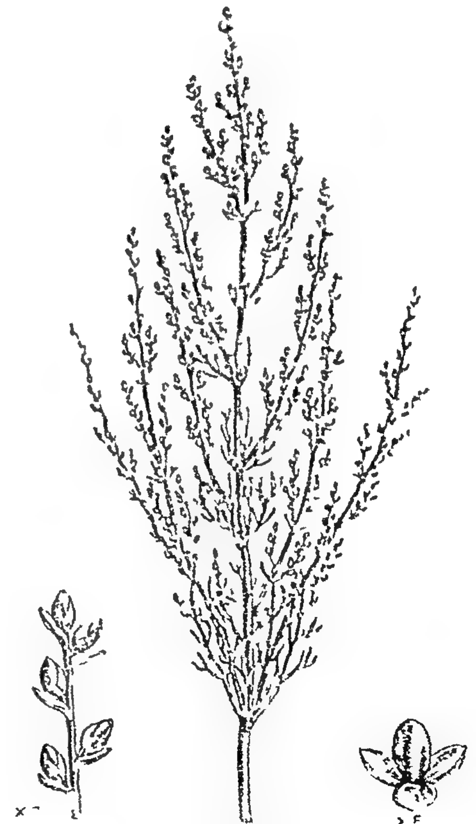
हिं०—सेन्टोनीन, किरमाला,। अ०—वर्मसीड, सेंटोनिका (Worm seed, Santonica)। ले०—आर्टिमिसिया सिनावर्ग (Artemisia cina Berg)।

रासायनिक संगठन-

सेन्टोनीन रगहीन, चमकदार, श्वेत मणिभिय चूर्ण। सेंटोनिका में २-.३५% सेंटोनीन होता है।

उपयुक्त अङ्ग—पंचांग, विशेषत: अविकसित पुष्प मुण्डक [Santonica) एव सत्व सेंटोनीन।

मात्रा—पचांग चूर्ण ३ ग्राम से ६ या ३ से ६ माशा, अविकसित पुष्प मुण्डक १ ग्राम से ३ ग्राम या १ से ३ माशा पुष्पमुण्डक से प्राप्त सत्व ६२ ५ मि० ग्रा० से १७८ ५ मि० ग्राम या ½ से १½ रत्ती।



सेन्टोनीन
ARTEMISIA CINA BERG

औषधि परीक्षा—सेंटोनीन—यह रगहीन अथवा सफेद क्रिस्ट लाइन चूर्ण के रूप में होता है, जो प्राय: गन्ध-



हीन तथा स्वाद मे तिक्त अनुरस युक्त होता है। पुराना होने पर या धूप मे खुला रहने पर पीताभ वर्ण का हो जाता है।

संग्रह एवं संरक्षण—किरमाला या सेन्टोनीन को अच्छी तरह मुख वन्द डिब्बो में अनार्द्र शीतल एव अंधेरी जगह में रखना चाहिये। सेन्टोनीन को अम्बरी रग की शीशियो में अच्छी तरह मुख बन्द करके ठण्डी जगह मे रखें। किरमाला या सेन्टोनीन का सग्रह पुष्पमुण्डको की अविकसितावस्था में रहने पर ही करना चाहिये। इसी समय सेन्टोनीन की अधिक तम मात्रा पायी जाती है।

वीर्यकालावधि—पचाङ्ग एव अविकसित पुष्प मुण्डक १ वर्ष। सत्व (सेन्टोनीन) कई वर्ष तक।

गुण धर्म तथा प्रयोग—

रस-तिक्त, कटु। गुण—लघु, रूक्ष, तीक्ष्ण। विपाक—कटु। वीर्य—उष्ण। प्रभाव—कृमिघ्न। विशेषत आन्त्रगतगण्डूपद कृमि (केचुआ नाशक)। कर्म—कफ वात शामक, वेदना स्थापन, शोथहर, व्रण रोपण, रोम सजनन, आक्षेप शामक, दीपन, वातानुलोमन, यकृदुत्तेजक, कृमिघ्न (विशेषतः गण्डूपद एव सूत्र कृमि की अव्यर्थ) औषधि है। अधिक मात्रा में रेचन, श्वासहर, कफ. नि सारक, मूत्रल, शीत प्रशमन, ज्वरघ्न, लेखन, वाजीकर, आर्त्तवजनन आदि। शरीर से इसका निस्सरण मुख्यत. मूत्र से और अशतः मल के साथ होता है।

प्रयोग—

रात्रि मे खाली पेट, पूर्व मे रेचन कर बाद में इसके साथ कैलोमल का योग एकान्तर से तीन दिनतक होता है।

[क] केंचुए निकालने के लिए सेन्टोनीन २ ग्रेन, कैलोमल २ ग्रेन, सोडा बाइकार्ब- ५ ग्रेन।

[ए सार व सिद्ध प्र स]

इस प्रकार की एक पुडिया प्रति रात सोने के पूर्व रात्रि मे ३ दिन तक लगातार देनी चाहिए। तीसरी मात्रा के बाद प्रात. काल एरण्ड का तेल एक औंस या मेग सल्फ ४ड्राम देना चाहिए। बालको को कैलोमल या सेन्टोनीन ½ ग्रेन या १ ग्रेन से अधिक नही देना चाहिए। उपरोक्त मात्रा वयस्क व्यक्ति की है। आयु प्रति वर्ष ⅙ ग्रेन के परिमाण से सेन्टोनीन और कैलोमल बच्चो को देना चाहिए।

[ख] उपर्युक्त मात्रा को २ या ३ भाग में विभाजित कर मध्यान्ह के पश्चात् प्रति ३ घण्टे पर भी दी जाती है। औषधि देने के पूर्व, दिन मे मैगसल्फ ४ ड्राम देकर विरेचन कराना चाहिए। और रात्रि मे हलका भोजन करना चाहिए। औषधि देने के दूसरे दिन प्रातः काल पुन मैग सल्फ द्वारा विरेचन कराना चाहिए।

[ग] सेन्टोनीन ग्रेन २ उपरोक्त योग की एक पुड़िया रात्रि मे सोने के पूर्व दें। दूसरे दिन प्रातः काल मैग सल्फ ४ ड्राम देना चाहिए। १० दिन के अन्तर पर दो बार पुन. औषधि देनी चाहिए।

['रोग निवारण'—शिव नाथ खन्ना से]

केचुआ कृमि के लक्षण—मतली, पेट मे बैचेनी या वेदना होना, अरुचि, अजीर्ण, नाक खुजलाना, कभी-कभी ऐंठन या आक्षेप के दौरे पडने लगते है जब यह कीडा पित्त प्रणाली में अड जाता है तो कमलवाई पैदा कर देता है। कभी-कभी यह स्वर यत्र मे फस कर श्वास अवरोध उत्पन्न कर देता है। कभी-कभी इसके आन्त्र मे अड जाने से आत मे बंध लग जाता है।

चिकित्सा—सेन्टोनीन इसकी उत्तम औषधि है। इसे गरम दूध में मिलाकर या शक्कर के साथ या अरडी के तेल के साथ दे सकते है। साधारण विधि यह है कि ३-४ दिन तक नित्य प्रति ३-४ ग्रेन सेन्टोनीन प्रात समय थोडे से दूध के साथ निगल लें और उसके २-३ घण्टे के बाद ५ ग्रेन कैलोमल या २०-३० ग्रेन पल्व रिहाइ क० फांक लें। इसकी बनी बनाई टिकिया भी आती है। जिन्हे सुगमता से चबाया जा सकता है।

बच्चो को इसे २ ग्रेन की मात्रा मे देना चाहिए।

योग—सेन्टोनीन २ ग्रेन, कैलोमल एक ग्रेन, मिल्क शुगर ५ ग्रेन। प्रात ऐसी एक मात्रा दूध के साथ दे। [५ वर्ष के बच्चो के लिये] [वर्मा एलोपैथिक चिकित्सा से साभार]

सैन्टोनीन २ ग्रेन, पल्व स्केमनी २ ग्रेन, कैलोमल ½

विधि—ऐसी एक पुड़िया रोजाना ३-४ दिन तक ले। केचुए के लिये। [वर्मा एलो. योगरत्नाकर से साभार]

अहितकर–सिर, आमाशय और वातनाडियो को तथा शिर शूल जनक।

किरमाला के विस्तृत क्षेत्रो मे देर तक घूमने से या इसके गोदामो मे अधिक समय तक खडे रहने से कभी-कभी शिर शूल होने लगता है। सेन्टोनीन एक विषैले स्वभाव की औषधि है। अतएव मात्रा मे जरा भी गड -वडी [बच्चो में ½ रत्ती तथा युवको मे २-३ रत्ती] होने से भी दुष्परिणाम प्रकट होते और कभी-कभी कम्प, आक्षेप तथा सयास (Coma) होकर मृत्यु तक हो जाती है। रोगी को वमन, अतिसार शिर शूल, शीत प्रस्वेद, हृदय एव श्वसनका अवसाद आदि उपद्रव होते तथा हर चीज पीले रग की और बैंगनी रग की वस्तुए काली दिखाई देने लगती है।

निवारण—विषाक्तता होने पर आमाशय का प्रक्षालन करना चाहिए। आक्षेप की स्थिति मे केन्द्रिक वामक द्रव्य यथा एपोमार्फीन आदि का प्रयोग कर सकते है। आक्षेप निवारण के लिये सशामक एव निपात (Collapc) निवारण के लिये उत्तेजक अगद दे।

(वनौषधि निर्दर्शिका से साभार)

सेम (Dolichos lablab)

यह शाक वर्ग और शिम्बीकुल (Leguminosae) की एक लता की फली है जिसकी तरकारी खाई जाती है। इसकी कई जातिया हैं। एक प्रकार की फलियाँ अर्ध वित्ता तक लम्बी और लगभग एक अगुल चौडी होती है। पकने पर इनके भीतर से पिस्ते के बराबर चिकना बीज निकलता है।

उत्पत्ति स्थान—

समस्त भारत वर्ष मे कृषि की जाती है।

नाम—

स.०—शिम्बी, निष्पाव। हिं०—सेम, सेमि। ब०—बोरा, बरबटी मक्खन सेम। गु, म—वाल, वेवडा, वाल पापडी, पादड़ी। राज वालोल, वालोर। अ फ्लैट बीन (Flat been) ता मोचे, कोट्टे, अवराइ। ते—चिकुडु। अरबी—वीन्सा, विन्स। बोम्बे—पन्ति। ले०—डोलिकोम लब्लब (Dolichos lablab Linn)।

रासायनिक संगठन—

इसमे मास वर्द्धक द्रव्य (अल्बुमिनाइड्स) तथा पिष्ट काफी प्रमाण मे होता है।

गुण-धर्म और प्रयोग—

दोनो प्रकार की (हरी और सफेद) सेम—रस मे तथा पाक मे मीठी, शीतल, भारी, बलदायक, दाहकारक, कफ कारक और वातपित्त को नष्ट करती है। (भा. प्र.)

दोनो प्रकार की सेम कषैली मधुर, कठ शोधक, मेधा जनक, दीपन और रुचिकारक है। (रा नि.)

निष्पावी—वादी, रुचिकारक, कषैली, मधुर, मुख प्रिय, कण्ठ को शुद्ध करने वाली, मलरोधक, अग्निदीपक और कफ पित्त विनाशक है।

बडी निष्पावी—रुचिकारक, वादी, अग्निदीपक और मुख प्रिय है।

काली निष्पावी–कण्ठ को हितकारी, मेधाजनक, अग्नि दीपक, कषैली, मधुर, रुचिकारक और मलरोधक है।

सफेद निष्पावी—

वादी, कफ कारक, विषनाशक और शेषगुण काली निष्पावी के समान है।

पीली निष्पावी के गुण सर्व निष्पावियो से अधिक है।

यूनानी मतानुसार— [illegible] मे सर्द और खुश्क।

गुण-कर्म तथा उपयोग–सेम की फलिया अकेले या मास मे पका कर खाई जाती है। ये आनाह कारक, विष्टम्भी, पित्त प्रकृति वालो के लिए पथ्य और दद्रुघ्न एव वाजी करण हैं।

अहितकर—वादी प्रकृतियो मे आनाह उत्पन्न करती है। निवारण—गरम मसाला और मास। प्रतिनिधि—अरवी।

सेमचमरिया (Mucuna monosperma)

यह शाकवर्ग और शिम्बीकुल (Leguminosae) की एक जाति होती है।

उत्पत्ति स्थान—

हिमालय, खासिया पर्वत, आसाम, चिट्टागोग और पश्चिमी घाट की पर्वत श्रेणियो में होती है।

नाम—

सं—दधि पुष्पी। हिं.—करिय, सेमचमरिया। ब.—कटराशिम। गु—अड़दवेल्य, काग डोलिया। कर्णा०—कृगरी। ले०—मुक्युना मोनोस्परमा (Mucuna monosperma, D. C)।

गुण-धर्म और प्रयोग—

सेम चमरिया—कटु, मधुर, शीतल, सन्ताप निवारक, वातपित्त नाशक भारी और अरुचि को हरने वाली है।

(रा नि.)

दधि पुष्पी—करिया सेम—मधुर, कटु, शीतल, गरम, वृष्य, हृदय को हितकारी, भारी, मलस्तम्भक, मन्दाग्नि कारक, रुचिकारक, शुक्रकारक, सन्ताप, अरुचि और त्रिदोष नाशक है। इसके बीज—भारी, हृदय को हितकर, रुचिकर, मलस्तम्भक, कफकारक, अग्निमांद्यकारक और वातपित्त नाशक हैं। (नि र.)

सुअरासेम (Canavalia ensiformis)

नाम—

सं०—कोल शिम्बी, कृष्णफला, सूकरपादिका। हि—सुअरासेम, कालीसेम, वडासेम। ब शेमगाछ, मक्खन शिम। म—आवईचीशेंग। गु, रा—काली वालोर। तै—कारुचिकटु, वेल्लातम्मा। अ०—गलाफुल गोल। ता—वेल्लाइ तामबट्टाइ। ले०—केनावेलिया एनसिफोर्मिस (Canavalia Ensiformis Linn. D. c)।

गुण धर्म और प्रयोग—

काली सेम—गरम, भारी, वलकारक, रुचिकारक, शुक्र जनक मन्दाग्नि जनक, मलस्तम्भक, कषैली, मदकारक, वात कफ नाशक और पित्त कारक है। (नि र.)

सुअरा सेम—वातनाशक, भारी, गरम, कफ तथा पित्त कारक शुक्र कारक तथा जठराग्नि को नष्ट करने वाली, वीर्य वर्द्धक, रुचिकारक, मल को वाधने वाली और भारी भी होती है। (भा. प्र नि)

सेमर (Bombax malabari cum)

यह वटादि वर्ग और भिण्डीकुल (Malxaceae) की जाति का वहुत वडा वृक्ष होता है। देश भेद से ऊचाई न्यूनाधिक कितने ही स्थानो मे ६० फीट। काठियावाड़ मे १५ से ३० फीट। इस वृक्ष के ऊपर मोटे और तिकोने मजबूत काटे होते है। इसकी डालियो के सिरे पर पत्तो के झुमके आते हैं। प्रत्येक झुमके मे पाच से सात तक पत्ते होते हैं। हर एक पत्ता चार से लेकर वारह इच तक लम्बा और एक से लेकर चार इच तक चौडा होता है।

पान—शीतकाल मे पतनशील। वसन्त ऋतु मे इस वृक्ष के ऊपर लाल रग के वडे-वडे फूल आते हैं। इन फूलो की पंखड़िया भी वडी होती है इनमे पु केसर ५० से ८० तथा १०० होती हैं, स्त्री केसर १ होती है। इसके पश्चात् इस वृक्ष पर आक के फलो के समान फल ६ से ७ इंच लम्बे पंच कोष्ठीय आते हैं। वैशाख मास में ये फल सूखकर जब फटते हैं तव इनमे से बहुत सी मुलायम रुई निकलकर चारो तरफ उड जाती है। यह रूई बगाल में गादी, तकिये भरने के काम मे आती है। इसके बीज काले रग के होते हैं। वीजो से तेल निकलता है। इस वृक्ष के गोंद को मोचरस कहते हैं। मोचरस वहुत हलका भरभरा और लाल रंग का होता है यह पानी मे डालने से फूल जाता है।

सेमर के नीचे की जड को सेमर मूसली कहते हैं। यह ख्याल रखना चाहिये कि औषधि प्रयोग मे एक वर्ष से डेढ वर्ष तक के छोटे पौधे की जड़ ही काम मे लेना चाहिए। इससे वडे पौधे की जड़ बेकार होती है,

उत्पत्ति स्थान—

सेमल—लका, वर्मा, और भारतवर्ष के समस्त उष्ण तर जगली प्रदेशो मे पाया जाता है। वगीचो मे भी यह लगाया जाता है।

नाम–

स०—शाल्मलि, रक्तपुष्पा, तूल वृक्ष, मोचनी। हिं.–सेमर, सेमल, रोभल, सिमुल, मोचरस, काटि सेमल, रक्त सेमल, पेगून। गु०—सेमला, रक्त सेमला। राज०—सेमला, लाल सेमला। ब०—सिमुल, रक्त शिमुल। म.–सेमर, सांवरी, काण्टेरी सेमर। बोम्बे—सेमुल। मलय—मोचा। ता०—पुरानिशल्लधि। ते०—शालमलि, बूरुग। कर्णा०—यवल वदमर। छोलकली—बोनरो। कन्नड—केंपु बुरग। को०—सावरि रुकु। दक्षिणी—लाल कतयान। अ०—रेड सिल्क काटन ट्री (Reb silk cotton tree)। ले०—बाम्बेक्स मलाबारिकम (Bombax Malabaricum D c)। और साल्मलिया मलाबारिका (Salmalia malabarica Schootr Endl)।

रासायनिक सङ्गठन—

मोचरस मे कषायाम्ल और माया फलाम्ल होना है।

उपयुक्त अङ्ग—मूल, पुष्प, निर्यास तथा सर्वाङ्ग।

मात्रा—मूल चूर्ण ६ माशे से १ तोला तक। पुष्प स्व रस १ से २ तोला। निर्यास—३ माशे से ६ माशे तक। फल चूर्ण १ से ३ माशे।

गुण धर्म और प्रयोग–

सक्षेप मे–रस-मधुर, कषाय। गुण-पिच्छल, वृष्य, ग्राही। वीर्य-शीत। विपाक-मधुर। कटु (मोचरस)।

दोषघ्नता—वातपित्त। शारीरिक अङ्गो पर प्रभाव—आन्त्र।

रोगोपयोग–अतिसार, प्रवाहिका, दाह, रक्तपित्त, व्यङ्ग, शुक्र क्षीणता।

आयुर्वेदिक मतानुसार–सेमल मधुर रस, लघु, स्निग्ध, पिच्छिल गुण, शीतवीर्य और मधुर विपाक है। यह वातपित्त शामक और कफवर्द्धक है, रसायन, रक्तपित्त और रुधिर विकार नाशक है। यह बलकारक एव शुक्रवर्द्धक है इसके फूल का शाक घी और सैंधव नमक से बनाकर प्रयोग किया जाय तो प्रदर रोग शान्त होता है।

मोचरस—कषैला, कफपित्त शामक और ग्राही। कद-मधुर, वष्य और वल्य है। (आ० द्र० वि०)

सेमल–शीतल, स्वादिष्ट, पचने मे स्वादिष्ट, रसायन, कफकारक, स्निग्ध, वीर्यवर्द्धक, पुष्टिकारक और रक्तपित्त नाशक है। (भा० प्र०)

सेमल—पिच्छिल, वीर्य वर्द्धक, मधुर, शीतल, कषैला हलका स्निग्ध तथा शुक्र और कफवर्द्धक है। (रा० नि०)

सेमल—मधुर, वीर्यवर्द्धक बलकारक, कसैला, शीतल पिच्छिल, हलका, स्निग्ध, स्वादिष्ट, रसायन, शुक्रजनक, कफकारक, धातुवर्द्धक तथा रक्तपित्त और रुधिर के दोषो को दूर करता है इसकी छाल कषैली और कफ नाशक है।

इसके फूल—शीतल, कडवे, भारी, स्वादिष्ट, कषैले, वादी, मलरोधक, रूखे तथा कफपित्त और रुधिर के दोषो को दूर करते है।

इसके फल के गुण भी इसी के समान जाने। इसका कद मधुर, शीतल, मल स्तम्भक तथा सूजन, दाह, पित्त और सन्ताप को हरने वाला है। (नि० र०)

पुष्प शाक गुण—घृत और सैंधव नोन से बनाया हुआ सेमल के फूलो का शाक असाध्य प्रदर रोग को हरता है, कफ और रक्तपित्त को दूर करता है मलरोधक और वादी है।

मोचरस गुण—मोचरस कषैला, मलरोधक, बलवर्द्धक पुष्टिकारक, धातुवर्द्धक, वर्ण को उज्वल करने वाला, बुद्धि दायक, शीतल, अवस्था स्थापक, वीर्यवर्द्धक, भारी, स्वादिष्ट, रसायन, स्निग्ध, कफकारक, गर्भ स्थापक, वातनाशक तथा अतिसार, प्रवाहिका, रक्तरोग, पित्त, दाह, आमातिसार और रक्तातिसार को दूर करने वाला है। इसको एक मास पर्यन्त सेवन करने से पारे के विकार दूर होते है।

यूनानी मतानुसार—मूसली सेमल–प्रकृति–मल भूत द्रव सहित पहले दर्जे मे गरम और तर। गुण-कर्म–शुक्रल बृंहण और वाजीकर है। उपयोग–इसको अधिकतया बल बर्द्धन और वीर्य पुष्टि के लिए वाजीकर माजूनो तथा चूर्णो मे डालते है। वाजीकरण और शरीर बल वर्द्धन के लिए एक तोला सेमल के मूसल का चूर्ण करके और आधा पाव जल मे उसका लबाब निकाल कर तथा एक तोला मिश्री मिलाकर ४० दिन तक प्रतिदिन पीते रहना और सेवन काल मे बादी–अम्लद्रव्य और मैथुन से परहेज रखना गुण



दायक है। अहितकर—स्निग्ध प्रकृतियो को। निवारण—चीनी और शतावर। प्रतिनिधि—प्राय गुण कर्मो मे सालम मिश्री और शकाकुल। मात्रा ७ माशे से १ तोला तक।

मोचरस – प्रकृति—दूसरे दर्जे मे शीत और तीसरे में रूक्ष। गुण-कर्म—सग्राही, उपशोषण, शुक्रस्तम्भन एव वीर्य पुष्टिकर हे।

उपयोग—उक्त गुण कर्मो के कारण इसको अकेले या अन्य औषधियो के साथ अतिमार, शुक्रमेह, मूत्रातीत, शुक्र तारल्य अतिरज और योनिस्राव मे चूर्ण या माजून के रूप मे उपयोग करते हे। सग्राही होने के कारण दाँतो की दृढता के लिए इसे मजनो मे डालते है। अहितकर—दीर्घ पाकी एव साद्रदोष जनक है। निवारण—गरम मसाला और दालचीनी। मात्रा—३ माशे से ५ माशे तक।'

(यू० द्र० वि०)

आधुनिक मतानुसार—डाक्टर देशाई के मतानुसार सेमल प्रवल सग्राही किन्तु स्नेहन है। सेमल मुसली स्नेहन, सग्राही, पौष्टिक, वृंहण और वय स्थापक है। इसकी कुछ उत्तेजक क्रिया जननेन्द्रिय पर होती है। कोमल फल उत्तेजक, मूत्रल और कासहर है। इसकी क्रिया मूत्रेन्द्रिय पर पाठा के समान शामक होती है। मोचरस [Gum of silk cotton tree) आधुनिक वैज्ञानिको ने 'मोचरस' को ही अधिक महत्व दिया है। उन्होने यह सिद्ध किया है कि मोचरस मे टेनिक एसिड और गैलिक एसिड नामक तत्व पर्याप्त मात्रा मे उपलब्ध है। यह शरीर के किसी भी स्थान से जाते हुए खून को रोकने मे अद्वितीय पाया गया है। रक्त वमन, चिरकालिक रक्तातिसार (क्रोनिक ब्लड डिसेन्टरी), रक्तप्रदर आदि रोगो पर इसका प्रभाव श्लेष्मिक कला (म्यूकस मेम्ब्रेन) का सकोचन करके रक्त स्राव को रोकता है। २०-२५ ग्रेन की मात्रा मे किन्ही विलायक द्रव्यों के साथ देना चाहिए। मोचरस का घोल पानी में शीघ्र ही नही वनता अतएव थोडी रेक्टिफाइड स्प्रिट मे गाढा घोल वनाकर जल मे मिलाकर पतला घोल वना लेना चाहिए। दिन मे ३ खुराक पर्याप्त होती हैं। प्रत्येक खुराक मे १५-२० ग्रेन मोचरस १०-१२ बूद रेक्टीफाइड स्प्रिट और एक औस जल होना चाहिए। (वृक्ष विज्ञान)

उपयोग-

सेमल का उपयोग प्राचीनकाल से हो रहा है। चरक सहिता के भीतर पुरीष विरजनीय, शोणित स्थापना और वेदना स्थापन इन तीन दशेमानियो मे तथा वमनोपग द्रव्य संग्रह मे उल्लेख किया है। और अनेक रोगो के प्रयोगो मे शाल्मली को मिलाया है। डा० देशाई ने लिखा है कि मोचरस जीर्ण अतिमार, सग्रहणी और प्रवाहिका पर भी यह उपयोगी होता है।

१. सेमर के फूल २ तोला लेकर रात्रि मे किसी पात्र मे पानी मे डुवोकर रखदे। प्रात काल उस पानी से फूलो को तथा १ माशा राई को पीसकर चीनी मिलाकर शर्बत वनाले। प्रतिदिन प्रात काल सेवन करने से प्लीहा रोग अवश्य नष्ट हो जाता है।

२.सेमर की कोमल पत्ती तथा कलिका १ तोला रात्रि मे पानी मे भिगोकर रखदें। प्रात काल उसी बासी पानी से पीसकर तथा उसमे ५-७ नग महुआ भी पीस ले और इसका शर्बत बनाकर १-२ तोला शहद मिलाकर प्रात काल सेवन करे। प्रवाहिका, रक्त-पित्त, रक्तप्रदर, रक्तातिसार रोग अवश्य नष्ट होता है। (सु० उ० अ० ४)

३ सेमल की जड को एक मिट्टी के पात्र में जल के साथ अच्छी तरह उवाल लें। तत्पश्चात् सुखाकर रख लें। प्रतिदिन तिल्ली के साथ अथवा केवल सेमल की जड का सेवन १-२ तोला की मात्रा मे करें। अपार वीर्य वर्द्धक है। [वैद्यमनोरमा]

४ सेमल की मूसली सूखी १ तोला और विदारीकद ½ तोला, दोनो का चूर्ण बनाकर थोडी चीनी मिलाकर रात्रि को सोते-समय फाक लिया करे और ऊपर से पाव-आधा सेर दूध पी ले। शरीर मे वीर्य की कमी (शुक्रक्षय) मे यह योग उत्तम है। (हा स चि. अ दश)

५ सुश्रुत सहिता मे मृत्यु के अरिष्ट लक्षणो के प्रकरण में आया है कि स्वप्न मे कोई व्यक्ति यदि सेमर का वृक्ष देख ले तो स्वस्थ व्यक्ति बीमार हो जाता है और यदि बीमार देख ले तो उसकी मृत्यु हो जाती है। [सु सू. अ. २९]

६ सेमर की छाल एक तोला लेकर दूध मे पीसकर थोडी चीनी मिलाकर शरबत बना ले। इसमे यदि ½ तोला

शखहुली [शख पुष्पी] भी पीसकर मिला ले तो और भी उत्तम होगा। प्रात काल प्रतिदिन सेवन करने से तमाम वीर्यदोष, स्वप्न दोष तथा दिमाग की कमजोरी दूर होती है। (वृक्ष विज्ञान से साभार)

७. मोचरस—प्रवाहिका, रक्तातिसार, उर क्षत, रक्त वमन, क्षय मे होने वाली खून की उल्टी मे और रक्त प्रदर मे उत्तम दवा है। कफघ्न तथा वाजीकरण दवाओ मे भी मोचरस का उपयोग होता है। मोचरस, धाय के फूल, लज्जावती की जड का समान भाग चूर्ण बालको के अतिसार, रक्तातिसार प्रवाहिका मे खूब उपयोगी है।

प्रयोग—

रक्त पित्त मे—[चरक] पहले दस्त लगते हो और बाद मे रक्त गिरता हो उसमे मोचरस से साधित दूध देना चाहिए।

व्यङ्ग में—सेमल के काटो का बारीक चूर्ण दूध मे पीस लेप तैयार कर लगाने से मुहासे और चेहरे पर निकलने वाली कीलें मिट जाती है। (चक्रदत्त)

फेफडे से आने वाले रक्त मे—मोचरस और लाख १-१ भाग, शक्कर २ भाग का बनाया हुआ चूर्ण ६ माशे की मात्रा मे दिन मे ३ वक्त दूध के साथ लेने से उर क्षत मिटता है। (आ नि)

चेचक—सेमर के तीन चार बीजो को निगलने से चेचक बहुत कम निकलती है अथवा बिलकुल नही निकलती

रक्त प्रदर—रसौत को पानी मे गलाकर छानकर उसमे मोचरस मिलाकर पीने से रक्त प्रदर मिटता है।

अर्श रोग—सेमल के फूल, खसखस, मिश्री और दूध को उबाल कर दिन मे २ बार दिया जाता है। (गा औ. र)

विशिष्ट योग—

शाल्मली घृतम् (१) (भै र प्रमेहा)—कल्क—असगन्ध शतावर, रास्ना, मूसली, सोठ, अनन्तमूल, मुलैठी और मुनक्का ५-५ तोले लेकर सबको पानी के साथ एकत्र पीस लें। ४ सेर घी मे यह कल्क और ८ सेर सेंमल की छाल का रस तथा ८ सेर बकरी का दूध मिलाकर मिट्टी के पात्र में मदाग्नि पर पकावें। जब पानी जल जाय तो घी को छान लें।

इसके सेवन से समस्त प्रमेहो का और विशेषत. शुक्र-प्रमेह का नाश होता है। यह क्लीवता, वातुक्षय, शोष और कास को भी नष्ट करता है। मात्रा—२ तोला।

शाल्मली घृतम् (२) (यो र. स्त्री)—सेमल के फूलो का सार, पृष्ठ पर्णी, खम्भारी के फल और सफेद चन्दन, इनके कल्क और रस तथा क्वाथ के साथ यथा विधि सिद्ध घृत समस्त प्रकार के प्रदरो को नष्ट करता है।

कल्कार्थ—प्रत्येक औषधि २½ तोला।

क्वाथार्थ—प्रत्येक औषधि आधा सेर, पाकार्थ जल १६ सेर, शेष क्वाथ ४ सेर। घी १ सेर।

मात्रा—१ से २ तोला। अनुपान—गरम दूध।

प्रदर नाशक घृत—हरे आवलो का रस, विदारीकन्द का रस, सेमर के फूलो का रस, शतावरी का रस, गाय का दूध और गाय का घी ये सब चीजें अस्सी-अस्सी तोला लें, तथा डाभ की जडें, गन्ने की जडे, दर्भ की जडे, कांस की जड़ें और मूज की जडें; ये पाँचो चीजें १६-१६ तोला लेकर ४ सेर पानी मे औटावे। जब १ सेर (८० तोले) पानी शेष रह जाय तब उसे छानकर उपरोक्त आवले के रस इत्यादि में मिला दे तथा उसमे मुलहठी, निसोत, यवक्षार और विवायरे का चूर्ण ४-४ तोला तथा शक्कर ३२ तोले का कल्क भी तैयार कर मिलादें और सबको इकट्ठे करके हलकी आच पर पकावे, जब सब चीजे जलकर केवल घी मात्र शेष रह जाय तब उतार कर छानले और बरनी में भरलें।

इस घी मे से प्रतिदिन सवेरे शाम १ से २ तोला तक घी गरम दूध मे डालकर पीना चाहिए। पथ्य से रहे। इस घी के कुछ दिनो तक सेवन करने से स्त्रियो के प्रदर मे रामबाण तुल्य फायदा होता है। अगर और भी जल्दी लाभ लेना हो तो नीचे लिखे बाह्य उपचार को भी साथ मे चालू रखना चाहिये।

प्रदर नाशक सोगठी—माजूफल, फुलाई हुई फिटकरी, लोध, धाय के फुल, बबूल के कोमल पत्ते, आवला, कमल गट्टा, जामुन की गुठली हीराकसी, गूलर के कच्चे सूखे फल, वड की कोपले, अडूसे के पत्ते, अशोक की छाल, अनार के फल का छिलका, वाय विडग, इन्द्र जौ, पलाश

का गोद चमेली के पत्ते, कत्था, काला सुरमा तथा कपूर, इन सब चीजो को समान भाग लेकर बारीक चूर्ण करके धरणी के रस मे खरल करके छोटे बेर के समान गोलिया बना लेना चाहिए। इन गोलियो को सूखने पर एक गोली लेकर उसको पीसकर थोडा गुड मिलाकर उसे पुरानी रुई मे रखकर उस रुई की बत्ती या गोली बनाकर योनि मार्ग मे धारण करना चाहिए।

उपरोक्त दोनो प्रयोगो को कुछ दिनो तक साथ-साथ प्रयोग कराने से प्रदर रोग मे आशातीत लाभ होता है।

(जगलनी जड़ी बूटी से

सेव (Pyrus malus)

यह फलवर्ग और सेवादिकुल (Pomeae) यह एक प्रसिद्ध सुगन्धित और स्वादिष्ट फल है जिसकी बहुत सी किस्मे हैं। इसका पतन शील पात युक्त छोटा वृक्ष ३० फीट तक ऊंचा होता है। सब नूतन अङ्ग सफेद पतले रेशम जैसे होते हैं। पात अण्डाकार, ऊपर नोकदार, २-३ इच लम्बे, दातेदार तथा पात के अन्त का हिस्सा सफेद और रोयेंदार होता है। वृन्त सामान्य पात से आधा लम्बा। पुष्प लाल छीटे सहित सफेद या गुलाबी, १-२ इच चौडे प्राय गुच्छा मे। पुष्प वृन्त १ से १½ इच लम्बा, रोयेदार। पुष्प वाह्य कोष नलिका घण्टाकार। पखडिया नखयुक्त। फल—चिकना, गोलाकार, दोनो सिरे पुष्प वाह्य कोष नलिका के खण्ड से दृढ लगा हुआ, २-३ इच व्यास का, छोटे वृन्त सह। फल कच्चा होने पर हरा, पकने पर हलका पीला और कुछ भाग लाल। कच्चा फल तुरस याने खट्टापन युक्त फीका होता है। पकने पर इसका स्वाद मीठा और विशेष स्वादिष्ट हो जाता है।

नैसर्गिक उत्पन्न फल—बहुत खट्टे, कषैले और छोटे होते है, वे कच्चे नही खाये जाते, उनका उपयोग मुरब्बे मे अच्छा होता हे। जो अभी खाया जाता है, उसकी उत्पत्ति अति परिश्रम से हुई हे। जगल की अनेक अच्छी-अच्छी जातियो को एक दूसरे के साथ कलम कर अनेक वर्षो तक बोने पर सेव फल स्वाद बनता है। पाडनी ने लिखा हे कि जगल की २२ जातियो का शोध किया है, उनमे से इस समय मिश्र हुई उप जातिया लगभग २००० ससार मे बोयी जाती है। औषधि सग्रह काल देहरादून मे फूल मार्च से मई तक और पजाव मे अप्रैल से जून तक आते है। फल—दिसम्बर-जनवरी मे पक जाते हे। यही समय इनके सग्रह का हे।

उत्पत्ति स्थान—

मूल यूरोप और एशिया के शीतल पहाडी प्रदेश। जैसे-काश्मीर और काबुल। हाल मे पृथ्वी के अनेक शीतल पहाडो पर बोया जाता हे। भारतवर्ष मे विशेषत काश्मीर कुमाऊ, गढवाल, महाबलेश्वर, कागडा, पजाब, नीलिगिर आदि स्थानो के पहाडो, मे इसके वृक्ष लगाये जाते है। अब यह सिंध, मध्य भारत और दक्षिण तक फैल गया है। काश्मीर और उत्तर पश्चिम हिमालय मे यह कही-कही ६००० फीट की ऊचाई पर जंगली भी देखा जाता है। काश्मीर का सेव बहुत मधुर होता है और काबुल का खट्टा होता है।

नाम –

रा—मुष्टि प्रमाण, बदर, सेव, सिंचिति का फल। हि—सेव सेव, सफरजग। गु सफरजन। म.—मोठेबोर, सफरचद। का—मू त। सिं-सूफ। शिमला--पालो। सर हिन्द, अफगानिस्तान—शेव। ओ--सेव। क -सेबु (बु)। अ - तुफ्फाह। फा -सेब, कतल। कन्नड-सिबु, किट्टालय। ब -सेव। अ—अ पल (Apple) ले--मेलस सिल्वेस्ट्रिज [Malus sylvestris Mill] सायटिफिक नाम—पायरस मेलसलिन (Pyrus malus Linn)

रासायनिक संगठन--

इसमे अत्यधिक जल[८०%]अल्ब्युमेन, शर्करा,निर्यास, हरित रजन द्रव्य, सेवाम्ल, सुधा, विपुल प्रमाणों मे फास्फेस प्रभृति उपादान होता है एक ओन्टिवेक्टेरियल पदार्थ फ्लोरिझिन [Phlorizin] पाया गया है जो ग्राम पोजिटीव और ग्राम नेगेटिव दोनो प्रकार के जीवाणुओ का नाशक हे।

उपयुक्त अङ्ग—फूल, फल और मूल त्वक।

गुण धर्म और प्रयोग-

मात्रा-फल का मुरब्बा १ से २ तोला। पानक २ से ४ तोला रस क्रिया १ से १½ तोला। मूल क्वाथ ४ से ८ तोला।

प्रकृति--मीठा, पहले दर्जे में गरम और तर। खट्टा पहले दर्जे मे सर्द और खुश्क है।

गुण-कर्म-भारत मे उत्पन्न होने वाले बढिया फलो मे सेव का स्थान बहुत ऊचा हे। वास्तव मे सेव अमृत के समान हितकारी है। भारत के वाजारो मे सेव कई तरह के दिखाई देते हैं। जैसे--काश्मीरी, पेशावरी, पहाडो, देशी आदि। इनमे काश्मीरी मीठा सेव सवसे श्रेष्ठ समझा जाता है। सेव का रस और विपाक मधुर, शीतवीर्य,रुचिकर, कामोत्तेजक, वृंहण, गुरु, शुक वर्द्धक, कफ कारक और वातपित्तहर है। चरक-सुश्रुत मे सेव को कषाय,मधुर और ग्राही कहा है।

सेव का फल--ठण्डा, सुपाच्य, तृप्ति कारक, हृदय को अत्यन्त प्रिय, मस्तिष्क शक्ति की वृद्धि करने वाला, शरीर मे नवीन रुधिर का सचार करने वाला, तथा रक्तपित्त,क्षत क्षय, क्षय, शोष, दुर्बलता आदि रोगो को दूर करता हे।

शरीर मे विशेष रूप से प्राणवायु का सचय करता है। इसके सिवाय सेव खाने से उदर-सम्वन्धी रोग, यकृत और गुर्दे की शिकायतो के लिये वह वहुत ही उपयोगी वस्तु है।

इसमे विटामिन वी काफी तादाद में रहता है। पौने दो छटाक सेव मे ४० यूनिट विटामिन वी पाया जाता है।

राज यक्ष्मा रोग में सेव का सेवन चमत्कारिक प्रभाव दिखलाता है। सेव खाने से राजयक्ष्मा रोगी का ज्वर कम हो जाता है, वल और क्षुधा की वृद्धि होती है। राजयक्ष्मा रोगी को, विशेष करके वच्चो के क्षय रोग मे यदि नित्य सेव का सेवन कराया जाय, तो विशेष उपकार होता है।

सेव मे प्राथिव आदि का प्रति औंस मे परिमाण--

सेव प्रकार	प्रथिन ग्राम,	कर्वोदक ग्राम	खट मि ग्रा,	लोह मि. ग्रा,	नमक	उर्ष्मक
वृक्ष पक्व	०.१	३.०	१	०१	×	१२
सूखा कच्चा	०६	१२५	८	०.६	१०	५२
पकाया हुआ	०१	२५	१	०१	×	१०

सेव मे नवीन तत्व का प्रति औंस में परिमाण—

प्रकार	अ यू,	व १ यू,	व. २ यू	नि. क. मि.ग्रा.	क. मि ग्रा.
वृक्ष पक्व	११ (c)	४	×	०१	१
कच्चासूखा	२८ (c)	×	(००१)	(०.४)	×
पकाए हुआ	११ (c)	३	×	०१	×
उवाले हुए	६ (c)	३	×	•.१	×

सेव के भीतर मौलिक और टार्टरिक अम्ल अवस्थित है। अत यह आमाशय मे १½ घण्टे मे पच जाता है और दूसरे खाये हुए अन्न को भी पचा देता है। सेव के भीतर नासपाती की अपेक्षा स्फुर (फास्फरस) की मात्रा दूनी और लोह का परिमाण डेढ गुणा होने से रक्त और मस्तिष्क की निर्वलता वालो के लिए यह अधिक हितावह है। निद्रानाश से पीड़ितो को रात्रि मे खिलाने पर शान्त निद्रा आजाती है।

उपयोग—

मीठा सेव पथ्य रूप से अतिसार, अर्श, प्रवाहिका, मलावरोध, मोतीझरा, पित्तज्वर, जीर्णज्वर, प्लीहावृद्धि, अरुचि, अजीर्ण, शारीरिक निर्बलता, उन्माद, शिरदर्द, स्मरण शक्ति का ह्रास, घवराहट, यकृत वृद्धि, हृदयविकार शुष्ककास और वातविकारो मे हितकारी है। खट्टा सेव भी मन प्रसाद कर, हृद्य तथा यकृदामाशय बल वर्द्धक है, कब्ज पैदा करता है। छर्दि एव तृष्णा को शमन करता है, पित्त प्रकृति के लोगो के लिये सात्म्य है। यह पित्तज अतिसार मे खिलाया जाता हे।

जीर्ण रोग—जब दीर्घकाल से त्रास देता रहता है, पाचन क्रिया विगड जाती है, वारम्बार थोड़ा-थोड़ा दस्त होता रहता है तथा अधिक से अधिक निर्बलता आती जाती है और आलस्य वना रहता है, तब अनाज बद करा 'सेवकल्प' कराया जाय तो थोडे दिनो मे सब विकार दूर हो जाते हैं, पचन क्रिया सवल वन जाती है, स्फूर्ति आती है और मुख मण्डल तेजस्वी वन जाता है। थोडे थोडे दिनो मे बुखार उलटकर आता रहता हो, पथ्य का का पालन होते हुए थोडी वायु ठण्डी या गरमी लग जाने या थोडा

परिश्रम होने पर बुखार आजाता है तो रक्तादि धातुओ के भीतर रहे लीन विष को जलाने के लिए अनाज बन्द करा सेव कल्प कराया जाय, तो थोडे ही समय में ज्वर-रूपी रोग से सदा के वास्ते छुटकारा मिल जाता है और फिर शरीर धीरे धीरे बलवान बन जाता है। जिन रोगियो की अग्नि मन्द हो, पतले दस्त होते हो, दस्त मे कच्चा आहार भी जाता हो, उदर में भारीपन बना रहता हो, उदर पर दबाने से पीडा होती हो, उन रोगियो के लिए तक्र कल्प नही करा सकते। ऐसी अवस्था मे केवल सेव पर रख दिया जाय, तो रोग का शनैः शनैः दमन होजाता है, ज्वर दूर होता है। फिर और सबका सेवन हो सकता है। रक्तविकार होने से बारबार फोडे निकलते रहते हो, या त्वचारोग जीर्ण होजाने से त्वचा शुष्क होगई हो, कण्डू रात्रि को अधिक सताती हो, पामा के पीले पीले फोडे अगुलियो पर और नितम्ब पर त्रास देते हो, शात निद्रा न मिलती हो, तो अन्न बन्द करा सेव कल्प का सेवन कराना चाहिए। जिन रोगियो के पेशाब मे यूरिक एसिड (मूत्राम्ल) अधिक मात्रा में जाता हो और सधियो मे दर्द होता हो, पचन क्रिया दूषित रहती हो, उनको सेव कल्प पर रखने से थोडे ही दिनो मे यकृत् क्रिया सुधरती है। फिर मूत्राम्ल का परिमाण कम हो जाता है।

मेदवृद्धि होने पर थोडा सा परिश्रम भी सहन नही होता। क्षुधा तृषा का वेग भी सहन नही होता। प्यास लगने पर तुरन्त जल पीना ही पडता है। अन्यथा घबराहट उत्पन्न हो जाती है। थोडा सा चलने पर श्वास भर जाता है। ऐसे रोगियों को अपनी देह सबल बनानी हो तो अन्न छोड कर सेव का कल्प करना चाहिए।

आमातिसार जीर्ण बनने पर मल मे आम बहुत गिरता है। योग्य औषधि से थोडे दिन स्वस्थ होने का भास होता है, पुन आमातिसार का आक्रमण होकर पाच सात दस्त हो जाते है। प्रारम्भावस्था मे एरण्ड तैल से लाभ हो जाता है, किन्तु अन्त्र निर्बल बनने पर एरण्ड तैल भी सहन नही होता। ऐसी रुग्णा या रोगियो को सेव कल्प कराने पर अच्छा लाभ पहुँच जाता है।

सेव कल्प मे याद रखने योग्य बाते—

सेव कल्प के रोगी को दूध अनुकूल रहता हो, तो सुबह और रात्रि को दूध देवे एव दोपहर को सेव देते रहे। दूध और सेव के बीच मे ३ घण्टे का अन्तर रखना चाहिए। एव दूध और सेव एक समय मे उतना लेना चाहिए। तीन घण्टे के भीतर भीतर उस पर आमाशय की पाचन क्रिया पूरी हो जाय।

जिन रोगियो को दूध अनुकूल नही है, उनको गाय के ताजे मधुर दही का मट्ठा दे सकते हैं। यदि दस्त मे मल का रग सफेद हो, तो दही की मलाई निकाल कर मट्ठा बनाना चाहिए। शोथ हो, तो मट्ठे मे नमक नही मिलाना चाहिए।

सेव का रोगी पर होने वाला प्रभाव—

ज्वर—सेव वृक्ष की छाल ४ माशे और थोडी चाय के २० तोले उबलते जल मे डालकर ढक दें। दश मिनट बाद जल को छान लें। फिर उसमे नीबू का टुकडा निचोड १-२ तोले शक्कर मिलाकर पिलाने से घबराहट, तृषा, थकावट और दाह दूर होतेहै ज्वर का ह्रास होता है और मन प्रसन्न होजाता है।

विषम ज्वर मे सेव मूल सत्व तत्काल लाभ पहुचाता है।

सेव मूल सत्व या कण निर्माण विधि—

ताजे मूल की छाल को जल के साथ दो घण्टे उबाल क्वाथ छान कर अलग रखें। फिर उसी छाल को नये जल में मिला, दो घण्टे तक जल मे उबालकर छान लें। इस दूसरे क्वाथ को शीतल स्थान मे रखने से लगभग २० घटे पश्चात् तले मे रवेदार सत्व बैठ जाता है। इसे इकट्ठा कर शीतल पानी से धोकर सुखा लेने से शुद्ध सत्व बन जाता है। यह सत्व लगभग ३ प्रतिशत होता है।

पहले क्वाथ मे सुरा मिलाकर १२ घण्टे तक रहने देवें। फिर सुरा को छानकर अर्क को बाष्प यन्त्र द्वारा सुखा लेने पर ५% सत्व सग्रहीत होता है। इन दोनो सत्वो को एकत्र करले। यह सत्व मैले सफेद रग का और बहुत कडवा होता है। इसमे रवे या कण सुई की नोक के समान या पतले होते है। यह शीतल पानी मे मिश्रित नही होता। यह विषम ज्वर पर क्विनाइन के समान गुणदायक है। मात्रा—२ से ४ रत्ती। (डा. देसाई)

मस्तिष्क के रोग—सेव के फलो का सेवन दिमाग के लिए बलदायक है और उसको फुर्तीला बनाता है। आधुनिक शोध के अनुसार इसमे फासफोरस विशेष मात्रा मे है। इसलिए इसका सेवन करने से मस्तिष्क के ज्ञानसकेन्द्र को बल और हड्डियो को ताकत मिलती है। यह दिल को प्रफुल्लित करता है।

आखो के रोग—सेब का पुट पाक बना पीसकर आखो पर बांधने से नेत्र के रोगो को मिटाता है। इसका असर तुरन्त होता है।

हृदय रोग–सेव हृदय को ताकत देता और पुष्ट करता है। यह हृदय, मस्तिष्क और प्राण शक्ति (रूह हेवानी) को बलवान बनाता है। क्रोध को शात कर स्वभाव को सौम्य बनाकर उसमे शक्ति स्फुर्ति विशेषरूप से पैदा करता है।

आमाशय के रोग—यह मेदे को बलदायक है। मेदे की सूजन को मिटाता है तथा उसकी शिथिलता को दूरकर उसको बलवान बनाता हे। सेवका शरबत या मुरव्वा ज्यादा लाभदायक है।

खट्टा सेव पित्त से उत्तेजित आमाशय को बल देता है। वमन को रोकता है। दूषित पित्त और खून के जोश को कम करता है। यदि सेव को पुट पाक बनाकर सेवन किया जाय तो क्षुधा की वृद्धि होती है और मेदे को बलवान बनाता है।

आतो के रोग—भुना हुआ सेब आतो के कीडे और जलन को दूर करता है। सेव का सत्तू बनाकर खाने से वमन और अतिसार रुक जाते है।

वायु के रोग—इसका अर्क सेवन करने से वायु का असर नही होता।

चर्म रोग—सेव और उसके पत्तो का लेप व्रण शोथ को मिटाता है। आग से जले हुए स्थान पर इसके पत्तो का लेप मुफीद है।

विष पर—ये विषो का तिर्याक है। बिच्छू दन्श के विष का नाशक है। अफीम और शराब की आदत छुडाने के लिए इसका सेवन बहुत ही उम्दा है। (स० आयुर्वेद)

प्रयोग—

वमन—कच्चे सेव के रस मे सेंधा नमक मिलाकर पिलाने से वमन बन्द होजाती है।

खासी—पके हुए सेव के रस में मिश्री मिलाकर पिलाने से सूखी खासी और मूर्च्छा मिटती है।

पित्तोन्माद—सेव के शरबत मे ब्राह्मी का चूर्ण मिला पिलाने से पित्तोन्माद मिटता है।

मस्तिष्क की कमजोरी—सेवका मुरब्बा खिलाने से मस्तिष्क को तथा हृदय को शक्ति मिलती है।

बिच्छू का विष—सेव के रस मे ४ रत्ती कपूर मिला कर पिलाने से बिच्छू का विष उतर जाता है। अगर न उतरे तो आधे आधे घण्टे से २-३ बार पिलाना चाहिए।

रक्तातिसार—पोस्त के दानो के क्वाथ में सेव का शरबत मिलाकर पिलाने से रक्तातिसार मिटता है।

गुर्दे की पीडा—गुर्दे की पीडा मे सेवका खिलाना लाभदायक होता है। (व च)

स्वास्थ्य रक्षणार्थ–सेव खाइये और मोटे ताजे बनिए-दुर्बल शरीर को मोटा–ताजा बनाने के लिये सेव का फल सर्वोत्तम है। प्रो०—रहीस ने अपनी एक पुस्तक मे लिखा है कि सेव हर प्रकार के शारीरिक दोष को मिटाकर हृष्ट पुष्ट बनाता है। इसमे फास्फोरस और फौलाद के तत्व प्रधानत पाए जाते है। इसलिए यह मस्तिष्क और शरीर के लिए अत्युत्तम पोषक आहार है। यह बुद्धि को तीव्र करता है, शरीर को बलिष्ठ बनाता है। इसके अतिरिक्त हर समय बैठे रहने वाले व्यक्ति के यकृत्त की शिथिलता को मिटाकर गतिशील बनाता है। इसके सेवनकर्त्ता के शरीर मे शक्ति व बुद्धि की वृद्धि होती है। यदि निम्न विधि से सेवन किया जाय तो परम लाभप्रद है—

२–३ मीठे सेव लेकर इनको छीलकर फाकें बनाले। इनको शीशे या चीनी की प्लेट मे डालकर रातभर ऐसे स्थान पर रखे, जहा चन्द्र ज्योत्स्ना तथा ओस से इनका स्पर्श होता रहे। प्रात काल नाश्ते के साथ इनका सेवन करें कम से कम १–१½ मास अवश्य सेवन करे।

तृषाधिक्य—सेव का रस ३ तोला ताजा पानी मे मिलाकर पिलाने से प्यास की अधिकता शान्त होजाती है। इसी प्रकार एक सेव के टुकडे काटकर उचित जल मे भिगो दें, और प्रात काल उन सेव के टुकड़ो को कुचलकर रस निकालकर उसी जल मे मिलाकर पिलाने से प्यास की

अधिकता शान्त हो जाती है। बडी ही उत्तम वस्तु है।
—फलो द्वारा चिकित्सा से

विशिष्ट योग–

अर्क सेव—उम्दा पके हुए मीठे सेव का छिलका और बीज अलग किए हुए ५ सेर लेकर पत्थर के खरल में कूट लें और २० सेर गुलाब जल के साथ भवके मे डाले और जटामासी, गावजवा, बिल्लीलोटन, अगर, स्याहजीरा, सफेद चन्दन, जाविश्री, प्रत्येक २ तोला को कपडे की थैली में बांधकर डेग मे डाल दें। अम्बर ३ माशा के टुकडे कपडे मे बाध नली के पास नली के यन्त्र में रख दें और अर्क निकाल लें। मात्रा—५ तोला।

गुण—दिल, दिमाग को बलकारी और कामशक्ति का वर्द्धक है।

रुब्ब (रस क्रिया) सेव—एक सेव का रस निचोड़कर नरम आंच पर गरम करें जिससे चाशनी के योग्य हो जाय उसे चीनी के बरतन में सुरक्षित रक्खे। मात्रा—८ माशा।

गुण—मीठे सेव का रुब्ब दिल को बलकारी और बेहोशी को मिटाने वाला है।

खट्टे सेव का रुब्ब दूपित पित्त और खून, पित्त के वमन और अतिसार तथा उदासी को मिटाने वाला एव वातोन्माद के लिए लाभकारी है। मात्रा–८ माशा।

रुब्ब सेव—दो मीठे सेव का छिलका और बीज दूर करके पत्थर के खरल मे कूटकर १ सेर स्वरस निकालकर छानले। फिर आध पाव खाण्ड मिलाकर शरवत तैयार करें और घन पाक करके रखलें। मात्रा—½ से एक तोला तक दे।

गुण—यह रुब्ब दिल, दिमाग को बल देता है।

रुब्ब सम्बन्धी जानकारी—

यूनानी चिकित्सा मे 'रुब्ब' का अर्थ उस औषधि के घन शरवत से है जो कि उस औषध का क्वाथ तथा शीत कषाय मे खांड डालकर बनाया जाता है। उसका लाभ यह है कि हर ऋतु मे प्रत्येक औषधि का मिलना कठिन होता है, इस तरह से बनाकर रख लिया जाता है, शरवत तो शीघ्र ही दूषित हो जाते है, परन्तु रुब्ब अधिक समय तक रह सकता है।

सिकजवीन सेव—मीठे सेव का रस १ सेर एनामल की डेगची मे आग पर रक्खें, जब चार उबाल आ जावे तब इस पर से झाग उतार ले और नीचे उतार कर रख दे और ढक दें, ठण्डा होने पर ऊपर से निथरा हुआ जल उतार ले और इसमे १ सेर मिश्री सफेद और ३ तोला गुलाब जल मिलाकर जोश दे। झाग उतारते रहे जब तक कि झाग का अन्त बन्द हो जावे फिर चूल्हे से उतार कर इसमे सिरका अगूरी खालिस एक पाव मिला दें और नरम आच पर पकावे। जब चाशनी बन जावे तो सिरका ३ तोला और डालकर दो तीन उबाल लेकर आग से उतार ले। ठण्डा होने पर वोतलो मे डालकर सुरक्षित रक्खे। मात्रा १ तोला। अनुपान—कुलफा के बीजो के चूर्ण ८ माशे के साथ।

गुण—हृद द्रव, हृत्स्पन्दन (दिल की धड़कन) के वास्ते वहुत लाभकारी है।

शरवत सेव १—मीठे सेव का छिलका और बीज दूर करके जरा कूटले और दसगुने पानी के साथ जोश दे। जब चतुर्थांश शेष रहे, साफ करें और षष्टमाश नीबू का रस मिलाकर के मिश्री के साथ चाशनी बनाले। मात्रा—२ तोला।

गुण—दिल, दिमाग, प्राणशक्ति (ओज) को बल देता है और चित्त भ्रम को दूर करता है। दिल की घबराहट भय, वमन एव जहर का नाशक है।

शरवत सेव मधुर २—मधुर सेव के स्वरस मे त्रिगुण खण्ड मिलाकर पाक करे।

शरबत सेव ३—मधुर सेव का रस आधा सेर, इसमे ६ सेर जल डालकर उबाले, चौथाई भाग शेष रहने पर जल को अग्नि पर से उतारकर छानले छठा भाग नारङ्गी स्वरस या नीम्बू स्वरस डालें और हर आधा सेर स्वरस के पीछे अनीसून १ तोला ५½ माशा, मस्तगी रूमी १४ माशा, छोटी एला के बीज, जावित्री, लौग प्रत्येक ७ माशा का बारीक चूर्ण पोटली मे बाधकर जल मे डाल दे और पाक होते समय पोटली को कुरछी से मलते रहे, ताकि इन औषधियो के गुण भी आ जावे, पाक हो जाने पर पोटली को फेक दे। मात्रा दो से चार तोला। गुण—हृदयको बल देता है।

शरबत सेव न ४—उत्तम सेव छिलके और बीज रहित का स्वरस २॥ सेर, गुलाव के फूल एक सेर, अगर, दालचीनी, लौंग प्रत्येक २ तोला, केसर एक तोला। सेव के सिवाय सब दवाओं को यवकुट कर ५ सेर गुलाव जल मे भिगो देवें। १६ घण्टे बाद नरम अग्नि पर अर्क खींच लें। इस अर्क और रस से दूनी मिश्री मिला कर शरवत की चाशनी ले ले। मात्रा—२ तोला। प्रातः साय।

गुण—हृद द्रव, हृत्स्पन्दन को मिटाता है, स्मरण शक्ति की वृद्धि करता है। दमा, सूजन, मदाग्नि, प्लीहा वृद्धि, पीलिया और विषैले प्रभाव को भी नष्ट करता है तथा मूत्राशय को बलवान बनाता है। स्त्रियों के रुके हुए मासिक धर्म को जारी करता है एव स्तनों में दूध की वृद्धि करता है।

शरबत सेव सादा न ५—उम्दा मीठे पके हुये सेव जिनके छिलके और बीज दूर किये हुये हो लेकर पत्थर के खरल मे कूटकर रस निकाल ले और इस रस को थोडा उबाल ले और झाग को उतारते जावे। झाग आना बन्द होने पर अग्नि से नीचे उतार ले जिससे ठण्डा हो जावे, ऊपर से निथरा हुआ जल अलग कर ले और इससे दुनी मिश्री मिला शरबत की चाशनी ले लें। मात्रा—२ तोला से ४ तोला तक।

गुण—दिल और मेदे के रोगो के लिये लाभकारी है, भूख बढाता है, पित्तोत्पन्न वमनातिसार को रोकता है, उत्क्लेश मितली और उबकाइयों का नाशक है।

मुरब्बा सेव न.१—मीठे सेव को छिलके तथा बीज रहित कर गोल काशे (फाके) काट ले और एक एनामल देग में आधा भाग जलभर कर देग के मुख पर साफ कपडा बाधे, और उस पर काशें रख कर किसी ढक्कन से बन्द करके नीचे आग जलावे, ताकि जलीय वाष्प से काशे नरम हो जाय। इन काशो को खाण्ड के पाक मे डाल दें, यदि दूसरे दिन पाक पतला हो, तो काशो को पृथक करके फिर कर पाक लें, और काशे डाल दे।

मात्रा—२ तोला।

गुण—दिल, दिमाग को विशेषकर बल देता है।

सेवका मुरब्बा नं २—आवश्यकतानुसार सेव मगवा लें। उनको छील ले और बीच का बीज वाला भाग निकाल दें। छीले हुये सेवो को नमकीन पानी मे डालते जाए, जो पानी में जरासा नमक घोलकर तैयार किया हो वरना सब भूरे हो जायेंगे और मुरब्बे का रङ्ग बिगड जायेगा। अब प्रति सेर सेव के टुकडों के लिये डेढ सेर के हिसाब से खाण्ड तोल लें और चासनी बना लें और उनमे सेव के टुकडे डाल दें। जब टुकडे नरम हो जायें तो उतार लें और ठण्डा होने पर कीटाणु से साफ किये हुये अमृतबान या काच की बरनी में डाल दें।

मात्रा—२ से ४ तोला।

गुण—हृद्य है।

मुरब्बा सेव न. ३—सेव उम्दा अध पके लेकर उनका छिलका लकडी की छुरी से दूर करें और बांस की नोकदार सलाई से उनका बीज निकाल डालें। फिर इनको गुलाब जल में जोश देकर नरम होने पर निकाल लें और साफ कपडे से पोंछ कर सुखा लें। बाद मे उस पानी को जिसमे सेव को जोश किया गया है मिश्री डाल कर चाशनी बना ले और सेव उसमें डाल कर एक और जोश देकर उतार ले। ठण्डा करके काच की बरनीमे रख दें। दो तीन दिन के बाद देखें, अगर चाशनी पतली हो गयी हो, तो उसमे से सेव को निकाल करके चाशनी को गाढी कर ले और सेव डाल कर रख दें। साथ ही मिश्री से आधा शहद भी मिलाकर अन्त मे कुछ कस्तूरी, गुलाव जल में घोट कर मिला दे।

मात्रा—एक से दो तोला।

गुण—दिल को शक्ति देता है, मुंह की बदबू को मिटाता है। यह मुरब्बा चादी के वरको मे लपेट कर सेवन करें।

गुलकन्द सेव—सेव के फूलो की पत्तिया १ सेर, मिश्री २ सेर। मिश्री को दरदरा बनाकर फिर पत्तिया और मिश्री को हाथो से अच्छी तरह मल कर काच या चीनी की बरनी मे डालकर ४० दिन धूप मे रख दें और प्रतिदिन हिला दिया करें। मात्रा—१ तोला।

गुण—दिल दिमाग को स्फूर्ति देता है और बाजीकरण है।

हलवा सेव—उम्दा सेव लेकर उनका छिलका और बीज अलग करे और पानी में उबाले। उबालते वक्त गुलाब



जल भी उसमे डाल दे। जब नरम हो जावे तो मिश्री या मधु मिलाकर पकावें, जब बनने के करीब हो उसमें पिस्ते छिले व कतरे हुए जरूरत के अनुसार मिला ले और चीनी के थाल मे फैला दे। मात्रा—बलानुसार।

गुण—दिल, दिमाग और मेंदे को बलदायक है।
(स० आ० से साभार)

अहितकर—विस्मृति, ज्वर और वायु (रियाह) उत्पन्न करता है। वक्ष के लिए भी अहितकर है। निवारण—गुलकन्द, दालचीनी और मधु।

सोंठ (Zingiber Officinale)

यह हरीतक्यादि वर्ग और शुण्ठिकुल (Zingiberaceae) का क्षुप ४-४ फुट ऊचा होता है। पत्र १ से १२ इच लम्बे, १ इच चौडे तथा अग्रभाग पर नुकीले होते हैं। पुष्पदण्ड २ से ३ इच लम्बा होता है तथा पुकेसर गहरे बैंगनी रग के होते है। इसका विशेष विवरण और चित्र अदरख के वर्णन मे भाग १ के पृष्ठ १३० पर अवलोकन कीजिये।

वक्तव्य—अदरख के कन्द का छिलका हटाकर उसे सुखा लेते हैं। वही सोंठ है।

जाति—शुण्ठी देश भेद से तथा निर्माण प्रक्रिया के भेद से अनेक प्रकार की होती है। सामान्य अदरख की छाल हटाकर सुखा लेने पर जो सोंठ प्राप्त होती है उसका रग कुछ धूसर वर्ण का होता है। दक्षिण भारत मे एक श्वेत जाति का आर्द्रक होता है (जिसका नाम कंयदेव निघण्टु में आर्द्र नागर दिया है), सोंठ प्राय उसी से बनाई जाती है, इसे 'बैंतरा सोंठ' या 'मंदा सोंठ' कहते हैं। अदरख का छिलका छुडाकर दूध मे उबाल देते हैं और फिर सुखा लेते हैं। यह 'दूधिया सोंठ' कहलाती है।

उत्पत्ति स्थान—

यह उष्ण और आर्द्र प्रदेश मे विशेषत मद्रास, ट्रावनकोर, कोचीन तथा कुछ बङ्गाल और पञ्जाब मे होता है।

नाम—

स—शुण्ठी, महौषधि, विश्वा, विश्व भेषज, शृङ्गवेर, नागर, विश्वौषध। हि०—सोंठ, सूठ, शुठी। द०, प०, ब०—शुठ, सोठ। म०—सोंठ। ग०—सोंठ, शुण्ठा, सुण्ठ। मलय—चुक्का। काश्मीर—सूण्ढ। क०—शु ठि। कों०—सू ठि। ता०—शुक्कू। ते०—सोटि। अरबी—जजबील। फा०—शगवीर, जजबीले खुश्क। अ०—ड्राई जिजर (Dry ginger)। ले०—जिंजिबर ऑफिशिनेल् (Zingiber officinale Rosc.)।

रासायनिक संगठन—

इनमे हलके पीले रग का एक सुगन्धित उडनशील तेल १ ५ % पाया जाता है। इसके अतिरिक्त पीत कटु पदार्थ जिंजरौल (Gingerol), जिंजरीन (Gingerin) नामक तेल युक्त राल के स्वरूप का मुख्य तत्व, अन्य राल तथा स्टार्च पाये जाते हैं। जिंजरौल नामक तत्व तैल के के साथ नही उडता है।

उपयुक्त अङ्ग—मूल।

मात्रा—शुण्ठी चूर्ण १ माशा से ६ माशे तक।

गुण धर्म और प्रयोग—

सोंठ—रुचिकारक, आमवातनाशक, पाचक, चरपरी, हलकी स्निग्ध, उष्णवीर्य, पाक मे मधुर, कफवात और विबध को दूर करती है। वीर्यवर्धक, सारक, वमन, श्वास, शूल, खासी, हृदय रोग, श्लीपद, शोथ, बबासीर, अफारा, उदर रोग और वात रोगो का नाश करती है।

जिसमे आग्नेय गुण प्रधान होने से जो जल को शोषण करने वाला तथा मल का रोधक द्रव्य (पदार्थ) होता है उसे ग्राही कहते है जैसे शुण्ठी।

शका—सोंठ मे यह सब गुण वर्तमान है किन्तु मलको भेदन करने वाला गुण रखने वाला यह पदार्थ ग्राही कैसे कहा जा सकता है?

उत्तर—मलबन्ध को तोडने की शक्ति इसमे है, किन्तु बाहर निकालने की शक्ति इसमे नही है। (भा प्र)

सोंठ—कफ वातनाशक, पचने मे मधुर, चरपरी, वीर्य वर्द्धक, गरम, रोचक, हृदय को हितकारी, स्नेहयुक्त, हलकी और दीपन है तथा पाण्डु रोग, सग्रहणी और पित्त का नाश करती है। (नि. र)

सोंठ—स्निग्ध, उष्ण, चरपरी और वृष्य हैं। शोफ, कफ, अरुचि, वातोदर, श्वास, पाण्डु और श्लीपद को नाश

करती है। (ध नि)

सोठ—चरपरी, उष्ण, स्निग्ध है और कफ, शोफ, वात नाशक तथा शूल, विबध, उदर रोग, आध्मान, श्वास और श्लीपद रोगो की नाशक है। (रा नि)

यूनानी मतानुसार—सोठ-मलभूत द्रव सहित तीसरे दर्जे मे गरम और दूसरे दर्जे मे खुश्क है। गुण-कर्म-वातानुलोमन, बुद्धिस्मृतिवर्धक, वाजीकरण, आहार पाचन एव वात विलयन है। उपयोग—श्लेष्म प्रकृति के लोगो के लिए सोठ गुण दायक औषधि है। इसे प्राय आमाशयिक रोगो जैसे—उदरानाह, उदरशूल, अरुचि आदि मे उपयोग करते हे। वाजीकरण माजूनो मे सम्मिलित करते है या मुरब्बा बनाकर खाते हे। मरोड उत्पन्न करने वाली औषधियो के साथ सम्मिलित करने से यह उनके उक्त अवगुण का परिहार करता है। बाह्यत सर्द दर्दो मे इसे उपयुक्त तेलो मे मिलाकर मालिश करते है। जुवारिश जजबील और माजून जजबील इसके प्रसिद्ध योग हैं जो कफज रोगो मे विशेषत मन्दाग्नि, विस्मृति, पृष्ठशूल, नपु सकता और योनिस्राव मे प्रयुक्त होते हैं।

डाक्टरी मतानुसार—डा० देसाई के मतानुसार-सोठ सुगन्धित, उत्तेजक और उत्तम दीपन होती है। इसके सेवन से पाचन क्रिया शुद्ध हो जाती हे और पेट मे वायु का सचय नही होने पाता। इस गुण की वजह से सोठ आतो के रोगो मे बहुत उपयोग मे ली जाती है।

उपयोग—

सोठ-आयुर्वेद की एक सुप्रसिद्ध और घरेलू औषधि है। आयुर्वेद के मत से इसमे हजारो गुण हैं। यह सारे शरीर के सगठन को सुधारती है। मनुष्य की जीवनी शक्ति और उसकी रोग प्रतिरोधक शक्ति को बढ़ाती है। हृदय, मस्तिष्क, रक्त, उदर, वात सस्थान, मूत्र पिण्ड इत्यादि शरीर के सब अवयवो पर अनुकूल प्रभाव डालती है और उसमें पैदा हुई विकृति और अव्यवस्था को दूर करती है। आयुर्वेद मे बनने वाले हजारो योगो मे इसको सम्मिलित किया जाता हे। यह आयुर्वेद के सुप्रसिद्ध 'त्रिकुटा' (सोठ मिर्च और पीपर) का एक प्रधान अङ्ग हे।

सोठ के उष्ण और वातनाशक धर्म की वजह से सब प्रकार की वातजनित वेदना मे इसका उपयोग किया जाता है। जीर्ण सन्धिवात मे विशेष कर वृद्ध मनुष्यो को आराम देने वाली दो औषधिया होती हैं—एक सोठ और दूसरी चोवेहयात। रात्रि मे सोते समय एक तोला सोठ का फाट बनाकर देने से आमवात से ग्रसित वृद्ध स्त्री, पुरुषो को सुखदायक नीद आ जाती है।

पेट मे अफारा होने की वजह से अगर हृदय मे शूल चलता हो तो उसमे सोठ देने से वायु खुल कर हृदय शूल मिट जाता है।

सोठ मे कफनाशक धर्म होने की वजह से यह खांसी और दूसरे कफ रोगो मे बहुत उपयोगी में ली जाती है। सोठ—गरम है और यह सच्ची गरमी पैदा करती है। शूल, आध्यमान और पेट मे वायु होने पर अन्य वातहर औषधियो के साथ मे दी जाती है। वात ज्वर मे दूसरी ज्वरघ्न दवाओ के साथ मे सोठ डाली जाती हे जिससे वातज्वर के तमाम उपद्रव दूर होते हैं। वातज्वर की तन्द्रा इससे दूर होती हे। इसी प्रकार मु ह पर दिखने वाला वरम तथा आख के अन्दर की तन्द्रा (घने नशा) दूर होती हे। वात हरणार्थ सोठ का बहुत प्रयोग होता है प्रत्येक प्रसूता स्त्री के पेट मे वायु की वृद्धि नही रहे इसके लिये जो चरका (कटलु) खिलाया जाता है उसमे सोठ का मुख्य भाग आता हे। सौभाग्य सोठ नामक बनावट भी खास सूतिका स्त्रियो को अनुकूल रहती है।

प्रसूता स्त्रियो को जब पेट बडा रह जाता है तथा उनके गर्भाशय का योग्य सकोचन नही होता तब उनके पेट मे हमेशा वादी रहती है, आवाज होती रहती है, हिचकिया आती है कम मात्रा मे भोजन करने पर भी पेट ढोल जैसा हो जाता है। ऐसी रुग्णाओ को 'सौभाग्य–सोठ पाक' फायदा करता है। सोठ, गुड और घी को मिलाकर खाने से कान मे आवाज होती हो, आखो के सामने अधेरा आता हो, तो दूर हो जाते है। जल मे विशेष रहने से ठडक के कारण शरीर का भाग जड [जकड जाय] या बध जाय और शरीर से कपकपी [धूजन] आती हो, ऐसे व्यक्तियो को सोठ, गुड और घी मिलाकर खिलाने से शरीर मे भली प्रकार शक्ति आती है और उसके अग अग मे सच्ची गरमी प्राप्त हो जाती है तथा वह व्यक्ति अच्छी तरह से होशियारी मे आ जाता है। पारा पी जाने वाले बच्चे को इसी



तरह अतिसार से उत्पन्न सूजन वाले बच्चे के अग्नि मथादि लेप [जिसके अन्दर सोंठ आती है] लाभ करता है।
[आर्य औषधि]

आधा शीशी—सोठ को पानी मे पीस कर लेप करने से आधा शीशी की पीडा मिटती है।

मस्तक शूल—सोठ को बकरी के दूध मे पीसकर नस्य देने से कई प्रकार के दोषो से पैदा हुआ मस्तक शूल मिटता है।

हृदय रोग—सोठ का कुछ कुन-कुना क्वाथ पीने से हृदय रोग मे लाभ होता है।

आमवात—सोठ और गिलोय का क्वाथ बनाकर पीने से बहुत दिनो का पुराना आमवात मिटता है।

मन्दाग्नि—सोंठ के चूर्ण को गुड मिलाकर नित्य खाने से अग्नि प्रदीप्त होती है।

हिचकी—सोंठ और हरड़ को पानी में पीसकर उसकी लुगदी को खिलाकर गरम जल पिलाने से श्वास और हिचकी मिटती है। सोठ,आवले और पीपल चूर्ण शहद के साथ चटाने से हिचकी मिटती है। सोंठ के चूर्ण की फक्की देकर ऊपर से बकरी का गरम दूध पिलाने से हिचकी मिटती है।

कटिशूल—सोठ के क्वाथ में अरण्डी का तेल मिलाकर पिलाने से कमर, वस्ति और कुक्षि का शूल मिटता है।

श्लीपद—गोमूत्र के साथ सोठ के चूर्ण की प्रतिदिन फकी लेने से श्लीपद में लाभ होता है। —ब० च०

विशिष्ट योग—

शुण्ठी क्वाथ (यो र. ज्वरा)—५ तोले सोठ को कूटकर ४० तोले पानी मे पकावे और १० तोले शेष रहने पर छानले।

इसे सेवन करने से अरुचि, अग्निमाद्य, पीनस, श्वास, कास, उदर रोग और जल दोष नष्ट होते तथा मति और कान्ति की वृद्धि होती है एव चित्त प्रसन्न रहता है और नेत्र स्वच्छ होते है।

शुण्ठ्यादि कल्कः १ (हा सं. स्था ३ अ २)सोठ, नागरमोथा, गजपीपल, देवदारु, धनिया, कुटकी, इन्द्रजौ और दशमूल समान भाग लेकर कल्क बनावे।

यह कल्क त्रिदोषज ज्वर, श्वास, भ्रम, अरुचि विबन्ध और हृद्रोग को नष्ट करता है।

शुण्ठ्यादि कल्क. २ (बृ. नि. र. ज्वरा) | सोठ, हर्र और राई के कल्क को हमेशा भोजन के प्रारम्भ मे खाने से देश विदेश का पानी विकार नही करता। मात्रा—१½ माशा।

शुण्ठ्यादि कल्क ३ (भा प्र म खं.)—सोठ और जीरे के कल्क को गुड मे मिलाकर गरम पानी पुराने मद्य या तक्र के साथ पीने से तीव्र ज्वर नष्ट होता है।

शुण्ठ्यादि कल्कः ४ (शा सं म ख अ. ६)—सोठ, तिल आर गुड समान भाग लेकर कल्क बनावे। इसे दूध के साथ सेवन करने से परिणामशूल और आमवात का नाश होता है।

शुण्ठ्यादि कषाय. (१) (यो र । स्त्री रोगा.)—सोठ और बेल के क्वाथ में जौ का सत्तू मिलाकर पिलाने से गर्भिणी की वमन और अतिसार का नाश होता है।

शुण्ठ्यादि कषाय (२) (ग नि.। ज्वरा १—सोठ, जवासा, वासा और नागरमोथे का क्वाथ सेवन करने से कफज ज्वर शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

शुण्ठ्यादि क्वाथ (१)(हा. स. स्था. ३ अ ४२)—सोंठ पीपल,खैर सार, लाल कनेर की छाल, पटोल, मजीठ, देवदारु, अतीस, बेल की छाल, अजवाइन, वासा और त्रिफला समान भाग लेकर क्वाथ बनावे। इसके सेवन से कुष्ठ नष्ट होता है।

शुण्ठ्यादि क्वाथ (२) (यो र। अश्मर्य)—सोठ, अरनी, पाषाण भेद, सहेजने और वरने की छाल, गोखरू, हर्र और अमलतास के फलो का गूदा सब समान भाग लेकर क्वाथ बनावे।

इसमे हीग, जवा खार और सैंधानमक का चूर्ण मिलाकर सेवन करने से वातज अश्मरी, मूत्र कृच्छ्र, अग्नि माद्य कटिस्थित वायु, उरु स्थित वायु, तथा गुद लिंग और वक्षण स्थित वायु का नाश होता है।

शुण्ठ्यादि क्वाथः (३)यो. र । आमवाता.)—सोठ और गोखरू का क्वाथ प्रात काल सेवन करने से आमवात, कटिशूल और शरीर पीडा नष्ट होती है। यह क्वाथ

पाचक भी है।

शुण्ठ्यादि क्वाथ (४) वृ. नि र. । पित्तातिसारा)-सोठ, हुल-हुल, हींग, हर्र और इन्द्र जो समान भाग लेकर क्वाथ बनावें। इसमें शहद मिलाकर पीने से पित्तातिसार नष्ट होता है।

शुण्ठ्यादि क्वाथ. (५) (वै. जी) (विलास २)—सोठ, गिलोय, अतीस, नागरमोथा समान भाग लेकर क्वाथ बनावे। यह क्वाथ मन्दाग्नि, ग्रहणी दोष और आम को नष्ट करता है।

शुण्ठ्यादि क्वाथः (६) (वृ.नि.र. श्वासा)—सोठ और भारगी का क्वाथ श्वास को नष्ट करता है।

शुण्ठ्यादि क्वाथ (७) (यो.र. शोथा)—सोठ, पुनर्नवा, अरण्ड की जड, वेल की जड़, श्योनाक, खम्भारी की जड, अरणीमूल समान भाग लेकर क्वाथ बनावे।

गुण—यह क्वाथ वातज शोथ को नष्ट करता है।

शुण्ठ्यादि क्वाथ (८) (ग नि.ज्वरा. १)—सोठ, नागरमोथा, घमासा और गिलोय समान भाग लेकर आठ गुने पानी मे पकावें और आठवां भाग पानी शेष रहने पर छान लें। इसके सेवन से वातज ज्वर नष्ट होता है।

शुण्ठ्यादि क्वाथ· (९) (व. से. ज्वरा)—सोंठ, त्रिफला, नागरमोथा और खस समान भाग लेकर क्वाथ बनावे। यह क्वाथ दाह और शीत ज्वर नाशक तथा पाचक है।

शुण्ठ्यादि क्वाथ (१०) (वैद्यामृत)—सोठ, देवदारु, कचूर, पित्तपापडा, कटेरी, कुटकी, चिरायता, नागरमोथा और अनन्तमूल समान भाग लेकर क्वाथ बनावें।

इसमे शहद और पीपल का चूर्ण मिलाकर सेवन करने से तृतीयक ज्वर, जीर्ण ज्वर, कास और विषमज्वर का नाश होता है।

शुण्ठ्यादि क्वाथ (११) (हा. स. स्था. ३ अ ३)—सोठ, अतीस, नागरमोथा, गिलोय, कुड़ा की छाल और कुटकी समान भाग लेकर शीत कषाय बनावे। इसमें शहद मिलाकर पिलाने से ज्वरातिसार नष्ट होता है।

शुण्ठ्यादि पाचनम् (हा. सं स्था. ३ अ. ३)—सोठ, सुगन्ध वाला, नागरमोथा, वेलगिरी, पाठा, अतीस और धनिया समान भाग लेकर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ पाचन तथा अरुचि, छर्दि और ज्वरातिसार नाशक है।

शुण्ठ्यादि महाकषाय. (वृ. यो त त १२०)—सोंठ नीम की छाल, चिरायता, पीपल, पाठा, हल्दी, दारुहल्दी, त्रायमाणा, हर्र, वहेडा, आमला, गिलोय, नागरमोथा, कुटकी, वासा, वच, बावची, मजीठ, अतीस, घमासा, बकायन की छाल, चीता, आंबा हल्दी, इन्द्रायण, कुड़ा की छाल, भारगी, नागरमोथा, इन्द्रजो, मूर्वा, पटोलपत्र, लाल चन्दन, काली निसोत, पित्तपापडा, सारिवा, वायविडङ्ग और खैरसार समान भाग लेकर गोमूत्र में पकाकर क्वाथ बनावें।

गुण—इसके सेवन से १८ प्रकार के कुष्ठ शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं।

शुण्ठी चूर्णम् (वृ नि र वातव्या)—छोटी जाति की सोठ के ३५ तोले चूर्ण को ३५ तोले घृत में भून ले और फिर उसमे ३५ तोले पिसा हुआ लहसन मिलाकर सुरक्षित रक्खे। इसके सेवन से पक्षाघात, हनुस्तम्भ, कटिभग, तीव्रवाहु पीडा और वात व्याधि का नाश होता है।

शुण्ठ्यादि चूर्णम् (१) (शा.स खं. २ अ ६ आमातिसार)—सोठ, अतीस, हीग, नागरमोथा, कुडा की छाल और चीतामूल समान भाग लेकर चूर्ण बनावें। उसे उष्ण जल के साथ सेवन करने से आमातिसार नष्ट होता है। मात्रा-१॥ से २ माशा।

शुण्ठ्यादि चूर्णम् (२) (वृ नि. र. अजीर्णा)—सोठ का चूर्ण और यवक्षार समान भाग लेकर दोनो को एकत्र मिलाकर घी के साथ चाटने या केवल सोठ के चूर्ण को उष्ण जल के साथ सेवन करने से क्षुधा वृद्धि होती है। (मात्रा १॥ से २ माशा)।

शुण्ठ्यादि चूर्णम् ३ (वृ. नि र. कासा.)—सोठ, घमासा, मुनक्का, कचूर, और यवराज (यवास शर्करा तुरजबीन) समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे तेल में मिलाकर चाटने से वातज कास नष्ट होती है। (मात्रा—१॥ माशा)।

शुण्ठ्यादि चूर्णम् [४] [व से। ग्रहण्य.]—सोठ, नागरमोथा और वायविडङ्ग समान भाग लेकर चूर्ण

बनावें ।

इसे सुरा, तक्र या उष्ण जल के साथ सेवन करने से कफज ग्रहणी विकार नष्ट होकर अग्नि दीप्त होती है। (मात्रा-२ माशा) ।

शुण्ठ्यादि चूर्णम् [५] [यो र.स्त्री.]—सोंठ और लोध्र समान भाग लेकर चूर्ण बनावें। इसमें खांड मिलाकर घी के साथ सेवन करने से प्रबल प्रदर रोग भी नष्ट हो जाता है। (मात्रा-२ माशे) ।

शुण्ठ्यादि चूर्णम् [६] [वृ. नि र. वातव्य.]—सोठ कालीमिर्च, और देवदारु समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे इन्हीं औषधियों के क्वाथ के साथ सेवन करने से समस्त वातज रोग नष्ट होते हैं।

शुण्ठ्यादि चूर्णम् [७] [गो र अतिसारा.]—सोंठ, कालीमिर्च और भांग (अथवा अतीस) समान भाग लेकर चूर्ण बनावें। इसे शीतल जल के साथ सेवन करने से शूल और आमातिसार शीघ्र ही नष्ट होजाता है। पथ्य दही भात। (मात्रा-१॥ माशा) ।

शुण्ठ्यादि चूर्णम् [८] [ग नि. अजीर्णा ५]—यदि अजीर्ण का सन्देह हो और रोग बलवान हो तथा उसका कोष्ठ भी स्निग्ध हो तो उसे भोजन के समय (भोजन से पूर्व) सोठ और हर्रं का समान भाग मिश्रित चूर्ण खिलाना चाहिए। (मात्रा-२ माशे) ।

शुण्ठ्यादियोग [भा प्र. म.ख २ अजीर्णा.]—आमाजीर्ण, अर्श और मलावरोध मे नित्य प्रति सोठ पीपल और हर्रं के समान भाग मिश्रित (२ माशे) चूर्ण को अथवा अनारदाने के चूर्ण को गुड मे मिलाकर खाना चाहिए।

शुण्ठ्याद्य चूर्णम् [१] [ग नि.अग्नि.]—सोठ. सचल, चीतामूल, हर्रं, हीग, अनारदाना और सेंधानमक समान लेकर चूर्ण बनावें।

इसे सेवन करने से अग्निमांद्य का नाश होकर जठराग्नि अत्यन्त तीव्र होजाती है। (मात्रा १॥—२ माशा। अनुपान—उष्ण जल) ।

शुण्ठ्याद्य चूर्णम् [२] [ग. नि. हृद्रोगा. २७] - सोठ, ब्राह्मी, हीग, अनारदाना और अम्लवेत समान भाग लेकर चूर्ण बनावें। इसे उष्ण जल के साथ सेवन करने से श्वास और हृद्रोग का नाश होता है। (मात्रा १ माशा) ।

शुण्ठ्याद्य चूर्णम् [३] [वृ नि. अतिसारा]—सोठ धाय के फूल, मोचरस और अजमोद समान भाग लेकर चूर्ण बनावें। इसे तक्र (मट्ठे) के साथ सेवन करने से उग्र अतिसार भी नष्ट हो जाता है। (मात्रा-३ माशे) ।

शुण्ठ्याद्य चूर्णम् [४] वै. म. र. पटल ३]—सोठ पीपल, मिश्री, आमला और रेणुका समान भाग लेकर चूर्ण बनावें। इसे शहद के साथ चाटने से हिचकी नष्ट हो जाती है। (मात्रा-३ माशा) ।

शुण्ठी खण्ड [१] [भै र अम्लपित्ता.]—२० तोले शुण्ठी चूर्ण को १ सेर घी मे भूनें और फिर उसमे ४ सेर दूध तथा १ सेर खांड मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब अवलेह तैयार हो जाये तो उसे अग्नि से नीचे उतार कर उसमे आमला, धनियाँ, नागरमोथा, पीपल, वंशलोचन, दालचीनी, इलायची, तेजपात, कालाजीरा और हर्रं का चूर्ण ११।-११। माशे तथा कालीमिर्च और नागकेसर का चूर्ण ७॥-७॥ माशे मिला दें। तदनन्तर जब वह ठण्डा हो जाय तो उसमे १५ तोले शहद मिला दे। इसके सेवन से अम्लपित्त शूल, हृद्रोग, वमन और आमवात का नाश होता है। (मात्रा-६ माशे। अनुपान—दूध) ।

शुण्ठीघृतम् (१) [यो. र. ग्रह.]—सोठ के कल्क से पकाया हुआ घृत वातानुलोमक और सग्रहणी, पाडु, तिल्ली, तथा ज्वर नाशक है। (कल्क १० तोले, घी १ सेर, पानी ४ सेर) ।

शुण्ठी घृतम् (२) (यो. र. १ अर्शो०)—१५० तोले सोठ को कूटकर ३२ सेर पानी मे पकावें और ८ सेर पानी शेष रहने पर छान ले। तदनन्तर उसमे ३ सेर घी और २० तोले सोठ का कल्क मिलाकर पकावें। जब पानी जल जाय तो घी को छान ले।

इसके सेवन से अर्श, श्वास, कास, प्लीहा, पाण्डु, विषम ज्वर, तृष्णा और अरुचि का नाश होता है।

सोठ के कल्क और चार गुने पानी के साथ सिद्ध घृत वस्ति और कुक्षि के रोगो को नाश करता है।

(मात्रा—१ तोला)

शुण्ठी धान्यक घृतम् (भा प्र म. ख.२। आमवाता.)—कल्क-२० तोले सोठ और १० तोले धनिये को



पानी के साथ पीस ले। २ सेर घी मे यह कल्क और ८ सेर पानी मिलाकर पकावे। जव पानी जल जाय तो घृत को छान ले। यह घृत वात कफज रोगो को नष्ट करता है तथा यह अग्निवर्द्धक और अर्श, श्वास एव कासनाशक और वल वर्ण वर्धक है।

(मात्रा—१ तोला।)

शुण्ठी तैलम् [व० से०। नासा०]–सोठ, कूठ, पीपल, बेल की छाल और मुनक्का इनके कल्क तथा क्वाथ से सिद्ध तैल या घी की नस्य लेने से क्षवथु रोग (अधिक छींके आना रोग) नष्ट होता है। [कल्कार्थ—प्रत्येक औषधि २ तोले। क्वाथार्थ—प्रत्येक औषधि ३२ तोले, पानी १६ सेर, शेष ४ सेर। तेल या घी १ सेर।)

शुण्ठ्यादि लेप (१) वै. म. र। पटल १६)—सोठ को मकोय या अगस्ति के पत्तो के अथवा गोवर के रस मे पीस कर लेप करने से कोठ (चकते) नष्ट होते है।

शुण्ठ्यादि लेप (२) वै. मृ.। अल.४)—सोठ और अरण्डी की जड़ को (पानी मे) पीसकर लेप करने से योनि शूल नष्ट होता है।

शुण्ठ्यादि लेपः (३) [वै. म. पटल१२]–सोठ को स्त्री के दूध मे पीस कर या सोये को लिकुच (वडहल) के रस मे पीस कर लेप करने से जानु वाहु की वातज पीडा नष्ट होती है।

शुण्ठ्यादि लेप· (४) [यो. र। शिरो]–सोठ, कूठ, पमाड और देवदारु समान भाग लेकर सवको पीसकर भैंस के मूत्र में मिलाकर मन्दोष्ण करके लेप करने से कफज शिर पीडा नष्ट होती है।

शुण्ठी खण्ड (वृ नि र.। आमवाता)—६। सेर सोठ के चूर्ण को २॥ सेर घी मे भूने और उसके भली भांति भुन जाने पर उसमे १६ सेर दूध तथा ३ सेर १० तोले खाण्ड मिलाकर पुन. पकावे। जव वह गाढा हो जाय तो उसमे निम्नलिखित प्रक्षेप मिला सुरक्षित रक्खे—

प्रक्षेप–सोठ, मिर्च, पीपल, दालचीनी, इलायची, तेजपात, केसर, पीपलामूल, अगर, जावित्री, जायफल, चोरक, पाषाणभेद, ताम्र भस्म, वङ्ग भस्म, सुवर्ण माक्षिक भस्म, अभ्रक भस्म, मुण्ड लोह भस्म, तीक्ष्ण लोह भस्म, कान्त लोह भस्म ५-५ तोले।

यह लेह आमवातनाशक, वलवर्णवर्द्धक, आयुवर्द्धक और वलि पलित नाशक है।

(मात्रा—६ माशे।)

सौभाग्य शुण्ठी पाक (१)यो.र।सूतिका)–घी १ सेर, दूध ४ सेर, खांड ३ सेर १० तोले और सोठ का चूर्ण ४० तोले लेकर प्रथम सोठ को घी में मन्दाग्नि पर भूने और फिर उसमें दूध और खांड मिलाकर पकावे। जव अवलेह तैयार होने के निकट आ जाय तो उसमें निम्नलिखित प्रक्षेप मिला दे और पाक वन जाने पर आग से नीचे उतार कर ठण्डा कर लें।

प्रक्षेप–धनिया १५ तोले, सौंफ २५ तोले तथा वाय-विडंग, सफेद और काला जीरा, सोठ, मिर्च, पीपल, नागर मोथा, तेजपात, नागकेसर और छोटी इलायची ५-५ तोले। इनका वारीक चूर्ण वना ले।

यह पाक स्त्रियो के लिये अत्यन्त हितकारी है। तृषा, छर्दि, ज्वर, दाह, शोष, श्वास, कास, प्लीहा और कृमि रोग को नष्ट करता है। इसके सेवन से अग्नि प्रदीप्त होती है।

मात्रा—१ तोले से २ तोले तक।

सौभाग्य शुण्ठी पाक (२) (भै र स्त्री)–सोठ के २ सेर वारीक चूर्ण को १ सेर घी में भूने और जब उसका रग लाल होने लगे तो उसे ४ सेर दूध में मिलाकर उसमे २॥ सेर खाण्ड मिलावे और मिट्टी के दृढ पात्र मे मन्दाग्नि पर पकावे। जव पाक तैयार होने के निकट आ जाय तो उसमे निम्नलिखित प्रक्षेप मिलादें और खूव गाढा हो जाने हुए अग्नि से नीचे उतार कर ठण्डा करलें–

प्रक्षेप—सोठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेडा, आमला, जीरा, दालचीनी, छोटी इलायची, तेजपात, नागकेसर, नागरमोथा, जावित्री, जायफल, धनिया, लौग, सोया, नलिका, मैनफल, अजवायन, अजमोद, धाय के फूल, शता-वर, तालमूली, लोध, गज पीपल, चिरौंजी, गिलोय, कपूर, सफेद चन्दन और लाल चन्दन १।–१। तोला लेकर वारीक चूर्ण वनावे।

(कपूर को थोडे घी के साथ घोटकर मिला चाहिए)।



(मात्रा—१ तोला से २ तोला तक ।) अनुपान—बकरी का दूध ।

यह पाक आमवात, कास, श्वास, पीनस, ग्रहणी रोग, अम्लपित्त, रक्तपित्त, क्षतक्षय और स्त्री रोगो को अत्यन्त शीघ्र नष्ट करता है । इसके सेवन से स्त्रियों के स्तन दृढ होते तथा सौभाग्य की वृद्धि होती है । यह पाक पौष्टिक और धातुवर्द्धक है ।

सौभाग्यशुण्ठी पाक(३)(वृहत)(भै.र. स्त्री रो.)—१ सेर शुण्ठी चर्ण को १० सेर दूध मे पकावें । जब खोये की तरह गाढा हो जाय तो उसे २ सेर घी मे भून लें । पश्चात् २१५ तोले खाण्ड की चाशनी में पकावें । जब पाक हो जाय तब शतावर, विदारीकन्द, मूसली, गोखरू, वला, गिलोय का सत, सोया, श्वेत जीरा, काला जीरा, सोठ, मिर्च, पीपल, चित्रक, दालचीनी, छोटी इलायची, तेजपत्र, अजवायन, तालीशपत्र, कारवी (अजमोदा), सौंफ रास्ना, पुष्करमूल, वंशलोचन, देवदारु, सोया, कचूर, जटामांसी, वच मोचरस, दालचीनी, तेजपत्र, नागकेसर, जीवन्ती, मैथी, वीज मुलहठी, श्वेत चन्दन, लाल चन्दन, वायविडंग, सुगन्धवाला, अडसा छाल, धनिया, कटफल और मोथा, प्रत्येक का चूर्ण २½ तोला, इनका प्रक्षेप दें और अच्छी प्रकार मिला नीचे उतार ले । इसमें पाक मृदु करना चाहिए । मोदक आदि के पाक मे खर पाक निषिद्ध है । पाक करने के पश्चात् मोदक वनाले और शुद्ध पात्र में रक्खे । मात्रा—२॥ तोला से २ तोला तक ।

अनुपान—उपर्युक्त मात्रा मे शहद के साथ इसे सेवन करावे । यह वर्ण्य, वल्य, आयुष्कर, वृष्य, वय स्थापक तथा अग्निप्रदीपक है । यह विशेषतः सूतिका रोग में अत्यन्त हितकर है । इसके सेवन से योनिरोग, प्रदर, योनि दोष, आर्तवदोष, आमवात, शिरोवेदना, सम्पूर्ण शूल,कटि-शूल (कमर दर्द) प्रभृति रोग नष्ट होते है । सम्पूर्ण वातज पित्तज, कफज, द्वन्द्वज तथा सन्निपातज रोगो को शान्त करता है ।

यह वृहत् सौभाग्य शुण्ठी स्त्रियो के सौभाग्य को वढाती है ।

शुण्ठी पुटपाक—सोठ का चूर्ण बनाकर घी का मोयण देकर अरण्डमूल के स्वरस की भावना देकर गोला वनावे, वाद मे इस गोले पर एरण्ड के पत्ते लपेटकर सूतली से वांधकर गीली मिट्टी का लेपन कर दे और अग्नि ऊपर चूरमे के गोले के समान सेकले । लाल हो जाने पर या मिट्टी जलने लगे तब आग से हटाकर मिट्टी और पानी को दूर करके दवा के ठण्डा होने पर गोले को निचोडकर स्वरस निकाल ले और २ तोले की मात्रा मे पिलावे ।

उदरशूल, अग्निमांद्य, आमवात, आध्मान पर उत्तम है ।

—आर्य औषध

सौभाग्य शुण्ठीपाक—अहमदावादी सोठ ३२ तोला का वारीक वस्त्रपूत चूर्ण को गाय के ३२ तोले घी मे भली प्रकार मिला करके आठ सेर गाय के दूध मे डालकर उसका मावा (खोवा) तैयार करे । वाद मे इस मावे को घी मे भूनलें । पश्चात् ८ सेर खाण्ड की चाशनी तैयार करके यह भुना हुआ मावा मिला दे और नीचे लिखी हुई दवाइयो का वस्त्रपूत प्रक्षेप भी मिला देवें ।

प्रक्षेप—धनिया ३ माशा, सौंफ १¼ तोला, वायविडंग, सोठ, नागकेसर, कालीमिर्च, पीपल और नागरमोथा ८-८ तो., लोह भस्म, अभ्रकभस्म प्रत्येक १¼ तोला डालकर मिला लें वाद मे इच्छानुसार वादाम, पिश्ता, चिरौंजी आदि कतर के डालें और ऊपर से थोडा गरम घी भी डाले । यह सौभाग्य शुण्ठीपाक है । (१)×

चूर्ण अक्सीरे हजम (यू चि. सा)—सोठ, मिरच, पिप्पली, नीबू सत्व ५–५ तोला, सैधव लवण २० तोला, पोदीना सत्व १ तोला, बारीक पीस छानकर पोदीना सत्व मिलाकर खरल करें और शीशी मे बन्द रखे ।

मात्रा—१ से २ माशे, भोजनोपरान्त ।

× (१) संस्कृत वैद्यक पुस्तको मे घी में भूनने और ऊपर घी डालने का उल्लेख नहीं है, किन्तु घी डालने से पाक बहुत दिनो तक भली प्रकार नरम रहता है, खाने में स्वादिष्ट लगता है और गरमी नहीं देता है । घी के विना पाक सूखी लकडी जैसा होता है जिससे शरीर मे छोटी गरमी फूट निकलती है ।

—आर्य औषध



भोजन को पचाने मे अति गुणकारी है, अर्श नाशक और स्वादिष्ट है।

अहितकर—कण्ठ रोगो के लिए। निवारण—बादाम का तेल और मधु। प्रतिनिधि—पीपल।

सोनकी—देखिये-मूषाकानी न २ भाग ५ पृष्ठ ४२७ पर।

सोनापाती (Tecoma Stans)

यह शोनकादि कुल (Bignoniaceae) की वनस्पति है जिसकी खेती दक्षिणी भारत के कुछ भागो में की जाती है।

नाम–

ता०—सोनापाती, नागमम वागम। ने०—पोचा गोटल। सतारा—पुत्तना। ले०—टेकोमा स्टेन्स (Tecoma stans, H B K) और स्टेनोलोबियम स्टेन्स [Stenolobium-stans, Seem]।

गुण धर्म और प्रभाव–

सतारा जिले मे इस वनस्पति की जड साप के विष, विच्छू के विष तथा जहरीले चूहे के विष की एक उत्तम औषधि मानी जाती है। इसकी जड़ को नींम्बू के रस के साथ अथवा नीबू का रस न मिलने पर पानी के साथ पीसकर काटे हुए स्थान पर लगाते हैं और उसको एक बडे चम्मच की मात्रा मे थोडी थोडी देर में पिलाते हैं।

केस और महस्कर के मतानुसार साप और विच्छू के विष पर यह वनस्पति निरुपयोगी है। [व च]

सोनवल्ली (Chrozophora Rottleri)

यह एरण्डादि कुल [Euphorbiaceae] की एक वर्ष जीवी वनस्पति होती है, इसके पत्ते मासल और मुलायम होते हैं। ये ३-२ से लेकर ६-३ सेण्टीमीटर तक लम्बे होते है। इसके बीज ४ मिलीमीटर लम्बे, चमकदार और रूपहले होते है।

उत्पत्ति स्थान—

यह वनस्पति दक्षिणी—पश्चिमी भारत, उत्तरी भारत और मध्य भारत मे पैदा होती है।

नाम—

स०—सूर्य्यावर्त। हि०—सोनवल्ली, सुवाली। म—सुरावर्त। प०—निलन, टप्पल बूटी। सिंध—सोनवल्ली। गु०—काली अखराड। अ०—टर्नसाल [Turnsole] ले०—क्रोझोफोरा रोटलेरी [Chrozophora Rottleri A guss]।

गुण धर्म और प्रयोग—

यह वनस्पति वामक, तीव्रविरेचक और क्षय पैदा करने वाली होती है। यूरोप मे इसके बीज एक विरेचक वस्तु की तरह उपयोग मे लिए जाते हैं। इस पौधे मे लिटमस (Litmus) नामक एक प्रकार का रङ्गदार द्रव्य पाया जाता है।

सोनासली (Vicoa Auriculata)

यह भृङ्गराजादि कुल (Compositae) का सोनासली का क्षुप १॥ से ३ फीट ऊचा होता है। यह किसी किसी स्थान पर चातुर्मास मे बहुत बडी तादाद मे देखे जाते हैं। किसी जगह इसको झाड या पत्थर का सहारा मिल गया हो तो यह तरसा के समान ४ से ५ फीट लम्बा बढ जाता है। इसमें कदाचित ही शाखायें होती है। किन्तु विशेष करके छोटे क्षुपो मे दो चार लम्बी, पतली, शाखायें निकल कर क्षुप के तने से विशेष ऊपर बढ जाती हैं। ऐसे समय तना का सिर छोटा रह जाता है और कमजोर पड जाता है और यह शाखाओ के ऊपर नही बढ सकता है।

पान—तग और लम्बे। फूल—पीला और फल सूक्ष्म फीका भूरा रग का होता है।





VICOA AURICULATA CASS

मूल—क्षुप के प्रमाण में बहुत छोटा होता है। इसका काष्ठ सफेद रग का। छाल काली या भूरे रग की। गध-सुगधित और स्वाद सुवा के समान चरपरा होता है।

तना और शाखाए—तना या डांडी चलफती हुई, सुतली से स्लेट पेन जैसी जाडी। तरसा के समान सीधी वढी हुई काला, आ गहरा भूरा या ललाई लिए रग की, अथवा बामुनी छाया लिये हुये होती हैं। डाड़ी तथा शाखाओ पर खड़ी लाइनें और सफेद वालो की रोमावली होती है। यह वटकनी, पोची और इसका स्वाद गाजर की लुगदी जैसा होता है।

पान—एकांतर। पत्र दण्ड नही होता, और होता है नो बहुत छोटा होता है। पान १ से ३ इन्च या ७ इन्च लम्वा और $\frac{1}{2}$ लाइन या $\frac{1}{2}$ से $1\frac{1}{2}$ इन्च चौडे होते हैं। पान के नीचे उसकी कोर के दोनो भाग वाहर निकले हुये और शिर पर इसका टेरवा तग हुआ होता हैं। पान की कोर विशेष करके पीछे की ओर झुके हुये मुडी हुई। इसकी ऊपर की सपाटी गहरे हरे रग की या कालास लिये रग की। नीचे की ओर फीकी। इसकी दोनो सपाटो पर सफेद कृष्ण काटो के समान वालो की रोमावली होती है। जिससे इस पर अगुली फिराने से पान की सपाटी खुरदरी लगती है। वास सुगन्धित और स्वाद कडवापन लिये हुये होता है। पान सूकने के वाद विशेष करके ऊपर की ओर काले हो जाते है।

फूल—पुष्प धारण करने वाली सली, डांडी और शाखाओ के किनारे के पास पत्र कोण से निकली हुई होती हैं। यह पतली, लम्बी और सफेद वालो की रोमावलि वाली होती है। इस पर पीले रग का पुष्प चक्र (Flower head) आया हुआ होता है। यह चक्र बहुत से पुष्पो के पास-पास आने से बना हुआ होता है। यह $\frac{1}{4}$ से $\frac{3}{4}$ इन्च व्यास का होता है। इसके नीचे पुष्प पत्र आये हुए होते हैं। ये पत्र फूल से कभी लम्बे और सूक्ष्म वालो की रोमावलि वाले होते है।

फल—बीज (Achenes) सूक्ष्म फीके भूरे रग के और उन पर वारीक रोमावलि और सफेद लम्बे बालो की सिरे पर पीछी होती है।

फूलने फलने का समय—भाद्रपद मास मे पुष्प और कार्तिक मास मे बीज होते हैं।

उत्पत्ति स्थान—

साधारण टेकरियो मे, गोचर भूमि मे, पहाडो के सलो मे इसके क्षुप उगते है। यह भारत के खुश्क भागों मे होती है।

विशेष विवेचन—इसके पुष्प पीले रङ्ग के, सुनहरी या सोने के समान चमकते हुए, बारीक सलाइयो पर आये हुए होते है, जिससे इसको सोनासली कहते है।

नाम—

हिं, राज गु पोरवन्दर—सोनासली, सोनासरी, सोनल। म—सोनकी। ले—विकोआ ओरीक्युलेटा (Vicoa auriculata)।

उपयुक्त अङ्ग—सर्वाङ्ग। मात्रा—१ से २ तोला।

गुण धर्म और प्रयोग—

इसके मूल को पानी मे पीसकर जहरी जानवर के काटने से उत्पन्न सूजन पर लगाया जाता है। इसके पचाङ्ग का क्वाथ सविवात, ताव, अजीर्ण और खट्टे डकार आने से शरीर मे ददोरे उत्पन्न हुए हो उन पर दिया जाता है। पशु के आफरा हो तो सोनासली के क्षुप आमले के पत्तो के साथ रेवारी लोग पशुओ को खिलाते हे। (व व से साभार

१ यह बूटी उत्तम मूत्रल है। इसलिए यहाँ के लोग बद्ध मूत्ररोग मे इसको उवालकर पिलाते हैं जिससे वन्द पेशाव आसानी से खुल जाता है । शोथ (सोजा) जैसे जटिल रोग मे सोनासली, उदर पुच्छी (Justicia diffusa Willd), लाल पुनर्नवा मूल (सूअर साठी की जड), मकोय, ऐखरों (तालमखाना) का क्षुप इनको समान भाग लेकर क्वाथ वनाकर पिलाने से शोथ रोग वहुत जल्दी नष्ट हो जता है।

३ सर्वाङ्ग शोथ पर—इस वूटी के पचाङ्ग का चूर्ण २ तोला लेकर ३२ तोले जल मे मिट्टी के वरतन मे क्वाथ करें। अष्टमाश रहने पर ठण्टा होने पर मसल छानकर दोनो समय या दिन में तीन वक्त पिलाने से ३ या ७ दिन मे सर्वाङ्ग शोथ रोगी रोगमुक्त हो जाता है। परीक्षित है पथ्य—लूका-अलुना। जितने दिन सेवन करे उतने ही और दिन पथ्य के रखे।

जिन रोगियों को अतिसार, सग्रहणी, पेचिस से शोथ हुआ हो और विरेचन की दवा नही दी जा सकती हो वेसे रोगियो के लिये सोनासली का उपरोक्त याग वहुत प्रभावशाली है।

सोप कल्पलता (EPHEDRA SINICA)

यह सोमादि कुल (Gnetaceae) के सोमकल्पलता के छोटे छोटे लगभग ½ फुट से ३ फुट तक ऊचे प्रसरणशील झाडीनुमा क्षुप (Shurb) होते है। इसके ताजे पौवे से हलकी सुगन्धो आती है जो पौधे के शुष्क हो जाने पर लुप्त हो जाती है। इसका कान्ड पतला किन्तु कडा और पर्वों पर कुछ मोटा या ग्रन्थिल सा होता है। इसकी जड मे ही स्तम्भ समूह विकलते हैं, जिनमें से शाखाए फूटती हैं। प्रत्येक ग्रन्थि पर दो अभिमुख या अनेक और एक चक्र मे शाखायें निकलती हैं। ये हरी और रेखाकित होती है। आपातत देखने में सोमकल्पलता की शाखाए पत्र रहित ज्ञात होती है, केवल ग्रन्थियो पर शल्क सदृश पत्र होवे है। पत्र आकार मे छोटी २-२ अथवा कभी ३-३ या ४-४ के चक्र मे स्थित होता हैं। दोनो पत्रो के मूल परस्पर मिले हुए होते है, जिससे काण्ड उनके मध्य से निकला प्रतीत होता हे। पत्र चतुर्पंक्तिक अभिमुख (Decussate) क्रम से स्थिति होती है। इन शल्क पत्रो के मिलने से एक पीताभ या भूरा द्विविभक्त कोष वना होता है। नर पुष्पो की विदण्डिक मजरिया अकेले या २-३ के गुच्छ मे रहती हें। इन पर ४-८ नर पुष्प होते है। नारी पुष्पो की मजरी अकेलो और १-२ पुष्पो की होती है। फल—लट्वाकार रक्तवर्ण एव मांसल तथा ७५-१० मि मी लम्बे होते हे। फल-खाने मे मधुर होता है। एक फल में दो वीज निकलते है। जिनका वर्ण कृष्णाभ होता है। परिचयार्थ चित्रावलोकन कीजिए।

जातिया—सोमकल्पलता की मुख्यतः चार उप जातिया पायी जाती हैं।

(१) एफेड्रा सिनिका [Ephedra sinica, stapf]

(२) एफेड्रा एक्विसेटिना [Ephedra equisetine Bunga]

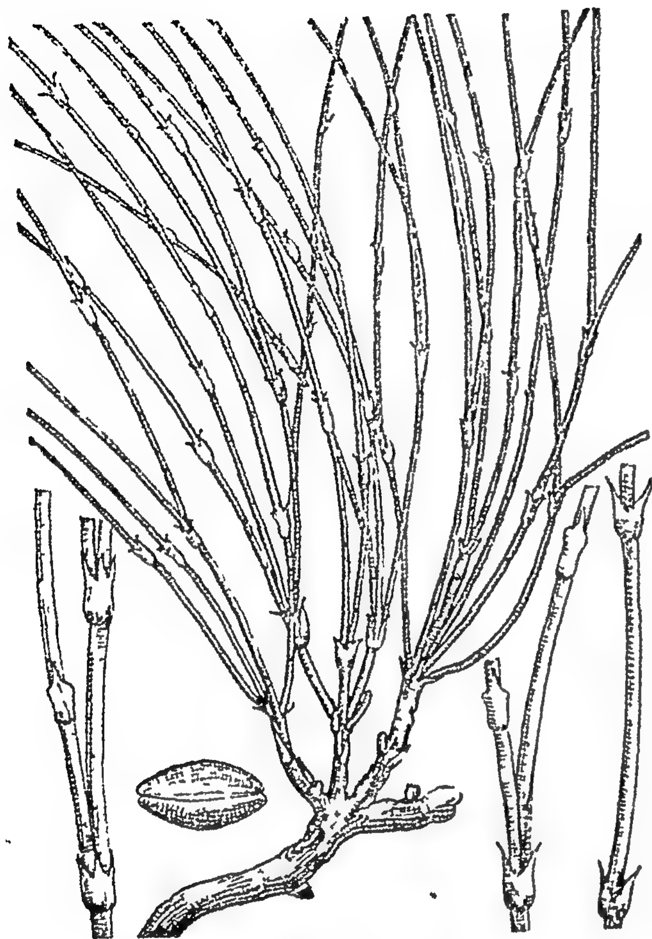
(३) एफेड्रा जिरेर्डिआना [Ephedra gerardiana, wall stapf]

(४) एफेड्रा नेब्रोडेसिस् [Ephedra nebrodensis Tineo stapf]

उपरोक्त जातियो मे से प्रथम दो प्रजातिया एफेड्रा सिनिका तथा ऐफेड्रा एक्विसेटिना भारतवर्ष मे लगभग अप्राप्य है किन्तु चीन मे स्वय जात रूप से उत्पन्न होती है। अत इन दोनो प्रजातियो को चीनी एफेड्रा [Chinese Ephedra] भी कहते हे।

इसके अतिरिक्त अन्य दोनो प्रजातियां (एफेड्रा जिरेर्डिआना और एफेड्रा नेब्रोडेसिस्) भारतीय है तथा ये भी





सोमकल्पलता
EPHEDRA SINICA STAPF

एफेड्रीन की दृष्टि से विशेष महत्व की है। अत इसको भारतीय एफेड्रा [Indian Epherda] भी कहते हैं।

बाजारो मे सोमकल्पलता का शुष्क काण्ड मिलता है जो ग्रन्थियो पर टूटकर टुकडे-टुकडे के रूप मे होता है। बाजार मे यह सोम, सोमकल्पलता या टूटगन्ठा आदि के नाम से बिकता है। इसमें चीड से मिलती जुलती उग्र सुगन्ध पायी जाती है और स्वाद मे यह अत्यन्त कषैली होती है। इसकी सक्रियता इसमें पाये जाने वाले एफेड्रीन नामक क्षाराभ पर निर्भर करती है। उत्पत्ति स्थान एव संग्रह काल आदि का प्रभाव क्षाराभ की मात्रा पर पड़ता है। अत क्षाराभ की मात्रा न्यूनाधिक हो सकती है। उत्तम नमूने मे कम से कम ११४% एफेड्रीन होती है।

उत्पत्ति स्थान–

हिमालय प्रदेश में काश्मीर से सिक्किम तक २१३३.६ से ४८७६ मी की ऊचाई तक विभिन्न क्षेत्रो मे इसके स्वयं जात क्षुप पाये जाते हैं। चम्बा, कुलु, लाहुल, लद्दाख वशहर तथा चकरौता आदि स्थानो मे प्राय इसके पौधे मिलते है। सीमाप्रान्त, वजीरिस्तान एव ईरान मे भी सोमकल्पलता पायी जाती है। इसका सूक्ष्म पचाग बाजारो मे पसारियो के यहा बिकता है। इसको विशिष्ट व्यापारियो के यहा से सीधा भी मगाया जा सकता है। चीन मे इसका औषधार्थ प्रयोग लगभग ५००० वर्ष पूर्व से होता आ रहा है। दक्षिणी चीन के समुद्री किनारो के क्षेत्र में यह औषधि बहुतायत मे पाये जाने के फलस्वरूप इसको वही से सग्रहीत किया जाता है, और वहां से सग्रहीत औषधि का निर्यात यूरोपीय देशो मे कन्टन के बन्दरगाह से होता हे।

स, ब —सोमकल्पलता। हि —सोमकल्पलता, टूटगठा। शिमला, राची—खादा। तिब्बत–सोमा। इरान–हमहूम। बिलोचिस्तान—उमान। अफगानिस्तान–खोक। पं —बुनशुर, चेवा, अमसानिया। सतलज–फोक। राज.–फोग। भारतीय भाषाओ मे—खण्डा, खरना, कुनावर, फोक, जनुसर। बोम्बे और फारसी—हुमा। जापान—माओह, मूपान (Ma--oh, Mupan)। अ –एफेड्रा, माहुवाग (Ephedra, Ma–Huang) ले —एफेड्रा सिनिका (Ephedra Sinica staff)।

रासायनिक संगठन—

सोमकल्पलता के पौधे से एफेड्रीन (Ephedrine) नामक क्षाराभ प्राप्त किया जाता है। भारतीय सोम कल्पलता में एफेड्रीन की प्रतिशत मात्रा ० २६ से २ ८ तक पाया जाता है। एफेड्रान ही इसका मुख्य सक्रिय तत्व होता है जो कि सोम कल्पलता की विभिन्न उपजातियो से प्राप्त किया जाता हे। आजकल आधुनिक युग मे एफेड्रीन कृत्रिम रूप से सश्लेषण द्वारा रसायनशालाओ मे भी निर्मित होता है।

उपयुक्त अङ्ग—सोम के पचाग का औषधार्थ उपयोग किया जाता है। जहां पर इसके ताजे फल प्राप्य हो, वहा

पर इनका प्रयोग भी लाभकारी है।

मात्रा—सोमचूर्ण २ ग्राम। क्वाथार्थ—१ से २ तोला तक।

गुण धर्म और प्रयोग—

रस-कषाय। गुण—उष्ण, रूक्ष, श्वासघ्न। वीर्य—उष्ण। विपाक—अम्ल। यह श्वास, आमवात, कामला, यकृत शोथ तथा क्षुधावर्द्धक है। (वू चि)

सोम कल्पलता का प्रयोग आशुफलदायिनी होने के कारण चिकित्सा के प्राच्य एवं पाश्चात्य दोनों पद्धतियों में बहुतायत से किया जाता है। यह कषाय रस प्रधान होने से तथा काण्ड पीताभ वर्ण के होने के फलस्वरूप उपरोक्त नामकरण किया गया प्रतीत होता है। चीनी भाषा में इसको "मा-हुवाग" कहते हैं। "मा" का अर्थ "कषाय" [एस्ट्रीनजेन्ट] होता है, तथा "हुवाग का अर्थ "पीला" से अभिप्रत है। आधुनिक चिकित्सा में इसके व्यवहार का प्रचार सन् १८८७ ई० के बाद से अधिक हुआ है। सोमकल्पलता का प्रयोग तमक श्वास [Bronchial asthma] में बहुत ही उपयोगी पाया गया है। दौरा पड़ने पर यह औषधि आशुफलदायिनी सिद्ध हुई है। श्वास के अतिरिक्त इसका प्रयोग अनवधानिक स्तब्धता (Anaphylactic shock), शीतपित्त, तृण ज्वर (Hay fever) तथा वाहिनी शोथ (Angioneurotic odema) आदि व्याधियों में किया जाता है। श्वास के दौरे पडने पर सोमचूर्ण २ ग्राम देने पर तत्काल १०-१५ मिनट में आराम हो जाता है। पाश्चात्य चिकित्सा में सोम कल्पलता के टेबलेट एवं इजेक्शन का बहुतायत से प्रयोग किया जाता है।

—डा० भृगुनाथ सिंह जी सचित्र आयुर्वेद मई सन् १९६६ से साभार सकलित

सोमकल्पलता क्वाथ—१ तोला सोमकल्पलता के चूर्ण को ½ सेर जल में मदाग्नि पर औटाया जावे। जब चौथा भाग शेष रह जाय तब ठण्डा होने पर छानकर बोतल में रख लेवें। दिन में ३ वक्त १ औंस की मात्रा में पिलाया जावे।

गुण—आमवात, फिरग, उपदंश, पूयमेह को नष्ट करता है। फल का स्वरस लेने से श्वास प्रणाली के रोगों (कास, श्वास, हिक्का) का नाश होता है।

अर्क का प्रयोग—जलोदर, हृदय रोग, श्वास रोग और निमोनिया आदि रोगों में २ माशे की मात्रा में दिन में ३ बार देने से अच्छा लाभ होता है। (भा नि.)

फुफ्फुसस्थ श्वास वेग पर—सोमकल्पलता सत्व का प्रयोग सफल होता है किन्तु आयुर्वेद मतानुसार उतनी तीव्र दवा न देकर १ माशे सोमकल्पलता के चूर्ण को १ औंस गुलाब जल में भिगोकर पिला देना, अधिक हितावह है। इसके अतिरिक्त तालीसपत्र मिश्रित सोमकल्पलता का चूर्ण भी अधिक लाभ पहुँचाता है।

तालीस सोमकल्पलतादि चूर्ण—तालीसपत्र, सोमकल्पलता, मुलहठी, अडूसे का फूल और पुष्कर मूल, इन ५ औषधियों को समभाग मिलाकर कपड़छन चूर्ण कर लें। मात्रा—१ ग्राम। दिन में ३-४ बार या २-२ घण्टे पर शहद के साथ। (गा औ. र.)

श्वासहर सोम कल्पलता—दौरे के समय जब रोगी 'जल बिना मछली' की भांति तडप रहा हो, उसका खाना, पीना, उठना, बैठना सब कुछ नष्ट हो रहा हो, तब इसके २ ग्राम चूर्ण की एक दो मात्राओं को ताजे जल के साथ दें, दवा अन्दर जाते ही जमा हुआ कफ बाहर निकल जाता है, जिससे श्वास प्रणालियाँ बिल्कुल साफ होजाती हैं और रोगी सुख की नींद सो जाता है। इसके अतिरिक्त नियमित रूप से ३-४ सप्ताह १ माशा प्रात काल और ऐसी ही एक मात्रा रात्रि को सोते समय ताजे पानी के साथ ले लेने से यह रोग सदा के लिए ऐसे भाग जाता है कि 'जैसे शर से बाण' वास्तव में यह श्वास रोग की ही अचूक औषधि है।

आमवात पर सोम कल्पलता—इसका क्वाथ तथा चूर्ण तीव्र तरुण आमवात में भी लाभकारी सिद्ध हुआ है। १०-१२ दिन के प्रयोग से ही सन्धियों की शोथ तथा पीडा दूर होकर रोगी को आराम होजाता है। इ मे. मे. में यहां तक लिखा है कि 'तीव्र आमवात में जहां पाश्चात्य औषधें बिल्कुल व्यर्थ जाती हैं, वहां यह सोम कल्पलता बूटी एक अव्यर्थ महौषध का कार्य देती है।

(क जगन्नाथ जी)

सोम कल्पलता चूर्ण—सोम कल्पलता चूर्ण २० तोला, रस सिन्दूर १ तोला। प्रथम रस सिन्दूर को खरल में घोटें



रेशमवत मुलायम होजाने पर चूर्ण मिला कुछ समय घोट कर शीशी में रख लेवें। मात्रा—१ से २ माशे तक। दौरे के समय दिन में २-३ वार निवाये जल से या मधु के साथ देते है इस से श्वास का दौरा रुक जाता है।

(पं. विश्वेश्वर दयाल जी वैद्यराज
अनुभूत योगमाला वनस्पति विशेषांक
से साभार सकलित)

काली खांसी पर—काली खांसी मे सोम कल्पलता के चूर्ण मे समभाग मुलहठी का चूर्ण मिलाकर प्रयोग करने से रामवाण कार्य करता है। मात्रा—१ वर्ष तक के बच्चे को २ रत्ती दिन मे ४ बार माता के दूध मे अथवा गरम जल से। १० वर्ष तक ४ रत्ती और वयस्को को १ माशा दें। बच्चो की काली खासी का जोर २-३ रोज मे ही कम हो जाता है और २ सप्ताह मे तो पूर्णतः आराम हो जाती है।

(वैद्य प्रकाशचन्द्र जी जैन, आयुर्वेद सेवा सदन, हापुड)

अहितकर—उष्ण प्रकृति को। निवारण-दूध।

सोमवल्खम (Ficus Dalhousiae)

यह वटादिवर्ग और वटादिकुल (Urticaceae) का एक वृक्ष होता है जो नीलगिरि पहाड पर पैदा होता है।

नाम—

दक्षिण—सोमवल्खम। ता०—कल्लाल। ले०—फिकस डेलहोसिया (Ficus dalhousiae Miq)।

गुण धर्म और प्रभाव—

इसके पत्ते यकृत की शिकायतो और चर्म रोगो के अन्दर उपयोग मे लिये जाते है। इसके फल हृदय रोगो के अन्दर उपयोगी होते है। (ब च)

सोया (Peucedanum sowa kurz)

यह हरीतक्यादि वर्ग और गृञ्जनादिकुल (Umbelliferae) का क्षुप १ से ३ फुट तक ऊचा होता है जिसके पत्ते सौंफ के पत्तो के समान किन्तु उनसे छोटे और सुगन्धित होते है।

फूल—मिश्रित छत्र मे पीले, १॥ इच व्यास के, प्राय फल आने पर ३॥ इच तक वढने वाला। पुष्पवृन्त १ से २ इच लम्बा, कोमल। पुष्प शलाका १ से ५ इच लम्बी। पखड़िया ५ पीली। पुकेसर ५। तस्तरी २ खण्ड वाली। बीजाशय २ खण्ड वाले निम्न भाग मे। फूलो के भीतर जो बीज लगते है, वे ही उपयोग में आते हे। फल सौफ के वीज के समान किन्तु उनसे बहुत छोटे एव चपटे होते हे। उनकी चौडाई मे दोनो ओर एक पर जैसी वारीक झिल्ली लगी रहती है। स्वाद किञ्चित तिक्त एव तीक्ष्ण और सुगंधित होता है। इसके पौधे की तरकारी बनायी जाती है।

फूलने फलने का समय–शीतकाल।

इसके १०० तोले बीजो मे ३-४ तोले सुगन्धित तेल निकलता है।

उत्पत्ति स्थान—

भारत के उष्ण और उप उष्ण प्रदेशो मे सर्वत्र बोया जाता है।

नाम—

स०-शतपुष्पा, अतिछत्रा, कारवी, मिसि, मिश्रेया। हि०-सोया, सोआ, सुवा, सेंधी सुवा। ब०-शुल्फा, शोवा, सोवा। म०—बालन्त शेप। गु०-सुवा। बम्बई-बालन्त शेप, सुवा। प —सुवा। सि —सूआ। राज -सोवा सिंधी सोवा। दक्षिणी—सोयी। काश्मीर—सोइ। मलय—चट्टकुप्पा। कन्नड-सब्बासिगे। सिंहली—सदा कुप्पा। ब्राह्मी—समीन। ता०—शतकुप्पि, विराइ। तै०—सोम्पा, शतकुप्पि विट्टुल। उर्दू—सोया। अरबी—शिविप्त। फा०—शूद, वालाने खुर्द। अ.—डिल (Dill) ले०—एनीथम सोआ (Anethum sowa kurz), प्युसिडनम सोआ (Peucedanum sowa-kurz)।

इसके विदेशी भेद को प्युसिडनम ग्रे वियोलेन्स(Peuce

danum graveolens Linn) कहते है ।

रासायनिक संगठन—

बीज मे ३-४ प्रतिशत एक उत्पत् तेल (तथा एक अनुत्पत तेल) जिस पर इसकी सुगन्धि एव कर्म निर्भर करता है। इसके अतिरिक्त एपिओल (Dill apiol) भी होता है।

उपयुक्त अङ्ग—पत्र, बीज (फल) और बीजोत्थ तेल।

मात्रा—बीज २ से ६ माशे। सोया का तेल १ से ३ बूंद तक। अर्क—१ से २ तोला।

गुण धर्म और प्रयोग—

सोया—रस मे कडवा। अनुरस-चरपरा—मधुर। विपाक—चरपरा। वीर्य—किंचित-उष्ण। गुण—स्निग्ध, लघु, तीक्ष्ण, बलप्रद, वृष्य, हृद्य, मेध्य, रुचिवर्द्धक, पाचन, पित्तजनक, तथा वात प्रकोप, कफप्रकोप, प्लीहावृद्धि, कृमि, नेत्र रोग, रक्त विकार, क्षत, क्षय, अर्श, योनिशूल, मलावरोध, कफकास, वमन और अग्निमाद्य का नाशक और वस्तिकर्म मे प्रशस्त है।

पानो का शाक—अग्निदीपक, उष्णवीर्य, रुचिकर, स्तन्यवर्द्धक, वृष्य, पथ्य, वातहर तथा गुल्म, उदरशूल, ज्वर, गर्भाशयशूल आदि का नाशक है। (गा औ र)

यूनानी मतानुसार—

पत्र प्रकृति— े दर्जे मे गरम और पहले मे खुश्क। गुण—कर्म तथा उपयोग—हरे धनिये की तरह सोये के पत्तो को सुगध के लिए तरकारी मे डालते है। यह आहार को पचाता और वायु का उत्सर्ग करता है। अतएव उन रोगियो के आहार मे इसका डालना अधिक उपादेय है जो उदरशूल, उदरानाह और मरोड आदि से ग्रस्त हों। कतिपय दर्दो और सूजनो मे इसका बफारा देने से दर्द शात हो जाता है। यह विशेष रूप से पाचन, विलयन और आर्तवजनन है।

बीज (सोया) और तेल— प्रकृति – तीसरे दर्जे मे गरम और खुश्क। गुण—कर्म – बीज– वेदना स्थापन, वातानुलोमन व्रण शोथ पाचन, विलयन, छर्दिजनन एव मूत्रार्तवजनन है।

उपयोग—इसके बीजो को तिल या जैतून के तेल मे मिलाकर सधिवात मे लेप या मालिश करते हैं तथा जल मे क्वाथ करके वेदनायुक्त अङ्गो को बफारा देते हैं और इसके कोष्ण काढ़े में कपड़े की गद्दी भिगो-भिगो कर टकोर करते हैं। उदरानाह, उदरशूल एव अपचन वा मन्दाग्नि को नष्ट करने के लिये इसे खिलाते हैं। मूत्रार्तव जनन के लिए भी इसका उपयोग करते हैं। कफज रोगो में वमनार्थ इसका क्वाथ पिलाते हैं। वायुजन्य (रीही) वृक्कशूल, वायुजन्य मरोड और जरायु शूल को नष्ट करने के लिये इसके काढ़े मे रोगी को बिठाते हैं। इसके जो से निकाला हुआ तेल उदरानाह शूल और मरोड को नष्ट करने के लिये प्रयुक्त होता है। कर्णशूल निवारण के लिये इसे कान में टपकाते है और पक्षवध, अर्दित, आमवात तथा वातनाडी शूल मे मालिश करते हैं।

डाक्टरी मतानुसार—डा० देसाई के मत से सोया—दीपन, वायुनाशक और गर्भाशय को उत्तेजना देने वाला होता है। प्रसूति काल मे इसके बीजो का उपयोग करना शास्त्र सम्मत है। बच्चो के उदर शूल और पेट के फूलने में इसका अर्क चूने के नितरे हुये पानी मे मिलाकर दिया जाता है। इसके बीज शान्तिदायक और अग्नि वर्द्धक होते हैं, बच्चों की बीमारी मे, जैसे—पाचन शक्ति की कमजोरी, उदर शूल, कब्जियत इत्यादि रोगो में यह एक बेजोड और आश्चर्यजनक वस्तु है। इन कामो के लिये यह अर्क के रूप मे दी जाती है।

उपयोग—

सोया का उपयोग घरेलू औषधि रूप से और आयुर्वेद शास्त्र में प्राचीन काल से हो रहा है। चरक सहिता में आस्थापनोपग और अनुवासनोपग दशेमानियो मे शत पुष्पा का उल्लेख है। अनेक देशो मे प्रसूता की पचनक्रिया और दूध बढाने तथा विष और कीटाणुओ को नष्ट करने के लिये भोजन कर लेने पर मुख शुद्धि के लिये सोया खिलाने का रिवाज है। बालको के उदरशूल, वमन, हिक्का आदि मे इसका अर्क निर्भय रूप से दिया जाता है। यह अर्क पचन क्रिया भी बढाता है। सोया में कुछ गर्भाशयोत्तेजक गुण भी रहा है।

प्रयोग—

अतिसार—मेथीदाने और सोया का चूर्ण मट्ठे या

दही के साथ मिलाकर खिलाने से पचन क्रिया सुधर कर अतिसार दूर हो जाता है। जब दस्त में दुर्गंध आती हो, आम गिरता हो और उदर मे भारीपन रहे तो यह प्रयोग हितावह है।

वातार्श—सूखे मस्से में वेदना होने और सूजन आने पर उसे थोड़े समय गरम जल से सेके। फिर वच और सोया को तेल के साथ पीस निवाया कर पुल्टिस बनाकर बांध देने पर शोथ और शूल दोनो नष्ट होकर वातार्श शमन हो जाता है।

उदर कृमि—३-४ वर्ष के बालक के उदर मे छोटे छोटे कृमि हो गये हो तो एक माशा सोये का चूर्ण, २ रत्ती डीकामाली और चौथाई रत्ती हीग को थोडे मठ्ठे में मिलाकर सुबह पिला देवे। इस तरह ४-६ दिन तक पिलाते रहने से कृमि मर जाते हैं और नयी उत्पत्ति रुक जाती हैं।

उदर शूल—पचन क्रिया योग्य न होने से भोजन के २-३ घण्टे बाद उदर पीड़ा होती रहती हो तो भोजन करने पर मुख शुद्धि के लिये सोया चबाते रहे और रात्रि को सोने के पहले भी सोया ले लेवें। इस तरह थोड़े दिन तक करते रहने पर अफारा और उदर के भारीपन सह उदर पीड़ा दूर होती है और शौच शुद्धि होती रहती हैं।

यदि उदरशूल, आमाशय क्षय या ग्रहणी के क्षत के कारण से होता हो और साथ में वमन भी हो जाती हो, तो इस प्रयोग से लाभ नही होता। ऐसी अवस्था में सोडा या अपामार्ग क्षार आदि औषधि का सेवन कराया जाता है।

स्तन्य विकृति—प्रसूता के रोज दो तीन बार ६-६ माशे सोया खिलाते रहने से दूध मे से दोष की निवृत्ति होती है और पाचक बनता है, वह शिशु को सरलतापूर्वक पच जाता है। एव इससे दूध की वृद्धि भी होती है।

प्रसूता के अग्निमांद्य—सुकुमार सूतिका की क्षुधा प्राय मन्द हो जाती है। शरीर मे वायु की उत्पत्ति होती है और शारीरिक उत्ताप कुछ बढता है, इन सबको सुधारने के लिए घरेलू औषधियो मे सोया उत्तम और निर्भय औषधि है। सूतिका और शिशु दोनो के लिये हितावह है भोजन के बाद दोनो समय और आवश्यकता हो तो दोपहर को भी सोया ३-६ माशे का सेवन करावे।

—गां० औ० र०

दूध की कमी—सोया के बीजों को मिश्री के साथ मिलाकर खिलाने से अथवा सोये के बीजो का पाक बनाकर खिलाने से स्त्रियो के स्तनो मे दूध बढता है। बालक होने के पश्चात् इसके बीजो का फाण्ट बनाकर पिलाने मे प्रसूता के हृदय को बल मिलता है। प्रसूता स्त्रियो के लिये यह एक बहुमूल्य वस्तु है।

विशिष्ट योग-

शत पुष्पा कल्प (काश्यप संहिता)—नया सोया १० सेर का चूर्ण बनाकर बोतलो मे रख ले। इसमें से १ से २ तोले की मात्रा मे अथवा ४ तोले तक चूर्ण लेकर घी के साथ चाट लें या अपनी शक्ति के अनुसार मात्रा तय करले और जितनी मात्रा पच जाय उतनी गरम घी के साथ चाट लें। भोजन मे दूध भात लेवे। इस प्रकार १० रतल(पौंड) सोया चूर्ण सेवन कर लेने वाला व्यक्ति इच्छा युक्त पुत्रो को प्राप्त कर सकता है। बन्ध्या भी इसके प्रयोग से सन्तान वाली हो जाती है। वृद्ध युवा बनता है और बल वर्ण को प्राप्त करता है, तेजस्विता और ओजस्विता की वृद्धि होती है, बुद्धि बढतीहै, वलि पलित से मुक्त होकर धृति-युक्त बनता है।इस प्रकार प्रतिदिन १ मास तक १ तोला सोया चूर्ण अस- मान मधु घी के साथ चाटने से मेधावी होता है। मन्दाग्नि वाले को मधु से, प्लीहा वाले को सरसो के तेल के साथ। कामला, पाण्डु और शोथ रोगी भैस के दूध या मूत्र के साथ, गुल्म रोगी एरण्ड तेल के साथ, कुष्ठी खैर के क्वाथ के साथ। कार्श्य रोगी—मास रस तथा उडद की खीर के साथ सोया के चूर्ण का सेवन करना चाहिये।

अहितकर—मस्तिष्क, नेत्र और वृक्क को। निवारण-नीबू का रस, लौंग, दालचीनी और मधु।

प्रतिनिधि—सोये के बीज।

सोयाबीन (Soja Bispida)

यह धान्य वर्ग और शिम्बीकुल (Leguminosae) का एक धान्य है। यह वृक्षारोही, वर्षजीवी उद्भिद एक भाडी के रूप मे होता है। पौधे की ऊंचाई ३–४ फीट से अधिक नही होती। पत्र दण्ड लम्बा, पत्रिका डिम्बाकृति, अग्रभाग नोकीला, २ से ४ इन्च लम्बा। पुष्प—वहिर्व्यास १/३ इची, घन रोमावली आच्छादित, पुष्प दल गुच्छ और श्वेत रक्ताभ जिनसे बहुत ही अच्छी भीनी भीनी सुगन्ध आती है। फली—पत्र मूल से निकलती है, लम्बी, वक्र, कोमल रोमयुक्त ११/३ से २ इच लम्बी, १/३ से ३/८ इची चौडी, ४–५ बीजो से युक्त होती है।

फूलने फलने का समय—नवम्बर मास मे फूल और दिसम्बर मास मे फलिया होती हैं।

उत्पत्ति स्थान—

कुमायू, सिक्किम, खासिया पहाड, बग प्रदेश, नागा पहाड हिमालय पर्वत के निकटवर्ती ३००० फीट से ऊपर के उष्ण प्रधान स्थानो मे इसकी कृषि की जाती है।

नाम—

हिं०–सोयाबीन, भाटवान, भाट। ब०—गाडी कलाइ। प०, कुमायू–भूट। पूर्वी तराई—खजुवा। अन्य भारतीय भाषाओ मे—सोयाबीन। अग्रेजी–सोयाबीन Soy Bean) ले०–सोजा बाईस्पिडा (Soja Bispida Moenco) व ग्लिसायन मेक्स (Glycine max Merr)।

विशेष वर्णन—आधुनिक ससार मे जिन कुछ वनस्पतियो ने सारे मानव समाज का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया है तथा जो वस्तुएँ मानवीय शरीर की जीवन रक्षा के लिये बहुमूल्य साबित हुई है उनमें सोयाबीन भी एक है। यह एक प्रकार का दलदार अन्न होता है। इसका पौधा मटर के पौधे की तरह होता है तथा इसकी फली और इसके बीज भी मटर से ही मिलते जुलते होते है। अन्तर इतना ही होता है कि सोयाबीन के बीजो में तेल काफी मात्रा में पाया जाता है मगर मटर के बीजो मे तेल नही रहता।

इतिहास—सोयाबीन का मूल उत्पत्ति स्थान चीन है। चीन की पुरानी किताबो में इसका नाम सोया या सोजा लिखा है और उसी नाम के अपभ्रश से ससार की सब भाषाओ में इसका नामकरण हुआ है। आज से करीब ६००० वर्ष पूर्व चीन मे शेन नग' नामक राजा राज्य करता था। यह राजा हरसाल भारी गाजे-बाजे और उत्सव के साथ सोयाबीन को बोता था और उस दिन सारे चीन मे त्योहार मनाया जाता था। उससे पता चलता है कि करीब ७००० वर्षो से सोयाबीन चीन निवासियो का प्रधान भोजन रहा है।

सोयाबीन करीब १५०० प्रकार का होता है और चीन मे इसके सैकडो नाम हैं। रग भेद से यह काला, हरा और पीला ३ प्रकार का होता है। इसका बीज देखने में मटर की तरह गोल, चपटा, अण्डाकृति मगर दबा हुआ होता है। पीले रग का सोयाबीन देखने मे, खाने मे और गुणो मे सर्वोत्कृष्ट होता है। काले रग का सोयाबीन पशुओ के खाद्य के काम आता है।

सोयाबीन दर असल सेम की जाति की एक चीज है। इसके दाने अरहर के दाने जैसे तथा विभिन्न आकार और नाप के होते हैं। इसका स्वाद वैसा ही होता है जैसे सेम जातीय किसी भी अन्य फली का होता है।

पूर्वी एशिया मे सोयाबीन हमेशा से पैदा होता रहा है। चीन, कोरिया, मगोलिया, मचूरिया और जापान मे यह बहुत प्राचीन काल से पैदा होता है। मगर चीन और जापान के लोगो के सिवाय आज से ५५ वर्ष पहले तक बाहरी दुनिया को इसका पता न था। उन्ही दिनो जापान के कुछ लोगो ने नमूनो के तौर पर इसको इग्लैंड भेजा जब इग्लैण्ड मे इसकी रासायनिक परीक्षा की गई तो इसमे मनुष्य शरीर के लिये उपयोगी अनेक पदार्थों का पता लगा। तब से यूरोपीय देशों मे इसकी माग बढने लगी और माग बढने के साथ ही इसकी खेती को भी प्रोत्साहन मिला और अब तो यह अमेरिका, अफ्रीका, रूस, जर्मनी, इग्लैण्ड, भारत इत्यादि ससार के सब देशो मे पैदा होने-



लगा है। फिर भी आज सारा ससार जितना सोयाबीन पैदा करता है उस सबसे अधिक अकेले मचूरिया मे पैदा होता है। सन् १६२७ मे अकेले मचूरिया मे ११८५ लाख मन सोयाबीन पैदा हुआ था।

सोयाबीन की खेती—सोयाबीन रबी की फसल है। अत' हमारे देश मे जिस ढङ्ग से गेहूँ की खेती की जाती है उसी ढङ्ग से सोयाबीन की भी खेती होती है। जहा कपास की फसल अधिक होती है वैसी जमीन में सोयाबीन खूब फूलता फलता है।

मचूरिया मे जहा सोयाबीन की खेती का प्राधान्य है। एक किसान १६ पौड सोयाबीन के बीज से १६०० पौंड सोयाबीन पैदा करता है। इसी प्रकार रुमानिया मे सोया-की पैदावार लगभग ५००००० टन वार्षिक है। आज समस्त ससार के कृषि विशेषज्ञ सोयाबीन के गुणो पर मुग्ध हैं।

गुण धर्म और प्रभाव—

चिकित्सा शास्त्र की दृष्टि से सोयाबीन का जितना महत्व है उससे बहुत अधिक महत्व आहार शास्त्र या भोजन विज्ञान की दृष्टि से है।

मनुष्य शरीर का पोषण करने के लिए, उसको निरोग रखने के लिए, उसको पुष्ट और कान्तिवान बनाने के लिये तथा उसमे जीवनी शक्ति (Vitality) और रोग प्रतिरोधक शक्ति को कायम रखने के लिये जिन तत्वो की आवश्यकता होती है वे सब सोयाबीन मे प्रचुर मात्रा मे पाये जाते है।

सोयाबीन और मानव स्वास्थ्य—वैज्ञानिको ने प्रयोग करके देखा है कि ससार का कोई भी अन्न या शाक पौष्टि-कता मे सोयबीन की बराबरी नही कर सकता। शरीर रक्षा के लिये तीन पौष्टिक तत्वो प्रोटीन, विटामिन और वसा की विशेष आवश्यकता होती है और ये तीनो तत्व सोयाबीन मे उचित मात्रा मे पाये जाते हैं। अत केवल इसी एक अन्न का निरन्तर सेवन करके हम पोषक तत्वो की कमी के कारण होने वाले अनेक रोगो से बचे रह सकते है।

सोयाबीन का सेवन नियमित रूप से करने मे शरीर की मांसपेशियो का अच्छा विकास होता है तथा मज्जा ततुओ मे पुष्टता आती है। जो शाकाहारी हे उनके लिये तो सोयाबीन वरदान के तुल्य है। सोयाबीन के तेल मे विटामिन 'ए' और 'बी' की अधिकता के कारण यह घी और मक्खन के समान ही उपयोगी और गुणकारी होता है।

सोयाबीन में प्रोटीन ४० प्रतिशत, कार्बोहाइड्रेट्स २४ ६ प्रतिशत, नमक ४८%, विटामिन ए बी और डी, केलशियम, सोडियम मैंगेनीज, फासफोरस और इनके क्षार लवण तथा यौगिक काफी मात्रा मे पाये जाते है। इसके अन्दर धातुज लवण (Salts of matel) चार पांच प्रति-शत पाये जाते हैं।

सोयाबीन मे फासफोरस काफी मात्रा मे रहता है। इस कारण यह मस्तिष्क तथा ज्ञान ततुओ की बीमारियो मे जैसे मृगी, हिस्टीरिया, स्मरण शक्ति की कमजोरी, सूखा रोग और फुफ्फुस सम्बन्धी बीमारियो मे उत्तम पथ्य का काम करता है। सोयाबीन के आटे मे लेसिथिन (Lecit-hin) नामक एक पदार्थ रहता है। यह पदार्थ तपेदिक और ज्ञान ततुओ की बीमारियो मे बहुत लाभ पहुँचाता है।

सोयाबीन के अन्दर पाई जाने वाली प्रोटीन दूसरी सब तरकारियो और अनाजो की प्रोटीन से बढिया होती है। इसकी प्रोटीन गाय के दूध की प्रोटीन से मिलती जुलती होती है।

मास, मछली इत्यादि अपवित्र वस्तुओ मे जितनी प्रोटीन होती है उतनी प्रोटीन सोयाबीन के द्वारा आसानी से प्राप्त की जा सकती है। जितने अन्न और शाक होते है उनमे सोयाबीन की प्रोटीन शरीर के पोषण और हजम होने की दृष्टि से सबसे उत्तम होती है। इसमे करीब-करीब सब खास-२ एमिनो एसिड्स (Amino Acids) खास करके ग्लाईसीन ट्रिप्टोफेट (Glycine trypto-phate) और लाईसीन (Lycine) काफी मात्रा में पाये जाते है।

जाच के पश्चात् यह भी मालूम हुआ है कि सोयाबीन की प्रोटीन मे न्युक्लियो प्रोटीन नही होती। न्युक्लियो प्रोटीन से यूरिक एसिड बनता है जो शरीर के सब जोडो मे जमा होकर गठिया की बीमारी पैदा करता है। मास की प्रोटीन मे न्युक्लियोप्रोटीन होती है जिससे यूरिक



एसिड बनता है और गठिया का मूल कारण होता है। मास की जगह सोयाबीन खाने से प्रोटीन तो मिलती है मगर यूरिक एसिड पैदा नही होता और मनुष्य गठिया तथा गुर्दे की बीमारियो से सुरक्षित रहता है। सोयाबीन की एक विशेषता यह है कि यह शरीर की अम्लता (Acidity) को कम करती है और क्षार की मात्रा को बढाती है। इसलिए शरीर मे अम्लता बढने से जिन-जिन रोगो की उत्पत्ति होत है उनसे यह शरीर की रक्षा करती है।

कामशक्ति के ऊपर भी सोयाबीन अनुकूल प्रभाव डालती है। भारतवासियो के दैनिक भोजन मे उड़द ऐसी वस्तु है जो बहुत काम शक्तिवर्द्धक है। पजाब मे सुबह शाम दोनो समय उडद की दाल खाते हैं इसीसे वहा के लोग इतने पुष्ट और तगडे होते है। लेकिन सोयाबीन उडद से ड्योढी कामशक्तिवर्द्धक है। शाकाहारियो के लिए तो बल बढाने के लिए यह नियामत है।

नाइट्रोजन और तेल भी सोयाबीन में काफी तादाद मे रहता है। इसके अतिरिक्त एक विशेष बात यह है कि इसमे स्टार्च (मैदा) का अश बहुत कम रहता है जो कि शरीर के लिए हानिकर होता है। इसमें नाईट्रोजन, तेल, विटामिन और प्रोटीन सब आवश्ययक चीजें काफी तादाद मे रहती हैं और स्टार्च समान हानिकारक चीज का इसमे अभाव रहता है। यही कारण है कि आहार विज्ञान की दृष्टि से इस वस्तु ने सारे जगत का ध्यान अपनी ओर खीच रक्खा है।

मधुमेह रोग और सोयाबीन—मधुमेह रोग में सोयाबीन एक उत्तम पथ्य है। डाक्टर जोजेफ जेण्टो जोकि एक सेनेटोरियम के प्रधान थे, उनका कहना है कि सोयाबीन मे स्टार्च और कार्बोहाईड्रेट्स इतने कम रहते हैं कि यह मधुमेह के रोगियो को पथ्य के रूप मे निशङ्क होकर दी जा सकती है, यही दो चीजें (स्टार्च और कार्बोहाईड्रेट्स) मधुमेह के रोगियो को हानि पहुचाती हैं। हमारे सेनेटोरियम के कई मरीजो को सोयाबीन का आटा कई प्रकार से दिया और उन्हे हमेशा लाभ हुआ। कई मरीजो का तो यहा तक कहना है कि वे इसी वजह से जिन्दा है नही तो अब तक कभी के खत्म होगये होते। मांस, मछली, मुर्गी, अण्डा तथा दूसरी दालदार चीजें शरीर मे अम्लता पैदा करती हैं लेकिन सोयाबीन शरीर मे क्षार (Alkalinity) पैदा करके उस अम्लता को नष्ट कर देती है। यह रक्त मे क्षार तत्व को पैदा करती है, जिससे रक्त की रोग प्रतिहारक शक्ति बढ़ती है। मास मे रहने वाला प्रोटीन शरीर मे यूरिक एसिड पैदा करके गठिया की बीमारी का मार्ग खोल देता है। यही कारण है कि मास खाने वालो को गठिया और गुर्दे की बीमारियां अधिक होती हैं। मगर यह एक आश्चर्य की बात है कि सोयाबीन का प्रोटीन यूरिक एसिड को नष्ट करके इन रोगो से मनुष्य की रक्षा करता है।

सोयाबीन—से दूध, दही इत्यादि चीजो के सिवाय अन्य अनेक प्रकार की खाद्य सामग्रिया बनती हैं। रूस में एक बार सोयाबीन की प्रदर्शनी हुई थी जिसमें सोयाबीन से बनाई हुई १०० प्रकार की चीजें—जैसे सोयाबीन का दूध, सोयाबीन का दही, चाय, काफी, बिस्कुट, चाकलेट, पूरी, कचौड़ी, समोसा इत्यादि अनेक चीजे दिखाई गई थी जिनको लोगो ने बहुत पसन्द किया था।

सोयाबीन का दूध—यह एक बडे आश्चर्य की और मनोरजक बात है कि जिस प्रकार हमारे यहां गाय, भैंस इत्यादि पशुओ से दूध प्राप्त करके बाजार मे बेचा जाता है उसी प्रकार चीन मे घर घर में तथा बड़ी बडी फैक्टरियो मे सोयाबीन का दूध तैयार किया जाता है। जैसे—यहा बड़ी बड़ी डेरीफार्मो से दूध बोतलो मे भर कर शहरो मे मे बिकने के लिए आता है। वैसे ही वहा सोयाबीन का दूध बोतलो मे भरकर या खुला ही बिकने के लिए आता है। प्रातःकाल अन्धेरा रहते ही हजारो लोग इस दूध को लेकर बेचने को निकल जाते हैं। जायके के लिए जैसे यहा के दूध मे शक्कर मिलाते हैं वैसे ही वहा इसके दूध मे शक्कर मिलाई जाती है।

सोयाबीन का दूध बनाने का तरीका इस प्रकार है—

१४ छटांक पानी को आग पर उबलने के लिए रख दिया जाता है फिर उसमें चम्मच से थोड़ा-थोडा सोयाबीन का आटा डालते जाते हैं और उसे खूब हिलाते जाते हैं, जब दो छटाक आटा उसमे मिल जाता है तब आटा डालना बन्द कर देते हैं और १० मिनट तक उसे और उबालते हैं



और नीचे उतार कर छान लेते है। बस यही सोयाबीन का दूध है।

चीन, जापान, मचूरिया, कोरिया इत्यादि मे सोयाबीन के दूध का लोग बहुत उपयोग करते हैं। इस दूध मे भी गाय, भैस इत्यादि के दूध मे पाये जाने वाले प्रोटीन, चर्वी, शक्कर, साइट्रिक एसिड, एलब्यूलिन, गधक, फासफोरस, केलसियम, लोह और विटामिन इत्यादि तत्व पाये जाते है।

सोयाबीन का दही—सोयाबीन के इस दूध का दही भी जमाया जाता है। एकरत्ती मैगनेशियम क्लोराइड को २ तोला खूब गरम पानी मे घोलकर रख लेते हैं इसमे थोडा सा मिक्श्चर सोयाबीन के दूध मे डाल देने से वह जम जाता है। दही जम जाने पर जो पानी ऊपर आजाता है उसे नितार कर निकाल देते हैं। फिर लकडी के चौकोर ट्रे जो करीब तीन इच गहरे होते है उनमे कपडा विछाकर इस दही को उलट देते है और कपडे के किनारो को उलट कर दही के ऊपर डाल देते हैं। ऊपर से लकडी का एक तख्ता रख देते है। इस प्रकार एक ट्रे के ऊपर दूसरी ट्रे, दूसरी पर तीसरी इस प्रकार कई ट्रे को एक के ऊपर एक जमा कर उन सब के ऊपर एक भारी पत्थर रख देते है और दवाकर दही का पानी निकाल देते है। फिर सब ट्रे को अलग अलग करके दही की चौकोर चकलिया काट लेते है। ये चकलिया इतनी सख्त होजाती है कि हाथ से पकडने पर भी नही टूटती।

इस दही को जापान और चीन में टोफू कहते है। इस टोफू मे प्रोटीन, चर्वी और लवण बहुत होता है।

सोयाबीन का दही न २—सोयाबीन का दूध जब थोड़ा गरम रहे तभी थोड़ा सा गाय के दही का जामन देकर ८ से १२ घण्टे तक रख छोडना चाहिए, दही जम कर तैयार हो जायगा। यही दही रङ्ग, रूप और गुण सब मे गाय के दूध के दही के समान ही होता है।

सोयाबीन का तेल—सोयाबीन के बीजो का तेल भी निकाला जाता है। इस तेल मे भी विटामिन 'ए' तथा दूसरे शक्ति वर्द्धक पदार्थ पाये जाते हैं। इस तेल से लार्डमार गैरीन वनस्पति घी वनता हैं जिसे विलायत मे गरीव लोग घी की जगह खाते हैं। यह स्वास्थ्य के लिये उत्तम पौष्टिक और आदर्श खाद्य पदार्थ है।

मट्ठा और मक्खन—सोयाबीन के दही मे उचित मात्रा मे जल मिलाकर मथानी से मथने पर अति उत्तम और स्वादिष्ट मट्ठा बनता हे और मक्खन निकलता है।

छेना और पनीर—सोयाबीन के खोलते हुये दूध मे नीबू का रस आदि डालने से वह फटकर छेना बन जाना है, जिसे कपडे से छान लेना चाहिये। इस छेने से कितनी ही पुष्टि कारक और स्वादिष्ट मिठाइया बनाई ज ती है। जैसे सदेश, पेडा आदि। इस प्रकार इससे एक उत्तम किस्म का पनीर भी वनता है।

दूध चूर्ण (Milk powder)—अन्य दूधो की भाति सोयाबीन के दूध से भी वढिया किस्म का दुग्ध चूर्ण तैयार होता है।

तरकारी—सोयाबीन का ससार की समस्त साग सब्जियो मे एक विशेष स्थान है। इसकी हरी फलियो के साथ आलू आदि मिलाकर स्वादिष्ट तरकारी वनायी जाती है जिसे भात या रोटी के साथ खाने से बहुत उपयोगी सिद्ध होती है। दूध निकालने के बाद जो उबाला हुआ सोयाबीन बच रहता है उसकी भी वडी स्वादिष्ट तरकारी बनती है।

आटा—सोयाबीन को थोडा भूनकर और उसका छिलका उतारकर तत्पश्चात् चक्की मे पीसकर उसका आटा बनाया जाता है। इस आटे को गेहू के आटे के साथ थोडी मात्रा मे मिलाकर रोटी बनाने से रोटी की पौष्टिकता बढ जाती है। नये सोयाबीन के आटे का रङ्ग कुछ पीलाई लिये होता है। जिसका स्वाद बादाम की तरह मधुर होता है। इस आटे से मास दूध तथा अण्डा आदि की कमी पूरी की जाती है। ढाई पौण्ड मास खाकर जितने गुण की उपलब्धि होती है उतना ही गुण १ पौण्ड सोयाबीन के आटे की रोटी खाकर आसानी से प्राप्त किया जा सकता है। यही कारण कि मचूरिया मे जहां सोयाबीन अधिक पैदा होता है मांस खाने वाले बहुत कम है।

दाल—सोयाबीन को धूप मे सुखाकर उसकी दाल बनाई जाती हे। यह दाल अन्य दालो की भाति ही चावल रोटी के साथ खाई जाती है।

अंकुरित सोयाबीन—चना अथवा मूंग की तरह सोयाबीन को थोडे पानी मे एक रात भिगोकर दूसरे दिन उस पानी को फेंककर आधा ढककर रख देना चाहिये। रोज सबेरे ताजा पानी से उसे धोकर ढक देना चाहिये। ऐसा करने से दो तीन दिनो मे ही सोयाबीन के अकुर निकल आते हैं। तब वह सुपाच्य हो जाता है। उसमे बी और सी विटामिन यथेष्ट मात्रा मे पदा हो जाते हैं।

सोयाबीन का हलुवा—सोयाबीन का दूध तैयार करने के बाद जो उबाला हुआ सोयाबीन बच रहता है उसे चूल्हे पर रखकर थोडा घी, चीनी और पानी डालकर आधा मिनट तक तल लेने के बाद उतार लेना चाहिये।

यह सोयबीन का हलुआ है जो खाने में सूजी के हलुए के समान ही स्वादिष्ट होता है, साथ ही उससे पुष्टिकर भी होता है।

सोयबीन का भूजा—सोयाबीन का भूजा बनाने के लिये उसे पहले नमक मिले जल मे १२ घण्टे रखकर फुला लेना चाहिये। उसके बाद उसका छिलका अलग करके आध घण्टा तक गरम पानी मे उबलाना चाहिए उबालने के बाद उसे बालू मे भून लेना चाहिये। पीलापीला भूजा तैयार हो जावेगा। —आचार्य गङ्गाप्रसाद जी गौड़

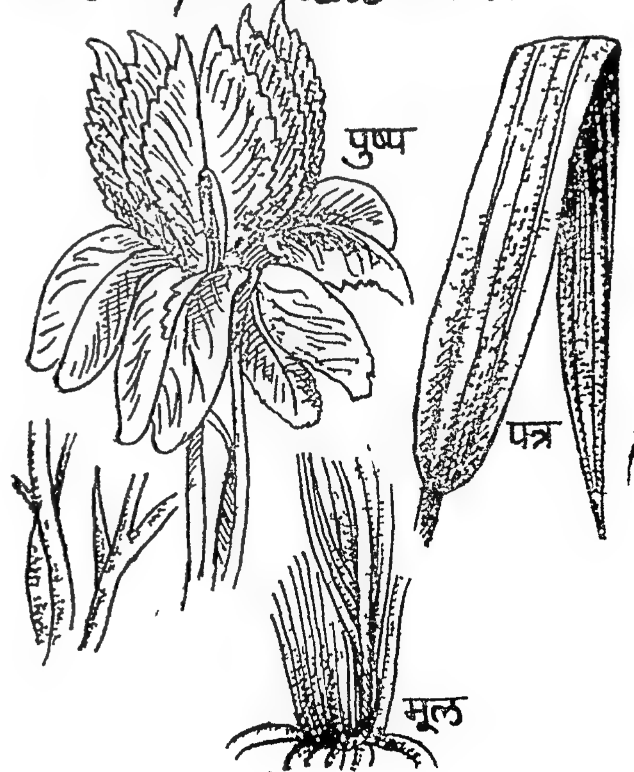
नोट—सोयाबीन (सेम विलायती) के बीज ५००) रुपये पौंड आता है।

पता—विजयसीड कम्पनी, फैजाबाद (उ० प्र०)

'धन्वन्तरि कार्यालय, विजयगढ (अलीगढ) उ० प्र० से भी प्राप्त किये जा सकते हैं।

सोसन (IRIS NEPALENSIS D DON)

यह कुंकुमादि कुल (Iridaceae) की एक वर्ष जीवी वनस्पति होती है। इसकी शाखें ६ से १२ इंच तक ऊंची होती हैं इसके पत्ते फूल आने के समय मे ६ इंच लम्बे होते हे। इसके फूल धूंधले पीले और सुगन्धित होते हैं।



उत्पत्ति स्थान—

यह वनस्पति हिमालय मे पञ्जाब से पश्चिमी तिब्बत और पूर्व की ओर ५०० से १०००० फीट की ऊंचाई तक और खासिया पहाडियो मे ५००० से ८००० फीट की ऊंचाई तक पैदा होती है।

नाम—

हि, प, हिमालय—सोसन, शोति चिलुचि, चाल-नुन्दार। ले.—आयरिस नेपालेन्सिस (Iris nepalensis D Don)।

गुण धर्म और प्रभाव—

इसकी जड बाधा नाशक, आनुलोमिक, मूत्रल और विशेष करके पित्त जनित शिकायतो मे लाभ पहुँचाने वाली होती है। छोटे-छोटे फोडे, फुन्सियो पर यह लेप के काम मे ली जाती है। इसकी एक दूसरी जाति (Iris ensata thunb,) धातु परिवर्तक होती है और रक्त के शुद्ध

करने वाले कई नुस्खो मे यह डाली जाती है। व्यभिचार जनित रोगों मे भी इसका उपयोग किया जाता है। यकृत के रोग जलोदर मे भी यह मुफीद मानी जाती है।

(व० च०)

सौंफ (FOENICULUM VULGARE)

यह हरीतक्यादि वर्ग और गृञ्जनादि कुल (Umbelliferae) का वर्षायु मूल वाला सुगन्धयुक्त सोया की तरह का क्षुर होता है। ऊचाई २ से ३ फीट। तना—चिकना खड़ी शाखाओ वाला। पान ३ से ४ विभाग युक्त, आधा से डेढ इच लम्बा। विभाग—रेशाकार बाल सदृश। छत्र में १५ से २५ शाखाए, १ से १¾ इच लम्बी। फूल—पीले। पखडी ५। पु केसर ५, पखडी से लम्बे इसके फूलो मे बीज होते हैं। बीज के दो विभाग होते हैं प्रत्येक बीज पर ५ लकीरे उभरी हुई होती है। इन बीजो को सौफ कहते हैं। इसकी रगत हरी पीलापन लिए हुए होती है। ये सुगन्ध में प्रिय और स्वाद मे मधुर होते है। सौफ की जड का रग पीलापन लिए हुए सफेद होता है।

उत्पत्ति स्थान—

ससार के सब उपऊष्ण और समशीतोष्ण प्रदेशो मे इसकी कृषि की जाती है।

नाम—

स.—मधुरिका, माधुरी। हि. प —वडी सौफ, सोफ सोप। ब –मौरी, पान मुहोरी। म —वडी शेप। गु —वरियाली। कर्णा.–कासछसिगे। सिध –सौफ। कन्नड –वडीसोपु। अरवी–राजियानज। फा –वादियान, राजियाना। ता —मौहीकिरै। ते – पेद्द जिल करमु। अ —फेनेलसीड (Fennel seed) ले —फिनिक्युलम वल्गेरि—(Foeniculum vulgare Mill) या एनिथम फिनिक्युलम (Anethum foeniculum)।

जडको-हि —सौफ की जड। अरबी—अस्लुराजियानज। फा —वेखे वादियान।

नोट—इसकी भी एक जाति Foeniculum panmorium or Anethum panmorium [जो बगाल मे पायी जाती है जो गुण और आकृति मे यूरोपीय सौफ के समान होती है।

भेद—इसका एक भेद और हे उसका लेटिन नाम पिम्पिनेला एनिसम (Pimpinella anisum Linn) है। स —माधुरी। हि.—सौफ। ब मुहरी। बो —सौफ। म —शोम्बु। फा —अनिसून। अ —एनीज सीड्स (Anise seeds) कहते हैं।

इस जाति की भी कृषि पश्चिमोत्तर भारत, उत्तर प्रदेश, पजाब और उडीसा मे होती है। इस जाति को सोफ मे सुगन्धित तेल विशेष होता है। यह गुण और आकृति मे वडी सौफ के तुल्य है। यह भारतीय सौंफ के समान गुणवाली ईरान की बादियान है इसमे से तेल निकलता है इसे आयल आफ एनिसी (Oil of anise) कहते है। सौंफ के तेल को आयल आफ एनिथी (oil of anethe) कहते हैं और इनको एक दूसरे के स्थान मे प्रयोग किया जाता हैं।

रासायनिक सङ्गठन

सौंफ हलके पीले रग का, सुगन्धित, उडनशील तेल ३ से ५% रहता है। उसके भीतर प्राभाविक द्रव्य एनेथोल (Anethol) ८०% और फेकोन (Fenchone) मिलता है।

उपयुक्त अङ्ग—बीज, जड, बीज तेल।

मात्रा—५ से ६ माशे। जड—६ माशे से १ तोला। तेल—५ से १० बून्द। अर्क—२ से ५ तोला।

गुण धर्म और प्रयोग—

सक्षेप मे—रस—मधुर, कटु, तिक्त। गुण–लघु, स्निग्ध, तीक्ष्ण। वीर्य—किंचित उष्ण। विपाक–मधुर।

सौफ–रस मे मधुर, विपाक मे चरपरी, सारक, लघु, हृद्य, स्निग्ध, रुचिकर, वृष्य, अग्निदीपक, गर्भप्रद, मूत्रार्तव जनन और वल्य हैं तथा वातरोग, ज्वर, उदर शूल, दाह, अर्श, क्षय, नेत्ररोग, कफरोग, रक्त रोग, तृषा व्रण, वमन, अतिसार और आम के प्रकोप को दूर करती है।

(वैं० नि)

सौफ—मधुर, वातपित्त नाशक और भारी है।

(राज वल्लभ)

सौंफ—त्रिदोष नाशक, मेधाजनक, पथ्य और रुचि को उत्पन्न करती है। (आत्रेय संहिता)

सौंफ—को प्लीहा और कृमिनाशक राज निघुण्टु ने विशेष कही है।

सौंफ के अर्क के गुण—

सौंफ का अर्क—शीतल, रुचिकारक, चरपरा, अग्नि को दीपन करने वाला, पाचक, मधुर, तृष्णा, वमन, पित्त और दाह को दूर करता है। (वि० ति० भा०)

नोट—उपरोक्त गुणो के अलावा जो गुण सौंफ मे है वे सब इसके अर्क मे भी है। (अर्क प्रकाश)

खुलासा—

दोष कर्म—यह मधुर स्निग्ध होने से वात तथा तीक्ष्ण, उष्ण होने से कफ की शामक है।

संस्थानिककर्म—

नाडी संस्थान—यह मेध्य तथा दृष्टि शक्ति वर्द्धक है।

पाचन संस्थान—तृष्णनिग्रहण, छर्दिनिग्रहण, दीपन, पाचन, अनुलोमन हे।

रक्तवह संस्थान—यह हृद्य तथा रक्त प्रसादन है।

श्वास संस्थान—कफघ्न कफ नि सारक है।

मूत्रवह संस्थान—मूत्रल है।

प्रजनन संस्थान—यह आर्तव जनन तथा स्तन्य जनन है।

त्वचा—स्वेद जनन है।

तापक्रम—ज्वरघ्न तथा दाह प्रशमन है।

सात्मीकरण—मधुर विपाक होने से बल वर्द्धक है।

प्रभाव—

दोषोपयोग—सौंफ कफ वात जन्य विकारो मे प्रयुक्त होती है।

नाडी संस्थानोपयोग—मस्तिष्क दौर्बल्य तथा दृष्टि दौर्बल्य मे इसका स्वरस देते है।

पाचन संस्थानोपयोग—वमन, तृष्णा, अग्निमाद्य, अजीर्ण, आध्मान, उदरशूल, प्रवाहिका एवं अर्श में प्रयुक्त होती हे। प्रवाहिका मे देने से आमदोष का पाचन होता है।

वायु का अनुलोमन होने से आमदोष बाहर निकलता है तथा मरोड़ कम होती है। मरोड कम करने के लिये विरेचन औषधो के साथ भी इसे मिलाते हैं। रेचन मे मूल का प्रयोग करते है।

रक्तवह संस्थान—हृद्रोग तथा रक्तविकारो में उपयोगी है।

श्वसन संस्थान—कास और श्वास में लाभकारी है।

मूत्र वह संस्थान—मूत्रकृच्छ, मूत्राघात आदि मे इसका प्रयोग करते हैं।

प्रजनन संस्थान—कष्टार्तव, रजोरोध एवं स्तन्य विकारो मे प्रयुक्त होती है।

तापक्रम—ज्वर तथा दाह मे प्रयोग होता है।

सात्मीकरण - दौर्बल्य मे उपयोगी है।

यूनानी मतानुसार—

सौंफ की प्रकृति—सौंफ दूसरे दर्जे मे गरम और पहले खुश्क है।

सौंफ की जड की प्रकृति—दूसरे दर्जे में गरम और खुश्क है।

सौंफ—सुद्दो (गांठो) को तोडने वाली है और पेट की वायु को मिटाती है इससे डकारें खूब आती हैं। आमाशयोत्पन्न चिकने और दूषित पदार्थों को नष्ट करती है। आमाशय की गरमी के वास्ते हितावह है किसी दवा मे शामिल करने से उसका अनुपान बन जाती है। इसमे कब्ज पैदा करने की शक्ति भी है। दस्तो को बन्द करती है जबकि इसको भून लिया गया हो। पेट पर लेप करने से भी वायु को निकालती है। ब्रिटिश फार्मकोपिया सन् १९३२ मे भी इसका वर्णन है। प्रसूताओ का दूध बढाने के लिये भी इसका प्रयोग करते हैं। इसको बेस्वाद दवाओ के स्वाद का सुधार करने मे भी प्रयोग किया जाता है।

उपयोग—

सौंफ का उपयोग प्राचीन काल से मुख शुद्धि और घरलू औषधि के रूप मे रहा हे। ज्वरो मे जब वमन होती है और उदर मे आभ उत्पन्न होता है, तब सौंफ के अर्क का उपयोग किया जाता है। सौंफ जैसा उपयोगी पदार्थ हर गृहस्थ के घर में सदा रहना चाहिये।

प्रयोग—

सौंफ की गिरी निकालकर एक हथेली भरकर पानी के साथ लिया करे। इससे मस्तिष्क बलवान हो जाता है

कब्ज की शिकायत दूर हो जाती है। आमाशय अपनी क्रिया में सबल नन जाता है।

सौंफ १ तोला, पानी ४० तोला को मन्दी आग पर औटाते हुये १० तोला पानी शेष रहने पर पीने से सिर के दर्द को लाभ हो जाता है।

सिर चकराना—सौंफ चूर्ण ६ माशा में समान खाड़ मिलाकर लेने से कुछ समय मे सिर के चक्कर बन्द हो जाते है।

अनिद्रा—सौंफ ६ माशा, पानी ४० तोला लेकर क्वाथ करें, चतुर्थान्श रहने पर उसमे एक पाव गाय का दूध और १ तोला गाय का घी मिलाकर पिलाया करें। लाभकारी है।

अधिक निद्रा—सौंफ यवकुट ६ माशा, पानी ४० तोला शेष १० तोला। रहने पर कुछ नमक मिलाकर सुबह-शाम पीना चाहिये।

उन्माद—सौंफ १ तोला, १२ छटाक जल मे जोश देकर आधा भाग रहने पर छानकर १ तोला मिश्री मिलाकर पिलावें। इससे वायु और कफज उन्माद मिट जाते हैं।

सौंफ १ तोला को ४ छटाक (२० तोला) पानी मे घोटकर १ तोला खाण्ड मिलाकर पिलावें। यह पित्तज उन्माद को मिटाता है।

नजला और जुकाम के लिये—सौंफ यवकुट १ तोला, खाण्ड २ तोला, आधा सेर पानी मे क्वाथ करें, चतुर्थान्श रहने पर छानकर निवाया वार-वार पिलावे। नजला और जुकाम के लिये लाभकारी है।

नेत्ररोग—सौंफ १ पाव, २ सेर पानी मे तावे की डेगची में रात भर भिगोवें, सुवह उवाले। आधा सेर जल रहने पर ठण्डाकर हाथों से मले और वस्त्रपूत कर धीमी आग पर पकावे। जब अवलेह (रस क्रिया) जैसा हो जाय सुरक्षित रखे। रात को सोते वक्त २–२ सलाई आंखो मे डालना मुफीद है।

सौंफ ६ माशा कूटकर पोटली बनावे और गुलाब जल या पानी मे भिगोकर आखो पर फिरावे। लाभकारी है।

सौंफ के हरे पत्तो का रस निकाले और खरल मे घोटते रहे यहा तक कि चूर्ण बन जाय। रात को सोते वक्त तीन सलाई आखो मे डाले लाभकारी है।

कम दिखाई देना—सौंफ की गिरी १ तोला की मात्रा मे खांड़ मिलाकर गाय के दूध के साथ लेना लाभकर है।

सौंफ की गिरी २ तोला सोते वक्त और १ तोला सुबह के समय पानी या दूध के साथ कम से कम ४० दिन लेने से दृष्टि की कमी को दूर कर नजर को तेज करती है।

कान के रोग—सौंफ २ तोले यवकुट कर १ सेर पानी मे औटावे, कान मे उसकी भाप देने से वायुसे उत्पन्न कर्ण रोग आराम होगा।

बहरापन—सौंफ ६ माशा को यवकुट कर १ पाव पानी मे औटावे, चौथाई भाग रहने पर गाय का दूध एक पाव, घी एक तोले और कुछ खाड मिलाकर चाय की तरह सुवह शाम पीने से दिमाग मे ताकत आकर बहरापन जाता रहेगा।

सौंफ यवकुट १ तोले को १ सेर पानी मे औटावे, ६ छटाक रहने पर कुछ फिटकरी मिलाकर कुल्ले करने से मुख के छालो मे फायदा होता है।

मुख की दुर्गन्धि—सौंफ ३ माशा मुह मे चवाते रहे कुछ दिनो मे ठीक हो जायगा।

हकलावा—यवकुट सौंफ ½ तोला, डेढ पाव पानी मे औटावे, शेष आधा पाव रहने पर १ तोले मिश्री और एक पाव गाय का दूध मिलाकर पिलाया करे।

छाती और गले के रोग—सौंफ यवकुट १ तोले आधा सेर पानी मे औटावे जव ½ पाव रह जाय छान के मिश्री मिलाकर गरम–गरम पिलावे। इससे स्वर भङ्ग (बैठी हुई आवाज) खुल जाती है।

खासी—यवकुट सौंफ १ तोले, पानी आधा सेर, शेप एक पाव रहने पर एक तोले मधु मिला, प्रात साय, खासी मे पिलाना मुफीद है।

दमा और खासी—सौंफ ५ तोले को मिट्टी के बरतन मे रख के उसमे आक का दूध इतना डाले कि वो तर हो जाय फिर छाया मे सुखावे। इस तरह तीन भावनाये दे फिर सपुट कर ग्यारह सेर उपलो मे आग दे। यदि भस्म तैयार हो तो ठीक है वरना फिर इसी तरह आच दे और खरल कर शीशी मे रखे। कफ आता हो तो खाड मे वरन

मलाई मे देवे। मात्रा-½ से १ रत्ती।

सौंफ एक तोले, पानी आधा सेर, शेष चतुर्थांश रहने पर १ तोला घी मिलाकर पिलावे। गुण-उपरोक्त है।

इस योग में घी के स्थान पर नमक एक माशा मिलाकर पिलाने से छाती के रोग मिटते हैं।

आमाशय का भारीपन—सौंफ यवकुट १ हथेली भर सुवह और शाम पानी से लें।

सौंफ का चूर्ण ५ तोला, गुलकन्द १५ तोला में मिलाकर रख ले। दोनो वक्त ५-५ तोला सेवन करें। आमाशय के भारीपन को दूर करने के साथ कब्ज को भी लाभ पहुचाता है।

आध्मान-सौफ २ तोला, को पानी १ सेर मे औटावे, चतुर्थांश रहने पर छान ले, उसमे सेंधव और काला नमक २ माशा मिलाकर पिलावें। कुछ दिनो के सेवन से अफारा दूर हो जायेगा।

अतिसार—सौफ को कच्ची पक्की करके बराबर मिश्री मिलाकर रखलें। इसमे से ५ माशा दिन मे ३ वक्त गाय के तक्र से ले।

सौफ आधा तोला को एक पाव दूध मे घोट छान के मिश्री मिलाकर पिलावे। २-३ वक्त लेने से ज्यादे दस्त होना वन्द हो जायेगा।

पेशाव की रुकावट—सौफ १ तोला, पानी ४० तोला, ठण्डाई की तरह घोट कर मिश्री मिलालें। शोरा १ माशा वारीक पीसे हुए की फकी लेकर से यह ठण्डाई पिलावे। पेशाब साफ आयेगा।

नये सोजाक मे—यवकुट सौफ १ तोला, पानी आधा सेर में फाण्ट तैयार करें। यवक्षार वारीक पीसा हुआ १ माशा खिलाकर ऊपर से यह फाण्ट पिलावे। नये सुजाक मे मुफीद है। इससे वन्द पेशाव भी जारी होगा।

सौफ ५ तोला, १० सेर पानी मे औटावें, जब उबाल आ जाय तो टब मे डाल उसमे निवाये रहने की हालत मे रोगी को बैठावें पेशाव आ जावेगा।

स्त्री रोग—ऋतु धर्म (हिज) जारी करना—यवकुट सौंफ २ तोला, गुड २ तोला, १ सेर मे पानी में काढा वनावें, चतुर्थांश रहने पर छान कर मदोष्ण पिलावें।

सौंफ चूर्ण आधा सेर मे खाड आधा सेर मिलावें। १ तोला की मात्रा मे प्रातः साय गरम दूध के साथ ४० दिन ले। हेज जरूर खुल जावेगा। परीक्षित है।

वांझापन—सौफ चूर्ण १ तोला, गुलकन्द ५ तोला, रात को गाय के गरम दूध के साथ लिया करें। ४० दिन के प्रयोग से वाझापन दूर होती है।

अत्यार्त्तव-एक सेर सौफ के ७ भाग करें। एक भाग को रात के समय मिट्टी के कुल्हड़ मे भिगो दें, प्रात. घोट छान मिश्री मिलाकर पिलावे। शाम के लिये फिर एक भाग को भिगो दे, और शाम को घोट छानकर पिला दें। नमक कम खावें, खटाई वादी और गरम चीजो से परहेज करे। पथ्य ७ दिन पालन करे। अनुभूत है।

प्रसव मे विलम्ब होना—सौफ यवकुट २ तोला का १ सेर पानी मे क्वाथ करे, जव पानी आधा रह जाय तब उसमे २ तोला मिश्री और १ तोला गाय का घी मिला कर मदोष्ण पिलावे। २-३ बार प्रयोग करने से सुख से प्रसव हो जाता है।

प्रसवोत्तर स्त्राव मे कमी—सौफ यवकुट २ तोला को १ सेर पानी में क्वाथ करें, चतुर्थांश रहने पर खांड २ तोला, दूध १ पाव मिला कर सुवह-शाम पिलावे। ३-४ बार लेने से स्राव कम हो गया हो या बन्द हो गया हो तो जारी हो जायेगा।

दूध की कमी—सौंफ, १ पाव, १ पावमिश्री का चूर्ण बना लें। १½ तोला की मात्रा मे सुबह और शाम को दूध के साथ सेवन करे।

गर्भवती का कब्ज—सौफ १० तोला को बारीक पीस कर गुल कन्द २० तोला मे मिलाकर रख ले १½ तोला गरम दूध से कब्ज के वक्त सेवन करे।

गर्भवती की उल्टी—सौफ ६ माशा कीपोटली बनाके आधा सेर दूध मे औटावे, ३ उबाल आने पर नीचे उतार थोडी मिश्री मिलाकर पिलावें।

ज्वर—सौंफ२ तोला को कडाही में कच्ची-पक्की भून ले फिर १ तोला खाड मिला चूर्ण बनावे और उसी वक्त रोगी को सेवन कराके गरम पानी पिलाकर कपडा ओढा दे। पसीना आकर ज्वर उतर जायगा।

शीत ज्वर—सौफ यवकुट १ तोला को, एक सेर पानी मे औटावे, अर्धांश रहे तब छान, मिश्री १ तोला मिलाकर



दिन मे ३ वक्त पिलावें। ज्वर के समय देने मे ज्वर उतरेगा और विरामावस्था मे देने से ज्वर को रोकेगा। इससे प्यास और पेट का दर्द भी मिटता है।

गरमी के मौसम की फुन्सियां—सौंफ यवकुट ५ तोला को रात के वक्त पानी के घडे मे भिगो दे, सुबह स्नान करें।

मस्तिष्क के लिये—सौंफ ६ माशा, मिश्री ६ माशा, बादाम मग्ज ७ वारीक पीसकर सोते वक्त लेकर दूध पीने से दिमाग के बल की वृद्धि होती है।

पेचिश—सौंफ ५ तोला, छोटी हरड भुनी ५ तोले, दोनो का चूर्ण तैयार कर उसमे १० तोले खाड मिलाकर १½ तोले की मात्रा में पानी या चावल के माड केसाथ लेने से पेचिश मिटती है।

गर्भस्थापनार्थ-सौफ २० तोले, पीपल जटा २० तोले, खाड २० तोले का वारीक चूर्ण बनालें। शुरू हैज से स्त्री-पुरुष १½ तोले की मात्रा मे दोनो वक्त दूध से ले। ११ वे दिन स्त्री सेवन करे। गर्भ रहेगा।

खुजली—सौंफ एक पाव, धनिया एक पाव को वारीक पीसकर इसमें तीन पाव घी और एक सेर मिश्री मिलाकर रखे। सुबह और शाम ५-५ तोले की मात्रा मे सेवन करे। प्रत्येक प्रकार की खारिश और खुजली मे मुफीद है।

प्रवाहिका—सौफ ५ तोले, वेलगिरी २½ तोले धाय के फूल २½ तोला का चूर्ण वनाकर १सेर पानी में भिगोकर सुबह चतुर्थांश काढा कर आध सेर मिश्री डालकर शरबत बनावे। मात्रा १ से २ तोले दिन मे ३ वक्त पिलावे।

बच्चो का पाचन विकार—सौफ एक तोला को आधा सेर पानी मे औटावे आधा रहने पर भुना सुहागा ३ माशा, खांड एक पाव मिला शरवत बनावे। मात्रा—१ से ३ माशा तक। बच्चो के हाजमे के वास्ते मुफीद है।

स्वर भेद—सौंफ यवकुट १½ पाव एक सेर पानी मे मे औटावे, ⅓ भाग रहने पर मल-छानकर उसमे आधा सेर वूरा मिलाकर शरबत की एक तारी चाशनी ले लें। मात्रा-६ माशा। दिन मे ३ वक्त दे।

सौफ ६ माशा, मीठे वादाम का मग्ज ७, छोटी इलायची के ३ डोडो के दाने, पानी आधा सेर में घोट छानकर पिलावे। दिमाग को तरावट देती है।

हैजे पर क्वाथ—सौंफ १ तोला, पौदीना ६ माशा, लौग ४, गुलकन्द २ तोले, डेढ पाव पानी मे औटावे, ⅓ भाग रहने पर थोडा-थोडा हैजे के रोगी को पिलावे।

बदहजमी—सौफ ६ माशा, सोठ ३ माशा, मिश्री एक तोला। सबको वारीक पीसकर रखले और दिन मे ३ बार गरम पानी के साथ दिया करें। प्राय प्रत्येक प्रकार की बदहजमी इससे शांत हो जाती है।

पेचिस के लिए अक्सीरी काला चूर्ण—जवाहरडे ५ तोले लेकर घी मे भून ले उसमे ५ तोला सौफ का चूर्ण मिला दे और दोनो के समान दस तोला खाड मिलाकर एक तोला से डेढ तोले तक की मात्रा पानी या चावलो के पानी से दिन मे ३ बार दिया करें। इससे पहले गुद्दे (मल की गाठे) गिर जायेंगे और फिर स्वय ही पेचिश वन्द हो जायेगी। परीक्षित है।

गर्भवती स्त्री की कै रोकने का उपचार—सौफ ६ माशा कुटी हुई की पोटली बनावे और आधा सेर दूध मे पकावे। दो तीन उबाल आने पर उतार ले और छान कर थोडी खांड मिलाकर दे। वमन आना बन्द हो जाएगा।

दूध को शुद्ध बनाने का चूर्ण—सौफ आध सेर, खांड देशी आध सेर, दोनो को अत्यन्त वारीक पीसकर चूर्ण बनाले और शीशी मे रखले।

सेवन विधि—रात्रि को सोते समय २ तोले की मात्रा लेकर दूध के साथ खिला दिया करे और थोडे समय के के बाद देखले कि जो बच्चा सदैव बीमार रहा करता था अब कैसा स्वस्थ होगया है। लबे समय तक सेवन कराते रहने से बालक पूर्ण स्वस्थ होजाता है।

अनुपान चूर्ण—सौंफ २॥ तोला, जीरा डेढ तोला, मिश्री डेढ तोला लेकर चूर्ण बनाले।

सेवन विधि—हाजमा के लिए इसकी मात्रा ६ माशा है। बदहजमी में एक तोला, पेट की कब्ज को दूर करने के वास्ते डेढ तोला लेवें।

फोतो (अण्ड कोषों) में पानी उतर जाना—सौफ आधा सेर, गुड आधा सेर, घी आधा सेर। पहले घी और गुड को लेकर यथा विधि पाक बनाकर उसमे वारीक पिसी हुई सौंफ मिलाकर छटाक छटांक भर के लड्डू बनाले।

सेवन विधि—एक लड्डू या स्वस्थ पुरुष को दो लड्डू

प्रतिदिन खाने को दिया करें।

गुण—एक ओर के फोते मे पानी उतर आना अथवा दर्द हो जाना या खुजली होजाने के लिए विशेष लाभप्रद है।

स्वर्गीय ठण्डाई—सौफ, कासनी, काहू के बीज, कुलफे के बीज, गुलाब के फूल, कमल गट्टे की मगज, चन्दन का बुरादा, खस, कालीमिर्च, सफेद मिर्च, छोटी इलायची, ककड़ी का मगज, खरबूजे का मगज, पेठे के मगज प्रत्येक २-२ तोला लेकर कूटकर बोतल में रखलें। गरमी के दिनो मे उपर्युक्त स्वर्गीय ठण्डाईको एक तोले की मात्रा मे लेकर ५-७ बादामगिरी के साथ सिल पर खूब महीन पीसे और एक गिलास जल मे छानकर पीलें। अगर किसी को भाग माफकत हो तो दो-चार रत्ती भांग भी एक खुराक मे डाल दे। जो लोग गरमी के दिनो मे नियमित रूप से इस ठण्डाई का सेवन करते है उन्हे चकराना, दस्त, वमन, हैजा इत्यादि गरमी से होने वाली अनेक प्रकार की व्याधियो से वे बचे रहते है। ग्रीष्मकाल मे यह ठण्डाई एक अमृत के तुल्य वस्तु है।

विशिष्ट योग—

सौंफ का अवलेह—सौफ चूर्ण ५ तोला को १० तोले गुलाब के गुलकन्द मे मिला ले। रात को सोते वक्त ४ तोले गरम दूध के साथ प्रयोग करें। यह कब्ज कुशा है।

अर्क सौंफ—सौफ यवकुट आधा सेर को ८ सेर जल मे २४ घण्टे भिगोकर नलिका यत्र द्वारा ४ सेर अर्क खीच ले। मात्रा २ से ४ औंस।

गुण—यकृत, आमाशय, वृक्क, मूत्राशय के रोगो मे लाभप्रद है। दोषो को बाहर निकालता है, विशेषतया वातदोष में उत्तम है।

सौंफ की चाय अग्निमाद्य मे—सौफ ४ माशा, जीरा ३ माशा, कालीमिर्च,सोठ, दालचीनी एक-एक माशा, छोटी इलायची के दाने ४ रत्ती को यवकुट कर १० तोले उबलते हुये जल मे डाल के २ मिनट तक उबाल कर ढकदे। २० मिनट बाद छानकर पिलादें। चाहे तो उसमें थोडी शक्कर मिला दे और पीने के समय थोडा नीबू का रस निचोड़ ले। भोजन के बाद भी थोडी थोडी सौफ चबाते रहे, तो एकाध मास में पाचन क्रिया सुधर जाती है।

स्वादिष्ट विरेचन चूर्ण—सौफ चूर्ण, मुलहठी चूर्ण, शुद्ध आमलासार गन्धक ५-५ तोले, चूर्ण सनाय १५ तोले और मिश्री पिसी २० तोले लेकर मिला ले। मात्रा—३ से ६ माशे तक। रात को सोते समय निवाये जल के साथदें।

यह चूर्ण सुबह एक या दो दस्त साफ लाता है। अन्त्र मे उग्रता नही लाता। मलावरोध, आमवृद्धि, शिर दर्द, अर्श, रक्त विकार, पामा, कण्डू आदि रोगो मे उदर शुद्धि के लिये इसका सेवन कराया जाता है। अपचन और आमातिसार मे लेना हो, तब इस चूर्ण के साथ हरड और सोठ का चूर्ण मिला लेने पर विशेष लाभ पहुँचाता है।

सौंफ का तैल उदर कृमि पर—सूत्र सदृश छोटे कृमि (Hook worm) जो विशेषत मध्यान्त्र (Gejunum) मे श्लेष्मिककला में चिपक कर रहते है और रक्त पीते रहते हैं इनसे अफरा, पाण्डुता निर्बलता, पैरो पर शोथ, मलावरोध कभी अतिसार आदि लक्षण उपस्थित होते है। इन कृमियों के उपद्रवो पर सौंफ के तेल को श्रेष्ठ औषधि माना जाता है। मात्रा—पाच से दस बूद तक शिशु को और साठ बून्द तक बडे मनुष्यो को तीन चार दिन शक्कर के साथ दें फिर एरण्ड तैल का जुलाब देने से सब कृमि जीवित और मृत निकल जाते हैं। —गावो मे औषधिरत्न

सौंफ का तेल निकालने की विधि—सौफ यवकुट दो सेर के तीन भाग बनाले। एक भाग को २४ घण्टे तक २० सेर पानी मे भिगोकर अर्क खीच लें बाद मे तीसरा भाग उस अर्क मे मिलाकर अर्क खीचलें। फिर किसी खुले हुए बरतन मे डालकर देखे। अर्क पर सौफ का तैल तैरता हुआ नजर आयगा, उसको रुई के फाये से धीरे-धीरे अलग बरतन मे एकत्रित करले। यह असली सौंफ का तेल है। यदि इस तेल की ३-४ बूद एक बोतल जल मे डाल दे तो अच्छा अर्क सौंफ बन जायगा। इस तेल की दो तीन बूद बताशे मे डालकर खाने से हाजमा बढ जाता है। वायु और पेट के दर्दो को मिटाता है। घी में मिलाकर सिर पर मालिश करना मस्तिष्क के दर्द के वास्ते भी लाभकारी है।

सौंफ का घी—सौंफ के ताजे हरे पौधों को मिट्टी से साफ करके कुचल ले और उनका रस निचोड कर, इससे



आधा गाय का घी मिलाकर कलईदार डेगची मे नरम आग आग पर पकावे। जब पानी जलकर घी मात्र रह जावे तब उतार कर छान ले।

गुण एव प्रयोग—एक–एक तोले, प्रात. सायं, गाय के दूध में मिलाकर पिलावे और शिर पर मालिश करे। अज हद वलकारी दिमाग है और वहुत से रोगो मे सेवन किया जाता है।

अमृत अर्क—तैल सौंफ, पीपरमिट (मैंथोल) अजवायन के फूल (थायमोल), कपूर प्रत्येक एक–एक भाग, नौसादर के फूल ¼ भाग, सौंफ के तैल के सिवाय सबको अलग अलग वारीक करके एक शीशी मे मिलाकर धूप मे रख दे। जब तरल हो जावे तब सौफ का तैल शामिल कर सुरक्षित रखे।

गुण और सेवन विधि—अमृतधारा के अनुसार रोगो मे प्रयोग करे।

गर्भाधान के निमित्त सौंफ का पाक—आधा सेर सौफ, वादाम पाव पाव, आध सेर घी, एक सेर खाड। पहले सौफ को चक्की मे अत्यन्त वारीक पीसकर छान लें, फिर वादाम की गिरियो को गर्म पानी मे भिगोकर छील ले और उन्हे कूट डाले ताकि छोटे छोटे टुकडे वन जावें। वाद मे घी को खूव गरम करें, जव कडकडा जावे तो उसमे पिसी हुई सौंफ मिला दे और फिर खाड मिलाकर उतार ले। शीतल होने पर उसमे वादाम की गिरिया मिला दें। वस पाक तैयार है।

विधि—मासिक धर्म आना शुरू हो उस दिन स्त्री और पुरुष दोनो २–२ तोला प्रात तथा सायकाल गाय के गर्म दूध के साथ सेवन करना प्रारम्भ करे और मासिक धर्म वन्द हो जावे तो उस दिन सम्भोग करें और निरन्तर सात दिन तक इस दवा का सेवन करते हुये सम्भोग करते रहे।

यूनानी विशिष्ट योग—

ज्वारस ऊद मुलैयन(विरेचक अगर अवलेह)—सौफ, अनीसून, पोदीना, मस्तङ्गी रूमी, लघु एला वीज प्रत्येक ३⅗ माशे, अगर हिन्दी, वशलोचन प्रत्येक ७ माशे, फूल गुलाव, सनाय, त्रिवृत प्रत्येक ६ माशे, खाड, शहद, गुलाव अर्क १–१ पाव, इन तीनो का पाक कर वाकी औषधि का चूर्ण कर पाक मे मिलावे।

मात्रा—सात माशे, प्रात काल अर्क सौफ से सेवन करे।

गुण—रेचक है, आमाशय वल्य तथा भूख लगाती है।

प्रवाहिका योग-सौठ, सौंफ, बिल्व प्रत्येक७माशा, खाण्ड १० माशा, सवको कूट छानकर खाड मिला ले।

मात्रा तथा गुण—प्रथम दिन ७ माशा, दूसरे दिन १० माशा, तीसरे दिन ४ माशे पानी के साथ दें। प्रवाहिका मे उत्तम है।

शर्वत इस्तिस्का—द्रव्य और निर्माण विधि—तगर (असारून) छिली हुई मुलहठी, कुसुम वीज (पोट्टलिका वद्ध), सौफ, सौफ की जड, खीरा—ककटी के वीज, शुष्क मकोय, अधकुटा खरवूज के वीज, गोखरू, कासनीबीज, कासनी की जड, वनफशा पुष्प, गावजवान प्रत्येक २ तोला, रेवन्द खताई ६ माशा, वीज निकाला हुआ मुनक्का ४ तोला। इनको मकोय के अर्क मे क्वाथ करके छानलें। फिर हरी कासनी का फाडा हुआ रस आध पाव, हरीमकोय का फाड़ा हुआ रस आध पाव और मिश्री १½ सेर मिलाकर शर्वत की चाशनी करे।

मात्रा और सेवन विधि—यह शोथ मे लाभदायक हैं तथा वृक्क एव वस्ति रोगो मे हितकर है।

शर्वत उसूल—द्रव्य और निर्माण विधि - सौफ की जड की छाल ४¾ तोला, कासनी की जड़ की छाल २। तोला, कवर (करीर भेद) की जड की छाल २। तोला, अजमोद की जड की छाल २। तोला, सौफ २। तोला, अजमोदा २। तोला, कासनी १।। तोला, ऊदवलसा ३।। माशा, पोट्टलिका यद्ध कसूम वीज १।। तोला, खरवूज के वीज १।। तोला, गुलाब पुष्प १ तोला, गाफिस पुष्प ७ माशा, इजखिर मक्की ४ माशा, वालछड ६ माशा, तगर (असारून) ६ माशा, तज ६ माशा, रेवन्दचीनी ६ माशा और हव्व वलसाँ ३।। माशा। इन समस्त द्रव्यो को रात्रि मे आध सेर मकोय के अर्क और आध सेर कासनी के अर्क मे भिगोकर सवेरे क्वाथ करे। फिर छानकर ३ पाव चीनी मिलाकर शर्बत की चाशनी करें। शीतल होने पर रूमी मस्तङ्गी ३।। माशा और धोई हुई लाक्षा (लुक मगसूल)

३॥ माशा महीन पीसकर मिलावे।

मात्रा और अनुपान—३ तोला शर्बत उपयुक्त अनुपान से लेवें। उपयोग—शोथघ्न है।

शर्बत मुदिर हैज—द्रव्य और निर्माण विधि—सौफ, अनीसून, सोयाबीन, मजीठ, खरबूज के बीज, खीरा ककड़ी के बीज, मेथी के दाने, अजमोदा, कासनी, कासनी की जड, अबहल (हाऊबेर), सातर फारसो, तगर (असारून) और गोखरू प्रत्येक आधा तोला, चीनी आधा सेर। यथाविधि शर्कर प्रस्तुत करे और प्रति आध सेर शार्कर में ८ माशा पोटेसियम आयोडाइड और १३ माशा भक्षणीय टिंचर आयोडिन भलीभाति हल करके रखले।

मात्रा और सेवन विधि—१-१ तोला दिन मे ३ बार १२ तोला अर्क सौफ मे मिलाकर उपयोग करें।

गुण तथा उपयोग—यह आर्त्तव शोणित प्रवर्तन के लिए अत्यन्त गुणकारी है।

(यू सि यो. स से साभार सकलित)

खूनी पेचिश का अक्सीर योग—सौफ १ तोला, बेलगिरी १ तोला, धनिया १ तोला, मिश्री ३ तोला। इन सबका चूर्ण तैयार कर इसमे से ६-६ माशा की मात्रा में दिन मे तीन बार ठण्डे पानी के साथ दिया करें। रक्त बद करने के लिए अचूक औषधि है।

(सौफ के गुण तथा उपयोग से)

एलोपैथिक योग—

(१) पल्व ग्लिसिराइजा को (Pulv glycyrrhiza co)। मात्रा—६० से १२० ग्रेन।

द्रव्य—सनाय ८ भाग, मुलहठी ८ भाग, सौफ ४ भाग, शुद्ध गन्धक ४ भाग, चीनी २६ भाग लेकर वस्त्रपूत चूर्ण बनालें। इसमे १६% सनाय रहती है। इससे आयुर्वेद का स्वादिष्ट विरेचन चूर्ण विशेष कार्य करने वाला है। इसी योग का नाम मधुर विरेचन चूर्ण भी है। आयुर्वेद के स्वादिष्ट विरेचन चूर्ण मे सनाय ३०% रहती है।

(२) ऐक्वा ऐनिसि (Aqua anise) आयल ऐनिसि ७ बूद, स्पिरिट रैक्टीफाइड चन्द बून्द, एक्वा (वाटर) २० औंस पहले आयल को स्पिरिट मे घोल ले। तत्पश्चात् धीरे-धीरे जल मिला ले। इसी प्रकार आयल ऐनिसि से एक्वा ऐनिसि बनाया जाता है, परन्तु आयुर्वेद पद्धति से निकाला हुआ अर्क सौंफ इससे श्रेष्ठ और अधिक लाभकारी होता है। तत्काल बनाने के लिए यह पद्धति उत्तम है।

अहितकर—गर्म मिजाज वालो को। हानि निवारक—धनिया और सफेद चन्दन। प्रतिनिधि—तुख्म करफस।

संग कुप्पी (Clerodendron Inerme)

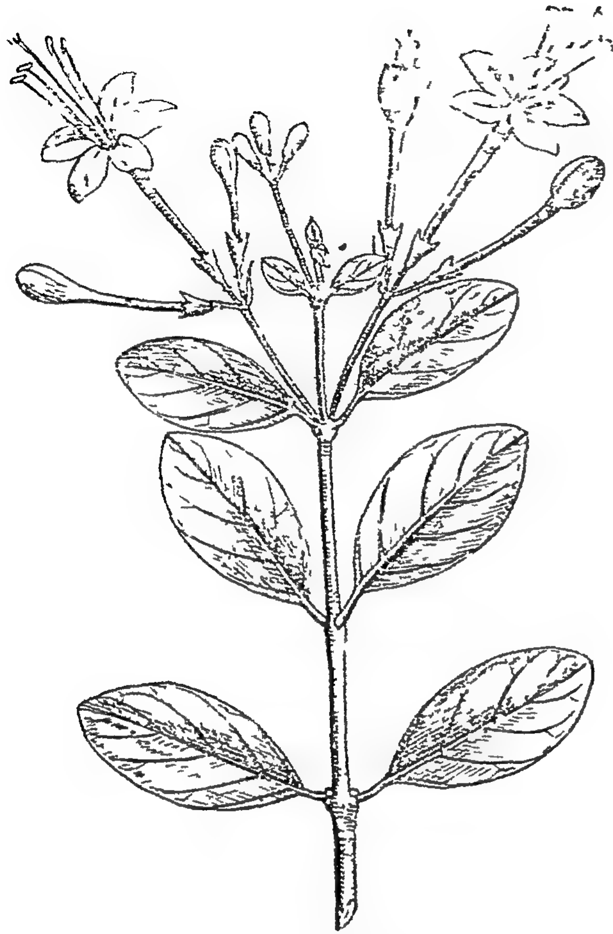
यह सभालु कुल (Vorbenaceae) के क्षुप ३ से ७ फीट तक ऊचे होते है। ये बाकी टेढी शाखाओ वाले तथा झाडोनुमा होते है। इसके पत्ते आमने सामने लगते है। कही-कही ये तीन-तीन के गुच्छो मे लगते है। ये पौन इन्च से लेकर सवा इन्च तक लम्बे होते है। ये कोमल हालत मे राख के समान रग के होते हैं। इनके डठल लम्बे होते हैं। इसके फूल जूही के फूलो की तरह सफेद और सुगन्धित होते है। इसके फल कीडामारी की फलियो की तरह होते हैं। चिकित्सा में इसके पत्ते और जडे काम मे आती हैं।

उत्पत्ति स्थान—

सूरत से लेकर सीलोन तक समुद्र के किनारे-किनारे पैदा होती है।

नाम—

स—कुण्डली, समुन्द्र यूथिका, वन जई, वन यूथिका। हि०—सग कुप्पी, लान जाई। ब०—वनजाई, वन जूमत, वटराज। गु०—तीवर। म०—वनजाई। द०—इसन घरी, सङ्ग कुप्पी। ता—अचलि। अ०—पेटिट फीवर लीव्हज (Petit fever leaves) ले०—क्लेरोडेण्ड्रान इनर्म (Clerodendron Inerme Linn Gaertn)।



संग कुप्पी
CLERODENDRON INERME GAERTON

गुण धर्म और प्रभाव—

सङ्ग कुप्पी—कटु पौष्टिक, क्षार स्वभावी, ज्वर नाशक, शोथघ्न, अवसादक और विषनाशक होती है। इसका ज्वर नाशक धर्म बहुत उत्तम होता है। इस कार्य के लिये सारे एशिया खण्ड मे इस वनस्पति की बहुत प्रशसा है। इस वनस्पति के गुण-धर्म चिरायते के गुण धर्मों से मिलते जुलते होते हैं, मगर ज्वरनाशक धर्म चिरायते के के ज्वरनाशक धर्म से अधिक जोरदार होता है। मलेरिया ज्वर या पारी से आने वाले बुखार में यह विशेष लाभ दिखाती है।

सङ्ग कुप्पी और मलेरिया ज्वर—प्राचीन आयुर्वेदिक ग्रन्थो मे यद्यपि इसका विशेष वर्णन देखने को नहीं मिलता लेकिन वम्बई के सुप्रसिद्ध सेठ सर दीनशा माणिक जीपेटिट सी० सी० ई० को इसके ज्वरनाशक धर्म का पता पहले लगा और इसी कारण इस औषधि के पत्ते वम्बई मे पेटिट फीवर लीव्हज के नाम से पहचाने जाते हैं। इस औषधि का वर्णन करते हुये सर पेटिट लिखते हैं कि ये पत्ते सूरत जिले मे तीवर के नाम से और वम्बई में पेटिट फीवर लीव्हज के नाम से पहचाने जाते हैं। प्रत्येक प्रकार के विषम ज्वर मे, एकतरा, तिजारी, चौथिया, सतत ज्वर, लू लगने से आने वाला ज्वर तथा जगल की सूखी हवा से पैदा होने वाले ज्वर में ये बहुत अकसीर प्रभाव बतलाते है। कई ऐसे केसो मे जिनमें कुनैन असफल सिद्ध हो चुकी थी इस वनस्पति के पत्तो ने लाभ पहुचाया है। जिन जिन लोगो ने इन पत्तो का उपयोग किया है उनमें से किसी ने भी इससे किसी प्रकार का उपद्रव, हानि या प्रतिक्रिया होने की कोई शिकायत मेरे पास नही की। इस वनस्पति मे रक्तशोधक गुण होने से यह खाज, खुजली इत्यादि चर्म रोगो मे भी लाभ पहुचाती है।

डॉयमाक का कथन है कि मलेरिया ज्वर के जिन रोगों पर कुनैन असफल सिद्ध हुई है, उनमे भी इस वनस्पति ने विजय प्राप्त की है। एन्सली का कथन है कि इसके पत्तो का रस कठमाला की बीमारी मे एक रक्त शोधक द्रव्य की तरह काम करता है। इस कार्य के लिये इसको एक बडे चम्मच (टेबिल स्पून) की मात्रा मे पानी के साथ मिलाकर दिया जाना है। रीड का कथन है कि इसके पत्तो की पुल्टिस बनाकर बांधने से गठान बैठ जाती है और इसके क्वाथ से स्नान करने से पागलपन मिटता है तथा इसकी जड को तैल मे औटाकर उस तेल की मालिश करने से सधिवात मिटता है।

वम्बई मे इसके पौधे की एक ज्वरनाशक पदार्थ की तरह बहुत ख्याति है। इसके लिये इसके पौधे का रस आधे औंस की मात्रा में दिया जाता है।

इसके रासायनिक तत्त्व चिरायते के रासायनिक तत्वो से बहुत मिलते हुये हैं। इसके सूखे पत्ते भी इसके



ताजे पत्तो ही की तरह गुणकारी होते है लेकिन इनको हमेशा छाया मे सुखाना चाहिये जिससे इनकी गध सुरक्षित रहे। इन सूखे पत्तो का दूसरे सुगन्धित द्रव्यो (लौग, सोठ आदि) के साथ काढा बनाकर देना चाहिये इनका चूर्ण या गोली वनाकर भी उपयोग किया जा सकता है।

उपयोग के तरीके ज्वर के ऊपर इस वनस्पति के हरे या सूखे पत्तो का उपयोग कई प्रकार मे किया जाता है। इसके ७ से लेकर १५ तक पत्ते वैसे ही चबा लिये जाय, अथवा नागर वेल के पान में रखकर खा लिये जाय तो भी लाभ पहुचाते है। अगर इन पानो की चाय वनाकर पीई जाय तो वह ज्वर मे लाभ पहुचाती है। इस कार्य के लिये इसके वीस पच्चीस पत्ते लेकर उनके छोटे-छोटे टुकडे करके उनको एक ढक्कनदार चायदानी मे डालकर उसमे पाव- डेढ पाव खौलता हुआ पानी और १० या १५ दाने काली मिर्च के पीसकर डाल देना चाहिये। जव पानी ठण्डा होने लगे तव चायदानी को अच्छी तरह हिलाकर उस पानी को कपडे से छान लेना चाहिये। अगर आवश्यकता मालूम हो तो इनमे कुछ शक्कर भी मिला सकते है।

अगर इसका एक्सट्रेक्ट या टिंचर वनाना हो तो इसके पत्तो को छाया में सुखाना चाहिये। जव वे मुरझा जाय तव उनमे से २० तोले पत्ते लेकर १ बोतल रेक्टीफाइड स्प्रिट मे डालकर मजवूत काग लगाकर ५-७ दिन तक पडे रखना चाहिये। प्रतिदिन २-३ दफे उस वोतल को खूब हिला देना चाहिये। उसके पश्चात् उसको ब्लाटिंग पेपर मे अथवा कपडे मे छानकर दूसरी बातल मे भर लेना चाहिये।

इस औषधि की मात्रा छोटे वच्चो के लिये ५ से २० बूद तक और बडे आदमियो के लिये २ से ६ माशे तक है। इसको चौगुने पानी मे मिलाकर लेना चाहिये। इसी प्रकार इसके पत्तो का शरवत भी बनाकर दिया जाता है। अगर इनकी गोलिया बनानी हो तो पीपर, चिरायता, कटकरज के बीज इत्यादि औषधियो के साथ इनके पत्तो को पीसकर उसकी चने के बराबर गोलियां बना लेनी चाहिये। इनकी मात्रा एक से लेकर तीन गोली तक रहती है।

उपरोक्त बनावटो मे से ज्वर के रोगी को इसकी कोई भी बनावट देने से लाभ होता है। अगर इसके सेवन से ज्वर एक दम उतर कर शरीर ठण्डा पडता हुआ दिखलाई दे तो गरमी लाने के लिये दो चम्मच उत्तम ब्राडी पिलाना चाहिये। आमवात के रोग मे इसकी जड के छ माशे चूर्ण को अरण्डी के तैल में औटाकर उस तेल की मालिश करने से लाभ होता है। वदगांठ और दूसरी सूजन पर इसके पत्तो का लेप करके वाधने से सूजन और वदगाठ विखर जाती है। कण्ठमाला पर इसके पत्तो का लेप गरम करके उसमे ताजा खोपरे का तेल मिलाकर लगाया जाता है।

उन्माद रोग मे इसके पत्तो के काढे में रोगी को विठाया जाता है। खुजली के ऊपर इसके हरे और सूखे पत्तो को पीसकर उसमे तिल का तेल मिलाकर उसको रोग ग्रस्त भाग के ऊपर लगाना चाहिये और कुछ घण्टो के पश्चात् उसे गरम जल से धो डालना चाहिये। इसी प्रकार कुछ दिनो तक करना चाहिये। अगर खुजली सारे शरीर मे हो तो गरम जल में इसका काढा मिलाकर उससे स्नान करवा चाहिये। —व च से साभार

सगरवा पुली—देखिये इसी भाग मे सदा सुहागन (वारहमासी)।





संकासुरा [POINCIANA ELATA]

यह शिम्बी कुल (Leguminosae) का एक छोटी जाति का वृक्ष होता है ।

उत्पत्ति स्थान–

अरब और अबीसीनिया है मगर भारतवर्ष के अन्दर भी यह पैदा होने लगा है ।

नाम–

म०–सकासुरा । बम्बई–वायनी । ता.–वाराही । ते.–सुकेवरम । अ०—टायगर वीन (Tiger bean) ले०—डेलोनिक्स एलेटा (Delonix elata gamble) । पोइन सिएना एलेटा (Poinciana elata Linn) ।

गुण धर्म और योग–

इसके वृक्ष की छाल सन्धिवात और वात को नष्ट करने के उपयोग में ली जाती है। इसकी छाल एक उत्तम ज्वरनाशक पदार्थ की तरह उपयोग मे ली जाती है ।

(व च)



संकासुरा
POINCIANA ELATA LINN

हकुम–देखिये 'घन सर' भाग २ पृष्ठ ४६७ पर। हटमुडिया 'जल सिरस' भाग ३ पृष्ठ १६६ पर।

हड़जोड़ी (Vitis quadrangularis)

इसका वर्णन, उत्पत्तिस्थान, नाम, रासायनिक सगठन, उपयुक्त अङ्ग, मात्रा, गुणधर्म और प्रयोगादि के लिये 'थूहर न १० (हडजोड) भाग ३ के पृष्ठ ४१६ से ४१९ तक देखने का कष्ट कीजिये ।

अस्थिभंग पर—हाडजोड से घी तैयार कर प्रयोग करने से अथवा रस मे या क्वाथ मे घी डालकर पीने से टूटी हड्डी जुड जाती है। (चक्रदत्त) वैद्य बापालाल जी आदर्श निघन्टु भाग १ के पृष्ठ ३३१ पर लिखते है कि "एक सर्जन ने हमको 'हाड जोड' हड्डी टूटने पर अकसीर दवा है ऐसी एक वैद्यक पत्र मे प्रकाशित जानकारी बतलायी। पत्र का, काण्ड का या मूल का चूर्ण प्रयोग करके अस्थि सधान मे इसकी उपयोगिता की परीक्षा करके इसको अमोघ औषधि माना है ।

इस सम्बन्ध मे वाराणसी कालेज आफ मेडिकल सायन्सीज के सर्जीकल डिपार्टमेन्ट के अधिकारी डा के. एन. उडुपा ने हाडजोड अस्थिभग के ऊपर प्रभाव सम्बन्धी

अर्वाचीन पद्धति से काफी प्रकाश डाला है। हाड जोड मे प्रत्येक १०० ग्राम मे ४७६ मिलिग्राम एरकोर्बिक एसिड और २६७ मि ग्राम जितना केरोटीन है। इसके सिवाय केल्सियम ओक्जेलेट्स भी काफी प्रमाण मे हैं। और Anabolic steroid जैसा पदार्थ भी इसमे है। इनस वसे अस्थिभग के ऊपर 'हाड जोड' का पूरा २ प्रभाव पाया गया है। खाने से और अस्थिभग के ऊपर इसको बांधने से दोनो प्रकार से परीक्षा करके देखा है जो सफल साबित हुआ है। देखिये—इन्डियन जरनल आफ मेडिकल रिसर्च वा. ३ न १ जनवरी १९६४ मे इनका लेख) (आ नि)

विशिष्ट योग—

अस्थि सहार चूर्ण (चि च. भा ७)—हाड़जोड, पीपल लाख, गेहूँ का मैदा और अर्जुन की छाल इनको समान भाग लेकर पीस छान लो। उसमें से ६—६ माशे चूर्ण नित्य दूध और घी मिलाकर खाने से टूटी हड्डी जल्दी ही जुड जाती है।

यह नुस्खा अस्थि भग्न और सन्धि भग्न दोनों पर ही उत्तम है।

अस्थि सहार तैल—हाड़जोड का स्वरस १ पाव, तिल तैल ½ सेर—मिलाकर तैल सिद्ध करें। तैल मात्र रहने तथा झाग रूप होने पर चूल्हे से उतार ठण्डा करके छान कर रख लें। मोच, सन्धिविश्लेप में इस तैल का प्रयोग करावें।

हथजोड़ी—देखिए—'बिछुआ' भाग ५ के पृष्ठ १३७ पर।

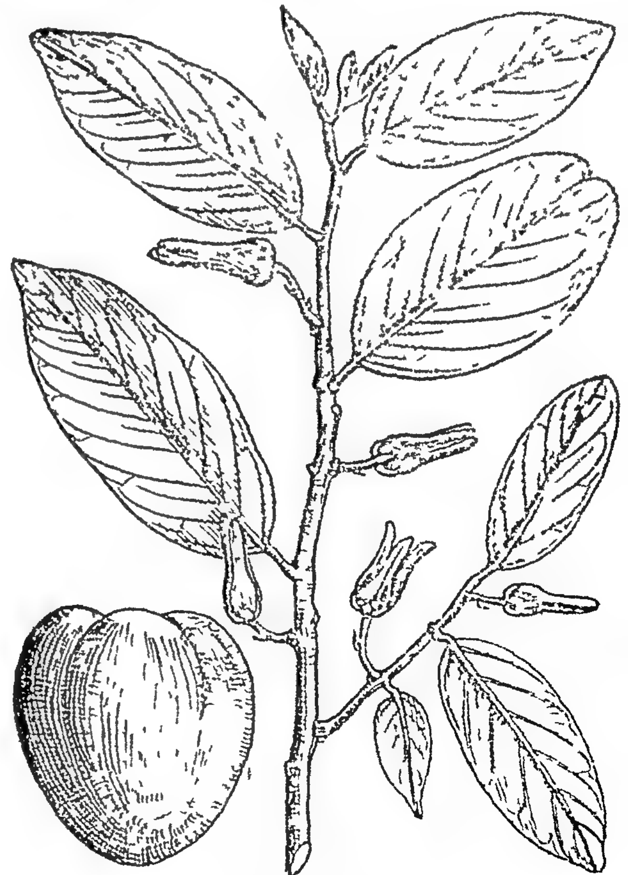
हनुमान फल (ANNONA CHERIMOLIA)

यह फलवर्ग और सीताफलादि कुल (Annonaceae) का एक फल होता है जो खाने में बहुत प्रशसित है। ससार के उत्तम फलों मे इसकी गणना है। मगुस्तान से दूसरे नम्बर पर यह स्वादिष्ट फल है। इसकी बोम्बे प्रेसीडेंसी मे कृषि की जाती है। चित्रावलोकन कीजिये।

नाम—

हि०, कन्नड—हनुमान फल। महा०—मारुती फल। अ०—चेरीमोयर (Cherimoya) Cherimoyer। ले—एनोना चेरिमोलिया (Annona Cherimolia, Mill)।

—आ० नि० भा० १ से



हनुमान फल
ANNONA CHERIMOLIA LINN

हनुमान वेल—देखिये— लक्ष्मणा' (Ipomoea sepiaria) इसी भाग मे ।

हव्वुलगार—देखिये आगे 'हव—एल—घर' इसी भाग मे ।

हमाम (DIONYSIA DIAPENSIAEFOLIA)

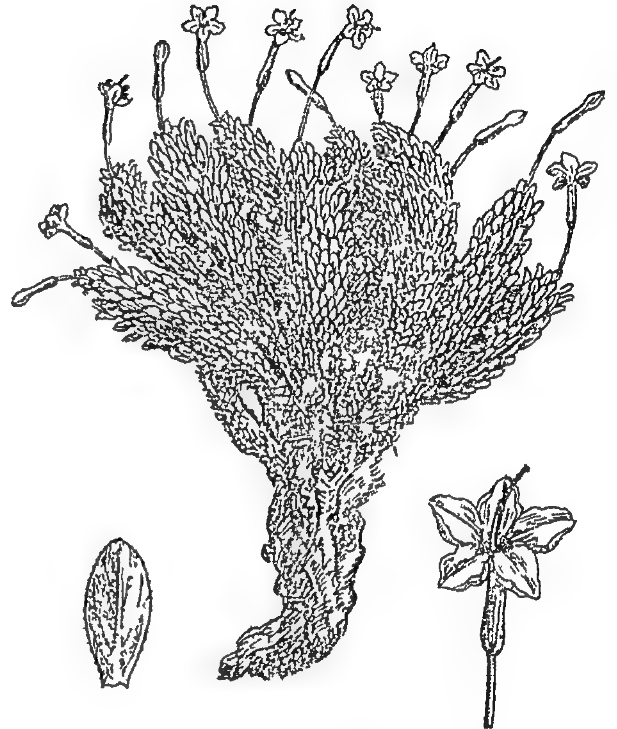
यह पीत सेवती कुल(Primulaceae)का एक उद्भिज है जिसके यह तीन भेद हैं—

(१) एक पौधा जो जमीन पर गुच्छे की तरह होता है, शाखाये एक दूसरी में इस प्रकार घुसी होती हैं कि जाल की तरह मालूम होती हैं। इनका रग याकूती रक्त वर्ण मालूम होता है और ये कडी होती है, इनमे से सुगन्ध आती है और स्वाद तिक्त होता है। फूल छोटा, लाल रङ्ग का खेरी के फूल जैसा होता है । इस फूल को शीराज निवासी 'मायलू' कहते है। पत्ते फाशरा या खीरे के पत्ते जैसे सुनहले रङ्ग के, स्वाद मे कटु (तेज) और सुगन्धित होते हैं। बीज को चबाने से जिह्वा पर बहुत तीक्ष्णता और दाह प्रतीत होता है। यह भेद अरमीनिया और तरसूस मे पैदा होता है।

(२) दूसरी किस्म नव्ती कहलाती है, इसकी शाखाये जालीदार नही होती, अपितु लम्बी होती है, उनको तोड़ने से बहुत से परत पैदा हो जाते है। क्षुप एक बित्ता या इससे अधिक ऊंचा भी होता है। रङ्ग ललाई लिये सफेद और सुगन्ध तीक्ष्ण होती है। फूल का रङ्ग प्रारम्भ मे ललाई लिये पीला और खूब पक जाने पर बिल्कुल रक्तवर्ण हो जाता है। इसमे बहुत से बीज लगे होते है।

(३) तीसरा भेद जलीय (आबी और माई) करके प्रसिद्ध है, क्योकि यह पानी मे और तर जमीनो मे जमती है। इसका पौधा मोटा और हरे रङ्ग का, डालियां नरम, पत्तो को मलने से सुदान जैसी सुगन्ध आती है । इसमे बहुत हलकी सुगन्ध होती है। यह श्याम देश मे होता है।

जब तक हमाम के बीज खूब पक न जाय उसको तोड़ कर काम मे नही लेना चाहिये। यदि काम मे न लेवे तो कोई हर्ज नही, परन्तु जमा नही रखना चाहिये। जब इन बीजो मे तीक्ष्णता आ जाय तथा ये जीभ को काटने लगें, उस समय समझ लेना चाहिये कि यह पौधा पक गया । उस समय इसका सग्रह करें । उससे पूर्व सग्रह करने से खराब होने का भय है।



हमाम
DIONYSIA DIAPENSIAEFOLIA BOISS

उत्पत्ति स्थान—

फारस ।

नाम—

भारतीय बाजार–सुरु, नव्ती, हमाम, हमाया। यूरोप (Amomon (D I 14) Amomum) अ०—अल हमामा इ० । बँ०–माहलूज। फा०–म(मा) हिलू, मायलू ले०—डीओनीसिआ डीआ पेसिएफोलिया (Dionysia Diapensiafolia Boiss)।

उपयुक्त अङ्ग—मूल।

मात्रा—७ माशे तक। मतातर से १०½ माशे तक।

गुण धर्म और प्रभाव—

प्रकृति–मूल भूत द्रव्यो के साथ-दूसरे या तीसरे दर्जे

मे गरम और रूक्ष। इसका तेल दूसरे दर्जे मे गरम और पहले दर्जे में रूक्ष है।

गुण कर्म तथा उपयोग

यह दोषो को पतला करने वाला, दोष पाचन, छेदक, मादक, निद्राकर और ग्राही है। इसमे वचवत् वीर्य होता है, भेद केवल यह है कि इसकी अपेक्षा वच अधिक रूक्षताजनक एव दोषपाचन भी है। इसे जैतून के तेल मे मिलाकर लगाने से सूजन उतर जाती है। मुनक्का के साथ यह अन्त्र शोथ को मिटाता है। इसके सेवन से सिरो गौरव और सिर दर्द भी उत्पन्न होजाता है। परन्तु सिर पर बाहर से लेप करने से सर्दी का सिर दर्द आराम हो जाता है। उष्ण प्रकृति वालो के सिर मे बाहर से लगाने से भी सिर दर्द उत्पन्न हो जाता है। इसके काढ़े से आख धोने से उष्ण नेत्राभिष्यन्द आराम होता है और नेत्र मे सूजन नही होती, इसलिये इसे नेत्राजनो मे डालते हैं। इसका काढा पीने से शीतल पार्श्व शूल आराम हो जाता है। यकृदगत अवरोध मिट जाता है, उसमे शक्ति आती है, सूजन उतर जाती है, यकृत और आमाशय की शुद्धि होती है, वायु विलीन हो जाती है। पाचन शक्ति बढती है, वायु गोला मे आराम होता है और रुका हुआ मूत्र और आर्तव प्रवर्तित हो जाता है। इसे योनि मे रखने से भी आर्तव रक्त जारी हो जाता है तथा गर्भाशय शोथ मिट जाता है। उस काढ़े से अवगाह (आवजन) करने से गर्भाशय शोथ मिट जाता है और गुद शोथ भी मिटता है। ३॥ माशे हमाम और १॥। माशे जला हुआ काच जिसे फारसी मे आवगीना कहते हैं, दोनो को महीन पीसकर खाने से प्रभूत मूत्रोत्सर्ग होता है और उसी दिन पथरी टूटकर निकल जाती है, वृक्कशूल एव वातरक्त की पीडा मे भी इससे आवजन करते है। वातरक्त एव गर्भाशयशूल मे भी इसका काढ़ा पीने से उपकार होता है।

अहितकर—आमाशय और सिर को तथा आलस्य एव सिर दर्द पैदा करता है। निवारण—आमाशय के लिए तुख्म करफस, सिर के लिये—गुलाव के फूल, सिर दर्द के लिए अर्क गुलाव एव चन्दन और आलस्य के लिये दालचीनी। प्रतिनिधि—समतोल असारून।

हरकुच कांटा (ACANTHUS ILICIFOLIUS)

यह वासादि कुल (Acanthaceae) का झाड़ीनुमा छोटी जाति का क्षुप साधारण सब्ज पत्राच्छादित होता है। यह खारी जमीनो में अक्सर नदियो के किनारे उत्पन्न होता है। गुल्म मूल की ओर काष्ठमय अथवा एक कन्द के समान मोटा मूल विशिष्ट दीखता है। काण्ड १ से ५ फुट, कोमल रोमावलियुक्त, पत्र ६ इची लम्बा एव २॥ इची विस्तृत, दातयुक्त, पक्षाकार व मसृण। पत्रदण्ड ½ इची और बेगनी फूल ४ से १६ इची लम्बे सफेद काण्ड मे आते हैं, प्राय एक-एक होते है। फूल २ जोड़ा ¼ से ½ इची बहिर्व्यास द्वारा रक्षित होता है। फली १। इच लबी उज्ज्वल नील वर्ण। पुष्प की पु केसर ४। वीजकोष उज्ज्वल धूमर वर्ण, अग्रभाग क्रमश नोकीला ६ शिराओ से युक्त, उज्ज्वल, मस्तक मोटा। बीज ¼ से ⅓ इची। बीजकोष के भीतर २ लम्बे गह्वर होते है। कोष में ३-४ बीज होते है। पक्वावस्था मे बीज श्वेत वर्ण, ग्रीष्मकाल मे फूल और फली होता है।

उत्पत्ति स्थान—

सुन्दर वन, हुबली, हावडा व २४ परगना सर्वत्र जलज स्थानो में समुद्री किनारो पर पैदा होती है। गगा नदी के किनारे कलकत्ते के पास। मलाबारके समुद्री तीरो पर, लङ्का, मालाक्का उपमहाद्वीप मे भी पैदा होता है।

नाम—

स०—हरिकुश। हिं०—हरकुचकाटा, हकुकान्त। व०—हरगोजा, हरकुचकाटा। बम्बई—निवागुर। अ०—सीहोली (Seaholly)। ले०—एकेन्थस इलिसिफोलियस (Acanthus Ilicifolius Linn)।

उपयुक्त अङ्ग—पत्र, छाल। मात्रा—स्वरस ½ तोला से १ तोला तक।

गुण-धर्म और प्रभाव—

यह वनस्पति क्षार स्वभावी, दुग्धवर्द्धक और कफ नाशक होती है। यह एक उत्तम औषधि है क्योकि इसमे कफ को ढीला करने वाला क्षार और उसको बाहर निकाल देने वाला स्निग्ध पदार्थ दोनो साथ रहते हे। प्राचीन कफ प्रधान रोगो मे और दमे मे यह औषधि विशेष रूप से

लाभदायक सिद्ध होती है। आमवात, वातनाड़ी की पीडा और अर्द्धाङ्ग वायु मे इसको द्राक्षासव के साथ देते हैं। अम्लपित्त में इसके पचाग का क्षार दिया जाता है। सूजन पर इसके पत्तो को पीसकर वाधा जाता है।

उपयोग—

कोकण मे इस वनस्पति का काढा मिश्री और जीरा मिलाकर खट्टी डकारो के साथ होने वाले अजीर्ण मे देते है।

गोआ के अन्दर सधिवात, गृध्रसी और स्नायु शूल पर इसके पत्तो पर तेल लगाकर गरम करके वाधते है और उन पर सेक करते हैं।

सियाम एव कोचीन में यह वनस्पति हृदय को शक्ति देने वाली और पक्षाघात तथा दमे के रोग मे विशेष उपयोगी मानी जाती है।

रीड के मतानुसार इसकी कोमल डालियो और पत्तो को पानी के साथ महीन पीसकर साप की काटी हुई जगह पर लेप करने के काम में लेते हैं। —व. च से

इसका मूल सर्दि निवारक एव खासी और दमे में प्रयोग होता है। इसका मूल दूध के साथ मिलाकर श्वेत प्रदर तथा साधारण कमजोरी मे उपयोगी होता है।

इसका क्वाथ मिश्री और जीरे के अनुपान से व्यवहार करने से अम्लोद्‌गार सहित अजीर्ण नष्ट होता है।

—शा. ब ब. से

हरड़ (Terminalia chebula]

यह हरीतक्यादि वर्ग हरीतकी कुल (Combretaceae) का वृक्ष ८० से १०० फुट ऊचा होता है। तने का काष्ठ सख्त, धूसर वर्ण एव हरी आभा लिये पीत वर्ण के दाग युक्त होता है। पत्र ३ से ८ इच लम्बे, २ से ४ इच चौडे, शीतकाल मे पत्र गिर जाते है, पत्र दण्ड १ इची। पत्र दूरी दूरी पर आते हैं, पत्र का सिरा दवा हुआ व डिम्बाकृति। पत्र की शिरायें ६ से ८ जोडे मे। पुष्प उभय लिङ्ग विशिष्ट। पुष्प दण्ड ½ इची, श्वेत वर्ण किंवा पीत वर्ण के उग्र गन्ध विशिष्ट होते हैं। पुष्प दण्ड अधिक लम्बा नही होता है फल मे ५ उन्नत शिरायें होती हैं, यह एक से डेढ इच लम्बा होता है।

फलाकृति सबकी समान नही होती हे, कोई कुछ लम्बे कोई कुछ छोटे। फल मे केवल एक बीज होता है। संस्कृत लेखको ने ७ प्रकार की हरीतकी का वर्णन किया है किन्तु इस समय केवल दो प्रकारकी हरीतकी देखने आती है। इसके वडे पके फल को हरीतकी एव अपक्व शुष्क फल को जागी हरडें (जवा हरडे) कहते है। जो हरीतकी जल मे डूब जाती है वह औषधि विर्माण के वास्ते उत्तम होती है।

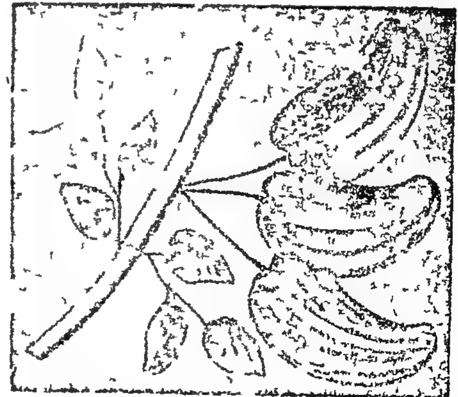
फूलने फलने का समय—ग्रीष्म काल मे फूल और शीतकाल मे फल होते है। चित्रावलोकन कीजिये।

संस्कृत लेखकों के भेद—

छिलके की स्वल्पता, गूदे की स्थूलता, आकार गोल या लम्बा तथा वर्ण आदि के अनुसार सस्कृत लेखको ने हरड़ के सात भेद किये है—

(१) विजया—विन्ध्य पर्वत पर उगने वाली हरड का विजया नाम दिया गया है। यह घीये जैसी लम्बी, गोल, ऊपर से पतली और नीचे की ओर क्रमश मोटी होती गई होती हे। सामान्यतया इसका प्रयोग सव जगह होता है। हरड़ की सात जातियो मे से यह प्रधान है, इसका प्रयोग करना सरल है और यह सब रोगो मे दी जाती है।

(२) रोहिणी—उभरी हुई और गोलाकार, यह हरड़ सिन्धु नदी के तीर पर उत्पन्न होती है। फोडे—फुन्सी इत्यादि पर इसका लेप करने की प्रथा प्रचलित है। विजया हरड के साथ प्राय सिलती है।



(३) पूतना—हिमालय पर्वत पर उत्पन्न होती है। इसका छिलका पतला रहता है और गुठली का आकार छोटा होता है। विरेचन के लिये अत्यन्त प्रभावशाली है।

(४) अमृता—मोटा गूदा होने से चिकित्सा सम्बन्धि गुण इसमे अधिक होता है। यह चम्पा प्रदेश मे सर्वत्र उत्पन्न होती है।

(५) अभया—यह पाँच रेखा वाली हरड सौराष्ट्र की देन है। नेत्र रोगो पर विशेष प्रभावशाली है।

(६) जीवन्ती—सौराष्ट्र मे उत्पन्न होने वाली यह एक अन्य जाति है। इसका वर्ण स्वर्ण के समान पीला होता है और पुरातन रोगो पर व्यवहार मे ली जाती है।

(७) चेतकी (प्रथम)—हिमालय के अञ्चल मे उत्पन्न होने वाली यह हरड तीन रेखा युक्त होती है। यह इतना तीव्र विरेचक प्रभाव रखती है कि हाथ मे लिये रहने से ही दस्त होने लगते हैं।

चेतकी (द्वितीय)—यह भी हिमालय मे ही उत्पन्न होती है। श्याम वर्ण और एक अगुल लम्बी होती है। इसी काली जाति को प्रायः बाल हरड, जवा हरड और छोटी हरड इत्यादि नामो से जाना जाता है। यह पाचन सम्बन्धी व्याधियो पर उत्तम कार्य करती है।

व्यावहारिक दृष्टि से यह तीन प्रकार की है—(१) छोटी हर्रे (हलील स्याह), (२) पीली हर्रे (हलील जर्द), (३) बडी हर्रे (हलील काबुली)। ये तीनो वस्तुतः एक ही वृक्ष के फल हैं जो अवस्था भेद से भिन्न हो जाते है। हरीतकी वृक्ष से कच्चे कोमल फल (गुठली होने से पूर्व) स्वय गिर जाते हैं या तोडकर सुखा लिये जा हैं वे 'छोटी हर्रे' कहलाते हैं। गुठली होने के बाद प्रौढावस्था में जो अपरिपक्व फल लिये जाते हैं वे 'पीली हर्रे' कहलाते हैं और हरीतकी के पूर्ण परिपक्व फल 'बडी हर्रे' के नाम से लिये जाते हैं।

यूनानी वैद्यक अनुसार हरडे के भेद

हरडें तीन प्रकार की होती है--(१) हलील स्याह, (२) हलील जर्द और (३) हलील. काबुली। यह तीनो प्रकार की हरडे वस्तुत एक ही वृक्ष से प्राप्त होती हैं। इनमे से प्रत्येक का वर्णन निम्नानुसार है।

१. हलीलः स्याह (छोटी हरड़)—

नाम—हिं०—काली हड़, बालहड़, जोगीहड, जोगी हड। उ० प्र०—जंगीहड। अ०—इहलीलज (हलीलज) अस्वद, इहलीलज। फा०—हलीलए जगी। म०—बाल हरडा।

वर्णन—हड के वृक्ष से जो फल गुठली पैदा होने से पूर्व गिर पडते हैं या तोडकर सुखा लिये जाते हैं, उन्हे हलीलए स्याह कहते हैं। स्वाद अत्यन्त कषैला होता है। काली कडी, भारी, अविकृत हड औषधि के लिए उत्तम समझी जाती है।

हलीलए जर्द—

नाम—हिं०—हर्रा, छोपा हड, पीली हड़, वड़ी हड़। अ०—इहलीलज अस्फर। फा०—हलीलए जर्द।

वर्णन—यह हड का पूरा फल है जिसमे गुठली पडी हो। बडी, पीली, छोटी गुठली की और नई उत्तम है।

हलीलए काबुली (काबुली हड़)—

नाम—हिं०—काबुली या अम्बिया हड। अ०—इहलीलज काबुली। फा०—हलीलए काबुली।

वर्णन—जब हड बढकर असाधारण रूप से परिपुष्ट एव स्थूल हो जाती है, तब उसे हलीलए काबुली कहते हैं। प्राचीनकाल मे भारतवर्ष से इसे भू मार्ग से काबुल होकर तुर्की, खुरासान, ईरान आदि देशो मे ले जाते थे, इसीलिए इसे 'हलीलए काबुली' कहते हैं। नई, बडी, जल मे डूब जाने वाली, ललाई लिये पीली, गुदार और कम रेशे वाली, छोटी गुठली वाली और जो पुरानी खराब और हलकी न हो, वह उत्तम होती हैं। यह अन्य सभी प्रकार की हडो से श्रेष्ठतर एव वीर्यवान होती है।

उत्पत्ति स्थान—

यह भारत मे सर्वत्र विशेषत पार्वत्य प्रदेश मे ५००० फीट की ऊचाई तक होती है। पजाब, उत्तर प्रदेश, बिहार, अवध, मध्य प्रदेश, बङ्गाल तथा दक्षिणी भारत मे हरड प्रचुरता से पायी जाती है। बम्बई, मद्रास और मैसूर के वनों मे सर्वत्र उत्पन्न होती है। इसके अतिरिक्त लङ्का, ब्रह्मा तथा मलाया मे भी हरड के वन हैं। पञ्जाब के कांगडा जिले मे सबसे उत्तम हरड होती है। होशियारपुर और अमृतसर इसके मुख्य बाजार है।



नाम

स०—अभया, अमृता, अव्यथा, अमोघा, कायस्था, गिरिजा, चेतकी, जया, जीव्या, जीवनिका, जीवन्ती, दिव्या, नन्दिनी, पथ्या, पूतना, प्रपथ्या, प्राणदा, प्रमथा, बल्या, भिषकप्रिया, रसायन फला, रुद्रप्रिया, रोहिणी, बयस्था, विजया, शिवा, शुधा, सुधोद्भवा, श्रेयसी, हरीतकी, हेमवती। हि०—हरड, हर्र। ब०—हरीतकी। गु०—हरडे। म०—हिरडे। प०—हर्र। सिन्धी—इमाची। काश्मीरी—ज्सरद हलेला। बिहारी—हर्रे। उडिया—हरिडा। गढवाली—हलंडण। कर्नाटकी—अणिलेकाई। ते०—हरीतकी। नेपाली—हेरडो। मलय०—कटुक्का। ता०—कादुक्काई। ब्राह्मी—पागा। उर्दू—हलद, हलीलज। फा०—हलीले। अरबी—अहलीलज, हलीलज। तुर्की—अणिलेमर। अं०—मिरोबेलन (Myrobalon)। फ्रेंच—बादमियर चेबुल (Badamier ch bule) ले०—टर्मिनेलिया चेब्युला (Terminalia-Chebula Retz)। जर्मनी—रिस्पीगर माइरोबलनेन ब्युम (Rispiger myrobalanenbaum.)।

रासायनिक संगठन—

फल मे टेनिक एसिड ४५%, प्रचुर गैलिक एसिड, पिच्छिल द्रव्य, भूरा पीला रजक द्रव्य तथा चेबुलिनिक (Chebulinic acid) जो जल मे उबालने पर "टैनिक और गैलिक एसिड" से विभक्त हो जाता है।

परीक्षा—नवीन स्निग्ध, ठोस, वृत्त, भारी, जो पानी मे डालने पर डूब जाय वजन मे दो तोले की हो वह हरीतकी श्रेष्ठ मानी जाती है।

उपयुक्त अङ्ग—फल त्वक्।

मात्रा—३ माशे से ६ माशे तक। हरड का मुरब्बा १ नग। जवा हरड चूर्ण ३ माशे से १ तोला तक टट्टी साफ लाने के लिये। उदर रोग और सख्त कब्ज मे १ से २ तोला तक। गोमूत्र हरीतकी ३ से ६ माशे। एरडस्नेह मे भुनी हरडे ३ माशे।

गुण धर्म और प्रयोग—

सात प्रकार की हरड़ो मे भेद—सर्व प्रकार के रोगो मे विजया हरड़ देनी चाहिये, व्रण को भरने के लिये रोहिणी हरड उत्तम है, लेप मे पूतना लेनी चाहिये, विरेचन के अर्थ-अमृता हरड हितकारी है। नेत्र रोग मे अभया हरड श्रेष्ठ है, जीवन्ती हरड सर्व रोगो को हरने वाली है और चूर्ण मे चेतकी हरड डालनी चाहिये।

दो प्रकार की चेतकी हरड का स्वरूप—चेतकी हरड़ सफेद और काली इन भेदो से दो प्रकार की है। सफेद रग की हरड ६ अगुल परिमाण लम्बी होती है और काले रग की चेतकी हरड एक अगुल परिमाण लम्बी होती है।

सर्व प्रकार की हरडो के रेचन गुण—कोई हरड खाने से, कोई सूघने से, कोई स्पर्श करने से और कोई दर्शन मात्र से ही दस्त लाती है, ऐसे चार प्रकार की होती है।

चेतकी हरड के रेचन गुण—चेतकी हरड के वृक्ष की छाया मे जो मनुष्य, पशु, पक्षी, मृगादिक गमन करते है, उन जीवो को उसी समय दस्त होने लगते हैं, जब तक जो प्राणी चेतकी हरड को हाथ मे धारण किये रहेगा, तब तक उस प्राणी को उस हरड के प्रभाव से निश्चय दस्त होते रहेगे, चेतकी हरड को सुकुमार, दुर्बल और जो मनुष्य औषधि से शत्रुता रखते हैं, उनको कभी भी धारण नही करनी चाहिये। चेतकी हरड अत्यन्त उत्कृष्ट हितकारी और सुखसहित दस्त कराने वाली है।

विजया हरडे की प्रशंसा—७ प्रकार की हरडो मे विजया नाम वाली हरड सर्वप्रधान है, प्रयोग भी सुख कारक है। सुलभ अर्थात् सब स्थानो में मिलती है और सर्व रोगो मे दी जाती है।

हरडे के गुण सक्षेप मे—रस—पचरस (अलवण)। वीर्य-उष्ण। विपाक—मधुर। दोषघ्नता—त्रिदोष है।

गुण धर्म और प्रयोग—

कषाय, अम्ल, मधुर, तिक्त, और कटु, इस प्रकार हरड लवण रस को छोड़कर पाच रस वाली है।

हरड़—रूखी, उष्णवीर्य, अग्नि को दीपन करने वाली, मेधाजनक, पाक में स्वादिष्ट, नेत्रो को हितकारी, हलकी, आयुवर्धक, बृहण (बलकारक) और वायु को अनुलोमन करने वाली है तथा श्वास, खासी, प्रमेह, बवासीर, कोढ, सूजन, उदर रोग, कृमि, स्वर भग, सग्रहणी, विबन्ध, विषम ज्वर, गुल्म, आध्मान (अफरा), तृषा,वमन, हिचकी, कण्डू, हृदय रोग, कामला, शूल आनाह, यकृत, अश्मरी,

मूत्र कृच्छ्र और मूत्राघात का नाश करती है।

हरड अम्लरस संयुक्त होने से वात का नाश करती है, मधुर और तिक्त रस युक्त होने से पित्त का नाश करती है, और कषाय तथा रूक्षता से कफ का नाश करती है, इस प्रकार हरड त्रिदोष नाशक है।

हरड—स्वादु, तिक्त, कषैले रस से कफ को हरती है और अम्ल से वात को नाश करती है। (शा नि.)

हरड—पाच रसो से युक्त है और लवण रस से वर्जित है। यह योगवाही, रसायन, अग्निदीपक, हलकी, दस्तावर, मेधाजनक, लेखन, वात को अनुलोमन करने वाली, हृदय को हितकारी, नेत्रो को हितकारी, स्मृति कारक, अवस्थास्थापक, बलकारक, कोढ का नाश करने वाली, विवर्णता नाशक, इन्द्रियो को प्रसन्न करने वाली तथा मस्तक रोग, स्वर भग, विषम ज्वर, पुराना ज्वर, पाडु हृदय रोग, कामला, शोप, सूजन, मूत्राघात, सग्रहणी, अतिसार, पथरी, वमन, प्रमेह, कृमि, श्वास, विप, उदर रोग, खासी, पसीना, मलस्तम्भ, आनाह, कर्णरोग, बवासीर, प्लीहा, त्रिदोष, गुल्म, हृचकी, व्रण, उरुस्तम्भ, शूल और अरुचि का नाश करती है। (नि० र०)

हरड़े में स्थिति पाच रसो का निर्णय—हरड की मज्जा मे मधुर रस, नसो मे अम्लरस, डठल मे तिक्त रस, छाल मे कटु रस और अस्थियो मे कषैला रस रहता है।

श्रेष्ठ हरीतकी के लक्षण—जो हरडे नूतन, स्निग्ध, घन, गोल, भारी और पानी मे डालने से डूब जावे वह हरड अत्यन्त गुण वाली और श्रेष्ठ होती है अथवा जो हरड पूर्वोक्त गुणयुक्त हो और चार तोले परिमाण भारी हो, उसको सर्व गुणवाली जानना चाहिये।

हरडे सेवन मे गुणान्तर—हरड दातो से चबाकर खाने से अग्नि को बढाती है, पीसकर खाने से मल को शोधन करती है, अर्थात् मलको निकाल कर उदर की शुद्धि करती है, पकाई हुई खाने से मलको रोकती है और भुनी हुई हरड त्रिदोष का नाश करती है।

भुक्तान्वित हरीतकी के गुण—हरड भोजन के साथ भक्षण की हुई बुद्धि और बल को बढाती है तथा इन्द्रियो को प्रकाश मान करती है और पित्त, कफ, वात का नाश करती है तथा मूत्र और मलो को निकालती है।

भुक्तोपरि सेवित हरीतकी के गुण—भोजन के पीछे भक्षण की हुई हरड अन्नपान के दोप और वात, पित्त, कफ से उत्पन्न हुए अनेक दोपो को दूर करती है।

हरीतकी के विशेष गुण—हरड लवण के साथ कफ का, मिश्री के साथ पित्त का, घी के साथ वात मे उत्पन्न हुए रोगो को और गुड के साथ खाने से सपूर्ण रोगो का नाश करती है।

ऋतु हरीतकी गुणा—हरड वर्षा ऋतु मे सैन्धव लवण के साथ, शरद ऋतु मे शर्करा के साथ, हेमन्त ऋतु मे शुण्ठी के साथ, शिशिर ऋतु मे पीपल के साथ, बसत ऋतु मे मधु के साथ और ग्रीष्म ऋतु मे गुड के साथ रसायन गुणो की चाहना वालो को सेवन करनी चाहिए।

गुड की मात्रा हरड के बराबर और मिश्री हरड से आधी ली जानी चाहिए। प्रतिदिन प्रातःकाल एक हरड नमक के मिश्रण वाली जल से और शेप दूध से ली जानी उचित है—

मात्रा—बडी हर ३ से ६ माशे (रेचनार्थ), १ माशे रसायनार्थ—छोटी हर्रे १ से ३ माशे। (द्र गु. वि.)

हरड मनुष्यो को माता के समान हित करने वाली है, माता तो कभी कभी कुपित भी होजाती है, परन्तु उदर मे स्थित अर्थात् खाई हुई हरण कभी भी अपकारी नही होती।

"यस्य माता गृहे नास्ति तस्य माता हरीतकी।
कदाचिद् कुप्यते माता नोदरस्था हरीतकी" ॥

(राजवल्लभ)

अन्य द्रव्ययुक्त हरीतकी गुणा—हरड से दूनी दाख लेकर विधिपूर्वक चूर्ण करके बहेडे के फल के समान गोली बनावे, उस कल्याणकारी गोली का प्रात काल मे जो मनुष्य सेवन करता है, उसके पित्त हृदयरोग, रक्तदोष, विषम ज्वर, पाडुरोग, वमन, कुष्ठ, खासी, कामला, अरुचि, प्रमेह, आनाह, गुल्म और पिड़िका इत्यादि रोग नष्ट होते है।

हरड़ पथ्य ही पथ्य है—भुक्ते पथ्याऽभुक्ते पथ्या, भुक्ताभुक्ते पथ्यापथ्या। जीर्णे पथ्याऽजीर्णेपथ्या, जीर्णा जीर्णेपथ्यापथ्या। हरड भोजनोपरात और भोजन से प्रथम दोनो समय मे पथ्य है तथा जीर्ण मे और अजीर्ण मे

भी पथ्य है।

हरीतकी सेवन निषेध—मार्ग में चलने से थका हुआ, बलहीन, रूक्ष, कृश, लघन करने से दुर्बल हुआ, अधिक पित्तवाला, गर्भवती स्त्री, और जिसका रुधिर निकाला गया हो अर्थात फस्तखोली हो, नवीन ज्वर वाला, हनुस्तम्भ रोग और शोषयुक्त इत्यादि कहे हुए मनुष्यो को हरड सेवन निषिद्ध है। (शा. नि.)

हरड के बीज के गुण—हरड के बीज की मज्जा नेत्रो को हितकारी, भारी तथा वात, पित्त हारी है।

यूनानी मतानुसार—

(१) हलील.स्याह (जवाहरड) के गुण—प्रकृति–पहले दर्जे में शीत और दूसरे मे रूक्ष है। गुण-कर्म–मस्तिष्क वलवर्धन, द्रवाभिशोषण कर्त्ता, अन्त्रामाशय वलवर्धन, सौदा विरेचनीय (भृष्ट सग्राही) और रक्तशोधक है। उपयोग–मेध्य होने के कारण स्मृति और बुद्धि का दौर्बल्य दूर करने, सवेदना को तीव्र एव वलवान बनाने के लिये काली हर्रं का उपयोग करते हैं। द्रवाभिशोषण कर्त्ता होने से मस्तिष्क के दूषित द्रवो का शोषण करने के लिए इसे मालिन्खोलिया और अर्दित जैसे रोगो में चबाते है। यह स्निग्ध आमाशय के लिए विशेष रूप से बलप्रद है। सौदा विरेचनीय और रक्तशोधक होने के कारण अनेक सौदावी रोगो जैसे–मालिन्खोलिया, सौदावी अन्यथा ज्ञान, अर्श, कुष्ठ और खजू आदि मे इसे देते है। अतिसार बन्द करने के लिए इसको घी या बादाम के तेल मे स्नेहाक्त करके और भृष्ट करके चूर्ण बनाकर खिलाते हैं। अतिसार बन्द करने के अतिरिक्त यह अन्त्र और आमाशय को शक्ति भी देती है। मात्रा—५ माशे से ७ माशे तक।

२. हलीए जर्द (छीपा हड़, पीली हड) के गुण—प्रकृति–पहले दर्जे मे सर्द और दूसरे में खुश्क। गुण-कर्म–मेध्य, चक्षुष्य, दीपन, सग्राही और पित्त विरेचनीय है।

उपयोग—हर्रे को प्राय मस्तिष्क रोगो मे विभिन्न प्रकार उपयोग कराते है। ग्राही और चक्षुष्य होने के कारण इसे मधु के साथ घिसकर आँखो मे लगाते है। दृष्टि दौर्बल्य, नेत्रस्राव और नेत्र की रक्तिमा दूर करने केलिये यह गुणकारी है। दीपन होने से इसे मदाग्नि में उपयोग कराते है। पित्त विरेचन होने के कारण पित्तज रोगो में इसे देते हैं। किंतु यह स्मरण रहे कि इसका हिम वा फाट इसके क्वाथ की अपेक्षा अधिक वीर्यवान होता है। मस्तिष्क और आमाशय को शक्ति देने तथा कब्ज दूर करने के लिये इसका मुरब्बा खिलाया जाता है।

मात्रा—५ माशे से ७ माशे तक। हड का मुरब्बा १ अदद।

वक्तव्य—पीली हर्रे का औषधि मे प्राय प्रयोग नही होता है। यह रगने के काम के व्यापार मे आती है।

३.हलीलए काबुली (काबुली हड़) के गुण—यह दोष त्रयकी विरेचन है और समस्त गुणो में पीली हड के समान है और इसकी विरेचनीय मात्रा भी उसी के बराबर है।

नव्य चिकित्सको के मतानुसार गुण धर्म—डाक्टर देसाई के मतानुसार हरड़ मृदु विरेचन, अर्शोघ्न, श्लेष्महर, शोथनाशक, रक्तस्रावरोधक, बल्य, पथ्य, गुल्महर, व्रण रोपण और वय स्थापन है। यह शरीर की सब क्रियाओ को सुधारती है, इस हेतु से इसे रसायन सज्ञा दी है। इससे क्षुधा लगती है, अन्न पचन होता है। शौच शुद्धि होती है। विरेचनार्थ देने पर प्रारम्भ मे विरेचन होकर फिर स्वयमेव दस्त बन्द हो जाते है। इससे मरोड़ नही आता, न जम्भाई आती है। दालचीनी समान सुगन्धित द्रव्य मिलाने पर क्रिया सुधरती है।

इसे अनेक दिनो तक लेते रहने पर भी त्रास नही होता। यह हृदय और रक्तवाहिनियो की शिथिलता दूर करती है। रक्ताभिसरण क्रिया सुधरने से मस्तिष्क मे अधिक रक्त पहुचाता है जिससे मुख पर तेजी आती है, निद्रा अच्छी आती हैं, वीर्य गाढा होता है। स्त्री सेवन मे प्रीति उत्पन्न होती है, देह का रग सुधरता है और शरीर का वजन बढ जाता है। हरड़ की यह क्रिया अनेक मास तक सेवन करने पर प्रतीत होती है। (गा. औ र)

उपयोग—आयुर्वेद मे जितनी औषधियां लिखी है, इन सबमे हरड को श्रेष्ठतम माना है। हरीतकी की स्तुती करते है कि, तू हर [महादेव] के भवन मे उत्पन्न हुई है। अन्य आचार्यो ने हरीतकी की उत्पत्ति अमृत मे से दर्शायी है। तात्पर्य यह है कि, हरड अमृत के समान उपकारी है।

मानव शरीर पर हरड का प्रभाव–हरड के गुणो का वर्णन करते हुए महर्षि चरक ने उल्लेख किया है–संसार मे दो प्रकार के रसायन द्रव्य पाये जाते है। प्रथम अवस्था–स्थापन अथवा जीवनी शक्ति [Vitality] में वृद्धि करने वाले द्वितीय रोग निवारण [Immunity] शक्ति को बढाने वाले।

अवस्था स्थापक द्रव्यो मे 'आवला' सर्वश्रेष्ठ होता है और रोगनिवारण द्रव्यों में 'हरड' के समान अन्य वस्तु नही। आवला शीतवीर्य तथा हरड उष्णवीर्य होती है। पेट मे पहुँचते ही हरड का सर्व प्रथम और प्रधान कार्य शरीर से विजातीय द्रव्यों को बाहर निकाल कर, शरीर के प्रत्येक अग-प्रत्यग की क्रियाशीलता को व्यवस्थित करना है, पेट, मस्तिष्क, रक्त, हृदय अथवा जननेन्द्रियो मे जिस किसी स्थान पर विजातीय सामिग्री होगी, वही से यह उसे शरीर के स्वाभाविक मार्गो द्वारा निकालकर उस अङ्ग का शोधन कर देती है।

इसी विलक्षण सामर्थ्य के कारण ही, प्राचीन चिकित्सा विज्ञान मे हरड को सर्वोच्च स्थान प्राप्त हुआ है। पाश्चात्य चिकित्सा जगत ने अभी तक ऐसी महान वनस्पति को हृदय से नही अपनाया, जबकि भारतीय चिकित्सक आयुर्वेद की इस गौरवपूर्ण वस्तु को, सहस्रो वर्षों से निरन्तर और सफलतापूर्वक प्रयोग करते चले आ रहे हैं। उनकी दृष्टि मे हरड केवल औषधि ही नही, अपितु जीवन विनिमय क्रिया को सुधारने वाली एक परम रसायन और दिव्य वस्तु है। हमारे यहा छोटे बच्चो को जन्म के साथ ही हरड की घुटी देने का रिवाज है। हरड की इस घुटी से तात्कालिक उपद्रवो से तो बच्चा सुरक्षित रहता ही है मगर उसके रक्त मे ऐसी रोग प्रतिरोधक शक्ति पैदा हो जाती है जो जीवन भर उसका साथ देती है।

हरड उदर मे पहु च कर आरम्भ मे दस्तो के द्वारा शरीर मे एकत्रित विजातीय द्रव्यो को बाहर निकालती है। जब ये मल शरीर से बाहर हो जाते हैं और भीतर से भली भाति शुद्धिकरण हो लेता है तब ये दस्त, स्वय ही बन्द हो जाते हैं। इसके पश्चात् जठराग्नि प्रबल हो जाती है। परिणामत. सग्रहणी, अतिसार की व्याधि भी नष्ट हो जाती है और अन्न का भली भाति परिपाक होकर शनै-शनै. बल की वृद्धि होती है।

हरड को लगातार लम्बे समय तक सेवन करने से, किसी प्रकार की किंचित भी हानि होने की शका करना व्यर्थ है। इसके सेवन से हृदय और शरीर मे फैली असख्य रक्तवाहिनी शिराओ की शिथिलता दूर होती है। रक्ताभिसरण क्रिया मे सुधार होने से मस्तिष्क में अधिक रक्त पहु चने लगता है जिससे मस्तिष्क मे तरावट आती है और मस्तिष्क सम्बन्धी अनेक व्याधियो के साथ साथ अनिद्रा की शिकायत भी दूर हो जाती है। बुद्धि को चैतन्य कर सात्विक विचारो को उत्पन्न करना तथा स्मृति को बढाना हरड का विशेष गुण है। नियमित सेवन से धातुओ मे गाढापन आता है और अनेक प्रकार की दुर्बलताए दूर होकर, शरीर का वर्ण निखर उठता है। शरीर का पतलापन दूर कर अपुष्ट अङ्गो को पुष्ट बनाना और मोटापे को कम करना, दोनो ही कार्यों मे हरड का प्रयोग किया जाता है। हरड की यह क्रियाए, कम से कम एक मास तक निरन्तर प्रयोग करने के पश्चात्, स्पष्ट होने लगती हैं।

अनेक स्थानो पर हरड को योगवाही तथा रसायन कहा गया है इसका अर्थ सरल शब्दो मे इस प्रकार जानना चाहिये। जो वस्तु किसी भी अन्य वस्तु में मिलाकर लेने से उसके गुणो की वृद्धि करे, शरीर मे शीघ्र ही लीन करे, वह 'योगवाही' कही जाती है। 'रसायन' की सज्ञा उसे दी गयी है जो सबके लिये, प्रत्येक काल और अवस्था मे सेवनीय हो, सर्व प्रकार के रोगो को नष्ट करती हो तथा शरीर के प्रत्येक अङ्ग-प्रत्यङ्ग को नव जीवन प्रदान कर सुदृढ स्वास्थ्य और दीर्घायु प्रदान करने का सामर्थ्य रखने वाली हो। रसायन सेवन करते रहने से असमय ही वृद्धावस्था नही आने पाती और शरीर मे रोग प्रतिरोधक शक्ति का बाहुल्य रहता है जिससे अनायास ही किसी रोग का प्रभाव नही होने पाता, क्योकि यह रस वाही स्रोतो के अवरोध को दूर कर, समस्त इन्द्रियो को बल प्रदान करने मे अपना जोड़ नही रखती।

बाल हरड या जौ हरड मृदु विरेचक, वायुनाशक और बलकारक होती है। यह बड़ी हरड़ के समान रसायन धर्म वाली नही होती, इसकी क्रिया सिर्फ पाचन नलिका पर होती है। नमक मिलाने से इसकी क्रिया विशेष उत्तम

हो जाती है।

कुपचन रोगो मे बडी हरड बहुत उत्तम वस्तु है, अतिसार,आंव और आंतो की शिथिलता मे इसका उत्तम प्रभाव दिखलाई देता है। बवासीर के रोग मे इसको सेंधानमक के साथ देते हैं।

खूनी बवासीर मे इसका क्वाथ बनाकर दिया जाता है। अर्श की सूजन को उतारने के लिये और उसकी वेदना को दूर करने के लिये इसको पानी मे पीसकर लेप करतेहै।

जीर्ण ज्वर और प्लीहा की वृद्धि मे हरड का चूर्ण विड़ लवण के साथ दिया जाता है। यद्यपि इससे प्लीहा का सकोचन होने मे अधिक समय लगता है फिर भी उसके मध्य मे रोगी के स्वास्थ्य मे काफी सुधार हो जाता है। किसी भी स्थान से होने वाले रक्तस्राव को रोकने मे भी हरड़ एक उत्तम वस्तु है। कितने ही लोगो को अधिक पसीना आने, नाक बहने और सर्दी होने पर बहुत लम्बे समय तक कफ पडने की आदत होती है और कुछ मनुष्यो को जरा चोट गते ही पीव बहने की आदत होती है। ऐसे मनुष्यो को हरड का सेवन करने से बहुत लाभ होता है।वीर्य पतला हो गया हो तथा जननेन्द्रिय मे शिथिलता आ गई हो तो हरड़ के रसायन का सेवन करने से वह दूर हो जाती है।

मुख के व्रणो पर इसका लेप किया जाता है, गले की सूजन या गले के भीतर गठान होने पर हरड को पानी में पीसकर लेप करते है।

बाल हरड या जौ हरड अजीर्ण की वजह से होने वाले दस्त, मरोडी, जीर्ण अतिसार, जीर्ण आंव, गुल्म, प्लीहावृद्धि और बवासीर रोग मे बहुत गुणकारी होती है। हमेशा की आदतन कब्जियत मे अग्रेजी औषधि कास्करा सेग्रेड़ा जैसा लाभ बतलाती है उससे भी अधिक यह छोटी हरड दिखलाती है। कब्ज को नष्ट करने के लिये कई महीनो तक इसको देते रहने पर भी कोई हानि नही होती। कब्ज की वजह से होने वाले बवासीर मे भी यह उपयोगी होती है।

चरक और सुश्रुत के मतानुसार हरड बवासीर रोग मे बहुत उपयोगी होती है। इसके चूर्ण को गुड में मिलाकर खाने से खूनी और भीतरी बवासीर मे बहुत लाभ होता है।

सुश्रुत के अनुसार श्लीपद रोग मे हरड़ का पिसा हुआ चूर्ण ताजा गोमूत्र के साथ देने से बहुत लाभ होता है। लगातार कायम रहने वाली हिचकी मे हरड का चूर्ण गरम पानी के साथ देने से हिचकी बन्द हो जाती है। (व च)

हरीतकी के अद्भुत प्रभाव पर वैद्य शकरलाल जी शर्मा भिषगाचार्य का अनुभव—

एक बारह वर्ष के लडके के हाथ-पैर की दशो अगुलियो के नख कृष्ण उभरे हुए एव बेडौल हो गये थे। इन पर अगुली का दबाव पडने से इनमे पीडा होती थी छेद्य नखो के बढने पर काटने के बाद भी जो नया नख आता है वह भी विकृत ही आता था। पूछने पर उसने कोई कारण विशेष भी नही बतालाया। इसकी चिकित्सा रेलवे के शिविल सर्जन द्वारा कराई गई क्योकि लडके के पिताजी रेलवे स्कूल मे अध्यापक है। डाक्टर महोदय ने चिकित्सा मे कई तरह के विटामिन्स, इन्जेक्शन व अन्य औषधिया तथा बिजली का सेक भी किया। यह एलोपैथिक चिकित्सा करीब छ मास तक कराई गई और लडके के पिता के दो सौ ढाई सौ रुपये भी व्यय हो गये परन्तु लाभ अश मात्र भी नही हुआ, तब लडके को यहा (फतहपुर-शेखावाटी) लाया गया, क्योकि यहा लडके का ननिहाल है तथा योग्य डाक्टर एव वैद्य भी है चू कि ऐलोपैथी चिकित्सा तो पहले भी ६ मास तक करा चुके थे उससे कोई भी लाभ न हुआ तभी वे लडके को यहा लाये। यहा आने के बाद इन्होने यही निश्चय किया कि आयुर्वेदिक चिकित्सा ही करायेगे। लडके को यहा कई वैद्यो को दिखलाया, जिनमे से मै भी एक हूं। मैंने अपने गत १३ वर्ष के चिकित्सा काल मे ऐसा रोगी नही देखा था। अत उनसे कहा कि इस विषय मे कुछ विचार कर कहूंगा। यह कहकर मैंने भाव प्रकाश का क्षुद्र रोगाधिकार का अध्ययन किया। इस अधिकार में नखो के दो रोग है—'चिप्प और कुनख'। परन्तु इस लडके की नखो की सदृशता दोनो रोगो से नही मिलती थी। परन्तु मैंने निश्चय किया कि चिकित्सा 'चिप्प' रोग की ही करनी चाहिए। यह विचार कर मैंने लडके की अगुलियो पर लेप के लिये निम्न योग बताया-लोहे के पात्र में बडी हरड को हलदी के पानी के साथ घिसकर नखो पर लेप लगाने को कहा और रक्तमोक्षण कराने को भी कहा। यहा जोक मिली नही अत. रक्त मोक्षण तो नही हो सका परन्तु लेप चालू कर दिया गया

यह चिकित्सा भाव प्रकाश मे ही है धन्वन्तरि की अनुकपा से १५ दिन वाद थोडा लाभ मालूम देने लगा। छः मास तक निरन्तर उक्त लेप करते रहने से सभी नख पूर्णरूपेण स्वस्थ होगये। इस लेप की शुरूआत कर करीव-करीव २ मास वाद जब लडका अपने गाव गया तब नखो को सिविल सर्जन महोदय ने भी देखा तो वे बहुत प्रसन्न हुये और उन्होने पूछा कि यह लाभ किस उपाय से हुआ।

(सचित्र आयुर्वेद जून १६५७ से साभार सकलित)

रसायन गुण की प्राप्ति—इसका विधिवत् नित्य सेवन करने पर वृद्धावस्था नही आती। यह लाभ पथ्य भोजन करने वाले व्यायाम सेवी, स्त्री समागम मे संयमी और मन वाणी से भी दूसरो का द्रोह न करने वालो को पूरी मात्रा मे मिलता है।

(अ) हरड के चूर्ण को घी मे मिला लोहे के वरतन मे रात्रि को लेप कर देवे। सुवह निकाल शहद, घी मिलाकर सेवन करें। इससे वल वृद्धि होगी, रोगोत्पत्ति नही होगी। आयु भी वढ़ेगी।

(आ) आचार्यो ने ऋतु भेद से कहे हुये सैंधवादि अनुपान के साथ सेवन करने से उदरस्थ विकृति दूर होकर वलवीर्य की वृद्धि होती है।

(इ) त्रिफला (हरड, बहेडा और आंवला की गुठली निकाल कर फिर सम भाग मिलाकर वनाया हुआ चूर्ण) का सेवन समभाग घृत मिलाकर करने पर कफ प्रकोप, पित्त प्रकोप, प्रमेह, कुष्ठ और जीर्ण विषय ज्वर का नाश होता है। नेत्र ज्योति वढ जाती है और शरीर सुदृढ हो जाता है।

(ई) हरड, आवला, चित्रक मूल और पीपल, इन चारो को समभाग कूटकर चूर्ण बना सेवन करते रहने से वह कफ और मेद प्रकोप, प्रमेह, कुष्ठादि चर्म रोग, अग्निमांद्य, गुल्म और पीनस को दूर कर पाचन शक्ति को वढाता है तथा शरीर को निरोगी और सुदृढ बना देता है। यह कफ प्रधान और मेद प्रधान प्रकृति वालो के लिये विशेष हितकर है।

मलावरोध—हरड का मोटा चूर्ण १॥ तोले जल में मिलाकर मन्दाग्नि पर चतुर्थांश क्वाथ करें। फिर छान-४ रत्ती सोठ और २ माशा सेधानमक मिलाकर सेवन कराने पर उत्तम ३-४ जुलाव होता है। यह अपचन जन्य मलावरोध, नया अतिसार, नया पेचिस, आमातिसार और अर्श रोग मे हितकर है। इस जुलाव से उवाक नही आती, मुह मे जल नही भरता, उदर मे दर्द नही होता। जुलाव होने पर अन्त्र मे उग्रता उत्पन्न नहीं होती, जुलाव लग जाने पर स्वयमेव अन्त्र का आकुचन होता है और पाचन शक्ति सवल बन जाती है। इसी हेतु से विरेचन द्रव्यो के उल्लेख प्रसङ्ग मे सुश्रुत सहिताकार ने विरेचन प्रधान फल द्रव्यो मे हरड को सर्वोत्तम कहा है।

सूचना—तरुण ज्वर (नया बुखार) मे मलावरोध हो तो हरड का उपयोग नही करना चाहिये। क्योकि यह विरेचन के अन्त मे ग्राही गुण दर्शाती है।

जीर्ण मलावरोध और मलावरोध से उत्पन्न विविध रोगो को दूर करने के लिये यदि पथ्य पालन और श्रद्धा सह दीर्घकाल तक हरीतकी रसायन का सेवन किया जाय तो सब रोग दूर होकर शरीर निरोगी और सुदृढ बन जाता है।

आमातिसार—आमातिसार और नये पेचिश के प्रारभ मे हरड ४ माशे, सोठ १ माशे, घी और शक्कर ३—३ माशे मिलाकर सेवन कराने से रुका हुआ मल गिर जाता है, अन्त्र मे उग्रता का शमन होकर आमातिसार और पेचिश दूर हो जाते हैं।

सूचना—यदि अन्त्र मे उष्णता अधिक हो और तृषा अधिक लगती हो, तो सौंफ का फाण्ट पिलावे। यह फाण्ट आम निकालने और उग्रता शमन मे अति सहायक होता है।

ववासीर के रोगी को प्राय मलावरोध रहता है। उनके लिये हरड उत्तम औषधि है। मट्ठा अथवा दूध और शक्कर के साथ रात्रि को एरण्ड तैल मे भुनी हुई छोटी हरड का चूर्ण देते रहने से सरलता से उदर शुद्धि होती रहती है और मस्से मे किसी भी प्रकार का कष्ट नही होता। वैश्वानर चूर्ण भी हितावह है।

उदर मे वात प्रकोप—हरड मे अनुलोमन और दीपन पाचन गुण होने से वैश्वानर चूर्ण अथवा एरण्ड तैल मे भुनी हुई हरड का चूर्ण सेवन पिप्पली और सेंधानमक के साथ ५-७ दिन तक करने से उदर शुद्धि होती है, अन्त्र वलवान वनता है और उदर मे रहने वाली वात स्वाभाविक अनुलोमन होती रहती है।



खांसी—हरड और वहेडा का चूर्ण शहद के साथ लेते रहने पर खासी का कष्ट कम हो जाता है और पाचन क्रिया को लाभ पहुँचता है।

जीर्ण श्वास—श्वास का रोग पुराना होने पर कफ प्रकोप होकर वार वार कफ गिरता रहता है, थोडा सा चलने पर दम भर जाता है और पचन क्रिया अति मन्द हो जाती है। यह तमाखू के व्यसनियो को अधिकतर होता है। उनके लिये गोमूत्र क्षार का चूर्ण सेवन अति लाभदा-दायक है।

शीतपित्त—पथ्यादि मोदक ४–५ दिन तक रोज सुवह देने और खिचडी या दाल भात खिलाते रहने पर पित्ती निकलना वन्द हो जाता है। यदि रोग जीर्ण हो, तो औषध सेवन अधिक दिनो तक कराना चाहिये।

नेत्र रोग—दीर्घकाल से नेत्र मे से जल टपकते रहना, रोहा होने से पलक के नीचे गढना, नेत्र मे खाज चलना, नेत्र मे जलन रहना, नेत्र मे भारीपन वना रहना, नेत्र मे शूल चलना, वार वार आख का आ जाना, दृष्टिमाद्य हो जाना आदि रोगो पर त्रिफला के हिम से सुवह और शाम को आखो को धोते रहना चाहिये।

आख धोने के लिए काच की प्याली (Eye Bath glas) खास बनी हुई आती है, यह आपको दाऊ सेंडीकल स्टोर्स विजयगढ (अलीगढ) से उपलव्ध हो सकती है। साथ-साथ त्रिफला, घी, शक्कर मे मिलाकर सेवन भी कराते रहना चाहिए। रोहे के अति पुराने रोगियो को भी इस प्रयोग से लाभ पहुँचता है।

हिक्का—अपचन या आमाशय प्रदाह होकर हिक्का उत्पन्न हुई हो, उसमे अपचन के लक्षण भी साथ मे रहते हो, उस पर छोटी हरड का चूर्ण निवाए जल के साथ देने से तुरन्त लाभ पहुँचता है।

रक्तपित्त—दात, मुह, नाक या गुदा से कभी कभी रक्तस्राव होता है। पचन क्रिया दूषित हो गई है और शरीर मे निर्बलता आई हो तो हरड और पिप्पली को शहद के साथ देवे। ऊपर अडूसे के पानो का क्वाथ पिलाते रहे तो रक्तपित्त दूर हो जाता है। भोजन मे दूध अधिक लेना चाहिए। भोजन जल्दी पचे वैसा, किन्तु पौष्टिक होना चाहिए।

मदात्यय—शराब का व्यसन वहुत वढ जाने पर छाती मे दाह, निद्रानाश, अग्निमाद्य, व्याकुलता, मलावरोध, बुद्धि माद्य आदि लक्षण उपस्थित होते है। उस रोग मे हरड का क्वाथ दूध मिलाकर पिलाते रहना चाहिए। यदि ४–४ रत्ती खुरासानी अजवायन भी दिन मे दो वार देते रहे तो शान्त निद्रा आती है और लाभ भी अधिक पहुचता है।

कण्डू—(अ) शरीर मे खुजली चलती रहती हो तो ८ गुने तैल मे हरड भून लेवे। फिर उस तेल से मालिश करते रहे।

(आ) वाल हरीतकी योग का सेवन कराने पर शुष्क कण्डू, पामा, पुरानी विद्रधि, वार वार फोडा फुन्सी होना और विस्फोटक के फोडे आदि थोडे ही दिनो मे दूर हो जाते है।

अग्निमाद्य—हरड का चूर्ण, सोठ, गुड और सेंधानमक के साथ अथवा हरड आवला पिप्पली और चित्रकमूल का चूर्ण, गुड और सेंधानमक के साथ दिन मे दो वार सेवन कराते रहना चाहिए।

अति स्वेद—पसीना अत्यधिक आता हो, तो हरड के कपडछन चूर्ण से मालिश करके स्नान करते रहे।

सूचना—भोजन, दूध, चाय आदि अति गरम गरम लेते हो, तो उसे वन्द करे। हाथ लगाने पर भोजन सामान्य गरम मालूम हो, ऐसा लेवें। धूम्रपान का व्यसन हो, तो छोड देना चाहिए।

अम्लपित्त—हरड और मुन्नका ६-६ माशे मिलाकर सुवह १० से २० तोले जल के साथ देने से आमाशय मे सग्रहीत पित्त अन्त्र और रक्त मे जाकर वाहर निकल जाता है। अम्लपित्त शामक मुख्य चिकित्सा भी करते रहना चाहिये। भोजन मे अति गरम पदार्थ, दही, मट्ठा, अधिक मिर्च आदि का त्याग करना चाहिए।

वृषण वृद्धि—छोटी हरड को ७ दिन गोमूत्र मे भिगोवे, रोज गोमूत्र नया डाले। फिर छाया मे सुखाकर एरण्ड तैल मे भून लेवे।। वाद मे कूट पीसकर सेंधा नमक मिलाकर वोतल मे भर लेवे। मात्रा २ से ४ माशे, रोजाना रात्रि को लेते रहने से २-४ मास मे वृषण वृद्धि दूर होजाती है। यदि वृषण पर शोथ हो तो हरड को गोमूत्र या जल मे पीसकर लेप भी करते रहना चाहिए।

सूचना—हरड को भिगोने के लिए गो मूत्र उतना ही ले कि हरड के आध इञ्च ऊपर रहे।

वमन—हरड का चूर्ण शहद के साथ चटाने से वमन बन्द हो जाती है।

मेदोवृद्धि—शरीर मे मेद अधिक बढ जाने पर बहुत स्वेद आता है। थोडा चलने पर श्वास भर जाता है। क्षुधा, तृषा का वेग शमन नही होता और शरीर भारी मालूम पडता है। ऐसी अवस्था मे भोजन कम लेने पर हरड को नित्य चबाकर खाते रहने से मेद का ह्रास होता है और पचन क्रिया सबल बनती है।

दुष्ट नाड़ीव्रण—बाहर उपचार करने के साथ, हरड, वायबिडङ्ग, सोठ निशोथ और सेधानमक का चूर्ण गोमूत्र के साथ रोज सुबह सेवन कराते रहने से उदर शुद्धि होती है और रक्त प्रसादन होकर व्रण मे पूय की उत्पत्ति रुक जाती है।

हरड का चूर्ण व्रण मे डालते रहने अथवा गोमूत्र मे घिसकर दिन मे ४-६ बार लेप करते रहने पर पूयोत्पत्ति कम होजाती है। फिर व्रण शुद्ध होकर जल्दी भर जाता है।

व्युची—व्युची रोग दृढ होजाने पर अति दुखदायी होता है। वर्षो तक दूर नही होता। प्रारम्भिक अवस्था मे हरड को गोमूत्र मे या जल मे घिस कर लेप करते रहने पर थोडे ही दिनो मे सूखकर चमडी स्वच्छ हो जाती है। यदि रोग अतिजीर्ण होगया है, तो भी हरड को घिसकर लगाते रहने पर २-३ मास मे व्युची दूर हो जाती है। यदि अति खुजली चलकर चमडी शुष्क रहती हो तो ऐसी अवस्था मे बार बार एरण्ड तेल ही लगाया जाता है।

वृघ्न—साथलो के मूल मे बद (बदगाठ) होने पर हरीतक्यादि कषाय का सेवन प्रथमावस्था मे कराया जाय तो रक्त प्रसादन होकर बद बैठ जाती है। पच्यमानावस्था मे सेवन कराया जाय और पुल्टिस आदि बाह्योपचार कराया जाय, तो बद् जल्दी फूट कर व्रण भर जाता है और ज्वर, वेदनादि कष्ट कम हो जाते हैं।

जीर्ण आमवात—आमवात का रोग एक समय होजाने पर वर्षा ऋतु में या अधिक शक्कर खाने पर बार बार कष्ट पहुचाता रहता है। किसी स्थान मे शूल चलना, अगुलियो आदि भागो मे सूजन आजाना, हृदय में विकृति होना आदि उपद्रव होते रहते हैं। इस रोग को दूर करने के लिए पथ्य पालन सह ६-८ मास तक वैश्वानर चूर्ण का सेवन कराया जाय, तो रोग निवृत हो जाता है।

(गा. औ. र)

विशिष्ट योग-

अमृत हरीतकी—उत्तम बडी जाति की हरड एक सौ लेकर उनको गाय के मट्ठे मे उबालना चाहिये। जब हरड अच्छी तरह पक जाय तब उनको मट्ठे मे से निकाल कर उनमे से प्रत्येक हरड का सिरा काट कर उसमे से गुठलिया निकाल डालनी चाहिये। उसके पश्चात् सोठ, मिर्च, पीपर, पीपरामूल, चित्रक की जड, चव्य, सेंधा नमक, सचर नमक, बिड नमक, समुद्र नमक, अजवायन, यवक्षार, सज्जी क्षार, भुनी हुई हीग और लवण ये सब चीजें दो-दो तोला और निसोथ ८ तोला। इन सब चीजो का चूर्ण करके उसे तीन दिन तक नीबू के रस मे भिगो देना चाहिये। फिर सभी चूर्णको उन गुठली निकाली हुई हरडो मे भर देना चाहिये। फिर उन हरडो को धूप मे रखकर अच्छी तरह सुखाकर एक बोतल मे भरकर रख देना चाहिये। यह अमृत हरीतकी कहलाती है।

इन हरड़ो मे से प्रतिदिन सवेरे एक हरड़ लेकर सेवन करने से अजीर्ण और मन्दाग्नि से होने वाले नाना प्रकार के रोग दूर होते हैं। जठराग्नि बहुत प्रबल हो जाती है। देश देशान्तरो का पानी लगने से होने वाली बीमारिया भी मिट जाती है। हैजे के दिनो मे अगर प्रतिदिन एक हरड का सेवन कर लिया जाय तो हैजा होने का भय नही रहता है।

अगस्त्य हरीतकी—बेल की जड़, अरणी की जड, अडूसा की जड, पाढल की जड़, गभारी की जड, बडी कटेरी की जड, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, गोखरू की जड, कौंच की जड, शखाहुली, कची की जड, गजपीपर, भारगी, कूठ, अपामार्ग की जड, पीपलामूल, चित्रक की जड़ ये सब चीजें ८-८ तोला लेकर, जौकुट करके बत्तीस सेर पानी में औटाना चाहिये और इस पानी मे २५६ तोला जौ तथा एक सौ उत्तम जाति की बड़ी हरड लेकर एक पतले कपडे की पोटली मे बाधकर डाल देना चाहिये। इस पानी को औटाते-२ जब चौथाई पानी शेष रह जाय उसे उतार कर

छान लेना चाहिये और हरडो मे से गुठलिया निकाल कर उनके गर्भ तथा जौ को एक मजबूत खादी के कपडे में डालकर छानलेना चाहिये और उनमें से निकले हुये कूचों को फेंक देना चाहिये। इस प्रकार निकले हुए जौ और हरड के गर्भ को ३६ तोला घी मे भून लेना चाहिये। फिर उस क्वाथ के आठ सेर पानी मे पुराना ४ तोले गुड और हरड तथा जौ का गर्भ मिलाकर आच पर चढा देना चाहिये। जब वह अवलेह के समान हो जाय तब उसे नीचे उतार कर उसमे सोलह तोला, छोटी पीपर का चूर्ण तथा तज, तमाल पत्र, इलायची और नागकेसर का एक-एक तोला चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह मिला लेना चाहिये। ठण्डा होने के पश्चात् उसमे सोलह तोला शहद भी मिला लेना चाहिये। यह अगस्त्य हरीतकी कहलाती है जिसका आविष्कार महर्षि अगस्त्य ने किया था।

इस अगस्त्य हरीतकी को एक से लेकर चार तोले तक की मात्रा मे सवेरे शाम सेवन की जाय तो दमा, खासी, क्षय, हिचकी, हृदयरोग, पाण्डु, सग्रहणी इत्यादि अनेक रोगो मे लाभ पहुँचाती है।

अभयादि मोदक—हरड, वहेडा, आवला, नागरमोथा, तज, तमालपत्र, इलायची के बीज, नागकेशर, अजवायन, सोठ, मिर्च, पीपर, धनिया, वरियारी और लौग ये सब चीजें एक-एक तोला, निसोथ जड की छाल ८ तोले, सनाय ८ तोला और उत्तम जाति की गुठली निकाली हुई बडी हरड बत्तीस तोले लेकर सबका महीन चूर्ण कर के चौसठ तोला शक्कर की गोली वन्ध चासनी मे इस चूर्ण को मिलाकर ऊपर से सोलह तोला गुलाव के फूल और सोलह तोले बीज निकाली हुई काली द्राक्षा मिलाकर खूब हिलाकर एक जीव कर देना चाहिये। फिर इसको वैसे ही गोलिया वाघ कर वरणी मे भर देना चाहिए।

यह अभयादि मोदक एक उत्तम और सौम्य विरेचक है, इसको ६ माशे से एक तोला की मात्रा मे खाकर ऊपर से गरम जल पीना चाहिये। इसके सेवन से भोजन के पश्चात् होने वाला उदरशूल, खट्टी डकारें, अम्लपित्त, बवासीर इत्यादि रोगो मे लाभ होता है। हमेशा की कब्जियत को दूर करने के लिए यह एक उत्तम औषधि है। इससे बिना पेट में किसी प्रकार की काठ हुए, बिना आंतो मे जलन हुए सौम्य विरेचन हो जाता है। [व. च.]

त्रिफला—हरडे की छाल १ भाग, बहेड़ा की छाल २ भाग, आवला की छाल ४ भाग, इनको मिलाकर वस्त्रपूत चूर्ण करें। मात्रा—३ माशे से ६ माशे तक।

अभयादि क्वाथ—हरडे, नागरमोथा, धनियां, लाल चन्दन, पद्माख, अडूसा, इन्द्रायन, खस, गिलोय, अमलतास, कालीपाट, सोठ और कुडा प्रत्येक ३-३ माशे लेकर ३२ तोले जल मे क्वाथ करें। जब ८ तोले जल शेष रहे तब उतार छानकर ठण्डा होने पर काम मे लेवें। मात्रा—४ से ८ तोले।

हरीतकी अवलेह (हरड़े अवलेह)—२५६ तोले जव [जौ] लेकर उनको अब कचरे खाड कर इनसे चौगुने पानी मे उवालें। चौथा भाग अवशेष रहने पर उतार के छान लें और जवो को डाल दे फिर दशमूल ८० तोले और चित्रक, पीपलामूल, अपामार्ग, कचूर, कौच बीज, शखपुष्पी, भारगी छाल, गज पीपल, चित्रक मूल और पुष्करमूल ये दस औषधिया ८-८ तोले लेकर इनको थोडा कूटकर १२८० तोले पानी मे डालकर उबाले, चौथा भाग पानी अवशेष रहने पर उतार छानकर पहले रखे हुये जवो के पानी मे यह पानी भी मिला देवे। बाद मे इसमें सुरवारी हरडे १००, घी और तिल्ली का तेल ३२-३२ तोले तथा गुड़ ४०० तोले डालकर उवाले। जब गाढा हो जावे तब उतार ले और ठण्डा होने पर इसमे पीपर का चूर्ण और शहद १६-१६ तोले मिला देवें। तैयार होने पर इसे हरडे का अवलेह कहा जाता है और अगस्त्य हरीतकी भी कहते है। मात्रा—½ से १ तोला।

वैश्वानर चूर्ण—सैंधव २ भाग, यवक्षार २ भाग, सोठ ५ भाग और हरडे १० भाग इनका चूर्ण तैयार करे। मात्रा—३ से ६ माशे।

अमृत हरीतकी न. २—१०० बडी हरडो को छाछ मे उवालें, जब वे नरम पड जावे तब अन्दर से गुठली निकाल लें। बाद मे सोठ, मिर्च, पीपल, तज, चित्रक, पच लवण, अजवाइन, यवक्षार, सज्जीक्षार, शुद्ध हागा हींग

और लौंग ये प्रत्येक ४-४ तोला लेकर इनका चूर्ण बनाकर इमली के रस की और नीबू के रस की भावना देवे। फिर यह चूर्ण हरडो मे भरे और इनको घूप मे सुखावे। सुखाने के बाद हरडो का चूर्ण तैयार करले।

पथ्यादि गुण -१२८ तोले हरड, ६४ तोले आँवला, कुष्ठ २० तोला, इन्द्र वारुणी, वाय विडङ्ग, लोव, पीपर, सैंधव, काली मिर्च और आलु के फल ये प्रत्येक ८-८ तोला। इन सबको अधकचरे करके २०४८ तोले जल मे उवालें। चौथा भाग पानी शेष रहने पर उतार कर छानकर उसमें ८८० तोले गुड और २० तोले धाय के फूल डालें। तैयार होने पर पथ्यादि गुड नामक बनावट तैयार होती है मात्रा—१ तोला।

मधु पक्व हरीतकी—कदम, नीम, इमली इन तीनो की छाल ६४ तोले। इनको बकरी, गाय और भैंस के मूत्र १० ० तोले मे उवाले जब चतुर्थांश शेष रहे तब उतार कर अन्दर १०० हरडो को डालकर फिर उवाल ले। जब हरडे नरम हो जाय अन्दर से गुठली निकाल कर इन हरडो के अन्दर सज्जीक्षार और भाग मिलित डालकर ऊपर डोरे से दाब देवे और तीन दिन तक इसी तरह रहने देवें। बाद मे इनमे से हरड मधु के साथ देवे (यह बनावट अर्श के ऊपर बहुत लाभ करती है)।

गुण—सारक, शोधक, शीतल। मात्रा —½ तोला।
[आर्य औषधि से]

हरीतकी योग [भै र वातरक्ता]—१ या २ हर्रो को पीसकर गुड के साथ खावे और फिर गिलोय का क्वाथ पीवे।

इससे जानु तक फैला हुआ और स्फुटित वातरक्त भी अवश्य नष्ट हो जाता है।

हरितक्यादि कषाय [धन्व उरस्तम्भा] हर्र, अदरक, देवदारु, लाल चदन और अपामार्ग की जड समान भाग मिलित [२॥ तोले] लेकर कूटकर [२० तोले] बकरी के दूध मे डाले और उसमे (१ सेर) पानी मिलाकर पकावे। जब पानी जल जाय तो दूध को छान ले। इसे पीने से सात दिन मे जघाशूल और उरुस्तम्भ का नाश होता है।

हरीतक्यादि क्वाथ [भै र वृद्धन०]—हर्र, वच, सोठ, निसोत, सनाय, छोटी और बडी इलायची तथा लौग समान भाग लेकर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ ब्रध्न, कास और ज्वर को अवश्य नष्ट कर देता है।

हरीतक्यादि क्वाथ २ (व से ज्वरा)—हर्र, फूल प्रियङ्गु, पीपल, लोध, दारुहल्दी, हल्दी और तेजबल समान भाग लेकर क्वाथ बनावे। इसमे शहद मिलाकर उससे कुल्ले करने से ज्वर मे होने वाली मुख की कटुता और मुख रोग नष्ट होकर मुख शुद्ध हो जाता है और भोजन मे रुचि उत्पन्न होती है।

हरीतक्यादि क्वाथ ३ (वृ. नि र सन्निपात)—हर्र, पित्त पापडा, मुनक्का, शख पुष्पी, कुटकी, नागरमोथा, अमलतास का गूदा, देवदारु और ब्राह्मी समान भाग लेकर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ चित्त भ्रम, सन्निपात को नष्ट करता है।

हरीतक्यादि क्वाथ ४ (भै. र उदरा)—हर्र, सोठ, देवदारु, पुनर्नवा और गिलोय समान भाग लेकर क्वाथ बनावें।

इसमे गोमूत्र और शुद्ध गूगल मिलाकर पीने से शोथोदर का नाश होता है। शोथोदर के लिए यह एक श्रेष्ठ योग है।

हरीतक्यादि क्वाथ५ (भै र मूत्रकृच्छ्रा)-हर्र, गोखरू, अमलतास, पाषाण भेद और धमासा समान भाग लेकर क्वाथ बनावे।

इसमे शहद मिलाकर पीने से दाह और पीडा युक्त मूत्रकृच्छ्र तथा मूत्राघात का नाश होता है।

हरीतक्यादि योग १ (वै म र पटल ११)—हर्र, निसोत और कुलथी समान भाग लेकर क्वाथ बनावें।

इसमे अरण्डी का तेल मिलाकर पीने से शोथ, दाह और उदर रोग का नाश होता है।

हरीतक्यादि योग २ (वै म र पटल ११)—हर्र, सोठ और हल्दी समान भाग लेकर क्वाथ बनावे।

यह क्वाथ ज्वर के कारण उत्पन्न होने वाले शोथ को नष्ट करता है।

हरीतकी योग १(च स चि ६ अ ६) हर्र क मे भूनकर चूर्ण करे और फिर उसमे उसके बराबर पीपल का चूर्ण या निसोत और दन्तीमूल का चूर्ण मिलाकर गुड मे मिला के सेवन करने से मल, वायु, कफ और पित्त स्व-



मार्गगामी होते और गुदा निर्मल हो जाती है तथा अर्श का नाश हो जाता है। मात्रा ३ माशा।

हरीतकी योग २ (भै र वृन्दा.)—हर्रों को गोमूत्र मे पकाकर चूर्ण करे। (३ माशे) इस चूर्ण मे १ माशा सेंधानमक और तिल का तेल मिलाकर प्रातःकाल सेवन करने से कफ वातज वृद्धि का नाश होता है।

हरीतक्यादि कल्क १ (उ नि उरुस्तम्भा. २१)—हर्र, वच, चीतामूल और देवदारु समान भाग लेकर सबको पत्थर पर पानी के साथ पीसकर शहद मिलाकर पीने से उरुस्तम्भ रोग नष्ट हो जाता है। (मात्रा – ६ माशे)

हरीतक्यादि कल्क-२ (यो र बाला)—हर्र, वच और कूठ समान भाग लेकर पत्थर पर पानी के साथ पीस ले और शहद मे मिलालें।

इसे बच्चे की मा के दूध मे घोलकर उसे पिलाने से तालु कण्टक रोग नष्ट होता है। (मात्रा—तीन से चार रत्ती)।

हरीतक्यादि चूर्णम् १(भा प्र. ल. खं. २ अम्लपित्ता)-हर्र, पीपल, मुनक्का, मिश्री, धनिया और जवासा समान भाग लेकर चूर्ण बनावे। इसे शहद के साथ सेवन करने से कण्ठ की दाह तथा पित्त और कफ का नाश होता है। (मात्रा—१½ से २ माशा।)

हरीतक्यादि चूर्णम् २ (यो. र. जीर्ण ज्वरा)—हर्र, नीम के पत्ते, सोठ, सेंधानमक और चीता समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसके सेवन से दुर्जल दोष से उत्पन्न होने वाला ज्वर नष्ट हो जाता है। (मात्रा—२ माशा।)

हरीतक्यादि चूर्णम् (३) (यो र । कृम्य.)—हर्र, हल्दी और संचल (काला नमक) समान भाग लेकर चूर्ण बनावे और उसे इन्द्रायण के स्वरस मे खरल करके सुखा लें। यह चूर्ण कृमियो को नष्ट करता है। (मात्रा–२ माशा)।

हरीतक्यादि चूर्णम्(४) यो. र.। छर्द्य.)—हर्र के चूर्ण को शहद मे मिलाकर सेवन करने से अधोगत दोष नष्ट होते और छर्दि शान्त हो जाती है।

यह योग पित्तज छर्दि मे उपयोगी है।

मात्रा—थोडी-थोडी देर से १-१ माशा चटावे।

हरीतक्यादि चूर्णम् (५) यो र.। आमातिसारा.)–हर्र, अतीस, सैंधा नमक, काला नमक, बच और हीग समान भाग लेकर चूर्ण बनावे।

इसे उष्ण जल के साथ सेवन करने से आमातिसार का नाश होता है। यह चूर्ण ग्राही और दीपन है।

(मात्रा—६ रत्ती।)

हरीतक्यादि चूर्णम्(६) (यो र। उदावर्ता)—हर्र, जवाखार, पीलु के फल और निसोत समान भाग लेकर चूर्ण बनावे। इसे घृत मे मिला कर पीने से उदावर्त का नाश होता है।

मात्रा—६ माशे।

हरीतक्यादि चूर्णम् (७)(ग नि.। ज्वरा.१)—हर्र, हीग, पीपल और सोठ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें। इसे बिजौरे के रस मे मिला कर सेवन करने से सन्निपात ज्वर नष्ट होता है। मात्रा—४ रत्ती।

हरीतक्यादि चूर्णम्(८) व. से.। वातव्या)—हर्र,वच, रास्ना, सैंधा नमक, अम्लवेत और अदरक [सोठ] समान भाग लेकर चूर्ण बनावे। इसे घी मे मिलाकर चाटने से अपतत्रक रोग नष्ट होता है। मात्रा–२-३ माशे।

हरीतक्यादि चूर्णम् ९.(भै.र.। हृद्रोगा.)—हर्र, वच, रास्ना, पीपल, सोंठ, कचूर और पोखरमूल समान भाग लेकर चूर्ण बनावे।

इसे सेवन करने से हृद्रोग का नाश होता है।

हरीतक्यादि चूर्णम् (१०) (रा मा। ज्वरा २०)–हर्र, आंवला, चीता मूल और पीपल समान भाग लेकर बारीक चूर्ण बनावे।

इसे शीतल जल के साथ सेवन करने से जठराग्नि दीप्त होती तथा इन्द्रियो की निर्बलता नष्ट होकर काम शक्ति बढती है।

हरीतक्यादि चूर्णम् (११) (ग. नि।अजीर्णा)—हर्र सोठ के समान भाग मिश्रित [१½माशा] चूर्ण को या हर्र और गुड के [६माशा] चूर्ण को [गरम पानी से] सेवन करने से या हर्र के चूर्ण मे सैंधा नमक मिलाकर [गरम पानी से] सेवन करने से अग्नि दीप्त होती है।

हरीतक्यादि चूर्णम् (१२) [हा स. स्था ३ अ.



१४)—हर्रं और सोंठ समान भाग लेकर चूर्ण बनावे। इसे मन्दोष्ण जल के साथ सेवन करने से कास, श्वास और कामला का नाश होता है। मात्रा—२-३ माशा।

हरीतक्यादि चूर्णम् (१३) (यो. र.। वृद्धय)—हर्रों को गोमूत्र मे पकाकर अण्डी तेल मे भून कर चूर्ण कर ले और उसमे स्वाद (योग्य) सैंधा नमक का चूर्ण मिला ले। इसे मन्दोष्ण जल के साथ सेवन करने से पुराना वृद्धि रोग भी नष्ट हो जाता है। मात्रा—६ माशे।

हरीतक्यादि चूर्णम् (१४) (यो. र.। अन्तर्वि.)—हर्रं, सैंधा नमक और धाय के फूल समान भाग लेकर चूर्ण बनावे। इसे घी और शहद के साथ सेवन करने से भयकर अन्तर्विद्रधि अवश्यमेव शीघ्र ही नष्ट हो जाती है।

मात्रा—३ से ४ माशे।

हरीतक्यादि चूर्णम् (१५) (यो. र। श्लीपदा.)—हर्रं को अरण्डी तेल मे भून कर गो मूत्र के साथ सेवन करने से ७ दिन मे श्लीपद रोग नष्ट हो जाता है।

मात्रा—६ माशे।

हरीतक्यादि चूर्णं (१६) (व से अजीर्ण)—हर्रं को काजी में पकाकर चूर्ण करले। फिर उसमे पीपल, सेंधानमक और हीग का चूर्ण (प्रत्येक उसके बराबर) मिलाले। इसके सेवन से प्रवृद्ध अजीर्ण और धूमोद्गार का नाश हो कर भूख लगती है। मात्रा—८ रत्ती।

हरीतक्यादि चूर्णम् (१७) (हा. सं स्था ३ अ ४)—हर्रं, पीपल, अजवायन, सोंठ, कचूर, तुम्बुरु, हीग, सेंधानमक और सचल (कालानमक) समान भाग लेकर चूर्ण बनावें। इसके सेवन करने से अजीर्ण का नाश होता है। मात्रा—१॥ माशा।

हरीतक्यादि योग (१) (हा. सं स्था ३ अ. १०)—हर्रं को बासे (अडूसे) के रस की सात भावना दें। हर भावना के पश्चात सुखाते रहना चाहिए। तदनन्तर उसमे उसके बराबर पीपल का चूर्ण मिलाकर रक्खें। इसे शहद के साथ सेवन करने से दुर्जय रक्तपित्त भी नष्ट होजाता है। मात्रा—२-३ माशा।

हरीतक्यादि योग (२) (ग. नि उदरा. ३२)—हरीतकी, पोहकरमूल को तेल मे पकाकर चूर्ण करे और फिर उसमे पीपल और सेंधानमक का चूर्ण (प्रत्येक उसके बराबर) मिलालें। इसे गोमूत्र के साथ सेवन करने से जलोदर का नाश होता है। मात्रा—६ माशे।

हरीतक्यादि योग (३)(वा. भ. उ. अ. ३९ रसायन) हर्रं, आमला, सेंघानमक, सोंठ, वच, हल्दी, पीपल, वायविडङ्ग और गुड़ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

रोगी को स्निग्ध करके स्वेदित करने के बाद उष्णजल से यह चूर्ण पिलाने से सुखपूर्वक विरेचन होजाता है। मात्रा—६ से ९ माशे तक।

हरीतक्यादि रसायनम् (वैं र अग्निमांद्या.)—हर्रं ६ भाग, पीपल ४ भाग तथा चीता, सेंधानमक और हींग १-१ भाग लेकर चूर्ण करें। यह चूर्ण अग्निदीपक और रसायन है। (पाठान्तर के अनुसार चीता २ भाग तथा हीग का अभाव है।) मात्रा—१॥ माशा।

हरीतक्यादि गुटिका (१) (र र कासा.)—हर्रं, सोंठ और नागरमोथे का चूर्ण १-१ भाग लेकर ३ भाग गुड़ मे मिलाकर गोलिया बनावे।

इनमें से एक-एक गोली मुह मे रखने से प्रवृद्ध श्वास और कास का नाश होता है (मात्रा-दिन भर मे एक तोला तक)।

हरीतक्यादि गुटिका (२) (हरीतक्यादि मोदकः) यो. र कासा.)—हर्रं, पीपल, सोंठ और कालीमिर्च का समान भाग चूर्ण लेकर सबको गुड़ मे मिलाकर (३-३ माशे की) गुटिका बनाले। इनके सेवन से खासी नाश होती और अग्निदीप्त होती है।

हरीतक्यादि गुटी (भा. प्र. म. खं २ ज्वरा)—हर्रं, निशोत और विधारा का चूर्ण १०-१० तोले, तथा पीपल सोंठ, गिलोय, गोखरू, शतावर, सहदेवी और वायविडङ्ग का चूर्ण ५-५ तोले लेकर सबको आवश्यकतानुसार शहद मे मिलाकर गोलिया बनावें।

इसके सेवन से ज्वर, कास, श्वास, मलावरोध और अग्निमांद्य का नाश होता है। (मात्रा—४ से ५ माशे।)

हरीतक्यादि वटिका-(ग. नि उदरा. ३२)—हर्रं रोहितक (रुहेडे की छाल) और वच इनका चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर गोमूत्र की (३ या ७) भावना

दे और फिर उसमे शहद मिलाकर गोलियां बना लें। इन्हे उष्ण जल के साथ सेवन करने से समस्त प्रकार के उदर रोग नष्ट होते है। मात्रा—२ से ३ माशे।

हरीतक्यादि गुग्गुल. (बृ. नि.र. आमवात)—हर्र, सोठ, और विधारे की जड़ का चूर्ण एक-एक भाग लेकर सबको ६ भाग शुद्ध गूगल में मिलाकर आवश्यकतानुसार अण्डी का तेल मिलाकर एक दिन खरल करें। इसके सेवन से आम वात का नाश होता है। मात्रा—३ माशे। अनुपान-उष्ण जल।

हरीतकी खण्ड (१) (भै. र. शूला)—हर्र, बहेड़ा, आमला, नागरमोथा, दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेशर, अजवायन, सोठ, कालीमिर्च, पीपल, धनिया, मुलैठी, सोया और लौग, इनका चूर्ण १।-१। तोला तथा निसोथ और सनाय का चूर्ण १०-१० तोले एव हर्रे का चूर्ण सबके बराबर (४० तोले) और खाड इन सबसे दोगुनी (२ सेर) लेकर खांड की चाशनी बनाकर उसमे समस्त चूर्ण मिला दे। इसे उष्ण दूध के साथ सेवन करने से अम्लपित्त, शूल, ८ प्रकार की अर्श, वातजरोग, कोष्ठगत वायु, कटिशूल और आनाह का नाश होता है। मात्रा—एक तोला।

हरीतक्यवलेह (१) (ग नि. लेहा. ५)—६। सेर भारगी की जड और ६। सेर दशमूल को कूटकर एकत्र मिलाकर ३२ सेर पानी में पकावे और ८ सेर शेप रहने पर छान ले। तदनन्तर उसमें ६। सेर सफेद गुड और १०० हर्रे डालकर पुन पकावे। जब गाढा हो जाय तो अग्नि से नीचे उतार ले और ठण्डा होने पर उसमें ६५ तोले शहद एव ५-५ तोला सोठ, काली मिर्च, पीपल, इलायची, दालचीनी, नागकेसर, तेजपात, इनका चूर्ण मिला दें। इसके सेवन से श्वास, कास, शोष, हिचकी, एकाहिक ज्वर और पीनस का नाश होता है। मात्रा—२ हर्रे और १ तोला लेह।

हरीतक्यवलेह. (२) (ग. नि. लेहा. ५)—दशमूल के ८ सेर क्वाथ में १०० हर्रे (साबित) और ६। सेर गुड़ मिलाकर पकावे। जब लेह तैयार हो जाय तो उसमे दालचीनी, तेजपात, इलायची, सोठ, कालीमिर्च, पीपल और जवाखार इनका १।-१। तोला चूर्ण मिलादे एव ठंडा होने पर आधा सेर शहद मिलाकर सुरक्षित रक्खे। इसके सेवन से प्रवृद्ध शोथ, ज्वर प्रमेह, गुल्म, कार्श्य, आमवात, अम्लपित्त, रक्तपित्त, विवर्णता, मूत्रदोष, अग्निविकार, शुक्रदोष, श्वास, अरुचि, प्लीहा, गरदोष और उदर रोगो का नाश होता है।

मात्रा—२ हर्रे और १ तोला लेह।

हरीतक्यादि घृतम् (व. से हृद्रोगा)—हर्र, पोखरमूल, सोठ, जौ, आमला, सेधानमक और हीग, समान भाग मिश्रित २० तोले लेकर पानी के साथ पीस लें। २ सेर घी मे यह कल्क और ८ सेर पानी मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावे। जब पानी जल जाय तो घी को छान ले। यह घृत वातज हृद्रोग और पार्श्वशूलादि मे उपयोगी है। मात्रा—१ से २ तोला तक।

हरीतक्यासव (ग. नि: आसवा. ६)—हर्र की बकली आधा सेर, आमला २ सेर, दशमूल ३ सेर १० तोला, पोखरमूल १॥ सेर ५ तोला, चीतामूल १॥ सेर ५ तोला, धमासा ६२॥ तोले, गिलोय १। सेर, इन्द्रायन की जड २५ तोले, खैरसार ४० तोले, बिजौरे की छाल २० तोले तथा मजीठ, मुलैठी, कूठ, कैथ की छाल, देवदारु, वायविड़ग, चव्य, लोधा, भारगी, एलवालु, नागरमोथा, पीपल, कचूर, पद्माख, फूल प्रियगु, सारिवा, जटामासी, नागकेसर, रेणुका, निसोत, हल्दी, रास्ना, मेढ़ाश्रृङ्गी, पुनर्नवा (विषखपरा) सोया, कुटकी, दन्तीमूल ५-५ तोले लेकर सबको कूटकर ८ गुने पानी मे पकावे और चौथा भाग शेप रहने पर छान ले। तदनन्तर उसमे ३॥ सेर मुनक्का कूट कर डाल दे और फिर १ सेर ७० तोले धाय के फूलो का चूर्ण तथा २५ सेर शुद्ध गुड और २ सेर शहद मिलाकर सबको जटामासी और काली मिर्च से धूपित मिट्टी के घृत लिप्त पुराने पात्र मे या बरनी तथा काच के जार में भर दे। बाद मे उसमें पीपल का चूर्ण १० तोले तथा जायफल, लौग, दालचीनी, इलायची, तेजपात, और नागकेसर इनका चूर्ण एव कस्तूरी १।-१। तोला मिलाकर मुख बन्द करके रखदे और १५ दिन पश्चात् उसमें निर्मली के बीजो का चूर्ण डाल दे कि जिससे आसव निर्मल होजायगा। इसके १५ दिन पश्चात् छानकर बोतलो मे भर दे।

इसे यथोचित मात्रानुसार सेवन करने से धातुक्षय, ५

प्रकार की खासी, ६ प्रकार का अर्श, ८ प्रकार के उदर रोग, प्रमेह, अरुचि, पाण्डु, समस्त वात व्याधि, आम, श्वास छर्दि, अठारह प्रकार के कुष्ठ, शोष, शूरा, भगन्दर, शर्करा, मूत्रकृच्छ्र और अश्मरी का नाश होता है। यह अत्यन्त बल, वीर्य और काम शक्ति वर्द्धक तथा कृशांग को पुष्ट करने वाला है। इसके प्रभाव से वन्ध्या स्त्री को भी पुत्र प्राप्ति होती है।

हरीतक्यादि लेप १ (यो. त त ७१)—हर्र, सेंधानमक, रसौत और गेरु समान भाग लेकर स्वच्छ जल मे पीसकर आखो के बाहर लेप करने से नेत्ररोग (अक्षिपाकादि) का नाश होता है।

हरीतक्यादि लेप १ (ग नि कुष्ठा. ३६)—हर्र, सेंधानमक, बावची, वायविडङ्ग, सफेद, सरसो और करञ्जबीज समान भाग लेकर गोमूत्र मे पीसकर लेप करने से कुष्ठ नाश होता है।

हरीतक्यादि लेप ३ (वै म र पटल १६)—हर्र, सहजने की छाल, करञ्ज के बीज या छाल, आक की जड, पुनर्नवा (बिसखपरे) की जड और सेंधा नमक, इनका चूर्ण समान भाग लेकर गोमूत्र मे पीसकर पिटिका तथा कच्ची और पक्की ग्रन्थि एव विद्रधि पर लेप करना लाभदायक है।

हरीतक्यञ्जनम् १ (हा सं स्था. ३ अ ४८)—हर्र, वच, कूठ, पीपल, कालीमिर्च और बहेडे की मज्जा (गुठली की मीग) शख की नाभि और मनसिल, इनका समान भाग चूर्ण लेकर सबको एकत्र मिलाकर बकरी के दूध मे खरल करके अत्यन्त महीन करले और सुखाकर सुरक्षित रक्खें। यह अजन तिमिर, कण्डू [खाज], पटल, अर्बुद, फूला रात्र्यान्ध्य [रतौंधी], क्षत, आंख पर चोट लगना, अत्यन्त शोक जनित नेत्र रोग, आंख का आग से जल जाना, काच और नीलिका का नाश करता है।

हरीतक्यञ्जनम् २ (ग. नि. नेत्ररोगा.)—हर्र को बीच से चीरकर उसकी गुठली निकाल दे और उसके भीतर सुरमे का चूर्ण तथा शहद और घी (समान भाग मिलित जितना आ सके उतना), भर दे एव उसके ऊपर आमले को पानी मे पीसकर लेप करदें। इसे शराव सम्पुट मे बन्द करके भस्म करें। धुआ बाहर न निकले, यह ध्यान रक्खें, इसे बारीक पीसकर आख मे लगाने से हर प्रकार का तिमिर रोग नष्ट होता है।

हरीतक्यादि वर्ति (भै र नेत्ररोगा)—हर्र, हल्दी, पीपल, सेंधानमक, कालानमक, विडलवण, काचलवण और सामुद्रलवण, इनका चूर्ण समान भाग लेकर पानी के साथ खरल करके वत्तिया बनालें।

इसे आख मे आजने से कण्डू [खाज] और तिमिर का नाश होता है। यह वर्ति कभी निष्फल नहीं होती।

हरीतक्यादि नस्यम् (यो र रक्तपित्ता)—हर्र, अनार के फूल, दूर्वा (दूबघास) और लाख इनके (पृथक पृथक अथवा सम्मिलित) रस की नस्य लेने से पुराना नासा प्रवृत्त रक्तस्राव [नकसीर] भी नष्ट हो जाता है।

हरीतकी खण्ड (भै. र शूला)—हर्र का चूर्ण २० तोले, निसोत का चूर्ण २० तथा दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेशर, नागरमोथा, तालीस पत्र, जीरा, जावित्री, लौंग, लोह भस्म, अभ्रक भस्म और सुहागे की खील, प्रत्येक का १¼ तोला, गोदुग्ध १ सेर और खाण्ड ५० तोले लेकर प्रथम दूध को पकावें। जब १ सेर दूध रह जाय तो उसमे खाड़ डालकर चाशनी बनावें और उसमे उपरोक्त समस्त द्रव्यो का चूर्ण मिला दें। इसके सेवन से दुर्जय अम्लपित्त, अन्नद्रव शूल तथा अन्य सब प्रकार के शूल, कास, श्वास और वमन का नाश तथा कान्ति, पुष्टि, बल, मेधा और अग्नि की वृद्धि होती है। यह हरीतकी खण्ड हृद्य भी है। (मात्रा—१ तोला।)

हरीतकी योग [ग नि. रसायन १]—हर्र के चूर्ण मे लोह भस्म मिलाकर उसे घी मे मिलाकर लोहपात्र मे रखदे। इसे सेवन करने से वृद्धावस्था का नाश होता है।

हरितक्यवलेहः [ग. नि परि. अवलेहा ५]—१०० हर्रो को ३२ सेर दूध मे पकावे। जब दूध का मावा हो जाय और घी छोड दें तो अग्नि से नीचे उतार कर हर्रो को चीर कर गुठली दूर करदे और समान भाग पारे, गन्धक तथा लोह भस्म को एकत्र खरल करके कज्जली बनाकर उपरोक्त हर्रों के भीतर भरदे और उन पर सूत लपेटकर शहद मे डाल दें तथा एक मास के पश्चात् सेवन करे।

पथ्य-पालन पूर्वक इसके सेवन से समस्त रोग नष्ट होते है ।

हरीतक्यादि चूर्णम् [वृ नि. र वातव्या.]—हर्र, बहेडा आंवले का चूर्ण तथा लोह भस्म समान भाग लेकर एकत्र खरल करें ।

इसे शहद के साथ सेवन करने से बहुमूत्र रोग नष्ट होता है । (मात्रा—४ रत्ती ।)

हरितक्यादि पाक [वृ नि र ज्वरा]—१ सेर हर्र, २ सेर दशमूल, १॥ सेर जौ तथा ३-५ तोले पीपरामूल, चीता, भारङ्गी, शखपुष्पी, खरैंटी, कचूर, सोठ, अपामार्ग, नागरमोथा, पोखरमूल, गजपीपल लेकर हर्रो के अतिरिक्त सबको एकत्र कूट ले और ३२ सेर पानी मे पकावे । हर्रो को पोटली मे बाधकर इस पानी मे डाल देना चाहिये । जब ४ सेर पानी रह जाय तो उसे छानले और हर्रों की गुठली दूर करके उन्हे पीसले और २५ तोले गोघृत मे भून ले । तत्पश्चात् उनमे उपरोक्त छाना हुआ क्वाथ और ३ सेर गुड़ मिलाकर पकावे । जब अवलेह तैयार होने के करीब हो तो अग्नि से नीचे उतार कर उसमे जायफल, केसर, दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेशर, आमला, अजवायन, बहेडा, जावित्री, सोठ, कालीमिर्च और पीपल, इनका चूर्ण तथा ताम्र भस्म और लोह भस्म प्रत्येक २॥-२॥ तोले मिलादे । यह पाक जीर्ण ज्वर नाशक, तृप्तिकारक, बलदायक, पौष्टिक एव रसविकार, सग्रहणी, धातुक्षीणता, धातुस्राव, अर्श, श्वास, कास और वातरक्त मे गुणकारी है ।

हरितक्यादि योग [यो र शूला]-हर्रों को (४ गुने) गोमूत्र मे इतना पकावें कि मूत्र शुष्क हो जाय । तदनन्तर उनका चूर्ण करके उनके समान भाग लोह भस्म मिलाले । इसे गुड मे मिलाकर सेवन करने से समस्त प्रकार के शूल नष्ट होते हैं । [मात्रा २ से ३ रत्ती] ।

हरितक्यादि रसायन [ग० नि० रसायना०]—हर्र, सोठ, कालीमिर्च, शुद्ध कुचला, शुद्धगधक, हीग और सेधा नमक, इनके समान भाग चूर्ण को एकत्र मिलाकर (पानी के साथ) खरल करके छोटे वेर के समान गोलिया बना ले । इनमे से १-१ गोली प्रात काल सेवन करने से जन्मकाल का शूल भी नष्ट हो जाता है । इसके अतिरिक्त यह वटी ग्रहणी, अतिसार, अजीर्ण और अग्निमाद्य को भी नष्ट करती है ।

हरितक्याद्यवलेह [वा भ चि. अ. ३]—२० हर्रो को जौ के १६ सेर क्वाथ मे पकावे । जब वे मृदु हो जाय तो उनकी गुठली अलग करदे और हर्रो को पीसकर पुन पकावे । जब अवलेह तैयार होने के करीब हो तो उसमे १। तोले शुद्ध मन सिल और ७॥ माशे रसौत और १० तोले पीपल का चूर्ण मिलादे ।

यह अवलेह श्वास,कास को नष्ट करता है । (मात्रा—३ माशे से ६ माशे तक ।)

यूनानी विशिष्ट योग-

अतरीफल वादियान—हरीतकी, हरीतकी काबुली, बहेडा, आवला, धनिया, गुलाब के फूल, सातरफारसी, वादियान (सौफ) प्रत्येक समभाग प्रथम की पाच औषधि के बारीक चूर्ण को बादाम रोगन से स्नेहाक्त करें, फिर बाकी औषधि के चूर्ण को भी मिलाकर मिलित औषधि से तीन गुणा शहद मे मिलाकर अवलेह बनावे ।

वक्तव्य—बादाम रोगन आवश्यकतानुसार मिलावें ।

मात्रा—१ तोला रात्रि को सोते समय खावें या प्रात अर्क सौंफ १२ तोले से खावे ।

गुण—चक्षु मे सर्व रोगो मे लाभप्रद है, यदि दीर्घकाल तक सेवन करें, तो चक्षु का कोई रोग ही नही होगा।

अतरीफल दीदान (कृमिहर अवलेह)—वायविडग १० तोले, निशोथ, कालादाना, कूठ कडवी प्रत्येक ५ तोले कमीला, तुरमस, अफसन्तीन (मुस्तयारा), दरमुना तुरकी, आकाशवेल, कालालवण, राई, शहमहिजल(तुम्बे के भीतर का गूदा), नागरमोथा, रासन (रासन न मिलने पर सोठ का प्रयोग करें)प्रत्येक ३-३ तोले, शहद सब मिश्रित औषध से तीन गुणा डालकर यथा विधि अतरीफल बनावे ।

मात्रा—६ माशे या १ तोले, प्रात को अर्क गाऊजवान से प्रयोग करावे और तीन दिन के पश्चात् एरण्ड तैल तीन तोले, अर्क गाऊजवान १२ तोले मे या दूध में मिलाकर पिलावें या और कोई मृदु विरेचन दें ।

गुण—यह अवलेह उदर के कीड़ो [केंचवे-कद्दूदाने] को नष्ट करने मे अपूर्व है। आमाशय तथा आन्त्र के कफज



दोष को नष्ट करती है।

अतरीफल फौलादी—लौहभस्म, हरड़ प्रत्येक २ तोले ४ माशे, द्राक्षा [बीज रहित], लाहौरी लवण, पिप्पली, प्रत्येक १४ माशे, शतावर ३ तोले, मधुयष्टि छिली हुई ४ तोले ८ माशे, आमला १० तोले, मधुर वादाम तेल ५ तोले मिश्री २० तोले, मधु ३० तोले, पीसने योग्य औषध को पीस छानकर वादाम तेल से स्नेहाक्त करे। द्राक्षा को पृथक पीसले। इसके उपरान्त मिश्री और मधु का पाक करके बाकी सब औषध भली प्रकार मिला देवे। मात्रा—५ या ७ माशे, प्रातः या सोते समय अर्क गाऊजवान १० तोले से या जल से दे।

यह अतरीफल चक्षु के सब रोगो के लिये उत्तम है। मोतिया बिन्दु के रोग मे बहुत लाभ करती है। अर्धावभेदक, सूर्यावर्त तथा वातज या रक्तज अर्श मे भी अतीव गुणकारी है।

अतरीफल किशमिशी—हरड़, वहेडा, आवला, कृष्ण हरीतकी प्रत्येक १४ माशे, धनियां २८ माशे, वादाम तेल २ तोले, मिश्री १४ तोले इन सब औषधियो को कूट-छान कर वादाम रोगन वा घी मे भली भांति स्नेहाक्त करें, फिर किशमिश ७ तोले (सब्जरंग की छोटी द्राक्षा) पीसकर शीरा बनावे और खाड के साथ पाक करके ऊपर लिखित औषधि का बारीक चूर्ण मिला दें, यदि इस योग को शहद मे तैयार करे तो अधिक गुणकारी तथा अधिक देर तक दूषित नही होगा।

मात्रा—६ माशे प्रात अर्क गाऊजवान या केवल जल मे दें।

गुण—यह अवलेह पित्त प्रमेह, वीर्य का पतलापन, शीघ्र पतन और मूत्र नली के अग्र सूराख का छोटा होना, मस्तिष्क और आमाशय के लिये अपूर्व लाभप्रद तथा उपयोगी है।

अतरीफल कशनीजी—हरड, हरड वडी, बहेडा, आवला, कशनीज (धनियां छिला हुआ), वादाम रोगन प्रत्येक ५ तोले, शहद सब औषधि से त्रिगुण। यथाविधि योग तैयार करें।

मात्रा—७ माशे सोते समय अर्क गाऊजवान वा जल से दें।

गुण—यह अतरीफल तवखीर [आमाशय से जो दूषित वातिक दोषज वाष्प ऊपर उठते हैं] के लिये विशेष रूप से गुणकारी है। और तस्य उपद्रव रूप शिर शूल, चक्षुशूल, कर्णशूल तथा आंख दुखने मे लाभकारी है। यह योग कोष्ठ बद्धता नाशक है। मस्तिष्क को शुद्ध करता है। प्रतिश्याय और अर्श मे भी विशेष रूप से लाभप्रद है।

अतरीफल मक्कल (गुग्गुल अवलेह)—हरड़, हरड़ काबुली, वहेड़ा, कृष्ण हरीतकी, आवला १-१ तोला, शुद्ध गुग्गुल ३ तोले द्राक्षा, वादाम रोगन प्रत्येक ४ तोले, गन्दना बूटी का जल १ पाव, शहद सब मिलित औषधि से त्रिगुण। प्रथम गुग्गुल को गन्दना बूटी के जल में हल करें और बाकी औषधि के चूर्ण को वादाम रोगन मे मिलावे, द्राक्षा को वीज रहित कर पीसलें और हल किये हुये गुग्गुल मे शहद और मुनक्का को मिलाकर पाक करें। पाक सिद्ध होने पर बाकी औषधि का चूर्ण मिलादें, तैयार हैं।

मात्रा—७ माशे, अर्क गाऊजवान के साथ प्रात या साय खिलावें।

गुण—यह अवलेह रक्त तथा वात अर्श में बहुत लाभ करती है, रक्त को बन्द करती है, कोष्ठबद्धता नाशक है।

अतरीफल मुलैयन (विरेचक अवलेह)—हरड़ काबुली, हरड, कृष्ण हरीतकी, आवला, त्रिवृत्त प्रत्येक २ तोले, सौफ, मस्तगीरूमी, उस्तोखद्दूस, सकमूनिया, रेवन्द चीनी, वादाम तेल प्रत्येक ५ तोले, शहद त्रिगुण सब औषधि को यथा विधि पीस-छानकर वादाम तेल में मिलावे। सकमूनिया और मस्तगीरूमी को हलके हाथ से रगडें। फिर मधु के पाक में थोडा-२ मधु मिलाकर औषधि की वटी तथा टिकिया हाथो से या मशीनो से बनाले तो इसे कुरस मुलैयन कहते है।

मात्रा ५ से ६ माशे तक, रात्रि को सोते समय अर्क सौफ से या गरम जल से दें।

गुण—यह अतरीफल उदरशूल और कोष्ठबद्धता के लिये उत्तम है। विवन्धजनित उपद्रव, पुराना शिर शूल तथा मस्तिष्क विकारो मे लाभकारी है।

मुरब्बा हरीतकी—हरड सब्ज ताजा को जल मे उबालें। हरड़ के नरम होने पर थोडी शुष्क करके पाक में

डाले, दूसरे दिन पाक को हरडे समेत पकावे कि पाक ठीक हो जावे तीसरे दिन फिर अग्नि पर चढाकर पाक ठीक करले।

यदि हरीतकी शुष्क हो तो पहले इसे कुछ दिन जल मे भिगो रखें, फिर दूसरे पानी मे डालकर उबाले, नरम होने पर गूदकर घी मे अर्धभूनी करें, फिर स्निग्धता दूर करके खाड के पाक मे डालदे।

मात्रा—१ नग मुरब्बा जल से धोकर चांदी के वर्क लपेटकर खायें।

गुण—मस्तिष्क, आमाशय, हृदय तथा यकृत को वल देता है, वमन, अतिसार मे उपयोगी है, शिरो भ्रम मे उत्तम है।

माजून फनज जोश—वडी हरड, छिलका हरड, कृष्ण हरीतकी, वहेडा, आंवला ३-३ तोला, जावित्री, छोटी इलायची, ऊद कुमारी, कस्तूरी प्रत्येक ७ माशे, काली-मिर्च, पिप्पली, जीरा कृष्ण, सोंठ, सोये के वीज, करपस वीज, गन्दना वीज, जरजीर वीज, शलगम वीज, खरवूज के वीज, तज, दालचीनी, लौंग, जायफल प्रत्येक ३॥ माशे अस्पन्द ९ तोले, मण्डूर भस्म सव औषधि के समभाग लेकर, सवका चूर्ण करके त्रिगुण मधु के पाक मे मिला-कर यथाविधि माजून वनावें। मात्रा—७ माशे।

गुण—दीपक-पाचक है, पुंसक शक्ति वर्द्धक है, अर्श मे भी उपयोगी है।

माजून मुण्डी—हरड, बड़ी हरड़, हरड काली, वहेडा आमला, शाहतरा, मधुयष्टि १-१ तोला, मुण्डी पुष्प ७ तोले, प्रथम त्रिफला को बारीक पीसकर बादाम तेल से स्निग्ध करें। फिर बाकी औषधि को मिलाकर त्रिगुणा मधु का पाक करके यथाविधि माजून तैयार करें। मात्रा—१ तोला।

गुण—नेत्र रोगो मे उपयोगी है।

वातहर चूर्ण—हरड, सनाय १-१ तोला, गुलावपुष्प १॥ तोला, मुलेठी २ तोले, सोफ २ तोले, सोठ ६ माशा, शुद्ध गन्धक १ तोला, वडी इलायची वीज ६ माशे, सुर-जान मीठी २ तोला, खाड १० तोला मिलालें, बारीक पीसकर चूर्ण करें।

मात्रा—४ माशे से १ तोले तक। गुण—वातज रोगो मे उत्तम योग है।

(यूनानी चिकित्सा सागर से साभार सकलित)

जहीरी—कपूर, पीली हरड का छिलका, हरामाजू, गुठली निकाला हुआ आमला प्रत्येक १ तोला, केशर ६ माशे। इनको कूट-पीसकर कपडछन चूर्ण वनाएँ। पीछे आवश्यकतानुसार शराब वराण्डी या गुलाब पुष्पार्क मे खरल करके चना प्रमाण की गोलिया वनावे।

मात्रा और सेवन विधि—एक गोली जल से खाये।

गुण तथा उपयोग—यह प्रत्येक प्रकार की प्रवाहिका के लिये उपादेय है।

(यू० सि० यो० स० से साभार सकलित)

हरित मञ्जरी—देखिये "कुप्पी" (Acalypha Indica) भाग २ पृष्ठ २८६ पर।
हरिणहाडा—देखिए "रक्त रोहिणी न० १" इसी भाग मे।

हरी चाय (CYMBOPOGON CITRATUS)

यह तृण धान्यादि कुल (Gramineae) का एक तृण है। हरीचाय के तृण रोहिष के तुल्य दीर्घ सुरभि तृण है। रोहिष के पत्र खर होते है, परन्तु भूतृण के पत्र मृदु, अति हरित और मर्दन करने पर जम्भीर तेल (Lemon oil) के तुल्य गन्ध देते है। उनमे एक पीताभ अत्तर भूस्तृण तेल (Lamon grass oil) निकलता है, जो अति सुगन्वित और रोहिष तेलवत् उपयोगी है।

उक्त तृण ५ से ७ फीट ऊंचा होता है। पत्र ३ से ४ फुट लम्बा व ¾ इंची चौड़ा। पुष्पदण्ड छोटा। पुष्प [illegible] नोकीला एक ओर अवनत होता है। फूल उभय लिङ्ग विशिष्ट एक साथ होते हैं। पुंकेशर तीन। वर्षाकाल मे फूल आते हैं।

उत्पत्ति स्थान—

भारत मे यह तृण उद्यानो मे सर्वत्र लगाया जाता है। इसकी पजाब, वोम्बे, बडौदा के वगीचो मे कृषि की जाती है। मैसूर मे यह जङ्गल में भी पायी जाती है। वम्बई,



हरी चाय

CYMBOPOGON CITRATUS STAPF.

कलकत्ते मे यह सब्जी की दुकानो पर बिकती है।

नाम-

स —भूस्तृण । हि —गन्धतृण, भूतृण, हरी चाय। म, राज.—हरीचाय । गु —लीलीचा, ब —गन्धबेना, गन्धतृण। प —खावी। ता, मलय—वसानाप पिल्लु । ते.—निम्मागड्डी । ले —सिम्बोपोगोन सिट्रेटस (Cymbopogon citratus Dc,) । पर्याय—Andropogon citratus Dc)।

उपयुक्त अङ्ग—मूल, पत्र और तैल।

मात्रा—३ से ६ माशा तक।

गुण धर्म और प्रभाव—

इस घास का उड़नशील तैल भारतीय भैषज संहिता मे व्यवहृत है। यह उत्तेजक, वायु नाशक, आक्षेप निवारक और घर्मकर है। पक्वाशय वेदना की यह एक मूल्यवान औषधि है। कालेरा रोग में यह वमन को निवारण नहीं करके विशेष रूप से यह पाक स्थली को शान्तावस्था मे ला देती है।

इसका तैल मालिश करने से पुरानी वात वेदना दूर होती है। इसका तैल सेवन करने से वायु का कष्ट दूर होता है। यह उत्तेजक और पसीना लाने वाली है। देशी चिकित्सक इसको कालेरा रोग की महौषधि कहकर प्रशंसा करते हैं। यह कालेरा की वमन को दूर करके शरीर के अवसाद को मिटाकर बल का संचार कर देती है। डा० रोज कहते हैं कि इसके पत्तो का रस ४ औंस लेकर एक पाइन्ट गरम जल मिलाकर पीने से कालेरा में विशेष लाभ होता है। मौक्तिक ज्वर में दुर्बल रोगी को पसीना लाने व ज्वर को कम करने के लिये यह अति उत्कृष्ट औषधि है। डा० रोस का कहना है कि मलेरियाग्रस्त शोथ रोगी के लिये यह विशेष फलप्रद औषधि है।

—भा० व० व० से साभार स०

लोग इसकी चाय बनाकर पीते हैं और इसी कारण से इसे हरीचाय (Green Tea) कहते हैं। इसमे सुण्ठी, शर्करा और त्वक् भी मिलाते है। यह विसूचिका, ज्वर, अजीर्ण, रज कृच्छ्र, सविशूलादि मे लाभकारी है। बच्चों को भी यह चाय इन रोगो मे दी जा सकती है।

—कं० नि०

हरुच—देखिये 'हिलमोचिका' इसी भाग मे।

हरफा रेवड़ी (PHYLLANTHUS DISTICHUS)

यह फलादि वर्ग और एरण्डादि कुल (Euphorbiaceae) का हरफा रेवडी का वृक्ष २० से ३० फुट ऊचा होता है। शाखाएं अगुलियो के समान मोटी, छाल खरखचडी, धूसर वर्ण पत्र मय शाखा १ से २ फुट। पत्र झिल्ली युक्त, कसौदी के समान पतले २ से ३ इच लम्बे, १ से १½ इच चौड़े, नीचे से गोलाई लिये ऊपर की ओर सकडाये हुए अणीदार, ऊपर पीलापन लिये हरे रङ्ग के, निम्न भाग हरे पर फीके सफेद रङ्ग के, वृन्त देश छोटा प्राय गोला-

कार। फूल लाल रङ्ग के गुच्छ बद्ध ½ इची, कभी कभी उभय लिङ्ग विशिष्ट होते है। पु केसर ३ वक्र, गर्भाशय डिम्बाकृति, स्त्री केसर ३। फल—गूलर के सदृश शाखाओ मे, पीले रस भरे से, खट्टे ३–४ के ८ खाचाओं वाले ½ से १ इच चौडे गोलाकार, गूदा अल्प निकलता है। फल मे वीज एक होता हे। इसमे ३–४ विभाग होते हैं और एरडी के बीज के मग्ज जैसा तेलिया मग्ज वाला होता है। फल का स्वाद खट्टा और तुरा होता है।

फूलने फलने का समय—मार्च–अप्रेल मास में फूल व फल आते है।

इसके फलो का अचार वनाया जाता है। शरवत भी अच्छा होता है। आंवले के जैसे ही गुण होते है ऐसा कितने ही मानते हैं। दक्षिण भारत के वगीचो मे यह बहुत लगाया जाता है।

उत्पत्ति स्थान—

यह वृक्ष मलाया द्वीप का आदिवासी हे ऐसा वर्णन लिखते हैं। मेडागास्कर, बगाल और अनेक बगीचो मे इसके वृक्ष लगाये जाते हैं।

नाम—

स०—लवली, सुगन्धमूला, स्कन्धफला, कोमलवल्कला। हिं०—हरफा रेवड़ी, चालमेरी। ब०—हरीफूल, नोयाड, नोरी, नोयाल, लोआयाड। गु०—खाटी आंवली। म०—रायआवला। कोकण—राजन वल्ली, रोसन वल्ली। बवई—हर पारा वरी, राय आवला। उर्दू—हरफरोरी। ता०—अरनेल्ली। ते०—राचायु सिरिका। अ०—(The country Gosseberry) दी कन्टरी गोसवरी। ले०—फिलेन्थस डिस्टिचस (Phyllanthus distichus M-well), सिक्का डिस्टीचा (Cicca Disticha Linn)।

रासायनिक संगठन—

मूल त्वक मे टेनिन १८%, सेपोनीन, गेलिक एसिड और कुछ क्षार पदार्थ पाए जाते हैं।

उपयुक्त अङ्ग—मूल, फल और बीज। मात्रा—१ से २ तोले।

गुण धर्म और प्रभाव—

हरफा रेवडी—कसैली, रुचिकारक, प्रिय, खट्टी, कड़वी, रूखी, विशद, स्वादिष्ट, सुगन्धित, वातवर्द्धक, हलकी तथा कफ, पित्त, मूत्राश्मरी और बवासीर मे लाभदायक होती है। सुश्रुत ने हृदय को हितकारी विशेष लिखा है। भाव प्रकाश के मतानुसार हरफा रेवडी, रुधिर विकार, बवासीर और कफपित्त को नष्ट करने वाली तथा भारी, विशद, रोचक, रूखी, स्वादिष्ट, कसैली और खट्टी होती है। इसका फल खट्टा और सकोचक होता है। यह भूख को बढाता है, वायु नलियो के प्रदाह को कम करता है और इसके बीज आनुलोमिक होते हैं।

फल—अम्ल और ग्राही। मूल—अत्यन्त विरेचक और बीज सर्दीनाशक होते है। —भा० ब० ब०

यूनानी मतानुसार—

इसका फल अत्यन्त खट्टा, यकृत को शक्ति देने वाला तथा प्यास, पित्त विकार, वमन और कब्जियत को दूर करने वाला होता है। यह रक्त को शुद्ध करने वाला तथा रक्त को बढाने वाला होता है।

डाक्टरी मतानुसार—

कर्नल चोपरा के अनुसार इसका फल सकोचक तथा इसकी जड और बीज विरेचक होते है। इसकी जड और इसके पत्ते विषनाशक माने जाते हैं। —ब० च०

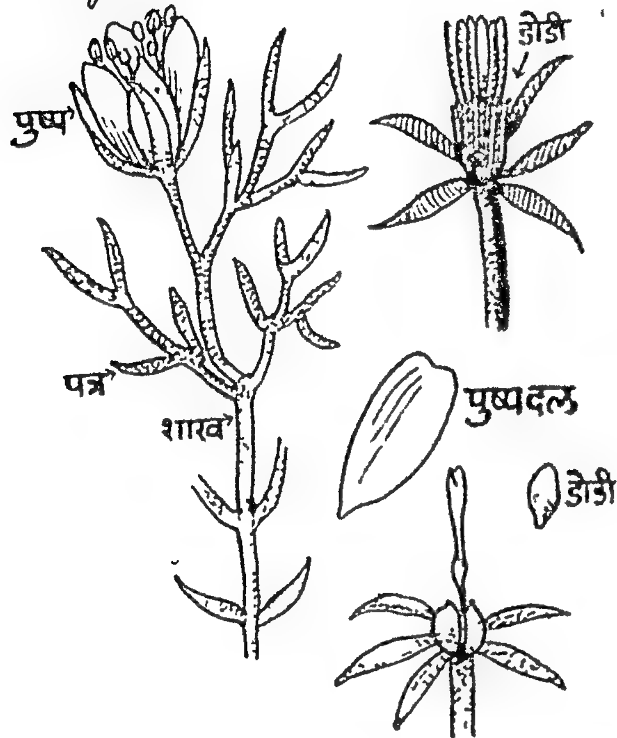
हरमल (Pagenum Harmala)

यह सतापादि कुल (Rutaceae) का गुल्म जातीय उद्भिद है, जो १ से ३ फीट तक ऊचा और बहु शाखा एव घन पत्र विशिष्ट होता है। पत्र २ से ३ इची, सब्ज वर्ण, नोकीले, सुचाल और बहु विभाजित पतले और लम्बे लम्बे होते है।

मेहदी पुष्प की तरह गोलाकार—पुष्प ½ से ¾ इन्च व्यास के एकाकी, सफेद। पुष्प दण्ड छोटा। पुष्प पत्र कोण में से निकलते हैं। पङ्खडियाँ लगभग लम्बकोण। बहिर्व्यास अप्रशस्त। पु केसर १२ से १५। फल—लगभग गोल ३ खण्ड वाला, प्रत्येक खण्ड में एक बीज होता है। बीज कोष लोमयुक्त ⅓ इन्ची, बीज वक्र ३ आंटा विशिष्ट, बीज कोष युक्त बीज विक्रय होते है। बीज फीके लाल,

हरमल (इस्पन्द)

Peganum Harmala Linn.



घूसर वर्ण प्राय ½ इन्च लम्बा। इसकी गन्ध तमाखू के समान उग्र, अप्रिय होती है और स्वाद बहुत तिक्त होता है। औषधि रूप से बीज उपयोगी है। इसके बीज इराक से आते है। बीज सामान्यत मेथी जितने बडे, तीन कोण वाले मैले रङ्ग के होते हैं। ऐसे ही सूघने पर बीजो मे वास नही आती, किन्तु ममलने पर गाजा के समान वास आती है। पारस देश में इस क्षुप को सिपन्द कहते है।

जुलाई मास मे फूल, सितम्बर मे फल आते हैं।

(भा० व०)

भेद—

यह श्वेत और कृष्ण भेद दो प्रकार की होती है—

१ सफेद—जिसे हरमल अरबी कहते हैं।

२ कृष्ण—जिसे इस्पन्द सोख्तनी कहते हैं। मात्र इसबन्द, इस्पन्द या हरमल से यही 'इस्पन्द सोख्तनी' ही विवक्षित होती है। यह राई के दाने के बराबर भूरे या काले रङ्ग के, त्रिकोणाकार, निर्गन्ध एवं सूक्ष्म होते है। इनमे चार वर्ष तक वीर्य रहता है।

(यू० द० वि०)

उत्पत्ति स्थान—

दक्षिण पश्चिम भारत, सिन्ध, पजाब, काश्मीर, कच्छ, कुरंमवेलि, दिल्ली, आगरा, दक्षिण हैदराबाद, अरब, बलुचिस्तान, वजिरीस्तान, अफगानिस्तान मे सर्वत्र प्राप्त होती है। उत्तरी अफ्रीका मे होती है। अब भारत मे नैसर्गिक हो गया है। बाग बगीचे की फाटक पर सुन्दरता के लिये प्राय: लगाया जाता है। विशेषकर यह बिहार और उत्तर प्रदेश में होता है।

नाम—

हि०—हरमल, इसपन्द, लाहौरि, पुरमुल। बो०, प०—हुर्मल। काश्मीरी, बं०—इसबन्द। म०—हरमल। गु०—हरमरो, हुरमेल। अरबी—हुर्मुल। इरान—सिपन्द, इस्पन्द। पुश्तु—स्पाइल अनाइ। दक्षिणी—विलायती मेंहदी। अ०—Syrian Rue ता०—सिमायी वाग्नारी नाइ। ते०—सिमागोरोंटी, विरलतु। लै०—पेगेनम हरमल (Pegenum Harmala Linn)।

रासायनिक संगठन—

हरमल में लगभग ४ प्रतिशत तक यह तीन क्षारोद होते हैं—

१. हर्माइन (Harmine), २ हर्मलाइन (Harmaline) और ३ हर्मलोल इनमे हर्मलाइन सर्वाधिक और हर्मलोल केवल अश मात्र होता है।

उपयुक्त अङ्ग—बीज।

मात्रा—५ से १५ रत्ती, जल या शराब के साथ। मध्यम मात्रा ३० रत्ती। पूर्ण मात्रा ६० रत्ती। इसका क्वाथ या फाँट दिया जाता है, अथवा आसव मे उबाल कर देते हैं। सामान्यतः १ से ३ माशा। अनुपान—जल, शहद, शर्करादि।

गुण धर्म और प्रयोग—

यह रस मे कटु। वीर्य—उष्ण। विपाक—कटु। दोषशमन—वातकफ है। यह मदकारक, विकासक, अङ्गो

में सकोच करने वाला, वेदनानाशक, कामशक्तिवर्द्धक, दुग्ध वर्द्धक और आर्तव प्रवर्तक है ।

यूनानी मतानुसार—

प्रकृति—तीसरे दर्जे में गरम और दूसरे मे खुश्क । गुण—कर्म—वाजीकरण, वृंहण, श्लेष्म निःसारक, वातानुलोमन, सान्द्रदोष विरेचन, उदर कृमि नाशन, मूत्रार्तव जनन है । अर्दित और पक्षवध आदि जैसे शीतल रोगो और विशेषकर गृध्रसी के लिये यह गुणकारी है ।

उपयोग—

हरमल अधिकतया वाजीकरण के लिये उपयोग करते हैं । इसके अतिरिक्त यह श्वास, एव कास मे कफ का उत्सर्ग करने और मस्तिष्क एव वातव्याधियो, जैसे—अपस्मार, अर्दित, पक्षवध, उन्माद, विस्मृति और गृध्रसी आदि दोष का उत्सर्ग करने तथा अङ्गो को उष्णता प्रदान करने के अभिप्राय से प्रयुक्त होता है । वाधिर्य को दूर करने के लिये हरमल को जैतून के तैल में पकाकर कान मे टपकाते हैं । दन्तशूल निवारण के लिये दातो को इसकी धूनी देते हैं । (यू. द्र. वि.)

डाक्टर देशाई के मतानुसार—हरमल आक्षेपहर, नशा लाने वाली, निद्राप्रद, वेदनाशामक, आर्त्तवजनन, और स्तन्यवर्धक है । वड़ी मात्रा मे देने से जम्भाई आकर वान्ति होती है, तथापि यह वान्ति कराने के लिये नही दी जाती । कारण, वडी मात्रा मे वमन होने के पहले नशा चढ जाता है । इससे गाजा के समान नशा आता है । इसकी गर्भाशय पर क्रिया अर्गट या सिताब के समान होती है । यह स्त्रियो और पुरुषो के लिये कुछ कामोत्तेजक है ।

इसमें आक्षेपहर, उवाक लाना (कफस्रावी) और शिथिल बनाना ये तीन गुण धर्म सम्मति होने से यह अति महत्व की औषधि है । इसके पचांग की क्रिया भाग के समान है ।

हरमल का उपयुक्त द्रव्य क्विनाइन के समान विषाक्त है । इसकी क्रिया रक्ताणुओ के जीवन द्रव्य [Protoplasm] पर क्वीनाइन के समान होती है ।

इसके सेवन से कीटाणु पगु होते है । इससे शारीरिक उष्णता कम होती है । यह वृक्क तथा अन्त्र द्वारा बाहर निकलती है । रक्त यकृत और वात सस्थान मे इसका बहुत अश नष्ट हो जाता है । तो भी शारीरिक मांसपेशिया और हृदय की मासपेशियो पर इसकी अवसादक क्रिया होती है । वडी मात्रा मे देने पर थूक बढता है, अङ्ग शीतल होता है और श्वासोच्छ्वास मे प्रतिवन्ध होता है ।

डाक्टर मूदीन शरीफ के मतानुसार पत्तो का क्वाथ वातरोगो मे उपकारक है । मूल चूर्ण—सरसों के तेल में मिलाकर केशो मे लगाने से यूका, लिक्षादि कृमि नष्ट होते हैं । वीज आखो की अस्पष्ट दृष्टि व मूत्रदोष को आराम करते हैं इस विश्वास के साथ पजाब मे व्यवहृत होते है । ½ ड्राम परिमाण रस का सेवन करने से ऋतु रोग आराम होता है व ऋतुस्राव सवल हो जाता है । देशी धात्रियें गर्भस्राव कार्य करने मे इसका व्यवहार करती है । इसकी शक्ति अर्गट व सेविना के तुल्य है । (डिमक) हपाने वाली खासी, घू डी खासी, वात, पथरी, कामला, अल्परज. एव अपरा पर जननेन्द्रियो के रोगो मे यह अति उपकारी औषधि है । यह क्वीनाइन के गुणो के तुल्य एव इसकी अपेक्षा और कोई सस्ती ज्वरनाशक औषधि नही है ।

(भा० व० बगला से)

डाक्टर देसाई के मतानुसार हरमल उत्तम औषधि है । यह वात और कफ प्रधान रोगो मे दी जाती है । ६ माशे वीजो का चूर्ण ४ औस उबलते हुये जल मे मिला आध घण्टे बन्द रख, फिर छान ३ विभाग कर दिन मे ३ वार दिया जाता है । इसमे सोने के समय ६-६ माशे शहद मिलाकर देवे । अनार्त्तव और पीडितार्त्तव और मूत्रावरोध मे हरमल के फाण्ट या क्वाथ मे तिल तेल और शहद मिलाकर देते है । इन रोगो मे यह अच्छी लागू पड़ती है । इसके सेवन से दूध और रज स्राव मे वृद्धि होती है ।

आमवात मे सोडा सेलिसिलास की अपेक्षा इसके सेवन से जल्दी वेदना कम होती है । ज्वर, गृध्रसी, अपतन्त्रक, अपस्मार, दृष्टिमांद्य और धनुर्वात मे इसका उपयोग पोटास ब्रोमाइड की अपेक्षा अच्छा होता है ।

श्वास, सूखी खासी और काली खासी में इससे बहुत लाभ होता है । सक्रामक रोगी, घाव से पीडित और व्रण

वाले रोगियो के कमरे मे तथा प्रसूता के गृह मे हरमल जलाया जाता है। इसके धुए से वायु मे रही हुई दुर्गन्ध दूर होती है तथा कोथजन्य कीटाणु नष्ट होते हैं। व्रणो को इसका धुआ भी दिया जाता है।

पित्ताश्मरी, मूत्राश्मरी और उदर शूल मे हरमल पूर्ण मात्रा मे देते है। हिक्का मे इससे अच्छा लाभ हो जाता है। शोथ पर इसका लेप करने या पुल्टिस बाधने से वेदना कम होती है।

प्रयोग—

प्रतिश्याय—जुकाम होने पर हरमल का चूर्ण १ से १॥ माशे तक ४-४ घटे पर दिन मे ३ वार देवे। इस तरह २-३ दिन देने से जुकाम दूर होजाता है।

वक्तव्य—इसके सेवन के साथ नीलगिरी तेल को रूमाल या तौलिये पर छिडक कर सुघाते रहे, तो लाभ जल्दी होता है।

हिक्का—१-३ माशे बीजो के चूर्ण को शहद में मिलाकर १-१ घण्टे पर सेवन कराने से ३-४ घण्टे मे हिक्का शात होजाती है।

कफ कास—कभी कभी खासी मे कफ चिपचिपा और गाढा होजाने पर सरलता से नही छूटता और रोगी को अति त्रास होता है। ऐसी अवस्था मे हरमल अमृत के समान उपकारक है। हरमल का चूर्ण १-१ माशा दिन मे ३ बार शहद के साथ सेवन करने पर कफ सरलता से बाहर निकलने लगता है और व्याकुलता कम होजाती है।

तमक श्वास—कफ कास के समान श्वास रोग मे भी कफ प्रकोप हो तो हरमल का सेवन कराया जाता है। इसके सेवन से श्वास के दौरे का वेग जल्दी कम होता है और आवश्यकतानुसार १-१ घण्टे पर शहद के साथ १-१ माशे ३-४ वार देते रहें।

आक्षेप—धनुर्वात या अन्य प्रकार का आक्षेप होने पर हरमल का सेवन करने से तुरन्त लाभ पहुच जाता है।

आमवात—आमवात मे सन्धि जकड जाती हैं। उठने बैठने मे कष्ट होता है। शरीर जकड जाता है। ऐसी अवस्था १-१ माशा हरमल शहद तथा गरम जल के साथ दिन मे ३-४ वार देते रहने से रोग जल्दी शात होजाता है।

गृध्रसी—चूतड़ो मे रही हुई गृध्रसी नाडी जकड जाने पर कमर से लेकर पैर तक जडता आजाती है। रोगी चल नही सकता। इतना ही नही वल्कि उठना बैठना भी कष्ट रूप होता है। ऐसी अवस्था मे दिन मे ४ वार हरमल का सेवन कराने पर थोडे ही दिनो मे गृध्रसी वात दूर होजाता है।

सूतिका रोग—स्त्रियो के सूतिका रोग मे कितनी ही स्त्रियो को अतिवात प्रकोप होता है। अगुलिया टेढी हो जाती है, कमर मुड जाती है, मासपेशियो मे आक्षेप आता (अति खिचाव होता है) वार वार डकारे आती रहती है, भोजन करने की इच्छा नही होती। कब्ज वना रहता है, ऐसी अवस्था मे हरमल का फाट दिन मे ३—४ वार लगभग १ मास तक देते रहने से सूतिका रोग निवृत होजाता है।

अनार्तव और कष्टार्तव—मासिक धर्म वन्द हो जाना, मासिक धर्म के समय अति कष्ट होना, मासिक धर्म अति देर से आना फिर उस हेतु से आखो मे निर्बलता, मस्तिष्क में भारीपन, कमर मे दर्द रहना आदि लक्षण होने पर हरमल का फाट दिया जाता है। दिन मे ३ वार ३-४ मास तक तिल या द्राक्षारिष्ट के साथ देते रहे या मासिक धर्म आने के एक सप्ताह पहले से प्रारम्भ करे और मासिक धर्म के ३ दिन बाद तक देते रहे।

मूत्रकृच्छ्र—मूत्रमार्ग मे शोथ आने से कभी कभी पेशाब करने मे अति कष्ट होता है। उस पर हरमल का फाट या हरमल का चूर्ण २-३ माशे २-२ घटे पर २ या ३ वार शहद के साथ देने पर मार्ग साफ हो जाता है और वेदना दूर होजाती है।

निद्रानाश—हरमल २ माशे शाम को शहद के साथ दे देने पर रात्रि को शात निद्रा आजाती है।

(गां औ र. से)

अहितकर—शिरःशूलजनक, आकुलताकारक और विवमिषा कारक है। निवारण—सिकजबीन तथा अम्ल द्रव्य। प्रतिनिधि—सुदाव के बीज।



धन्वन्तरि

[बनौषधि विशेषांक छठा भाग]

हरेल चारा (Jasminum Scandens)

यह तैलोत्पादक या मोगरा तथा जूही के कुल (Oleaceae) की अत्यन्त सुगन्धित और सफेद फूलों वाली वनस्पति होती है।

उत्पत्ति स्थान–

यह वनस्पति नेपाल,आसाम तथा बगाल के पर्वतो मे पैदा होती है।

नाम–

नेपाल – हरेल चारा। बर्मा–थिंगवे। ले –जेसमिनम स्केन्डेस (Iasminum Scandens)।

गुण धर्म और प्रभाव–

इसकी जड दाद पर लगाने के काम मे ली जाती है।

(ब. चं.)

हरवल (खाजगोली) (Vitis Setosa wall)

यह द्राक्षाकुल(Vitaceae)की एक वेल होती है। इसके पत्तो तथा डालियो पर चर्मदाहक बाल रहते हैं। इसका हर एक अङ्ग दाहजनक होता है।

उत्पत्ति स्थान–

यह वनस्पति दक्षिण, कर्नाटक, मैसूर, मद्रास स्टेट और पश्चिमी घाट मे पैदा होती है।

नाम–

हि —हरवल। म –खाज गोलीची वेल। मलय-पुलिपेरान डाई। ता पुलिन रुलाई, सुगमवेल। ते०–पुल्लाबेचाली। अ –हेरी वाइल्ड वाइन(Hairy wild vine) ले०–विटिस सेटोसा (Vitis setosa wall)।

गुण-धर्म और प्रभाव—

इसके पत्ते वाह्योपचार मे त्वचा को उत्तेजित करने वाले होते हैं। इनका पुल्टिस बनाकर फोड़ो को पकाने के लिए उन पर बांधा जाता है। नारू के ऊपर इसको बाधने से नारू का जख्म पककर नारू बाहर निकल जाता है।

(ब. च.)

हलकुसा (Leucas Linifolia]

यह तुलसी कुल (Labiatae) की द्रोण पुष्पी या गुमा की जाति की एक वनस्पति होती है। अन्तर इतना ही होता है कि इसके पत्ते द्रोण पुष्पी से पतले होते हैं।

उत्पत्ति स्थान–

कमोवेश रूप मे सारे भारत के मैदानो मे पाया जाता है।

नाम–

सं द्रोणपुष्पी, कुम्भी, रुद्रपुष्पा। हिं –हलकुसा, गुमा। ते०–पेलादुमनी। ब हालकसा, हल कुस्सा। म –गूमा। गु०–झीनापान को कुवो। उर्दू–गूमा। ले –ल्यूकास लिनिफोलिया (Leucas Linifolia Spreng)।

उपयुक्त अङ्ग—पचाङ्ग।

गुण धर्म और प्रभाव—

यूनानी मत से इसके पत्ते वदजायका, कफ निस्सारक, कृमिनाशक, कामोद्दीपक, शान्तिदायक, मृदु विरेचक, अग्निवर्द्धक, पौष्टिक तथा बवासीर और आंखो के व्रणो





हलकुसा
LEUCAS LINIFOLIA SPR

मे लाभदायक हैं।

मध्य भारत के लोगो का विश्वास है कि इसके पत्तो को भूजकर उनमे नमक मिलाकर खिलाने से वे ज्वर को दूर करने मे मदद करते है।

लखीमपुर, आसाम मे इसके पत्ते भूख बढाने वाले माने जाते हैं। इसके पत्तो को केले के पत्तो मे लपेटकर गरम करते है और फिर रोगी को देते हैं। इसका पहला असर यह होता है कि रोगी की रही भूख भी नष्ट हो जाती है मगर दूसरे दिन उसकी भूख एकदम बढ जाती है और वह खाने के लिये व्याकुल हो जाता है।

(व० च० से साभार स०)

हल्दी (Curcuma Longa)

यह हरीतक्यादि वर्ग और आर्द्र कुल (Zingibera-ceae) का एक कन्द होता है। इसका क्षुप ऊचा, सुगन्ध युत्त और वर्षायु होता है। कन्द बड़ा, अण्डाकार, वृन्त-रहित नलिकाकर, गांठो सह, भीतर तेजस्वी पीले रङ्ग का। पानो का गुच्छ ४–५ फीट लम्वा। पत्र वृन्त 'पान जितना लम्बा, पत्तिया १ ½ फीट लम्वी और २ से २½ इन्च चौडी होती है जिनसे आम की तरह गन्ध आती है। पान दोनो ओर चिकने तथा दोनो ओर सफेद दाग वाले होते हैं। पुष्प दण्ड ४-६ इन्च लम्वा होता है जिसमे हल्दी के रङ्ग के लगभग १½ इन्च लम्बे पुष्प निकलते है। पुष्प मजरी में थोडे (कभी नाम) मात्र हलके पीले, ४ से ६ इन्च लम्बे। मजरी ४ से ६ इन्च लम्वी, २ इन्च चौडी। पुष्प पत्र हलका पुष्प जितना लम्बा।

विहार मे पहले आये हुये पान १६ इन्च लम्बे ६ इन्च चौडे, फिर आये हुये २० से २४ इन्च लम्बे ५ इन्च चौडे। विहार मे फूल अगस्त-सितम्बर मे आते है।

उत्पत्ति स्थान—

हल्दी—बगाल, विहार, मद्रास कुछ देहरादून आदि प्रदेशो मे बोयी जाती है।

नाम—

स०—हरिद्रा, पीता, रजनी, निशा। हिं०—हलदी, हल्दी, हर्दी। द्रा०—हलद। ब०—हलुद। म०—हलद। गु०—हलदर। क०—अरसिना। मला०—, ता०—मजल। ते०—पसुपु, पम्पी। अरबी—औरु केस फुर कुर्कुम, जर्सुद। फा०—दारजदी, झर्द चोबाह 'म०—



टर्मेरिक (Turmeric) ले०—कुरकुमा लोगा [Curcuma longa Linn]।

रासायनिक सङ्गठन—

इसमे उत्पत् तेल १ प्रतिशत हारिद्रिक [Curcumin] नामक पीत रजक द्रव्य, हरिद्रा तेल [Turmeric oil] या 'उर्मेरोल' प्रभृति उपादन होते हैं हरिद्रा तेल एक गाढा, पीला और चिपचिपा तेल है जिस पर इसका गन्ध और स्वाद निर्भर करता है।

उपयुक्त अङ्ग—कन्द।

मात्रा—स्वरस १ से २ तोला। चूर्ण २ से ६ माशा। पाक रूप से ½ से १ तोला।

गुण धर्म और प्रयोग

सक्षेप मे—रस-तिक्त, कटु। गुण—रूक्ष, लघु। विपाक कटु। वीर्य—उष्ण। दोष कर्म—उष्ण वीर्य होने से यह कफ वात शामक, पित्त रेचक और तिक्त होने से पित्त शामक भी है।

सस्थानिक कर्म बाह्य—इसका लेप शोथहर, वेदना-स्थापन, वर्ण्य, कुष्ठघ्न, व्रण शोधन, व्रण रोपण, लेखन है। इसका धूम हिक्का निग्रहण, श्वासहर और विषघ्न है

आभ्यन्तर नाड़ी सस्थान—यह उष्ण होने से वेदना स्थापन है।

पाचन संस्थान—यह रुचिवर्द्धक, अनुलोमन, पित्त-रेचन एव क्रमिघ्न है।

रक्तवह सस्थान—तिक्त होने से यह रक्त प्रसादन, रक्तवर्धक एव रक्त स्तम्भक है।

श्वास सस्थान—तिक्त होने से यह कफघ्न है।

मूत्रवह सस्थान—यह मूत्र सग्रहणीय एवम् मूत्र विरेचनीय है।

प्रजनन सस्थान—यह उष्ण होने से गर्भाशय शोधन तथा तिक्त होने से स्तन्य शोधन एवम् शुक्र शोधन है।

त्वचा—यह कुष्ठघ्न है। तापक्रम—पित्तशामक एव आम पाचन होने से ज्वरघ्न है।

सात्म्यीकरण—यह कटु पौष्टिक एवम् विषघ्न है।

हल्दी रस मे कड़वी, अनुरस चरपरा, विपाक—चरपरा, उष्णवीर्य, स्तन्य शोधन। रूक्ष, कफघ्न, ग्राही, पित्त-शामक, वर्णप्रद तथा त्वचारोग, प्रमेह, रक्त बिकार, शोष, पाण्डु कर्ण, विष, कुष्ठ, वातरक्त, उदरकृमि, पीनस, अरुचि शोथ, अपचि आदि रोगो की नाशक है।

उपयोग—

यूनानी मतानुसार—प्रकृति—तीसरे दर्जे मे गरम और खुश्क।

यूनानी मत से हल्दी की गठानें कडवी, शान्तिदायक, फोड़े को पकाने वाली और मूत्रल होती हैं। ये यकृत की विकृति तथा पीलिया रोग में लाभ पहुँचाती है।

डाक्टरी मतानुसार—डा० देसाई के मत से जिन रोगो मे श्लेष्म त्वचा से कफ अधिक मात्रा में निकलने लगता है, जैसे—गले के द्वारा अधिक मात्रा मे कफ का गिरना। नाक से श्लेष्म गिरना तथा प्रमेह, प्रदर इत्यादि रोगो मे हल्दी अच्छा काम देती है। हल्दी श्लेष्म त्वचा मे रूक्षता उत्पन्न करके कफ का पैदा होना कम कर देती है। सरदी के अन्दर जैसे वच फायदा पहुचाती है वैसे ही हलदी भी पहुँचाती है। सरदी लग जाने पर हलदी की धूनी दी जाती है और हलदी को दूध में औटाकर गुड़ मिलाकर पिलाया भी जाता है। इसके लेने से नाक के द्वारा सर्दी बहकर मस्तक का भार हल्का हो जाता है।

हल्दी का उपयोग अति प्राचीन काल से भोजन, घरेलू उपचार और आयुर्वेदीय औषधि रूप से हो रहा है। चरक सहिता मे लेखनीय, कुष्ठघ्न, कण्डूघ्न और विषघ्न दशेमानियो मे उल्लेख मिलता है तथा अन्त परिमार्जन और बहि परिमार्जन के प्रयोग, तिक्त स्कधं और प्रमेह, कुष्ठ, उन्माद, कामला, कास, विष प्रकोप, स्तन्य विकार और पीनस आदि रोगो पर हल्दी का उपयोग किया है। एवम् सुश्रुत सहिता मे हरिद्रादिगण, मुस्तादिगण, वात सशमन वर्ग, श्लेष्म सशमन वर्ग तथा कुष्ठ, नेत्ररोग, रक्तपित्त, श्वासरोग, कास, अरोचक, अपस्मार और प्रमेह आदि अनेक रोगो के प्रयोगो मे हल्दी ली है।

सुजाक रोग मे जब पेशाब गाढा, वेदनायुक्त, बार-२ और थोड़ा-थोड़ा होने लगता है तब हल्दी और आँवले का काढा बहुत लाभ पहुचाता है। इस काढे से दस्त साफ होता है, पेशाब की जलन कम होती है, पेशाब थोडा-२ होना बन्द होकर साफ होने लग जाता है। प्रदर रोगो में हल्दी को गूगल के साथ अथवा रसौत के साथ देते हैं।

आंखो के दुखने या आने पर ?। सोना हल्दी को १० औंस पानी मे औटाकर कपडे मे छानकर आंखो मे टपकाते हैं और उसमे कपडे को तर करके आखो पर रखते हैं। इससे आखो मे ठण्डक पैदा होती है, वेदना शान्त होती है और आंखो मे से कीचड का बहना कम हो जाता है। नेत्राभिष्यन्द रोग मे हल्दी एक उत्तम औषधि है। कान के बहने की हालत मे हल्दी और फिटकरी को मिलाकर कान मे टपकाते है।

हल्दी के अन्दर वातनाशक धर्म भी किसी कदर रहता है, इसलिये सर्दी से होने वाली अङ्गों की वेदना, दस्तो की वजह से होने वाले जोडो के दर्द और मस्तिष्क शूल मे हलदी खाने और लगाने के काम मे आती है। बवासीर के सूजे हुए मस्सो पर हलदी घी गुवार के गूदा मे मिलाकर लगाई जाती है। भूतोन्माद मे इसकी धूनी दी जाती हैं।

चर्म रोगों मे हल्दी एक बहुत उपयोगी वस्तु है। इन रोगो मे इसको आंवले के साथ देना विशेष उपयोगी होता है। हलदी को मक्खन मे मिलाकर त्वचा पर लगाने से त्वचा मुलायम होती है और बहुत से चर्म रोग नष्ट हो जाते हैं। हल्दी के उबटन से देह का सौंदर्य भी निखर जाता है, इसलिए विवाह के समय हलदी का उबटन इस देश मे शास्त्र सम्मत माना गया है। व्रणो के ऊपर हलदी को पीस कर लगाने से व्रण का सकोचन होकर वह शीघ्र भर जाता है।

इधर-उधर मे आकस्मिक गिर जाने से अथवा और किसी दूसरी घटना से शरीर को भीतरी चोट पहुची हो, अथवा रक्त का जमाव हो गया हो तो हलदी को दानेदार शक्कर के साथ देने मे रुधिर का जमाव बिखर कर रक्त सचालन क्रिया दुरुस्त हो जाती है। हल्दी का लेप चोट और मोच के ऊपर करने से लाभ पहुचता है।

हल्दी में दीपन और ग्राही धर्म भी रहता है। इसलिए, [illegible], [illegible] इत्यादि रोगों में भी यह उपयोगी होती है। चक्कर आने की हालत मे हल्दी का लेप सिर पर लगाना चाहिये।

प्रसूति काल मे तथा बच्चा जब तक छोटा रहे तब तक प्रसूता को हल्दी देना उत्तम होता है क्योंकि इससे दूध की शुद्धि होती है और गर्भाशय को उत्तेजना मिलती है। हलदी की गठाने बाह्य और अन्तरङ्ग दोनो ही दृष्टियो से उत्तेजक धर्म रखती हैं। इसका लेप त्वचा को उत्तेजित कर वेदना को शान्त करता है और इनका भीतरी प्रयोग रक्त की विकृति को दूर करता है।

इसका बाह्य प्रयोग चोट, मोच, जोक का डङ्क इत्यादि पर किया जाता है। इसलिए भारतवर्ष मे हर एक लेप और पुल्टिस मे हलदी मिलाने का रिवाज है। इसका ताजा रस कृमिनाशक होता है। इसकी गठानो का काढा जुकाम और ऐसे नेत्र शुक्ल रोग मे जिसमे आख से पीव निकलता हो, उपयोगी होता है।

यूनानी हकीम इसको पीला रङ्ग होने की वजह से यकृत के रोग और पीलिया मे उपयोग मे लेते है।

हलदी गठान का काढा, ऐसे नेत्राभिष्यन्द रोग मे जिसमे पीव बहता है, बहुत उपयोगी चीज है। इससे वेदना शीघ्र शान्त हो जाती है। जुकाम के अन्दर हलदी की गठानों को जलाकर उनका धुआ नाक की राह ग्रहण करने से नाक खूब बहने लगती है और जुकाम का सब विकार नाक की राह निकल जाता है और मस्तिष्क हल्का हो जाता है।

वेडन पावेल के मतानुसार हलदी पार्यायिक ज्वर और जलोदर रोग मे अति उपयोगी होती है। इसके अन्दर काफी तादाद मे उडनशील तेल और स्टार्च रहता है जो कि उत्तेजक, सुगन्धित और पौष्टिक होता है।

इसको गठान को भूनकर फिर उसका चूर्ण करके ब्रोङ्काइटीज मे देते है और इसका धुआ हिस्टीरिया जनित मूर्च्छा को दूर करने के लिए दिया जाता है। हलदी का चूर्ण करके उसको चिलम में रखकर उसका धूम्रपान करने से बिच्छू के विष की वेदना दूर होती है।

हलदी और फिटकरी को १ और २० के परिमाण मे मिलाकर नली के द्वारा कान में फूकने से प्राचीन कर्ण श्राव रोग आराम होता है।

हल्दी के फूलो का लेप दाद और दूसरे चर्म रोगो मे लाभ पहुचाता है। सुजाक के इलाज मे हलदी के फूल उपयोगी होते है।



आयुर्वेदीय चिकित्सा विज्ञान मे हलदी बहुत प्राचीन काल से उपयोग मे ली जाती है। सभी प्रकार के प्रमेहो में विशेषकर कफजन्य प्रमेहो मे यह एक उत्तम वस्तु मानी जाती है। इसीसे यहा के निघण्टुओ मे इसका एक नाम 'मेहन्घी' भी रक्खा गया है।

महर्षि सुश्रुत ने भी इसको प्रमेह के रोग मे उपयोगी माना है। आजकल के देशी चिकित्सक भी हलदी के चूर्ण को आवले के रस मे मिलाकर प्रमेह के रोग मे देते हैं। जिससे कितनी ही प्रकार के प्रमेह नष्ट हो जाते हैं।

एक तोला हलदी के चूर्ण को ८ तोला गोमूत्र के साथ पीने से खसरा तथा अण्डकोष के ऊपर की खुजली मिट जाती है। इसी चूर्ण को गुड के साथ खाकर ऊपर से गोमूत्र पीने से दाद और श्लीपद का रोग कुछ दिनो मे अच्छा हो जाता है। जुकाम के प्रारम्भ मे रात के समय नाक के द्वारा हलदी का धुआ ग्रहण करके अगर कुछ समय तक पानी न पिया जाय तो चाहे जैसा कठिन जुकाम हो अच्छा हो जाता है।

हलदी और अर्बुद रोग—जगलनी जडी बूटी के लेखक लिखते है कि अर्बुद तथा रसोली का रोग एक ऐसा रोग है जो बिना आपरेशन या शस्त्र क्रिया के नहीं मिटता। लेकिन हमको एक यतिराज ने ऐसी विधि बतलाई है जिससे बिना शस्त्र क्रिया के यह रोग आराम हो जाता है। यह विधि इस प्रकार है—

"हलदी की सूखी गठाने लेकर अङ्गारे पर रखकर जला लेनी चाहिये और उसकी भस्म को एक मजबूत कागवाली शीशी मे भर लेना चाहिये। फिर जरूरत पडे तब थोडी सी लेकर पानी में मिलाकर लेप के तुल्य गाढ़ी गाढी बनाकर अर्बुद के मध्य भाग में एक पैसे बराबर जगह मे लगा देनी चाहिए। ३-४ दिन तक प्रतिदिन इस भस्म को ३-४ बार लगाने से उस जगह का मास नष्ट होकर एक अगुल गहरा घाव पड जावेगा। यह घाव पड़ जाने पर उस अर्बुद को चारों ओर से हाथ से दबाकर उसका पीव तथा मेद का भाग इस घाव के रास्ते निकाल देना चाहिये। इस पीव के निकल जाने से अर्बुद बैठने लगेगा। फिर भी उस घाव को कायम रखना चाहिये। अगर वह भी भरने लगे तो उस पर हलदी की भस्म का लेप फिर करना चाहिये। यह लेप अर्बुद के अन्दर रहे हुए शेष दोषो को पीव का रूप देकर जल्दी निकालने का कार्य करता है। इस प्रकार अर्बुद के सब दोषो के निकल जाने पर राख को तिल के तेल मे मिलाकर दिन में २ बार लेप करने पर कोई मरहम वगैरह लगाकर उस घाव को भर देना चाहिए। इस पद्धति से अर्बुद के सिवाय कारबङ्कल तथा दूसरे साघातिक फोडो मे भी बहुत लाभ होता है। इसी प्रकार उपर्युक्त ग्रन्थ के लेखक ने हलदी के द्वारा अग्निदग्ध करके उपदश के विष को उस घाव द्वारा निकाल देने का भी एक तरीका लिखा है मगर वह तरीका इतना वेदनापूर्ण और खतरनाक है कि उसमे जरासी भूल से भी अनिष्ट होने की सम्भावना है इसलिए हम उसे यहां देना उचित नही समझते।

मतलब यह है कि हलदी हमारे घरो मे उपयोग मे आने वाली वस्तु होने पर भी चिकित्सा शास्त्र की दृष्टि से बडे महत्व की वस्तु है। इसकी मात्रा २ माशे तक की है।

(व. च)

जुकाम—नया रोग होने पर दूध मे हलदी मिला गरम करें। फिर नीचे उतार निवाया रहने पर थोडा गुड मिलाकर सुबह और शाम रात्रि को पिलावें।

इसके अतिरिक्त पतला जल जैसा स्राव होता हो, तो हलदी का धुआ भी दिया जाता है। इन दोनो उपचारो से श्लैष्मिक कला पर लेखन गुण पहुचकर कफोत्पत्ति बन्द हो जाती है।

यदि रोग पुराना है, सफेद या पीला गाढा श्लेष्म निकलता रहता है, तो दूध मे हलदी और थोड़ा घी मिला, उबाल निवाया रहने पर पिलाने और हलदी का धुआं देने से कफ गिर कर शिर की जड़ता दूर हो जाती है।

कफ कास—हरिद्रा अर्क का सेवन करें या हल्दी को दीपक पर सेककर चूर्ण करके घी या शहद के साथ मिलाकर लेवें। जीर्ण कफ रोग मे जब कफ अत्यधिक गिरता हो और घबराहट अधिक हो, तब दूध मे हल्दी मिला, उबाल, निवाया रहने पर १ बु द भिलावे का तेल और थोड़ा गुड़



मिलाकर पीते रहे। (यह महाराष्ट्र का घरेलू उपचार है)।

श्वास—वृद्धावस्था, क्षति धूम्रपान आदि कारणो से छाती मे कफ सग्रह अधिक रहता हो, तो कफस्राव कराने के लिए हरिद्राद्यवलेह का सेवन करावे तथा तमाखू के व्यसनी को हरिद्रादि धूम्र का पान कराने से भी तुरन्त लाभ पहुच जाता है।

अर्श—(अ) बवासीर के मस्से सूज गये हो, तो घी कुंवार के गर्भ पर हल्दी बिखेर कर या दोनो को मिला, पीस, गुनगुना कर पुल्टिस जैसा बनाकर के बाधा जाता है या लेप किया जाता हे। अथवा हल्दी को घी मे घिसकर लेप करने से भी लाभ हो जाता है।

(आ) हल्दी के चूर्ण मे थूहर का दूध मिलाकर उसमे सूत का डोरा भिगोवें। उस डोरे को अर्श के मस्से पर ५-७ बार बाध देने से मस्सा गिर जाता है।

उदर कृमि—२–४ वर्ष के वालक को हल्दी ४ रत्ती और गुड ४ रत्ती मिलाकर दिन मे दो बार खिलावे और ऊपर ३ माशे वायविडङ्ग का क्वाथ पिलावें। इस तरह ३–४ दिन देने पर मध्य अन्त्र मे रहने वाले सूक्ष्म उदर कृमि का नाश हो जाता हे।

कामला—६ माशे हल्दी को मट्ठे मे मिलाकर दिन मे दो बार सेवन करे। भोजन मे दही–भात या मट्ठा भात लेते रहने से ४–५ दिन मे कामला शमन हो जाता है।

कफ प्रमेह—कफ विकार से उत्पन्न प्रमेह—सान्द्रमेह-जिसमे पेशाब गाढा हो जाता है, पिष्टमेह—जिसमे आटा मिले हुये जल के सदृश मूत्र गन्दला रहता है, शुक्रमेह—जिसमे मूत्र के साथ शुक्र जाता है आदि प्रमेहो पर हलदी और आवले का क्वाथ दिया जाता है। उससे मल मूत्र की शुद्धि होकर रोगनिवृत हो जाता है। हल्दी, दारुहल्दी, हरड, बहेडा और आवला, इन ५ औषधियो को समभाग मिलाकर जौकुट कर एक तोला रात्रि को जल मे भिगो देवें। सुबह औषधि मसलकर छान लेवे। उसमे ६ माशे शहद मिलाकर पिलावें। यदि उदरशूल और वायु संग्रह और पतले दस्त न हो, तो रात्रि को भी इसी तरह सेवन कराते रहने से थोडे ही दिनो मे कफज और पित्तज प्रमेह दूर हो जाते हैं।

उदकमेह—इस प्रकार के प्रमेह मे मूत्र का परिमाण बहुत बढ जाता है। मूत्र कुछ गन्दला भी रहता है। उस पर हल्दी और तिल १–१ माशा और गुड २ माशे मिलाकर सुबह–शाम निवाये जल के साथ सेवन करते रहने से कुछ दिनो मे लाभ हो जाता है। यदि तृषा भी अधिक लगती हो, तो हल्दी और आवले २–२ माशे और शक्कर ४–४ माशे मिलाकर दिन मे तीन समय लेते रहना चाहिये।

श्वेत प्रदर—हल्दी उत्तम गर्भाशय उत्तेजक और लेखन होने से सफेद गाढा श्लेष्मा जाने पर गूगल के साथ, पतला श्राव अत्यधिक समय होने पर रसौत के साथ सेवन करायी जाती है। मात्रा—२ से ३ माशे। दिन मे दो बार सुबह और रात्रि को देवें।

कर्ण श्राव—कान मे से पूय बहता हो, तो हल्दी और फिटकरी का फूला मिलाकर कान मे डालने पर श्राव दूर होता है और कान जल्दी अच्छा हो जाता है।

नेत्राभिष्यन्द पर—आंख आने पर १ तोला हल्दी को १६ तोले जल मे उबाल स्वच्छ दोहरे कपडे या फिल्टर पेपर से छानकर दिन मे दो २–२ बद आखो मे डालते रहने और उसमे भिगोये हुए चौलडा कपडे की पट्टी नेत्र पर रखने से आखो को ठण्डक मिलती है, वेदना शान्त होती है, मल और पूय कम होता है और शुक्र (फूला) हुआ हो, तो वह भी दूर हो जाता हे। नए अभिष्यन्द रोग पर हल्दी उत्तम औषधि है।

कण्डू—खुजली आदि त्वचा रोगो में आवला (२ से ४ तोले) और हल्दी (३ से ६ माशे के) क्वाथ का जुलाब देने से स्थूल विष का अधिकाश नष्ट हो जाता है। फिर कडवे नीम के पान और हल्दी १–१ माशे को पीसकर जल के साथ दिन मे दो बार लेते रहे तथा हल्दी और नीम पत्र के चूर्ण को मक्खन मे मिलाकर मालिश करते रहने से एक सप्ताह मे त्वचा मुलायम और तेजस्वी बनती है और कण्डू आदि अनेक त्वचा रोग नष्ट होते हैं।

विष प्रकोप—मन्द विष का सेवन होने या कीटाणुओ की आवादी रक्त मे बढने पर विष उत्पन्न हो जाता है। उस लीन विष को नष्ट करने के लिये हल्दी २–२ माशे सुबह और रात्रि को गौदुग्ध के साथ सेवन करते रहने से



२१ दिन मे विष नष्ट होकर रक्त शुद्ध हो जाता है।

शीतला के व्रण—निशादि लेप लगावे या हल्दी और कत्थे को पीस फटे हुए व्रणो पर भुरकाते रहने से वे जल्दी भर जाते हैं।

अन्त्र शोथ—द्विनिशादि लेप दिन मे ३ बार लगाते रहने से वमन, उदरशूल, मलावरोध आदि सब लक्षणो सह अन्त्र शोथ दूर हो जाता है। विरेचन के अतियोग, बार-बार विरेचन, अपचन और उदर को बलपूर्वक मसलने पर आंतो मे शोथ आ जाता है। फिर मलावरोध, उदर पीडा, शूल, अफरा और बेचैनी उत्पन्न होते है। ऐसे समय पर विरेचन या वस्ति से लाभ नही पहुँच सकता। यह लेप ही हितावह होता है। रोगी को पूर्ण विश्रांति देनी चाहिए।

चोट जनित शोथ—लाठी, पत्थर आदि लगने या गिर जाने से किसी भाग मे रक्त जम गया हो और वेदना होती हो, उस पर द्विनिशादि लेप करने से रुधिर बिखर जाता है और वेदना दूर होती है।। हड्डी अथवा मास पर चोट आई हो, तो उस पर भी यह लेप लगाया जाता है। रक्त निकलकर आने वाले शोथ पर हल्दी को पान मे खाने के चूने के साथ मिलाकर लेप किया जाता है। जिससे पकने की भांति दूर होती है और शोथ उतर जाता है।

नेत्र पर चोट—आंख पर हाथ, लकडी आदि की चोट लग जाने पर निशाद्यञ्जन को स्त्री दुग्ध, बकरी के दूध या जल मे घिसकर अञ्जन करने और नेत्र पर लेप करने से अश्रुस्राव, लाली, वेदना, सूजन, दृष्टिमाद्य आदि लक्षण दूर हो जाते है।

नेत्र मे श्लैष्मिक कला वृद्धि—हरिद्रादि वर्ति का अञ्जन दिन मे दो बार करते रहने से श्लैष्मिक कला बढना दाह, कण्डू अश्रु स्राव आदि विकृति शमन हो जाती है। रक्त मे विप हो या उदर मे मल सगृहीत रहता हो, तो उसे दूर करने का उपाय करना चाहिए।

स्तन शोथ—विशेषत प्रसूता को और कभी स्तन वाली माता को स्तन पर आ जाती है। फिर भयकर वेदना होने लगती है और पकने लगता है। उसकी प्रथमावस्था मे हल्दी और घी कुंवार के गर्भ को खरल कर गुनगुना कर मोटा मोटा लेप करने या पुल्टिस बाधते रहने से और दिन मे ४-६ बार बदलते रहने से रक्त जल्दी शुद्ध होकर बिखर जाता है और पाक होने लगा हो तो जल्दी फूट जाता है।
(गा औ.र)

कफज तृष्णा—हल्दी का क्वाथ मिश्री और मधु मिला कर पीवे। (च० चि० अ० ६)

चेचक मे—इमली के पत्तो के रस मे हल्दी को पीस ठण्डे जल मे मिलाकर पीने से शीतला का निकलना रुक जाता है। चेचक के समय बच्चो को मात्रानुसार पिलावे।
(शोढ़ल)

हरिद्रादि लेप—हल्दी, लोध्र, पतग, रसोई का धूआ और मैनसिल इन सबको समभाग मिला बारीक चूर्ण कर शहद मे मिलाकर लेप करने से मेद वृद्धि से उत्पन्न अर्बुद (रसौली) मिट जाता है।

निशादि लेप—हल्दी, दारु हल्दी, खस, सिरस की छाल, नागरमोथा, लोध्र, सफेद चन्दन और नागकेशर इन ८ औषधियो को समभाग मिला जल के साथ पीसकर लेप तैयार करे। यह लेप दिन मे २-३ बार लगाते रहने से विस्फोटक और शीतला के व्रण, विसर्प, दाह, स्वेद, देह की दुर्गन्ध, रोमांतिका और उपकुष्ठ (त्वचा रोग) दूर होते है।

द्विनिशादि लेप—हल्दी, दारु हल्दी, सफेद चन्दन, रक्त चन्दन, हरड़, दूब की जड, पुनर्नवामूल, पदम काष्ठ, लोध्र, सोनागेरू और रसौत इन ११ औषधियों को समभाग मिलाकर जल से पीसकर लेप तैयार करें।

यह लेप चोट लगने से उत्पन्न शोथ और रक्तज शोथ को दूर करता है। अन्त्र के भीतर सूजन आने पर ऊपर दबाने से वेदना बढ़ती है। वमन, उदरशूल, उदर कठोर भासना मलावरोध (जुलाब या वस्ति से भी उदर शुद्धि न होना) आदि लक्षण प्रतीत होते है। इस पर यह लेप लगाने से १ ही दिन मे लाभ पहुच जाता है।

निशाञ्जन—हल्दी, दारुहल्दी, नागरमोथा, हरड़, बहेडा आवला, मुलहठी और शक्कर इन ८ औषधियो को समभाग मिला कूट कपडछन चूर्ण कर बकरी के दूध मे १२ घण्टे खरल कर वर्ति को जल मे या स्त्री के दूध मे घिसकर अञ्जन करने से चोट लगने से उत्पन्न नेत्र शोथ, पीडा, लाली और नेत्रस्राव आदि दूर होते है।

हरिद्रादि वर्ति—हल्दी, नीम के पान, छोटी पीपल, कालीमिर्च, वायविडग, नागरमोथा और सोठ इन औषधियो को समभाग मिला कूट कपड़छन चूर्ण कर गोमूत्र मे १२ घण्टे खरल कर वर्ति बना लेवे। (यह वर्ति उसी दिन बन सके इसलिये घुटाई बहुत जल्दी प्रारम्भ करनी चाहिये।) इस वर्ति को जल,बकरी का दूध या शहद मे घिसकर अञ्जन करें। दाह और वेदना के शमनार्थ बकरी का दूध एव मलका स्राव कराने के लिये शहद हितावह है। जल सर्व समय सामान्य अनुपान है। इस वर्ति के अञ्जन से नेत्रदाह, नेत्र मे पतली कला उत्पन्न होना, मल आना, नेत्र व्यथा, नेत्रलाली, कण्डू और नेत्र स्राव आदि दूर होते है।

हरिद्रा अर्क—हल्दी का मोटा चूर्ण १ भाग और शराब (४०%) ६ भाग मिलाकर ७ दिन बोतल मे रख देवे। फिर फिल्टर पेपर से छान लेवे। मात्रा १-२ ड्राम।

रसायन और रक्त शोधनार्थ दिन मे ३ बार जल के साथ सेवन करावे। कफ प्रमेह, मूत्र दाह, जुकाम, कफकास और श्वेत प्रदर आदि रोगो पर हितावह है।

हरिद्राद्यवलेह—हल्दी, कालीमिर्च, मुनक्का, पीपल, रास्ना और शठी इन ६ औषधियो को समभाग मिलावे। फिर सबके वजन से आधा गुड मिलावें। इसमें से एक-एक तोले को कडवे तेल मे मिलाकर दिन मे ३ बार चटाने से कफ प्रकोप सह श्वास रोग दूर हो जाता है। एव यह अवलेह हिक्का रोग मे भी हितावह है।

हरिद्रादि धूम—हल्दी, दारुहल्दी और मैनसिल, इन तीन औषधियो को जल मे पीसकर छोटी-छोटी वर्तिया बनाकर सुखा लेवे। फिर उनमें से एक वत्ती को जलाकर बीड़ी के समान धूम्रपान कराने पर सगृहीत कफ बाहर निकलकर छाती हलकी हो जाती है।

हरिद्रादि कषायः ५ (भैं र.। बालरोगा०)—हल्दी, दारुहल्दी, मुलैंठी, कटेली और इन्द्र जौ समान भाग लेकर क्वाथ बनावे। यह क्वाथ बालको के ज्वरातिसार और स्तन्य दोष को नष्ट करता है।

हरिद्रादि गण (सू सं.। सू अ. ३८)—हल्दी, दारुहल्दी, शालपर्णी, इन्द्र जौ और मुलैंठी।

इन औषधियो के योग को "हरिद्रादि गण" कहते है।

हरिद्रादि योगः (ग. नि। कुष्ठा०)—१० तोले गो मूत्र मे पत्थर पर पिसी हुई हल्दी ३ माशा मिलाकर पीने से कण्डू और पामा का नाश होता है।

हरिद्रादि चूर्णम् १ (यो र श्वासा)—हल्दी, कालीमिर्च, मुनक्का, गुड, रास्ना, पीपल और सोठ समान भाग लेकर चूर्ण बनावे।

इसे सरसो के तेल में मिलाकर सेवन करने से भयकर श्वास भी नष्ट हो जाता है। (मात्रा—१½ से २ माशा)।

हरिद्रादि चूर्णम् (२))वृ.नि र.। कामला.)—प्रात काल १¼ तोला (व्यवहार० मा० ३-४ माशा) हल्दी के चूर्ण को ५ तोले दही मे मिलाकर सेवन करने से कामला रोग नष्ट हो जाता है।

हरिद्रादि योग (१)यो.र.। (अश्मर्य., मूत्रकृच्छ्रा.)—(३-४ माशा) हल्दी के चूर्ण को (१ तोला) गुड़ मे मिला कर काजी के साथ सेवन करने से पुरानी शर्करा भी नष्ट हो जाती है।

हरिद्रा योगः (२) (वै. म. र.। पटल ७)—प्रात काल हल्दी के(३माशा) चूर्ण को शहद के साथ सेवन करने से २० प्रकार के प्रमेह अवश्य नष्ट हो जाते हैं।

हरिद्रादि चूर्णम् (वैद्यामृत। विषय ३५)—हल्दी के (३-४ माशे)चूर्ण को गुड़ में मिलाकर गोमूत्र के साथ सेवन करने से १ वर्ष का पुराना श्लीपद और दाद तथा कुष्ठ रोग नष्ट हो जाता है।

हरिद्रादि घृतम् (भै.र.। पाण्डुवा)—हल्दी, हर्र, बहेड़ा, आमला, नीम की छाल, बला (खरैटी की जड़) और मुलैठी समान भाग मिश्रित २० तोले लेकर पानी के साथ बारीक पीस ले।

क्वाथ—उपरोक्त वस्तुयें समान भाग मिश्रित २ सेर लेकर १५ सेर पानी मे पकावें और ४ सेर रहने पर छान ले।

२ सेर भैंस के घी मे उपरोक्त कल्क और क्वाथ तथा ४ सेर गोमूत्र मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें। जब जलाश शुष्क हो जाय तो घी को छान ले।

यह घृत कामला को नष्ट करता है। (मात्रा—१ से २ तोला)



हरिद्रा खण्ड. (१) (भै. र.। शीतपित्त.)—हल्दी का चूर्ण ४० तोले, गाय का घी ३० तोले। गोदुग्ध ८ सेर और खाण्ड ३ सेर १० तोले लेकर प्रथम हल्दी को घी में भूने और फिर उसमे दूध तथा खाण्ड मिलाकर मन्दाग्नि पर पकावें।

जब पाक तैयार होने के निकट आजाय तो उसमे सोठ, मिर्च, पीपल, दालचीनी, इलायची, तेजपात, वायविडङ्ग, निसोत, हर्र, बहेडा, आमला, नागकेसर, नागरमोथा और लोह भस्म, इनका ५-५ तोले चूर्ण मिला दें।

इसे मिट्टी के बरतन में बनाना चाहिये।

मात्रा—आधा से एक तोला।

इसके सेवन से कण्डू (खुजली), विस्फोट और दाद का नाश होकर शरीर तप्तकाचन के समान (निर्मल और उज्वल) हो जाता है।

यह हरिद्रा खण्ड—शीतपित्त, उदर्द और कोठ को एक सप्ताह मे ही नष्ट कर देता है। कण्डू (खाज) की तो यह परमौषधि है।

निशादि क्वाथः (वृ नि र. मसूरिका.)—हल्दी, दारु हल्दी, खस, सिरस की छाल, नागरमोथा, लोध्र, सफेद चन्दन, नागकेसर, पटोल की जड, अतीस और चौलाई के क्वाथ मे हल्दी तथा आमले का कल्क मिलाकर पिलाने से मसूरिका, विस्फोटक, विसर्प और वमन तथा ज्वरयुक्त रोमान्तिका नष्ट होती है।

निशादि चूर्णम् (रा० मा० प्रमे०)—हल्दी के चूर्ण को आमले के रस और शहद मे मिलाकर सेवन करने से थोडे दिनों मे ही समस्त प्रकार के प्रमेह नष्ट हो जाते हैं। (मात्रा—३ माशे।)

निशादि घृतम् (व० से० उन्माद)—हल्दी, दारुहल्दी, हर्र, बहेडा, आमला, निसोत, बच, सफेद सरसो, हीग, सिरस की छाल, मालकगनी, श्वेतापराजिता, मजीठ, सोठ, मिर्च, पीपल और देवदारु का समान भाग मिश्रित चूर्ण १० तोले तथा १ सेर घी और ४ सेर गोमूत्र लेकर सबको एकत्र मिलाकर पकावें। जब मूत्र जल जाय तो घृत को छान लें।

इसके सेवन से उन्माद नष्ट होता है। (मात्रा—१ से २ तोले तक।)

निशादि तैलम् (१) (भै. र. भगन्दर)—हल्दी, आक का दूध, सेंधा नमक, चीता, गूगल, कनेर की जड और कुडे की छाल के कल्क और क्वाथ से सिक तैल लगाने से भगन्दर नष्ट हो जाता है।

(सब चीजो का समान भाग मिश्रित कल्क १३ तोले ४ माशे, क्वाथ ८ सेर, तेल २ सेर।)

निशादि तैलम् (२) (वृ. मा. बालरोगा)—बालक की नाभि पक जाय तो हल्दी, लोध, फूल प्रियगु और मुलैठी के कल्क और क्वाथ से सिद्ध तैल या इन्ही चीजो का चूर्ण लगाना चाहिए।

(तैल पाक के लिए—सब चीजो का समान भाग मिश्रित कल्क १३ तोले ४ माशे, क्वाथ ८ सेर, तैल २ सेर।)

निशाद्य तैलम् (भै र. कर्ण)—हल्दी और गन्धक का कल्क २½ तोले, सरसो का तैल एक सेर तथा धतूरे का रस चार सेर लेकर सबको एकत्र मिलाकर रस जलने तक पकावे।

इसे कान मे डालने से कर्ण नाडी नासूर नष्ट होता है।

निशादि लेप (१) वै. म र प ४)—हल्दी और शख को पानी मे पीसकर लेप करने पर स्तनमूल की तीव्र पीडा शांत होजाती है।

निशादि लेपः (२) (भा. प्र म. ख. ज्वर)—हल्दी इन्द्रायण की जड, खस, सेंधानमक, दारु हल्दी और इगुदी (हिंगोट) की जड। इन सबके समान भाग मिश्रित चूर्ण को या इनमें से किसी एक औषधि को आक के दूध मे घोटकर लेप करने से कर्णिका (सन्निपात ज्वर मे होने वाली कान के पीछे की सूजन) नष्ट होती है।

निशादि लेप. (३) यो. र. अर्श)—हल्दी, कडवी तोरी और सेंधा नमक के समान भाग मिश्रित चूर्ण को थोहर (सेंड, सेहुड) के दूध मे घोटकर गोमूत्र मे मिलाकर लेप करने से अर्श (बवासीर) नष्ट होती है।

निशादि लेपः (५) (व से। कुष्ठा)—हल्दी, थोहर (सेंड, सेहुंड), अमलतास और मकोय के पत्ते, दारुहल्दी, तथा पमाड के बीज समान भाग लेकर महीन चूर्ण करके उसे तक्र मे पीसकर सरसों के तैल मे मिलाकर मालिश

करने से पारा इत्यादि नष्ट हो जाती है।

निशादि लेपम् (र सा स । पाण्डु)—लोहभस्म, हल्दी, दारुहल्दी, हर्र बहेडा, आवला और कुटकी का चूर्ण १–१ भाग लेकर सबको एकत्र खरल करे। इसे शहद और घी मे मिलाकर चाटने से कामला और पाण्डु रोग नष्ट होता है। मात्रा—१ माशा।

रजन्यादि क्वाथ (यो. चि म अ ४)—हल्दी, नागर मोथा, चिरायता, हर्र, बहेडा, आमला, नीम की छाल, वासा, कटेली, कटेला (बडी कटेली), भारङ्गी, कुटकी, सोठ, पीपल, पटोल, पित्तपापडा, काकडासिंगी, देवदारु, गन्धतृण, जवासा, बला, बेल की छाल, बन कुलथी, हर्र, कायफल, कुडे की छाल और निसोत एक-एक भाग तथा रास्ना दो भाग लेकर सबको एकत्र करके अधकुटा करले।

(इसमे से २ तोले चूर्ण को १६ तोले पानी मे पकावें और ४ तोले पानी शेष रहने पर छानले)।

इस क्वाथ मे सोठ, मिर्च, पीपल का चूर्ण मिलाकर सेवन करने से सन्निपात ज्वर नष्ट होता है।

यह क्वाथ १३ प्रकार के सन्निपात वमन, स्वेद, प्रलाप, स्तैमित्य (शरीर का भीगे कपडे से लिपटा हुआ सा प्रतीत होना), शरीर का ठण्डा हो जाना, मोह, तन्द्रा, तृषा, श्वास, कास, दाह, अग्निमाद्य, हृदय शूल, पार्श्व शूल, विष्टभ, जिह्वा स्फुटनम् और कर्णशूल को शीघ्र ही नष्ट कर देता है। सन्निपात ज्वर के लिये इससे श्रेष्ठ अन्य औषधि नही है।

रजन्यादि लेपः (१) (वं. से । विषा.)—हल्दी, दारुहल्दी, मजीठ, पतङ्ग और नाग केशर, समान भाग लेकर बारीक चूर्ण बनावे।

इसे ठण्डे पानी मे पीसकर लेप करने से मकडी का विष शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

रजन्यादि लेप (२) (वृ. नि र. । क्षुद्र.)—हल्दी और भांगरे की जड समान भाग लेकर सबको एकत्र मिला कर पानी के साथ पीस लें।

नेत्रो के बाहर इसका लेप करने से समस्त नेत्र रोग नष्ट होते है।

अहितकर—हृदय के लिये। निवारण—बिजोरा और नीबू का रस। प्रतिविधि—मजीठ।

हलदू (Adina cardifolia)

यह वटादि वर्ग और मजिष्ठादि कुल (Rubiaceae) का एक बडा वृक्ष होता है। इसके वृक्ष २५ से ३० फुट ऊचे होते है। काष्ठ सख्त होता है। तना ज्यादा करके सीधा होता है। तना और शाखाओ की छाल का रङ्ग भूरा या भस्मी होता है और उस पर चीरे पडे हुये होते है। कोमल शाखाए रतास लिये भूरे रङ्ग की और उस पर सफेद बालो की रोमावली होती है। पत्र वृन्त ५ से ७ इच लम्बा, पान—आमने सामने ५ से १५ इच लम्बे और इतने ही चौडे होते है। पत्ते-पत्र दण्ड के पास विभाजित और सिरे पर नोकदार होते है पान ऊपर से हरे और नीचे की ओर हल्के हरे होते है। पानो मे ज्यादा करके सामने दो नसें होती है। पत्र दण्ड और इन नसो का रङ्ग जामुनी छाया लिये हुये होता है। पुष्पो की डडी कदम्ब के फूलो जैसी चैत्र से जेष्ठ मास तक आती है। इस दण्डी मे बहुत सूक्ष्म फूल आये हुए होते है। पुष्प सुवासित पीले रग के होते हैं। प्रत्येक पत्र कोण १ से ३ सलिए पुष्प धारण करने वाली आई हुई होती है। और इन सलियो पर सूक्ष्म फूलो से बनी हुई एक एक दण्डी आई हुई होती है। लकडी का रग हल्दी जैसा पीला होता है अत इसे हलदू करते है।

फल—सुपारी के सदृश होते हैं जिसमे पाच बीज होते है।

उत्पत्ति स्थान—

यह भारत के पश्चिम प्रदेश, बगाल तथा हिमालय की निचली पहाडियो मे मिलता है। यह विशेष करके सूखे भागो मे होता है।

नाम—

सं०—हरिद्रु, हारिद्रक, पीतदारु, कदम्बक, गिरी कदकदम्ब, हारिद्रुम। हिं०—हलदुवा, हरदा, हल्दू, हलदू, हलद कदमी। गु०—हलदर वो । म०—हलदिवा वृक्ष



हैद, हलदर था। व० —केलिकदम्ब, धूलि कदम्ब, दाकम्। ता० – मज्जन कदमी। ते०—नुन्धुकदमी। क०—विलिलु। ले०—आडीनाकार्टिफोलिया (Adina cardifolia (Roxb) Benth)।

रासायनिक सङ्गठन—

इसकी छाल में एक तिक्त पदार्थ होता है।

उपयुक्त अङ्ग—मूल, छाल, पत्र।

मात्रा—स्वरस १ से २ तोला। क्वाथ–५ से १० तोला। चूर्ण–१ से ३ माशे।

गुण धर्म और प्रयोग—

संक्षेप मे–रस–तिक्त। गुण—लघु, रूक्ष। विपाक–कटु। वीर्य—शीत। दोषकर्म—यह कफपित्त शामक है।

संस्थानिक कर्म—बाह्य–यह कुष्ठघ्न, वर्ण्य, व्रणशोधन और व्रण रोपण है। आभ्यन्तर पाचन संस्थान–यह तिक्त होने से दीपन, आमपाचन, पित्त सारक, स्तम्भन तथा कृमिघ्न है।

हलदुवा—पचने में चरपरा, उष्णवीर्य, कषैला, चरपरा, हलका, कफनाशक, वर्ण को उज्वल करने वाला, व्रण शोधक, व्रण रोपण, कडवा, बलवर्द्धक, कान्तिजनक और त्वचा के दोषो को दूर करता है। (शा० नि०)

हलदुवा—शीतल, कडवा, {मगलकारक, पित्तनाशक, वमन निवारक, बलवर्द्धक और त्वचा के दोषो को दूर करता है। (रा. नि.)

नव्य मतानुसार—इसकी छाल बलकारक, तिक्त और ज्वर नाशक है। यह अग्निमांद्य व ग्रहणी रोग मे हितकारी है। (बी एन. खोरी)

हलदू के रस मे व्रण मे उत्पन्न कृमि नष्ट हो जाती है। (डीमक)

प्रयोग–लेप, क्वाथ, चूर्ण तैलादि।

हलियून (ASPARAGUS OFFICINALIS)

यह गुडूच्यादि वर्ग और पलाण्डु कुल (Liliaceae) का एक झाड है जिसकी पत्ती सौंफ की तरह, जड लम्बी, फल गोल मटराकृति, त्रिकोष युक्त, प्रत्येक कोष में १–२ काले गोल या काले दाने की तरह बीज होते है। कच्चा फल हरा, पका लाल या काला होता है। इसकी जड और फल (बीज) औषधि के काम मे आते है। बाजार मे हलियून इसके छोटे सूखे फल मिलते है।

इस वनस्पति की खेती उत्तरी भारत मे की जाती है। इसके अकुरो की तरकारी बनाई जाती है। इसके फल हलियून के नाम से बिकते हैं। वे ईरान से यहा आते हैं।

उत्पत्ति स्थान—

उत्तर पश्चिम हिमालय, कुमाऊ और कुरम की घाटी मे ११०० फुट की ऊचाई पर तथा फारस मे इसके वृक्ष होते है। उत्तर भारतवर्ष मे इसकी खेती की जाती है।

नाम—

हि—हलियून, हलयून। ब—हिकुआ। अरबी—इस्फेराज, खशबुलहय्य। फा—मारगियाह, मारचोब। अ.–एस्पेरेगस (Asparagus) स्पेरेज (Sperage) ईरान—हालियून। ले—एस्पेरेगस आफिसिनेलिस (Asparagus officinalis Linn)।

रासायनिक सङ्गठन—

जड मे हल्यूनीन् (Asharrgin), एक हरापन लिये पीला राल, शर्करा, निर्यास, मलेट्स आदि और फल मे द्राक्षा शर्करा एव स्पर्गन्सीन (Sparganein) एक रजक द्रव्य, बीज मे एक उत्पत तेल तथा एक सुगन्धित राल, शर्करा और स्पार्गीन (Spargin) नामक एक तिक्त सत्व आदि होते हैं।

उपयुक्त अङ्ग—मूल और फल। मात्रा ३ माशे से ५ माशे तक।

गुण धर्म और प्रभाव—

यह वनस्पति मूत्रल, मृदुविरेचक, हृदय को शक्ति देने वाली और उपशामक होती है। इसके अकुर वायु नाशक, मृदुविरेचक और मूत्रल होतेहैं, इसके फल गर्भस्थापक और जड़ स्निग्ध तथा पौष्टिक होती है। इसकी जडो मे इसके अकुरो से मूत्रल तत्व अधिक तादाद मे पाये जाते हैं। इसकी जड़ो का शीत निर्यास पीलिया रोग को



हलियून
ASPARAGUS OFFICINALIS LINN

नष्ट करने के लिए दिया जाता है। यह यकृत की जडता और सुस्ती को दूर करता है।

इङ्गलैण्ड मे इस वनस्पति के पचाङ्ग से एक टिंक्चर बनाया जाता है जो पेशाब की जलन और संधिवात तथा गठिया मे उपयोगी समझा जाता है।

अमेरिका मे यह वनस्पति निर्विवाद रूप से एक उपशामक पदार्थ मानी जाती है और हृदय की सब प्रकार की शिकायतो में यह एक उपशामक और शान्तिदायक द्रव्य की तरह दी जाती है। नाडी की तेजगति को ठीक करने के लिए भी इसका उपयोग होता है।

इसके फल को शराब के साथ देने से स्त्री का गर्भाशय गर्भ धारण के योग्य हो जाता है। इसकी जडें पथरी, गर्भशय का शूल, हृदय की धडकन, हृदयोदर, श्लीपद, वातरक्त इत्यादि रोगो मे दी जाती है। (व० च०)

यूनानी मतानुसार—प्रकृति—दूसरे दर्जे मे गरम और खुश्क। गुण-कर्म-विलयन, अवरोधोद्घाटक, मूत्रार्त्तवजनन, अश्मरी निर्हरण कर्त्ता और बाजीकर है।

उपयोग—विलयन अवरोधोद्घाटक एव प्रवर्तक होने के कारण कतिपय कफज रोगो को दूर करने, यकृत एव वृक्क के अवरोधोद्घाटक, कामला नाशक तथा वस्ति एव वृक्कगत अश्मरी के निकालने के लिए इसका उपयोग करते है। रुद्धार्त्तव तथा कष्ट प्रसूति को दूर करने के लिए भी इसे देते है। वाजीकर होने के कारण इसे नपुंसकता की औषधियो मे डालते हैं। (यू. द्र. वि)

हब्-एल-घर (Laurus Nobilis)

यह कपूरादि कुल(Laurineae) के हब् एल- घर के नाम के अण्डाकार या कुछ कुछ गोल काले और भूरे रङ्ग के लगभग $\frac{1}{3}$ इन्च से $\frac{1}{2}$ इन्च लम्बे फल मिश्र देश से यहां पर विकने के लिए आते है। ये मुसलमान पसारियो के यहां बिकते हैं। ये लम्ब गोल, सुगन्धित और स्वाद मे तीखे होते है।

उत्पत्ति स्थान—

एशिया माइनर और दक्षिण यूरोप।

नाम—

भारतीय बाजार—हब्-एल-घर, हब- एल-घर। यूनानी—भकनी, डफनी। अरबी—हब्बुल गार, गार। अ.—लारेल बे (Laurel bey) स्वीट बे (Sweet bay) ले०—लारस् नोबिलिस् (Laurus Nobilis Linn)।

रासायनिक संगठन—

हब्बुल्गार मे एक पाण्डु पीत उत्पत् तेल होता है। बीजो मे वसा उत्पत् तेल और राल होता है।

उपयुक्त अङ्ग—फल। मात्रा—२से ६ माशे तक।

गुण धर्म और प्रयोग—

यह औषधि सुगन्धित और उत्तेजक होती है। मज्जा ततु और मस्तिष्क को उत्तेजना देने के लिए इसका उपयोग किया जाता है। इसके फलो को शराब मे मिलाकर कफ रोगो मे देते है। इसको देने से ज्वर कम होता है, कफ छूटता है और रोगी को उत्तेजना मिलती है।

प्रकृति—दूसरे या तीसरे दर्जे मे गरम और खुश्क,



हवरलघर
LAURUS NOBILIS LINN

फल की मीग, वृक्ष की छाल और पत्र से अधिक गरम तथा खुश्क, मीग का तेल अखरोट की मीग के तेल से भी अधिक गरम है।

गुण-कर्म तथा उपयोग—यह कफज शिरःशूल नाशक विवेक और बुद्धिवर्द्धक और मृगीहर है। इसे ६ माशे निरन्तर खाते रहने से स्वाप, पक्षवध और अर्दित आराम होता है। इसे गुल रोगन और सिरका या शराव मे पीसकर कान में टपकाने से शिरःशूल, बाधिर्य और कान मे साय-साय होना आराम हो जाते है। इसे मधु मे पीसकर चाटने से श्वास रोग आराम हो जाता है। इसे ९ माशे अकेला पीस कर इसबगोल के लबाव के साथ पीने से पेट की मरोड़ तुरन्त मिट जाती है। यह हस्तिमेह और विन्दु मूत्र में भी लाभकारी है, पथरी को तोड़ता है और अखिल विषो का अगद है। सर्प वृश्चिक और अन्यान्य कीडे- मकोड़ो के विष को दूर करने के लिए इसे शराब के साथ पीना चाहिए। भिड या मधु मक्खी के दश पर इसे पीसकर लेप करना चाहिए। शहद मे इसका लेह बना कर चाटने से कृच्छ्र श्वास और उर फुफ्फुस व्रण दूर होते हैं और वक्ष के अन्य सर्द रोग भी जाते रहते हैं। यदि गरमी से सीने मे यह रोग गये हो तो सिकजबीन के साथ इसे खाने से उर फुफ्फुस की ओर दोप का गिरना रुक जाता है और जीर्ण कास मिट जाता है।

अहितकर—यकृत तथा आमाशय को शिथिल करता और वमन करता है। निवारण—जरिश्क। प्रतिनिधि—हब्बुल महलिब और कड़वे बादाम की गिरी।

हब-एल-घर का तेल—(रोगन हब्बुलगार)—

गुण कर्म तथा उपयोग—यह समस्त अङ्गों से अधिक गरम है। इसका अन्वेषण यूनानी हकीम दीसकूरी दूस ने किया है। दक्षिण यूरोप में अद्यावधि यह वात वाड्यु रो-जक रूप से उपयोग किया जाता है। इसको अगूरी शराव के साथ पीने से या इसकी मालिश से यकृच्छूल आराम हो जाता है। यह सशोधन करता है किंतु मिचली उत्पन्न करता और आमाशय को ढीला करता है। कानूव और उसके भाष्यो मे लिखा है कि यह चिरज सधिशूल में लाभकारी है, वायु को विलीन करता है और इद्रलुप्त विशेष (दाउस्सालव) तथा दद्रु को लाभ पहुचाता है। नया और तीक्ष्ण तेल उत्तम होता है। इसमे उल्लेखनीय वीर्य और सूजन उतारने वाली गरमी है। इससे मस्से और फोडे फुन्सी के चिह्न जाते रहते हैं। यह वात नाड़ियो को मुलायम करता और खुजली को नष्ट करता है। वातग्रस्त और सुप्त (सुन्न) अङ्गो पर इसके मर्दन से उपकार होता है। इसे चर्बी मे मिलाकर कान में टपकाने से बाधिर्य जाता रहता है। इसके मर्दन से सर्दी का दर्द, प्रसेक और मस्तिष्क की सर्दी जाती रहती है और मस्तिष्क गर्म रहता है। इसके नस्य से सर्दी का आधा-सीसी आराम होता है।

अहितकर—आमाशय, वक्ष और उष्ण प्रकृति को। निवारण—आमाशय के लिये इसे कतीरा के साथ उपयोग करना चाहिये।

प्रतिनिधि—जिफ्तत्तर।

हस्तिदंती (Euphorbia Acaulis Roxb)

यह एरण्डकुल(Euphorbiaceae) का काण्डहीन एव क्षुप जाति का पौधा है जिसका कि विशेष भाग जमीन के अन्दर ही रहता है। इसकी मूलिका आकृति मे हाथी के दात के समान लम्बी एव मूली की जड के सदृश होती है। मूल को तोडने पर दूध निकलता है तथा मूल का भीतरी भाग श्वेत वर्ण का होता है। मूलिका के भौमिक भाग से प्रतिवर्ष प्राय कई अवृन्त मासल अभि-प्रासवत् एव अविलट्टाकार पर्ण निकलते है। मूल लम्बाई मे २० से मी से लेकर ५० से मी तक लम्बा होता है। पत्र लम्बाई मे १५ से. मी से ३० से मी तक होते हे। पत्तो के किनारे गोल एव दातुर होते हैं।

पुष्प—पत्तो के झड़ जाने के बाद निकलते हैं तथा खिलने पर ये पुष्प कुछ पीले वर्ण के हो जाते हैं।

फल—फलकोष मे होते है। इन कोषो के अन्दर अण्डाकार चिकने वीज होते है। इन बीजो को दबाने पर इनसे तेल निकलता है।

पुष्पकाल—मार्च, अप्रैल। फलकाल—पुष्पकाल के बाद। चित्रावलोकन कीजिये।

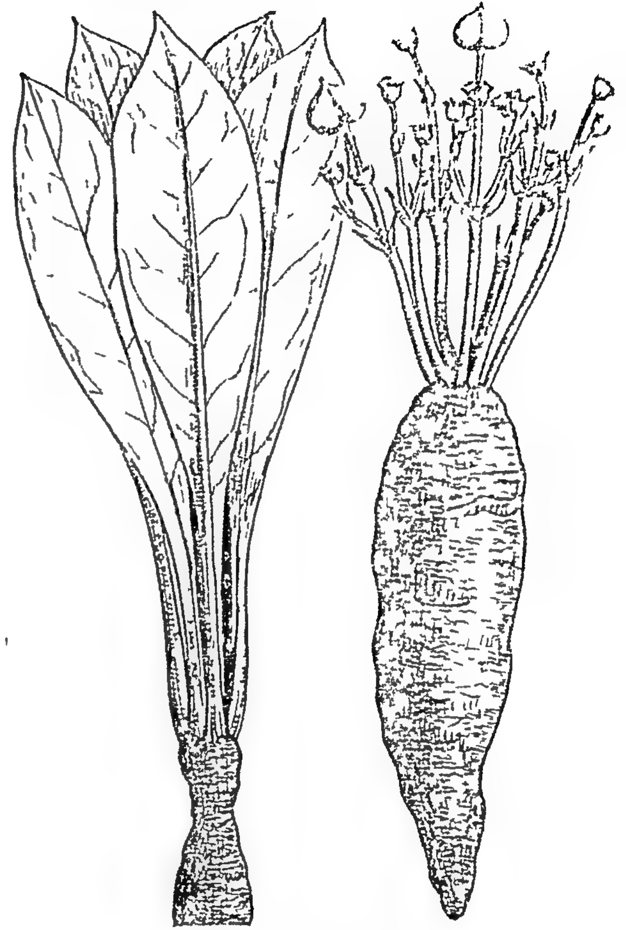
विशेष—चरक सहिता के सूत्र स्थान अध्याय एक मे महर्षि चरक ने औद्भिद द्रव्यो का वर्णन करते हुए १६ मूल विरेचक द्रव्यो का वर्णन किया है। जिनमे कि एक द्रव्य हस्तिदन्ती भी है। परन्तु काल के प्रभाव से यह मूलिका आयुर्वेद चिकित्सा जगत मे नाम, रूप, परिचय के अभाव से अज्ञात है। जिसका कि वानस्पतिक परिचय उक्त शीर्षक के साथ ऊपर दिया गया है।

उत्पत्ति स्थान—

प्राय यह मूलिका शिवालिक वन खण्डो के ऊपरी भागो मे तथा देहरादून वन खण्डो के शाल के जगलो के छायादार शुष्क स्थानो पर पायी जाती है। सहारन पुर वन खण्ड मे रानीपुर रेंज, मोहन्ड, शाकुम्बरी आदि स्थानो पर कुछ रेतीली जमीन पर यह द्रव्य विशेष रूप से देखने को मिलता है।

नाम—

स.—हस्तिदन्ती (अर्थात् मूल हाथी दांत सदृश आकृति वाला) स्थानिक नाम—वनमूली। ले—यूफोर्बिया अकौलिस (Euphorbia acaulis Roxb)



हस्तिदन्ती
EUPHORBIA ACAULIS ROXB

उपयुक्त अङ्ग—मूलकन्द।

लेखक का मत—लेखक का जहा तक विचार है कि नागदन्ती, हस्तिदती और दन्ती ये तीनो भिन्न भिन्न द्रव्य है। केवल टीकाकारो का मतभेद ही है यह काफी सम्भव है कि हस्तिदती —(Euphorbia acaulis Roxb) ही है। इस द्रव्य मे अब कुछ भी सदिग्धता प्रतीत नही होती।

(लेखक—श्री० मायाराम जी उनियाल

सचित्र आयुर्वेद जून ६६ से साभार सकलित)



हस्ति शुण्डी (Heliotropium Indicum)

यह श्लेष्मान्तकादि कुल (Boragineae) का वर्ष जीवी क्षुप होता है। इसके क्षुप की ऊचाई १ से ३ फुट तक होती है। इसका सारा क्षुप एक प्रकार के रुयें से आच्छादित रहता है। इसकी डालियाँ बहुत लगती है जो हाथ की अगुली के समान मोटी होती है। पत्ते एकान्तर तथा थोडा अन्तर लिये हुए हृदयाकृति १ से ४ इच लम्बे, पौन से दो इच चौडे, आमने सामने डठल वाले, लम्बगोल, सफेद, रुएदार, खुरदरे, सफेदी मायल हरे रङ्ग के होते है। डालियो के सिरे पर सफेद फूलो के गुच्छे आते हैं। फूलो की मञ्जरी १ से ८ इच तक लम्बी बहुधा पत्रो के विरुद्ध दशा मे निकल कर हाथी के मू ड के अग्रभाग के सदृश मुड़ती जाया करती है। इस पर फीके जामुनी रग के फूल आते हैं। फूल ⅙ इच व्यास के, खाचेदार, चिकने होते है। फूल के तुरन्त दो भाग हो जाते हैं जिनके प्रत्येक भाग मे दो बीज होते है। जड पृथ्वी मे गहरी समाई हुई बादामी रग की होती हैं। इसके सारे पौधे में धतूरे के समान गन्ध आती है। इसका जायका कुछ कड़वा होता है। इसके फूलो की मजरी बिल्कुल हाथी की सूण्ड के समान होती है। इसी से इसे हस्तिशुण्डी कहते हैं। पानी वाली जमीन मे यह होती है। इसके क्षुप माघ-फाल्गुन से वैसाख-ज्येष्ठ तक हरे भरे सुहावने देखे जाते है और वर्षा का पानी पड़ने पर गिरे हुये बीजो से अकुर निकल कर माघ फाल्गुन तक क्षुप तैयार होते हैं।

उत्पत्ति स्थान—

भारत में सर्वत्र एकान्त और पानी की भराव वाली जमीन मे पैदा होती है।

नाम-

स.–हस्तिनी, हस्तिशुण्डा, हस्ति शुण्डी। पि –हस्तिशुण्डी, हाथी सुण्डा, कडेडा। बं —हातीसुरा, ऊटजीरा। गु –हाथीसुण्डा। म –हस्तिशुण्डी। ते –हस्तिशुण्डे। कर –नलदावरे। बम्बई–भुरुण्डी। ता –तेलमनि। रा.—हाथीशुण्डी। ले –हेलिओट्रोपियम इण्डिकम (Heliotropium Indicum Linn)।

रासायनिक संगठन-

इसमे टेनिन, आर्गेनिक एसिड और कुछ उपक्षार होते है।

उपयुक्त अङ्ग—पचाग। मात्रा ¼ से ½ तोला।

गुण धर्म और प्रभाव-

हस्तिशुण्डी—कटु, उष्ण और सन्निपात ज्वर की नाशक है। (रा० नि०)

यह वनस्पति ग्राही, कडवी, वेदनानाशक, व्रणशोधक और व्रण रोपक होती है। व्रणशोथ, व्रण और जख्मो पर इसके पत्तों को बाधने से लाभ होता है। त्रासदायक विद्रधि और नेत्राभिष्यन्द रोग मे आखो की पलके सूज जाने पर इसका स्वरस लगाया जाता है। व्रण और गले की गठानो पर इसका रस अरण्डी के तेल मे मिलाकर लगाया जाता है। टॉन्सिल की सूजन में इसके काढे से कुल्ले किये जाते हैं और इसका काढ़ा पिलाया जाता है। ज्वर मे इसके पत्ते लाभदायक होते हैं।

इसकी जडें बिच्छू और सर्प के विष पर लगाने के काममें ली जाती है। इसके पत्तो का रस अरण्डी के तेल मे मिलाकर लगाने से बिच्छू के विष की वेदना कम हो जाती हैं। पागल कुत्ते के विप मे भी यह लाभ पहुँचाती है। इसके पत्तो की लुगदी से सिद्ध किया हुआ तेल गलित कुष्ठ मे उपयोगी होता है।

इस वनस्पति के पत्ते ससार के बहुत से भागो में घावपूरक गुण के कारण और टूटी हड्डी को जोडने के गुण के कारण बहुत आदर की निगाह से देखे जाते है। ये पत्ते अर्बुद, विद्रधि और प्रदाह मे लगाने के काम मे लिये जाते है।

इसके अन्दर स्निग्ध गुण विशेष तादाद मे पाया जाता है। कुछ लोगो के मत से इस वनस्पति में मूत्र निस्सारक गुण भी रहता है।

पटना में इस वनस्पति के पत्ते दो माशे से लेकर ६ माशे तक की मात्रा मे ज्वर को दूर करने के लिए उपयोग मे लिए जाते हैं। कम्बोडिया मे इसके पत्तो का काढा ज्वर को दूर करने के लिए और इसके फूल छोटी मात्रा मे



मासिक धर्म को नियमित करते हैं और बड़ी मात्रा में गर्भस्रावक होते हैं। इसके पत्ते और जड़ो का लेप बनाकर दाद और गठिया पर लगाने के काम में लिया जाता है। गले के छालो और घावो को दूर करने के लिए यह एक उत्तम औषधि है। इसके पत्ते सुजाक और अग्नि विसर्प रोग की चिकित्सा में काम लिए जाते हैं।

डायमाक के अनुसार यह बनस्पति चेहरे की फुन्सियो पर लगाने के काम मे ली जाती है। प्रदाहयुक्त चक्षु वेदना में भी यह उपयोगी है। इस औषधि की गले के रोगो में बहुत प्रशसा है। कठमाला के प्रदाह और टॉन्सिल की सूजन मे यह बहुत उपयोगी वस्तु है। इन रोगो में इसके पत्तो और फूलो के काढ़े से कुल्ले कराये जाते हैं और एक घण्टे के अन्तर से इसके पत्तो और फूलो का काढा एक वाइन ग्लास की मात्रा में पिलाया जाता है।

कर्नल चोपरा के मत से यह वनस्पति फोडो और जहरीले कीडो तथा सर्प विष के उपचार मे काम मे ली जाती है। (व. च)

विशेष—पॉर्टोरीका के निवासी इस क्षुप को प्रत्येक प्रकार के व्रणो पर अकसीर मानते है। किन्तु इसके सिवाय इसमे गलक्षत (Sore throat) को ठीक करने का अजीब गुण है। श्वासनली की सूजन में, ग्रसनिका की सूजन मे और तालुमूल ग्रन्थिशोथ की सूजन मे इसके पत्तो के क्वाथ का अनेक बार प्रयोग करके देखा है। पान और फूलो का क्वाथ करके उस जल से कुल्ले कराने से तथा यह क्वाथ प्रति २ घण्टे से १-१ कप प्रमाण मे पिलाने से उपरोक्त कठ के अन्दर की वेदनाए शान्त हो जाती है ऐसा मेरा अनुभव है।

(डा० अमेडो, आ० नि० भा० २ से साभार सकलित)

प्रयोग—

बच्चो के आक्षेपक (कमेड़ा या बायटे) रोग पर— हस्तिशुण्डी के पचाङ्ग को पत्थर के खरल मे कूटकर स्वरस निचोड लेवें तथा स्वरस के सम भाग असली शराब (ब्राडी) मिला बोतल मे भर (बोतल लगभग तीन हिस्सा खाली रहे) मजबूत डाट लगाकर तेज धूप मे रख देवे। रोज १५ दिन तक बोतल को धूप मे रखना होगा। पश्चात् इसे छानकर इसमें १ माशा कस्तूरी मिला पुन. बोतल में भर कर १५ दिन धूप में रख दें। अब इसे छानने की आवश्यकता नही। बच्चे को इसकी मात्रा १ से १० बून्द तक, पकाया हुआ जल १ या २ तोले मिला कर पिलावें। इस प्रकार दिन मे ३ बार पिलाने से रोग नष्ट हो जाता है।

मृगी या अपस्मार— ताजी हस्तिशुण्डी के पत्र स्वरस की विधि के साथ नस्य देने से खूब छींके आकर नासिका से कृमि गिरते हैं तथा मृगी रोग का वेग नष्ट हो जाता है।

पागल कुत्ते के विष पर— कुत्ते के विष से रोगी मरणासन्न हो गया हो, बचने की कोई आशा न हो तो हस्ति शुण्डी पत्र स्वरस और आक (अर्क) का दूध दोनों समभाग मिला लगभग १ पाव से आधा सेर तक पिला देने से वमन द्वारा सब जहर दूर होकर ईश कृपा से रोगी चगा हो जाता है।

वृघ्न (बाघी या बद) रोग पर— प्रारम्भ की दशा में जब बद उठ रही हो, इसके पत्तो को जल से पीस गरम कर लेप करने से वह बैठ जाती है। यदि वह विशेष उठ आई हो तथा बैठने की दशा मे न हो तो इसकी जड की छाल को जल से पीस और गरम कर लेप करने से वह पककर फूट जाती है। फिर उक्त छाल को अन्तर्धूम विधि से भस्म कर तिल तैल में मिला दिन में ३ या ४ बार रुई का फोहा तर कर लगाने से घाव अच्छा हो जाता है। यह तैल नासूर पर भी उत्तम काम करता है।

बिच्छू के दश पर— हस्ति शुण्डी के मूल को कूट-पीसकर लुगदी बना दश स्थान पर रख कर बाध देने से तथा इसके रस को पिलाने से बिच्छू का विष शमन हो जाता है।

लोह भस्म— लोह का महीन चूर्ण कर पत्थर की कूडी मे रखकर उसमे हस्ति शुण्डी का रस ऊपर तक भर कर तेज धूप में रक्खे। लगभग १५ दिन इस प्रकार रखने से लोह भस्म तैयार हो जाती है। रस के शुष्क हो जाने पर पुन भर देना चाहिये। इसे उत्तम जलतर करने के लिये जामुन छाल के रस में खरल कर एक गजपुट दे। यह एक महात्मा का बताया हुआ योग है।

—स्व० कृष्णप्रसाद जी त्रिवेदी, धन्वन्तरि से



हाऊबेर (Guniperus Communis)

यह हरीतक्यादि वर्ग और देवदारु कुल(Coniferae) कोनीफेरी का हाऊबेर का गुल्मवत ४ फीट ऊंचा वृक्ष होता है। तना का रंग लाल, इसके पत्र भांग के पत्तो की तरह झुमकेदार होते हैं। पत्तो का आकार प्रकार ठीक नाग चम्पे के समान होते हैं तथा छः सात अंगुल दीर्घ होते हैं।

फल—लगभग गोल जंगली बेर के बराबर और लाल रंग का होता है और उसके भीतर ३ या अधिक बीज होते हैं। पकने पर इसका छिलका काले रंग का हो जाता है। फल में कुछ कुछ बलसां की तरह सुगन्ध और मधुर तारपीनवत् कुछ तिक्त एवं हलका चरपरा स्वाद होता है। यह फल ही हाऊबेर कहलाते हैं और औषधि के काम मे आते हैं, जिसे अबहल कहते हैं।

जाति—यह दो प्रकार का होता है—(१) छोटा (Guniperus communis) इसके पत्ते सरो के पत्ते की तरह और (२) बड़ा (Guniperus macropoda)। इसके पत्ते झाऊ के पत्तो की तरह होते हैं।

भावप्रकाश ने भी दो भेद बतलाये हैं—(१) मछली की तरह दूषित गन्ध करने वाला। (२) अश्वत्थ फल की तरह और मछली की तरह गन्ध करने वाला होता है।

उत्पत्ति स्थान—

यह पश्चिमोत्तर हिमालय प्रदेश, कुमाऊ, कुर्रम की घाटी नेपाल, भूटान, इरान आदि मे ११ हजार फुट की ऊंचाई पर पाया जाता है।

नाम—

सं०—हपुषा, हवुषा। हिं०—हाऊबेर। पं०—अबहल, हाऊबेर, हाऊबेर। अ०—अबहल, हब्बुल, अरहर। फा०—समरसरो कोही। म०—होश। गु०—अबहर। ब०—हवुषा। द०—अबहल। कुमा०—चिचिया। काश्मीर—बेटार पेथरा। भा०, बा०—हब्बुल अरअर। अं०—जुनिपर (Juniper)। ले०—ज्युनिपेरस कॉम्युनिस (Juniperus communis Linn)।

रासायनिक संगठन—

फल में एक उत्पत् तेल(रोग़न अरअर—Guniper oil) २५% से ३०.२४%, द्राक्षा शर्करा ३ % गाल १०%, एक अस्फटिकीय सत्व (Juniperin), वसा, मोम, प्रोभुजिन ४%, मलेट्स, पिपीलिकाम्ल)(Homic acid) और शुक्ताम्ल (Acetic acid) आदि उपादान होते है।

उपयुक्त अङ्ग—फल। मात्रा—३ माशे से ६ माशे तक।

तैल—दीपन, पाचन तरीके, मात्रा ½ से २ बूंद। मूत्रल हेतु—४ से ६ बूंद। स्प्रिट ज्युनिपर २० से ६० बूंद। क्वाथ की मात्रा—१ से २ तोला।

गुण धर्म और प्रयोग—

सक्षेप में—रस, कटु, तिक्त। गुण—गुरु, रूक्ष, तीक्ष्ण। विपाक—कटु। वीर्य—उष्ण। दोष कर्म—यह कफ वात शामक है।

हाऊबेर—अग्नि प्रदीपक, कड़वा, कोमल, गरम, कषैला, भारी और पित्त, उदर रोग, वायु रोग बवासीर, सग्रहणी, गुल्म तथा शूलरोगनाशक है। दूसरी भी यही गुण करती है केवल रूप भेद है। (भा० प्र०)

हाऊबेर—चरपरा, कड़वा, भारी, गरम, दीपन, कषैला तथा सग्रहणी, शूल, गुल्म, बवासीर, वात, उदर रोग, कफ, आम, मन्दाग्नि, कृमि, पीनस, मलावष्टम्भ और प्रदर रोग का नाश करता है। —सा० नि०

हाऊबेर—प्राय उष्ण, मधुर, तिक्त, मूत्रल और प्लीहा नाशक है। जलोदर, गुल्म प्लीहा, यकृद् वृद्धि मूत्राघात अजीर्णादि मे लाभकारी है। [illegible]

फलों के स्रवण से एक तैल निकलता है, जिसे अंग्रेजी मे Guniper oil (Gleum guniperi) कहते हैं, यह पाश्चात्य चिकित्सा मे जलोदर मूत्राघात वृक्क रोगादि में मूत्र वृद्धि के लिये व्यवहृत होती है। मात्रा - तेल ५ से २० विन्दु।

यूनानी मतानुसार—

प्रकृति—दूसरे दर्जे मे गरम और खुश्क है।

गुण कर्म—उग्र विलयन, रूपशोषण, मेदन, तारल्य जनन, प्रमाथी, दनफा, मग्राही, दीपन, वातानुलोमन,

प्रबलप्रवर्तक और विशेषकर मूत्रार्तव जनन है।

उपयोग—श्वयथु विलयन होने के कारण शोथो मे यह लेप के रूप मे प्रयुक्त होता है। लेखन एव रूक्ष होने के कारण गोश्तखोरा, परिसर्पी व्रणो तथा चिरज दुर्गन्ध-युक्त व्रणो मे यह अवचूर्णन एव तिलो के रूपो मे उपयोग किया जाता है। लेखन होने के कारण यह त्वचा की श्यामता एव मलादि को शुद्ध करता है। श्वयथु विलयन, तारल्य जनन और प्रमाथी होने के कारण यह पेट की गुड़गुडाहट और आमाशय के रोगो मे प्रयुक्त होता है। इन गुणो के साथ इसमे सूक्ष्म कब्ज भी है। अतएव यह सग्रहणी मे लाभदायक है। यह प्रवर्तक भी है, इसलिये जलोदर मे लाभ करता है। तारल्य जनन और प्रमाथी होने के कारण प्रवर्तक है। अतएव वस्ति एव वृक्क रोगो मे लाभदायक है, मूत्रार्तव जननार्थ उपयोग किया जाता है। मूत्र जनन कर्म मे यह इतना शक्तिशाली है कि इसके निरन्तर पुष्कल उपयोग से रक्त मूत्र हो जाता है। गर्भवती को इसका निरन्तर दीर्घकाल तक उपयोग करने से गर्भपात हो जाता है। तारल्य जनन और प्रमाथी होने से इसको तेल मे पकाकर और छानकर गुनगुना कान में टपकाने से ऊंचा सुनने मे लाभ होता है। सक्षोभसहित तीक्ष्ण होने से यह उदरज कृमियो को मार डालता है एव उनका निर्हरण करता है।

मात्रा—३ से ५ माशे।

डाक्टरी मतानुसार—

उत्तेजक और मूत्रल रूप में उत्तर भारत मे इसका उपयोग होता है (गेवल) इसके फल और तेल दोनो में वातघ्न, उत्तेजक, दीपन-पाचन, मूत्रल गुण हैं।

उदरशोथ जैसे रोगो मे मूत्रल औषधि मे नानाप्रकार से हाऊबेर का उपयोग होता है। प्रमेह और प्रदर के कफ युक्त स्राव मे भी इसका उपयोग करने मे आता है। इसका मूल उग्र, स्वेदल, माना जाता है (बेंटली और ट्रीमेन)।

डा० नादकर्णी लिखते है कि—फल और तेल दोनो मूत्रकृच्छ्र, ब्राइटस डीसीज, उदर रोग, कफ के रोग, जीर्ण प्रमेह, प्रदर आदि रोगो मे प्रयोग होता है। मूत्रपिण्ड के ताजे वरम मे (Acute nephritis) तेल का उपयोग नहीं करना चाहिए। फलो के चूर्ण का प्रयोग वाह्योपचार रूप से सन्धि वायु, सन्धि के दर्दो मे किया जाता है। यूरोप के कुछ भागो मे इसके फलो को सेक चूर्ण करके कॉफी के स्थान पर व्यवहार किया जाता है। छाल की राख चर्म रोगो मे काम मे ली जाती है।

(डा० नादकर्णी मेटीरिया मेडिका)

अहितकर—गर्भपातक है। प्रतिनिधि—आर्तव जनन मे सुदाब की पत्ती।

(नि० भा० भाग २ से साभार सकलित)

हातीसुरा—देखिये इसी भाग मे 'हस्तिशुण्डी'।

हाथीचूक (HELIANTHUS TUBEROSUS)

यह भृङ्गराज कुल (Compositae) का एक उद्भिद ककराली, पथराली और आर्द्र भूमि मे होता है। बागी और जगली भेद से हाथीचूक (हर्शफ) २ प्रकार का होता है। बागी (बुस्तानी) की डालियो और पत्तो से किंचित चौडे और बडे होते हैं। उन पर द्रव होता है, जो हाथ पर लगने से चिपकता है। जगली हर्शफ का बडा भेद है, जिसे हर्शफ कबीर कहते हैं। इसके क्षुप बहु वार्षिक होते हैं। पत्ते बागी के पत्तो से बहुत छोटे और बहुत काले रग के होते हैं। काण्ड बागी की अपेक्षया लम्बा होता है और उस पर बहुत से काटे होते है। काड के सिरे पर बडे अनार के बराबर एक पीले रग की चीज होती है। बीज लम्बोतरा और जो से बडा होता है। स्वाद मे यह कुस्वाद होता है। जड में सुर्खी की झलक होती है (और किसी-किसी ने इसे ही हब्बुल जलम माना है।) जो चेपदार होती है। मात्र हर्शफ से यही अभिप्रेत है। इसके स्रवित द्रव को जो इसका गोद है तुराबुल कै कहते हे। इसको फारसी मे कङ्गरजद और कङ्गारी कहते हैं। (कङ्गर—हर्शफ, जदगोद)। यह पीला एव लाल या सफेद और किंचित तिक्त होता है।

उत्पत्ति स्थान—

हेलिआन्थुस टुबेरोसुस की कृषि यूरोप, अमेरिका में की



हाथीचूक
HELIANTHUS TUBEROSUS LINN

जाती है। सीमित मात्रा मे सिनारा स्कोलीमुस की कृषि समस्त भारतवर्ष मे की जाती है।

नाम—

स—हस्तिमिज, वज्राङ्गी। हि, उ—हाथीचूक, हाथीचोक, अर्तचक। अ—अकरब खरीब, हर्शफ। फा—काङ्क्र (ग) र। व—हाथीचोक हाथीचक। अ—आर्टिचोक (Artichoke)। ले—सीनारा स्कोलीमुम (Cynara scolymus Linn), हेलिआथुस टुबेरोसुस (Helianthus tuberosus)।

निर्यास-अरबी—कङ्करजद, तुराबुल कँ। फा—कङ्करजद, कङ्करी, समगे हर्शफ। अ—आर्टिचोक गम (Artichokegum)। ले—Gundeliae tournae fortu Resina

रायनिक संगठन—

पुष्प मुण्डक (Flower heads) में इन्युलिन (Inulin) नामक सत्व पाया जाता है जो मधुमेहियो के लिए बहुत ही मूल्यवान खाद्य पदार्थों में से है।

उपयुक्त अङ्ग—पत्ते, गोद, जड़।

मात्रा—२–३ से ४–६ ग्राम [२-३ माशे से ४-६ माशे तक)।

गुण-धर्म और प्रयोग—

हेलिआंथुस टुबेरोसुस के कन्द कच्चे और उबाल कर खाये जाते है। यह कन्द पोषण में आलु के समान माना जाता है। आ नि.

प्रकृति—दूसरे दर्जे मे गरम और पहले मे खुश्क है।

गुण-कर्म तथा उपयोग—सग्राही, वातानुलोमन, वाजीकर और मूत्रल है। श्वित्र, चातुर्थक शोथ (Dropsy)और आमवात के लिये उपकारक है। वायु को विलीन और आहार का पाचन करता तथा फफ्फुस, अन्त्रस्थ व्रण को मिटाता और वस्ति, वृक्क को गरम करता है।

अपने प्रभाव से यह कक्षा और वक्षणस्थ दुर्गन्धि को नष्ट करता है, यही नही अपितु यह सम्पूर्ण शरीर में सुग- उत्पन्न करता है तथा प्रकुपित द्रवो की दुर्गन्धि का नाश करता है। इसकी जड का काढ़ा पीने से भी उक्त लाभ होता है। शीतल प्रकृति वालो के लिये यह बहुत उपकारक हैं। इसके लेप से सूजन उतरती है और इन्द्रलुप्त विशेष (दाउस्सालब) मे लाभ होता है। इसके पीने से खुजली मिटती है। इसके काढ़े से शिर धोने से सिर की भूसी जाती रहती है और जूएँ मर जाते है। अग्नि से जले हुये अङ्ग के ऊपर इस (बुस्तानी) की जड़ के लेप लगाने से उपकार होता है। यह श्वास कास से भी उपकारक है। बागी हर्शफ को पानी, सिकन्जबीन और शहद के साथ पीने से सरलता से कँ आ जाती है। यद्यपि यह आनाह हर है तथापि मद्य के साथ पीने से मूत्राति प्रवृत्ति के कारण बिल अर्ज कब्ज पैदा करता है।

अहितकर—उष्ण प्रकृति एव मस्तिष्क को तथा आध्मानकारक एवं उत्क्लेशकारक है।

निवारण—तेल, सिरका एव उष्ण औषधियां।



प्रतिनिधि—हलियून या कायफल की जड और मंनफल।

गोद—

गरमपानी और सिकजवीन के साथ पीने से पित्त और कफ का वमन द्वारा निर्हरण करता है। इसका लेप श्वयथु विलयन, सग्राही एव वाजीकर है और प्राय शीतल व्याधियो का शामक है। अहितकर—उरोमस्तिष्क को। निवारण—तेल और ताजा दूध। प्रतिनिधि—जौजुल कै (मैनफल)।

मात्रा—२ से ६ ग्राम (२ से ६ माशा) तक।

लेखक—वैद्य दलजीत सिंह जी
आयुर्वेद वृहस्पति—आयुर्वेद विश्व कोषकार।
चुनार आयु औष चुनार (मिर्जापुर)
(उ. प्र.)

हाथी चोक (Cynara scolymus)

यह भृङ्गराज,कुल (Compositae) की वनस्पति है।

उत्पत्ति स्थान—

इसकी समग्र भारत मे सीमित मात्रा मे कृषि की जाती है।

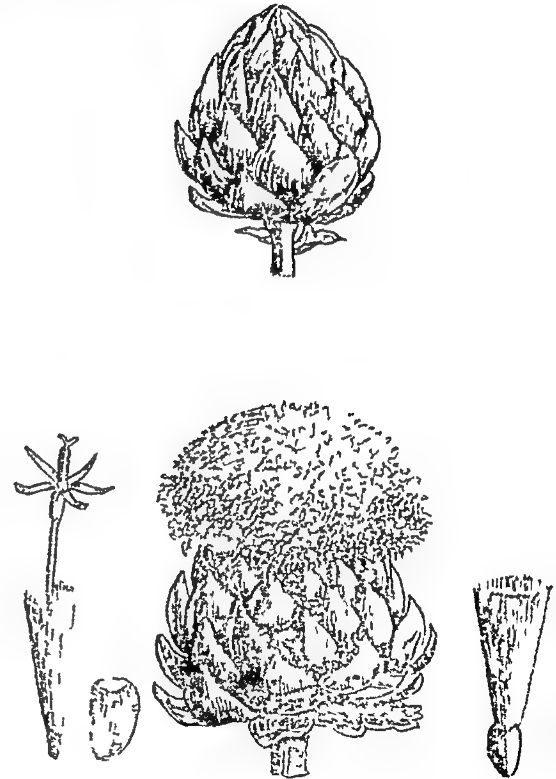
नाम—

हिं०—बं०—हाथी चोक, हाथी चिघाड। ले०—सीनारा स्कालिमुस (Cynara scolymus Linn)।

उपयुक्त अङ्ग—पत्र, फूल।

गुण धर्म और प्रयोग—

तिक्त, मूत्रल है, शोथ और वात व्याधि में उपयोगी है। फूलो की कलियो में इनुलिन (Inulin) नामक तत्व है जो मधु प्रमेह वाले के भोजन मे मूल्यवान माना गया है। (ग्लो इं मे. प्ला. से)



हाथी चोक
CYNARA SCOLYMUS LINN

हार सिंगार (Nyctanthes Arbortristis)

यह पुष्पवर्ग और हार सिंगारादि कुल (Oleaceae) का छोटा, पतन शील पर्णयुक्त वृक्ष ऊचाई २५ से ३० फीट। नयी शाखाये चतुष्कोण। छाल—पोची, फीके धूसर वर्ण की सफेद, श्वेताभ वालयुक्त। काष्ठ रक्तवर्ण। पान—आमने सामने उपपत्र रहित २ से ४ इंच लम्बे, से २½ इंच चौडे, लम्ब गोलाकार, नोंकदार, खुरदरे, दोनो और रुएदार, ऊपरी तहहरी, नीचे सफेद आभा वाला जपा पत्र के समान। पत्र वृन्त इंच ¼ लबा। पुष्पदड ¼ से ½ इंची

४ कोनवाला नारगी रंग विशिष्ट कोमल छोटे ३ विभाग वाले ३।४ एकत्र होते हैं। वहिर्व्यास $\frac{1}{2}$ इंची, ४-५ दांते युक्त। पुष्प $\frac{3}{4}$ इंची व्यास के मनोहर, सुगंधित, पुष्प दल श्वेत वर्ण, विस्तृत, ५-६ दल होते हैं, यह $\frac{1}{2}$ से $\frac{3}{4}$ इंच लम्बा होता है। पुष्प की सुगन्ध बहुत मन मोहक, शाम को खुलने वाले, सुबह गिरने वाले ३ से ५ गुच्छो मे श्वेत, पुष्पनाल केसरिया वर्ण युक्त तुर्रे मे। बीज कोप $\frac{1}{3}$ से $\frac{1}{2}$ इन्ची लम्बा $\frac{1}{6}$ से $\frac{1}{2}$ इंची चौडा, चपटा व पोचा। बीज कोप दो पर्दों से युक्त, फली $\frac{1}{2}$ से १ इंच व्यास की चपटी, लम्बी, रोमश जिसमें २ बीज श्लक्ष्ण छोटे होते है। साल भर पुष्प रहते है। बगाल मे वर्षाकाल मे फूल आते हैं और फल दिसम्बर में आते हैं। इस वृक्ष की सुगन्ध वायु द्वारा दूर तक फैलती है। पान अप्रैल मे गिरते हैं।

उत्पत्ति स्थान-

हिमालय की बाह्य सीमा में. चिनाव से नेपाल तक, आसाम, ब्रह्मदेश, बंगाल, मध्यप्रदेश, राजस्थान, गोदावरी के दक्षिण में। अब यह भारत के अनेक प्रदेशो के बगीचो लगाया जाता हैं।

नाम—

स.—हार श्रृंगार, पारिजात, शेफालिका, शुक्लाङ्गी। हिं—हारसिंगार, पारिजात। बंगाल—शेफालिका, सितिक। गु०—हारशणगार, परबूटी, पारिजातक। म०—पारिजातक। निमाड—शिराली। राज०—हार-सिंगार टामट। प०—पहरवटी। सन्ता—सपरोम। क.-पारिजातक। मला—पारिजातकम। त०—मजाप्पु। ते-पारिजातम्। उर्दू—गुले जाफरी। ओ—सिंगारेद्वारो। अ०—कोरल जेसमाईन, नाइट जेसमाइम् (Coral jasmine Night Jasmine)। ले०—निकटेन्थेस आरबोर-ट्रिसटिस (Nyctanthes arbortristis Linn)।

रासायनिक संगठन--

फूलो मे निक्टैनथिन नामक क्षार तत्व पाया गया है। पत्तो में क्षार, राल, पीपरमिन्ट के समान तेल और एमोरफोस ग्लुकोसाइड प्राप्त हुए हैं।

उपयुक्त अङ्ग—पत्र, पुष्प और त्वक्।

मात्रा—छाल ३ से ६ रत्ती। पान चूर्ण—४ रत्ती से १ माशा तक। स्वरस १ से २ तोला।

गुण-धर्म और प्रयोग-

सक्षेप मे रस कटु, तिक्त। गुण—अनुलोमक, कटु—पौष्टिक, पित्त द्रावक। विपाक-कटु। वीर्य—उष्ण, दोष-शमन—कफ। शारीरिक अङ्गो पर प्रभाव—यकृत और आन्त्र।

राज निघण्टु के मतानुसार—शेफालिका—रस में तेज, कडवी। वीर्य—उष्ण। रूक्ष, वातहर तथा सन्धि स्थानो की पीडा, गुदवात आदि की नाशक है। छाल—कासहर, रस—ज्वर हर, पुष्प प्लीहा वृद्धि हर और बहुमूत्रघ्न है।

हार श्रृंगार के पत्तो का रस—ज्वर नाशक और कडवा है, इसकी छाल पान मे रखकर खाने से खासी दूर होती है। —शा. वि

पत्तों का काढा आमवात, ज्वर और गृध्रसी में विशेष लाभकारी है। पत्र स्वरस मधु मिश्रित जीर्ण और विषम ज्वरो मे उपयोगी है। —कै नि

यूनानी मतानुसार-

पुष्प कडवे और बे स्वादु है तथा आमाशय पौष्टिक, उदर वातहर, ग्राही, प्रदाहहर और केश्य है। कलिका पौष्टिक है। पान—बने रहने वाले जीर्ण ज्वर मे उपयोगी है।

बीज—अर्श और चर्म रोग नाशक है।

बच्चो को गोल कृमि रोग हो, तो पान का रस मामूली मिश्री के साथ देने से बहुत से केसो मे उपयोगी मालूम हुआ है। सेन्टोनीन के प्रतिनिधि के रूप मे इसका प्रयोग किया जा सकता है। —मेजर बी० डी० बोस

आ. नि से साभार सकलित

पत्र ज्वर और वातरोग की महौषधि है। पत्र स्वरस मधु मिलाकर सेवन करने से पुरातन ज्वर दूर होता है एव क्वाथ कमर की वेदना (Sciatica) की एक उत्कृष्ट औषधि है। —दत्त

इसके पत्तो का रस धारक, मृदु बलकारक एव पित्त नाशक औषधि है। —वाट

पान पित्तघ्न और कफघ्न है। पित्त विकारो मे पान उपयोगी है। पान का स्वरस छोटे बच्चो के वास्ते सादा

जुलाव है। —स्व. कन्हैयालाल दे

कोकव की ओर गाढा तथा जमा हुआ कफ निकालने के वास्ते पान और सुपारी के साथ छाल का चूर्ण ५ ग्रेन की मात्रा मे दिया जाता है। —डीमक

मखजन के कर्त्ता लिखते हैं कि ६-७ कोमल पानो को अद्रक और पानी के साथ पीसकर पिलाने से विषम ज्वर छूट जाता है। —डीमक

पान का स्वरस पित्तघ्न, रेचक और कटु पौष्टिक है। —डा० थार्नटन

डा० देसाई के मतानुसार हारसिंगार ज्वरघ्न, कफहर, यकृदुत्तेजक, सारक, शामक और चर्म रोग नाशक है। पान सेण्टोनीन के समान कृमिघ्न, कटु पौष्टिक, पित्तस्रावी और आनुलोमिक है।

प्रयोग—

विषम ज्वर—दिनो तक बने रहने वाले नये विषमज्वर मे ६–७ ताजे पान और अदरक को जल मे पीस, रस निकालकर दिन में ३ बार पिलाते रहने से एक सप्ताह में ज्वर दूर हो जाता है। खांसी, आमवात ज्वर और सन्धियो में पीड़ा हो उनको भी यह शमन करता है।

गृध्रसी—पानो का फाण्ट दिन मे दो–तीन बार एक सप्ताह तक सेवन कराने पर पीड़ा सह गृध्रसी वात दूर हो जाता है।

उदर कृमि—बालको के उदर में कृमि होने पर पानो का रस [illegible] मिलाकर देने से कृमि मरकर निकल जाते हैं।

श्वास—कफ प्रधान श्वास रोगी को नागर बेल के पान के साथ हारसिंगार की छाल २-२ रत्ती का पान दिन मे ३ बार देते रहने से कफ ढीला हो जाता है और व्याकुलता भी कम हो जाती है।

गंज—बीजो को जल मे पीसकर सिर पर लेप करते रहने से कीटाणु नष्ट होते हैं। रूखापन दूर होती है। फिर नये बाल आने लगते हैं।

—गा औ र से साभार सकलित

उदक मेहे—पारिजात के पत्तों का क्वाथ पिलाना। —सु नि ११–८

प्लीहोदरे—पारिजात, नालमखाना और अपामार्ग का क्षार तेल के साथ देवें। —सु चि १४–१२

नेत्राभिष्यन्द में—पारिजात की छाल के कल्क को तिल्ली का तेल, कांजी और सेंधव के साथ तेल सिद्ध करें। यह तेल आंखो मे डालने से नेत्र का दुःखना और शूल मिटता है। —वृन्द

हालिम (हालों) (Lepidium Sativum)

यह हरीतक्यादि वर्ग और राजिकादि कुल (Cruciferae) के चन्द्रशूर या हालिम के छोटे-छोटे, कोमल काण्डीय किंतु स्वावलम्बी एक वर्षायु क्षुप १-२ फुट ऊंचे होते हैं। जड़ के पास की पत्तिया वृन्त युक्त तथा द्विपक्षवत-खण्डित सी होती है। काण्डीय पत्र प्राय विनाल तथा पक्षवत खण्डित या भालाकार होते है। पुष्प छोटे तथा सफेद रङ्ग के लम्बी मन्जरियो में निकलते हैं। पुटपत्र एव दलपत्र सख्या मे ४-४, पुंकेशर ६ होते है, जिनमे २ अपेक्षाकृत छोटे होते है। फल ¼ इन्च लम्बे, रूप रेखा मे लट्वाकार एव चपटे तथा अग्रभाग पर भीतर की ओर दबे हुए होते हैं। इनके किनारे या धार सपक्ष होते हैं। फलो मे प्रत्येक कोष्ठ मे १-१ बीज होता है। हरी पत्तियो का शाक खाया जाता है, तथा बीजो का व्यवहार औषधि मे होता है। उक्त बीज छोटे-छोटे और लाल रङ्ग के होते है इनको पानी में भिगोने से लुआब पैदा होता है। इसकी कृषि रबी मे होती है। तालाबो में या खेतो मे पानी जमा होता है वहा छिडक देने से फाल्गुण-चैत्र मे इसकी फसल तैयार हो जाती है।

भेद—हालिम की एक जाति (Lepidium iberis, Linn) दक्षिण यूरोप से साइबेरिया तक होती है। इसके बीज औषधिपयोगी होकर ईरान से भारत्त मे 'तोदरी' नाम से आयात होता है। इसके गुण-उपयोग के लिये देखें 'तोदरी' भाग ३ पृष्ठ ३८६ पर।

उत्पत्ति स्थान—

समस्त भारतवर्ष में (विशेषत: बम्बई प्रदेश मे) हालिम की खेती की जाती है। बीजों का आयात फारस

से भी होता है। हालों के बीज समस्त भारत वर्ष में पसारियों के यहां मिलते है।

नाम–

सं०—चन्द्रसूरी हिं०—चनुर, चमनुर, हालिम, हालो। प०—हालिया, हालो। मारवाड़ी या राज०—असालियो। गु०—असेलियो। सिंध—आहियो, जानियो। म०—अहालीव। व०हालिम। अ०—हब्बुर्रशाद, बज्रुल जिर जिर। फा०—तुख्म इस्पन्दान। अं०—कामन क्रेस (Common cress) वाटर या गार्डेन क्रेस (Water or Garden cress]। लै०—लेपीडियम साटीवुम (Lepidium sativum Linn)।

रासायनिक संगठन–

बीजों में एक उत्पत सुगन्धित तथा स्थिर तैल पाया जाता है। पचाङ्ग मे आयोडिन, लोह, फास्फेटस, पोटाश एवं अन्य लवण, एक तिक्त सत्व पर्याप्त एव गन्धक आदि होते हैं।

उपयुक्त अङ्ग—बीज।

मात्रा—१ से ३ ग्राम या १ से ३माशा। सारक रूप से ३ से ४ ग्राम। रसायन और वाजीकरणार्थ १ ग्राम या १ माशा।

गुण धर्म व प्रयोग–

संक्षेप मे–रस-कटु, तिक्त। गुण-लघु, स्निग्ध, पिच्छिल। विपाक-कटु। वीर्य-उष्ण। दोषशमन-वातकफ।

हालो—हिचकी, वात, कफ, अतिसार और वात रोग का नाश करता है तथा बल और पुष्टि वर्द्धक है। (भा० प्र०)

हालो–वात, शूल और गुल्म नाशक है, स्तनो मे दूध बढ़ाने वाला, बलकारक और वाजीकरण है, इसको पानी मे पीसकर पीने से तथा इसका लेप करने से रुधिर विकार और शूल नष्ट होता है। (शो नि)

हालो–गरम, कडुवा, त्वचा के दोषो को नाश करता तथा वात और गुल्म नाशक है। (नि र)

दुग्ध युक्त हालो—अभिघात रोग, त्वचा के रोग, नेत्र रोग और रुधिर विकारो को दूर करता है। (वै नि)

हालो—दीपन, वातानुलोमन, शूल प्रशमन, ग्राही, उदर कृमि नाशन, कफनि.सारक, मूत्रार्तव प्रजनन, बल्य एवं वृष्य है। इसका लेपन वेदना स्थापन और त्वग्दोष हर होता है। (व० दर्शिका)

यूनानी मतानुसार–

प्रकृति—तीसरे दर्जे मे गरम और खुश्क। गुण-कर्म-श्लेष्म निस्सारक, क्षुधाजनक, मूत्रार्तव जनन, उदरकृमि नाशन, गर्भ निस्सारक, लेखन, शोणितोत्क्लेशक, श्वयथु विलयन और विशेषकर वाजीकर है।

उपयोग—श्लेष्म निस्सारक होने के कारण हालो को श्वास, कास, अन्त्र एव आमाशय के रोगो और कामावसाद मे देते है। किलास, दाद और छीप आदि को नष्ट करने तथा कतिपय सूजनो को उतारने के लिये इसका लेप लगाते हैं। ये पुष्टिकर माने जाते है। प्रवाहिका, ग्रहणी और चर्म रोगो मे भी इनका व्यवहार होता है।

भारतीय वनौषधि बंगला के लेखक लिखते हैं कि इसके बीज काली खांसी में महौषधि व विरेचक हैं।

हालिम का उपयोग भारत मे काफी समय से होता आया है। कमर दर्द के लिए, कमजोरी के वास्ते, धातु पुष्टि हेतु अपने बन्धु इसका उपयोग लम्बे समय से करते आ रहे हैं। हालिम (असालिया) के बीजो की खीर कमर अकड़ गयी हो, सधिये दुखती हो उस पर पिलाई जाती है। बहुत से पौष्टिक पाकों मे असालिया डाला जाता है। मैदालकड़ी, आवा हल्दी के साथ हालिम के बीजो को पीसकर कमर आदि पर लेप किया जाता है। यह पेशाब साफ लाता है।

प्रयोग–

आन्त्र प्रदाह पर-बीजो को कुचल नीबू रस या कांजी में मिला कपडे पर लेप कर लगा देने से प्रादाहिका और आमवातज पीडा का दमन होता है।

आमातिसार—चन्द्रशूर का लुआब बनाकर आमातिसार और पेचिश मे देने से अच्छा लाभ होता है।

स्तन्यवृद्धि के लिए–चन्द्रशूर की खीर का सेवन कराने से स्त्रियो के दूध की वृद्धि होती है। कमर मे बल आजाता है। कटिशूल और गृध्रसी दूर होते हैं। वात पीड़ित पुरुषो के लिए भी यह हितकर है।



धातुपुष्टि के लिए—शीनकाल मे चन्द्रशूर मोदक का सेवन करावें। जिनको मलावरोध रहता हो उनका मलावरोध भी दूर होता है। वात प्रधान रोग दूर होते हैं और सवल वनता है।

मलावरोध—चन्द्रशूर या हालिम हिम सुवह और रात्रि को देते रहे। एकाध वर्ष तक पिलाते रहे।

कटिवात और गृध्रसी—कमर अथवा चूतडो में वायु से वेदना होती हो तो रोज सुवह चन्द्रशूर यवागू का सेवन कराया जाता है। जीर्ण आमवात मे भी यह हितकर है। आमवात के रोगी को गुड—शक्कर अति कम खिलाना चाहिये।

नेत्र व्यथा—नेत्र पकने और शोथ आने पर चन्द्र सूर को दूध में भिगो पुल्टिस नेत्र पर वांधी जाती है। इससे शोथ दूर होता है और वेदना शान्त होती हैं।

चोट लगने पर—चन्द्रशूर, हल्दी, सज्जीखार और मैदा लकडी को जल के साथ पीस निवाया लेप करने से रक्त विखर जाता है, शोथ दूर होता है और वेदना शमन हो जाती हैं। लेप लगाने पर वह स्थान जकडा गया हो ऐसा भास होता है, उससे भय नही करना चाहिये।

कफ प्रमेह (मूत्र का गदलापन)—चन्द्रशूर के फाण्ट का सेवन कराने पर मूत्र शुद्धि होती है, दस्त साफ आता है, पचन क्रिया सुधरती है और प्रमेह की निवृत्ति होती है।

हिक्का—चन्द्रशूर १ तोले को ४० तोले उवलते जल मे मिलावे। फिर १० मिनट उवाले। वाद मे कुछ गुड मिलाकर निवाया पिला देने मे हिक्का शमन हो जाती है। श्वसन सस्थान को शीत लगने से महा प्राचीरापेशी जो उरोगुहा और उदरगुहा के वीच पडी है, उसकी विकृति होना या अपचन होने पर आमाशय प्रदाह होकर हिक्का चलती हो, तो दूर हो जाती हैं।

दाहक विष—कांच या अन्य जहरी पदार्थ से भीतर होने वाले दाह और रक्त स्राव को दूर करने के लिए चन्द्रशूर हिम पूरी मात्रा मे पिला देने से लाभ हो जाता है।

यह कफ, अन्न नलिका, आमाशय और अन्त्र की श्लैष्मिक कला का रक्षण करता है। विष और काच के परमाणु चन्द्रशूर मे आच्छादित होकर मल के साथ निकल जाते हैं। दाह शान्त होता है और पेशाब साफ आता है।

विशिष्ट योग—

चन्द्रशूर हिम—चन्द्रशूर के वीजो को ८ गुने पानी मे भिगो देवें। २-३ घण्टे मे अच्छी तरह भीग जाने पर मसलकर छान लेवें। मात्रा—२½ से ५ तोले।

यह मलावरोध को दूर करता है तथा पौष्टिक और आतहर है। विष प्रकोप मे पीस के उतनी मात्रा मे शक्कर मिलाकर पिला देनी चाहिए।

चन्द्रशूर क्षीर—पहले दूध गरम करें। दूध उवलने पर ४ से ६ माशे चन्द्रशूर मिलाकर उवाले। चन्द्रशूर गल जाने पर शक्कर मिला लेवें। शीतल होने पर सेवन करें। यह प्रसूता स्त्री को दो मास वाद देने से खूव दूध वढाता है एव कमर की वेदना और निर्वलता को दूर करती है। पुरुषों के लिए भी हितावह है। यह क्षीर, कटिशूल और गृध्रसी को दूर कर हैं।

चन्द्रशूरमोदक—चन्द्रशूर २० तोला, सूजी ८० तोला, उड़द का आटा २० तोला, घृत ८० तोला और शक्कर १२० तोला लेवें।

पहले उडद के आटे को, २ तोले दूध का मोण देवें। फिर चन्द्रशूर और उड़द के आटे को पृथक पृथक घृत मे भूनें। पश्चात् शक्कर की चाशनी कर सव मिला देवें। इसमे विहदाना, चिरौंजी, छोटी इलायची, जायफल, जावित्री, और पीपरामूल इच्छानुसार मिला कर लड्डू बाध लेवें या थाल में जमाकर चक्की वना लेवें। यह पाक शीतकाल मे सेवन करने योग्य पौष्टिक है।

चन्द्रशूर यवागू—गुड या शकर को जल मिलाकर गरम करें। उसमे हालों डालकर यवागू वना लेवे। चन्द्रशूर से जल १६ गुना लेवें। इस यवागू के सेवन से गृध्रसी, कटिवात, सधिवात, आमवातादि विकार दूर होते हैं।

चन्द्रशूर फांट—चन्द्रशूर १ तोला और काली अनन्त मूल ६ माशे को मिला जोकुट करें। २४ तोले उवलते हुए जल मे मिला २० मिनट तक ढक्कन ढका रहने दे। आवश्यक शक्कर मिलावें। फिर छानकर पिला देवें।

(गा औ. र से साभार संक)

अहितकर—मूत्रपिडो को। निवारण—शर्करा और ककडी का मग्ज। प्रतिनिधि-राई।

हाशा (Thymus serpyllum)

यह तुलसी कुल (Labiatae) का लगभग एक बित्ता ऊंचा, पहाडी पुदीने की जाति का एक छोटा सुवासिक और कोमल क्षुप है। शाखायें पुष्कल बारीक होती हैं और उन पर छोटे छोटे अवृत और लंब गोल पत्र लगते है जिन पर तेल से भरी हुई ग्रंथियां और रुई के समान बारीक रोआं होता है। फूल अनेक दल बद्ध, छोटा सा, गोल, ललाई व बनफशई लिए (किरमजी) और बीज राई से छोटे होते है।

उत्पत्ति स्थान—

काश्मीर से कुमाऊं तक ५००० से १३००० फीट की ऊंचाई पर तथा फारस एवं यूरोप मे इसके क्षुप होते है।

नाम—

हि, भा बा—हाशा जंगली पुदीना। अ—हाशा, अलं मामून, सातरुल हमीर, सनोबरुल हिमार, नम्मास। फा—पूदन कोही। प माशो बम्बई—इयान। अं वाइल्ड थाइम (Wild thyme। ले.—थाइमस सर्पिलम (Thymus serpyllum Linn)।

रासायनिक सङ्गठन

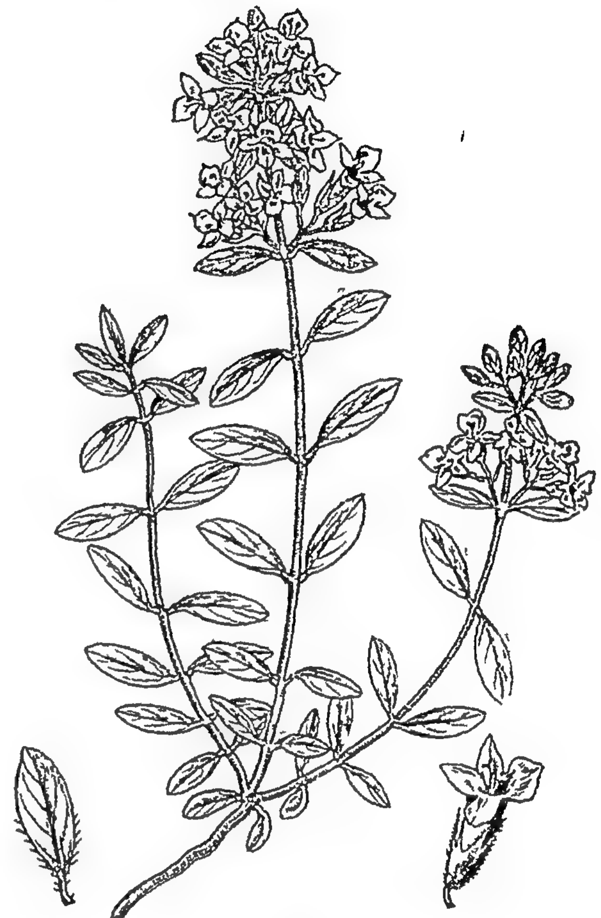
इसमें एक मनोहर सुगंधित उत्पत तेल, कषाय द्रव्य निर्यास होता है। इसके उत्पल तेल से थोडा थाइमोल प्राप्त होता है, किन्तु यूरोप मे बहुधा यह थाइम्स वलगेरिस से प्राप्त किया जाता है, जिसमे यह विपुल होता है। एशिया और भारतवर्ष में यह अजवाइन और अजमोदे से प्राप्त किया जाता है। इसलिए थाइमोल को हिन्दुस्तान मे अजवायन का फूल कहते हैं।

उपयुक्त अङ्ग—पचाङ्ग। मात्रा—५ माशे से ७ माशे तक।

गुण धर्म और प्रयोग—

प्रकृति—दूसरे दर्जे मे उष्ण और तीसरे में रूक्ष। गुण-कर्म-त्वचा कोथ प्रतिबन्धक होने से हाशा प्रायश त्वचा के रोगो मे कोथ प्रतिबन्धक रूप में प्रयुक्त होता हैं।

इसके अतिरिक्त यह स्वेदन कर्म करता, जमे हुए रक्त को द्रवीभूत करता और सूजन उतारता है। यह मूत्र तथा आर्तव का प्रवर्तन करता है। अधिक सेवन करने से यह



हाशा
THYMUS SERPYLLUM LINN.

गर्भ तथा अमराका निर्हरण करता है। श्वासोच्छ्वास सस्थान पर भी इसका उत्तेजक प्रभाव होता है तथा यह श्लेष्म निर्हरण कर्म करता है। समस्त आहारावयवो मे यह उत्तेजना पैदा करता है, वायु का उत्सर्ग कर देता है, अन्त्र मे उत्तेजना पैदा करके विरेक लाता है तथा उदरज कृमि विशेष कर अकुश मुख कृमि को मार डालता है। इसका उक्त कर्म अत्यन्त तीव्र होता है।

उपयोग—नमक और सिरके के साथ पीने से हाशा विरेक लाता है और उदरज कृमि को नष्ट करके उत्सर्गित करता है। शहद मे मिलाकर चाटने या गरम पानी के साथ सेवन करने से पक्षवध, अर्दित, विस्मृति, अपतानक और अपस्मार में लाभ करता है। श्वास और कास



मे कफ को उत्सर्गित करके लाभ पहुचाता है। यह शूल तथा उदरानाह को नष्ट करता एव यकृदामाशय के दौर्बल्य को दूर करता तथा पाचन शक्ति की सहायता करता है। मूत्रार्तव जनन और अपरा निर्हरण के लिये इसका क्वाथ मधु मिला कर पिलाते हैं। सूजन उतारने, जमे हुए रक्त को पिघलाने तथा चर्मकील को नष्ट करने के लिये उसे सिरके में पीसकर लगाते हैं। कोथ प्रतिबन्धक होने के कारण दद्रु, गज, खालित्य, सम्बल, पामा जैसे रोगों मे इसको तिलो के तेल मे पकाकर लगाने से उपकार होता है। इसको पास रखने से इसकी गन्ध से मच्छर भाग जाते हैं। यह विशोधक, विरेचन, कृमि नाशन, कोष्ठांगो को बलप्रद और रोगो मे गुण दायक है।

अहितकर—फुफ्फुसो को। निवारण—नाना और मीठे वशलोचन। प्रतिनिधि—अफ्तीमून और मातर।

(यू० द्र० वि० से साभार सकलित)

हिंगोट (Balanites Roxburghii)

यह वटादि वर्ग और महा वृक्षादि कुल (Simarubaceae) का मध्यम कद का वृक्ष होता है। जो जागल काटेदार, छोटी-बडी अनेक शाखा युक्त, सर्वदा हरा, १० से ३० फीट ऊचा वृक्ष। बहुधा प्रशाखा के अन्त भाग मे लम्बा, तीक्ष्ण काटा। मुख्य वृन्त पर प्राय सामने सामने दो पर्ण दल बब्बूलवत क्षुद्र या विविध आकार के। पुष्प हरे सफेद, छोटे सुगन्धित। फल—अण्डाकार लम्बगोल, चिकने, तेजस्वी, अतिकठोर। लम्बाई लगभग २-२½ इच। फल कच्चा होने पर हरा और पकने पर पीला। पुष्पकाल—ग्रीष्म। फलपाक—शरद ऋतु मे।

उत्पत्ति स्थान–

अफ्रीका, अरब स्थान और भारत के उष्ण और उप-उष्ण सर्व प्रदेश।

नाम—

स —इगुदी, तापसद्रुम, अङ्गार वृक्ष, तिक्तक। हि—हिंगोट,गोदी, इगुदी। म —हिंगणवेट, हिंगणो। ब—इगोट, हिंगन, जीयासुता। राज —हिंगोरिया, हिंगोरा। कच्छी—अङ्गारिया। गु —इगोरियो। ता —नचुदन, नानफुनदा। ते —गार, इगुदी। ओ —इगुदी हाला। मला —नंचुट। कना —इगलरे, इगलुके। अरबी—हिलेलजे। अ—डेलिल (Delil)। ले—बेलेनाइटिस राक्स बुर्घिआई (Balanites Roxburghii Planch)

रासायनिक संगठन–

डाक्टर वामन देशाई के मतानुसार फल गर्भ मे १ ३% साबुन, १% अम्ल द्रव्य,शक्कर और अधिक पिच्छिल द्रव्य, (सेपोनीन) होते हैं। छाल के भीतर साबुन जैसा झाग उत्पन्न करने वाला पदार्थ है। इसके फलो के मध्यार्क से तैल का दुग्धी करण होता है। हिंगोट की छाल और फल के गूदे का गुण सेनेगा के समान माना गया है। बीजों को भून या उबालकर तैल निकाला जाता है। उस तैल को Betu oil कहते हैं। इसका स्वाद कुछ कडवा मीठा होता है। इसका उपयोग साबुन बनाने और खाने मे भी होता है।

हिंगोट रस मे कडुवा, अनुरस, चरपरा, विपाक चरपरा, उष्णवीर्य, मादक गन्ध युक्त। (बास अधिक बार लेने पर सिर मे भारीपन लाने वाला)। एव कृमि, वातरोग, कफ-प्रकोप, व्रण विकार, कुष्ठ, विष, श्वित्र, शूल, भूत बाधा और ग्रह बाधा आदि को दूर करता है। फूल—मधुर, स्निग्ध, गरम, कडवे, वात और कफ नाश करते हैं।

(शा० नि०)

फलमज्जा—रेचक, तिक्त और कृमि नाशक है।

(कै० नि०)

हिंगोटा फल मज्जा—कफ, रक्त विकार, आम, गांठ, फोडे, कृमिवात, विष, शूल, कुष्ठ मिटाती है।

(वैद्य रुगनाथ जी)

डाक्टर देसाई के मतानुसार—हिंगोट—स्रस्त्रन, कृमिघ्न, कफहर और कुष्ठ नाशक है। जीर्ण कफ रोग में फल के गूदे से अच्छा लाभ पहुचता है। इसे बादाम तैल और शक्कर के जल के साथ खरल कर दुग्धीकरण करके देना हितावह है। इसके सेवन से कफ पतला होकर शीघ्र निकलने लगता है, मल-मूत्र की शुद्धि होती है। बीजो का

तैल घाव ओर अग्निदग्ध व्रण पर लगाया जाता है ।

उपयुक्त अङ्ग—फलगर्भ और मूल त्वक् ।

मात्रा—फल गर्भ कफघ्न रूप से १ से ५ रत्ती, सारक रूप मे १० से ३० रत्ती ।

गुण धर्म और प्रयोग—

हिंगोट का उपयोग प्राचीनकाल से आयुर्वेद मे होता आ रहा है। चरक सहिता और सुश्रुत सहिता दोनो मे इसका उल्लेख मिलता है ।

कपडा धोने के लिए हिगोट के फलो को साबुन के समान लगाया जाता है। किन्तु साबुन में कास्टिक रहने से कपडे की आयु कम हो जाती है ऐसा इससे नही होता।

फलगर्भ का जल मे लेप मुख की कान्ति बढाता है। (शा नि)

प्रयोग

उदरशूल—फल गर्भ ५ से १० रत्ती सेवन करे या मूल को जल मे घिसकर पीवे ।

अपचन—हिंगोट की छाल का चूर्ण दही मे देवे ।

जीर्ण कफ कास—हिंगोट फल गर्भ २-२ रत्ती दिन मे २ या ३ बार शहद के साथ देवे या देसाई के मतानुसार दुग्धी करण (इमलसन) बनाकर सेवन करावे ।

श्वास विष—प्रात काल पहले गुड खिलावे । फिर हिंगोट की छाल का चूर्ण ३-४ माशे मठ्ठे मे मिलाकर पिला देवे। इस तरह १ सप्ताह तक सेवन कराने से विष वमन और विरेचन होकर निकल जाता है ।

कर्ण मूल शोथ—हिंगोट, हल्दी, इन्द्रायन, सेंधानमक, देवदारु और आक के दूध को मिलाकर बार बार लेप करते रहने से कर्णमूल शोथ का शमन हो जाता है ।

तारुण्य पिटिका—हिंगोट के फल गर्भ को जल मे घिसकर मुह पर लेप करते रहने से सब फुन्सिया दूर हो जाती है ।

स्तन शोथ—स्त्रियो के स्तन पर सूजन आने पर हिंगोट के मूल को जल में घिस निवाया कर लेह करें। फिर धतूरे के पान पर तैल किंचित गरम कर ऊपर बांधे। इस पर थोडा थोडा सेक करे। इस तरह ३ दिन करने पर सूजन दूर हो जाती है ।

अश्रुश्राव—आंख आने और जल स्राव होने पर हिंगोट के फल को जल मे घिसकर प्रात साय अजन करने से दो-तीन दिन मे आख स्वच्छ और निरोग हो जाती है ।

नारू—हिंगोट के मूल की छाल [या फलगर्भ] और ४-६ रत्ती हीग मिला जल मे पुल्टिस बनाकर बाध दे । चौथे दिन पट्टी खोले। इस प्रयोग से नारू गल जाता है ।

अग्नि दग्ध व्रण—अग्नि से जल जाने (झुलस जाने) पर हिंगोट का तैल लगा लेने पर तुरन्त लाभ होजाता है ।

पशुओ का अफरा—हिंगोट के फल गर्भ का क्वाथ करके पशु को पिला देने से उदर शुद्धि हो जाती है । (गा. औ र. से साभार स)

काली खासी पर—हिंगोट के फल की मज्जा की गोली १ से २ रत्ती की मात्रा मे दिन मे ३-४ बार देने से लाभ होता है । (बनौ गुणादर्श)

कुष्ठ में—हिंगोट मज्जा का तेल हितकर है । (च चि अ ७।१।६)

चूहे के विष में—काला सिरस (पचाग लेवे) और हिंगोट का गर्भ दोनो सम भाग लेकर मधु के साथ चाटे । (सु क अ ७।१२)

रक्तपित्त—हिंगोट मज्जा—मुलैठी चूर्ण के साथ सेवन करे । (सु उ ४५।२६)

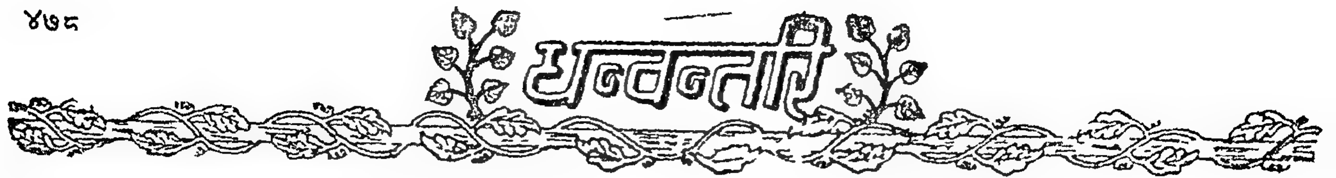
मुख व्यङ्ग पर—हिंगोट के फल की छाल के नीचे का का लाल गूदा ठण्डे जल मे पीसकर २१ दिन तक मुख पर लेप करने से व्यङ्ग मिटता है। (काले चाठे या दाग मुह पर हो जाते हैं उनको व्यङ्ग कहते है। (राजमार्तण्ड)

गोल कृमि पर—हिंगोट फल मज्जा तेल गोल कृमि (राउन्ड वर्म्स) के लिये बहुत उपयोगी माना गया है ।

मात्रा—५से १० बून्द, कैपस्यूल मे भरकर देवे। जामनगर के अनुसन्धान केन्द्र में इसका परीक्षण किया गया है । (आ नि. से साभार)

हिरनपदी (CONVOLVULUS ARVENSIS)

यह त्रिवृत्तादि कुल (Convolvulaceae) की एक लता है। कोन्वाल्वुलस लिपटने वाली । आर्वेन्सिस—खेतों मे नैसर्गिक उगने वाली । भूमिगत काण्ड फैलने वाला । काण्ड सामान्यत १ से १० फुट लम्बा, जमीन पर फैलने



वाला, उलझा हुआ या विशेषत लिपट कर चढ़ने वाला। न्यून।विक कोण युक्त चिकना या रुयेदार। तोडने पर दूध निकलता है। मूल सूतली से पेन्सिल जैसा मोटा। शाखाये सूतली जैसी पतली, तेजस्वी, वहुधा खडी धारी युक्त एव ऐंठी हुई (Twisted) पात एकातर, अखण्ड १ से ३ इन्च लम्ब लगभग चिकने, चौडाई मे विभिन्न प्रकार के अण्डाकार या लम्ब गोल। लगभग चिकने नोक रहित ऊपर की ओर किंचित तीक्ष्ण नोकदार (Apiculate) तीन सिरे युक्त आधार स्थान में कटा हुआ सा। निम्न पात प्राय खण्ड युक्त। पत्तो का आकार हिरन के पैर (खुर) जैसा होता है। इसलिए इसे हिरनपदी सज्ञा दी हैं। पत्र वृन्त छोटा, पुष्पदण्ड १ से २ इन्च लम्बा, पत्र कोणीय, एकाकी, कोमल, छोटे, रेखाकार २ पुष्पपत्र सह (जहां से पुष्प वृन्त निकलता है) पुष्प वृन्त एकाकी या २-३। पुष्प बाह्य कोष के पत्र चौडे अण्डाकार असमान। पुष्पान्तरकोष लगभग पौन इन्च लम्बा, चौडा, चोंगाकार, गुलाबी या सफेद या हलका बैंजनी। पु केसर ५ असमान। स्त्रीकेसर १, डोडी छोटी, गोलाकार चिकनी बीज गहरा रक्ताभ पिंगल, चिकना या रुएदार लगभग ३ कोण युक्त। स्वाद कडवा। पुष्प काल—जुलाई, नवम्बर।

उत्पत्ति स्थान—

समार के सब प्रदेशो में १०००० फीट की ऊंचाई पर हिमालय में मिलती है।

नाम—

स—हरिणपादी। हिं—हिरन पदी। ब.—गोण्डाल। राज—हिरनखुरी। सौराष्ट्र—खेतराऊफुदरडी। बोम्बे—हिरण पग। म—हिरण वेल। कच्छी—नेरीवल, नेरी। गु—हिरण वेल। ता—नाराजी। अ—डीयर्स फुट, विन्डविड (Deer's foot Bind weed) लें०—कोन्वोलव्यु लस आरवेंसिस (Convolvulus arvensis Linn)।

रासायनिक संगठन—

मूल में विरेचन द्रव्य अवस्थित रहता है। काण्ड के सुरा प्रधान अर्क के भीतर १½ से ४ प्रतिशत रालमय द्रव्य मिलता है। वह उग्रता दर्शक और प्रदाहक होता है। इसका विरेचक प्रभाव जुलाव के समान है। अम्ल द्रव्य १४ प्र. श तक और शकरा प्रधान द्रव्य १९६—१९७ ३ तक मिलता है। सूखे भूमिगत काण्ड (Rhizome) से ४.९ प्र श. राल मिलता है। बीजो में स्थाई ४ ७ प्र श मिलता है। उपयुक्त अङ्ग—समग्रलता।

मात्रा—६ माशे से १ तोला।

गुण धर्म तथा प्रयोग—

मूल और पचाङ्ग—विरेचक। वीर्य—उष्ण। पान—सारक और व्रण शोधक। इसकी जड विरेचक होती है। इसके पत्तो की तरकारी बनायी जाती है और ये पौष्टिक माने जाते हैं। इसके पत्तो को पीस कर फोडे-फुन्सियो पर बाधते हैं। पजाब और सिन्ध मे विरेचन के लिए अग्रेजी दवा जेलप के बदले मे इसकी जड का उपयोग किया जाता है। (व च)

यूनानी मतानुसार-

प्रकृति—गरम तर। गुण कर्म—यह लता खून साफ करने वाली और चर्म रोगो के वास्ते लाभकारी है। मेदा और आतो को बलदायक, संग्रहणी और खूनी दस्तो को मिटाती है। गुर्दा, मसाना, पेशाब के रोग और शुक्र व्याधियो के लिए लाभकारी है। कमजोरी, प्रमेह, गुर्दे की शिथिलता और मधु मेह मे इसको घोट कर पीना लाभकारी है इससे आँखों के रोग मिटते हैं। हिरणपदी अकेली या दूसरी दवाइयो के साथ भी प्रयोग की जाती है।

प्रयोग—

धातु क्षय पर—हिरन पदी का चूर्ण ३ माशा, एक पाव दूध और उसमे २ तोला शक्कर मिलाये हुए के साथ सुबह, शाम ७ योम लेवें।

प्रमेह, धातु विकार पर—हिरणपदी एक तोला को दूध मे पीसकर छान के मिश्री मिलाकर १४ दिन पिलाने से उक्त विकार मिटते हैं। (बनौषधि गुणादर्श भा ६)

चूर्ण हिरनपदी—पत्तो को बारीक पीस मिश्री मिलाकर खाने से सब प्रकार के रक्तज रोग आराम होते है और अच्छा खून पैदा होता है। हरे धनिये के साथ सेवन करने से खूनी दस्तो को मिटाती है। मात्रा—१४ माशा, दही मे। सग्रहणी मे भी यह योग लाभकारी है।

रस हिरनपदी—हिरनपदी ३¾ माशा, कालीमिर्च ७ के साथ ठण्डाई बनाकर पीने से शक्ति देती है और वीर्य को ज्यादा पैदा करती है तथा प्रमेह और मधुमेह मे लाभकारी है।

सत्त हिरनपदी—हिरनपदी का रस २ सेर, कालीमिर्च



एक छटाक, मिट्टी की हाडी मे नरम आंच पर पकावें, जिससे खुश्क हो जावे। बाद मे पीस छान कर बोतल में सुरक्षित रखे।

गुण—रक्तज रोग, फिरग, कुष्ठ, पीलिया, प्रमेह और आखो की रोशनी के लिए यह सत एक माशा खिलावें।

वग भस्म—शुद्ध बङ्ग १ तोला को पिघलाकर उसमें एक तोला शुद्ध पारा मिलावे और खरल मे पीस लें, फिर एक पाव हिरनपदी के सूखे पत्तो के चूर्ण मे किसी टाट के टुकडे में आधा चूर्ण बिछावें और उस पर कलई और पारे की मिली हुई चुटकी अलग अलग रखते जावें। तथा बचा हुआ चूर्ण ऊपर से ढक देवें और फिर टाट का टुकड़ा ऊपर से लपेटें एव गोला सा करलें। ५ सेर कण्डो के बीच में रखकर आंच देवें तो बङ्ग की सफेद भस्म बन जायगी।

गुण—यह भस्म प्रमेह को मिटाती है और वाजीकर है। मात्रा १ रत्ती।

बाजीकरणार्थ—यह ७ माशा कौंच के बीजो की गिरी के चूर्ण के साथ लेवें और ऊपर से गरम दूध पीवे।

प्रमेह मे—७ माशा चूर्ण तालमखाना और मधुमेह मे एक तोला जामुन की गिरी के चूर्ण के अनुपान के साथ सुबह शाम लेवें और ऊपर से अर्क गिलोय ५ तोला पीवे।

गुर्दे की शिथिलता के लिये—यह एक तोला, कपासियो की गिरी की खीर बना उसके साथ लेवें। ग्रहणी मे एक रत्ती उक्त भस्म तीन माशा कपर्द भस्म के साथ मिला तक्र के अनुपान से लेवें।

चिकित्सक बन्धुओ से विनय है कि इस बूटी के सम्बन्ध मे उपार्जित विशेषानुभव परिणाम सहित प्रकाशित करने का कष्ट करें जिससे विरेचनीय प्रभाव का सही निर्णय मिल जाय।

हिरू सियाह (EUPHORBIA HELIOSEOPIA)

यह थूहर कुल (Euphorbiacnae) की एक वनस्पति होती है। इसके सब अङ्गो मे दूधिया रस भरा रहता है।

उत्पत्ति स्थान—

यह वनस्पति पजाब, पश्चिमी हिमालय और नीलगिरी मे पैदा होती हे।

नाम—

हि—हिरू सियाह, महावी। प.—चतरीवाल, डूबल, कुल्फा डोडक। अ—केटस मिल्क (Cat's milk) चूर्न स्टाफ (Churn staff)। ले—यूफोर्बिया हेलिओसिओपिया (Euphorbia Helioseopia Linn)।

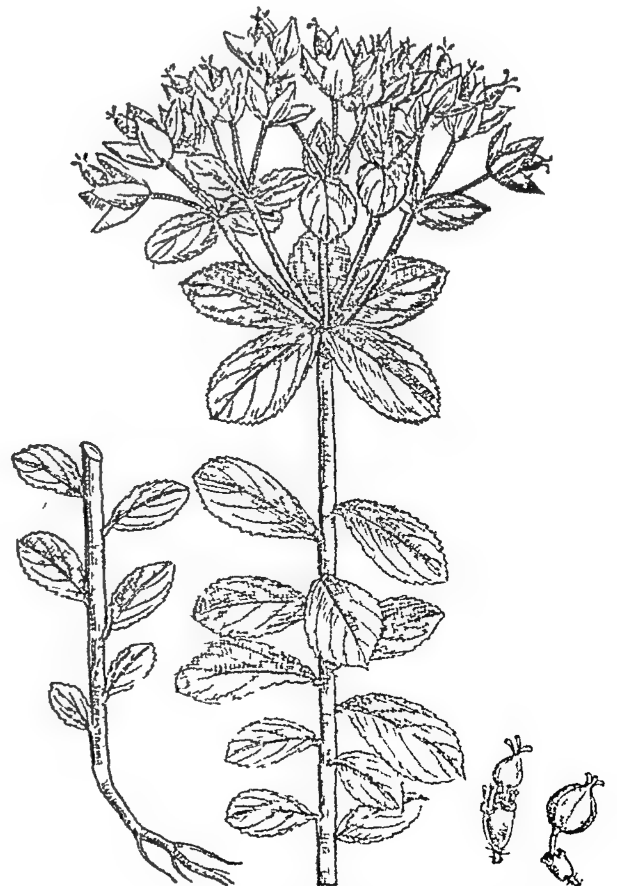
उपयुक्त अङ्ग—मूल और बीज।

गुण धर्म और प्रयोग—

यह वनस्पति मूत्र विरेचक होती है। इसका रस त्वचा पर होने वाले मसो को दूर करने के लिए लगाया जाता है। इसका दूधिया रस फफोलो पर लगाने के काम में लिया जाता है और इसके बीज भुनी हुई काली मिर्चों के साथ हैजे की बीमारी मे दिए जाते है।

इसका रस एक लेप की तरह सन्धिवात और स्नायु शूल पर लेप करने के काम मे लिया जाता हे और इसकी जड एक कृमिनाशक वस्तु की तरह दी जाती है।

(व. च. से साभार)



हिरु स्याह
EUPHORBIA HELIOSCOPIA LINN.

हिंसालू (RUBUS ELLIPTICUS SMITH)

यह गुलाबकुल (Rosaceae) का एक कांटेदार झाल-रदार पौधा होता है, जो कि लता जाति का माना जाता है।

यह दो प्रकार का होता है। एक के तीन पत्र गोलाकार होते हैं, टहनियो पर काटे होते है, पुष्प श्वेत कुछ मैले जैसे और फल पीले होते हैं।

फूलने फलने का समय—चैत्र बैशाख मास।

दूसरा भेद—कर हिंमालू—यह लता रूपी वनस्पति होती है। इसके फल कलेजी रग के, मानीद कलेजा या रक्त के रग के होते है। इसकी टहनियो पर भी काटे होते है। यह अषाढ-श्रावण मास मे फलता है । जगली ग्वाले घसियारे इसे लाकर बेचते है।

उत्पत्ति स्थान—

यह हिमालय मे ८ से १० हजार फीट की ऊचाई से १४ हजार फीट की ऊचाई तक कुमायू, गढवाल के जङ्गलों मे पाया जाता है। जहा शील हो और छाया हो।

नाम—

गढवाली नाम—हिसालू, हिंस, हिलोला, हिंसाऊ, हिंसोला। दूसरा—कर हिंसालू, किन्सोला। ले—रुबस इलिप्टिकस (Rubus ellipticus Smith)।

गुण धर्म और प्रयोग—

बडा हिसालू—पीला फल वाला—अरुचि, दाह, तृषा, ज्वर, छर्दिनाशक, हृद्य, दीपन और मूत्रल है। इसका शरबत बजूरी शरबत के समान गढवाल की योग धारा फार्मेसी वैद्य—हकीमो को खूब सप्लाई करती है। इसकी जड़ उदर रोग नाशक है। कोपल दारुहल्दी के काढे मे मिलाकर उसका प्रयोग आखो के विविध रोगों पर होता है। इसकी ताजी जड का रस व्रण रोपक है। इसकी जड़ से आयुर्वेदिक टिंचर बनता है। इसके बीज ३ ग्राम घोटकर धारोष्ण दूध के साथ देने से प्रमेह नाशक है।

दूसरी जाति के गुण—लघु हिस्त (किन्सोला) के फलो का शरबत या ताजे फलो का स्वरस २ से ३ छटांक तक पिलाने से शरीर मे खून की कमी अति शीघ्र पूर्ण हो जाती है बाल रोग पर पथ्य है। भारत सरकार इसका प्रयोग अपने निर्माण मे लेकर देश की रक्षा करे। यह क्षय नाशक है। यह मीठा अमृत पर्वतीय प्रदेशो में उत्पन्न होता है। आषाढ से श्रावण मास तक प्राप्त होता है।

—श्री योगेश्वर प्रसाद जी घिल्डियाल, कोटाबाग-रूडकी (नैनीताल)

हिलमोचिका (Enhydra Flucktuans)

यह भृङ्गराजादि कुल (Compositae) का क्षुप ब्राह्मी के समान जलज उद्भिद है। हिलमोचिका का क्षुप १ से ३ फीट लम्बा होता है। यह सादा तथा आड़ी टेढ़ी शाखाओ वाला चिकना या रोमावलि युक्त होता है। शाख की प्रत्येक गाठ से मूल निकलता है, डाडी गोल और बहुधा जमीन पर चलने वाली होती है। इसका क्षुप विशेष करके बहु वर्षायु हो ऐसा मालूम होता है।

पान—आमने-सामने १ से ३ इन्च लम्बे और कईतरह की चौडाई मे तथा मूल की ओर नोकदार होते हैं। पत्र दण्ड विहीन, डाडी और शाखाओ के चारो ओर निकले हुए होते है। ये रेसाकार, लम्ब गोल या भल्लाकृति के होते हैं। कोर पर दूर-दूर दातेदार, नीचे की ओर नसो पर विशेष रोमावलि और रस कुप्पी वाला होता है।

फूल—शाखाओ के किनारे कोण मे से निकले हुए होते है। पुष्प दण्ड नहीं होता है। पुष्प एकाकी। पुष्प सफेद नीले रङ्ग के छोटे-छोटे।

बीज—काला, चिकना और यह कलगी जैसी पीछी रहित होता है। क्षुप जल मे अथवा गीली जमीन मे होते हैं। रस मे तिक्त। शीत काल मे फूल और फल आते है। इसके पत्तो की भाजी बङ्गाली खाते है।

उत्पत्ति स्थान—

पूर्वी बगाल, आसाम, सिलहट, बगाल के हुगली, हावडा, २४ परगना, वर्द्धमान, बाँकुड़ा प्रभृति जिलो में गङ्गा के किनारे एव नालो के जलो मे एवं किनारे पैदा होते हैं।

नाम—

स०—हिलमोचिका। हिं०—हरहुच, हरुच, हिलमोचिका। ब०—हिञ्चो, हिंचाशाक, हेलेंचा। उड़ीसा—हिरमचा। ले.—ओनहीड्रा फ्लक्टुअन्स Enhydra Fluctuans Lour।

उपयुक्त अङ्ग—पचाङ्ग। मात्रा–१ तोला।

गुण धर्म और प्रभाव–

रस–तिक्त। विपाक-कटु। वीर्य-उष्ण दोषघ्नता-कफ-पित्त। हिलमोचिका—शोथ, कुष्ठ, कफ, पित्त को नष्ट करती है। (भा प्र)

हिलमोचिका—सर, तिक्त, कुष्ठघ्न, कफ और पित्त को जीतने वाली है। (रा० व०)

विशेष–पत्ते किंचित कड़वे, शीतल, मृदु विरेचक, त्वचा के रोग और खासी को मिटाने वाले होते हैं। शीतला की बीमारी मे भी ये उपयोगी होते हैं। (व० च०)

उपयोग—

बगाल मे इसके पत्तो का शाक बनाया जाता है। चर्म रोग और मज्जा तन्तुओ के रोगो मे इसका स्वरस १ तोले की मात्रा में दिया जाता है। यकृत की क्रिया को दुरुस्त करने के लिये इसके पत्तो का शाक चावल की पेज मे उबालकर उसमे सेंधा नमक और सरसो का तेल मिलाकर खिलाया जाता है, सुजाक मे इसके स्वरस को दूध में मिलाकर देते है। मस्तिष्क की गरमी को कम करने के लिए इसके पत्तो को पीसकर लेप करते है। चेचक की बीमारी मे इसके स्वरस में मधु मिलाकर पिलाया जाताहै। (व च)

चरक, सुश्रुत, वाग्भट्ट आदि मे इसका उल्लेख नही है। अमरसिंह जी ने 'हिलमोचिका' का उल्लेख किया है। भानुजी दीक्षित ने इसका नाम 'हिलपाल' बताया है। 'आयुर्वेद विज्ञानम्' वो. १ पा. ६३८ पर इसका चित्र दिया है।

नव्यमत—

हिलमोचिका के पान मृदुरेचक है और त्वग्दोष और ज्ञाव ततुओ के रोगो मे प्रयोग होता है। पत्तो का ताजा रस १ तोला की मात्रा में धातुओ के अनुपान रूप में कलकत्ते के कविराज काम मे लेते है।

वात रोगो मे ये दिये जाते हैं (यू सी दत्त)। पत्र–पित्त नाशक हैं। पत्तो का ताजा रस सुजाक एव मूत्रकृच्छ्र मे बकरी या गाय के दूध के साथ दिया जाता है। पत्तो का कल्क माथे पर बाधा जाता है इससे ठण्डक रहती है। कलेजे के दर्द पर यह उपयोगी है। (आ. नि.)

हिलमोचिका के रस मे समुद्रफेन पीस कर शरीर पर मर्दन करने से शरीर से आने वाली दुर्गन्धि दूर होती है। (भा. प्र)

चन्दन के चूर्ण के साथ हिलमोचिका का रस अथवा निम्ब पत्रो के रस के साथ हिलमोचिका का रस पिलाते रहने से वसन्त (चेचक) का प्रकोप कम हो जाता है। (भा व ब से)

ताजे रस की १ तोले की मात्रा उत्तम भस्म के समान बलकारी है। इसके सेवन से विश्वाची और स्नायु जाल की पीडा आराम होती है। (अ वू दर्पण)

हींग (Ferula Assafoetida)

यह हरीतक्यादि वर्ग और गर्जर कुल (Umbellifērae) का बहु वर्ष जीवी वृक्ष ह्रस्व प्रमाण का ६ से ८ फीट लम्बा होता है। पत्र कोमल, लोमयुक्त, २-४ पक्ष युक्त होता है। पत्र दण्ड के दोनो ओर २-२ पत्र बाहर निकलते हैं और अग्र भाग में एक पत्र होता है और पत्रों के किनारे कर्तित होते हैं। नीचे की ओर के पत्र १-२ फुट लम्बे और डिम्बाकृति के होवे हैं। पुष्पदण्ड के शेष भाग का दण्ड बृहत् और पत्रहीन होता है। फल ½ इची लम्बा, ¼ इची चौड़ा, गर्भाशय पर मसृणलोम होते है। इसके फल को अञ्जुदान और निर्यास को हीग कहते हैं।

फूलने फलने का समय—मार्च-अप्रैल।

जाति—इसकी श्वेत और कृष्ण दो जातिया होती हैं। श्वेत वृक्ष का निर्यास सुगन्धित और हीरकवत् शुभ्र, स्फटिकाकार होता है इसे "हीराहींग" कहते है। इसी का

व्यवहार औषधि मे होता है। कृष्ण जाति का निर्यास दुर्गन्वित होता है इसे 'हीग' हीगडा' कहते हैं।

आजकल हिंगु के अनेक प्रकार बाजार मे मिलते है वे उत्पत्ति स्थान, वृक्ष भेद, सग्रह विधि आदि मे भेद होने से होते है।

सग्रह विधि—इसका सग्रह दो प्रकार से किया जाता है। प्रथम विधि यह है कि वसन्तऋतु मे हिंगु वृक्ष के मूल के ऊपर वाले भाग मे चाकू से त्वचा छील दी जाती है। यहा जो निर्यास सचित होता है उसे १-२ दिन मे पुन छीलकर हटा लेते हैं और फिर वहा नया निर्यास सचित होता है। इस प्रकार कई बार करने से सारा निर्यास निकल आता है तब उसे छोड दिया जाता है। इस निर्यास को सुरक्षित रखने एवं धूप आदि से बचाने के लिये इसके चारो ओर पत्थरो की दीवाल सी बनादी जाती है। यह विधि प्राय बल्ख, बुखारा, पारस आदि में प्रचलित है।

इसके सग्रह की दूसरी विधि अफगानिस्तान, काबुल, काश्मीर और सीमा प्रान्त मे व्यवहृत होती है। वहा वृक्ष के काण्ड को मूल से कुछ ऊपर काट देते है जिससे मूल के छिन्न भाग पर निर्यास जम जाता है। इसे हटाकर पुन थोडा और काट देते हैं। इस प्रकार कई बार काटने से सव निर्यास आजाता है तब छोड़ देते हैं। निर्यास को सुरक्षित रखने के लिए छिन्न मूल भाग को पत्थरो से ढक देते हैं।

परीक्षा—

प्रशस्त हिंगु—जो जल मे डालने पर शनै शनै श्वेत धारा देकर पूरा मिल जाय और जल स्वच्छ दुग्धवत् हो जाय तथा कोई अवशेष पात्र तल में न बैठे वह हिंगु (हीग) प्रशस्त माना गया है। दियासलाई लगाने से हीग पूरी जल जानी चाहिए। उसका वर्ण शुभ्र, गन्ध तीक्ष्ण और स्वाद कटु होना चाहिए।

अग्राह्य हीग—व्यापारीगण उपर्युक्त विधि से निर्यास का सग्रह कर उसमे गेहूँ का आटा, पत्थर के टुकड़े आदि मिला देते हैं जिससे उसका वजन वढ जाता है और असल निर्यास कम रह जाता है। ऐसी हीग को जल में घोलने पर वह पात्र तल मे नीचे बैठ जाती है। आग लगने से पूरी जलती भी नही। गन्ध और स्वाद मे भी अन्तर आ जाता है। ऐसी हींग का प्रयोग नही करना चाहिए।

हींग का शोधन—हीग का शोधन दो प्रकार से किया जाता है—(१) अभर्जित और (२) भर्जित। प्रथम विधि में हीग को आठ गुने जल मे घोलकर छान लेते है और फिर किसी स्निग्ध लोह पात्र में रखकर मन्द आच से जल हीन करते है। दूसरी विधि से हीग मे गाय का घी देकर खूब भूनते हैं। जब शुष्क और खर हो जाता है तब उतारते हैं।

वृक्ष भेद—Ferula Narthex Boiss वृक्ष से भी हीग मिलती है। बम्बई के बाजार मे हीग को आवुसायर की हीग कहते है। बम्बई की हीग, हीरा हीग की अपेक्षा उत्तम नही है। कारण इसके साथ बबूल का गोद और अन्य २ द्रव्यो को मिश्रित किया जाता है। हाल मे इसके साथ आलू के टुकडे तक मिलाते है।

(F alliacea Boiss, F Narthex), प्रभृति वृक्षो से हीग का उत्पादन किया जाता है तब इन वृक्षो से उत्पन्न हीग मे विभिन्नता और रूप एव आकार मे पृथकता होती है।

सन १८८४ मे डा पिटर्स जब क्वेटा मे रहते थे तब पुष्पित हीग के वृक्ष देखे है। उन्होने इस वृक्ष के नमूने भेजे थे, वहा इ एम. होल्मस साहिब ने परीक्षा करके देखा था कि यह वृक्ष (Ferula Assafoetida Linn) है। डा पिटर्स ने भी उपरोक्त वृक्ष की सूखी जड को देखकर यही निश्चय किया था। यह अफगानिस्तान की रिपोर्ट मे देखा जा सकता है। वृक्ष परिपक्व होने पर उसके तने से दूध के समान गोद बाहर होता है एव उसके गाढा होने पर ही हीग हो जाती है। उत्कृष्ट हीग चपटा, उस पर बालू, काकरे लगे हुए मिलते हैं, उसका ऊपरी भाग पीताभ, तोडने पर मुक्ता के समान श्वेतवर्ण दिखती है। हवा लगने से उज्वल लाल वर्ण अत मे फीका हरिद्रा वर्ण हो जाता है।

उत्पत्ति स्थान–

ईरान, तुर्किस्तान, अफगानिस्तान, पजाब, पेशावर, काश्मीर मे होते हैं।

प्राप्ति स्थान–हीग—चर्म कोषो मे बन्द होकर बलख (वाह्लीक) बुखारा, पारसादि में बिकती है और बोम्बे में भी आती है, जहा पत्थर, आलू, गोधूमादि का श्वेतसार

(अटा) इत्यादि द्रव्य मिला दिये जाते हैं। हीग का दूसरा महा केन्द्र अफगानिस्तान है। यह वृक्ष प्रायः शुष्क नग्न शिलाओं पर होते हैं।

नाम–

स —हिंगु, सहस्त्रवेधि, जतुक, वाह्लीक, रामठ। हिं.- हीग। व –हिंग। म हिंग। गु, सिंधी–हींग, वघारणी। राज –हीग। ता –पेरुङ्कायम्। मल –कायम। ते–इङ्गुरा। क —यग, इगु। कर्णा —लेसु। द. को –हीग। वोम्वे– मुलतानी हीग। काश्मीरी—यग। फा. अगजद, अगोज। अरवी–हिल्तीत। अ –असाफिटिड़ा (Asafoetida)। ले – फेरुला असाफिटिडा (Ferula assafoetida Linn)।

रासायनिक संगठन—

इसमे एक उडशील तैल ६ से १७ प्रतिशत होता है जिसमे रसौन तैल और एलिल परसल्फाइड (Allyl persulphide) होता है। इसी के कारण हीग की विशिष्ट गन्ध होती है। इसके अतिरिक्त राल (Asaresinotannol) ६५ प्रतिशत, गोद २५ प्रतिशत, क्षार और लवण ३-४ प्रतिशत तथा (Ferualic, acetic, malic, formic और Valerianic acid) होते है।

उपयुक्त अङ्ग–निर्यास और बीज।

मात्रा—१ से ४ रत्ती तक।

गुण-धर्म और प्रयोग-

हींग –हलकी, गरम, पाचक, दीपन, कफवात नाशक, चरपरी, स्निग्ध, सारक, तीक्ष्ण तथा शूल, अजीर्ण और विवन्ध को दूर करती है।

हींग—हृदय को हितकारी, चरपरी, गरम तथा कृमि, वात, कफ, विवन्ध, आध्यमान, शूल और गुल्म का नाश करती है और नेत्रों को हितकारी है। (रा नि)

हीग–गरम, रुचिकारी, तीक्ष्ण, वात कफ नाशक तथा शूल, गुल्म, उदररोग, आनाह (अफारा) और कृमि को दूर करती है तथा पित्त वर्धक है। (भा प्र)

हीग—गरम, मन्दाग्नि नाशक, पाचक, कफ वात विनाशक, चरपरी, स्निग्ध, तीक्ष्ण रस वाली, भूत को दूर करने वाली और पित्त को कुपित करती है। (शा नि)

हीग–पित्त जनक, गरम, हृदय को हितकारी, कड़वी, सारक, चरपरी, हलकी, तीक्ष्ण, रुचिकारक, पाचक, अग्नि दीपन, स्निग्ध, मल स्तम्भक तथा श्वास खांसी, कफ, आनाह अर्थात् अफारा, आध्मान, गुल्म, शूल, हृदयरोग, वादी, अजीर्ण, कृमि और उदर रोग का नाश करती है। (नि र)

चरक ने दीपनीय, श्वासहर और सज्ञा स्थापक दशेमानियों में हीग का उल्लेख किया है। सुश्रुत ने पिप्पल्यादिगण में और शिरोविरेचन वर्ग में हीग का उल्लेख किया है। (आ नि)

यूनानी मतानुसार–

हीग–प्रकृति—चौथे दर्जे मे गरम और दूसरे मे रूक्ष है।

गुण कर्म-वातानुलोमन, आक्षेपहर, कोथ प्रतिवन्धक, श्लेष्म नि सारक, मूत्रार्तवजनन, शोणितोत्क्लेशक, वातनाड्युत्तेजक और कफोत्सारी है।

उपयोग–वातानुलोमन होने के कारण उदराना'ह को दूर करने के लिये वस्ति, तिला एव भक्षणीय औषधि के रूप मे हीग का उपयोग किया जाता है आक्षेपहर होने के कारण यह आक्षेप मुक्त रोगो विशेषकर अपतन्त्रक मे प्रयुक्त होती है। यह वात नाडियो के भीतर उत्तेजना पैदा करती है, इसलिये ध्वजोच्छ्राय करने के कारण वाजीकर भी है तथा शोणितोत्क्लेशक होने के कारण यह तिलाओ मे डाली जाती है। यह उपस्थेन्द्रिय मे शक्ति उत्पन्न करती है। श्लेष्म निसारक होने के कारण या कास एव कफज कृच्छ्र श्वास में प्रयुक्त की जाती है।

मात्रा–१ माशा।

हीग वृक्ष के फल—अन्जुदान–प्रकृति—दूसरे दर्जे मे गरम और खुश्क। गुण–कर्म —श्वयथु विलयन, वातानुलोमन, दीपन, मूत्रार्तवजनन, बाजीकर एव मूत्रल है। उपयोग—अजुदान को मस्तिष्क और वात व्याधियो, जैसे— अर्दित, पक्षवध, विस्मृति आदि मे उपयोग करते हैं। यह आमाशय को पाचन शक्ति देने, वायु का उत्सर्ग करने तथा मूत्रार्तव जनन के लिये भी प्रयुक्त होता है। कफज ज्वरो, जलोदर और कामला के लिए भी इसका उपयोग करते हैं। नपुंसकता मे इसे उपयुक्त औषधियो के साथ खिलाते है। मात्रा—२ से ३ माशे। (यू द्र वि)

डाक्टरी मतानुसार—

डा० देसाई के मत से हींग—दीपन, पाचन, आमाशय और आंतो के लिए उत्तेजक, वायुनाशक, अनुलोमिक, कृमिघ्न, मज्जा तन्तुओ के लिए तथा गर्भाशय के लिए जोरदार उत्तेजक, संकोच–विकास प्रतिबन्धक और विषम ज्वर को नष्ट करने वाली होती है। उसके अन्दर रहने वाला उडनशील तैल श्वास नलिका, त्वचा और मूत्र पिण्ड के द्वारा बाहर निकलता है। बाहर निकलते समय जिस मार्ग से यह बाहर निकलता है उस उस मार्ग को उत्तेजना देता है। इसका कफ निस्सारक गुण प्याज के समान होता है। इसके लेने से श्वास नलिका मे जमा हुआ कफ पतला होता है, उसकी दुर्गन्ध नष्ट होती है और उसमें रहने वाले रोग जन्तुओ का नाश होता है। श्वासोच्छ्वास के केन्द्र स्थान की क्रिया कुछ धीमी हो जाती है जिससे बिना कारण आने वाली खासी कम हो जाती है। ज्ञानतन्तु अथवा कर्म तन्तुओ के चिडचिडे होने से अथवा मज्जा तन्तुओ के केन्द्र स्थान की कमजोरी की वजह से मस्तिष्क पर बाह्य घटनाओ का असर मामूली से अधिक होने लगता है। जिससे मनुष्य द्वारा भूख और भूल भरे काम होने लगते हैं और उसकी दु खी और गमगीन रहने की आदत पड जाती है। ऐसी स्थिति में हींग का प्रयोग करने से मज्जा तन्तुओ की यह विकृति बन्द होकर वे व्यवस्थित रूप से काम करने लगती हैं। इसीसे हींग मज्जा तन्तुओ के लिये बलदायक और सकोच विकास प्रतिबन्धक मानी जाती है। इससे आमाशय और आतो की पेशियो को उत्तेजना मिलती है जिससे दस्त साफ होता है। फुफ्फुस के रोगो मे हींग बहुत गुणकारी होती है। प्रौढ मनुष्यो की श्वास नलिका की पुरानी सूजन, दमा, कुक्कुर खासी और छोटे बच्चो की श्वास नलिका की सूजन तथा फुफ्फुस के रोग होने के पश्चात् होने वाली सूखी खासी में हींग देने का बहुत रिवाज है। इसको देने से घबराहट की कमी होती कफ पतला होता है और कफ का अधिक उत्पन्न होना कम हो जाता है। फुफ्फुस के रोगो मे हींग को पानी में घोटकर देते हैं।

पेट का फूलना, उदरशूल, कब्जियत, आमाशय और आंतो की शिथिलता इत्यादि और वात रोग में हींग बहुत गुणकारी होती है, इन रोगो में हींग को अकेला ही अथवा दूसरे के साथ देते हैं। आँतो के रोग में अथवा कृमि रोग मे हींग के पानी का एनिमा देना चाहिए।

मृगी, अर्दित, पक्षाघात, धनुर्वात इत्यादि वात रोगों मे हींग को देने से बहुत लाभ होता है। मलेरिया ज्वर में भी यह एक उपयोगी वस्तु है। ज्वर के अन्दर सन्निपात का लक्षण दिखाई देने पर हींग कपूर वटी देना चाहिए। अगर रोगी मे गोली को निगलने की ताकत न हो तो गोली को अदरक के रस में मिलाकर उसकी जबान पर लेप देना चाहिए। इससे नाडी की गति में सुधार होता है। हाथ पांवों को उष्णता मिलती है और रोगी का बड बड बकना, हाथ पांव फेंकना, कपडे फाडना आदि उपद्रव बन्द हो जाते हैं।

इस गोली के साथ कस्तूरी देने से घबराहट, पसीना आना इत्यादि रोगो में तथा हृदयोदर में 'हींग कपूर' गुटिका देने से लाभ होता है। प्रसूति के समय हींग देने से गर्भाशय का सकोचन होकर परिस्राव साफ पड जाता है, गर्भाशय शुद्ध हो जाता है और स्राव पुन बन्द हो जाता है।

नारू के ऊपर हींग का लेप करने से और हींग खाने से नारू का कीडा मर जाता है। नियमित रूप से हींग खाने वालो को नारू नहीं निकलता, ऐसा कहा जाता है।

मेजर बसु और कीर्तिकर के मत से हींग एक शक्तिशाली आक्षेप निवारक, कफ निस्सारक, कृमिनाशक, मज्जा तन्तुओ को उत्तेजना देने वाली और हलकी मृदु विरेचक होती है। यह हिस्टीरिया रोग और हिस्टीरियाजनित विकारो मे बहुत लाभदायक होती है। इसी प्रकार दमा, हूपिंग कफ, हृदयशूल (Angina Pectoris) तथा कालिक (शूल मे होने वाले आक्षेप) को यह दूर करती है। निमोनिया रोग की स्थिति में हींग का प्रयोग करने से यह अपना आश्चर्यजनक प्रभाव दिखलाती है। बच्चो के ब्रोंकाइटीज मे भी इसका उत्तम प्रभाव होता है।

ग्लोबस हिस्टीरिया मे (जिसमे कि पेट की तरफ से एक गोला सा उठकर छाती की तरफ बढता है) हींग को देने से बहुत लाभ होता है। दाद के ऊपर इसका लेप

करने से दाद अच्छा हो जाता है। सन्निवात मे इसके वृक्ष के पत्तो को पिलाने से लाभ होता है।

वक्तव्य—उदर रोगो में भर्जित हीग एव फुफ्फुस रोगो मे कच्ची हीग देनी चाहिये। कच्ची हीग में अधिक तीक्ष्णता और छेदन शक्ति होती है जिससे इसका प्रभाव फुफ्फुस पर अधिक होता है। उदर रोगो मे ऐसी हीग उत्क्लेशकर और क्षोभक हो जाती है अत उसे घृत भृष्ट करने के बाद ही प्रयोग करते है।

हीग का शोधन—लोह के पात्र मे घी के अन्दर हीग को डालकर आग पर रख दें जब कुछ लाल हो जाय तब उतार कर काम मे लावे।

प्रयोग—

अपचन और अफरा—दूषित अन्न की डकार आती हो, थोडा थोड़ा दस्त होता हो और उदर मे वायु भरी हो तो २ रत्ती हीग को घी लगाकर निगलवा देवें अथवा हिंग्वाष्टक चूर्ण या शिवाक्षार पाचन या हिंग्वादि वटिका सेवन करावे।

वक्तव्य—उदर मे तीव्र पीडा हो तो उदर पर एरण्ड तैल लगाकर गरम जल से सेक भी करना चाहिये।

हैजा—दस्त मे दुर्गन्ध दूर होकर जब पतले जल जैसे आने लगे, तब अतिसार हरी वटिका सेवन करावे। १–१ गोली १–१ घण्टे पर ३ बार देने से हैजा बन्द हो जाता है। यह गोलिया अतिसार के लिये बनी है तथापि हैजे मे भी लाभ पहुचा देती हैं।

सन्निपात में वात प्रकोप—कभी बुखार बढ जाने पर वात प्रकोप के लक्षण उत्पन्न होते हैं। भागना, दौडना, चितभ्रम होना, वस्त्र फेंकना, मन्द मन्द बोलते रहना आदि होने पर हिंगु कर्पूर वटी तुरन्त लाभ पहुँचाती है। यह प्रसूता स्त्री को भी निर्भयतापूर्वक दे सकते हैं।

हिस्टीरिया—अनेक कमजोर हृदय वाली स्त्रियो के मन पर आघात होने से हिस्टीरिया हो जाता है। मृगी (अपस्मार) मे मुह मे झाग आता है इसमे नही आता। इस रोग में छाती या कठ मे वायु का गोला रुक गया हो ऐसा भास होता है। इस पर हिस्टीरियानाशक वटी अथवा 'हिंगु कर्पूर वटी, का सेवन कराना चाहिए।

बिच्छू का जहर—आक के दूध में हीग को घिसकर लेप करे।

दुष्ट व्रण—घाव मे कीडे पड जाने और अति दुर्गन्ध उत्पन्न होने पर उसे शुद्ध करने के लिए नीम के ताजे पान २ तोले और १ माशा हींग मिला घीं के साथ पीस कर पुल्टिस बनावे। यह बांधने से कीडे सब मर जाते है, और दुष्ट सडा हुआ मांस दूर हो जाता है तथा घाव शुद्ध हो जाता है। कभी-कभी यह पुल्टिस ४-६ बार बांधनी पडती है।

नहरुआ—नाहरु निकलने पर उसे जल्दी निकालने और देह में रहे हो उन सबको जलाने के लिए हींग का चूर्ण ४ माशे को २० तोले दही मे मिलाकर सुबह पिला देवे। दोपहर को दही भात खिलावें, या केवल दही पर रक्खें। इस तरह ३ दिन करने से नारु जल जाते है।

नोट—डा वीर जी जीणा आर्य औषधि मे लिखते है कि 'वाले को खीच कर निकालने तथा नाश करने का गुण है ऐसा मानना व्यर्थ है।

दन्त शूल—दात में वेदना होने पर पहले मुह मे २ तोले तिल या सरसो का तैल भर ५-७ मिनट चलाकर थूक देवें। फिर निवाये जल मे हीग मिलाकर कुल्ले करें।

हिक्का—हीग और उड़द का धुआ देने से वात प्रकोप से उत्पन्न हिक्का का शमन हो जाता है।

मक्कल शूल—स्त्रियो के प्रसव होने के पश्चात् भूल होने पर गर्भाशय में शूल चलता है उसे मक्कल शूल कहते है। उस पर हीग घी दी जाती है, या हिंग्वादि वटी का सेवन कराया जाता है।

मूत्रावरोध—वायु उत्पन्न होकर मूत्रावरोध होने पर हीग २ रत्ती और छोटी इलायची १ माशे का चूर्ण १-१ घण्टे पर जल केसाथ ३-४ बार देने से पेशाब साफ आजाता है। उत्तम लाभदायक है।

परिणाम शूल—भोजन के ३-४ घण्टे बाद उदर में शूल चलता हो, तो ४ रत्ती हीग, १ माशा सोडा बाइकार्ब और १ माशा जीरे का चूर्ण, घी शहद के साथ या निवाये जल के साथ सेवन कराना चाहिए। उदर में व्रण हो, तो घी के साथ दिया जाता है। (गा. औ र)

उदर शूल पर—हीग ३ माशा, कुष्ठ ३ माशा, विडग ३ माशे मिलित चूर्ण गरम पानी के साथ पिलावे। ऐसी

३ मात्रा दिन में ३ वक्त खिलावें। यदि विशेष शूल हो तो घण्टे-घण्टे मे देवे। (व गु ८)

वत्सनाभ के विष पर—४ रत्ती हीग गाय के २ तोला घी के साथ बार-बार पिलाने से वत्सनाभ विष का जहर उतर जाता है।

कृमि दन्त—अहिफेन और हीग को समान मात्रा मे लेकर पीसकर के दन्त के छेद में रुई रखकर दवा देने से कृमि दन्त शूल आराम हो जाता है। (भा व व)

उदर शूल—घोड़े की लीद का रस १ तोला मे एक माशा शुद्ध हीग मिलाकर २-३ बार देने से उदर शूल मिटता है।

उदर शूल की किसी भी दशा मे आधा तोला हीग गरम पानी मे घोलकर गुदामार्ग द्वारा पिचकारी देने से लाभ होता है।

वातज कास—कुक्कुर खासी (व्हूपिंग कफ की द्वितीय अवस्था) मे जब खांसी के साथ आक्षेप के दौरे होने लगें तब २-३ घण्टे के अन्तर से ½ रत्ती हीग घी के साथ अथवा बिहीदाने के लुआब के साथ देवें। ऐसी दशा मे हीग की पिचकारी भी दे सकते हैं।

वायुगोला (गैस) मे—हीग २ रत्ती गरम पानी से सेवन करे। यह अत्यन्त पाचक और क्षुधावर्द्धक है।

विशूचिका पर—अफीम १ माशा, शुद्ध हीग ½ माशा, लाल मिर्च का वस्त्रपूत चूर्ण १ माशा, कत्था १ माशा, लेकर ताजे पोदीने के रस से घोटकर २-२ रत्ती की गोलिया बनावे। हैजे के कारण दस्त होने पर २-२ घण्टे के अन्तर से एक एक गोली देवें।

कर्णनाद और बधिरता—हीग और सोठ से चौगुना सरसो का तेल और तेल से चौगुना अपामार्ग के पचाग का रस डालकर तेल सिद्ध करले। इसे कान मे डालने से कर्णनाद, बधिरता आदि कर्ण रोग आराम होते हैं।

अफीम का विष—पानी अथवा मट्ठे मे घोलकर हीग पिलावे तो अफीम का विष दूर होता है।

(अगद तन्त्र परिशिष्ट विष पु,)

विशिष्ट योग—

फेटिड स्पिरिट आफ एमोनियां—शुद्ध हीग पौने चार तोला के टुकड़े टुकड़े कर ७।। छटांक अलकोहल में मिला कर बर्तन का मुंह बन्दकर २४ घण्टे तक रखे रहें। इसके बाद अलकोहल छानकर उसमे एक ड्राम [illegible]मोनिया ड्राई अथवा नौसादर मिला दें। इसकी प्रयोग मात्रा २० बूंद है। कई बार देना हो तो २० बूंद की मात्रा मे चार-चार बार दे सकते हैं।

टिंचर ऑफ एसाफेटिडा (हींग का अरिष्ट)—आधा पाव हींग लेकर ७½ छटांक अलकोहल में डाल मुंह बन्द कर बर्तन मे एक सप्ताह तक रखें। बीच बीच मे बर्तन को हिला दिया करे। एक सप्ताह बाद छानकर बन्द बोतल मे रख दें। मात्रा ३० बूंद से ६० बूंद तक।

(अ. त प रि पु[illegible])

आयुर्वेदीय विशिष्ट योग—

रज प्रवर्तिनी वटी—हींग, कसीस, एलुआ, मण्डूर भस्म मिलाकर गोली बनाले और १ माशा की मात्रा में मिश्रेयादि क्वाथ के साथ देवें।

हींग कपूर वटी—हींग १ तोला और कपूर १ तोला। इन दोनो चीजो को शहद में घोटकर रत्ती रत्ती भर की गोलिया बना लें। यह अनेक रोगो पर काम मे आती है।

मात्रा १ से २ गोली, दिन मे ३ बार। जल, दूध, शहद या अदरक के रस और शहद के साथ।

वक्तव्य—कितने चिकित्सक इनमे १ तोला कस्तूरी मिला लेते हैं। कस्तूरी मिलाने पर गुण बढ जाता है। ज्वर मे वात प्रकोपज सन्निपात के लक्षण, बुद्धिभ्रम, मद मद प्रलाप, वस्त्र फेंकना, हाथ पैरो में कम्प होना, बार-बार उठना और हिस्टीरिया आदि पर यह वटी दी जाती है। आवश्यकता पर ३-३ घण्टे पर ३-४ बार देवें। रोगी नही निगल सके तो अदरख के रस और शहद मे मिला कर जीभ पर घिस देवें।

हिंग्वाष्टक चूर्ण—सोठ, मिरच, पीपर, जीरा, स्याह जीरा, अजमोद, सेंधानमक, भुनी हीग, ये आठो चीजें १-१ तोला। इन सब चीजो का चूर्ण कर लो। इस चूर्ण को ३ से ६ माशे की मात्रा मे भोजन के समय घी के साथ पहले ग्रास मे लेने से सब प्रकार के उदर रोग मिटते हैं।

नोट—(सोठ और जीरे को सेक लिया जाय तो अधिक उत्तम है।)

हीग फल वर्ति—हीग और सेंधव की मधु के अन्दर फलवर्ति बनावे। (आर्य औषध)

शिवाक्षार पाचन चूर्ण—हिंग्वष्टक चूर्ण, छोटी हरड़ का चूर्ण और सज्जी क्षार (सोडा बाइकार्ब) तीनो को सम भाग मिलाकर खरल कर बोतल मे भरे।

मात्रा—३ से ४ माशे २ बार निवाये जल के साथ। यह चूर्ण आम को पचाता है, अपान वायु को शुद्ध लाता है तथा मलावरोध को दूर करता है। आमाशय का पित्त अधिक तेज होने पर और यकृत पित्त निर्बल होने पर यह हिंग्वाष्टक की अपेक्षा अधिक लाभदायक है।

हिंग्वादि बटी—भुनी हीग, अम्लवेत, सोठ, काली-मिर्च, पिप्पली, अजवायन, सैधानमक, विडनमक और काला नमक, ये नौ औषधिया सम भाग मिला बिजौरे नीबू के रस मे ३ दिन खरल करके २-२ रत्ती की गोलिया बना लेवें। मात्रा १ से ४ गोली दिन मे २-३ वार छाछ के साथ देवे या १-१ गोली मुह मे रखकर रस चूसते रहे। उदर शूल को दूर करने मे यह वटी अति लाभदायक है। आफरा हो तो उसे यह दूर करती है तथा पाचन क्रिया बढाती है।

अतिसार हर बटी—हीग, कालीमिरच और कपूर तीनो ४-४ तोले और अफीम १ तोला मिला अदरख के रस मे ६ घण्टे खरल कर १-१ रत्ती की गोलिया बनावें।

मात्रा—१ से २ गोली, दिन मे ३ बार। यही वटी अतिसार में बार बार दुर्गन्ध रहित पतले दस्त होने और कालेरा के दस्त जिसमे दुर्गन्ध न आती हो, मात्र जल गिरता हो, उन दोनो पर तुरन्त लाभ पहुचाती है।

हिस्टीरिया वटी—हीग कच्ची और एलुआ समभाग मिला जल के साथ खरल कर २-२ रत्ती की बटी बनावे।

मात्रा—१-१ वटी दिन मे २ या ३ बार जल के साथ देते रहने से हिस्टीरिया थोडे ही दिनो मे दूर होजाता है। आफरा और मलावरोध पर भी यह हितकारक है। रात्रि को २ वटी देने से सुवह एक दस्त साफ आजाता है।

हिंग्वादि क्वाथः (१) (हा॰ सं। स्था ३ अ. ७)—हीग, पोखरमूल, कचूर और काला नमक (सचल) समान भाग लेकर क्वाथ बनावे।

यह क्वाथ शूल और विशेषत वातज शूल को नष्ट करता है तथा पाचक है।

(काला नमक क्वाथ तैयार होने पर मिलाना चाहिए।

हिंग्वादिक्वाथ (२) (हा॰ स। स्था.३ अ.७)—हीग, सोठ, कचूर, काला नमक (सचल), देवदारु, पोखर मूल, नागर माथा और पुनर्नवा की जड समान भाग लेकर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ शूल, उदर रोग और गुल्म रोग को नष्ट करता है तथा पाचक है।

(काला नमक क्वाथ तैयार होने पर मिलाना चाहिए।)

हिंगु द्वादशकं चूर्णम् (वं से.। अजीर्ण)—हीग १ भाग, सैंधा नमक २ भाग, पीपल ३ भाग, पीपलामूल ४ भाग, काली मिर्च ५ भाग, अजवाइन ६ भाग, हर्र ७ भाग, अनार दाना ८ भाग, इमली ९ भाग, चीतामूल १० भाग, सोठ ११ भाग और धनिया १२ भाग लेकर यथा विधि चूर्ण बनावे।

हीग को थोडे घी मे भून लेना चाहिए। इमली को पानी मे भिगोकर मल कर वह पानी चूर्ण मे मिलाकर सुखा लेना चाहिए। (मात्रा—२ से ३ मासे।)

यह चूर्ण अरुचि, गुल्म, हृद्रोग, अष्ठीला, आध्मान, शूल और शुष्कार्श तथा रक्तार्श को नष्ट करता है।

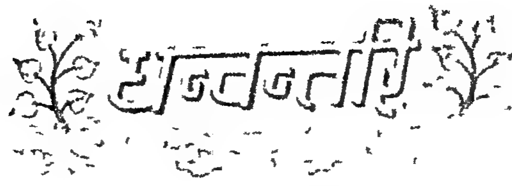
हिंगु नवकचूर्णम् (यो र.। गुल्मा)—हीग, पोखर मूल, तुम्बरु (नेपाली धनिया), हर्र, काली निसोत, बिड नमक, सैंधानमक, जवा खार और सोठ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे घी में सेक कर जौ के क्वाथके साथ पिलाने से उप-द्रव युक्त गुल्म और शूल का नाश होता है। (मात्रा—१ से २ माशा)।

हिंगु पंचकं चूर्णम् (१) यो चि॰ म।अ २)—हीग सचल (काला नमक) सोठ, अनार दाना और अम्लवेत समान भाग लेकर चूर्ण बनावे। इसे उष्ण जल के साथ सेवन करने से श्वास और हृद्रोग का नाश होता है।

(मात्रा—५ रत्ती।)

हिंगु पञ्चकंचूर्णम् (२) (यो र। गुल्मा)—हीग, सेंधा नमक, तिन्तडिक, राई और सोठ समान भाग लेकर चूर्ण बनावे। इसके सेवन से गुल्म का नाश होता



है । (मात्रा—५ रत्ती ।)

हिङ्ग्वादि चूर्णम् (१) (यो र । अजीर्णा.)—हीग १¼ तोला, विड नमक २½ तोला, तथा मिर्च, सोंधा नमक, सोंठ, पीपल, अजवायन, जीरा (काला), अजमोद, सफेद जीरा, बहेडा और हर्र ५-५ तोले एव सनाय और आवला १०-१० तोले और बेल तथा कैथ का गूदा २०-२० तोले लेकर चूर्ण बनावे और उसे बिजोरे नीबू के रस मे घोट कर सुरक्षित रक्खे ।

इसके सेवन से अरुचि, आफरा, मलावरोध और अग्नि माद्य का नाश होता है । (मात्रा—५ माशे ।)

हिङ्ग्वादि चूर्णम् (२) (ग नि । ग्रहण्य ३)—हीग और जवाखार १-१ भाग तथा हर्र, सोंठ, पीपल और चीता मूल २-२ भाग लेकर चूर्ण बनावे ।

इसे सेवन करने से कफज ग्रहणी रोग नष्ट होता है ।

अनुपान—दही या मद्य । मात्रा—१½ माशा ।

हिङ्ग्वादि चूर्णम् (३) यो.र । गुल्मा.)—हीग १ भाग, वच २ भाग, विड नमक ३ भाग, सोंठ ४ भाग, जीरा ५ भाग, हर्र ६ भाग, पोखर मूल ७ भाग और कूठ ८ भाग लेकर चूर्ण बनावे ।

यह चूर्ण गुल्म, उदर रोग, अजीर्ण और विसूचिका को नष्ट करता है । (मात्रा—१½ माशा ।)

हिङ्ग्वादि चूर्णम् [४] वै. म र पटल ३] हीग एक भाग, वच २ भाग, चीतामूल ३ भाग, सोठ ४ भाग, अजवायन ५ भाग, हर्र ६ भाग, पीपल ७ भाग और निशोथ ८ भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे घी के साथ सेवन करने से कास और श्वास का नाश होता है । (मात्रा—१॥ माशा) ।

हिङ्ग्वादि चूर्णम् [५] वैद्यामृत वि ५ विसूचिका.)—हींग १ भाग, वच २ भाग, विड नमक ३ भाग, सोठ ४ भाग, अजवायन ५ भाग और हर्र ६ भाग लेकर चूर्ण बनावे ।

यह चूर्ण अफरा, शूल, अर्श, अग्निमाद्य, गुल्म, मलावरोध और विसूचिका को शीघ्र ही नष्ट कर देता है । मात्रा—१॥ माशा ।

हिङ्ग्वादि चूर्णम् (६) भै र. शूला.)—हीग, काला नमक, हर्र, विड्नमक, सेंधानमक, तुम्बरु (नेपाली धनिया) और पोखर मूल समान भाग लेकर चूर्ण बनावें ।

इसे दशमूल के क्वाथ के साथ सेवन करने से पार्श्व, हृदय, कमर और पीठ के शूल, [illegible], [illegible], कफ, आनाह और [illegible] रोगों का नाश होता है । (मात्रा—१॥ माशा ।)

हिङ्ग्वादि चूर्णम् (७) ग. भ चि अ १० ग्रहण्य.)—हीग, कुटकी, वच, काला जीरा, पाठा, इन्द्र जौ, [illegible], पीपल, पीपलामूल, [illegible] चीतामूल और सोंठ [illegible] तोला तथा पांचो नमक ५-५ तोले लेकर चूर्ण बनावें और फिर उसमे २०-२० तोले घी तथा तिल का तेल एवं [illegible] सेर दही मिलाकर अग्नि पर पकावें । जब [illegible] लेही सी होजाए तो उसे हाण्डी म बन्द कर [illegible] जलावें । तत्पश्चात् हांडी के स्वाङ्ग शीतल होने पर उसमें से [illegible] को निकाल कर चूर्ण करलें । उसमें से १। तोला औषधि मे मिलाकर पीनी चाहिए और उसके पचने पर मधुर आहार करना चाहिये । इसके सेवन से वात कफज ग्रहणी रोग और गर विष का नाश होता है । व्यवहारिक मात्रा १॥ से ३ माशे तक ।)

हिङ्ग्वादि चूर्णम् (८) (हा स स्था ३ अ ७)—हीग, सञ्चल (काला नमक) हर्र, अजवायन, पुनर्नवा, सुगन्धवाला, अरण्ड मूल, बड़ी कटेली, छोटी कटेली, तुम्बरु, सौंठ, मिर्च, पीपल, जवाखार और सञ्चल समान भाग लेकर चूर्ण बनावें । यह चूर्ण वातज शूल और विसूचिका को तुरन्त नष्ट करता है । मात्रा—२ माशे ।

हिङ्ग्वादि चूर्णम् (९) (व मे बालरोगा) -हींग, सेंधानमक और पलाश (ढाक) की जड समान भाग लेकर चूर्ण बनावे । इसे शहद के साथ चटाने से बच्चो की प्रबल तृषा नष्ट होजाती है । (मात्रा—१ रत्ती ।)

हिङ्ग्वादि चूर्णम् (१०) (वृ. नि. र बालरोगा)—हीग, काकडासिंगी, गेरु, मुलैठी, छोटी इलायची और सौंठ समान भाग लेकर चूर्ण बनावे । इसे शहद में मिला कर चटाने से बालको की हिचकी और श्वास का नाश होता है । (मात्रा—२-३ रत्ती ।)

हिङ्ग्वादि चूर्ण (११) भै र । शूला.)—हीग, अतीस, सोंठ, मिर्च, पीपल, वच, सचल और हर्र समान भाग लेकर



चूर्ण बनावे ।

इसे प्रात खाली पेट (निरन्नकोष्ठ मे) गरम पानी के साथ पीने से शूल नष्ट होता है । मात्रा—१ माशा ।

हिंग्वादि चूर्णम् (१२) (भै. र शूला.)—हीग एक भाग, सचल २ भाग, सौठ ४ भाग और हर्र आठ भाग लेकर चूर्ण बनावे । यह चूर्ण कमर, कुक्षि, पार्श्व, हृदय और वस्ति के शूल को नष्ट करता है । मात्रा—२ माशा ।

हिंग्वादि चूर्णम् (१३) (बृहद) (हा. स स्था ३ अ. ३)—हीग, सौंठ, बच, अजवायन, हर्र, निसोथ, वायबिडङ्ग, देवदारु, चव्य, तुम्बरु, कूठ, नागरमोथा, हाऊबेर, शालपर्णी, रास्ना, इन्द्रजौ, धमासा, शतावर, कटेली छोटी, बडी कटेली, दालचीनी, इलायची, तेजपात, जीरा, पोखरमूल, तितडीक (समाकदाना), इमली, अम्लवेत, जवाखार, सज्जीखार और पाचों नमक समान भाग लेकर चूर्ण बनावे और फिर उसे गोमूत्र की १ भावना देकर छाया मे सुखाले । तदनन्तर विजौरे नीबू के रस मे ३ दिन खरल कर सुरक्षित रक्खें ।

मात्रा १¼ तोला । व्यावहारिक मात्रा—१॥ से २ माशे ।

इसके सेवन से शूल, अफारा, मलावरोध, अग्निमाद्य, गुल्म, विद्रधि, प्लीहा, पांडु और विशेषत. ज्वर का नाश होता है।

अनुपान—वात मे उष्ण जल के साथ, पित्त मे खाड के साथ, कफ मे त्रिफले के क्वाथ और सुरा के साथ सेवन करना चाहिए ।

हिंग्वादि चूर्णम् (१४) (च. द. शूला)—हीग, सौठ, मिरच, पीपल, कूठ, जवाखार और सेंधानमक समान भाग लेकर चूर्ण बनावे । इसे विजौरे नीबू के रस के साथ सेवन करने से प्लीहा और शूल का नाश होता है । मात्रा—१ माशे ।

हिंग्वादि चूर्णम् (१५) हा. स स्था ३ अ २८)—हीग, हर्र, बहेडा, आमला, सफेद जीरा, काला जीरा, चित्रक, भारगी, कूट, वायविडग, तुम्बरु, पोखरमुल, सोठ, देवदारु, जवाखार, सज्जीक्षार और पाचो नमक समान भाग लेकर चूर्ण बनावे । यह चूर्ण वातज गुल्म और शूल को नष्ट करता है । मात्रा—२ माशे ।

हिंग्वादि चूर्णम् (१६) (ग नि. शूला)—हीग, तुम्बरु, सौंठ, मिरच, पीपल, अजवायन, चीतामूल, हर्र, जवाखार और पांचो नमक समान भाग लेकर चूर्ण बनावे ।

इसे प्रा. काल मंदोष्ण जल के साथ सेवन करने से मल-मूत्र और वायु का रुकना तथा शूल का नाश होता है एव पाचन और दीपन है । मात्रा—२ माशे ।

हिङ्ग्वादि चूर्णम् (१७) (वृ नि र शूला)—हीग १ भाग, बहेडा २ भाग, अदरक (सौठ) ३ भाग और कटकरञ्ज बीज ४ भाग लेकर चूर्ण बनावें । इसे जल के साथ सेवन करने से शूल नष्ट होता है । गुड मे हर्र का चूर्ण मिलाकर खाने से या घी के साथ लहसन खाने से भी शूल नष्ट हो जाता है । मात्रा—२ से ३ माशे ।

हिंग्वादि चूर्णम् (१८) (शा स ख २ अ ६)—हीग, सौंठ, मिर्च, पीपल, पाठा, हपुषा, हर्र, कचूर, अजमोद, अजवायन, तिन्तडीक, अम्लवेत, अनारदाना, पोखरमूल, धनिया, जीरा, चीतामूल, बच, जवाखार, सज्जीखार, सेंधानमक, सचल (काला नमक) और चव्य समान भाग लेकर चूर्ण बनावे । इस चूर्ण मे नीबू के रस की अनेक भावनाये देकर गोलियां भी बना सकते है । इसे भोजन के आरम्भ मे मद्य अथवा उष्ण जल के साथ सेवन कराना चाहिये ।

इसके सेवन से पार्श्वशूल, हृदयशूल, वस्तिशूल, वातकफज गुल्म, अफारा, मूत्रकृच्छ्र, गुदपीडा, योनिशूल, ग्रहणीविकार, अर्श, प्लीहा, पाण्डु, अरुचि, छाती की जकडाहट, हिचकी, श्वास, कास और गलग्रह का नाश होता है । मात्रा -२ माशे । यह चूर्ण सर्व सम्मत और परीक्षित है ।

हिंग्वादि चूर्णम् (१९) (वं से स्त्री रोग)—हीग, पीपल, दो प्रकार का लोध, भारङ्गी, मेदा, सौठ, रास्ना, अतीस और चव्य समान भाग लेकर चूर्ण बनावे । इसके सेवन से योनिदोष और योनि शूल नष्ट होकर योनि मृदु हो जाती है । मात्रा—१॥ माशा ।

हिंग्वादिचूर्णम् (२०) (भै र शूला)—हीग, अम्लवेत, पीपल, आमला, अजवायन, जवाखार, हर्र और सेंधानमक समान भाग लेकर चूर्ण बनावे । इसे सुरामण्ड (मद्य के ऊपर के स्वच्छ भाग) के साथ सेवन करने से प्रवृद्ध वातजशूल नष्ट होता है । मात्रा—१ माशा ।

हिंग्वादि जलयोग (वृ. नि र. अतिसारा)—हींग, सोठ, वायविडङ्ग और सञ्चल (कालानमक) समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे २½ तोले पानी में मिलाकर पीने से भस्मातिसार का नाश होता है। मात्रा—४ रत्ती।

हिंग्वादि योग (१) (वृ नि. र छर्द्य)—हींग, और सारिवा मूल समान भाग लेकर चूर्ण बनावें। यह चूर्ण हर प्रकार की वमन को नष्ट करता है।

मात्रा- १-१ रत्ती चूर्ण १-१ घण्टे बाद पानी से दे।

हिंग्वादि योग (२) (वा. भ चि अ २५)—हींग, दन्तीमूल, हर्र, बहेडा, आवला, देवदारु, दारुहल्दी, भिलावा, सहजने की फली, कुटकी, चिरायता, वच, सौठ, काला अतीस, नागरमोथा, कूठ, सरल काष्ठ (चीर) और पाचो नमक १-१ भाग लेकर चूर्ण करें और फिर उसमे सबसे ४ गुना दही तथा उतना ही घी मिलाकर हाडी मे बन्द कर के इस प्रकार जलावें कि धुआ बाहर न निकले। तदनन्तर हाडी के स्वाग शीतल होने पर निकाल कर पीसलें।

इसे १। तोले की मात्रा मे मदिरा, दही, मांड, उष्ण-जल, अरिष्ट, आसव मे से किसी के साथ मिलाकर पीने से उदर रोग, गुल्म, अष्ठीला, तूनी, प्रतितूनी, शोफ, विसूचिका, प्लीहा, हृद्रोग, अर्श और उदावर्त का नाश होता है।

हिंग्वादि योगः (३) (भै० र० अम्लपित्त.)—हीग १ भाग, कतकफल (निर्मली के बीज) २ भाग और इमली की छाल ४ भाग लेकर चूर्ण बनावे और उसमे ८ भाग घी मिलाकर हाडी मे बन्द करके गजपुट में फूक दें। तदनन्तर स्वाग शीतल होने पर निकाल कर पीसलें। इसके सेवन से अम्ल पदार्थ खाने वाले रोगी का अम्लपित्त नष्ट होता है। मात्रा—१॥ से २ माशे।

हिंग्वादि योग (४) (व से.। मुख रोगा.)—हीग, कायफल, कसीस, सज्जी, कूठ और काली मिर्च समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसमे से जरासा चूर्ण पीडा वाले दात के नीचे रखने या मलने से दन्त पीडा शीघ्र ही शान्त हो जाती है।

हिंग्वाद्यं चूर्णम् (१) (शा. सं.। ख. २ अ. ६ हृद्रोगा.)—हीग, वच लवण, सोठ, पीपल, कूठ, हर्र, चीता, जवाखार, सचल (काला नमक) और पोखर मूल समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे जौ के क्वाथ के साथ सेवन करने से शूल और हृद्रोग का नाश होता है। मात्रा—१½ माशा।

हिंग्वाद्यम् चूर्णम् (२) (यो र। आमवाता)—हीग १ भाग, चव्य २ भाग, विडलवण ३ भाग, सोठ ४ भाग, काला जीरा ५ भाग और पोखरमूल ६ भाग लेकर चूर्ण बनावें। यह चूर्ण आमवात को नष्ट करता है। मात्रा—२ से ३ माशा।

हिंग्वाद्य द्विरुत्तर चूर्णम् (वृ नि र। आनाहा)-हीग १ भाग, वच २ भाग, चीता मूल ४ भाग, कूठ ८ भाग, सचल (काला नमक) १६ भाग और वायविडग ३२ भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे मदोष्ण जल के साथ सेवन करने से अफारा, विसूचिका, हृद्रोग, गुल्म और ऊर्ध्व वायु का नाश होता है।

मात्रा—एक माशा।

हिंग्वादिगुटिका [१] [धन्व। शूला.]—हींग, अम्लवेत, सौठ, कालीमिर्च, पीपल, अजवायन, सेंधा नमक, विडलवण और सचल (काला नमक), इनका चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर बिजौरे के रस मे घोट कर गोलिया बनावें। इसके सेवन से वातज शूल नष्ट होता है। मात्रा—१-१½ माशा।

अनुपान—उष्ण जल।

हिंग्वाद्यवटकः (व से शूला)—हीग, सञ्चल (काला नमक), पाठा, जवाखार, सज्जीखार, सेंधा नमक, काला नमक और बिड़ नमक, इनका चूर्ण समान भाग लेकर लहसन के रस मे खरल करके गोलिया बना ले।

इसके सेवन से हृदय शूल, पार्श्वशूल, मन्यास्तम्भ, और कुक्षिशूल का नाश होता है। माशा १¼ तोला, व्यवहारिक मात्रा—१-१½ माशा। अनुपान—उष्ण जल।

हिंग्वादिघृतम् (१) सु स। चि अ ४२ गुल्मा,) हीग, सचल (काला नमक), जीरा, विड नमक, अनारदाना (या अनार की छाल), अजमोद, पोखरमूल, सोंठ, मिर्च, पीपल, धनिया, अम्लवेत, जवाखार, चीतामूल,

कचूर, वच, अजमोद, इलायची और तुलसी समान भाग मिश्रित २० तोले।

२ सेर घी में यह कल्क और ८ सेर दही मिलाकर पकावे। यह वात गुल्म, शूल और आनाह को नष्ट करता है। मात्रा--एक से दो तोला।

हिंग्वादि घृतम् (२) (यो. त. । त. ३८)--हीग, सचल (काला नमक), सौठ मिर्च, पीपल दश-दश तोले। ८ सेर घी में यह कल्क और ३२ सेर गोमूत्र मिलाकर पकावे। यह घृत उन्माद को नष्ट करता है। मात्रा--एक से दो तोला।

हिंग्वादि घृतम् (३) (ग, नि. । भूतोन्मदा)—हीग, सरसो, बच, सौठ, मिर्च और पीपल २१-२१ तोले। २ सेर घी मे यह कल्क और ८ सेर गोमूत्र मिलाकर पकावे। इसे पीने तथा इसकी नस्य लेने और मालिश करने से देवग्रहजनित उन्माद नष्ट होता है।

हिंग्वादि तैलम् [१] [यो र । नासा.]—हीग सोठ, मिर्च, पीपल, वायविडग, कायफल बच, कूठ, छोटी इलायची, लाख, स्वर्ण जीवन्ती, इन्द्र जौ और तुलसी के फूल समान मिश्रित २० तोला २ सेर सरसो के तेल में यह कल्क और ८ सेर गोमूत्र मिलाकर मदाग्नि पर पाक सिद्ध करे।

इसे नासिका द्वारा पीने से नासा रोग नष्ट होते हैं।

हिंग्वादि तैलम् २ (भै. र कर्ण रोगा)–हीग, तुम्बरु (नेपाली धनिया) और सौंठ समान भाग मिलित २० तोले २ सेर सरसो के तेल मे यह कल्क और ८ सेर पानी या (इन्ही द्रव्यो का क्वाथ) मिलाकर तैल सिद्ध करे। इसे कान मे भरने से कर्ण शूल नष्ट होता है।

हिंग्वादि लेपः १ (यो र सन्निपाता)—हीग, हल्दी, दारुहल्दी, इन्द्रायन की जड, सेंधानमक, देवदारु और कूठ के समान भाग मिलित चूर्ण को आक के दूध मे पीसकर लेप करने से कर्णमूल शोथ (सन्निपात ज्वर मे होने वाली कान को पीछे की सूजन) का नाश होता है।

हिंग्वादि लेप. २ (यो र शूला)—हीग, तैल, सेंधा-नमक और गोमूत्र को एकत्र मिलाकर पकाकर (गाढा लेप सा बनाकर) नाभि पर लेप करने से शूल नष्ट होता है।

(अथवा हीग और सेंधानमक के कल्क तथा गोमूत्र के साथ तेल पकाकर नाभि पर लगाने या नाभि मे भरने से भी लाभ होगा।)

हिंग्वादि लेप। ३ ।च द अग्निमाद्य)—हीग, सौंठ, मिर्च, पीपल और सेंधा नमक समान भाग लेकर (पानी के साथ) पीसकर पेट पर लेप करके दिन मे सोने से समस्त प्रकार के अजीर्ण नष्ट हो जाते हैं।

हिंग्वाद्यञ्जनम् (रा मा. नेत्ररोगा ३)—हीग या द्रोण पुष्पी (गूमा) के रस का अजन लगाने से कामला रोग शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

हिंग्वादि नस्यम् (वै जी वि १)—पुराने घृत में हीग मिलाकर उसकी नस्य लेने से चातुर्थिक ज्वर (चौथिया) नष्ट हो जाता है।

यूनानी विशिष्ट योग-

सऊय वरात किर्म बीनी—द्रव्य और निर्माण विधि-पीला एलुआ १ माशा, कपूर १ माशा, हींग १ माशा। इनको शरीफा के हरे पत्तो का रस १ तोला और आडू (शफ्तालू) के हरे पत्तो का रस १ तोला मे पीसकर एक तोला गुल रोगन मिलाकर नासिका मे टपकाये। यदि गुल रोगन के स्थान मे तारपीन का तैल सम्मिलित करें तो अधिक लाभ हो।

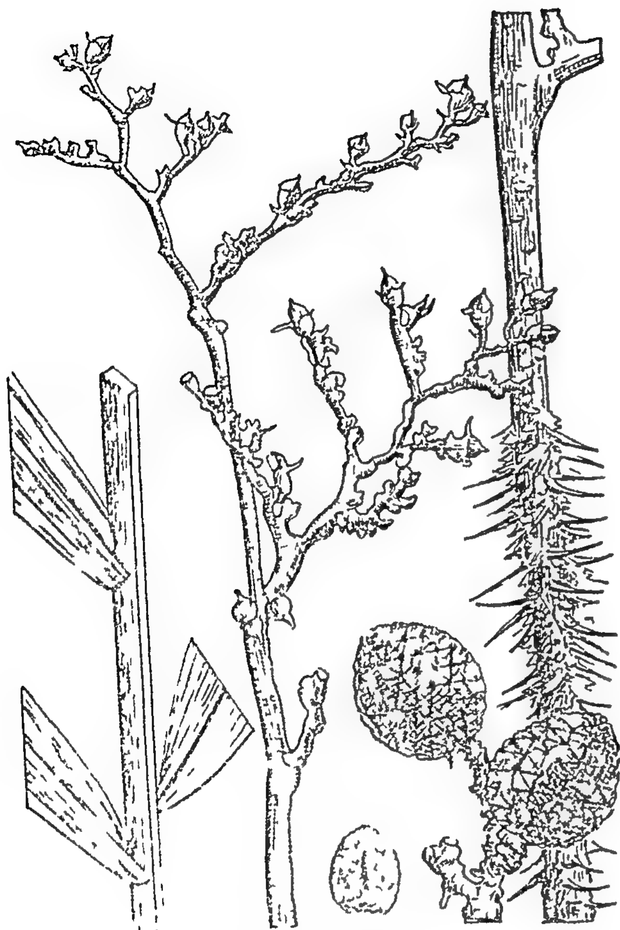
हब्ब इख्तिना कुर्रिहम—द्रव्य और निर्माण विधि—कस्तूरी १ रत्ती, हीग, कपूर, तगर (असारुन), बालछड़ प्रत्येक १ माशा। सबको बारीक पीसकर चना प्रमाण की गोलिया बनावे।

मात्रा और अनुपान—१ गोली उपयुक्त अनुपान से उपयोग करें।

गुण तथा उपयोग—अपतन्त्रक के लिए उत्कृष्ट कोई अन्य औषधि अब तक अनुभव मे नही आई।

द्वितीय हब्ब इख्तिना कुर्रिहम—द्रव्य और निर्माण विधि—जुन्द वेदस्तर ७ माशा, हीग, कस्तूरी, ऊदसलीब प्रत्येक ४½ माशा सबको पीसकर अर्क दालचीनी या अर्क सौफ के साथ उडद प्रमाण की वटिकायें प्रस्तुत करे।

मात्रा और अनुपान—२ गोली प्रतिदिन सवेरे अर्क सौंफ के साथ खिलायें।



CALAMUS DRACO WILLD

मात्रा—बीजक निर्यास निष्कर्ष (Tinct Kino) ३० से ६० बूद · चूर्ण १ माशे से ४ माशे तक।

गुण धर्म और प्रयोग-

प्रवल ग्राही, रक्त स्तम्भक और व्रणरोपण। ग्राही (आकुञ्चन) क्रिया स्थानिक वाह्य प्रयोगो में भी प्रतीत होती है।

रस तन्त्रसार व सिद्ध प्रयोग सग्रह द्वितीय खड में इस गोद के २ प्रयोग रक्तश्रावरोध और प्रवाहिका नाशार्थ दिये है। बीजक निर्यासादि चूर्ण और भुवनेश्वरी वटी। इनके अतिरिक्त बोल बद्ध रस और बोल पर्पटी मे भी बीजाबोल के स्थान पर हीरादोखी गोद मिलाने पर रक्त स्तम्भन गुण अधिक दर्शाता है।

बीजक निर्यास निष्कर्ष—(Tinct kino) हीरा दोखी गोद १० भाग, ग्लिसरीन १५ भाग, वाष्पजल २५ भाग, मद्यार्क (९०%) १०० भाग तक। पहले ग्लिसरीन को वाष्प जल में मिलावे। फिर हीरा दोखी में थोडा जल मिलाकर गाद जैसा करे। अच्छी तरह मिल जाने पर शेष जल मिला लेवे। फिर गोद से ५ गुना मद्यार्क मिलाकर १२ घण्टे रहने देवें। पश्चात् अच्छी तरह चलाकर छान लेवे। बाद मे और मद्यार्क मिलाकर १०० भाग पूरा करे।

मात्रा—३० से ६० बूद, दिन मे ३ बार, रक्तस्राव रोधनार्थ।

उपयोग—हीरादोखी गोद रक्तातिसार, रक्तप्रदर, अत्यार्तव, रक्तार्श, उर क्षत, रक्त वमन, नासारक्तस्राव आदि मे व्यवहृत होता है। सद्योव्रण (घाव लगने) पर इसका चूर्ण दवा देने से या निष्कर्ष लगाने से रक्तस्राव तुरन्त बन्द हो जाता है और घाव भी मिट जाता है।

(गा औ र से साभार)

अहितकर—इसकी अधिक मात्रा गुर्दे, फेफडे और तिल्ली को नुकसान पहुचाती है।

निवारण—कतीरा। (व. च.)

हीराबोल—देखिये बोल' भाग ५ के पृष्ठ २३५ पर।

हुरा (EXCOECARIA AGALLOCHA)

यह एरडादिकुल (Euphorbiaceae) का एक वृक्ष होता है। अग्लोचा=सुगन्धयुक्त लकड़ी वाला वृक्ष। सर्वदा हरा, क्षीरी, छोटा वृक्ष या बडी झाडी। पान-बीच मे मासल और चिमडे, २ से ४ इच लम्बे, $1\frac{1}{2}$ से २ इच चौडे अन्तर पर, लगभग लम्ब गोल, नोक युक्त, अखण्ड। वृन्त आध से सवा इच लम्बा। गिरने के पहले कितने ही पुराने पान गहरे लाल हो जाते है। सूखने पर हलका भूरा फूल सूक्ष्म, सुगन्धयुक्त, पीले हरे। नर फूल वृन्त रहित १ से २ इच लम्बी मञ्जरी मे। मादा पुष्प वृन्तयुक्त, कलञ्जी मे, मादा फूल की कलञ्जी आधा से एक इच लम्बी अलग। डोडी का कद अति विविध गहराई मे ३ खण्ड युक्त, लगभग आधा इच तक बडे। बीज चिकने लगभग





हुरा
EXCOECARIA AGALLOCHA LINN

गोल । छाल ताजी होने पर उसमे से दूध जैसा रस निकलता है । दूध जम जाने पर काला बन जाता है। लकडी सफेद और नरम होती है । पुष्प और फल मई-जून मे ।

उत्पत्ति स्थान—

वङ्गाल, बिहार, मद्रास, कर्णाटक, अण्डमानादि ।

नाम-

स–धूम्रवृक्ष । हिं –हुरा । ब –गगवा, गेंगवा, गेरिया । म –गेवा, पु गाली, सुरिंद । ओ -गोवन । मला.–गेत्रा, सुरन्ड कु गली । क –हरा, हरो । ता –अगदिल,अगि, आम्बालत्ति। ते –चिल्ला, टेल्ला । अ –ब्लाइंडिंगट्री (Blinding Tree) ले -एक्स कोइकेरिया अग्लोचा (Excoecaria Agallocha Linn) ।

उपयुक्त अङ्ग—छाल ।

गुण धर्म और प्रभाव—

दूध तीव्र रेचन और विषहर है । त्वचा से लगजाने पर दाह उत्पन्न करता है । नेत्र मे चला जाने पर नेत्र सूज जाते है। कभी आख फूट जाती है दूध लगजाने पर दही या मक्खन का अजन कर लेना चाहिए एव दही वाली पट्टी बांधनी चाहिए । नाक को लग जाय तो भयकर जलन करता है और सूज भी जाता है । राल कामोद्दीपक और धातुपौष्टिक है ।

उपयोग-

कुष्ठ, गलत कुष्ठ, व्रण और त्वग् रोग पर दूध को तैल मे मिलाकर लेप किया जाता है। कुष्ठ पर दूध लगाने से पक कर कीटाणु नष्ट हो जाते हैं, फिर आराम हो जाता है ।

विच्छू के विष पर दूध का लेप किया जाता है । पानो के क्वाथ से व्रण को धोने पर कीटाणु नष्ट हो जाते हैं। अपस्मार मे पानो का क्वाथ दिया जाता हे ।

विशेष—मुख्यमूल और जमान के पास के तने की छाल के भीतर से राल सदृश मिलता है । यह नरम, हल्का और लाल रङ्ग का होता है। हुरे की लकडी का धुआ नेत्रो को लगे तो सूज जाते है। बाजार मे बिकने वाला तगर हुरे की उपजाति का है। वह माडागास्कर और जजीबार से भारत मे आता है। औषधि रूप से पान, छाल, राल और दूध उपयोगी है ।

(गा० औ० र० से साभार संकलित)

हुर-हुर श्वेत (GYNANDROPSIS PENTAPHYLLA)

यह गुडूच्यादि वर्ग और वरुणादि कुल (Capparidaceae) की वनस्पति है। यह खेत, खण्डहर और परती जमीन तथा गन्दी भूमि मे अधिक उत्पन्न होती है। इसका क्षुप सीधा २ से ४ फीट तक ऊचा होता है। इसकी सारवें टेढी-मेढी और रोमयुक्त होती हैं। इसके पत्ते प्राय पाच दल वाले होते हैं और प्रत्येक दल डेढ दो इच लम्बा अण्डाकार और अणीदार होते हैं। पत्रदण्ड दो इच लम्बा होता है। कभी-कभी सात दल वाले और कही तीन ही



दल होते हैं। डण्डी के अन्त वाले भाग मे छोटे छोटे त्रिदल पत्ते सटे से रहते है और इस पर क्रमश फल और फलिया लगा करती है। फूल सफेद रग के आते है और फलियाँ २-३ इच लम्बी और गोल होती है। इनमे से राई के समान कालापन मिश्रित भूरे रङ्ग के बीज निकलते है। वरसात का पानी पडने पर बीज अकुरित होकर पौधे के रूप मे बढते है और वरसात के अन्त में इसके क्षुप पुष्पफलादि युक्त बहुत देखने में आते हैं और वसन्त ऋतु तक वे नष्ट हो जाते हैं।

उत्पत्ति स्थान—

यह बङ्गाल, बिहार, उडीसा, तिरहुत, चम्पारन तथा गरम प्रदेशो मे अधिक उत्पन्न होती है। सिलोन की भाड़ी और खेतो मे बाहुल्यता से मिलती है।

नाम—

स.—ब्रह्म सुवर्चल, ब्रह्म सुदुर्लभा, सूर्य्यावर्त, अर्कपुष्पिका इत्यादि। हि—ब्रह्म सोचली, ब्रह्मसोचली, सोचली, हुरहुर, हुलहुल, करालिया। ब.—बनशलते, हरहुरिया, हुरहुरिया, हुडहुडिया। राज—हुलहुल, वगरा। सन्ताल—सेतकट अरक। म.—मावली। उ. प्र—कठल हरहर। गु—सूर्य्यमुखी फूल। सिंव—किनरो। ता—वेलर, नेरवेल्ला। ते—वामित वेलकुरा। मलय—तैवेला, करवेला। बो—तिलवण, फडुघु। ले—जिनान्ड्रोप्सिस पेन्टाफिल्ला (Gynandropsis pentaphylla D C) व (Gynandropsis gynandra [Linn] Briquet) पीले फूल की हुरहुर को लेटिन मे (Cleome viscosa Linn) कहते है।

रासायनिक संगठन—

इसके क्षुप मे उडनशील तैल रहता है, वह अधिक गरमी लगने पर उड जाता है। बीजो का तैल यन्त्रो से निकालने पर हरा तैल निकलता है। इसका गुण-धर्म राई तथा सरसो के तैल के समान है। सफेद हुलहुल के बीजो मे से २५% हरा गाढा तैल निकलता है। उसमे अम्ल सत्व ६ ४ प्रतिसहस्त्र, वसापरिवर्तित, आयोडीन, उग्रवास वाला उड्डयनशील तैल और मृदु राल मिलते है।

उपयुक्त अङ्ग—बीज पान और पचाङ्ग।

मात्रा—बीज का चूर्ण १½ से २ माशे। बालको को १ से २ रत्ती।

गुण-धर्म और प्रयोग—

सक्षेप मे—रस- कटु। वीर्य-- उष्ण। विपाक—कटु। दोषघ्नता--वात कफ है।

हुर-हुर- कटु, उष्ण, वातहर, गुल्म, उदर, कर्णशूल, कृमि, ज्वर का नाशक है। (रा नि)

बीज—-उत्तेजक, स्वाद मे कडवा, चरपरा, उष्ण वीर्य, अग्निदीपक, ग्राही, दाहजनक, स्वेदन, उदर वात शामक, गोल कृमियो को गिराने वाला और चर्म नाशक है।

बीजों का तैल—उष्ण, स्वेदल, दीपन, उदर वात हर, कृमिघ्न और चर्म रोग नाशक है। बालराई के समान तीक्ष्ण, गुल्म, उदर शूल, आफारा, प्लीहा वृद्धि; उदर रोग पर प्रयोजित होता है। बालको के आक्षेप पर हितावह है।

पानो का शाक—अर्श और वात रोगी के लिए हित कर है।

पानो का रस—शोथ शामक। मूल--कृमिघ्न।

नव्य मतानुसार—

सफेद और पीली हुल-हुल के बीजो की क्रिया राई के समान है। पीली के पान अधिक उग्र हैं, पीली के पानो के लेप से त्वचा तुरन्त लाल हो जाती है। सामान्यत यह दाहजनक, दीपन, उत्तेजक और कृमिघ्न है।

मूल—उत्तेजक और स्वेदल है।

पचाङ्ग चूर्ण—वातहर, दीपन,पाचन, स्वेदजनक और उत्तेजक है। (आ० नि०)

उपयोग—

गोल कृमियो को गिराने के लिए पीली हुल-हुल के बीज उपयोगी है। अन्तर शोथ कम कराने के वास्ते इसके पानो का लेप राई की अपेक्षा अधिकतर कार्य करता है। बीजो को नीबू के रस या सिरके में पीसकर लेप करने से दद्रु, कण्डू, पामा, व्युचो आदि रोग दूर होते हैं। हुल हुल के बीज और हीग को पीसकर लेप करने से जुए मर जाती हैं। त्वचा मे उग्रता लाने और फाला उठाने के लिए उसमें राई के समान गुण रहा है।



पानो का रस तैल मे मिलाकर वधिरता मे और कर्ण पाक पर कानो मे डाला जाता है। त्वचा मे लाली लाने और फाला उठाने के लिये पानो की पुल्टिस ववाकर बाधी जाती है।

प्रयोग—

शीत ज्वर पर (अ)—दाहिने हाथ की कलाई के जोड पर बाहर की ओर हुल-हुल के पानो की १ तोले की टिकिया बांधने से वहां पर ३-४ घण्टे मे एक फाला हो जाता है, फिर ज्वर दूर हो जाता है। फाला हुआ है, उसे सुई से फोड कर उस पर घृत लगा देना चाहिए। फाले मे से जल निकाल डाले, किंतु ऊपर की त्वचा को न निकालें, यह प्लेग की गाठ पर भी हितावह है।

(आ) बीजो का चूर्ण सुदर्शन अर्क के साथ सेवन कराने से ज्वर जल्दी शमन हो जाता है। या ताजे सफेद हुल-हुल का रस ½ से १ तोला देने से उत्तेजना आती है और ज्वर का ह्रास हो जाता है।

अर्श रोग पर—बीज का चूर्ण २-२ माशे मिश्री मिला कर प्रात. साय सेवन करते रहे, तथा हुर-हुर के पत्तो के फाण्ट से आबदस्त लेते रहे।

आक्षेपक वातहर—हुल-हुल के पानो का फाण्ट दिन मे २ या ३ वार पिलाने से बालको के अङ्गो का खिचाव दूर हो जाता है।

उदर कृमि पर—बीजो का चूर्ण दिन मे दो बार थोडे गुड के साथ सेवन करावे। फिर चौथे रोज सुबह एरण्ड तैल का जुलाब देने से आंतो से गोल कृमि निकल जाते हैं। सूक्ष्म उदर कृमि हो तो बीजो का चूर्ण जल के साथ देने से ही मर जाते हैं। एव उनकी नयी उत्पत्ति वन्द हो जाती है।

प्लीपा वृद्धि—बीजो का चूर्ण, काटेदार करञ्ज (लता करञ्ज) के पानों के रस के साथ दे, दिन में दो बार देते रहने से थोडे ही दिनो मे प्लीहा कम हो जाती है।

उदर शूल पर—बीजों का तेल मिश्री या बताशे मे देने से शूल दूर हो जाता है।

कर्ण शूल पर—सफेद हुलहुल के पानो का रस कान में डालने से कर्णशूल दूर हो जाता है। किन्तु इससे बहुत जलन होती है अत तैल या शहद मिलाकर डालना चाहिए।

कर्ण पाक पर—पीली हुलहुल के पानो के स्वरस को तेल मे मिला स्वरस जलाकर तैल सिद्ध करे। उस तैल को कान मे डालने से घाव भर जाता है और पूय स्राव वन्द हो जाता है।

नेत्र पीडा—हुलहुल के पानो की पुल्टिस बना कपडे मे लपेट कर नेत्र पर बाध देने से वेदना दूर होती है और शोथ शमन हो जाता है।

व्रण पर—हुलहुल के क्वाथ से व्रण को धोने से कीटाणु मर जाते हैं और घाव का सत्वर शोधन होता है।

दाद पर—हुलहुल का स्वरस मलने से कीटाणु नष्ट होकर दाद दूर हो जाता है।

गलगण्ड—सफेद हुलहुल के पान और लहसुन को पीस पुल्टिस करके बाधने से पच्यमान गलगण्ड फूल जाता है।

ताम्र भस्म—इसके पुटो से बनने वाली ताम्र भस्म सुन्दर नीले रङ्ग की होती है, वह विषम ज्वर, प्लीहावृद्धि, यकृद्वृद्धि, यकृद्दाल्युदर और अन्य उदर रोगो मे लाभ पहुँचाती है।

रौप्य भस्म—हुलहुल के पुटो वाली रौप्य भस्म नेत्र शूल पर विशेष हितकर है, ऐसा कितने ही चिकित्सको का अनुभव है। (गा श्री र से साभार)

बाइन्टे पर—इसके पत्तो के काढ़े को ५-६ तोले की मात्रा से दोनो समय सेवन कराने से लाभ होता है।

सब प्रकार के विष पर—इसके १½ तोले बीजो को जल मे पीसकर पिलाना चाहिए। —अ० वू० द०

पानीझला—इसके पत्तो का काढा छ तोले की मात्रा मे दिन मे दो बार पिलाने से पानी झरा या पैरा टाइफाइड ज्वर छूटता है।

आधाशीशी—हुलहुल के पत्तो के रस मे हुलहुल के बीजो को खरल करके कपाल पर दो तीन दिन तक लेप करने से आधाशीशी की वेदना मन्त्र शक्ति की तरह वन्द हो जाती है।

बहुमूत्रता पर—हुलहुल के बीजो को अजवाइन और गुड़ युक्त सेवन करने से बहुमूत्रता दूर होती है।

दन्त शूल पर—अगर किसी की दाढ मे कीट लगी हो तो इसके पत्तो का रस दाढ मे भर देने से कीड़ा मर जाता है और दर्द भी दूर हो जाता है।

पीनस पर—इसके स्वरस की नस्य देने से पीनस के कीडे मरकर झड़ जाते है।

कफ पर—इसके पचाग का चूर्ण सेवन करने से कफ नष्ट हो जाता है।

शीत ज्वरे—हुलहुल का रस और मकोय का रस मिलाकर ज्वर मे प्रथम हाथ पैरो मे मालिश करने से शीत ज्वर छूट जाता है।

बिच्छू विष पर—इसके स्वरस या बिच्छू के काटने पर नस्य देते हैं तथा नमक युक्त रस मे भी लगाते है।

—वैद्य श्री दुर्गाप्रसाद जी शर्मा म आयु. के आभार

अहितकर—यदि यह ज्यादा प्रयोग कराया जाय तो पित्त प्रकुपित हो जाता है और रोगोत्पन्न करता है। उसमें पित्त शामक उपचार करना चाहिए।

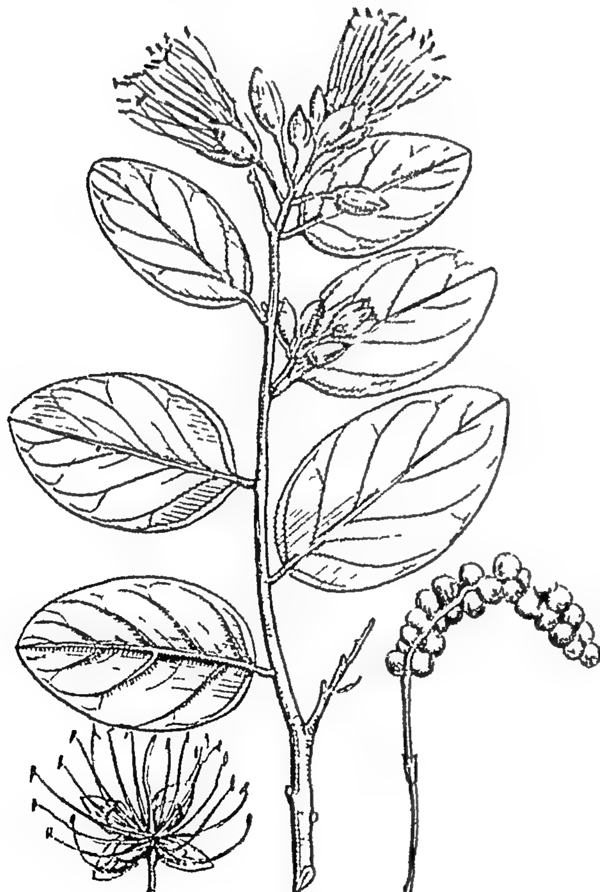
—धा० व० वि०

हुलहुल शाक—देखिये इसी भाग मे हिलमोचिका। हू (हाऊ) (फारीकून) देखिये 'वनज' भाग ५ पृष्ठ ४० पर।

हृत्पत्री—देखिये—डिजीटेलिस' भाग ३ पृष्ठ २८३ पर।

हेमकन्द (Maerua Arenaria)

यह वरुणादि कुल (Capparidaceae) की एक वेल होती है। एरीनरिया=रेती मे उगने वाला। यह जङ्गल मे होता है इसका कन्द १½–२ सेर का होता है। इसको जङ्गली लोग काठियावाड मे बेचने के लिये बाजार मे लाते हैं। स्वाद मुलहठी के समान कुछ मधुर और राई जैसा चरपरा है। इसे टुकड़े किये बिना रख देने तो यह सड जाता है। इस हेतु से आने पर तुरन्त रुपये के समान पतले टुकडे करके सुखा देना चाहिए। फिर वायु न लगे, उस तरह बन्द बरतन मे रखें या अर्क निकाल लेवें। बम्बई मे यह गुजराती पसारियो के यहा मिलता है।



हेमकन्द
MAERUA ARENARIA HK f ETH.

इसकी बेल कुछ कठिन होती है। वृक्ष आदि आश्रय स्थान पर ऊचाई तक चढ जाती है। डण्डी श्वेताभ और कुडकीली। पान—लम्ब गोल विविध आकार के। पुष्प हरी आभा वाले सफेद। विशेषत शीतकाल में आते हैं। फली—काली मिर्च की मंजरी के समान। मूल मे से रतालू जैसे आकार के सफेद रग के कितनेक उपमूल निकलते हैं। वे अगुली से लेकर हाथ की कलाई जैसे मोटे होते हैं, जो मूल मिट्टी वाली गहरी भूमि मे हो वे पतले, विषम आकार की छोटी मोटी गाठो वाले और १ से ३ फीट लम्बे होते हैं। ऊपरकी छाल बहुत पतली भूरे रग की। मूल के बीच में एक सछिद्र कडकीली सफेद पतली खडी सलाका। गन्ध—पीसी हुई राई के समान उग्र। स्वाद पहले मधुर फिर चरपरा लगता है।

पान—अन्तर पर आध से साढ़े तीन इच लम्बे और ½ से २½ इच चौडे। फली २ से ५½ च लम्बी। बीज—तपखिरिया या भूरे रग का, मध्य भाग मेस कुचित। फली



धार डोरी से गुथी हुई माला के समान। चित्रावलोकन कीजिए।

उत्पत्ति स्थान—

कटीले और जमीन पर छाने वाले बबूले की झाडी में, बाड़ो मे और विशेष करके कीचड वाली जमीन मे हेम कन्द उगता है। यह पश्चिमी हिमालय, मध्यभारत, पञ्जाब, सिंध, दक्षिण भारत, कच्छ और काठियावाड मे होती है।

नाम—

स.—दरवकन्द, धवलकाद, विसर्प वेरी। हि—हेमकन्द। गु.—दूधियो, हेमकन्द। म—विकट। काठि—घोलोकटकियो, हेमकन्द। कच्छी—घोरो पिञारो। ते—पट्टुतिगे, भूचक्रम्। ता—भूमि चक्कराई। लै—माइरुआ एरीनरिया (Maerua Arenaria Hook)।

उपयुक्त अङ्ग—पचाग और कन्द।

मात्रा—कन्द चूर्ण १ से २ माशा तक।

गुण धर्म और प्रयोग—

यह उष्ण, पाचक, विषघ्न, कीटाणु नाशक, रक्तशोधक, वेग शामक और कफघ्न है।

यह बालको के लिए अति उपयोगी औषधि है। काठियावाड-गुजरात मे यह घरेलू औषधि के रूप से प्रयोजित होती है। यह विषर्प की श्रेष्ठ औषधि होने से इसे विसर्प वैरी सज्ञा दी है।

उपयोग—

यह बालरोग की निर्भय औषधि है। प्राचीन ग्रन्थो में इसका उपयोग हुआ है या नही, यह नही जाना जाता। संस्कृत नाम जो दिये हैं, वे सब गुण-धर्म के अनुसार नये दिये हैं। सौराष्ट्र और गुजरात मे दीर्घकाल से घरेलू औषध रूप से व्यवहृत होता है जिन स्त्रियों के शरीर मे रतवा हो उनको इसका मूल दूध मे पीसकर पिलाते हे जो सार्सापरिला के समान कार्य करता है।

प्रयोग—

विषर्प पर—इसका उपयोग उदर सेवन और बाह्य लेप रूप से होता है। गुजरात मे यह विषर्प प्रसिद्ध औषधि मानी जाती है। बालक को दूध मे घिस कर पिलाते है एव लेप भी करते है।

बालको के प्रतिश्याय पर—प्रतिश्याय मे और छाती मे कफ वृद्धि हो गयी हो तो इसके मूल को दूध में घिसकर छाती पर लेप किया जाता है। साथ में ज्वर हो तो घिसकर पिलाया जाता है।

बालकों के अपचन—(अ)—बालको को दूध न पचा हो, वमन और सफेद दस्त होते हो तो हेमकन्द की फली को दूध मे घिसकर पिलावें।

(आ)—फली को बीज सह जला राखकर उसे दूध मे मिलाकर पिलाने से अपचन जल्दी दूर हो जाता है। मूल और फली के अभाव मे डांडी, पान या फूल भी व्यवहृत किये जाते हैं।

क्षयरोग मे प्रस्वेद पर—राजयक्ष्मा मे दूसरी और तीसरी अवस्था मे रात्रि को प्रस्वेद बहुत आता है। प्रस्वेद आने पर निर्बलता बढ़ जाती है। ऐसे रोगियो को हेमकन्द का चूर्ण १॥ से २ माशे जल के साथ देने से प्रस्वेद कम हो जाता है।

जीर्ण ज्वर पर—हेमकन्द का चूर्ण १॥-१॥ माशे दिन में २ बार गिलोय सत्व और शहद के साथ देने से १ सप्ताह मे ज्वर दूर हो जाता है।

व्रण और फाले पर—हेमकन्द को जल से घिसकर लेप करे।

श्वास-कास पर—इसका चूर्ण शक्कर के साथ देने से कफ शिथिल होकर सरलता से निकल जाता है। कफ प्रधान तमक श्वास मे इसका अर्क पिलावें या १॥—१॥ माशा चूर्ण १-१ घण्टे तक २-३ बार निवाये जल के साथ देवे। (गां औ र से साभार)

प्लेग पर हेमकन्द की जड पानी या दूध मे पीसकर प्लेग की गाठो पर बहुत से लोग लेप करते है।

(व व. गुजराती से)



हैमवती वचा (IRIS VERSICOLOR)

यह कुंकुम कुल (Iridaceae) की क्षुप जाति की वनस्पति है। मूल-कन्द। पुष्प—नीला, लाल, आसमानी। पुष्प रंग भेद से तीन प्रकार के होते हैं। चित्रावलोकन कीजिए।



हैमवती वचा
IRIS VERSICOLOR LINN

उत्पत्ति स्थान—

यह भारत में काश्मीर और हिमालय में बहुतायत से प्राप्त होती है।

नाम—

स.—हैमवती वचा। हि.—हैमवती वचा, बालवच। गु.—बालवच। म.—बालखेखंड। ले.—आइरिस वर्सी-कोलोर (Iris versicolor Linn)।

उपयुक्त अङ्ग—मूल।

गुण धर्म और प्रयोग—

मात्रा—चूर्ण २ से ४ माशे। अनुपान मधु।

रस—महाकषाय। गुण—नैरातीय, कफ नि:सारक। वीर्य—उष्ण। विपाक—कटु। शमन—कफपित्त। रोगोपयोग—प्रतिश्याय, कास, आमवात। (संकलित)

हेम सागर (KALANCHOE LACINIATA)

यह घन्वन्तरि [पर्ण बीज] कुल (Crassulaceae) की एक वनस्पति होती है। इसकी बडी झाडी होती है। इसकी ऊचाई १-२ मीटर तक होती है। इसका तना मांसल होना है। पत्र काण्ड के दोनो ओर पक्षाकार होते है। पत्र लम्बे और करोत के समान दाते युक्त। फूल—पुष्पदण्ड के गुच्छ वद्ध रूप मे होते हैं। पुष्प खिलने पर झाड फूलो से ढक जाता है और सुन्दर दिखाई देता है। पुष्प का बहिर्व्यास ४, पुष्पदल ४, पुष्पदल मूल नल के समान, जिस तरह कलमी शाक के पुष्प दीखते है। पुंकेसर समस्त प्राय: समान। वर्षाकाल मे फूल और शीतकाल मे फल होते हैं।

नाम—

स—हेमसागर। हि.—व—हेमसागर। ता-माला कल्लि। बोम्बे—जख्म हयात। म—आराम साराम। ले—कलन चोई लेसिनिएटा (Kalanchoe Laciniata D c)

उपयुक्त अङ्ग—पत्र।

गुण धर्म और प्रभाव—

इसके रसदार पत्ते व्रण और जख्म पर लगाने से

बहुत लाभ पहुचाते है। ये जलन को दूर करते है और जख्म को जल्दी भर देते है। एन्सली का कथन है कि—"मैं यह विश्वास के साथ कह सकता हू कि व्रण को साफ करके भरने मे तथा सूजन को दूर करने मे इसके पत्ते बहुत उपयोगी है। इसका रस रगड़ और अग्नि से जले हुए स्थान पर लगाने से भी बहुत लाभ पहुँचाता है। ताजा घाव और रगड़ पर एक रक्तश्राव रोपक औषधि की तरह इनका उपयोग किया जाता है।"

उपयोग—

विगड़े हुए फोड़े—इसके पत्तो का लेप करने से विगडे हुए फोडे सुधर जाते है।

पित्त शोथ—इसके पत्तो का लेप करने से पित्त शोथ बिखर जाती है।

अतिसार—इसके पत्तो का कल्क दुगुने पिघले हुए मक्खन मे मिलाकर पिलाने से अतिसार और आमातिसार मिटता है।

पथरी—पथरी वाले को भी अतिसार वाला उक्त प्रयोग लाभ पहुचाता है।

अग्नि से जलना—मोच और अग्नि से जले हुए स्थान पर इसका लेप करने से शान्ति मिलती है।

ताजे घाव—ताजे घाव और रगड़ पर इसका लेप करने से खून का बहना बन्द हो जाता है। किसी घाव पर इसके रस मे भिगोये हुए कपडे को बधा रखने से वह बहुत जल्दी भर जाता है। दूसरी औषधियों से इतना जल्दी नही भरता है। (ब च.से)

कोकन मे इसका रस पैत्तिक अतिसार मे प्रयोग करते है। (डीमक)।

क्षत को विशुद्ध करने मे और प्रदाह को मिटाने के वास्ते यह एक मूल्यवान औषधि है। (डा. एन्सली)

(भा व ब से साभार सकलित)

हेरम्ब (EPICARPUS ORIENTALIS)

हेरम्ब का वृक्ष वडा होता है। इसके पत्ते वेर के समान होते हैं। इसकी लकडी दतून करने के काम में आती है।

उत्पति स्थान—

बगाल, दक्षिण,दक्षिण महाराष्ट्र मे यह पैदा होता है।

नाम—

स —हेरम्व, कटकी, खरपत्र, दत धावन। हि —हेरम्व वज्रदती। म —दातणी, हेरम्व वृक्ष। गु —वज्रदन्ती। ले एपिकार्पस ओरीऐन्टेलिस (Epicarpus orientalis)।

गुण-धर्म-और प्रभाव—

हेरम्ब कफ और वात को नष्ट करने वाला होता है। इसकी जड़ वमनकारक होती है। इसकी लकडी का दतून दातो को मजबूत करता है।

(शा वि.)

होलोंग (DIPTEROCARPUS PILOSUS)

यह सर्जरसादिकुल (Dipterocarpaceae) का एक बड़ी जाति का वृक्ष होता है।

उत्पत्ति स्थान—

यह सिलहट, चटगाव, ब्रह्मा, अण्डमान द्वीप पुञ्ज और आसाम मे पैदा होता है।

नाम—

आसाम—होलोंग। ले —डिप्टेरोकार्पस पिलोसस (Dipterocarpus Pilosus Roxb.)।

उपयुक्त अङ्ग—फूल।

गुण—धर्म और प्रभाव—

इसके फूल सुजाक, पुरातन प्रमेह और इसी प्रकार की दूसरी मूत्रेन्द्रिय सम्बन्धी बीमारियो मे उपयोग में लिए जाते है। चित्रावलोकन आगामी पृष्ठ पर करें

(ब. च. से

हंसराज नं. १ (Adiantum Lunulatum)

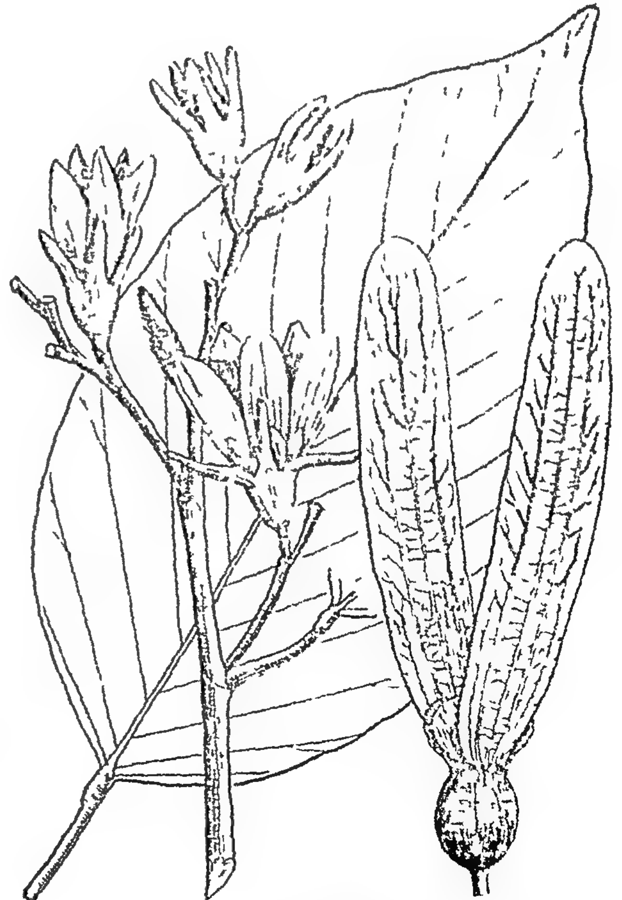
यह गुडूच्यादि वर्ग और हंसराजादि कुल (Polypodiaceae) का क्षुप होता है। एडियेण्टम—वालसदृश शिरा वाले पर्ण। लुनुलेट्म—अर्धचन्द्राकार पर्ण। वर्षायु पुष्प रहित क्षुप। ऊचाई ४ इच से २ फीट तक। पान (Fronds) मूल पर रहे हुए छोटे कन्द (गाठ) से निकले हुए पत्र दण्ड पर। पत्र दण्ड के दोनो ओर थोडी दूर पर। पहले पीले फिर हरे, अन्त मे तेजस्वी हरे—काले। पत्र वृन्त—पतला लम्बा पौन से एक इच चौडा, किनारा अर्धचन्द्राकार, अनेक सूक्ष्म शिरायुक्त। बीज (Spores) पान के पिछली ओर किनारे पर चिपके हुए, सूक्ष्म पीटिका सदृश (इसे बोने पर क्षुप निकलता है) मूल और वृन्त लाल। पान—नीचे की ओर बडे, ऊपर की ओर क्रमशः छोटे-छोटे होते हैं। यह एक पत्र उद्भिद् है। पत्र कुछ कृष्ण वर्ण चमकदार होते है। पत्रशलाका पतली और लम्बी होती है, इसके दोनो ओर पाव आते हैं। पान एक ओर भग्न होते हैं। इसके किनारे और पत्र वृन्त चिकने और चमकीले होते है। शलाका कुछ समय बाद काली हो जाती है। पत्तो का किनारा ३/४ इच से १½ इच लम्बा और आधा से एक इच चौडा होता है। वृन्त की ओर का किनारा शलाका पर सीधा अथवा विषम होता है। ऊपर का किनारा गोलाई लिये हुए और बहुधा खाचेदार होता है। पत्तो के किनारे मे बारीक घसे होती हे। इनके ऊपर की किनारी के सिरो पर पीछे से बारीक झिल्ली आयी हुयी होती है, जिसमे रज ढकी रहती है।

विशेष वर्णन—हसराज के पान खुलने के पूर्व एक गुच्छे के मानिन्द किनारे अन्दर की ओर मुडे हुए होते है। यह वनस्पति अपुष्पा है और इसके वास्तव मे खरे फूल नही होते है परन्तु जिस उत्पत्ति द्रव्य मे से इसकी पुनरुत्पत्ति होती हैं उस द्रव्य को धारण करने वाली रज (Spores) और उसके ऊपर की सूक्ष्म झिल्ली (Sporanges) पान के पीछे की ओर आती है, जो देखने में पान के पीछे सूक्ष्म जन्तु लगे हुये हो या दाने उठे हुये हो ऐसा जो दिखाई देता है, उसको (Spores) स्पोर्स कहते हैं। इस परत के अन्दर जो रज होती है उसमे सपुष्प वनस्पति के बीज से प्रत्यक्ष फर्क होते है। किन्तु उनमे एक हरे पान जैसी जीभी (Prothallas) उत्पन्न करने की शक्ति होती है और इस जीभी मे पुनरुत्पत्ति करने के साधन इन्द्रिय और उत्पत्ति द्रव्य रहे हुए होते हैं।

भेद—पत्तो के आकार भेद मे इसकी अनेक जातिया होती हैं। वैज्ञानिक शोध मे इस कुल की सात जातिया मालूम हुई हैं, उनमे से मुख्य दो और हैं उनका सचित्र वर्णन आगे दे दिया गया है।

उत्पत्ति स्थान—

यह उत्तर भारत के सब प्रदेशो मे, सौराष्ट्र, दक्षिण भारत के पश्चिमीघाट, बिहार, बंगाल और राजस्थान मे होता है। यह अधिकतर पहाडो के झरनो, कुओ, शीत-



होल्लोंग
DIPTEROCARPUS PILOSUS ROXB

प्रधान स्थानो मे जहा छाया के साथ जमीन गीली रहती हो ऐसी जगहो में विशेष पैदा होता है ।

उत्पत्ति का समय—

वर्षा ऋतु है । परन्तु सदा तर रहने वाले छायादार स्थानो मे वारहो मास ताजा मिल जाता है ।

औषधि सग्रहकाल—शरद ऋतु (सितम्बर-अक्टूबर मास) इसका औषधि गुण छ मास मे कमजोर होजाता है और वर्ष भर मे विल्कुल जाता रहता है ।

नाम—

स.—हंसपादी, हसपदी, हसवती, कीटयाता, त्रिपादिका । हि—हसराज, हसपदी, हसपगी, काली झाट,काली झांप । व०—गोयाली लता, कालो झाट । गु—हसपादी, मुवारख, मुवारखीनोपालो, हसराज, काली हसराज। रा०, म०—हंसराज, राजहस, घोडखुरी । काठियावाड़ी-कालो हसराज । सयाली—दोवारी । ते०— हसपादमु । अ० फा० परिसिया वशा । अ०-मेडेनहेयर (Maiden hair) ले०—आडिआटुम लुन्युलेटम (Adiantum Lunulatum Burm) ।

उपयुक्त अङ्ग—पचांग ।

मात्रा—५ से ७ माशे तक स्वरस आधा से एक तोला । चूर्ण १ से ३ माशा ।

गुण धर्म और प्रभाव—

सक्षेप मे—रस मधुर, तिक्त, कपाय । विपाक-मधुर । वीर्य-शीत । गुण-गुरु, कण्ठ्य, रोपण, ग्राही, लेखन। दोष-शमन-वातपित्त शामक, कफनि मारक । शारीरिक अङ्गो पर प्रभाव-श्वासोच्छ्वास सस्थान ।

हसराज—गुरु, शीतवीर्य, रक्तविकार, विषप्रकोप, व्रण, विसर्प, दाह, अतिसार, लूताविष और भूतादि के आक्षेप (ग्रहदोष) तथा अग्निरोहिणी को दूर करने वाला है। (भा० प्र०)

कैयदेव जी ने शोथहर और व्रण रोपण गुण अधिक लिखे हैं । हसराज—चरपरा, उष्ण, रसायन, भूत बाधा (वालग्रह दोष) विष, अपस्मार और भ्रम का नाशक है । (नि० र०)

यूनानी मतानुसार—

प्रकृति—अनुष्णाशीत । गर्मी और खुश्की के साथ । दूषित दोषो को पतला करके निकालने वाला, कफनि.सारक, मूत्रजनन, आर्तवजनन और अपरापातन है । छाती की वेदना, श्वास, कास और प्रतिश्याय मे उपयोगी है ।

डाक्टरी मतानुसार-

रेचक तथा मूत्रल एव आर्तवप्रवर्तक है । यह कफ और श्वास के रोगों मे दिया जाता है। पसली के दर्द मे भी उपकारी है । इसे मूल ही के साथ काढ़े के रूप मे देना चाहिये । (सी एम. गुप्ता)

डा० देसाई के मत से हसराज कड़वा, कुछ सकोचक, खांसी को दूर करने वाला और कफनाशक है । इसमे कुछ मूत्रल धर्म भी रहता है । वच्चो के लिये यह बहुत उपयोगी औषधि है । इसके पचाग का शरवत विशेषतः वच्चो के कफ कास में वहुत दिया जाता है । वच्चों की खासी में हसराज के शरवत की मात्रा अधिक होने पर वामक धर्म दिखलाता है फिर भी कफ को यह वमन के द्वारा निकाल देता है, जिससे खासी मे राहत पहुचती है ।

बच्चों के ज्वर मे यह दवा गुजरात मे बहुत काम मे ली जाती है । पत्तो को जल मे पीसकर स्वरस मिश्री के साथ दिया जाता है । रतवा (विसर्प) की शोथ में इसके स्वरस का लेप किया जाता है । (जे रोव. अहमदाबाद)

यह शीत स्निग्ध है और रतवा मे लगायी जाती है। (सर्जन वस्नभुज)

उपयोग —

हसराज का उल्लेख चरक सहिता के भीतर कण्ठ दशेमानी और मधुरस्कन्ध मे तथा सुश्रुत सहिता के भीतर विदारीगन्धादि गण मे मिलता है । घरेलू औषधि रूप से गुजरात और सौराष्ट्र मे दीर्घकाल से इसका व्यवहार होता है ।

प्रयोग—

वाल झड़ने पर—सिर के वाल झड जाते हो, तो हसराज के पान जल में पीसकर लेप करने से लाभ होता है ।

कफज कास—कफज कास पर हसराज का क्वाथ अकसीर माना जाता है ।

मूत्राघात—प्रमेह से पेशाव बन्द होगया हो तो उस पर हसराज का क्वाथ पिलाया जाता है ।



विषर्प पर—हसराज के पानो को या हसराज और जल पीपल के पानो को पीसकर लेप करते रहने से २-३ दिन मे ज्वर और दाह सह बालको का विषर्प रोग दूर हो जाता है। कोई कोई लोग हंसराज के साथ गेरू को पीसकर लगाते है। इसके स्वरस को निवाया करके पिलाते भी हैं।

बालको का कफ प्रकोप—हसराज पचाग को जल के साथ पीस छान निवाया करके उसमे गुड या घक्कर मिलाकर पिला देने से एक वमन होकर कफ निकल जाता है, फिर व्याकुलता और खांसी दूर होजाती है।

मूत्रावरोध—हसराज के पचाग को ठण्डाई के समान पीस छानकर पिलाने और वस्तिस्थान पर हसराज का निवाया लेप करने से पेशाब साफ आजाता है।

फुफ्फुस रोग—इसके क्वाथ मे शहद मिलाकर पिलाने से सूखी खासी नष्ट हो जाती है। इसका शरवत पीने से छाती और फेफडो मे सचित कफ निकल जाता है और फेफडे साफ होजाते हैं।

फोडे फुन्सी—हसराज और मेंथी को जल मे पीस गरम कर लेप करने से फोडे फुन्सी जल्दी पक जाते है।

बालो के रोग—इसका तैल तैयार कर लगाने से बाल लम्बे व काले हो जाते है।

नकसीर की दवा—हसराज १ तोला, मुलहठी ½ तोला, इलायची छोटी १ माशा, गिलोय सत्व १ माशा, मिश्री ९ माशा। सबको पीसकर मक्खन मे मिलाकर ७ या ६ दिन सेवन करने से नकसीर बन्द होजाती है और नासिका से निकलने वाला बलगम भी मिट जाता है।

—वैद्य मक्खनलाल वरनवाल, चौक,
सुलतानपुर (अवध)

विशिष्ट योग—

क्वाथ हसराज—हसराज २॥ तोला को यवकुट कर १ सेर पानी मे क्वाथ करे, जब चतुर्थांश रहे मल छानकर ५ तोला शहद मिला गुनगुना पिलावें। गरमी मे मधु के स्थान पर मिश्री मिलावे।

गुण—इसके सेवन से एक घण्टे मे दमे का दौरा रुक जाता है।

क्वाथ हंसराज नं० २—हसराज (परसिया वशा) २ तोला, खतमी के बीज, खुब्बाजी के बीज ६-६ माशा, अंजीर १ तोला। क्वाथ बनाकर सेवन कराने से गरम नजला मिट जाता है।

हिम हंसराज—हसराज यवकुट ३ तोला, पानी २० तोला मे रात को भिगो दें। सुबह मिश्री मिलाकर गरमी के मौसम मे प्रयोग करने से गले की जलन और खुश्क खांसी को दूर करता है। ज्यादा दिन के प्रयोग से कलेजे की गरमी और कामला (पीलिया) को मिटाता है।

शरवत हंसराज—हन्सराज ५ तोला, मुलैठी २ तोला, खतमी के बीज, खुब्बाजी के बीज १-१ तोला, बैंदाना ६ माशा, बनफसा के फूल ३ तोला। रात भर पानी मे भिगो कर तीन पाव मिश्री से विधिवत् शरवत बनावे।

गुण—दमा, खासी के वास्ते अनुभूत है। चिपकने वाले कफ को नरम करके निकालता है। सीने के दर्द मे लाभकारी है। गरम, खुश्क खासी व मौसम गरमी के नजले एव जुकाम के लिये विशेष लाभप्रद है।

मात्रा—३ तोला। दोनो वक्त।

अहितकर—प्लीहा के रोगो को। **निवारण**—मस्तङ्गी और गुले बनफसा। **प्रतिनिधि**—बनफशा और मुलैठी।

—सकलित

हंसराज नं० २ (ADIANTUM CAPALLUS)

यह गुडूच्यादि वर्ग और हन्सराजादि कुल (Polipodiaceae) का क्षुप हन्सपदी के समान होता है। इसके पत्ते हन्स नामक जलचर के पाद तुल्याकृति होने से इसको भी हन्सपदी या हन्सराज कहते है। सूक्ष्म कैशिका सदृश शिरा वाले पान। वेनेरिस=शिरायुक्त पान। काण्ड लगभग खडा लगभग कोमल, ४ से ५ इच ऊचा, तेजस्वी, श्याम आभा वाला। पत्र काण्ड के दोनो ओर उपपत्रयुक्त, सिरे पर छोटे, तूरे पान की लम्बाई ४ से ६ इच, पान कोमल काला पान के ऊपर के हिस्से में ६ विभाग वाला। पान का अग्रभाग मोटा। पान का प्रत्येक विभाग आधा से एक इच



थोड़ा। निम्न पत्र वृन्त ½ इ,च लम्बा, पतला। बीज पत्र के अन्त के भाग में और बीज समूह गोलाकार सदृश होते हैं।

उत्पत्ति स्थान-

पश्चिमी हिमालय प्रदेश मे ८००० फीट की ऊचाई पर, दक्षिण भारत, मद्रास, बम्बई प्रदेश व अफगानिस्तान में पैदा होता है। ब्रह्म देश और मणिपुर की सीमान्त मे भी दिखाई देता है।

नाम-

हि —हन्सराज। ब.—हन्सपदी। काश्मीर—दुम-तुल्ली। अरबी—शेरुलजिन। फा—सिरसिया पेशानी। अ —मेडेन्स हेयर (Maidens Hair)। ले —आडिआ-टुम कापील्लस वेनेरिस (Adiantum cspillus Veneris Linn)।

उपयुक्त अङ्ग—पत्र।

मात्रा—५ से ७ माशे तक। स्वरस—½ से १ तोला, चूर्ण १ से ३ माशा।

गुण धर्म और प्रभाव-

यह वनस्पति ज्वर, जुकाम और खासी में लाभदायक होती है। पंजाब मे इसके पत्तो को कालीमिर्च के साथ ज्वर को दूर करने के लिये देते है। जुकाम के अन्दर इसके पत्तो का रस शहद में मिलाकर देने से लाभ होता है।

मेक्सिको मे इसके पौधे की चाय बनाकर कालिक (उदर शूल) मे देते हैं। इस चाय के सेवन से स्त्रियो को होने वाली मासिक धर्म की रुकावट भी मिट जाती है।

यह वनस्पति लुआबदार, कफ निस्सारक और छाती के रोगो मे हितकर होती है। कफ को दूर करने के लिये सारे यूरोप मे इस वनस्पति की बडी प्रशसा है। एक ऋतु-स्राव नियामक औषधि की तरह भी इसका रस मधु या चीनी के साथ उपयोग किया जाता है।

फ्रान्स मे इस वनस्पति से एक प्रकार का शरबत बनाया जाता है जो खासी, गले की खराबी और वायुनलियो की खराबी मे दिया जाता है। (व च से साभार)

हंसराज नं० ३ (ADIANTUM VENUSTUN)

यह गुडूच्यादि वर्ग और हन्सराजादि कुल(polypodiaceae) का क्षुप होता है। वेनस्टम—शुक्र के सदृश तेजस्वी सुन्दर। पान—३-४ उपपत्रयुक्त, झिल्लीदार, चौडे, क्रमश। पतले अग्र भाग युक्त, चिकने, नीचे की ओर किंचित नील हरित, छोटे वृन्त युक्त, सुन्दर, दातेदार अ कुर देने वाले २ खण्ड कभी ३ गड्टे। प्रत्येक गड्ढे के तल भाग मे सामान्यत. बीज समूह। पान—चक्राकार हृदयाकार होते है।

यह फर्न की जाति की अपुष्प क्षुद्र वनस्पति है जो पहाडो मे चट्टानो मे लगी हुई मिलती है। इसमे चारो ओर ८-१० अ गुल के सूत के से पतले गोल चिकने चम-कीले, ललाई लिये काले डण्ठल फैलते हैं। इन डण्ठलो के दोनो ओर बन्द मुट्ठी के आकार की अथवा बनिये के पत्र जैसी छोटी छोटी कटावदार पत्तिया गुथी होती है।

पत्र के आकार भेद से इसकी असख्य जातिया होती हैं। यह बूटी शाखा और पत्रसहित औषध के काम मे आती हैं। इसका औषधीय वीर्य छ मास में कमजोर और एक वर्ष मे पूर्णतया जाता रहता है।

उत्पत्ति स्थान-

यह उत्तर पूर्वी भारत के हिमालय प्रदेश मे ३००० से १०००० फीट की ऊचाई पर एव नेपाल, कामरूप(आसाम) और खासिया पहाड पर पाया जाता है। शिमला में यह आम है।

नाम-

स —हन्सपदी। हि.—हन्सराज, काली झाट। बोम्बे-मुबारक। प.—घास१ ता—मयूर शिखि। ले —आडि आदुम वेनसटम (Adiantum venustum g Don)।

उपयुक्त अङ्ग—पचाग।

मात्रा—५ से ७ माशा तक। स्वरस—½ से १ तोला। चूर्ण १ माशे से ३ माशे तक।

गुण धर्म और प्रभाव—

इसके पत्र सुगन्धि युक्त व उग्र, अधिक मात्रा में व्यव

हार क ने मे व सन हो जाती है। पत्र-बलकारक, सर्दि-निवारक। चाम्बा नामक स्थान के लोग इसके पत्रो का लेप भग्न स्थाव पर करते हे।

पजाब मे हन्सराज एक साधारण औषधि है। यह वेदना निवारक है एव सर्दि होने पर प्रयुक्त होती है। इसमे ऋतुकर और मूत्रकर गुण है। कविराजो ने भिन्न भिन्न Adiantum के भेदो का भिन्न भिन्न गुण वर्णन नही किये है, उन्होने सबके समान गुण है कहकर विश्वास किया है। हकीम इसको कुत्ते के विष पर एव ज्वर के पश्चात् की दुर्बलता मे व्यवहार करने को कहते हैं। इसमें बालो के गिरने की व्याधि को दूर करने की शक्ति है।
(डा० वाट) —भा. व. व. से साभार

हन्सपदी विशेष (गजकेसर) (DRYOPTERIS CRENATA)

यह हन्सपदी कुल (Polypodiaceae)× का क्षुप होता है। जिसको लेटिन में (Dryopteris crenata o. kze) कहते है। ड्रायोप्टेरिस=महा पूर्णाङ्ग प्रजाति। क्रीनाटा=विदार। इस वनस्पति का क्षुप भी मयूरशिखा, हन्सपदी आदि के समान पत्थरो के सलो मे जहा काफी पानी बहता रहता है और ठण्डक रहती है वहा होताहे।

इसका क्षुप एक से तीन फीट तक ऊचा होता है। इसके मूल के पतले तन्तु कत्थई रग के होते हैं। ऊपर कद

×हस राज कुल-(Polypoodiaceae)हसराज अदृश्य बीज वनस्पति के अन्दर की वनस्पति है। इस कुल की वनस्पति की पुनरुत्पत्ति स्त्री, पु'-केसर जैसी इद्रियो से नही होती है। इसलिए अन्य कुलो के समान इसमें फूल नही आते। अत. इस कुल की वनस्पतिया अपुष्प वनस्पति कहलाती हे। इस कुल की वनस्पतियो के पान खिलने के पहले एक गुच्छ के समान अपने अन्दर मुडे हुए होते है। इस वनस्पति के सत्य फूल नही होते तो भी जिस उत्पत्ति द्रव्य से इसकी पुनरुत्पत्ति होती है उस द्रव्य को धारण करने वाली रज(Spores) और इसके ऊपर की सूक्ष्म कवच (Sporanges) पान के पीछे की ओर आती है। इसके कवच के अन्दर जो रज होती है उसमे सपुष्प वनस्पति के बीज के जैसे प्रत्यकुर होते है वैसे प्रत्यकुर नहीं होते। किन्तु इसमे एक हरे पान के समान जीभी (prothallas) उत्पन्न करनेकी शक्ति होती है और इस जीभी पुनरुत्पत्ति करने के साधन या इन्दिया और उत्पत्ति हुए द्रव्य रहे हुए होते हें।

इस कुल की वनस्पत्ति मे मादक, विदाही, ग्राही, मूत्रल, वान्तिकारक, चिरगुणकारी पौष्टिक, अपलेपक और वातहर आदि गुण रहे होते हे। (व० व० गुजराती)

उत्पत्ति स्थान-

(१) यह बूटी कुम्भलगढ (उदयपुर) राजस्थान के पास मझेरा ग्राम से केलवाडा, कडिया, सदुको का गुडा, आतरी, आतरी से आगे बलाई के घर के पास नकायन का पेड है वहा से जेतारण ग्राम जाने के रास्ते की नाल मे एक मील दूरी पर बाई तरफ पहाडी के पत्थरो मे यह (Dryopteris crenata o kze) हसपदी विशेष ('गजकेसर') बूटी जहा-तहाँ पत्थरो की सधियो मे लगी हुई है।

(२) जरगाजी और पलामा के बीच बनास नदी है वहा भी जरगाजी की ओर है।

(३) जेतारण ग्राम का वाला (नला) के ढावे पर पीदाणें खावें जब नाल है उसमे भी है।

(४) इसकी अन्य जातियें जैसे (1) Dryopteris Brbigera B (Mrooe) Kuntze. (2) Dryopteris blandfordii (Hope) C chr. (3) Dryopteris filixmas (Linn) Schott. (4) Dryopteris marg ineta (Wall) christ. (5) Dryopteris odontoloms (Moore) C chr. (6) Drypoteris Lchimperiana (Hochst) C chr उक्त जातियें जिनमे ३ नबर Dryopteris filixmas (Linn) Schott को छोड़कर सब ही हिमालय पर्वत पर ४००० से १०००० फीट की ऊचाई पर एलपाइन, काश्मीर से सिक्किम, चाम्बा, मसूरी पर पायी जाती है।

[ग्लो. इ. मे. प्ला. ३]

होता है जिससे आगे से आगे शाखें फूटती जाती हैं और कन्द की लम्बाई बढ़ती जाती है। यहां तक कि एक क्षुप की मूल की लम्बाई फीट दो फीट तक चली जाती है। जैसे २ शाखें निकली थी कन्द पर मरोडी दार हिस्सा अलग अलग मालूम होता है और उन पर बहुत सुन्दर मखमल के समान मुलायम सुनहली कत्थई झांई मे केसर के तन्तुओं से लदा रहता है।

कन्द का रङ्ग पीला जिसका तोडने से चोपचीनी वत् साफ टूटता है। टूटे भाग के अन्दर की गोलाई मे काले घोडे के बाल के समान तीखे बालो के कई सिरे पीले गूदे मे निकले होते है। कन्द समग्र गहरा पीला। पीलेपन की अवस्था में वस्त्र पर लग जाने से इसका पीलापन फिर नही जाता। कन्द स्वाद मे निर्गुण्डीवत् कडुआ, गन्धरहित होता है।

शाख चोपहल जो व्यास में आधा इन्च के होती है। शाख पर हंसपदी के समान सुन्दर मुलायम पत्र आते है। पत्ते एक सीक पर आठ के लगभग होते हैं और वो आमने सामने न होकर जिस प्रकार नीमके पत्र होते हैं उसी प्रकार ऊपर नीचे एकान्तर होते हैं। एक पत्र बाईं ओर का पीछे उससे उतनी ही दूरी पर दाहिनी तरफ का। फिर बांईं ओर का, इस प्रकार आते हैं। एक ही पत्र इक्कीस हिस्सो मे विभक्त मालूम देता है और कगूरेदार जिससे पत्र की मनोहरता बढ जाती है। इस तरह की एक सीक में उपरोक्त वर्णन की १५ १७ सलाकाए निकलती हैं और प्रत्येक सलाकाओ पर २१ के करीब पत्र। एक शाख में उक्त वर्णानुसार ५-७ सीके होने से मयूरछत्र के समान पत्र फैले हुए खूबसूरत लगते है। बूटी के पत्र के प्रत्येक हिस्से पर पीछे की तरफ सफेद उभार (Spore or Seedgerm) गोलाई मे होते है।

नाम—

हि —हंसपदी विशेष (गजकेशर)। ले —ड्रायोप्टेरिस क्रीनाटा (Dryopteris crenata C Rze)।

नोट—उपरोक्त जातियो के भी अन्य भाषाओ में कोई नाम नही दिये गये हैं।

रासायनिक सङ्गठन—

इस वनस्पति मे तथा उपरोक्त सब जातियो मे फिलिसिन (Filicin) नामक सत्व १ से ४ प्र श तक मूल में पाया गया है जो व्रघ्न कृमि (Tapeworm) में विशेष लाभकारी मानते हैं।

उपयुक्त अङ्ग—मूल।

मात्रा—चूर्ण ३ से ६ माशा। अनुपान—जल या गाय का धारोष्ण दूध।

गुण धर्म और प्रयोग—

सक्षेप मे रस-तिक्त, कषाय। गुण—कृमिघ्न, ग्राही, गर्भस्थापक, शीतल। वीर्य—शीत। विपाक—मधुर।

प्रयोग—

गर्भस्थापनार्थ योग न १—गजकेशरमूल चूर्ण ३ माशे-केवल प्रात बछडे वाली गाय के ताजे दूध के साथ सन्तान इच्छुक स्त्री ऋतु स्नान के बाद पांच दिन तक पीये और क्षीर भोजन करें। पीछे पुरुष सहवास करे। गुण—अवश्य सन्तान की उत्पत्ति होगी

गर्भस्थापनार्थ योग नं. २—गजकेशर मूल १ तोला, पीपल वृक्ष की जटा १ तोला, चूर्ण हाथीदात १ तोला, शिवलिंगी बीज १ तोला, मिश्री ४ तोला का वस्त्रपूत चूर्ण तैयार कर आधा-आधा तोला की मात्रा मे उक्त अनुपान मे ऋतु शुद्धि के बाद ४ दिन सेवन करे, सयम से रहे और हविष्यान्न भोजन ले। औषधि की समाप्ति के बाद गर्भाधान करे।

गुण—निश्चय ही गर्भ धारण होगा। यह बूटी वर्षों से व्यवहार मे आ रही है और सफलता भी सतोषप्रद मिली है। वैद्य बन्धु आगे विशेष शोध करने का श्रम करें।

(भा ज. बू भा २ से)

क्षीर काकोली (LILIUM POLYPHYLLUM)

यह हरितक्यादि वर्ग और रसोन कुल (Liliaceae) का क्षुप है, जो कि ऊंचाई मे ८ इच से डेढ फीट के लगभग होता है। डण्ठल सीधा मूल से निकलता है। पत्र स्टेम (Stem) के साथ जुडे रहते है, पत्र क्रमानुसार एव भालाकार होते है। शाखाओ और प्रशाखाओं पर फूल खलते हैं। खिलने पर ये पुष्प कुछ पीले व श्वेत वर्ण के

होते हैं तथा सूघने पर इन पुष्पों से तीव्र सुगन्ध आती हे। फलकोप एक इच से सवा इच लम्वे होते हे ये कोप तीन प्रखण्डो मे विभक्त होते हैं। मूल कन्द प्याज के कन्द के समान छिलके वाला एव परतदार होता है। आग मे भूनने के बाद खाने मे यह परतदार कन्द मीठा होता हे। ताजी अवस्था मे यह कण्द श्वेत वर्ण के होते है। औषधि सग्रह करने से पूर्व इन ताजे मूल कन्दो को उवलते हुए पानी मे उवाल लेते हे ऐसा करने पर इनका जलीयाश नष्ट हो जाता है और ये मूलकन्द सड़ने से वच जाते हैं।

पुष्पकाल—अगस्त, सितम्वर। फलकाल—सितम्वर से नवम्वर। औषध सग्रहकाल—सितम्बर से नवम्वर।

उत्पति स्थान—

यह मूलिका हिमालय मे से २७०० मीटर से ३००० की ऊचाई तक उपलब्ध है।

भिलंगना घाटी मे—पवाली, गगी, राजखर्क, किनकोलियाखाल, ताली आदि स्थानो मे उपलब्ध होती हे।

केदारनाथ घाटी मे—रामवाडा, केदारनाथ एव वासु की ताल आदि स्थानो मे उपलब्ध होती हे। इसी भाति भागीरथी एव टौमवन खण्ड के हरकी, दून, नेटवाड, मोरी आदि स्थानो मे उपलब्ध होती है।

नोट—प्राय इन मूलिका के साथ Fritillaria mylli Hook एव Lilium Sp रसोन कुल की कुछ प्रजातियो के मूलकन्द भी पाये जाते हैं। इस मूलिका के अभाव मे Roscoea procera wall और Roscoea alpinia Royle के मूल कन्द वाजार मे विक्रय करते ह जिनका वर्णन निम्न प्रकार से दिया जा रहा है।

मूलकन्द की वाह्य रचना विवरण—

काकोली–क्षीर काकोली का मूलकन्द १ इच डायमीटर के लगभग होता है जो प्राकृत अवस्था मे श्वेत वर्ण का होता है तथा पानी मे उवालने पर ये कन्द कुछ पीले वर्ण के हो जाते हैं। ये मूलकन्द प्याज के छिलके के समान अलग-अलग परतदार होते हे। वाह्य रचना मे इसका आकार ठीक एक गाठ वाली लहशुन के समान होता है। मूलकन्द प्राकृत अवस्था मे मसृण और मधुर होता हे तथा ये कन्द गन्धविहीन होते है। अथवा (वा) काकोली क्षीर काकोली (व) [A] Roscoca Alpinia Royle
[C] Roscoea Procera Wall

(A) यह एक क्षुप जाति की वनस्पति है जो कि १५०० मीटर से लेकर २७०० मीटर की ऊंचाई तक उपलब्ध होती है। यह क्षुप ८ इंच से १० इच तक लम्बा होता है। पत्र ३ इच से ४ इच तक लम्बे भालाकार होते है। ये पत्र शाखाओ के साथ साथ जुटे होते हैं। पुष्प अग्रिम भाग मे एक या दो मे खिलते हैं। उप जाति (Species) भेद से इसकी अन्य प्रजातियां काकोली–क्षीर काकोली के नाम से विक्रय होती हैं। पुष्प श्वेत एव गुलावी रङ्ग के एव सफेद नीले (White purple) वर्ण के होते हैं। कुछ पुष्प वेंगनी रङ्ग के भी होते हैं। मूल शतावरी मूल के समान चार या पाच के समूह रूप मे होती है। ये मूल कन्द लम्वाई में २ इच से २½ इच तक लम्वे होते हैं। (B) R procera Wall का तना ८ इच से १½ फीट तक लम्वा पुष्प सफेद–गुलावी होते है, दल चक्र की अपेक्षा पुट चक्र लम्वा होता है।

पुष्पकाल–जुलाई-अगस्त। फलकाल–सितम्वर। औषधि सग्रह काल–अगस्त,सितम्बर। उपयुक्त अङ्ग–मूल,

उत्पत्ति स्थान—

प्राय भिलगना घाटी, भागीरथी घाटी, यमुना घाटी एव केदारनाथ, चकरौता आदि स्थानो के १५०० मीटर से २७०० मीटर की ऊचाई तक उपलब्ध होते हैं।

नेपाल प्रदेश से भी इस मूलिका का निर्यात होता है।

मूलकन्द का बाह्य विवरण (Microscopic structure) काकोली, क्षीर काकोली का मूल कन्द दो इच से तीन इच के लगभग लम्वाई में तथा मोटाई मे १-६ इच के लगभग होता है। मूलगाठ से शतावरी के समान ही चार या पाच जडे निकली रहती है फिर वे जड़ें मूलगाठ से अलग अलग होजाती है। प्राकृत अवस्था में ये मूलकन्द कुछ हरे वर्ण के होते हैं। जोकि देखने मे चिड़िया कन्द केसमान होते हे तथा सूखने के उपरात कुछ धूसर एव कृष्णवर्ण के हो जाते हे। मूल कन्द का आतरिक भाग श्वेत वर्ण का होता है। स्वाद में ये मल मधुर अनुरस वाले



होते है ।

निघण्टुओ मे विवर्णित काकोली-क्षीर काकोली का-उत्पत्ति स्थान एव लक्षण—

महामेदा के उत्पन्न होने वाले स्थानो मे ही, क्षीर काकोली भी पायी जाती है। क्षीर काकोली का कन्द शतावरी [पीवरी] के समान होता है तथा काटने पर इसमें दूध निकलता है। ये कन्द प्रिय गन्वयुक्त होते है।

काकोली भी क्षीर काकोली के समान ही होती है। किन्तु दोनो मे भेद का कारण क्षीर काकोली का कृष्णवर्ण का होना है।

सदिग्वता—इस आवार पर काकोली एव क्षीर काकोली शतावर के समान आकृति वाला श्वेत वर्ण का होना चाहिए जबकि (Lilium polyphyllum) शतावर के समान नही है जोकि लसुनकन्द वाला एव श्वेत कन्द है। कुछ शास्त्रीय लक्षणो की मान्यता Roscoea Alpinia or Roscoea Procera] से मिलती है। ये सभी कन्द रासायनिक परीक्षण के विषय हे।

[वैद्य मायाराम जी उनियाल]
गुरुकुल कागडी विश्वविद्यालय [उ० प्र०]

नाम—

स.—क्षीर काकोली, पर्वस्या, महावीरा, पयस्विनी। हिं—क्षीरकाकोली। ले—लिलियम पोलिफाइलम (Lilium polyphyllum) उपयुक्त अङ्ग—कन्द।

मात्रा—६ माशा से १ तोला तक

गुण धर्म और प्रयोग—

आयुर्वेद मतानुसार क्षीर काकोली वीर्य वर्द्धक, स्तनों मे दूध वढाने वाली, हलकी, कामोद्दीपक, अवस्था स्थापक, पाक और रस मे स्वादिष्ट, वलकारक, शीत वीर्य और जीवनदायक होती है। (शा नि.)

प्रयोग—

अष्टवर्ग—जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, ऋद्धि, वृद्धि, काकोली, क्षीर काकोली इन एकत्र मिले हुए आठ द्रव्यो को अष्टवर्ग कहते हैं।

अष्टवर्ग गुणा—अष्टवर्ग—शीतल, स्वादिष्ट, पुष्टि-जनक, वलकारी और शरीर मे कफवर्द्धक है। वीर्यजनक, भारी, भग्न सधानकारक तथा वात, पित्त, रक्त, तृषा, दाह ज्वर, प्रमेह और क्षय रोग का नाश करता है। (शा नि)

क्षुद्र मक्षिका (RUNGIA PARVIFLORA NEES)

यह वासा कुल (Acanthaceae) का क्षुप १० इच से दो फीट तक पाया गया है। यह वर्षायु, रोमश, कोमल होता है। इस छोटी बूटी के पत्र मोटे, मासल, सूक्ष्म रोमस ढाई से ४ इच लम्बे, डेढ से पौने दो इच चौडे, प्राय वृन्त रहित; पुष्प श्वेत वर्ण के लम्बी पखुड़ी वाले। पुष्पस्तवक छोटा ½ इची, पुष्प दण्ड छोटा पौन इची, चपटा फल या वीज कोष २ इची। वीज छोटे-छोटे सख्या मे ४ होते हैं। प्राय शीतकाल में पुष्प आते हैं।

उत्पत्ति स्थान—

यह क्षुप भारतवर्ष के दो हजार से पाच-छ हजार फीट की ऊचाई पर वगाल, छोटा नागपुर, उडीसा एव कुमायू, गढवाल आदि क्षेत्रो मे विशेष मिलता है।

नाम—

स—पिण्डी। हिं०—पिंडी। गु०—मोटो खड़सलियो। व—पिण्डी। गढवाली—क्षुद्रमक्षिका, क्षुद्र मौनी, लघुमक्षिका, छोटी मखी, ऋनुमाखी। ले०—रगिया पारवीफ्लोरा (Rungia Parviflors Nees)।

गुण धर्म और प्रयोग—

वह वनस्पति कामला, अरुचि, ज्वर वालरोग, वात, श्लैष्मिक ज्वर, निमोनिया, वालरोगो का विषम ज्वर, अजीर्ण, उपदशघ्न और रक्तवर्द्धक है।

हमने सहस्रपत्री के योग से तिल्ली, जिगर पर सत्वर लाभ पाया जाता है।

मात्रा—३ से ६ ग्राम तक।

अनुपान—वालक को माता के दूध के साथ। कामला मे वारोष्ण दूध के साथ।

अपथ्य—गर्म वस्तुयें। उपदश मे नमक का त्याग करे।

—श्री योगेश्वर प्रसाद जी घिल्डियाल, वैद्यवाचस्पति
श्री राष्ट्रीय औषधालय, कोटाबागरुड़की,
पो पतलिया (नैनीताल)

क्षीरीविदारी—देखिये 'विदारी कन्द न०२' भाग ५ पृष्ठ १८६ पर। त्रायमाण—देखिये भाग ३ के पृष्ठ ३८६ पर।

वनस्पति विक्रेताओं के पते

वत्सनाभ—इल्फ्रेड टी इम्पोरियम वोम्बू ग्रोव १०½ माइल, किलपोग, आसाम।

पीपल छोटी—पसावा अेन्ड सन्स, मिसिन वेंग, अयाल, एन, लुसाई हिल्ला (आसाम)।

नागकेसर असली—शिलोग कापरेटिव मार्केटिंग सोसायटी, बडा बाजार, शिलोग (आसाम)।

शहद के विक्रेता—सहा अेण्ड क, टोकलाईपुर, ट्रन्करोड़, जोरहाट, आसाम।

चन्दन के विक्रेता—अमृतलाल मोतीलाल शाह, लम्बडग, आसाम।

सामदास सुरानचन्द्र चावला, हाफलोग, एन सी हिल्स, आसाम।

गनजम हर्बस्टोन, गनजम, उडीसा।

मधु के विक्रेता—अगरवाला फार्मेसी, भडार, देहरादून।

अष्टवर्ग फामसी, देहरादून।

वी कुलराम शाह वर्मा, पो. आ जोशीमठ, गढवाल।

बृजभूषणलाल गुप्ता एण्ड कं०, सराफाबाजार, सहारनपुर

भारत आयुर्वेदिक औषधालय, नगीना, जिला विजनौर

बाकेलाल अग्रवाल, पो ओ. चकोतरा, देहरादून।

वनौषधि भण्डार, गणेश मन्दिर, झांसी।

दून फार्मास्युटिकल क०, मोती बाजार, पो आबक्स नं०६०, देहरादून (उत्तर प्रदेश)

देवी सहाय प्रभुदयाल, बनीरामण्डी, मुरादाबाद।

डिपार्टमेंट आफ कोटेज इन्डस्ट्रीज, यू पी, जी टी रोड, कानपुर।

ग्रीन हिल्स प्रोडक्टस लि०, रामपुर, विजनौर।

ग्रामोद्योग कार्यालय, दिलवाडा, ललितपुर, झांसी।

हिमाचल फार्मेसी, मसूरी।

अष्टवर्ग के विक्रेता—हिमाचल हर्ब इन्स्टीट्यूट, मोहल्ला जाफरनवाव खा, सहारनपुर।

हिमालय ड्रग क २२-२४ वायसराय रोड, देहरादून।

हिंद हर्ब सप्लाई क०, पो आ चोहारपुर, देहरादून।

इण्डियन ड्रग क, ४९-३०, वायसराय रोड, देहरादून

इण्डियन हर्ब इन्स्टीट्यूट अेण्ड सप्लाई क०, पो० आ० चोहारपुर, देहरादून।

जगदीशप्रसाद गर्ग, भारत आयु. औषधालय, विजनौर

कृष्णा आयुर्वेदिक औषधालय, डोईवाला, देहरादून।

कल्याण फार्मेसी अेण्ड लेबोरेट्री, शहीदगज, सहारनपुर

केदार कार्यालय, हल्द्वानी।

केदार फार्मेसी, करणपुर, देहरादून।

कैलाश औषधि भण्डार, चकोतरा, (देहरादून)

लाल सींग पगती, मान सियारी, अल्मोड़ा।

धाय के फूल, मुचकन्द, अर्जुन—महावीर जडी-बूटी भण्डार खनिया वाना, झांसी (उ. प्र

नेशनल ड्रग कारपोरेशन, प्रेम नगर, देहरादून उ. प्र.

नन्दा ड्रगएण्डफार्मास्युटिकलवर्कस, पीपलमण्डी, देहरादून

पचम लाल वच्चूमल, ललितपुर (उ प्र)

फर्मास्युटिकल एक्सपर्ट कारपा डिपार्ट, राईस्टेट रानीखेत

रामगोपाल सिंह ठाकेरी, कालालेन वाली रोड, देहरादून

रामसीग पंगती, जोहर हिमालय ट्रेडिङ्ग एजेंसी, मानसियारी, अलमोडा (उ. प्र)

रामलाल मेहता वैद्य, श्रीनगर, गढवाल।

सुशील किशोर जोशी, भोगपुर, देहरादून।

वनस्पति औषधालय, देहरादून

एस. पोसना, पो० आ राजपुर (देहरादून)।

आर्य वनौषधि भण्डार, ललितपुर, झासी।

हिमालय हर्बस स्टोर, मिरकोट, सहारनपुर।

नेशनल इण्डिया हर्ब सप्लाई क., विग न. १, वी। के ८/७, प्रेमनगर, देहरादून।

अगरवाल मधु भण्डार, देहरादून।

वी ड्रग्स एण्ड फ्रूट प्रोडक्टस, २-४, मधीवाथरोड, बरेली

वी एम औषधि वी एण्ड संस, गाधी बाजार, झासी

भारत आयुर्वेदिक औषधालय, नगीना।

हिमालय वी कीपिंग एसोसियेशन, देहरादून।

ग्रीन हिल्स प्रोडक्टस लि रामपुर स्टेट, विजनौर।

हसराज गिरीश चन्द्र, पो आ. ज्वालापुर, हरिद्वार।

गुलाबराय जानकीप्रसाद, गवर्नमेंट कण्ट्राक्टर्स, हल्द्वानी, नैनीताल।

ओमप्रकाश अग्रवाल, एम केन कालेज हाउस रामगढ

ग्रामोद्योग कार्यालय, पो० आ० दिलवाडा, झांसी।

वी. कुलाराम शाह शर्मा, पो० आ० जोशीमठ, गढ़वाल

शिलाजीत-कस्तूरी—वालीराम वर्मा, गोरीकुण्ड, केदारनाथ, गढवाल ।

क्षारो के विक्रेता—होराम शर्मा वशिष्ठ फतेह भवन, मुनशी पुरा, बुलन्द शहर ।

शिलाजीत विक्रेता—हिमालय डिपो., नियर रेलवे स्टेशन, हरिद्वार ।

कैलाश बूटी आश्रम, बदरा केशराम, गढवाल ।

के. रामचन्द नाम बूटी पो० आ० बदरीनाथ, गढवाल

महेशानन्द एण्ड सन्स, नन्द प्रयाग, गढवाल ।

हरिशकरलाल, रामशकरलाल, चौखम्बा, वाराणसी ।

कस्तूरी, जवाहरात के खरड़ो के विक्रेता—आग्यानद घनेश्वरलाल, मोहल्ला पीपलमण्डी, देहरादून ।

नेशनल ड्रग कारपोरेशन, प्रेमनगर, देहरादून ।

एस सत्य बहादुर नेपाली एण्ड सन्स, नेपाली कोठी, फूल वाली गली, चौक, लखनऊ ।

ठाकुरदास अमरनाथ, हरिद्वार, सहारनपुर, उ० प्र० ।

सत्त गुलाबजल, इत्र—होतीलाल मनोहरलाल वारवाड़ा, जिला-अलीगढ ।

राम जनम ठाकुर, C/o ज्ञाबचन्द वैद्य,इटावा उ०प्र०

हीग, शिलाजीत के विक्रेता—विजय स्टोर्स, आगरा ।

भजनलाल कुजीलाल, लोहट बाजार, हाथरस ।

अरण्डी और तिल तैल—जुगीलाल कमलापत आयल मिल्स, कमला स्ट्रीट, कूपरगज, कानपुर ।

मूल्यवान धातुये और खरल—प्रेम प्रकास वी शास्त्री, नियर आटा चक्की, न० २ दयाल बाग, आगरा ।

दाऊ मैडीकल स्टोर्स, विजयगढ (अलीगढ)

इत्र के विक्रेता-अमरनाथ मिश्रा एण्ड सन्स,मिश्रभवनकन्नौज

सुगन्धित पदार्थ—बदरीनाथ विश्वनाथ चौक बनारस ।

गगासागर ओकारनाथ, परफ्युमर्स, कन्नौज (उ० प्र०)

इत्र विक्रेता—बोरा कम्पनी, चौक, वाराणसी ।

गुलाब जल और इत्र—सेठ टीकमचन्द प्रेमचन्द अत्तर एण्ड रोजवाटर फेक्टरी, कन्नौज ।

मल्लसिन्दूरादि—श्री रतन आयुर्वेद भवन, कचौरा अलीगढ

श्री कृष्ण भैषज्यभवन, कृष्णावाटिका, कचौरा अलीगढ

प्रभात रसायनशाला, कचौरा (हरीगढ़) अलीगढ ।

वनस्पति और समुद्री पदार्थों के विक्रेता—के. एस नायर एण्ड को, त्रिवेन्द्रम ।

स्टेण्डर्ड ड्रग एक्सपोर्टस् क., ६६ पार्थसारथी नैदर स्ट्रीट, टूटी कोरिन ।

इण्डियन ड्रगकपनी, १४७,डबल्यू जी सी रोड,टुटीकोरिन

नेशनल ड्रग कपनी, ३८ पिरिखा स्ट्रीट, टुटीकोरिन ।

पी आई.एम पालावेसम, पिलाई २६२ साउथ काटन रोड, टुटीकोरिन ।

टुटीकोरिन कमर्सियल क., ४८ इम्पेरोर स्ट्रीट, टुटीकोरिन

के.ऐस नैयर क, १४७ डबल्यू जी सी रोड,टुटीकोरिन

केशर, मधु, जीरा के विक्रेता—ओचकासी, हैड आफिस श्रीनगर, काश्मीर ।

डी. शाह सन्तराम जानडियल, रामनगर पो आ जम्मू

आरगज जोहनसन एण्ड कम्पनी लि. श्रीनगर ।

जियालाल पोतेदार खरयू, पो आ पानपुर, काश्मीर

काकाराम बोधराज, उधमपुर (काश्मीर)

पी के शाहपुरी, हव्बा का दल, श्रीनगर ।

पी.एस जमवाल एन्ड सन्स, काचीचावनी, जम्मू तवी

बोधराज वशीलाल, उधमपुर जम्मू ।

कन्सरवेटर आफ फोरेस्ट, एस सी एण्ड एफ आई. सर्कल, जे. के गवर्नमेंट, जम्मू ।

मधु के विक्रेता—देशराज गुप्ता, नियर पी. डी. डी. स्टोर, उधमपुर, जम्मू ।

काश्मीर भण्डार, पहली ब्रिज, श्रीनगर ।

आर सी बाल एण्ड को.,३ ब्रिज,पो.आ एस. श्रीनगर

आर. डी. चोपडा, बटोट, काश्मीर ।

काशीराम सीताराम,कमीशन एजेंट,उधमपुर, जम्मू ।

ग्रीन फिल्ड सिंडीकेट, पो आ. बक्स ४७, श्रीनगर ।

शिलाजीत के विक्रेता—काश्मीर शिलाजीत डिपो, श्रीनगर, काश्मीर ।

केशर, दवाइया, मधु शिलाजीत के विक्रेता-बलवन्तराय गुरुबचनलाल, जम्मूतवी, काश्मीर ।

ईश्वरदास तिक्क एण्ड सन्स, श्रीनगर, काश्मीर ।

बोधराज वंशीलाल, उधमपुर, काश्मीर ।

मोहन ब्रदर्स बचवाडा, श्रीनगर, काश्मीर ।

काश्मीर एपिया रिस्क्स एसोसियेशन, करालयार । रैनवाडी, श्रीनगर ।

कसरवेटर आफ फोरेस्टस् टिम्बर युटिलाइजेशन सर्कल, श्रीनगर, काश्मीर ।

सत्त गिलोय, भिलावा के विक्रेता—महेन्द्रलाल छोटालाल शाह, अमलसार, जिला-सूरत ।

आई वी वजादवा एण्ड कम्पनी, मेघदत्त, जेलरोड, जामनगर ।

बसन्तलाल जे लालन, चादी वाजार, पो आ. शाल-फाली, जामनगर (गुजरात) ।

सर्पगन्धा,रेवन्दचीनी,वाला के विक्रेता—एलाइड बिजीनेस कारपोरेशन,३५ अजमल खा रोड,खारीवावली,दिल्ली

हामिदअली, ६१८, कुचा रोहिलाखान, दिल्ली ।

रामचन्द कुड़ामल, कटरा टोवेको, फतेहपुरी, दिल्ली ।

जीवनदास सुगन्धितवस्तु भण्डार,किनारीबाजार,दिल्ली

हरी वनस्पतियो के विक्रेता—कोड़ामल मदनलाल, फतेहपुरी, दिल्ली ।

हिमालया रेंज ड्रग फिल्ड,३६१६।१—क,मिलिटरी रोड, बापानगर, करौलबाग, दिल्ली-१२

ट्रेड कमिश्नर, जे एण्ड के गवर्नमेंट,५ पृथ्वीराज रोड़ नई हिल्ली ।

मधु के विक्रेता—रोशनलाल,एच न ४११,आजादपुर, दिल्ली

ड्रग लेण्ड कारपोरेशन,पो०वक्स१४७४,देहली २१

पोल सन्स, फेज बाजार, दरियागज, देहली ।

पुराने गुड के विक्रेता—उमराव सिंह अमरनाथ, एच न २६१, वडा बाजार दिल्ली-शाहदरा ।

केशर कस्तूरी के विक्रेता—सुन्दरलाल चन्द्रकुमार नेपाली, बतासा वाली गली, फतेहपुरी, दिल्ली ।

मुश्क हाउस, बैयर्ड रोड, नई दिल्ली ।

जान्तव पदार्थो के विक्रेता—मुलतान शिकारी,वडातूती,देहली

वत्सनाभ के विक्रेता—अमृत जनरल स्टोर्स,फाटक हवासखां, देहली ।

ड्रग लेण्ड कारपोरेशन ४१२७, नया बाजार, देहली ६

तिल सरसो के तेल के विक्रेता)—दाताराम सोहनलाल फाटक हवास खा, देहली ।

तिल और नारियल तेल के विक्रेता—स्वस्तिक आयल जार्ज एण्ड क, ओपोजिट यग फ्रेण्ड एण्ड कम्पनी, चादनी चौक, देहली ।

नीम और ओलीव आयल के व्यापारी—नेशनल ग्रानर लि , ६१, मोडल वस्ती, देहली ।

चन्दन के तेल के विक्रेता—जिनेन्द्र सुगन्धित भण्डार, किनारी बाजार, देहली ।

नीम, सरसो के तेल के विक्रेता—रतनलाल मितोलीनवर्कस, निकट गुरुद्वारा कटरा दुलानराय,चांदनी चौक, देहली

कपूर के विक्रेता—हिन्दुस्तान केमिकल एण्ड इडस्ट्रियल कार्पोरेशन, बजाज बिल्डिङ्ग, ओरिजिनलरोड,न्यूदेहली

मेन्थल और वनस्पतियो के विक्रेता—अनन्तराम लच्छमणदास अग्रवाल, ६६६२१, खारीवावली, देहली ।

खरल और गन्धक के विक्रेता—कपूरचन्द बोथरा, नई सडक, देहली ।

कस्तूरी के विक्रेता—चमनलाल एस गुप्ता, मैसर्स हसाराम सीताराम एण्ड क बड़ा सिरकी वाला, देहली ।

खरडो और केसर के व्यापारी—इम्पेरियल मुश्क हाउस, ६६८५/८६, खारी बावली, १ स्टफ्लूर, ओपोजिट तिलक बाजार, देहली ।

वनस्पतियो के विक्रेता—देवीसहाय भवरीलाल, कटरा, टोवेको, देहली ।

महामेदा, हरीतकी दवाइयो के व्यापारी—आत्मानन्द वाड़ा, चाम्बा (वाया डलहोजी) पजाब ।

वावा अत्तार सिंह वलराम सिंह,मजीठ मडी,अमृतसर

वनस्पति कार्यालय, जिजोरी डोअवा, होशियार पुर ।

डायरेक्टर ग्राफ ऐग्रीकलच्युरल, सिरमूर, नाहन ।

दीपक वावा एण्ड क , मजीठ मन्डी, अमृतसर ।

द्वारकापुर रामगोपाल, न्यू मिश्री बाजार, अमृतसर ।

केवडा और वेदमुश्क के व्यापारी—गुरदयाल सिंह, हरभजन सिंह, बाजार गन्दानाला अमृतसर ।

जी एच. बावा ब्रोस, मजीठ मडी, अमृतसर ।

काश्मीर भडार, बाजार, बनसन वाला, अमृतसर ।

काश्मीर आयुर्वेदिक वर्कस, जी टी. रोड, अमृतसर ।

वनस्पतियो और वच्छनाग के व्यापारी—काश्मीरी केशर भडार, मजीठ मडी, अमृतसर ।

वनस्पतिया, मधु और कस्तूरी—एम आर टन्डन, कटरा हरी सिंह, अमृतसर ।

वनस्पतियां और पारा—पी एस.सोहनसिंह, चोक दरबार, अमृतसर ।

आर पी भारद्वाज, दी माल, सोलन ।

रामसीग, पो० कारमाना, (रोहतक) ।

डायर माकीन वरी वेरीज लि०, सोलन, सिमला ।

अहसान अली C/o वशीर अहमद,गाव-पाल्ला, पी सी नुह, गुड़गाव ।

केशर, हीग, पारा के व्यापारी—हरबसलाल मर्करी स्टोर, हिन्दू-मुसलिम मेडिकल हाल, लुधियाना ।



मोती और हींग के व्यापारी—के एल. तलवार ब्रदर्स, तलवार टेक्स टाइल मिल्स, लुधियाना।

मोती, कस्तूरी के विक्रेता—कस्तूरी भवन, विश्वनाथ शर्मा, लुधियाना।

मोहनलाल एण्ड ब्रदर्स, कटरा हरीसिंह, अमृतसर।

एस. डी. महता एण्ड क., कटरा हरीसिंह, अमृतसर।

एस डी वेरी एण्ड क ,१५६ सेक्रेटेरियट रोड, जालधर

नमक और मुलतानी मिट्टी के व्यापारी—कृष्णा साल्ट एन्ड केमिकल इण्डस्ट्रीज, रेवाड़ी, गुड़गाव।

बारहसिंगे के सींग—तुलसीराम जैन, रेवाड़ी, गुडगांव।

सिरकें—डाक्टर चौधरी एन्ड सन्स, फोरेस्ट, जालन्धर।

यूनानी वनस्पतियां और हींग—गुरुकुल अलकार फार्मेसी, पो आ वस्ती गु जा, जालधर (पजाब)

श्रीनगर ड्रग हाउस, कसेरा बाजार, अमृतसर।

अम्बर, केसर, कस्तूरी—उत्तमसिंह, मनोहर सिंह, मजीठ मण्डी, अमृतसर।

शुक्ति और सर्पगन्धा के व्यापारी—रोयल बटन एण्ड सीपी वर्क्स, पो मेवसी, जि चम्पारन (बिहार)

विष, शिलाजीत—मोतीलाल मुरारका, भागलपुर सिटी।

सीप, सत्त गिलोय—रामलखन ठाकुर, पुरानी बाजार, पो० ओ० मेवसी, चम्पारन।

रोयल बट्न एण्ड सीपी वर्क्स, मेवसी, जिला चम्पारन।
तिलक धारी ठाकुर, पुरानी बाजार, मेवसी, चम्पारन।
परमानद ठाकुर पो आ. मेवसी, जि चम्पारन।

राल, दवाइये—वंशीधरदत्त, १२६, पुरषोत्तमराय स्ट्रीट, कलकत्ता-७

भट्टाचार्य ब्रदर्स, ११ सीतालेन, पो आ लेन, पो. आ हाटखोला, कलकत्ता।

शक्ति देने वाले पदार्थों के विक्रेता—बेंगाल शक्ति फूड, ११३, पुरुषोत्तमराय स्ट्रीट, कलकत्ता- ७

भूतनाथ महेन्द्रा, हुक्कापट्टी, कलकत्ता।

डोन एण्ड क , ११ पोरचुगीज चर्च रोड, कलकत्ता--१
गधेश्वर भडार, ११/१२ कोटन स्ट्रीट, कलकत्ता।
घोषेज मार्केटिंग ऐजेंसी, टाउन एण्ड दार्जीलिंग।

इलायची, मजीठ, चिरायता, पीपल के व्यापारी—गुरुदयालसिंह चरनसिंह, ५ करबला स्ट्रीट, कलकत्ता।

पीपल और विष—पी एस सोहनसीग, ६ अमरतला स्ट्रीट, कलकत्ता।

पी.एस.डोन एण्ड क०,१,मेचुआ बाजार स्ट्रीट,कलकत्ता

चिरायता, शतावर, सर्पगधा के व्यापारी—बी नारायण, एन. डी पो आ बक्स १०००६, कलकत्ता-२३

अयापान, उलट कम्बल, चालमोगरा, तेल के व्यापारी-कारतीक चन्द्र कुन्दु एण्ड सन्स, १/ए नन्दोराम सेन स्ट्रीट सभा बाजार, कलकत्ता-५

अशोकछाल, पटोलपत्र और अन्य दवाइया—सुरेन्द्रनाथदास, ८७/२, लोअर चितपुररोड, मेचुआबाजार, कलकत्ता-७

चालमोगरा—तवीन ब्रदर्स एण्ड क०, तीस्तारोड, कलीमपोग, दारजीलिंग।

सुभाराम रामगोपाल, कलीमपोग, दारजीलिंग।

कवि. विजयकाली भट्टाचार्य, १७०/१, विपिन बिहारी गांगुली स्ट्रीट, कलकत्ता—१२

मधु—डायरेक्टर आफ फोरेस्ट, आफिस आफ डिविजिनल फारेस्ट आफीसेर, गवर्नमेंट आफ वेस्ट बगाल, ३५, गोपाल नागोर रोड, अलीपुर, कलकत्ता—२७।

पाला शरबत और मिश्री—बेंगाल इम्पोरियम, १४/८, ओल्ड चीना बाजार स्ट्रीट, कलकत्ता—१

फोरेस्ट युटिलाइजेशन आफीसर, मिट्टर्स बिल्डिंग (३ फ्लूर) ८ लाइन्स रेंज, कलकत्ता।

उत्तम कपूर—इम्पोरियम केमिकल इण्डस्ट्रीज इण्डिया लि०, १८ रोड, कलकत्ता।

कस्तूरी—बी एन बहादुर सारस्त, ४४ स्ट्रान्ड रोड: कलकत्ता या १०, पनडितिया रोड, बालीगज, कलकत्ता।

खेमचन्द सत्यनारायण अग्रवाल, कलीमपोग, दारजीलिंग

मदन मोहन ओम निवास, कलीमपोग, दारजीलिंग।

गांधी ब्रदर्स, कलीमपोग, दारजीलिंग।

एम डी.महताएण्डकम्पनी, ३१मल्लिकस्ट्रीट, कलकत्ता-७

सत्त, सुगन्धित पदार्थ, दवाइया—बुट्टो क्रिस्टो पाल एण्ड क०लि०, १-३ बोना फिल्ड लेन, कलकत्ता।

कपूर, लोबान और वशलोचन—लखमतराय सम्पतरायशाह, १४, मल्लिक स्ट्रीट, कलकत्ता।

जेतून का तेल—हरीसन ट्रेडिङ्ग क०, ड-२, क्लाइव स्ट्रीट कलकत्ता।

सिंह की चर्बी—डा एन सी वसु १२०, कोर्नवेलिज स्ट्रीट, शाम बाजार, कलकत्ता।

मडूर और गधक—दासदत्त एण्ड क ३, डोइ घाटा स्ट्रीट, कलकत्ता।

वच्छनाग—अलफ्रेड टी. इम्पोरियम, वेम्बग्रोव, कलमीपोग दारजीलिंग।

सर्प विष—ड्रग हाउस कपनी लि०, ५३ शभूनाथ पडित स्ट्रीट, कलकत्ता ।

सुगन्धित पदार्थ—पेराडाइज परफ्युमरी हाउस ७५, कलूटोला स्ट्रीट, कलकत्ता ।

शाह एन्ड क०, ३५-३८, इफ्ररा स्ट्रीट, कलकत्ता ।
एसेंस सप्लाई क, एजेंसी,६,कलूटोला स्ट्रीट,कलकत्ता ।
सिकरी एण्ड क० लि०, ५५,केनिंग स्ट्रीट, कलकत्ता ।
एसेसएण्डबोटल सप्लाई क०,१४राधाबाजार,कलकत्ता
जे.एम.पारख एण्ड क०,४४-४५,इफ्ररा स्ट्रीट,कलकत्ता
के आर. पटवर्द्धन, ७२, केनिंग लेन, कलकत्ता ।
नाजमल,अरीफीमएण्ड क ,७५,कलूटोलास्ट्रीट,कलकत्ता
सूरजमल अरीफीव एण्ड क०, १ इफ्ररा स्ट्रीट, राधाबाजार, कलकत्ता ।
कविराज जी० सरस्वती,झाड़ामोरा, पो०आ०,सेवारपोरा, राजशाही, बगाल ।

कुचला और वस्पतिया—बी. एल नारायणराव, श्रीकृष्ण भवन, कमर्सियल रोड, काकिनाड़ा, मदरास ।

मधु और वनस्पतिया—के रामास्वामी, चेट्टी, रसप्पा चेट्टी स्ट्रीट, पार्क हाउस, मदरास ।

साअर्स कारपोरेशन, ६०, चिन्नाथाम्बी स्ट्रीट,मदरास१
म्युचल ट्रेडर्स, १६ बदरीअन स्ट्रीट, मदरास—१ ।
वी. गोल्डेन ड्रग्स स्टोर्स, एच. ओ , पेरिंग गुलाम ।
एम. रामास्वामी,इरुधु नगर एस आई. मदरास—१ ।
नीलगिरी सीड डिपोर्ट, कमर्सियल रोड, उत्कमण्ड ।
सिवराय एण्ड क० कोर्ट रोड, कालिकट ।
फ्री इण्डिया युकलिप्टिस आयल डिस्टलरि, कूहनूर ।

यूकलिप्टिस आयल—आर एस नीलगिरी ।

कोटागिरी नेशनल युकलिप्टिस डिस्टिलरी,कोटागिरी, नीलगिरी ।
इम्पेरियम युकलिप्टिस आयल डिस्टिलरी,मिसिन हाल, कुनूर रोड, नीलगिरी ।
पारख युकलिप्टिस आयल डिस्टिलरी विल्लिगटन बाजार, पो० आ० नीलगिरी ।
अब्दुल रहमान साहब, फ्लोवर बाजार, मदरास ।
टी. ए रहमान एण्ड सन्स,फ्लोवर बाजार, १० चिना बाजार रोड, मदरास ।

वनस्पतिया—महावीर जडी बूटी आयुर्वेद भवन, शिवपुर (मध्यप्रदेश)

वैद्य कृष्णदत्त जोशी रतलाम,
चितकार जीवन रसायन आयुर्वेदिक फार्मेसी, भोपाल ।
एम सी राय, कन्सरवेटर आफ फोरेस्ट, जबलपुर ।
डा धर्म वीर वर्मा शिवपुरी ।
जडी बूटी आयुर्वेद भवन, खनिया दाना [म. प्र]
छोटेलाल रामसेवक तिवारी पो०आ०बक्स६७, कटनी

वनस्पतियां और गोद—अगर दाल अेण्ड सन्स, ४२८ कालबा देवी रोड, मुबई ।

बाबमल सन्तशरण,२०४,सेम्युल स्ट्रीट,वड़गादी बोम्बे३
इण्डो केमिकल अेण्ड ट्रेडिंग क०,पो आ बक्स२३६७ बोम्बे-२
क्वालिटी ट्रेडर्स,३८४ बी डागोलकर वाडी,कालवादेवी रोड, बम्बई-२
शूरजी वल्लभ दास,स्वदेशी बाजार स्ट्रीट,२२०-२० शेख मेमन स्ट्रीट, बम्बई-२
सुश्रुत औषधि भण्डार, ३६८, पायधुनी, बम्बई—३
यूनानी अेन्ड आयुर्वेदिक औषधि भण्डार, २४५ कालबादेवी रोड, बम्बई-२
वबस्पति एसेंस और तेलादि–कोलोनियल ट्रेडर्स, पो० आ० बक्स ७००८, बम्बई—२८
जादव जी लल्लू भाई अेण्ड क,२५४-कालबादेवी रोड, बम्बई-२
कीरितचन्द एण्ड कं ,१८५|१८७,सेम्युल स्ट्रीट,बम्बई-९
शाह सेठ अेण्ड कम्पनी, २६४, सेम्युल स्ट्रीट,वडगादी बम्बई ।
मिश्रा महाराष्ट्र फार्मेसी, बरहामपुर ।
विश्व अेण्ड क , पो० बक्स १०६८, बोम्बे—१
सूरणसीघ होरया सीघ,३६/४८ मसजीद बन्दर रोड, फस्ट फ्लोर, बोम्बे—७

मोती, केसर, कस्तूरी—ठाकर दास अमरनाथ, २२६|७ रामनिवास, सियन इस्ट, बम्बई—२२

कस्तूरी,केसर—करसनदास लुधा,२३६,सेम्युल स्ट्रीट,बम्बई-३

थाईमोल—नारदेन केमिकल वर्कस इडिण्या लि०, २ पूना स्ट्रीट, ओपो० प्रिसेज पार्क,फरिरि रोड बम्बई—९

जिंतियाना का सत्त–ऐंग्लो थाई कारपोरेशन लि०, इवार्ट हाउस, बुसी स्ट्रीट पो० आ० बक्स ७०, बम्बई ।

नसलोचन, कपूर, शिलाजीत,कौडी,बारहसिंगा,बीरबहोटी–नेपालट्रेडर्स एजेंसी,९५|९७,भण्डारीस्ट्रीटवेदगादी बोम्बे

सी सी ट्रेडर्स, ७९, मिड़ो स्ट्रीट, फोर्ट बोम्बे ।
क्वालिटी ट्रेडर्स ३८४, बी. डभोकर वाडी, कालबा देवी रोड, मुबई—२

वनौषधि विशेषांक

नारियल का तेल—स्वस्तिक आयल मिल्स लि०, २७ वसटियन रोड, फोर्ट बम्बई।

टिमको सेल डिपो, केशवजी विल्डिंग १४६,फ्रियररोड, बोम्बे।

स्वस्तिक फ्फोर अेण्ड आयल मिल्स, ८७ बाजार गेट स्ट्रीट, बम्बई।

सुगन्धित वस्तुये—एम आर. मोदी, ३—बी, मगलदास बिल्डिंग, २९, बोम्बे—२

इण्डो केमिकल अेण्ड ट्रेडिंग क.पो ब.२३६७ बोम्बे-२

ग्लोव ट्रेडिंग कारपोरेशन,१५६, ललित निवास, लेडी जमशेदजी रोड, महिम, बोम्बे—८

प्रभाकर अेण्ड कम्पनी, नूतन नगर, टरनररोड,बान्द्रा बोम्बे।

हसनअली कमरुद्दीन,१६ छिपी चाल स्ट्रीट, बोम्बे--२

एस.एच.केलकर अेण्ड क.,३६ मगलदास रोड,बोम्बे—२

सुगन्धित पदार्थ—बोम्बे एसेंस सप्लाई क., १७४, होर्नबाइ रोड, हार्नवाई बिल्डिंग, बोम्बे—१

मोती, खरड, जवाहरात—नगीनदास, वीर चन्द्र झवेरी, ४४.४६ धनजीस्ट्रीट, बोम्बे २

वनस्पतियो के आयातकर्त्ता—सेन्ट्रल कमर्सियल एजेंसी, पो आ. बक्स ५०९०, बोम्बे—९

दवाइयां वनस्पतियां, रसायनिक दवाइयें—भारतकुड ड्रग्स, सप्लाई क , विस्को चेम्बर,३९४ काथा बाजार, पो आ व न ५०१९, बोम्बे—९

श्रीराम फ्लोरमिल्स,८१,गुन्दोपन्थस्ट्रीट,बेंगलोर सिटी।

साबुन, सुपारी चूर्ण, मधु —मलनाद ग्रामसट्रेडिंग क , मेदी मरचेंटस, बी एच रोड, शिमोगा।

रेगमाही, बीर बहूटी, नीम तेल और गोलोचन—एग्रीकलच्युरल डिपार्टमेंट, जोधपुर।

रामदित्तामल लोचन दास, सर्राफा बाजार अलवर।

वनस्पतिया,शहद,शंख—गङ्गाधर शर्मा क ,बुम्मानगली,पुष्कर अरावली मधु शाला, दौलत विल्ला, अलवर।

जगदम्बा आयुर्वेदिक फार्मेसी, सरपुरें, पो आ गुटी, अलवर

क्षार—रामकृष्ण राजपूत औषधालय,पो जोहरहारा,भरतपुर गोवर्द्धनदाचीच, भवाण्डी—वेबरी, बूंदी।

चर्बी—अनाप सनाप कार्यालय, करौली (राज)

एच. शेरसिंह किशन प्रसाद भट नागर, करौली।

जटंगण का तेल—बभौरी कुन्दनलाल रामकरण, बालोतरा

मोती, जवाहरात की खरडे—नन्द लाल सूरजमल, लाल कटरा, जयपुर।

खनिज पदार्थ—सन्नोखान—जयपुर।

मोती—धानूमल सूरजमल—जयपुर।

बचेरी लाल सोहन लाल झवेरी, लाल कटरा,जयपुर।

क्षार और मण्डूर—लक्ष्मी विलास आयुर्वेदिक फार्मेसी, भावन्दी-बेबरी, बून्दी (राज)

वनस्पतियो के विक्रेता—गुलाब चन्द लादू राम अत्तार, नया बाजार, अजमेर।

गङ्गा बिशन गोपी किशन पसारी नया बाजार,अजमेर

बोहराअली अमरजी बाटली वाला,मोचीवाड़ा,उदयपुर

बोहरामुहम्मदअली बाटलीवाला मण्डी कीनाल उदयपुर

सिल्वी कल्चुरिस्ट फोरेस्ट डिपार्टमेंट, गवरमेंट आफ राजस्थान, जयपुर।

मधु—हनी हाउस, चाम्बा, वाया—डलहौजी, हि. प्र.।

वत्सनाभ—हर्बल होम, पो आ रिनोक, सिक्किम।

डी शमशेर, पाक याग सिक्किम।

एरंड ककडी का दूध—अे एस. चांटया अेण्ड क, ११०—११२ मालिबन स्ट्रीट कोलम्बो, श्री लङ्का।

अे मीरा मोहीद्दीन अेण्ड सन्स,वक्स हाल स्ट्रीट,पो. आ बक्स ३७५, कोलम्बो।

एस एम. मोहिन्दर अेण्ड सन्स, पो.आ. बक्स ८०५, कोलम्बो।

केसर, कस्तूरी, खट्टासी, शिलाजीत—दयोराम सिंह, १०, हिल वियू होटल, मक्खन गल्ली, काठमाडू, नेपाल।

नेशनल कमर्सियल इन्टर प्राइजेज,७|१२२, मारुटोले, काठमांडू, नेपाल।

डिपार्टमेंट आफ एजूकेशन,गवर्नमेंट आफ नेपाल,गवर्नमेंट बोटेनिस्ट काठमांडू, नेपाल।

नेपाल—हिमालया कस्तूरी भण्डार, ललितपुर, नेपाल।

साहु नारायण बहादुर, महापाल, पाटन, नेपाल।

मधु—अब्दुलसत्तार, अब्दुलजब्बार, जनरलमर्चेन्ट, मेक्का

मधु और यूनानी वनस्पतियां—अब्दुल रहीम पो आ. सैयद शरीफ, तहसील मत्था, विजेज, नालकोट, जिला-माडरन [पाकिस्तान]

बलुचिस्तान ड्रग एण्ड सीड सिंडीकेट,सानदेमन रोड, क्वेट्टा। [पाकिस्तान]

मोती, सीप और समुद्री उपज—परमियन गल्फ मलेम ए अरेयर बेहरायन, परसियन गल्फ, पाकिस्तान।

वनौषधि विशेषांक [छठवें भाग]

को

संदर्भ सूची

(अकारादि क्रमानुसार)



आ, इ ई

उ, ऊ

ए, ऐ, ओ, औ, अं

क, ख, ग,

घ, च

छ, ज

झ, ट, ड, त थ द

ध, न

क्ष-त्र

संस्थापित १८९८

धन्वन्तरि कार्यालय

विजयगढ़ [अलीगढ़]

को

प्रामाणिक आयुर्वेदिक औषधियां

एवं

चिरपरीक्षित सफल पेटेंट औषधियां

(केवल रजिस्टर्ड चिकित्सकों के लिये)

हम गत ७५ वर्षो से शास्त्रोक्त विधि से अत्युत्तम द्रव्यो द्वारा योग्य एव अनुभवी व्यक्तियो की देख-रेख में पूर्ण प्रभावशाली आयुर्वेदिक ओषधियो का निर्माण कर भारत के प्रतिष्ठित चिकित्सको को उचित मूल्य पर सप्लाई करते हे। हम अपनी औषधियो का अन्य फार्मेसियो की तरह धुआधार प्रचार नही करते हैं। लेकिन हमारी औषधिया अपने गुणो के कारण उत्तरोत्तर अधिकाधिक प्रचार प्राप्त कर रही हैं। आप से भी साग्रह निवेदन है कि हमारी औषधियो को एक बार व्यवहार करके उनकी परीक्षा अवश्य करें।

नियम

कमीशन—

अ १५.०० से कम मूल्य की दवा मगाने पर कोई कमीशन नही दिया जायगा ।

आ २५.०० तक की दवा मगाने पर १२॥ प्रतिशत कमीशन दिया जायेगा ।

इ २५.०० से अधिक मूल्य की दवा मगाने पर २५ प्रतिशत कमीशन दिया जायेगा ।

ई १५०.०० से अधिक मूल्य की दवा मगाने पर २५ प्रतिशत कमीशन दिया जायगा-तथा मालगाडी का किराया कार्यालय देगा ।

उ ७५.०० से अधिक नैट मूल्य (कमीशन कम करके) की केवल रस रसायन मूल्यवान औपधिया मगाने पर पोस्ट-व्यय कार्यालय देगा ।

आर्डर देते समय—

अ. आदेश पत्र मे औपधियो का नाम, उसका नम्बर, तौल, पैकिंग की तौल तथा मूल्य सभी बातें स्पष्ट लिखें । नीचे मूल्य का जोड़ लगावें तथा उपयुक्त नियमानुसार जो कमीशन बनता है उसको भी लिखे । यदि आप एजेंट है तो एजेसी नम्बर भी लिखे ।

आ हर पत्र मे अपना पूरा पता तथा पास के रेलवे स्टेशन का नाम अवश्य लिखें ।

इ पार्सल—पोस्ट से भेजी जाय या रेल से, सवारी गाडी से भेजी जाय या मालगाडी से । यह विवरण अवश्य लिखना चाहिये ।

ई आर्डर देते समय चौथाई मूल्य अथवा कम से कम ५.०० एडवास मनियार्डर से अवश्य भेजें तथा आदेश पत्र मे मनियार्डर का नम्बर व तारीख लिख दें ।

३—दवा भेजते समय पैकिंग करने मे पूर्ण सावधानी रखी जाती है और प्राय टूट फूट नही होती । किंतु अगर किसी कारण कोई टूट फूट हो जाती है तो उसका जिम्मेदार कार्यालय नही है ।

४—पार्सल मगाकर वी. पी. लौटाना अनुचित है । एक वार वी पी वापिस आने पर कार्यालय पुन उस ग्राहक को वी पी न भेजेगा तथा खर्चा लेने का हकदार होगा । यदि विल में कोई भूल हो तो वी पी. छुडा पत्र डालकर उसका सुधार करालें ।

५—हमारे उधार का लेना देना नही है । बीजक का रुप बैंक या वी पी. से लिया जाता है ।

६—सभी ग्राहको को ३ प्रतिशत सेलटैक्स अवश्य देना होगा । यू. पी से वाहर के ग्राहको को १० प्रतिशत सैल टैक्स देना होगा । आर्डर के साथ सी फार्म भेज देने पर ३% सैल टैक्स लगेगा ।

७—ग्राहको को पार्सल का वारदाना, पैकिंग व्यय, पोस्ट-व्यय, स्टेशन पहुचाई आदि सभी खर्च पृथक देने होते हैं ।

८—धन्वन्तरि कार्यालय के किसी भी विभाग का कोई भी झगडा अलीगढ की अदालत मे तय होगा ।

९—नियमो मे अथवा औपधियो के भावों मे किसी भी समय सूचना दिये बिना परिवर्तन करने का कार्यालय को पूरा अधिकार है ।

आवश्यक-सूचना

सेलटैक्स में परिवर्तन

निवेदन है कि औपधियो पर उत्तर-प्रदेश सरकार ने १।७।६९ से विक्रीकर ३ प्रतिशत कर दिया है । परिणामस्वरूप अन्तर्प्रान्तीय कर १०% हो गया है । अन्य प्रान्तो के ग्राहको से अब हमको १०% विक्रीकर लेना होगा । यदि आप आर्डर के साथ C फार्म भेज देंगे तो सेलटैक्स ३ % लिया जायगा ।

१—उत्तर प्रदेश के ग्राहको से अव तक दो प्रतिशत विक्रीकर लिया जाता रहा है लेकिन अब ३ प्रतिशत लिया जायगा ।

२—उत्तर प्रदेश से बाहर के ग्राहक यदि आर्डर के साथ (वाद मे नही) सी फार्म भेज देंगे तो ३% विक्रीकर लिया जायगा । यदि C फार्म नही भेजेंगे तो बिक्रीकर १० प्रतिशत लिया जायगा ।

आप आर्डर देते समय उक्त नियमो के अनुसार बिक्रीकर लगाने की स्वीकृत अवश्य दीजियेगा अन्यथा पत्र व्यवहार मे व्यर्थ देरी होगी । उत्तर प्रदेश से बाहर के ग्राहक जिनके पास सी फार्म हो वे आर्डर के साथ ही सी फार्म अवश्य भेजे ।

—निवेदक

व्यवस्थापक—धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ (अलीगढ)

शास्त्रोक्त औषधियां



कूपीपक रसायन

	१ ग्राम	१० ग्राम
सि. मकरध्वज न १	५ ६०	५५.००
सि. मकरध्वज न २	४ १०	४०.००
सि. मकरध्वज न ३	३.१०	३० ००
सि. मकरध्वज न ४	३.६०	३५ ००
सि मकरध्वज न ५	२ ६०	२५.००
सि मकरध्वज न ६	२ ३०	२२.००
सि. चन्द्रोदय न १	९.१०	९० ००
अनुपान मकरध्वज	१ ००	९ ००
रस सिंदूर न १	१ ९०	१८ ००
रस सिंदूर न० २	१.७०	१६ ००
रस सिंदूर न० ३	१.४०	१३.००
मल्ल चन्द्रोदय	५ ६०	५५.००
मल्ल सिंदूर	१.४०	१३ ००
ताल सिंदूर	१.४०	१३ ००
ताम्र सिंदूर	१.४०	१३.००
शिला सिंदूर	१.४०	१३ ००
स्वर्णवङ्ग भस्म	० ६०	५.००
मृतसंजीवनी रस	० ५५	४ ५०
रस माणिक्य	० ४५	३ ५०
समीरपन्नगरस न १	३ ३०	३२ ००
समीरपन्नगरस न २	१ ४०	१३ ००
पञ्चसूत रस	१.४०	१३.००
स्वर्णभूपति रस	३ ३०	३२.००
व्याधिहरण रस	१.८०	१७ ००

भस्में

	३ ग्राम	१० ग्राम
अभ्रक भस्म न १	१५.३०	५० ००
अभ्रक भस्म न २	१.६५	५ २५
अभ्रक भस्म न ३	१ ००	३.१०
अकीक भस्म	१ १०	३.५०
कपर्द (कौड़ी) भस्म	० ४०	०.९०
कांत लौह भस्म	१ ००	३.१०
कुक्कटाण्डत्वक भस्म	० ४०	१ ००
गोदन्ती हरताल भस्म	० ४०	० ७५
जहरमोहरा भस्म	० ९०	२ ७५
तबकीहरताल भस्म	२ ७५	९ ००
ताम्र भस्म न०१	२ १५	७-००
ताम्र भस्म न.२	१.६५	५.२५
ताम्र भस्म न ३	१ ३०	४ १०
नाग भस्म न० १	१ २०	३ ५०
नाग भस्म न० २	०.७०	२ १०
प्रवाल भस्म न.१	२ ००	६ ५०
प्रवाल भस्म न.२	० ८५	२ ५०
प्रवाल भस्म न ३	० ८५	२ ५०
प्रवाल भस्म न ४	० ८०	२ २५
प्रवाल भस्म चन्द्रपुटी	० ८०	२ २५
वङ्गभस्म न.१	१.३०	४ १०
वङ्गभस्म न २	१ ००	३ १०
वैक्रांत भस्म	२ २५	७ २५
मल्ल [सखिया] भस्म	२ २५	७.२५
मृगशृङ्गभस्म श्वेत	० ४०	० ७५
माणिक्य भस्म	२ ८५	९ ००
मण्डूर [कीट] भस्म न १	० ४०	० ८०
मण्डूर भस्म न २	० ३०	० ७०
मुक्ताभस्म न १	३६ ००	१२०.००
मुक्ता भस्म न २	२७ ००	९० ००
यशद भस्म	० ६०	१ ७५
रौप्य भस्म न १	४ ३०	१४ ००
रौप्य भस्म न २	३.८५	१२ ५०
लौह भस्म न १	३ २५	१० ००
लौह भस्म न २	० ७५	२ १०
लौह भस्म न ३	० ६०	१ ६०
स्वर्णभस्म	११५ ००	×
स्वर्ण माक्षिक भस्म	० ७५	२ ३०
शङ्ख भस्म	० ३०	० ६५
शङ्कर लौह भस्म	१ ४०	४ ५०
शुक्ति भस्म [मोती सीप]	० ३०	०-७५
संगजराहत भस्म	०-३५	०.८०
त्रिबंग भस्म न १	१ ४०	४.५०
त्रिबंग भस्म न. २	० ६५	१.८०

पिष्टी

	३ ग्राम	१० ग्राम
प्रवाल पिष्टी	० ८०	२.२५
मुक्ता पिष्टी न १	३३ ००	११०.००
मुक्ता पिष्टी न २	२४ ००	८०.००
अकीक पिष्टी	० ८०	२.२५
जहर मोहरा पिष्टी	० ८०	२.२५
कहरवा पिष्टी	३ १५	१० ००
मुक्ताशुक्ति पिष्टी	० ३०	०.६५
माणिक्य पिष्टी	१.८५	६.००
वैक्रांत पिष्टी	१.८५	६ ००

शोधित द्रव्य

	१०० ग्राम	१० ग्राम
शुद्ध गंधक आमलासार	४ ००	० ५०
शुद्ध बच्छनाग	६ ००	० ७०
शुद्ध विष बीज [वस्त्रपूत]	८ ५०	० ६५
शुद्ध जयपाल	५.००	० ६०
शुद्ध भल्लातक	५ ००	० ६०
शुद्धताल [हरताल]	१२ ००	१.३०
शुद्धशिला (मशिल)	१२ ००	१ ३०
शुद्ध ताम्रचूर्ण १ किलोग्राम		३६.००
शुद्धलौह [फौलाद]	,,	७ ००
शुद्ध धान्याभ्रक (शुद्ध वज्राभ्रक)	,,	६ ५०
शुद्ध मण्डूर	,,	३ ००

पर्पटी

	१ ग्राम	१० ग्राम
ताम्र पर्पटी न १	१ ००	६ ००
ताम्र पर्पटी न २	० ६०	४ ५०
पचामृत पर्पटी न १	१ ००	६ ००
पचामृत पर्पटी न. २	० ६०	४ ५०
विजय पर्पटी (स्वर्णमुक्ता घटित)	३ ८०	३७ ००
बोल पर्पटी न १	० ८०	७ ००
बोल पर्पटी न २	० ५०	३ ५०
रस पर्पटी न १	१ ००	६ ००
रस पर्पटी न २	० ७०	५ ००
लोह पर्पटी न १	१.००	६ ००
लोह पर्पटी न २	० ७०	५ ००
श्वेत पर्पटी	×	० ५०
स्वर्ण पर्पटी न १	३ ८०	३७ ००
स्वर्ण पर्पटी न २	२ ५०	२४ ००

नोट–न १ की पर्पटी विशेष शुद्ध-पारद से निर्मित हैं तथा न २ हिंगुलोत्थ पारद द्वारा निर्मित है। न १ की पर्पटी की मात्रा कम और गुण अधिक होने से इसे व्यवहार मे अधिक लेते है।

बहुमूल्य

रस रसायन गुटिका

	१ ग्राम	१० ग्राम
श्रामवातेश्वर रस	१ ८०	१७ ००
वृ कस्तूरी भैरवरस	३ ६०	३६,००
कस्तूरी भैरवरस	३ १०	३० ००
कस्तूरी भूपण रस	३ १०	३० ००
वृ कामचूडामणिरस	१ ८५	१७ ५०
कामदुग्धा रस	१ ३०	१२ ००
कुमारकल्याण रस	६ ६०	६५ ००
कृष्णचतुर्मुख रस	२ १०	२० ००
चतुर्मुख चितामणि रस	२ ६०	२८ ००
जयमगल रस (स्वर्णयुक्त)	४ ३०	४२ ००
प्रवालपचामृत रस	१ ५०	१४ ००
पुटपक्वविपमज्वरांतक लोह	२ २०	२१.००
वृ पूर्णचन्द्र रस	२ ५०	२४ ००
बसतकुसुमाकर रस	४ ३०	४२ ००
वृ वातचितामणि रस	५ १०	५० ००
ब्राह्मीवटी न १ (स्वणमुक्तायुक्त)	४ ३०	४२ ००
मृगाकपोटली रस	१० ९०	१०८ ००
मधुरोल १० गोली		३ ८०
मधुरान्तक वटी (मौक्तिकवटी)	१ ८५	१७ ५०
महाराजनृपतिबल्लभ रस	१ २०	११ ००
महालक्ष्मीविलास [नारदीय]	१ ५०	१४ ००
महाराजवङ्ग भस्म	१ ३०	१२ ००
योगेन्द्र रस	४ ९०	४८ ००
रसराज रस	३ ५०	३४ ००
राजमृगाक रस	३ ६०	३५ ००
वृ लोकनाथ रस	० ७०	५ ७५
श्वासचिंतामणि रस	२ १०	२० ००
श्वासकासचिता रस	३ ६०	३५ ००
स्वर्णवसतमालती न १	४ ३०	४२ ००
स्वर्ण वसतमालती न २ (शास्त्रीय)	२ ९०	२८ ००
सर्वाङ्गसुन्दर रस	४ १०	४० ००
सग्रहणी कपाट रस न. १	४ १०	४० ००
सूतशेखर रस न १ [स्वर्णयुक्त]	२ २०	२१ ००
हिरण्यगर्भ पोटलीरस	३ ९०	३८ ००
हेमगर्भ रस	४ १०	४० ००

रसायन गुटिका

	१० ग्राम	५० ग्राम
अग्निकुमार रस	० ८०	३ ५०
अमरसुन्दरवटी	० ९५	४ २५
अजीर्ण कण्टक रस	०.९५	४ २५
अग्नितुण्डी वटी	०.८५	३.७५
आनन्दभैरवरस [लाल]	१ ५०	७ ००
आनन्दोदय रस	१ ९०	९.००
आदित्य रस	१ ५०	७ ००
आमलकी रसायन	१ २०	५ ५०
आरोग्यवर्धिनी वटी	१ २०	५ ५०
इच्छाभेदी रस	१ ४०	६ ५०
इच्छाभेदीवटी [गोली]	१ ५०	७ ००
उपदशकुठार रस	० ९५	४ २५
एकागवीर रस	५ ००	२४.५०
एलादि वटी	०.७०	३ ००
एलुआदि वटी	० ७०	३ ००
कनकसुन्दर रस	१ २०	५ ५०
कफकुठार रस	१ ७०	८.५०
कफकेतु रस	० ९५	४ २५
करजादिवटी ५० गोली		१.२०
कामदुधा रस न २	२ ५०	१२ ००
काकायन गुटिका	० ८०	३.५०
कीटमर्द रस	० ८०	३ ५०
क्रव्यादि रस	४ ५०	२२ ००
कृमिकुठार रस	१ ६०	७ ५०
खैरसार वटी	० ७५	३.२५
गगाधर रस	२ १०	१० ००
गन्धक वटी	० ९५	४ २५
गन्धक रसायन	१ ९०	९ ००
गर्भविनोद रस	१ २०	५ ५०
गर्भपाल रस	२ ५०	१२ ००
गर्भचितामणिरस	३ ५०	१७ ००
गुल्मकुठार रस	१ ४०	६.५०
गुल्मकालानल रस	१ ६०	७ ५०
गुड़पिप्पली	० ८०	३ ५०
गुडमार वटी	०.७०	३ ००
ग्रहणी गजेन्द्र रस	३ ७०	१८ ००
ग्रहणीकपाट रस न २	२ ९०	१४ ००
घोडाचोली रस [अश्वकचुकी रस]	१ २०	५ ५०

	१० ग्राम	५० ग्राम
चन्द्रप्रभा वटी	१ २-	५ ५०
चन्द्रोदयवर्ती	१.००	४ ५०
चन्द्रकला रस	१ ६०	७ ५०
चन्द्रासु रस	१.९०	९ ००
चन्द्रामृत रस	१ २०	५ ५०
चित्रकादि वटी	० ८०	३.७५
ज्वराकुश रस	१ १०	५ ००
जयवटी	१.९०	९ ००
जलोदरारि वटी	१ ३०	६ ००
जातीफल रस	२ ९०	१४ ००
तक्रवटी	१ ५५	७ २५
दुर्जलजेता रस	१ १५	५ २५
दुग्धवटी न २	१ ५५	७ २५
नवज्वरहर वटी	१ ५५	७ २५
नष्ट पुष्पातक रस	४ ३०	२० ००
नृपतिवल्लभ रस	१ ९०	९ ००
नाराच रस	१.३०	६ ००
नित्यानन्द रस	१ ४०	६ ५०
प्रताप लकेश्वर रस	१ ३०	६ ००
प्रदरारि रस	१ ५०	७ ००
प्रदरातक रस	२ ४०	११ ५०
प्लीहारि रस	१ ३०	६ ००
प्राणेश्वर रस	३ ५०	१७ ००
प्राणदा गुटिका	० ७५	३ २५
पचामृत रस न १	१.८०	८ ५०
,, न २	२.१०	१० ००
पाशुपत रस	१.३०	६ ००
पीपल ६४ प्रहरी	४ ३०	२१ ००
वृ शङ्ख वटी	१ १०	५ ००
वृ नायकादि रस	० ९५	४ २५
वहुमूत्रान्तक रस	५ ००	२४.५०
वहुशाल गुड	० ८०	३ ५०
वालामृत रस(वटी)	५ ७०	२८ ००
व्राह्मी वटी न २	२ २०	१० ५०
वातगजाकुश रस	२ २०	१० ५०
विषमुष्टिका वटी	० ९५	४ २५
वृद्धिवाधिका वटी	२ ३०	११ ००

	१० ग्राम	५० ग्राम
वैताल रस	२ ९०	१४ ००
व्योषादि वटी	० ७०	३ ००
महामृत्युञ्जय रस (रक्त)	२ १०	१०.००
,, (कृष्ण)	२ १०	१० ००
मकरध्वज वटी ५०० गोली		४६ ००
महागन्धक रस	४.१०	२० ००
मरिच्यादि वटी	० ७०	३ ००
महाशूलहर रस	१ ८०	८ ५०
महावातविध्वस रस	३.७०	१८.००
मार्कण्डेय रस	१.३०	६ ००
मूत्रकृच्छ्रातक रस	४ ३०	२१ ००
मेहमुद्गर रस	१ ५०	७ ००
रक्तपित्तातक रस	१ ८०	८ ५०
रस पीपरी	३.१०	१५ ००
रामवाण रस	१ ३०	६ ००
लवङ्गादि वटी	१ ००	४ ५०
लशुनादि वटी	० ८०	३ ००
लघुमालती वसत	३.१०	१५ ००
लक्ष्मीविलास रस	२ ५०	१२ ००
लक्ष्मीनारायण रस	३ ७०	१८ ००
लाई (रस) चूर्ण	१ ३०	६ ००
लीलावती गुटिका	१ ३०	६ ००
लीलाविलास रस	२ १०	१० ००
लोकनाथ रस	२.३०	११ ००
श्वासकुठार रस	१ ३०	६ ००
शङ्खवटी	०.८०	३ ००
सशमनी वटी	१ ३०	६ ००
शिरोवज्र रस	१ ५०	७ ००
शिलाजीत वटी	२ १०	१० ००
शीतभञ्जी रस(वटी)	२ ४०	११ ५०
शूलवज्रिणी वटी	१ ५०	७.००
शूलगजकेशरी रस	२ ९०	१४ ००
श्रृङ्गाराभ्रक रस	२ ३०	११ ००
समीरगज केशरी	५ ७०	२८ ००
स्मृतिसागर रस	४ ३०	२१ ००
सन्निपात भैरव रस	१ ९०	९.००

	१० ग्राम	५० ग्राम
सजीवनी वटी	० ८०	३ ००
सर्पगधावटी	२ ३०	११ ००
सिद्धप्राणेश्वर रस	१ ३०	६.००
शूत शेखर रस	३.५०	१७.००
सूरण मोदक वृ	०.८०	३ ००
सौभाग्य वटी	१.३०	६.००
हिंग्वादि वटी	०.८०	३ ००
हृदयार्णव रस	३ १०	१५.००
त्रिपुर भैरव रस	१.५०	७.००
त्रिभुवन कीर्ति रस	१ २०	५ ५०
त्रिविक्रम रस	३.५०	१७.००

लोह–माण्डूर

	१० ग्राम	५० ग्राम
अम्लपित्तातक लोह	२ ३०	११ ००
चदनादि लोह(ज्वर)	१ ५०	७ ००
चदनादि लोह(प्रमेह)	१.८५	८ ७५
ताप्यादि लोह	३ ५०	१७ ५०
धात्री लोह	१ ३०	६ ००
नवायस लोह (लोह-भस्म से निर्मित	१ ००	४ ५०
प्रदरारि लोह	१.६०	७.५०
प्रदरान्तक लोह	१ ९०	९ ००
पुनर्नवादि माण्डूर	१ ००	४ ५०
विडगादि लोह	१ १०	५ ००
विषम ज्वरातक लोह	१ ८०	८ ५०
यकृत हर लोह	१ ६०	७.५०
शोथोदरारि लोह	२ १०	१०.००
सर्वज्वरहर लोह	१.८०	८ ५०
सप्तामृत लोह	१ ५०	७.००
त्र्यूषणादि लोह	१ ५०	७ ००

गुग्गुल

	१० ग्राम	५० ग्राम
अमृतादिगुग्गुल	० ८०	३.००
काचनार गुग्गुल	० ७०	२ ५०
किशोर गुग्गुल	० ७०	२ ५०
गोक्षुरादि गुग्गुल	० ७०	२.५०
पुनर्नवादि गुग्गुल	०.७०	२ ५०
वृ योगराज गुग्गुल	१ ४५	६ ७५

	१० ग्राम	५० ग्राम		१० ग्राम	५० ग्राम		१० ग्राम	५० ग्राम
योगराज गुग्गुल	० ६०	२ ००	रास्नादि गुग्गुल	०.७०	२ ५०	त्रयोदशांग गुग्गुल	० ७०	२.५०
रसाभ्र गुग्गुल	१ ३०	६ ००	सिंहनाद गुग्गुल	०.७०	२ ५०	त्रिफलादि गुग्गुल	०.७०	२ ५०

अरिष्ट—आसव

	६००मि. लि (१ बोतल)	४००मि लि (१ पौंड)	२१०मि लि (८ औंस)
अमृतारिष्ट	३ ६०	३ ०५	१ ७०
अर्जुनारिष्ट	३.७०	३ १०	१ ७५
अरविंदासव न० १	६ ३५	७ ८५	४ २०
केशरयुक्त	१०० मि लि.		२ ३५
अरविंदासव न० २	४ १०	३ ३५	२ १०
अशोकारिष्ट	३.७०	३.१०	१ ७५
अभयारिष्ट	३.७०	३ १०	१ ७५
अश्वगधारिष्ट	४ १०	३.३५	२ १०
उशीरासव	३ ६०	३.०५	१ ७०
कनकासव	३.६०	३.०५	१ ७०
कुमारी आसव	३ ७०	३ १०	१ ८०
कुटिजारिष्ट	३ ७५	३ १५	१ ८५
खदिरारिष्ट	३ ५०	३.०५	१ ७०
चन्दनासव	३ ५०	३.०५	१.७०
दशमूलारिष्ट न० १ (कस्तूरी सहित)	६.५०	५.३५	२.६०
दशमूलारिष्ट न० २ (कस्तूरी रहित)	४ ००	३.३०	१ ६५
द्राक्षासव	४.००	३ ३०	१.६५
द्राक्षारिष्ट	४ ००	३.३०	१ ६५
देवदार्व्यारिष्ट	३ ७०	३.१०	१.८०
पत्रागासव	३.७०	३.१०	१.८०
पिपल्यासव	३ ७०	३.१०	१ ८०

	६००मि. लि. (१ बोतल)	४००मि लि. (१ पौंड)	२१०मि. लि (७ औंस)
पुनर्नवासव	३.५०	३ ०५	१ ७०
वल्लभारिष्ट	६.१०	५ ००	२ ६५
बबूलारिष्ट	३ ५०	३ ०५	१ ७०
वासारिष्ट	४ ००	३ ३०	१,६५
बालरोगांतकारिष्ट	४.५०	३ ७५	२ ०५
विडङ्गासव	३.६०	३ ०५	१ ७०
रक्तशोधिकारिष्ट	४ १०	३ ३५	१.६५
रोहितकारिष्ट	३ ५०	३ ०५	१ ७०
लोहासव	३ ३०	२ ८५	१ ६५
सारस्वतारिष्ट न० १ (स्वर्णयुक्त)	×	×	७ ६०
सारस्वतारिष्ट न० २	४.५०	३.७०	२ ००
सारिवाद्यासव	४.००	३.३०	१ ६५

अर्क

अर्क उसवा	४.१०	३.४०	१ ८०
दशमूल अर्क	२ ५०	२.२५	१ २५
द्राक्षादि अर्क	३.१०	२.८०	१ ५०
महामजिष्ठादि अर्क	२.५०	२ २५	१ २५
रास्नादि अर्क	२.५०	२.२५	१ २५
सुदर्शन अर्क	२ ८०	२.५०	१ ३५
अर्क सौंफ	२.७५	२ ४५	१ ३५
अर्क अजवायन	२.७५	२.४५	१ ३५
अर्क पोदीना	२.८०	२ ५०	१ ३५

क्वाथ

दशमूल क्वाथ १ किलोग्राम	१ ७५
१०० ग्राम	० ३०
२० ग्राम की १०० पुड़िया	७ ००
दार्व्यादि क्वाथ १ किलो०	५ ००
१२५ ग्राम की ८ पुड़ियां	५ ५०
देवदार्व्यादि क्वाथ १ किलो०	४ २५
१२५ ग्राम की ८ पुड़िया	४ ७५
बलादि क्वाथ १ किलोग्राम	३ ००
१२५ ग्राम की ८ पुड़िया	३ ५०
महामजिष्ठादि क्वाथ	५.००
१२५ ग्राम की पुड़िया	५.५०
महारास्नादि क्वाथ १ किलो०	५ ००
१२५ ग्राम की ८ पुडिया	५ ५०
त्रिफलादि क्वाथ १ किलो०	४ २५
१२५ ग्राम की ८ पुडिया	४ ७५

चूर्ण

	१ किलोग्राम	५० ग्राम
अग्निमुख चूर्ण	१४.००	०.९५
अविपत्तिकर चूर्ण	१२.५०	०.९०
अजीर्ण पानकचूर्ण	१७.००	१.१०
उदरभास्कर चूर्ण	१६.००	१.०५
एलादि चूर्ण	२१.००	१.३०
कपित्थाष्टक चूर्ण	१२.५०	०.९०
कामदेव चूर्ण	१६.००	१.०५
गङ्गाधर चूर्ण	१४.००	०.९५
चन्दनादि चूर्ण	१४.००	०.९५
ज्वर भैरव चूर्ण	१४.००	०.९५

	१ किलोग्राम	५० ग्राम
जातीफलादि चूर्ण	२८.००	१.६५
तालीसादि चूर्ण	२१.००	१.३०
दशनसंस्कार चूर्ण	१७.००	१.१०
नारायण चूर्ण	१४.००	०.९५
निम्बादि चूर्ण	१४.००	०.९५
प्रदरातक चूर्ण	१४.००	०.९५
पञ्चमकार चूर्ण	११.००	०.८०
प्रदरादि चूर्ण	१४.००	०.९५
पुष्यानुग चूर्ण	१४.००	०.९५
यवानीखाडव चूर्ण	१४.००	०.९५

	१ किलोग्राम	५० ग्राम
लवगादि चूर्ण	२४.००	१.५०
लवणभास्कर चूर्ण	१२.००	०.९०
सारस्वत चूर्ण	१४.००	०.९५
सामुद्रादि चूर्ण	१६.००	१.०५
शृंग्यादि चूर्ण	१७.००	१.१०
सितोफलादि चूर्ण	३५.००	२.००
[असली वशलोचन से बना हुआ]		
महासुदर्शन चूर्ण	११.००	०.८०
हिंग्वाष्टक चूर्ण	२०.००	१.२५
त्रिफलादि चूर्ण	९.००	०.७०

तैल–घृत

	४०० मि. लि.	१०० मि. लि.	५० मि. लि.
आवला तैल	८.५०	२.२०	१.२५
इरिमेदादि तैल	९.००	२.४०	१.३०
कटफलादि तैल	१०.५०	२.७५	१.४५
कन्दर्प सुन्दर तैल	११.५०	३.००	१.६०
काशीसादि तैल	१०.००	२.६०	१.३५
किरातादि तैल	८.५०	२.३०	१.२५
कुमारी तैल	९.००	२.४०	१.३०
ग्रहणीमिहिर तैल	१०.००	२.६०	१.३५
गुडुच्यादि तैल	१ ००	२.४०	१.३०
महाचन्दनादि तैल	११.००	२.९०	१.५०
चदनबलालाक्षादि तैल	११.००	२.९०	१.५०
जात्यादि तैल	११.००	२.१०	१.५०
दशमूल तैल	१०.००	२.६०	१.३५
दार्व्यादि तैल	११.००	२.९०	१.५०
महानारायण तैल	१०.००	२.६०	१.३५
पिप्पल्यादि तैल	१०.००	२.६०	१.३५
पिंड तैल	११.५०	३.००	१.६०
पुनर्नवादि तैल	९.००	२.४०	१.३०
ब्राह्मी तैल	११.००	२.९०	१.५०
बिल्व तैल	११.००	२.९०	१.५०
विष गर्भ तैल	९.५०	२.५०	१.३०
भृङ्गराज तैल	१०.५०	२.७५	१.४५

	४०० मि. लि.	१०० मि. लि.	५० मि. लि.
महाविषगर्भ तैल	१०.५०	२.७५	१.४५
बैरोजा तैल	१४.००	३.६५	१.९५
महामरिच्यादि तैल	९.००	२.४०	१.३०
महामाष तैल	११.००	२.९०	१.५०
मोम का तैल	१७.००	४.३५	२.२५
राल का तैल	१६.००	४.१०	२.१०
लाक्षादि तैल	१०.००	२.६०	१.३५
शुष्कमूलादि तैल	९.००	२.४०	१.३०
षट्बिन्दु तैल	१०.५०	२.७५	१.४५
हिमसागर तैल	११.००	२.९०	१.५०
क्षार तैल	१६.००	४.१०	२.१०
अर्जुन घृत	१७.००	४.४०	२.२५
अशोक घृत	१७.००	४.४०	२.२५
अग्नि घृत	१७.००	४.४०	२.२५
कदली घृत	१८.००	४.७५	२.४०
कामदेव घृत	२०.००	५.१५	२.६५
दूर्वादि घृत	१७.००	४.४०	२.२५
धात्री घृत	१७.००	४.४०	२.२५
पञ्चतिक्त घृत	१४.००	३.६५	१.८५
फल घृत	१७.००	४.४०	२.२५
ब्राह्मी घृत	१७.००	४.४०	२.२५

	४०० मि.लि.	१०० मि.लि	५० मि.लि		४०० मि लि	१०० मि लि	५० मि लि
महाबिन्दुघृत	१७००	४४०	२.२५	सारस्वत घृत	१७००	४४०	२ २५
महात्रिफलादिघृत	१८००	४७५	२ ४०				
शृङ्गीगुड घृत	१७००	४४०	२ २५				

नोट—सभी शीशिया पिल्फर कैप से सुन्दर पैक की जाती है।

क्षार–सत्व–द्राव

	१०० ग्राम	१० ग्राम		१०० ग्राम	१० ग्राम		१०० ग्राम	१० ग्राम
वज्रक्षार	३.५०	० ४५	तिलक्षार	४ २५	० ५५	यवक्षार	२ ५०	०.३५
अपामार्ग क्षार	३ ५०	० ४५	मूली क्षार	५ ००	० ६०	गिलोय सत्व	४.००	० ५०
इमलीक्षार	३ ५०	० ४५	ढाक क्षार	३.५०	० ४५	नाडी क्षार	५ ००	० ६०
वासाक्षार	४ २५	० ५५	आक क्षार	५ ००	०.६०	शखद्राव १०० मिलीलिटर	११ ५०	
कटेरी क्षार	४ २५	० ५५	केतकी क्षार	३ ५०	० ४५	२५ मि लि (१ औस)	३ ००	
कदली क्षार	३.५०	० ४५	चना(चणक)क्षार	४ २५	० ५५			

अवलेह

च्यवनप्राशअवलेह

४५० ग्राम शीशी मे	५ ००
२५० ग्राम शीशी मे	२ ८०
२५० ग्राम कार्डबक्स मे	३ ००
१२५ ग्राम शीशी मे	१ ५०
६०० ग्रा प्लास्टिक की शीशी	१० ००

	१ किलोग्राम	२५० ग्राम
कुटजावलेह	१३.००	३ ४५
कण्टकारी अवलेह	१२ ५०	३ ४०
कुशावलेह	१३ ००	३ ४५
वासावलेह	१२ ५०	३ ४०
ब्राह्मी रसायन	१४ ००	३ ७०
आर्द्रक खण्ड	१४ ००	३ ७०

	१ किलोग्राम	१२५ ग्राम
सुपारी पाक	१४ ००	२ ००
विषमुष्टिकावलेह ५० ग्राम		६ ७५
मधुकाद्यावलेह १७५ ग्राम		४ ००

मलहम लेप

	१०० ग्राम	५० ग्राम		१०० ग्राम	५० ग्राम		१०० ग्राम	५० ग्राम
जात्यादि मलहम	२ ६०	१ ५०	अग्निदग्धव्रणहर मलहम	२ ५०	१ ३५	दशांगलेप	२ ६०	१ ४०
पारदादि मलहम	३ ६०	१ ९०				निम्बादि मलहम	४ ५०	२ ४०

बहुमूल्य द्रव्य

	१० ग्राम		१० ग्राम		१० ग्राम
असली कस्तूरी न.१	१५०.००	केशर काश्मीरी मोगरा	४०,००	केशर चूरा (औषधि निर्माण के लिए उत्तम)	१६ ००
कस्तूरी काश्मीर उत्तम	८० ००	चांदी के वर्क	१२ ००		
अम्बर	३६ ००				

भस्म निर्माणार्थ द्रव्य

अकीक दाना	५० ग्राम	२ ००	जहर मोहरा खताई	१० ग्राम	२.००	पिरोजा खड़ १० ग्राम	२ ००
वैक्रात खड	१० ग्राम	२ ००	नीलम खड	,,	२ ००	कहरवा	७ ००
अकीक खड	,,	१ ००	खर्पर (खपरिया)	,,	२ ००	पुखराज खड़	३ ००
माणिक्य (याकूत)	,,	२.००					

नोट—बहुमूल्य द्रव्य एव निर्माणार्थ द्रव्यो के भाव नैट है। इन भावो पर किसी को कमीशनादि न दिया जायगा। इन भावो मे घट बढ़ होना भी सभव है। आर्डर सप्लाई के समय जो भाव होगा वह लगाया जायगा।

केवल रजिस्टर्ड चिकित्सकों के लिये—

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ द्वारा निर्मित

अनुभूत एवं सफल पेटेण्ट दवायें

हमारी ये पेटेन्ट औषधिया ७० वर्षों से भारत के प्रसिद्ध वैद्यराजो और धर्मार्थ औषधालयो द्वारा व्यवहार की जा रही है। अत. इनकी उत्त-मता के विषय मे किसी प्रकार का सदेह नहीं करना चाहिए।

मकरध्वज वटी

(अर्थात् निराशवन्धु)

आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति में सबसे अधिक प्रसिद्ध एवं आशुफलप्रद महौषधि सिद्ध मकरध्वज नम्बर एक अर्थात् चन्द्रोदय है। इसी अनुपम रसायन द्वारा इन गोलियो का निर्माण होता है। इसके अतिरिक्त अन्य मूल्यवान एव प्रभावशाली द्रव्यों को भी इसमे डाला जाता है। ये गोलिया भोजन को पचाकर रस, रक्त आदि सप्त धातुओ को क्रमश सुधारती हुई शुद्ध वीर्य का निर्माण करती और शरीर मे नव-जीवन व नवस्फूर्ति भर देती है। जो व्यक्ति चन्द्रोदय के गुणो को जानते है वे इसके प्रभाव मे सन्देह नही कर सकते। वीर्य विकार के साथ होने वाली खासी, दमा, सर्दी, कमर का दर्द, मन्दाग्नि, स्मरण शक्ति का नाश आदि व्याधिया भी दूर होती है। क्षुधा बढती व शरीर हृष्ट-पुष्ट और निरोग बनता है। जो व्यक्ति अनेको औषधियाँ सेवन कर निराश हो गये है उन निराश पुरुषो को यह औषधि बन्धुतुल्य सुख देती है इसलिये इसका दूसरा नाम निराशवन्धु है।

४० वर्ष की आयु के बाद मनुष्य को अपने मे एक प्रकार की कमी और शिथिलता का अनुभव होता है। मकरध्वज वटी इस शक्ति को पुन उत्तेजित करती और मनुष्य को सबल व स्वस्थ बनाये रखती है। मूल्य—१ शीशी (४१ गोलियो की) ४००, छोटी शीशी (२१ गोलियो की) २.१०

कुमारकल्याण घुटी

(बालको के लिए सर्वोत्तम घुटी)

इसके सेवन करने वाले बालक कभी बीमार नहीं होते किन्तु पुष्ट हो जाते हैं। इसके सेवन से बालको के समस्त रोग जैसे ज्वर, हरे पीले दस्त, अजीर्ण, पेट का दर्द, अफरा, दस्त मे कीडे पड जाना, दस्त साफ न होना, सर्दी, कफ, खासी, पसली चलना, सोते मे चौक पडना, दात निकलने के रोग आदि सब दूर हो जाते हैं। शरीर मोटा ताजा और बलवान हो जाता है। पीने मे मीठी होने मे बच्चे आसानी से पी लेते हैं। मूल्य एक शीशी १४ मि लि ०.३५, ४ औंस (११४ मिलि लिटर) की शीशी सुन्दर कार्डबक्स मे २.३०, २ औंस (५७ मिली लिटर) की शीशी सुन्दर कार्डबक्स मे १२०, १ पौंड (४५५ मि लि ८.५०

कुमार रक्षक तेल—इसको बच्चे के सम्पूर्ण शरीर पर धीरे-धीरे रोजाना मालिश करे। आध घण्टे बाद स्नान करायें। बच्चे मे स्फूर्ति बढेगी, मासपेशियाँ सुदृढ हो जायेंगी, हड्डियो मे ताकत पहुचेगी। मूल्य १ शीशी ४ औंस (११४ मि लि २ ५०, छोटी शीशी २ औंस (५७ मि लि) १ ३५

ज्वरारि—कुनीनरहित विशुद्ध आयुर्वेदिक ज्वर जूडी को शीघ्र नष्ट करने वाली सस्ती एव सर्वोत्तम महौषधि है। जूडी और उसके उपद्रवो को नष्ट करती है मूल्य—दश मात्रा की शीशी १ ५०, २० मात्रा की बडी शीशी २.८०, ५० मात्रा की पूरी बोतल ५ ००

कासारि—हर प्रकार की खासी को दूर करने वाली सर्वत्र प्रशसित अद्वितीय औषधि है। यह वासा पत्र क्वाथ एव पिप्पली आदि कासनाशक आयुर्वेदिक द्रव्यों से निर्मित शर्बत है। अन्य औषधियो के साथ इसको अनुपान रूप मे देना भी उपयोगी है। सूखी व तर दोनो प्रकार की खासी को नष्ट करने वाली सस्ती दवा है। मूल्य—बीस मात्रा की शीशी १.८०, ५ मात्रा की शीशी ८० पैसे, १ पौंड (४०० मि लि) ६ ००

कामिनी रक्षक—बार-बार गर्भस्राव हो जाना, बच्चो का छोटी आयु मे ही मर जाना, इन भयकर व्याधियों से अनेक सुकुमार स्त्रिया आजकल पीडित हैं। यदि कामिनी रक्षक को गर्भ के प्रथम माह से नवम माह तक सेवन करावें तो न गर्भस्राव होगा और न गर्भपात। बच्चा स्वस्थ, सुन्दर और सुडौल उत्पन्न होगा। मू २ औंस (५७ मि लि) की एक शीशी २ ५०।

शिरोविरेचनीय सुरमा—जिनको जुकाम रुकने के कारण सिर मे दर्द हो वो इस सुरमा को सलाई से हल्का-हल्का नेत्रो मे आजे। थोडी देर ही मे आख व नाक से बलगम निकलना प्रारम्भ हो जायगा और सभी कष्ट दूर होगे। पुराने सिर दर्द मे पथ्यादि क्वाथ वा शिरोवज्र रस भी साथ मे सेवन करने से शीघ्र लाभ होगा। मूल्य—१ ग्राम की शीशी ० ७५।

वातारि वटी—वातरोगनाशक सफल और सस्ती दवा है। १-२ गोली प्रात॰ साय गरम जल या रास्नादि क्वाथ के साथ लेने से सभी प्रकार की वात व्याधिया नष्ट होती है। मूल्य—एक शीशी (५० गोली) २ ५०।

करंजादि वटी—ये गोलिया मलेरिया के लिए उत्तम प्रमाणित हुई हैं। १ शीशी (५० गोली) १ २०।

कासहर वटी—हर प्रकार की खासी के लिये सस्ती व उत्तम गोलिया है। दिन मे ५-७ बार अथवा जिस समय खासी अधिक आ रही हो १-१ गोली मुह मे डाल रस चूसे, गला व श्वास नली साफ होती है। कफ बन्द होता है। मूल्य १ शीशी (१० ग्राम) ० ६०

निम्बादि मलहम—यह मलहम फोडा-फुसी व घावो के लिये अत्युत्तम है। निम्ब क्वाथ से घाव या फोडो को साफकर इस मरहम को लगाने से वे शीघ्र ही भरते है नासूर तक को भरने की इसमे शक्ति है। मूल्य—१ शीशी आध औस ६० नये पैसे, २०० ग्राम का पैक ८ ५० रुपया।

बल्लभ रसायन—किसी भी रोग से किसी भी प्रकार का रक्तस्राव होता हो तो यह विशेष लाभ करता है। रक्त को बन्द करने के लिये अव्यर्थ औषधि है। मूल्य २ औंस की १ शीशी २ ००

रक्तबल्लभ रसायन—इसमे ज्वर के साथ होने वाला रक्तस्राव बन्द होता है। ज्वर को दूर करने और रक्त को बन्द करने के लिये अव्यर्थ हैं। १ शीशी आध औंस [१८ मिली लिटर] २ ००।

सरलभदी वटी—जिनको नित्य ही कब्ज की शिकायत रहती हो और कई-कई बार दस्त जाना पडता हो उन्हे १-२ गोली रात्रि में सेवन करने से नित्य प्रात दस्त साफ होता है तथा कार्य करने मे उत्साह बढता है। मू १ शीशी [३१ गोली] १ ५०

गोपाल चूर्ण—जिनकी प्रकृति पित्त की हो उन्हे इसके सेवन से दस्त साफ होता है। जिनको मलावरोध हो उन्हे इसमे से ३ माशे रात को सोते समय गुनगुने जल के साथ या गरम दूध के साथ फाक लेने से सुबह दस्त साफ हो जाता है। १ शीशी [२ औंस] १ ००

मृदुविरेचक चूर्ण—यह मृदुविरेचक है। जिन्हे मलावरोध रहता हो और अनेक औषधियो से न गया हो भोजनोपरान्त ३—३ माशे गुनगुने पानी से फकायें। यदि पेट मे खुरचन सी मालूम पडे तो थोडी सौंफ चबा लें। इनसे पन्द्रह दिन मे मलावरोध नष्ट होता है। मू १ शीशी १ ००

आवनिस्सारक वटी—प्रात काल गुनगुने जल के साथ तीन गोली तक सेवन करने से गुदा के द्वारा आव निकलने लगती है। आव निकालने के लिये यह एक ही वस्तु है। यदि पेट मे दर्द ऐंठन हो तब चिन्ता न करें। क्योकि आव निकलते समय प्राय ऐसा होता है। एक शीशी १ तोला [१० ग्राम] १ २५

मुंह के छालो की दवा—इसको छालो पर बुरककर मुह नीचे कर दें, लार गिरने लगेगी, दिन रात में छाले नष्ट हो जायेगे। मूल्य एक शीशी (आध औंस) ० ८०

कर्णामृत तैल—कान मे सांय-सांय शब्द होना, दर्द होना, कान से मवाद बहना आदि सभी कर्ण-रोगो के लिये उत्तम तैल है। आधा औस [१४ मि लि] ० ८०

बालोपकारक वटी—बालक बेहोश हो जाता है, हाथ पैर ऐंठ जाते हैं, मुख से लार (झाग) देने लगता है, दांती बन्द हो जाती है। बालक की ऐसी हालत मे यह अक्सीर प्रमाणित होती है। १ शीशी [३१ गोली] २ ५०

मधुरौल—मधुमेह, बहमूत्र व सोमरोग मे भी यह लाभप्रद है। मूल्य १० गोली ३ १०

पायरिया मंजन—इस मजन के नित्य व्यवहार से दातो से खून जाना, मवाद जाना, टीस मारना, पानी लगना आदि दूर होते है। मूल्य एक शीशी १ ००

नयनामृत सुरमा—नेत्र रोगो के लिए उपयोगी सुरमा है। चादी या काच की सलाई से दिन मे एक बार लगाने से धु धला दीखना, पानी निकलना, खुजली नष्ट होती है। मू. [३ ग्राम] की शीशी ७५ पैसे।

अग्निसंदीपन चूर्ण—अग्नि को उत्तेजित करने वाला मीठा व स्वादिष्ट चूर्ण है। भोजन के बाद ३ ३ माशे लेने से कब्ज दूर हो रुचि बढेगी। एक शीशी (२ औस) मूल्य ० ७५।

मनोरम चूर्ण—स्वादिष्ट, शीतल व पाचन चूर्ण है, एक बार चख लेने पर शीशी समाप्त होने तक आप खाते ही रहेगे। गुण और स्वाद दोनो मे लाजवाब है। १ शीशी [२ औंस] ० ७५, छोटी शीशी [१ औस] ० ४५

अग्निवल्लभ क्षार—इसके सेवन से अग्नि प्रज्वलित होती व खाना हजम होता है। भूख न लगना, दस्त साफ न होना, खट्टी डकारो का आना, पेट मे दर्द तथा भारीपन होना, तबियत मचलाना, अपान वायु का बिगडना इत्यादि शिकायतें दूर होती है। जल दोष नही सताता। एक शीशी [२ औस] का मूल्य १ २५

ग्रहणीरिपु—यह ग्रहणी रोग के लिए अक्सीर है। एक शीशी १ औस ३ ५०

खाजरिपु-गीली तथा सूखी खाज के लिए अक्सीर है। मूल्य एक शीशी [२ औस] १ २५, छोटी शीशी ० ७०।

दाद की दवा—यह दाद की अक्सीर दवा है। दाद को साफ करके किसी मोटे वस्त्र से खुजलाकर दवा की मालिश करे। स्नान करने के बाद रोजाना वस्त्र से अच्छी प्रकार पोंछ लिया करे। एक शीशी मूल्य ० ७५

नेत्र बिन्दु—दुखती आखो के लिये अत्युपयोगी है। मूल्य आधा औस [१४ मि लि] ० ८८, ¼ औस ० ५०

स्वप्नोजित वटी-३० गोली की १ शीशी २ ५०

स्वप्नोजित चूर्ण—४ औस की १ शीशी २ ५०

शक्तिदा चूर्ण—४ औस १ शीशी २ ५०

नारी सुखदा वटी-३० गोली की १ शीशी २ ००

धन्वन्तरि काला दंतमंजन—विशुद्ध आयुर्वेदीय द्रव्यो से निर्मित यह काला दतमजन नित्य व्यवहार करने के लिये उपयोगी है। दातो को चमकीला बनाता है, मुख की दुर्गन्ध दूर करता है, मसूढो को सुपुष्ट बनाता है एक बार व्यवहार करने पर आप इसे सदैव व्यवहार करना पसद करेगे। मूल्य एक शीशी १ २५

निद्राकारक तैल—किसी रोग के कारण या मानसिक चिन्ताओ के कारण निन्द्रा न आने पर इसकी मालिश सिर तथा बालो मे धीमे-धीमे कीजिये, मिनटो मे निन्द्रा आ जायगी तथा रोगो व चिन्ताओ से छुटकारा मिलेगा। मूल्य २ औस की १ शीशी २ ८०, १ पौंड २० ००

शोथ शार्दूल तैल-इस तैल की मालिश करने से शोथ किसी भी प्रकार का हो तत्काल लाभ होगा। एक बार अवश्य परीक्षा करें। मूल्य २ औस की एक शीशी २ ५०

शूलहर टिकिया—दर्द गुर्दा के लिये अक्सीर। जलते हुए अङ्गारो पर १ या २ टिकिया रखकर उसका धूआ जहा दर्द हो वहा लगावें। दर्द तुरन्त बन्द होगा। मूल्य १० टिकियो की शीशी १ ८०

डब्बानाशक वटी-बालको के पसली चलने (बाल न्यूमोनिया) के लिए अक्सीर औषधि। मूल्य ३० गोली की एक शीशी १ ५०।

सौन्दर्यवर्धक चूर्ण (उबटन)—चेहरे की कील, मुहासे आदि से रक्षा करने वाला तथा सुन्दर सुवर्ण बनाने वाला अनुपम उबटन है। कन्याओ तथा सौंदर्य प्रेमी महिलाओ के लिये अत्युपयोगी चूर्ण है। मूल्य शीशी १.५०

चन्द्रप्रभावर्ति—आख की फूली के लिये उत्तम। इसके लगाने से आख का जाला, धुध पानी बहना खुजली होना आदि नेत्र विकार नष्ट होते है। नियमित अधिक समय तक व्यवहार करने से फुली भी नष्ट होती है। सुपरीक्षित दवा है। मूल्य ५० ग्राम ८ ००, १० ग्राम १ ८०

जुसांदा (जुकाम नाशक क्वाथ)—बिगडे जुकाम के लिये अति उत्तम क्वाथ है। जुकाम भयानक रोग है। इसकी उपेक्षा करने स अनेक भीषण रोग उत्पन्न हो जाते है। इस क्वाथ की ४ ५ मात्रा ही सम्पूर्ण विकार नष्ट कर देनी हे। २०-२० ग्राम की १० पुडिया १ ६०

द्राक्षावलेह—सूखी कास को दूर करने के लिये थोडा थोडा चटावें तुरन्त ही लाभ होगा। १२५ ग्राम की एक शीशी ३ २५

सोमकल्पासव—यह श्वास तथा स्वर-यत्र के सभी रोगो के लिये अत्युपयोगी एव सुपरीक्षित है। मूल्य १ बोतल ५.५०, १ पौंड ४ २५, १ पाव २ ५०

---

१ विपरीत क्रम यानी ऊपर स नीच की ओर जाने वाला।

४ अस्त-व्यस्त, बिखरा हुआ।

हमारे सफल सैट

स्त्री रोगहर सैट —स्त्री सुधा—स्त्रियो के लिये सव श्रेष्ठ प्रसिद्ध लाभकारी औपधि, मूल्य १ वोतल ६ ००, १ शीशी ३ ०० । मधुकाद्यवलेह—स्त्री सुधा के साथ इसे सेवन कर लेने से शीघ्र लाभ होता है । एक शीशी ४ ००, पूरा सैट पन्द्रह दिन सेवन योग्य औपधियो का मू ६ ००

हिस्टेरियाहर सैट—१५ दिन की तीन दवाओ का मूल्य १० ००

निर्वलताहर सैट—मकरध्वज वटी, तेल व पोटली तीन दवाये २० दिन व्यवहार करने योग्य मू १० ००

मकरध्वज वटी—८१ गोली १ शीशी ४ ००

धन्वन्तरि तेल—मुरदार नसो पर मालिश के लिये एक शीशी मू ३ ५०

धन्वन्तरि पोटली—सिकाई करने के लिए १ डिब्बा मूल्य ३ ५०

श्वेत कुष्ठहर सैट—इसमे श्वेतकुष्ठहर अवलेह, वटी व घृत तीन औपधिया है । इन तीनो औपधियो के विधिवत् अधिक दिन सेवन करने से श्वेतकुष्ठ अवश्य नष्ट होता है १५ दिन की तीनो दवाओ का ८ ००

रक्तदोष हर सैट—इसमे धन्वन्तरि आयुर्वेदीय सालसापरेला, तालकेश्वर रस, इन्द्रवारुणादि क्वाथ—ये तीन औपधिया है । इनके सेवन से सभी प्रकार के रक्त विकार तथा चर्म रोग नष्ट होकर शरीर सुडौल बनता है । मूल्य पन्द्रह दिन की तीनो दवाओ का ६.००,पोस्ट व्यय ४ ५०

अर्शान्तक सैट—इसमे वटी, मलहम तथा चूर्ण तीन औपधिया है । इनके प्रयोगो से दोनो प्रकार के अर्श नष्ट होते है । अर्श से आने वाला रक्त १-२ दिन में ही वन्द हो जाता है । मू १५ दिन की तीनो दवाओ का ६ ००

वात रोगहर सैट—इसमे वातरोगहर तैल, रस अवलेह ये तीन औपधिया हैं । इन तीनो औपधियो के व्यवहार से जोडो का दर्द, सूजन, अङ्ग विशेष की पीड़ा, पक्षाघात आदि समस्त वात व्याधियों मे लाभ होता है । १५ दिन सेवन योग्य तीनो औपधियो का मू. १०.००

सर्वोत्तम शिलाजीत

स्वय निकला हुआ अत्युत्तम तथा पूर्ण विश्वस्त शिलाजीत मगाकर रोगियो को व्यवहार करावें तथा औपधि निर्माणार्थ काम में लावे ।

मूल्य—१ किलोग्राम १४० रु, ५० ग्राम ७ २५, १० ग्राम १ ७० ।

असली शहद

औपधियो के अनुपान रुप मे व्यवहार करने के लिये हमने शुद्ध अत्युत्तम असली शहद ग्राहको को सप्लाई करने का प्रवन्ध कर लिया है । यह निम्न पैकिङ्गो में आप प्राप्त कर सकते है—

५०० ग्राम ८ ००, १०० ग्राम २ २५, ५० ग्राम १ २५

असली विश्वस्त गिलोय सत्व

स्वय अपनी देखरेख मे निकाला गया विश्वस्त गिलोय सत्व हमसे मगाकर व्यवहार कीजियेगा । इसमे सन्देह करने की कोई आवश्यकता नही है । मूल्य—

१ किलोग्राम ३१ ५०, ५० ग्राम २ रु

पता—धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ (अलीगढ़)

शारीरिक चित्र

ये चित्र अनेक रङ्गो मे आफसैट प्रेस से बहुत ही आकर्षक तैयार कराये गये हैं। इन चित्रो का साइज एक समान २० इन्च चौड़ाई तथा ३० इन्च लम्बाई है। ऊपर नीचे लकडी लगी है, कपडे पर मढ़े है तथा चिकित्सालय में टांगने पर उसकी शोभा बढ़ाने वाले है। सभी विवरण हिन्दी मे लिखा गया है।

न. १ अस्थिपंजर—इस चित्र मे सिर से लेकर पैर तक की सभी अस्थियो को बडे सुन्दर ढग से दर्शाया गया है। हाथ की, अगुलियो की, पैर की, रीढ की, छाती की सभी अस्थियां स्पष्ट समझ सकते हैं। मू ५ ००

न २ रक्तपरिभ्रमण—इसमे शुद्ध अशुद्ध रक्त की धमनी एव शिरायें अपने प्राकृतिक रङ्गो मे दर्शाई गई है। भ्रूण मे रक्तपरिभ्रमण का पृथक चित्रण किया गया है। एक हाथ और एक पैर मे शिरायें दर्शाई गई हैं। मू ५ ००

नं ३ वातनाड़ी संस्थान—इस चित्र मे सम्पूर्ण वात नाडी मण्डल [Nervous System] का सुन्दर व स्पष्ट चित्रण किया गया है। उर्ध्वाङ्ग वातनाडी तथा सुषुम्ना और मस्तिष्क सम्बन्ध का चित्रण पृथक किया गया है। चित्र अपने ढग का निराला है। मूल्य ५ ००

न ४ नेत्र रचना एवं दृष्टि विकृति—इस चित्र मे पृथक-पृथक ६ चित्र है। १—दक्षिण चक्षु—इसमे चक्षु के बाह्य अवयव दर्शाए गये हैं। २—पटलो और कोष्ठों को दिखाने के लिये चक्षु का क्षितिज काट। ३—चक्षु से सम्बन्धित नाडी। ४—नेत्र चालनी पेशियां। ५—दृष्टिभेद (दर्शनसामर्थ्य। ६—साधारण स्वस्थ नेत्र एव दृष्टि विकृति। इन चित्रो से नेत्र विषयक सम्पूर्ण विवरण समझ मे आयेगा। मू. ५.००

चारो चित्र एक साथ मगाने पर केवल १६ ००

नोट—वादे बिना कपडा लकडी लगे चित्र शीशा में मढने के लिए १ चित्र ४ ००। चारो चित्र मंगाने पर १२ ००

वैद्यों के लिये आवश्यक

रोगी रजिस्टर—हर वैद्य के लिए यह आवश्यक है कि वह अपने रोगियो का विवरण नियमित रूप से लिखे। चिकित्सक को अपनी सुविधा तथा कानूनी दृष्टि दोनो प्रकार से आवश्यक है। २०० तथा ४०० पृष्ठो के ग्लेज कागज के सजिल्द 'रोगी रजिस्टर' हमने तैयार किए हैं जिनमे आवश्यक कालम दिए हैं। मू २०० पृष्ठो का ४००, ४०० पृष्ठो का ७ २५

रोगी प्रमाणपत्र पुस्तिका—रोगियो को अवकाश प्राप्ति के लिये प्रमाणपत्र देने के फार्म ग्लेज कागज पर २ रङ्गो में तैयार किये हैं। अग्रजी अथवा हिन्दी मे बढिया कागज पर बडे साइज के दो रङ्गो मे छपे ४० प्रमाण पत्रो की पुस्तिका का मूल्य १ ५०

स्वास्थ्य प्रमाणपत्र पुस्तिका—सरकारी कर्मचारी बीमार होने के कारण अवकाश लेते है। स्वस्थ होने पर अपने कार्य पर पहुचने पर उन्हे 'वे स्वस्थ हैं' इस विषय का प्रमाणपत्र प्रस्तुत करना होता है। वैद्य इस पुस्तिका को मगाकर स्वस्थ पमाण पत्र आसानी से दे सकते है। अग्रेजी अथवा हिन्दी मे वढिया कागज पर बडे साइज मे दो रङ्गो मे छपे ४० प्रमाणपत्रो की पुस्तिका का मूल्य १ ५०

रोगी व्यवस्थापत्र—रोगी के लक्षण, तारीख औषधि आदि इन फार्मों पर लिखकर रोगी को दे दीजिये वे रोगी रोजाना या जब औषधि लेने आवेंगे तो आपको यह फार्म दिखा देगे। इससे उनका पहला पूरा हाल आपके सामने आ जायगा। बडे काम के फार्म हैं २०×३०=३२ पेजी ५० पैसा के १००, बडे साइज के १ रुपये के १००।

आघात प्रमाणपत्र—चोट लग जाने पर चिकित्सक को प्रमाण पत्र देना होता है। इस फार्म पर आप यह प्रमाणपत्र सुगमता से दे सकेंगे। फुलस्केप साइज के २५ प्रमाणपत्रो की पुस्तिका का मूल्य १.२५

तापमापक तालिका (टेम्परेचर चार्ट)—इसमें रोगियो का तापमान अङ्कित करने की बडी सुविधा रहती है। इस चार्ट पर दिन मे चार समय का तापमान १२ दिन तक अङ्कित किया जा सकेगा। अन्य निदान विषयक आकडे भी लिखे जा सकते है। मूल्य २५ चार्ट का १ २५। मात्र

पता—धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ (अलीगढ़)

धन्वन्तरि के उपयोगी विशेषांक

नारी रोगाङ्क

यह विशेषाक सन् १९६० मे प्रकाशित किया गया था तथा लगभग २ वर्ष में ही समाप्त हो गया था। इसकी मांग तभी से बराबर बनी हुई थी। इस बार उत्तम ग्लेज कागज पर पुन प्रकाशित किया गया है। सभी नारी रोगो का विभिन्न विद्वानो ने सचित्र विस्तृत वर्णन एव चिकित्सा दी है अत्यन्त उपयोगी है। मू. १० रुपया।

वनौषधि विशेषाङ्क

इनमे प्रत्येक वनस्पति के विभिन्न भाषाओ के नाम, परिचय, विभिन्न अङ्गो पत्र, पुष्प, मूल तथा फल आदि का पृथक-पृथक वर्णन, उनके रोगनाशक सरल सफल प्रयोगो का अत्युपयोगी संग्रह दिया है।

प्रथम भाग—पृष्ठ सख्या ५५२, चित्र सख्या ६२ वनस्पति सख्या १४७, 'अ' से 'औ' तक की सम्पूर्ण वनस्पतियो का विस्तृत सचित्र वर्णन है मू १० ००

द्वितीय भाग—पृष्ठ सख्या ५४४, चित्र सख्या १७२, वनस्पति सख्या २३७ इसमे 'क' वर्ग की सम्पूर्ण वनस्पतियो का विस्तृत सचित्र विवरण दिया गया है। मू. ८ ५०

तृतीय भाग—पृष्ठ सख्या ५४४, चित्र सख्या १५९, वनस्पति सख्या २१४ इसमे 'च' से 'ध' अक्षरो की सभी वनस्पतियो का विस्तृत वर्णन किया गया है। समाप्त।

चतुर्थ भाग—पृष्ठ सख्या ५००, चित्र सख्या १००, तथा १६४ वनस्पतियो का विवेचन किया गया है। इसमे 'न', 'प' तथा 'फ' अक्षर से प्रारम्भ होने वाली सभी तथा 'ब' अक्षर से प्रारम्भ होने वाली कुछ वनस्पतियो का सचित्र विस्तृत वर्णन किया गया है। मू ८ ५०

पाचवा भाग—इसमे 'ब', 'भ' तथा कुछ 'म' अक्षर से प्रारम्भ होने वाली वनौषधियो का वर्णन किया गया है। इसके लेखन कार्य मे श्री उदयलाल जी महात्मा ने भी सहयोग किया है। मू ९.५०

यूनानी चिकित्साङ्क

इसका सम्पादन यूनानी तथा आयुर्वेद के उद्भट सुप्रसिद्ध विद्वान श्री दलजीतसिंह आयुर्वेद बृहस्पति ने किया है। इस विशेपाक के पूर्वार्द्ध मे विभिन्न यूनानी चिकित्सको द्वारा प्रतिपादित शरीर के मूलभूत तत्व महाभूत, प्रकृति, अखलात और शरीर के सगठनकारी घटक आदि का वर्णन और फिर साथ साथ आयुर्वेदीय सिद्धातो से तुलना यह प्रकरण विशेष महत्वपूर्ण दिया गया है। इसके उपरान्त उत्तरार्द्ध मे यथाक्रम यूनानी मतानुसार रोगो के नाम सहित हेतु, लक्षण, सम्प्राप्ति, चिकित्सा एव पथ्यापथ्य का विवेचन दिया है। मू ८ ५०

काय चिकित्साङ्क

आयुर्वेद के ५२ गिने चुने मूर्धन्य विद्वानो द्वारा उच्चकोटि के लेखो से विभूषित विशेपाङ्क १२७ चित्रो सहित ६०८ पृष्ठो का ठोस साहित्य है। इस विशेषाङ्क के विशेष सम्पादक आचार्य आयुर्वेदाचार्य वाचस्पति श्री प रघुवीर प्रसाद त्रिवेदी है। अनेक चित्र है। मू ८ ५०

चिकित्सा विशेषांक (प्रथम भाग)

इसके विशेष सम्पादक आयुर्वेद जगत के जाने माने विद्वान् दहली निवासी श्री कविराज बी० एस० प्रेमी हैं। दहली निवासी श्री शिवकुमार व्यास तथा रक्सौल निवीसी श्री डा० बनारसीदास जी दीक्षित ने यूनानी, एलोपैथी तथा होमियोपैथी खण्डो का सम्पादन किया है।

इस प्रथम भाग मे पाचन सस्थान गत रोगो के लक्षणादि एव चिकित्सा विस्तार के साथ दी है। मू १० ००

धन्वन्तरि के लघु विशेषाङ्क

गृह वस्तु चिकित्साङ्क	२ ००
पायरिया रोगाङ्क	१.००
शूल रोगाङ्क	१ ००
कास रोगाङ्क	१ ००
पचकर्म विज्ञानाङ्क	१ ५०
श्वास अङ्क	१ ५०
विधिविधानाङ्क	२ ००
आयुर्वेद शिक्षणाङ्क	१ ५०
इजेक्शन विज्ञानाङ्क (प्रथम भाग)	३ ००
पक्षाघात अङ्क (दो भाग)	४ ००
सैक्स रोगाङ्क	२ ००
आयुर्वेदिक सूची भरणाक	२.००
वातरक्त रोगाक	२ ००

पोस्ट व्यय सभी विशेपाङ्को पर पृथक लगेगा।

पता—धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ [अलीगढ़]

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ द्वारा प्रकाशित

❋ आयुर्वेदिक पुस्तकें ❋

ड्रग एक्ट (हिन्दी में)—लेखक—डा० दाऊदयाल गर्ग ए एम. बी- एस —यह पुस्तक सभी औषधि निर्माताओ, ओषधि विक्रेताओ तथा चिकित्सको के लिये अवश्य पठनीय एव सग्रहणीय है। आजकल के उलझन पूर्ण समय मे अत्यन्त उपयोगी पुस्तक है। दूसरा परिवर्द्धित एव सशोधित सस्करण मूल्य ५ ००, सजिल्द ६.००

आयुर्वेद पर ड्रग एक्ट—लेखक डा दाऊदयाल गर्ग ए एम बी. एस.—मूल्य ७५ पैसा।

यन्त्र शस्त्र परिचय—लेखक डा० दाऊदयाल गर्ग ए एम. बी एस.। प्रत्येक चिकित्सक का यह परम कर्तव्य है कि वह उस प्रत्येक उपकरण के बारे मे पूरी जानकारी रखे जिसका कि वह प्रयोग कर रहा है तथा उसकी सही व्यवहार विधि जानना अति आवश्यक है तभी वह चिकित्सा क्षेत्र मे सफलता प्राप्त कर सकता है। इस पुस्तक से चिकित्सक सभी यन्त्रशस्त्रो के बारे मे पूरी सही जानकारी प्राप्त कर सकेगे। इस पुस्तक को चार खण्डो मे विभक्त किया गया है। प्रथम खण्ड मे उन यन्त्रशस्त्रो का वर्णन किया गया है जिनका प्रयोग केवल निदान (Diagnosis) मे किया जाता है यथा रक्तचापमापक यन्त्र, थर्मामीटर, स्टेथिस्कोप, नाक व गले आदि की परीक्षार्थ डाइग्नोस्टिक सैट, गुदा परीक्षण यन्त्र आदि। द्वितीय खण्ड मे चिकित्सा कार्य मे प्रयुक्त होने वाले उपकरणो की प्रयोग विधि दी गई है यथा इञ्जेक्शन लगाना, ट्रोकार एण्ड कैनूला, कर्ण प्रक्षालन, दात उखाडना, आमाशय प्रक्षालन, योनि प्रक्षालन, एनिमा, कैथीटर आदि। तृतीय खण्ड मे शल्यकर्म (चीर फाड़) मे काम आने वाले उपकरणो का वर्णन दिया गया है। इसी खण्ड मे टाके किस प्रकार लगाये जाते है तथा शल्य के विषय मे सभी बाते दी है। चतुर्थ खण्ड मे सन्ततिनिरोध (Birth control) मे प्रयुक्त होने वाले उपकरणो के विषय मे आवश्यक जानकारी दी गई है। इस पुस्तक की सबसे बडी विशेषता चित्रो की भरमार है। १२० पृष्ठो की पुस्तक मे २३० चित्र है। चित्रो की अधिकता के कारण ही प्रत्येक विषय स्पष्ट, सरल एव सहज बुद्धिगम्य बन पडा है भाषा अत्यन्त सरल है। उत्तम ग्लेज कागज पर छपी, २०×३० सोलह पेजी साईज मे ३२० पृष्ठ, उत्तम छपाई, सुपुष्ट जिल्द, आकर्षक दो रङ्गा टाइटिल वाली पुस्तक। मूल्य लागत मात्र ६ ००

चिकित्सा रहस्य—लेखक श्री प कृष्ण प्रसाद त्रिवेदी बी ए आयुर्वेदाचार्य, इस पुस्तक मे विषय प्रवेश के पश्चात् आयुर्वेद के मूल सिद्धात 'दोष धातु मल मूल हि शरीर' के अनुसार चिकित्सा के उपयुक्त शरीर, मन और आत्मा की स्वस्थ दशा की सुस्थिति एव रोग प्रतिकार की दृष्टि से आवश्यक स्वस्थवृत सम्बन्धी कुछ बाते प्रथम अध्याय से दशम अध्याय तक सक्षेप में वर्णित है। तत्पश्चात् रोग प्रतिकार एव चिकित्सा सारल्य की दृष्टि से आयुर्वेदीय प्रमुख सूत्रो का विवेचन ११ वे अध्याय मे किया गया है। तदुपरात ४ अध्यायो में तीनो दोषो का विशद विवेचन एव तत्सम्बन्धी चिकित्सा दर्शाई गई है। इस पुस्तक मे उन्ही बातो का उल्लेख किया गया है जिनकी जानकारी चिकित्सा कर्म के पूर्व ही उसकी सफलता के लिए आवश्यक है। आयुर्वेद चिकित्सा प्रद्धति वा अन्य चिकित्सा पद्धतियो के साथ तुलनात्मक विचार भी किया गया है। बीच मे आधुनिक विज्ञान द्वारा समन्वय करने का प्रयत्न किया गया है। लेखन शैली इतनी सरल और रोचक है कि बहुत शीघ्र ही गूढ विषय भी समझ मे आ जाता है। आयुर्वेद के छात्रो तथा आयुर्वेदानुरागियो के लिये यह ग्रन्थ बडा ही उपयोगी सिद्ध होगा। उत्तम ग्लेज कागज पर २०×३० सोलह पेजी साइज मे छपी ३७५ पृष्ठ, सुपुष्ट जिल्द मूल्य ४ ५०।

वृ. पाक संग्रह—लेखक श्री प कृष्णप्रसाद जी त्रिवेदी बी ए आयुर्वेदाचार्य। इस पुस्तक में ४०० से अधिक पाको का सग्रह प्रकाशित है। हर पाक की निर्माण विधि, मात्रा, सेवन विधि आदि दी गयी है। प्राय सभी रोगो पर २-४ प्रयोग इस पुस्तक मे आपको मिलेंगे। हर प्रकार से उपयोगी है। मूल्य सजिल्द ३ ५०, अजिल्द ३ ००

सूर्य रश्मि चिकित्सा[नवीन सस्करण]—सूर्य-चिकित्सा को अग्रेजी मे क्रामोपैथी कहते हैं। इस पुस्तक मे सूर्य की किरणो से ही समस्त रोग दूर करने का विधान

है। इसको पढकर पाठक देखेंगे कि सूर्य कितना शक्ति शाली है। उसकी किरणें शरीर को कितनी लाभदायक हे और उनके द्वारा रोग किस प्रकार बात की बात मे दूर किये जा सकते है, अनेक रङ्गीन चित्र है। मू ०७५

उपदंश विज्ञान (द्वितीय संस्करण)—लेखक श्री कविराज पडित बालक राम जी शुक्ल आयुर्वेदाचार्य। इस पुस्तक मे गरमी (चादी) रोग के वज्ञानिक कारण, निदान, लक्षण तथा चिकित्सा का वर्णन किया गया है। पुस्तक के कुछ शीर्पक ये हैं—उपदश परिचय, प्राच्य-पाश्चात्य का साम्यवाद, सक्रमण, निदान, सिफलिस के भेद, उपदश, प्राथमिक कील, लिंगार्श औपसर्गिक सकल रोग, उपदशज विकृतिया, मस्तिष्क विकार, फिरगं चिकित्सा मे पारद प्रयोग,पथ्यापथ्य आदि उपदश सम्बन्धी सभी विषय वर्णित है। मू १ रु

प्रयोग पुष्पावली—ये प्रयोग बहुत समय से परीक्षित हैं और सफल प्रमाणित हो चुके हे। अनेक उद्योग धन्धो का सकेत इसमे मिलेगा जिससे पाठक बहुत लाभ उठा सकते हे। समष्टि रूप मे पुस्तक बेकार मनुष्यो को व्यवसाय की ओर झुकाने वाली है। पहले दो सस्करण शीघ्र समाप्त हो जाना इसकी उत्तमता के प्रमाण है। पृष्ठ सख्या ११२ मूल्य १२५।

कुचिमार तन्त्र (भाषा टीका)—यह श्रीमद् कुचिमार मुनि प्रणीत है। इसमे इन्द्रिय वृद्धि, स्थूलीकरण, कामोद्दीपन लेप, वाजीकरण, द्रावण, स्तम्भन, सकोच व केशपात, गर्भाधान, सहज प्रसव आदि पर अनेक योग भली भाति बताए गये हे। इस नवीन सस्करण मे प्रमेह, नपुसकता, मधुमेह, आदि रोगो पर स्वानुभूत प्रयोगो का एक छोटा सा सग्रह भी दिया है। मूल्य ५० पैसा।

दशमूल (सचित्र)—लेखक लाला रूपलाल जी वैश्य बूटी विशेषज्ञ। इस पुस्तक मे दशमूल की दशो औषधियो का सचित्र वर्णन है। साथ ही उनके पर्याय नाम, गुण और प्रयोग भी बतलाये गये हैं तथा दशमूल, पचमूल से बनने वाले अनेक योगो की विधिया दी गयी है। मू० ५० पैसा।

न्यूमोनियां प्रकाश (द्वितीय संस्करण)—आयुर्वेद मनीषी स्वर्गीय पडित देवकरण जी बाजपेयी की यह वह उत्तम रचना है जिस पर धन्वन्तरि पदक मिला था और जो निखिल भारतीय वैद्य सम्मेलन से सम्मान और पदक प्राप्त कर चुकी है। न्यूमोनियां की शास्त्रीय व्युत्पत्ति, कारण, निदान, परिणाम, चिकित्सा आदि सभी बातें भलीभाति वर्णित है। मू० ५० पैसा।

प्राकृतिक ज्वर—लेखक स्वर्गीय लाला राधावल्लभ जी वैद्यराज। मलेरिया (फसली बुखार) का पूर्ण विवेचन है। आयुर्वेदीय मत से मलेरिया कैसा होता है? उसके दूर करने के लिये आयुर्वेदीय प्रयोग, क्विनाइन से हानि आदि विषयो पर पूर्ण प्रकाश डाला है। मू. २५ पै

वेदों में वैद्यक ज्ञान—लेखक स्वर्गीय लाला राधा वल्लभ जी वैद्यराज। वेद के मन्त्र जिनमे आयुर्वेदीय विषयो का वर्णन है तथा जिनसे आयुर्वेद की प्राचीनता प्रमाणित होती हे. शब्दार्थ सहित दिये हैं। मू २५ पैसा

कूपीपक्व रस रसायन भस्म पर्पटी—लेखक वैद्य देवीशरण जी गर्ग—धन्वन्तरि कार्यालय मे निर्माण होने वाले कूपीपक्व रसायनो के गुण, मात्रा, अनुपान सेवन विधि आदि विस्तृत वर्णित हैं। मू. २५ पै

चन्द्रोदय मकरध्वज (तृतीय संस्करण)—लेखक स्वर्गीय लाला राधावल्लभ जी वैद्यराज। इस पुस्तक मे पारदशुद्धि, गन्धक शुद्धि, पारद के सस्कार, मकरध्वज बनाने की विधि, आष्टी बनाने की विधि, मकरध्वज के गुण तथा भिन्न-भिन्न रोगो में अनुभव सभी बातें स्वानुभव के आधार पर वर्णित है। मू २५ पैसा।

रस रसायन गुटिका गूगल—धन्वन्तरि के प्रधान सम्पादक एव अनुभवी चिकित्सक वैद्य देवी शरण जी गर्ग ने इस पुस्तक में धन्वन्तरि कार्यालय मे निर्मित रस रसायन गुटिका गूगल के गुण मात्रा, अनुपान, व्यवहार विधि बडे ही उपयोगी ढंग से लिखी है। मू ५० पैसा

रक्त—(Blood) श्री वैद्यराज राधावल्लभ जी ने रक्त की बनावट, उपयोगिता एव रक्त सम्बन्धी सभी मोटी-मोटी बातें आयुर्वेद एव एलोपैथी उभय पद्धतियो से समझाकर सरल हिन्दी भाषा मे लिखी है। नवीन सस्करण मू २५ पैसा।

इन्फ्लुएञ्जा (फ्लु)—लेखक श्री पडित कृष्णप्रसाद त्रिवेदी बी ए आयुर्वेदाचार्य। इसमे इन्फ्लुएञ्जा रोग का विस्तृत विवेचन तथा सफल चिकित्सा विधि वर्णित है। फ्लु और इसके सभी उपद्रवो की आयुर्वेदीय चिकित्सा दी है। मू ५० पैसा।

अन्य प्रकाशकों की पुस्तकें

आयुर्वेदीय ग्रंथ रत्न

अष्टाङ्गहृदय [सम्पूर्ण]—विद्योतनी भाषा टीका वक्तव्य, परिशिष्ट एव विस्तृत भूमिका सहित । टीकाकार श्री अत्रिदेव मूल्य १५ रु, कृष्णलाल भारतीय २० रु, श्री प लालचन्द्र कृत १५ रु ।

अष्टाङ्ग संग्रह [सूत्र स्थान]–हिन्दी टीका, व्याख्याकार गोवर्धन शर्मा छांगाणी मू. ८ रु

काश्यप संहिता–टीकाकार श्री सत्यपाल भिषगाचार्य, विद्योतनी भाषा टीका विस्तृत सस्कृत हिंदी उपोदघात सहित । ग्रथ का मुख्य विषय 'कौमार भृत्य' अष्टाङ्गायुर्वेद का अपरिहार्य अङ्ग है। यह विषय पूर्ण विस्तृत और प्रामाणिक रूप से वर्णित है । मूल्य १५ रु.

कौमारभृत्य [नव्य बालरोग सहित]–बाल रोगों पर प्राच्य एव पाश्चात्य चिकित्सा विज्ञान के आधार पर श्री प रघुवीर प्रसाद त्रिवेदी A M S द्वारा लिखित विशाल ग्रन्थ मूल्य ८ रु ।

गंगयति निदान—लेखन जैन यति गगाराम जी अनुवादक आयुर्वेदाचार्य श्री नरेन्द्रनाथ शास्त्री । मूल्य ५ ५० ।

चरक संहिता [सम्पूर्ण]—श्री जयदेव विद्यालंकार द्वारा सरल सुविस्तृत भाषा टीका युक्त दो जिल्दो में (छठा सस्करण) मूल्य ३० रु. ।

चरक संहिता—श्री अम्बिकादत्त, हिंदी व्याख्याविमर्श परिशिष्ट सहित दो भागो मे । अत्युपयोगी नवीन विस्तृत टीका मूल्य ४५ रु. ।

चक्रदत्त—भावार्थ सदीपनी विस्तृत भाषा टीका तथा विशद टिप्पणी सहित । परिशिष्ट मे पचलक्षणी निदान डाक्टरी मूत्र परीक्षा, पथ्यापथ्य सहित । मू १० रु

द्रव्यगुण विज्ञान [पूर्वार्ध]—छात्रोपयोगी सस्करण लेखक आयुर्वेद मार्तण्ड वैद्य यादव जी त्रिकम जी आचार्य द्रव्य गुण, रस, वीर्य, विपाक, प्रभाव, कर्म विज्ञानात्मक विशद विवेचन । मू. ५ रु.

भावप्रकाश [सम्पूर्ण]–भाषा टीका सहित । दो जिल्दो मे शारीरिक भाग पर प्राच्य पाश्चात्य मतो का समन्वयात्मक वर्णन निघण्टु भाग पर विशिष्ट विवरण तथा चिकित्सा-प्रकरण में प्रत्येक रोग पर प्राच्य पाश्चात्य मतो का समन्वयात्मक वर्णन विशेष टिप्पणी से सुशोभित है । मू. २९ रु., श्री लालचन्द्रकृत २५ रु. ।

माधव निदान [भाषाटीकायुक्त]—पूर्वार्द्ध मधुकोष सस्कृत टीका विद्योतनी भाषा तथा वैज्ञानिक विमर्श टिप्पणी युक्त । यह माधव निदान बडा उपयोगी बन पड़ा है । दो भाग मू. १४ रु

माधव निदान—मूलपाठ, मूलपाठ की सरल हिन्दी व्याख्या मधुकोष सस्कृत व्याख्या और उसका सरल अनुवाद, वक्तव्य एव टिप्पणी युक्त । यह ग्रन्थ विद्यार्थियो तथा चिकित्सको के लिये आवश्यक है । प पूर्णानन्द शास्त्री कृत टीका दो भागो में मू. १३ रु

माधव निदान—सर्वाङ्ग सुन्दरी भाषा टीका ४ ५०

माधव निदान–टीकाकार ब्रह्मशंकर शास्त्री, मधुकोष सस्कृत व्याख्या तथा मनोरमा हिन्दी टीका सहित । पृष्ठ सख्या ४१२ मू ६ रु

रसायनसार—श्री प श्यामसुन्दराचार्य के बीसियो वर्षों के परिश्रम से प्राप्त प्रत्यक्षानुभव के आधार पर लिखित अपूर्व रस ग्रन्थ मू ८ रु

रसेन्द्रसार सग्रह—वैज्ञानिक रस चन्द्रिका भाषा टीका परिशिष्ट मे नवीन रोग पर रसो का प्रभाव, मान, परिभाषा, मूषा, पुटप्रकरण, अनुपान विधि तथा औषधि बनाने के नियमादि मू ६ रु

रसेन्द्रसार सग्रह(तीन भागो मे)–आयुर्वेद बृहस्पति पं घनानन्द जी पन्त द्वारा सस्कृत टीका और हिन्दी भाषा सहित वैद्यो, विद्यार्थियो के लिये उपयोगी है । मू ११ रु.

रसरत्न समुच्चय—नवीन सुरत्नोज्वला विस्तृत भाषा टीका एव परिशिष्ट सहित मू १० रु, श्री प धर्मानन्द कृत तत्वबोधिनी हिन्दी टीका १० रु

रसतरगिणी चतुर्थ संस्करण—भाषा टीका सहित रस निर्माण, धातु उपधातुओ के शोधन मारणयुक्त यह अनुपम ग्रन्थ है । मू १२ रु

रसराज महोदधि (पचम भाग)—वस्तुत. यह आयु

वैदीय रसो का सागर ही है। पठनीय सरल भाषा मे लिखा उपयोगी रस ग्रन्थ है नवीन सस्करण सजिल्द मू १२.००

योगरत्नाकर–काय चिकित्सा विषयक उपलब्ध ग्रन्थो मे यह सर्वोत्कृष्ट रचना है। चिकित्सको के लिए ज्ञातव्य सभी आवश्यक विषयो का सग्रह किया गया है। माधवोक्त क्रम से सभी रोगो के निदान व चिकित्सा का वर्णन है। मू १८ ००

सोश्रुती—लेखक रमानाथ द्विवेदी। अष्टाग आयुर्वेद के शल्यतत्र पर लिखित प्राच्य पाश्चात्य समन्वय मू ८ ५०

सुश्रुत सहिता सम्पूर्ण—सरल हिन्दी टीका सहित टीकाकार श्री अत्रिदेव गुप्त। विद्यार्थियो के लिए पठनीय हैं। पक्के कपडे की जिल्द मू १५ ००, कविराज अम्बिका दत्त कृत सम्पूर्ण २४ ००

हारीत संहिता—ऋषि प्रणीत प्राचीन सहिता। भाषा टीका सहित, टीकाकार शिवसहाय जी सूद मूल्य ८ ५०

हरिहर सहिता—वैद्यराज हरिनाथ साख्याचार्य नवीन औषधियो का समावेश है सरल भाषा टीका मू. ८ ००

चिकित्सा रत्न–ले रामरतन गगेले। एक चिकित्सक के लिये सब प्रकार की सक्षिप्त उपयोगी सामग्री से युक्त सजिल्द मू ६ रु

चिकित्सा तत्व प्रदीप–एक चिकित्सक के लिए अत्यन्त उपयोगी ग्रथ प्रथमभाग१० रु सजिल्द, द्वितीय भाग १२ रु

वनौषधि चन्द्रोदय (१० भाग)–प्रत्येक वनस्पति के पर्याय, परिचय, गुणकर्मादि विवेचनयुक्त श्री चन्द्रराज भडारी कृत ४० रु (प्रत्येक भाग ५ रु)

चिकित्सा चन्द्रोदय (सात भाग)

हिन्दी ससार मे अपूर्व और पहला ग्रन्थ बिना गुरु के वैद्यक सिखाने वाला, जो सस्कृत जरा भी नही जानते वे भी इस ग्रन्थ को बिना गुरु के पढकर वैद्य बन सकते हैं—

चिकित्सा चन्द्रोदय	१ ला भाग	५ ००
,, ,,	२ रा भाग	६ ००
,, ,,	३ रा भाग	६.००
,, ,,	४ था भाग	६.००
,, ,,	५ वा भाग	६ ००
,, ,,	६ वा भाग	५ ००
,, ,,	७ वा भाग	१५ ००
		५८ ००

नोट–एक साथ ७ भाग खरीदने वालो को किताबें रेल पार्सल से मगानी चाहिए। एक पूरा सैट लेने वालो को कमीशन कम करके ५० ७५ रु देने पड़ते हैं। खर्चा पृथक

स्वास्थ्य रक्षा—गृहस्थो के घर की यह रामायण है। हर घर मे इसका रहना जरूरी है। इसका नाम ही स्वास्थ्य रक्षा उर्फ तन्दुरुस्ती का बीमा है। तन्दुरुस्ती नही तो दुनिया मे रहा ही क्या है। मू ६ ००

काय चिकित्सा (दो भाग)—श्री रामरक्ष पाठक जी की किसी भी पुस्तक को जिसने पढा है वह भली प्रकार इस पुस्तक की उपयोगिता जान सकता है। इस पुस्तक मे आयुर्वेद सिद्धातो का विशद रूप मे विवेचन किया गया है। अत्युपयोगी है ल.भग ५५० पृष्ठ, क्राउन साइज छपाई सुन्दर कपडे की जिल्द मू २५ ००

शारङ्गधर सहिता–भाषा टीका सहित टीकाकार प. प्रयागदत्त शर्मा सजिल्द ६ ०, श्री प केशवदेव शास्त्री कृत टीका ८ ००

निदान चिकित्सा हस्तामलक–लेखक वैद्य रणजीतराय देशाई। विद्वान चिकित्सको के लिये पठनीय उत्तम पुस्तक सजिल्द लगभग ७०० पृष्ठ ६ ००

अष्टांग हृदयम्—सर्वाङ्ग सुन्दरी व्याख्या विभूपित। टीकाकार श्री प लालचन्द वैद्य। व्याख्या बहुत सुन्दर एव सरल भाषा मे की गई है। लगभग ८५० पृष्ठ, बड़ा साइज कपडे की सुपुष्ट जिल्द। मू केवल १५ रु

भिषक्कर्म सिद्धि—आयुर्वेद के प्रकाड विद्वान श्री रमानाथ द्विवेदी द्वारा लिखित यह अनुपम ग्रन्थ है। इसमें चिकित्सक के लिये जानने योग्य सभी विषयो का सग्रह किया गया है। ग्रथ के पाच खण्ड किये गये हैं–प्रथम खड मे निदान पचक, द्वितीय खण्ड मे पचकर्म, तृतीय मे चिकित्सा के आधारभूत सिद्धात, चतुर्थ खण्ड के ३३ अध्यायो मे रोगानुसार आयुर्वेदीय सफल-चिकित्सा तथा अन्त के पचम खण्ड के परिशिष्टाध्याय मे आवश्यक जानकारी दी गई है। पुस्तक चिकित्सको, अध्यापको एव विद्यार्थियो के लिए अद्वितीय है। सुन्दर छपाई पक्के कपडे की जिल्द ७१५ पृष्ठ मू २० रु

काय चिकित्सा—गगासहाय पाडेय--इस पुस्तक मे चिकित्सा के सैद्धातिक पक्ष का स्पष्टीकरण एव चिकित्सा के विभिन्न उपक्रमो का व्यवहारिक स्वरूप देने के अतिरिक्त व्याधि की विभिन्न अवस्थाओ के उपचार क्रम का

विशद विवेचन किया गया है। प्राच्य एव पाश्चात्य चिकित्सा का समन्वयात्मक निर्देश भी किया गया है। अन्त में विशिष्ट सक्रामक व्याधियो का विस्तृत परिचयादि एव चिकित्साक्रम है। लगभग एक हजार पृष्ठ,सुन्दर छपाई सजिल्द मूल्य २५ रुपया।

इन्द्र निदान—इसमे सस्कृत माधव-निदान की अनेक प्रकार के पद्यो मे वडी सरल सुबोध हिन्दी भाषा मे टीका की गई है तथा आधुनिक रोगो का परिशिष्ट मे कथन कर दिया है। इसके टीकाकार श्री इन्द्रमणि जैन अलीगढ हैं। सजिल्द मू केवल ६ रुपया।

कामविज्ञान विश्वकोष (आधुनिक काम विज्ञान)—इसमे काम विज्ञान की प्रत्येक शाखा का एशिया, अफ्रीका और यूरोप में हुई अगस्त १९६७ तक की हजारो नई नई खोजो का पूरा-पूरा हाल दिया है। "पुरुषो तथा स्त्रियो" के समस्त गुप्त रोगो का नये ढग से वर्णन है। कई सौ चित्रो, चार्टों तथा तालिकाओ से सजी पुस्तक का मूल्य केवल ८ रुपया।

चिकित्सादर्श.—आयुर्वेद के प्रकाड विद्वान श्री रामेश्वरदत्त जी शास्त्री द्वारा लिखित यह अपूर्व ग्रन्थ चिकित्सा सूत्रो का एक सग्रह है। नुस्खा नवीसी की तो यह अपूर्व पुस्तक है। द्वितीय या तृतीय भाग मे रोगो का विशिष्ट वर्णन दिया है। मू प्रथम भाग ४ ००, द्वितीय भाग ७ रुपया, तृतीय भाग ७ रुपया।

पदार्थ विज्ञानम्—लेखक श्री प० वागीश्वर शुक्ल वैद्य। इस ग्रन्थ मे आयुर्वेद के आधार भूत सिद्धातो का प्रतिपादन सरल भाषा मे किया गया है। मू ८ रुपया।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग की उप-वैद्य, वैद्य-विशारद, आयुर्वेदरत्न तथा समस्तरीय परीक्षाओ के लिये विशेष उपयोगी गाइडें—

अशोक उपवैद्य गाइड—(शिव कुमार व्यास)सम्पूर्ण छः पत्रो की परीक्षोपयोगी सामिग्री प्रश्नोत्तर रूप मे गत परीक्षाओं के प्रश्नो के आधार पर दी है। मू ६ रु.

अशोक वैद्य विशारद गाइड—लेखक आचार्य ज्ञानेन्द्र पाडेय प्रथम खण्ड ८ रुपया, द्वितीय खण्ड ८ रु

अशोक आयुर्वेदरत्न गाइड —(प्रथम भाग) लेखक शिव कुमार व्यास आयुर्वेदाचार्य (BIMS) मू १५ रु

अशोक आयुर्वेदरत्न गाइड—(द्वितीय खण्ड) लेखक शिवकुमार व्यास आयुर्वेदाचार्य (BIMS) १५ रु

शुद्ध आयुर्वेदिक चिकित्सा मार्गदर्शिका (आयुर्वेदिक गाइड)—इसके लेखक हैं आयुर्वेद के प्रकाड विद्वान श्री अत्रिदेव विद्यालकार—इस पुस्तक के ३ भाग हैं—प्रथम भाग मे रोगानुसार चिकित्सा, द्वितीय भाग मे विशिष्ट ज्ञातव्य तथा तृतीय भाग मे रोगानुसार सिद्ध योगो का सग्रह है। सजिल्द मू ५ रु

आयुर्वेद प्रकाश—टीकाकार श्री गुलराज शर्मा मिश्र आयुर्वेदाचार्य। लगभग ५०० पृष्ठीय रस शास्त्र के इस उत्कृष्ट ग्रन्थ मे लेखक के वचनानुसार केवल उन्ही विषयो का समावेश किया गया है कि उन्होने इनकी स्वय परीक्षा कर ली है। मू १२.५०

भेल सहिता सस्कर्त्ता आचार्य गिरजादयालु शुक्ल सस्कृत भाषा मे श्लोको का अभूतपूर्व सग्रह, मूल्य १० रु

आयुर्वेद द्रव्य गुण निधान—लेखक श्री शिव कुमार व्यास। प्रारम्भ मे द्रव्य गुण कर्म वीर्य विपाक व प्रभाव का विवेचन देकर बाद मे लगभग ३५० द्रव्यो का विवरण उनके गुण आदि दिये गये है। सजिल्द मूल्य १० रु

स्वास्थ्य शिक्षा पाठावलि —श्री भास्करगोविन्द घाणेकर एव वासुदेव भास्कर घाणेकर। आयुर्वेदीय स्वास्थ्य ज्ञान सम्बन्धी उत्कृष्ट सग्रह। साथ ही सरल हिन्दी भाषा मे टीका दी है। मू ३ ५०

विक व सिल गाइड (रुदन्ती चिकित्सा)—लेखक अमरदास भाटिया—इसमे क्षय रोग का नवीन उपचार रुदन्ती द्वारा अनेक एक्सरे फोटो देकर समझाया गया है। मूल्य ३ रुपया।

सुश्रुत संहिता (सूत्र स्थान)—डा० गोविन्द भास्कर कृत आयुर्वेद रहस्य दीपिका व्याख्या अत्यन्त उपयोगी एव विस्तृत टीका मू ९ रुपया।

सुश्रुत सहिता [शरीर स्थान]—डा० गोविन्द भास्कर कृत टीका मू० १२ रु

स्वास्थ्य विवेचन—इस पुस्तक में क्षय रोग की सफल एव सरल चिकित्सा वहुत रोचक ढङ्ग से दी गई है। लेखक श्री शिव कुमार वैद्य शास्त्री, डी एस सी ए आयुर्वेद वृहस्पति। अनेको चित्र है। सजिल्द मू ५ रु

वैद्य शतश —यह आयुर्वेद का लघु निघण्टु है। व्याख्याकार श्री ब्रह्मानन्द जी त्रिपाठी है। मू १ ५० रु

त्रिदोष विज्ञानम्—कविराज श्री उपेन्द्र नाथ दास—

आयुर्वेद का आधार त्रिदोष विज्ञान है तथा उसकी ही जानकारी यह पुस्तक कराती है उपयोगी पुस्तक है। मू ४ रु

राजयक्ष्मा—प्रो सी द्वारकानाथ। मू १ रु

सरल पशु चिकित्सा—इस पुस्तक मे गाय, बैल, घोडा कुत्ता आदि के रोगो के लक्षण, चिकित्सा वर्णन दिया है। मू सजिल्द ४ रु

वैद्यकीय सुभाषित साहित्यम्—डा भास्कर गोविन्द घाणेकर—आयुर्वेदीय साहित्य में संग्रहणीय श्लोको को संग्रह कर उसकी सुन्दर व्याख्या की गयी है सजिल्द मू २५ रु

आयुर्वेद रत्न गाइड—श्री वैद्य जगदीशचन्द्र मिश्र आयुर्वेद रत्न की परीक्षा देने वाले विद्यार्थियो के लिये बहुत उपयुक्त गाइड है। सजिल्द मू १६ रु

वाग्भट विवेचन—आचार्य प्रियव्रत शर्मा-आचार्य जी ने वाग्भट्ट संहिता से विषयपूर्वक चयन करके उसके ऊपर लिखा है। मू. २० रु.

प्रत्यक्ष शारीर—महामहोपाध्याय गणनाथ सेन सरस्वती श्री कविराज की संस्कृत पुस्तक का यह हिन्दी अनुवाद है। सजिल्द पुस्तक दो खण्डो में है। मू प्रथम भाग १० रु, द्वितीय भाग १५ रु

वानस्पतिक अनुसंधान पत्रिका—डा. कृष्णचन्द्र चुनेकर ए. एम एस -लेटिन नामो में वर्ण क्रमानुसार उनके हिंदी नामो का एव मुख्य गुणो का संग्रह किया गया है। सजिल्द मू. १० रु.

एलोपैथिक पुस्तकें हिंदी में

आधुनिक चिकित्साशास्त्र—श्री धर्मदत्त जी। एलोपैथिक पद्धति से चिकित्सा का ज्ञान करने के लिये आये दिन ग्रन्थ लिखे जा रहे हैं किंतु वे ग्रन्थ सभी प्राय एकागी ही होते है। क्योकि इस चिकित्सा का क्षेत्र इतना विशाल हो गया है कि किसी एक ग्रन्थ मे सभी विषयो का समावेश कठिन है। साथ ही इस प्रणाली में प्रतिदिन नये तरीको का आविष्कार होता रहता है। अनुभवी लेखक ने आज तक के सारे आविष्कारो को इस पुस्तक मे गागर मे सागर की भाति भर दिया है। हर तरीके से इलाज इसमे दिया गया है। सूक्ष्म से सूक्ष्म विषय भी छूटने नही पाया है। आधुनिक से आधुनिक तरीके भी इसमे आ गये है। मू ३६ रु

अभिनव शवच्छेद विज्ञान—लेखक हरिस्वरूप कुलश्रेष्ठ—नवीन मतानुसार शवच्छेद (Dissection) विषयक विशाल ग्रन्थ है। विषय का स्पष्ट ज्ञान करने के लिये अनेक चित्र साथ मे दिये गये हैं। दो भाग मू. १८ रु

अभिनव विकृति विज्ञान—रघुवीर प्रसाद त्रिवेदी ए एम एस -विकृति विज्ञान (Pathology) विषय का हिंदी भाषा मे विशाल ग्रन्थ। अनेक चित्र साथ मे दिये गये हैं। प्रत्येक रोग का विकाश किस प्रकार होता है? एव उस समय शरीर के किस अङ्ग मे क्या-क्या परिवर्तन होते हैं स्पष्ट रूप मे समझाया गया है। मू २२ रु

एलोपैथिक पेटेण्ट चिकित्सा—लेखक डा. अयोध्यानाथ पाडेय। अकारादि क्रमानुसार प्रत्येक रोग पर प्रयोग की जाने वाली पेटेण्ट औषधिया दी है तथा वे पेटेण्ट औषधिया किन-किन रोगो पर प्रयुक्त हो सकती हैं यह भी दिया गया है। मू २७५

अभिनव नेत्रचिकित्सा विज्ञान—लेखक पं विश्वनाथ द्विवेदी शास्त्री B A आयुर्वेदाचार्य। प्राच्य एव पाश्चात्य दोनो का समन्वय करते हुये नेत्र चिकित्सा पर हिन्दी मे विशाल ग्रन्थ मू १५ रु.

शल्य प्रदीपिका—लेखक डा मुकुन्दस्वरूप वर्मा। शल्य (सर्जरी) विषयक हिंदी मे लिखी हुई उत्कृष्ट पुस्तक है। प्रत्येक प्रकार के शल्य कर्म को विस्तार से लिखा है। अनेक चित्र दिये हैं। मू १२.५०

बाल रोग चिकित्सा—लेखक डा रमानाथ द्विवेदी एम ए, ए एम एस प्राच्य एव पाश्चात्य चिकित्सा विज्ञान का विस्तार से समन्वय करते हुये विशुद्ध वर्णन युक्त। मूल्य ६ रु

अभिनव शरीर क्रिया विज्ञान—लेखक प्रियव्रत शर्मा यह पुस्तक हिन्दी मे अपने विषय की सर्वश्रेष्ठ पुस्तक है। मू १० रु.

धात्री विज्ञान—डा शिवदयाल गुप्ता A M S., प्रारम्भ में नारी जननेन्द्रिय रचना एव शारीर, गर्भिणी परिचर्या, नवजात शिशु परिचर्या एव प्रसवकालीन रोगो का सक्षेप मे वर्णन किया है। अनेक सम्बन्धित चित्र भी

दिये हैं। मू. ३ ००

गर्भस्थ शिशु की कहानी—लेखक डा. लक्ष्मीशंकर गुरु। प्रसूति विषयक हिन्दी मे उत्तम एव सक्षिप्त पुस्तक। सम्बन्धित चित्र भी है। मूल्य २ रु.

जन्म निरोध—लेखक ए. ए खा एम. एस सी। पुस्तक मे जन्म निरोध के लिए अनेक प्रकार की भौतिक, रासायनिक, यान्त्रिक एव शस्त्रकर्मीय विधिया दी गई है। पुस्तक अत्यन्त उपादेय है। मू. ६ रु.

सामान्य शल्य विज्ञान [सचित्र]—लेखक डाक्टर शिवदयाल गुप्त A.M S शल्य (सर्जरी) विषयक हिन्दी भाषा मे विशाल ग्रन्थ। प्रत्येक विषय को आवश्यकीय चित्रो द्वारा समझाया गया है। पुस्तक अध्यापकों, विद्यार्थियो एव चिकित्सको सभी के लिए उपादेय है। मू. १२ रु

आदर्श एलोपैथिक मेटेरिया मैडिका—विज्ञान के अनुसार प्रत्येक औषधि की प्रकृति, गुण, धर्म, उपयोग, मात्रा रोग निदान के अनुसार वर्णित हैं। मू ११ रु.

हिन्दी माडर्न मैडीकल ट्रीटमैंट—(आधुनिक चिकित्सा) लखनऊ विश्वविद्यालय के प्रोफेसर श्री एम. एल गुजराल M B, M R C.P (लन्दन) द्वारा लिखित एलोपैथिक चिकित्सा का सर्वोत्तम प्रामाणिक ग्रन्थ है। चिकित्सको के लिए अत्युपयोगी है। मू २० रु

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान—(दो भाग) श्री डा० आशानन्द पचरत्न M. B. B. S आयुर्वेदाचार्य। यह चिकित्सा विज्ञान की सुन्दर रचना है। इसमे १६ अध्यायो में रोग का वर्णन तथा उनकी सफल एलोपैथिक एव आयुर्वेदिक चिकित्सा बड़ी खूबी के साथ दी है। इनकी वर्णन शैली तुलनात्मक दृष्टि से ही महत्व की ही नही वरन् सफल चिकित्सा की दृष्टि से भी यह ग्रन्थ चिकित्सको को उपादेय है। कपडे की जिल्द मू. प्रथम भाग १० रु.

आयुर्वेद एण्ड एलोपैथिक गाइड—ले० आयुर्वेदाचार्य प रामकुमार द्विवेदी। हिन्दी मे प्राच्य पाश्चात्य विज्ञान का विस्तृत ज्ञान देने वाली बेजोड पुस्तक है। मू १२ रु.

वर्मा एलोपैथिक निघण्टु—डाक्टर वर्मा जी कृत। इसमे १००० से अधिक पेटैण्ट तथा साधारण औषधियो के वर्णन के अतिरिक्त सैकड़ो नुस्खे तथा अन्य उपयोगी बाते दी है। मू १२ रु.

एलोपैथिक योग रत्नाकर—श्री वर्मा जी की उपयोगी पुस्तक एलोपैथिक मिक्चर तथा प्रयोगो का विशाल सग्रह पृष्ठ ७४१ मू. १३ रु.

एलोपैथिक चिकित्सा (चौथा संस्करण)—लेखक डा सुरेशप्रसाद शर्मा। इसमें प्राय. सभी रोगो के लक्षण निदान आदि सक्षेप मे वर्णन करके उन रोगो की चिकित्सा विस्तृत रूप से दी है। योग आधुनिकतम अनुसन्धानो को मथकर अनुभवसिद्ध लिखे गये हैं। ८२५ पृष्ठ के विशाल सजिल्द ग्रन्थ का मू. १३ रु.

एलोपैथिक पाकेट गाइड—एलोपैथिक चिकित्सा का सूक्ष्म रूप यह पाकेट गाइड है। इसे आप जेब में रखकर चिकित्सार्थ जा सकते है जो आपका हर समय साथी का काम देगी मू. ३ रु

एलोपैथिक पेटेन्ट मैडीसन—लेखक डा. अयोध्यानाथ पाडेय। कौन पेटेन्ट औषधि किस कम्पनी की किन किन द्रव्यो से निर्मित हुई है किस रोग में प्रयुक्त होती है यह लिखा गया है। दूसरे अध्याय मे रोगानुसार औषधियो का चुनाव किया है। मू. ६ ५०

एलोपैथिक मेटेरिया मैडिका (पाश्चात्य द्रव्य गुण विज्ञान)—ले. कविराज रामसुशीलसिंह शास्त्री A M S. यह पुस्तक अपने विषय की सर्वश्रेष्ठ पुस्तक है। लेखक ने विषय को आयुर्वेद चिकित्सको तथा विद्यालयो के लिए विशेष उपयोगी ढङ्ग से प्रस्तुत किया है। मू. प्रथम भाग ३०.०० द्वितीय भाग ३०.००

एलोपैथिक मेटेरिया मैडिका—लेखक डाक्टर शिवदयाल जी गुप्त ए एम एस। इस पुस्तक मे अब तक की सम्पूर्ण औषधिया जो एलोपैथी में समाविष्ट हो चुकी हैं दी गई हैं। सरल सुबोध भाषा, वैज्ञानिक—क्रम से विषय का स्पष्टीकरण, औषधियो के सम्बन्ध में आधुनिक सूचना, भिन्न-भिन्न औषधियो से सम्बन्धित तथा चिकित्सा मे प्रयुक्त योगो का निर्देश पुस्तक की विशेषता है। हिन्दी में सबसे महान और विशाल अद्वितीय पुस्तक जिसमें १३०० पृष्ठ हैं। मू १३ ००

एलोपैथिक सफल औषधिया—एलोपैथी की नवीनतम प्रसिद्ध खास-खास औषधियो का गुणधर्म विवेचन जो आजकल बाजार मे वरदान सिद्ध हो रही हैं। सभी सल्फा ग्रुप आदि औषधियो के वर्णन सहित मू. ४ ००

सचित्र नेत्र विज्ञान--लेखक डा शिवदयाल गुप्त, पृष्ठ संख्या ५१४, चित्र संख्या १३, मू ६ रु

मल-मूत्र-रक्तादि परीक्षा--लेखक डा. शिवदयाल गुप्ता

यूनानी पुस्तकें

जर्राही प्रकाश [चारो भाग]—इसमें घाव और व्रण से सम्बन्धित जर्राह के लिये उर्दू, सस्कृत व डाक्टरी आदि अनेक ग्रन्थो का सार सग्रह किया गया है। पृष्ठ सख्या २६८ मू ३ ५०

यूनानी चिकित्सा विधि—इसके लेखक श्री मसाराम जी शुक्ल हकीम वाइस प्रिंसीपल यूनानी तिब्बिया कालेज दिल्ली हैं। इसमे दिल्ली के प्रसिद्ध यूनानी खानदानी हकीमो के अनुभूत प्रयोगो का निचोड है जिसके कारण, यूनानी हकीमो की चिकित्सा दिल्ली मे खूब चमकी और आज तक नाम है। कपडे की पक्की जिल्द मू ५ रु

यूनानी चिकित्सा सागर—श्री मसाराम जी शुक्ल द्वारा लिखा हुआ हिंदी भाषा मे यूनानी का विशाल ग्रन्थ है जो 'रसतन्त्रसार' के ढङ्ग पर लिखा गया है। इसमे पुराने व आधुनिक सभी हकीमो के एक हजार अनुभूत प्रयोग हैं। औषधियो के नाम हिन्दी मे अनुवाद कर दिये गये हैं। जिनके नाम नही मिले हैं ऐसी १५० औषधियो का वर्णन परिशिष्ट मे दिया है। ५१६ पृष्ठ मू १० रु

यूनानी चिकित्सा विज्ञान—यूनानी चिकित्सा विज्ञान का हिंदी में अनुवाद ग्रन्थ। इस पुस्तक के दो भाग किये गये हैं। प्रस्तुत भाग मे यूनानी चिकित्सा और निदान के मूलभूत सिद्धान्तों का विशद विवेचन है। इसमे रोग के लक्षण, निदान, भेद तथा परीक्षा की सामान्य विधिया है। ६६६ पृष्ठो के इस ग्रन्थ का मूल्य ८ ५०

यूनानी सिद्ध योग संग्रह—यह यूनानी सिद्ध योगो का सग्रह है। सभी योग सरल परीक्षित और सहज में बनने वाले है हर एक वैद्य के काम की चीज है। इसके सग्रह-कार है वैद्यराज दलजीतसिंह जी आयुर्वेद वृहस्पति। मू २ ७५।

यूनानी वैद्यक के आधारभूत सिद्धात (कुल्लियात)—श्री बाबू दलजीतसिंह जी व उनके भाई रामसुशीलसिंह जी ने इस छोटे से ग्रन्थ मे इस बात को दिखाने का प्रयत्न किया है कि आयुर्वेद और यूनानी चिकित्सा पद्धतियो मे कितना सादृश्य तथा कितना असादृश्य है। इसका निर्माण दोनो का समन्वय हो सकता है इस आधार पर किया गया है। मू. १ २५

मखजनउल मुफरदात (निघण्टु विज्ञान)—लेखक प. जगन्नाथ शर्मा। मू. २ रु

करावादीन सिफाई—यूनानी प्रयोग सग्रह लेखक प जगन्नाथ प्रसाद शर्मा मू २ रु

करावादीन कादरी—लेखक जगन्नाथप्रसाद-हैड मुद-र्रिस। चार भाग मू. ८ रु

यूनानी द्रव्य गुण विज्ञान—हकीम डा. दलजीतसिंह ने पूर्वार्ध में द्रव्य गुण कर्म आदि का विवेचन किया है। उत्त-रार्ध मे ५३० यूनानी द्रव्यो के पर्याय, उत्पत्ति स्थान का वर्णन, रासायनिक सगठन, प्रकृति और गुणो का पूर्ण विवेचन दिया है। मू २२ रु

सरल सिद्ध प्रयोगों की पुस्तकें

अनुभूत योग प्रकाश—ले० डा० गणपतिसिंह वर्मा। प्राय सभी रोगो पर आपको सरल सफल प्रयोग इस पुस्तक में मिलेंगे। मू. ६ २५

अनुभूत—ले डा. सुरेन्द्रसिंह नेगी—इसमे भिन्न-भिन्न रोगो पर अनुभूत रोगों का वर्णन है। मू २ ५०

पैसे-पैसे के चुटकुले—सस्ते तथा सफल प्रयोगो का सग्रह मू ३ रु

महात्मा जी के १२६१ नुस्खे—इस पुस्तक मे जनता के लाभार्थ महात्मा जी ने अपने स्वानुभूत प्रयोगों द्वारा गागर मे सागर भर दिया है। सजिल्द ३ रु.

सिद्ध योग (दो भाग)—प विगेश्वरदयाल वैद्यराज—इस पुस्तक मे अनेक सिद्ध योगो का रोगानुसार वर्गीकरण करते हुये सग्रह किया है। मू प्रथम भाग १ रु, द्वितीय भाग ०.५०

वैद्य जीवनम्—श्री लोलम्बराज कृत सस्कृत मे प्रयोगो का सग्रह है। सरल हिंदी टीका की गई है। प कालीचरण पाडेय एम. ए कृत १ २५, केशवदास जी १ रु

नित्योपयोगी चूर्ण संग्रह—नित्य उपयोग मे आने वाले १३१ चूर्णों का सग्रह विभिन्न ग्रन्थो से किया है। उनके बनाने की विधि, मात्रा, अनुपान एव गुणो का वर्णन किया गया है। मू १.२५

नित्योपयोगी क्वाथ संग्रह—क्वाथ चिकित्सा, आयुर्वेद

की प्राचीन, अल्प व्यय साध्य एव आशुफलप्रद चिकित्सा है। इस पुस्तक मे १६ क्वाथो का सग्रह प्रकाशित किया गया है। मू १.२५

नित्योपयोगी गुटिका संग्रह—३२३ वटियो (गुटिकाओ) का उपयोगी सग्रह मू २ रु

अनुभूत योग चिंतामणि—डा गणपति सिंह वर्मा राजवैद्य। वर्गानुसार रोगो का वर्णन कर तत्पश्चात् उपयोगी नुस्खे दिये गये हैं जो कि सस्ते, सरल और आशुफलप्रद हैं। अल्पकाल मे ५ सस्करण हो जाना ही इसकी उत्तमता का प्रमाण है। मू प्रथम भाग ५.००, द्वितीय भाग ४.००

सिद्ध भैषज्य संग्रह—चूर्ण, वटी, तैल, अवलेह, आदि वर्गानुसार अनेक सिद्ध औषधियो का विवेचन किया गया है। अन्त मे ज्वर, अतिसार आदि रोगो पर प्रयुक्त की जाने वाली औषधियो की सूची विस्तृत रूप से दी गयी है। सजिल्द मू. ८.००

देहाती अनुभूत योग सग्रह—(दो भाग) अनुवादक अमोलकचन्द्र शुक्ल। देहाती वस्तुओ से उत्तमोत्तम प्रयोगो को बनाने की विधियां वर्णन की गयी हैं। दोनो भागों को मिलाकर लगभग ६५० प्रयोग दिये हैं। सजिल्द प्रथम भाग ६.००, द्वितीय भाग ७.००

डाक्टरी नुस्खे—डाक्टर राधावल्लभ पाठक नेक डाक्टरी नुस्खो का सग्रह सजिल्द मू. ५.००

अनुभूतयोग चर्चा—लेखक बसरी लाल साहनी प्रथम भाग में २०७ प्रयोगो तथा द्वितीय भाग में ४३३ प्रयोगो का सग्रह है। इस पुस्तक मे अति सरल प्रयोग वर्णित है। मू. प्रथम भाग २ ५०, द्वितीय भाग ३.५०

अनुभूत योग—दो भागो मे लगभग १५० प्रयोगो की निर्माण विधि, मात्रा अनुपान एव उनके गुणो का विस्तृत विवेचन किया है। मू प्रत्येक भाग का १ ००

रस तत्रसार व सिद्ध प्रयोग संग्रह—सशोधित अष्टम सस्करण। इस ग्रन्थ मे रस-रसायन, गुटिका, आसव, अरिष्ट पाक, अवलेह, लेप, सेक, मलहम, अजनादि सभी प्रकार की आयुर्वेदिक औषधियो के सहस्त्रश अनुभूत एव शास्त्रीय प्रयोग तथा विस्तृत गुण धर्म विवेचन है। प्रथम भाग १०.००, सजिल्द १२ ००, द्वितीय भाग ८.००, सजिल्द १० रु

होमियोबायोकैमिक पुस्तकें

आर्गेनन—यह होमियोपैथी की मूल पुस्तक है जिसमे इस पैथी के मूल प्रवर्तक महात्मा सैमुएल हैनिमैन के २९१ सूत्र हैं। इस पुस्तक मे इन्ही पर डा सुरेश प्रसाद शर्मा ने व्याख्या इतनी सुन्दर और सरल की है कि हिंदी जानने वाले इन सूत्रो का मन्तव्य भली-भाति समझ सकते हैं। बिना इस पुस्तक के होमियोपैथी जानना दुराशा मात्र हैं। पृष्ठ सजिल्द मू. ४ ५०

ज्वर चिकित्सा—उत्तर प्रदेशीय सरकार से पुरस्कार प्राप्त इसमे सभी प्रकार के ज्वरो की एलोपैथिक, आयुर्वेदिक यूनानी मत से चिकित्सा वर्णित है। मू २ रु

पशु चिकित्सा होमियो—यह आयुर्वेदिक तथा होमिपैथिक दोनो से सम्बन्धित पशु चिकित्सा पर बहुत उपयोगी साहित्य है। मू २ १२

प्रिंस मैटेरिया मैडिका—(कम्परेटिव)—डा सुरेशप्रसाद शर्मा प्रिंस होमियोपैथिक कालेज के प्रिंसिपल द्वारा प्रणीत यह होमियोपैथिक मेटेरिका मैडिका है। औरो से इसमें बहुत कुछ विशेषता है। थेराप्युटिक ही नही इसमे फार्मोकोपिया भी सम्मिलित की गयी है। प्रत्येक औषधि के मूल-द्रव्य, प्रस्तुत विधि, वृद्धि, उपशम, प्रमुख एव साधारण लक्षणो आदि सभी विषयो का वर्णन किया गया है १३७२ पृष्ठो की पुस्तक का मू केवल १० रु

फिग्र होमियो मिक्चर्स—श्री शकर लाल गुप्ता। यह पुस्तक होमियोपैथिक डाक्टरो के दैनिक व्यवहार के लिये अत्युपयोगी है। मू २.५०

होमियो मेटेरिया मैडिका—(रेपर्टरी सहित)—डा विलियम बोरिक। अब तक यह पुस्तक अग्रेजी भाषा मे थी जिसका यह सरल हिन्दी भाषा में अनुवाद है। मेटेरिया मैडिका अध्याय के बाद रेपर्टरी अध्याय लिखा गया है। लगभग १८०० पृष्ठ मू १५ रु

होमियोपैथिक लेडी डाक्टर (छठा सस्करण)—इस पुस्तक में स्त्री रोगो की सरल होमियोपैथिक चिकित्सा दी गयी है। पाच सस्करण शीघ्र ही समाप्त हो जाना इस पुस्तक की उपादेयता का द्योतक है। मू १.६२

होमियोपैथिक नुस्खा—डा श्याम सुन्दर शर्मा—इस

पुस्तक मे अनेक उपयोगी होमियोपैथी नुस्खे दिये हैं। मू १.२५

भैषज्यसार—होमियोपैथी की पाकेट गुटिका। सभी सभी रोगो की दवाओ के प्रयोग व मात्राये दी हैं। मूल्य २ ००

भारतीय औषधावली तथा होमियो पेटेन्ट मैडीसिन—डा सुरेसप्रसाद ने इस पुस्तक मे उन औषधियो को लिया है जो भारतीय औषधियो से तैयार होती हैं। साथ ही बाद में कुछ होमियोपैथिक पेटेण्ट औषधियो को वह किस रोग मे दी जाती हैं, दिया हे। मूल्य १.५०

रिलेशन शिप—नित्य व्यवहारिक औषधियो का सहायह अनुसरणीय प्रतिषेधक तथा विपरीत औषधियो का सग्रह किया है। मू २ ००

सरल होमियो चिकित्सा—इसमे सभी स्त्री पुरुषो के स्वास्थ्य नियमो को अलग बनाया है तथा उनसे विपरीत होने वाले होमियोपैथी सभी रोगो की होमियोपैथी चिकित्सा दी गई है। रोगी वर्णन तथा चिकित्सा दोनो ही अत्यन्त सरल और समझाकर लिखे गए हैं। मू ४.५०

रोग निदान चिकित्सा—इस छोटी पुस्तक मे १०० पृष्ठो में रोगी की परीक्षा विधि व ५० पृष्ठो मे होमियोपैथी एव आयुर्वेदिक चिकित्सा है। मू २ ००

स्त्री रोग चिकित्सा—डा. सुरेशप्रसाद शर्मा लिखित स्त्री जननेद्रिय के समस्त रोग, गर्भाधान, प्रसव के रोग तथा स्त्रियो को होने वाले अन्य सभी रोगो का निदान व चिकित्सा दी है। मू ५ रु

होमियोपैथिक मेटेरिया मेडिका—जिन्हे मोटे-मोटे ग्रथ पढने का समय नही है उनके लिए यह मेटेरिया मेडिका बहुत उपयुक्त है। सजिल्द ४.२५, आर एस भार्गव ७ ००

होमियो चिकिसा विज्ञान (Practice of Medicines)—ले डा श्यामसुन्दर शर्मा। प्रत्येक रोग का खण्ड खण्ड रूप में परिचय, कारण, शारीरिक विकृति, उपद्रव, परिणाम और आनुषङ्गिक चिकित्सा के साथ आरोग्य चिकित्सा का वर्णन है। सजिल्द मू ५ ००

बारह तन्तु औषधिया—इसमे प्रारम्भ मे १२ मूल औषधियो के विषय मे लगभग १८० पृष्ठो मे पर्याप्त जानकारी प्रदान करने के बाद रोगानुसार बायोकैमिक चिकित्सा विस्तार से दी है। छठा सस्करण मू ७ रु

होमियोपैथिक सग्रह—प्रथम भाग—इसमे होमियोपैथिक विधान (Organon), मेटेरिया मैडिका, रेपर्टरी तथा नुस्खे दिये गये है। मूल्य १० रु

होमियोपैथिक सग्रह दूसरा भाग—इसमे मेटेरिया मैडिका का होम्यो विस्तारपूर्वक दिया गया है। औषधियो के प्रचलित नाम, मदर टिक्चर तथा डाइलूशन बनाने की विधि, औषधि चिन्ह कच्चे रूप मे इसका प्रयोग, होमियोपैथिक प्रविङ्ग तथा ओपधियो के सम्बन्ध दिये हैं। मू १५ रु

कालरा या हेजा—इस महाव्याधि पर सुन्दर सामग्री प्रस्तुत है। प्रत्येक अवस्था पर औषधियो का सग्रह मू ३ ००

बायोकैमिक चिकित्सा—बायोकैमिक चिकित्सा सिद्धात के सम्बन्ध मे आवश्यक बातें तथा बारहो औषधियो के वृहद मुख्य लक्षण और किन-किन रोगो मे उनका व्यवहार होता है ? सरल ढङ्ग से समझाया है। पृष्ठ ४२६ मू ४ ५०

बायोकैमिक रहस्य (नवम् संस्करण)—बारहो दवाओ का भिन्न-भिन्न रोगो पर सफल वर्णन किया गया है। सजिल्द मू. ३ ००, कैलाशभूषण लिखित १.५०

बायोकैमिक मिक्चर—बारहो क्षारो का विभिन्न रोगो मे मिक्चर रूप से व्यवहार करना यह पुस्तक बताती है। मू. ० ७५

होमियो परिवारिक चिकित्सा—लेखक डा सुरेशप्रसाद शर्मा प्रत्येक रोग के लक्षण एव उनकी होमियोपैथिक चिकित्सा विस्तृत रूप से दी गई है। आधुनिक वैज्ञानिक विवेचन भी साथ मे दिया गया है। मू १० रु

होमियो मदर टिचर्स (मेटेरिया मेडिका)—डा भगवती प्रसाद श्रीवास्तव—इसमे होमियोपथिक दवाओ के सक्षिप्त लक्षण, उनके प्रभाव आदि दिये हैं। मू ३ ५०

होमियो पशु चिकित्सा—इसमे घरेलू जानवरो के रोगो की चिकित्सा होमियोपैथिक पद्धति से दी है मू २ ४०

जीवन रसायन शास्त्र—ले० डा० एच० पी० सिह—इसमे होमियोपैथिक चिकित्सा पद्धति के बारे में सक्षिप्त जानकारी, औषधियो की सक्षिप्त जानकारी, रिपर्टरी तथा अन्त में कुछ अनुभूत योग दिये गये हैं। सजिल्द मू ३.५०

बायोकैमिक रेपर्टरी—डा कामता प्रसाद मिश्र--यह पुस्तक अनेक हिन्दी तथा अ ग्रेजी ग्रन्थो से सग्रह कर बडे परिश्रम एव विवेक से तैयार की गई है। रोगो एव उनके विभिन्न लक्षणो का वर्णन अकारादि क्रम से किया गया हैं।

सजिल्द मू. ५ रुपया

प्रैक्टिस आफ मैडीसन (होमियो चिकित्सा विज्ञान)–डा. श्यामसुन्दर शर्मा एम० डी०–इसमे क्रमानुसार प्रत्येक रोग के कारण, लक्षण, निदान एव होमियो चिकित्सा दी है। सजिल्द पुस्तक मू ५ रुपया

होमियोपैथिक मदर टिंचर (मेटेरिया मेडिका)—डा. भगवतीप्रसाद श्रीवास्तव–इसमें होमियोपैथिक की समस्त मदर टिंचर औषधियो का मूल वस्तु, प्रस्तुत क्रिया, शक्ति एव रोगो की चिकित्सा का वर्णन है। मू. ३ ५०

होमियोपैथिक नुस्खा.	डा श्याम सुन्दर शर्मा	१.२५
घाव की चिकित्सा	श्यामसुन्दर शर्मा	१.००
निमोनिया चिकित्सा	डा. वी एन. टडन	०.७५
" "	डा सुरेशप्रसाद	० ७५
होमियो थाईसिस चिकित्सा	" "	० ७५
होमियो टाइफाइड चिकित्सा	" "	० ७५
होमियो पाकेट गाइड	" "	१.००
गृह चिकित्सा	" "	३.००
"	डा वी. एन. टडन	१ ५०
सरल होमियो पारिवारिक चिकित्सा	डा. शिवसहाय भार्गव	५.००
होमियो फार्माकोपिया	डा. वी एन. टडन	२.००

प्राकृतिक चिकित्सा की पुस्तकें

रोगो की सरल चिकित्सा (तीसरा परिवर्तित सस्करण) लेखक श्री विट्ठलदास मोदी। १०,००० से अधिक रोगियो पर किये गये अनुभव के आधार पर लिखी गई हिन्दी की यह प्राकृतिक चिकित्सा सम्बन्धी श्रेष्ठ पुस्तक है, अब तक इसकी पन्द्रह हजार प्रतिया बिक चुकी है। पृष्ठ संख्या ३५०, वढिया पक्की जिल्द मू ४ रुपया

बच्चों का स्वास्थ्य और उनके रोग—बच्चे के पालन पोषण की विधि के साथ-साथ उनके रोगी होने पर उन्हे रोगमुक्त करने की विधि इस पुस्तक मे विस्तार से दी गई है। मू केवल ३ रु

रोगो की नई चिकित्सा—लेखक लूईकूने। यद्यपि प्राकृतिक चिकित्सा का बहुत पहले आविर्भाव हो चुका था पर हिन्दुस्थान मे प्राकृतिक चिकित्सा कूने की पुस्तक न्यू साईन्स आफ हीलिंग के साथ ही आई। कूने की इस पुस्तक का ही 'रोगो की नई चिकित्सा' अनुवाद है मू. २ ५०

प्राकृतिक जीवन की ओर—मिट्टी, पानी, धूप, हवा और भोजन की सहायता से नये पुराने सब रोगो को दूर करने वाली तथा स्वास्थ्य वढिया बनाने की विधि सिखाने वाली जर्मन पुस्तिका का अनुवाद मू ४ रु

जीने की कला—यह पुस्तक आपका मानसिक बल वढाएगी, चिन्ताओ से मुक्त करेगी तथा आपके सामने वे सारे रहस्य खोल देगी जिनसे मनुष्य स्वस्थ बनता है। मू. २ रुपया

स्वास्थ्य कैसे पाये ?—इस पुस्तक में स्वास्थ्य को उन्नत बनाने और लोगो की रोगो से मुक्ति पाने की आत्म कथायें पढ स्वस्थ रहने का सही तरीका जानें। मू २ रु

उपवास के लाभ—उपवास की महिमा, उपवास करने की विधि और रोगो के निवारण मे उपवास का स्थान वताने वाली पुस्तक मू २ रु

उठो ?—इस पुस्तक को पढें और दुख, परेशानी और मुसीबतो से छुटकारा पा जीवन सफल बनायें। मू. १ ५०

आदर्श आहार–भोजन से स्वास्थ्य का क्या सम्बन्ध है और भोजन द्वारा रोग का निवारण कैसे किया जा सकता है ? बताने वाला एक ज्ञानकोष मू. २.२५

आहार चिकित्सा—आहार द्वारा रोग निवारण की शास्त्रीय विधि इस पुस्तक में सरल भाषा में समझाई है। इसके लेखक श्री विट्ठलदास मोदी हैं। मू २ रु.

सर्दी जुकाम खांसी–इन रोगो के कारण, उनको दूर करने की सरल घरेलू विधि, उनसे बचने का रास्ता बताने वाली एक अत्यन्त उपयोगी पुस्तक। मू ०.७५

योगासन–लेखक आत्मानन्द। योगासन की विधिया और योगासनो द्वारा रोग निवारण की कला की जानकारी प्राप्त कीजिये। मू केवल २ रु.

दुग्धकल्प—दूध मे क्या गुण हैं। इससे इलाज किस प्रकार किया जाता है। दूध से बनी विभिन्न वस्तुओ का हमारे स्वास्थ्य पर कैसा प्रभाव पडता है आदि वर्णन इस पुस्तक में पढिये। मू १ रु

स्वास्थ्य के लिये शाक तरकारियां (चतुर्थ संस्करण)–शाक तरकारियां जो हम रोजाना खाते हैं इनका मनुष्य के स्वास्थ्य और सौन्दर्य से क्या सम्बन्ध है, कौन कौन सी

शाक तरकारिया कब और कैसे खानी चाहिए आदि सभी बाते इस छोटी सी पुस्तक में है। मू २ ५०

स्वास्थ्य और जल चिकित्सा (छठा सस्करण)—लेखक केदारनाथ गुप्ता एम ए। इसमे जल चिकित्सा के सारे सिद्धान्तो का बडी सरल भाषा मे प्रतिपादन किया गया है। पानी के द्वारा समस्त रोगो की चिकित्सा कैसे करें। यह पुस्तक में पढिये। मू ३.५०

दैनन्दिनी रोगो की प्राकृतिक चिकित्सा—लेखक कुल रजन मुखर्जी—इस पुस्तक में ज्वर, प्रतिश्याय, अतिसार, प्रवाहिका, फोडा, फुन्सी, घाव, सिरदर्द, हैजा, चेचक आदि की प्राकृतिक चिकित्सा दी है। मू. ४ रु

पुराने रोगो की गृह चिकित्सा—लेखक डा. कुलरजन मुखर्जी। इस पुस्तक मे अजीर्ण, सग्रहणी, श्वास, यक्ष्मा, कैंसर, मधुमेह, दाद, उन्माद, रक्तचाप, अश्मरी, नपुंसकता अण्डवृद्धि आदि सभी जीर्ण रोगो की प्राकृतिक चिकित्सा दी गई है। मू. ४ रु

देहाती प्राकृतिक चिकित्सा—इस पुस्तक मे नेत्र, कर्ण, नासिका, दन्तरोग,मुख तथा कण्ठरोग, श्वास, कास,अजीर्ण, विसूचिका, प्रवाहिका, अतिसार, सग्रहणी, वृक्कशूल, मूत्रावरोध, दाद, श्वित्र, नपुसकता आदि रोगो के उपयोगी प्रयोग दिये गये है। मू सजिल्द ५ रु

स्वास्थ्य साधन—श्री रामदास गौड़ सजिल्द ४ रु

प्राकृतिक शिशु चिकित्सा—लेखक डा सुरेश प्रसाद शर्मा। शिशुओ के विभिन्न रोग किस कारण से होते हैं? तथा उनका नाम मात्र व्यय में किस प्रकार उपचार किया जाय? बच्चो को निरोग रखने के उपाय एव विविध प्रकार के स्नाव इस पुस्तक मे हैं। मू २ रु.

आकृति निदान—अपने विषय की सर्वश्रेष्ठ पुस्तक है। अन्त मे ५२ फोटो चित्रो द्वारा विभिन्न आकृतियो का ज्ञान कराया गया है। बादीपन का इलाज बहुत विस्तृत रूप से दिया है। सजिल्द मू. २.५०

जल चिकित्सा—श्री राखालचन्द जी चट्टोपाध्याय बी. एल.। अनुवादक प ईश्वरीप्रसाद शर्मा। इस पुस्तक के तीन भाग हैं। तृतीय भाग में सब तरह के स्त्री रोगो का ज्ञान दिया गया है। मू. तृतीय भाग १.५०

तन्दुरुस्त कैसे रहे?—वर्मर मैकफैडन। इसके अनेको चित्र देते हुए व्यायामो का बडे सुन्दर ढग से वर्णन किया गया है। मू. ३ रु

नवीन चिकित्सा पद्धति—डा युगलकिशोर चौधरी		१ २५
सूर्योदय	,,	१.००
व्यायाम काया कल्प	,,	२ ००
चिकित्सा सागर	,,	० ७०
मैं निरोग हू या रोगी	,,	० ६२
कपड़ा और तन्दुरुस्ती	,,	०.५६
दमा-श्वास खासी का इलाज डा. युगलकिशोर चौधरी		०.५०

पंकजा फार्मा अलीगढ़ द्वारा निर्मित

पूर्ण प्रभावशाली आयुर्वेदिक कैपसूल



मदनोसूल कैपसूल—सिद्ध मकरध्वज नं० १, अश्वगंधा, असली अकरकरा, जायफल, जावित्री, जुन्दवेदस्तर, शुद्ध कुपीलु आदि एवं अन्य अनेक बहुमूल्य औषधियो से निर्मित यह कैपसूल स्तम्भन शक्ति बढाने सम्भोगजन्य निर्बलता दूर करने, प्रमेह, शीघ्रपतन, इन्द्रिय की निर्बलता, नपुंसकता आदि के लिए अमोघ हैं। इन रोगो पर हजारो औषधियो की परीक्षा करके हमने इनका निर्माण किया है। अनेक प्रशंसापत्र इसकी प्रशस्ति में प्राप्त हुए हैं। मूल्य ५० कैपसूल १८ २५, १०० कैपसूल ३५ ५०

रजनोशूल कैपसूल—जिनके गर्भाशय मे शोथ हो या अन्य किसी भी कारण से मासिक धर्म कई मास बाद होता हो तथा बहुत थोडी मात्रा मे होता हो तथा इस कारण से शरीर मे अन्य विकार भी उत्पन्न हो गये हो तो यह कैपसूल लेने से गर्भाशय शोथ नष्ट होकर मासिक धर्म नियमित होगा, खुलकर होगा तथा सभी विकार नष्ट हो जायेंगे। मूल्य ५० कैपसूल ७.५०, १०० कैपसूल १४ ००

ज्वरघ्न कैपसूल—महालक्ष्मी विलास रस, महामृत्युंजय रस, त्रिभुवनकीर्ति रस, गिलोयसत्व, सुदर्शनघनसत्व आदि अनेक प्रभावशाली औषधियो के उत्तम मिश्रण से निर्मित यह कैपसूल कुनैन से भी बढकर कार्यकारी सिद्ध हुये हैं। जिन्होने इनको वर्ता है वह तो इसके भक्त है ही आप भी प्रयोग कर लाभान्वित हो। मूल्य ५० कैपसूल १३.५०, १०० कैपसूल २६ ००

एज्मोसूल कैपसूल—पुराने श्वास खासी, सर्दी, कुकर खांसी मे लाभप्रद ५० कैपसूल ९ ००, १०० कैपसूल १७ ००

एन्टेरोसूल कैपसूल—अतिसार, आमातिसार, संग्रहणी मे उपयोगी ५० कैपसूल ११ ५०, १०० कैपसूल २२ ००

पुंसवन कैपसूल—जिनके निरन्तर लडकिया पैदा होती हो वह प्रयोग करें। ४७ कैपसूल का एक सैट २६ ५०

ल्यूकोसूल कैपसूल—श्वेत प्रदर, रक्त प्रदर मे अचूक। ५० कैपसूल १८ २५, १०० कैपसूल ३५ ५०

वातारि कैपसूल—गठिया, कमर का दर्द, गृध्रसी आदि वायु रोगो में दें। ५० कैपसूल २३ ००, १०० के ४५ ००

रक्त विकारि कैपसूल—फोडा, फुन्सी, खुजली आदि मे उपयोगी ५० कैपसूल १३ ५०, १०० कैपसूल २६ ००

रेचन कैपसूल—दस्त लाने वाला अति उपयोगी कैपसूल। ५० कैपसूल ११ ५०, १०० कैपसूल २२ ००

रुदन्ती कैपसूल (साधारण)—राजयक्ष्मा मे उपयोगी। ५० कैपसूल १३ ५०, १०० कैपसूल २६ ००

रुदन्ती कैपसूल (स्वर्ण युक्त)—इनसे लाभ अपेक्षाकृत शीघ्र होता है। मूल्य ५० कैपसूल २३ ००, १०० के ४५ ००

अर्शहारी कैपसूल—"धन्वन्तरि चिकित्सा विशेषांक प्रथम भाग" के यशस्वी सफल सम्पादक देहली निवासी श्री बी एस प्रेमी का अचूक सफल प्रयोग अनेक रोगियो पर परीक्षा करने के पश्चात् हमने कैपसूल के रूप मे प्रस्तुत किया है। दोनो प्रकार के अर्श पर परमोपयोगी है। ५० कैपसूल ९ ००, १०० कैपसूल १७ ००।

अर्शहारी मलहम—उपरोक्त कैपसूलो के साथ यदि आप मल्हम को भी मस्सो पर लगायें तो मस्से जल्दी ही सूख जायेंगे तथा उनकी वेदना शान्त होगी। मूल्य २५ ग्राम की शीशी ३.५०।

चेचकना कैपसूल—यदि आपके कस्बे मे चेचक फैल रही है तो स्वस्थ बच्चो को यह कैपसूल सेवन करायें। उन्हें चेचक निकलने का भय नहीं रहेगा। ५० कैपसूल ७ ५०, १०० कैपसूल १४ ००

पता—पंकज फार्मा, मामू भांजा रोड, अलीगढ

पंकज फार्मा अलीगढ़ द्वारा निर्मित एवं बहु प्रशंसित

आशुफलप्रद सफल एलोपैथिक टेबलेट

सिटामोल टेवलेट—सर्दी वर्षा, थकान अथवा तेज धूप से उत्पन्न ज्वरो या आगन्तुक ज्वरो के लिये हानिरहित आश्चर्यजनक औषधि है। इससे ज्वर २-३ घंटे मे उतर जाता है। सिर दर्द, दांत दर्द, कमर दर्द, मासिक धर्म का दर्द, मांसपेशियो और सन्धियो का दर्द, आमवात का दर्द, छाती का दर्द आदि वेदनाओ को तुरन्त शांत करती है। बच्चो तथा गर्भिणियो के लिये हानिरहित है। एक, दो टेवलेट जल या चाय से ले दर्द गायव। सौ टेवलेट ११.००

एन्थेलीन टेवलेट—उदर कृमियो को नष्ट करने वाली हानिरहित विश्वसनीय औषधि है। यह कृमियो को नष्ट करके आंतो से बाहर निकाल देती है जिससे रोगी के मल में ढेर सारे मृत या मूर्च्छित मोटे-मोटे और लम्बे लम्बे केंचुए दिखाई देंगे। १०० टेवलेट ७.५०

पीलैक्स टेबलेट—कब्ज दूर करने को अत्युत्तम है। रात को सोते समय एक या दो टेवलेट चबाकर ले। प्रात ही दस्त साफ होगा। क्रूर कोष्ठ वाले रोगी को ४ टेवलेट दे। १०० टेवलेट ५.००

नेत्र प्रभाकर अंजन—वृद्धावस्था मे प्राय धुन्ध और जाले के कारण आंखो की रोशनी कम हो जाती है उनके लिये वरदान के समान है। नित्य लगाने से आखो की रोशनी बढ़ती है मोतियाबिंदु नही होता, आंखे साफ रहती है। मूल्य ५ ग्राम की १ शीशी १.७५, १ दर्जन शीशी २०.००, ३ दर्जन ५५.००, १ ग्रोस २००.००।

मधुमेहदमन चूर्ण—अनेक बहुमूल्य द्रव्यो से निर्मित यह चूर्ण मधुमेह, बहुमूत्र और उसके कारण होने वाली कमजोरी के लिये अव्यर्थ है। मूल्य १०० ग्राम २.००, ५००ग्राम ९.००। यदि इसके साथ वसन्त कुसुमाकर रस का भी प्रयोग किया जाये तो अवश्य एव शीघ्र लाभ होगा। मूल्य १-१ रत्ती की ६० गोली ३०.००

भद्र मलहम—फोडा, फुन्सी, जले, कटे, अन्य किसी प्रकार के घाव के लिये अत्युत्तम विशुद्ध आयुर्वेदिक मलहम है। मूल्य १ शीशी ½ औंस (१५ ग्राम) १.००, ५० ग्राम की शीशी २.५०

अर्शहारी मलहम—अर्शहारी कैपसूलो के सेवन के साथ या अकेले ही यदि इस ही मलहम को मस्सो पर लगायें तो मस्से जल्दी ही सूख जायेगे तथा वेदना शांत होगी। मूल्य २५ ग्राम की शीशी ३.५०।

दो सफल सामयिक औषधियां

आराम धारा—कपूर, पिपरमिन्ट, सत अजवायन आदि के योग से प्रस्तुत यह औषधि कै-दस्त, जी मिचलाना, चक्कर आना, हैजा तथा लू लगने पर रामवाण है। सिर दर्द और गठिया दर्द मे वैसलीन में, कान दर्द मे तिल तैल में, टांसिल के फूलने पर शहद या ग्लिसरीन मे मिलाकर कीट दंश या दांत दर्द मे रुई भिगोकर लगाने तथा अन्य विविध प्रकार से बाहरी उपयोग मे सरलतापूर्वक प्रति दिन काम मे आने वाली सैकडो रोगों मे अत्यन्त उपयोगी सामयिक घरेलू महौषधि है। ४ सी सी (४ मि लि) की प्लास्टिक की बहुत सुन्दर २५ शीशी २०.००, १ शीशी ०.९०

आराम टेबलेट—इसके खाने मात्र से सिर दर्द, आधा सीसी, पसली का दर्द, वायु का दर्द, चोट, फोडे का दर्द, आंख, दाढ, कान, नाक, छाती का दर्द, गठिया, प्रसूती का दर्द, जुकाम के कारण शरीर मे दर्द मय हरारत तुरन्त दूर हो जाती है, दर्द से परेशान रोगी को खिलाने से दर्द तुरन्त दूर हो जाता है तथा रोगी चैन से सो जाता है। यह दोनो ही औषधिया प्रत्येक घर एव चिकित्सालय मे अवश्य रहनी चाहिये। मूल्य १०० टेवलेट केवल ६.००

पता—पंकज फार्मा, मामू भांजा रोड, अलीगढ़

चिकित्सोपयोगी नवीन उपकरण

एक सफल चिकित्सक के लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि वह रोगी का सही निदान करे तथा उसकी चिकित्सा में ओषधि प्रयोग के साथ-साथ आधुनिकतम यन्त्र शस्त्रों का प्रयोग आवश्यकतानुसार करे। इन आधुनिक यन्त्र-शस्त्रों के प्रयोग से आपको अपनी चिकित्सा में तो सफलता मिलती ही है साथ ही रोगी पर भी आपके प्रति बहुत अनुकूल प्रभाव पड़ता है। हमने अपने स्टोर्स में नवीन नवीन यन्त्र शस्त्रों का विशाल संग्रह किया है। चिकित्सकों को चाहिये कि वे आवश्यकतानुसार इन वस्तुओं को मगाकर रखें तथा अपने चिकित्सा कार्य मे सफलता एवं यश प्राप्त करें। यह मूल्य नैट है। पोष्ट पैकिंग व्यय एवं सैलटक्स पृथक् होगा।

डाइग्नोस्टिक सैट—इसके द्वारा नाक, कान तथा गले को अन्दर से देखते हैं। प्रकाश का प्रबन्ध होता है। सैल सहित मू ४७ रु.

चिपकने वाली पट्टी—१ इंच × ५ गज ३ ५०, २ इंच × ५ गज ६ ००

आमाशय प्रक्षालिनी नलिका—७ ००

नमक का पानी चढाने का यन्त्र—१२ ५०

आख धोने का गिलास—१ रु.

शर्करामापक यत्र—६ ५०

सुगर टैप—(बिना किसी यन्त्र के तत्काल ही मूत्र में शर्करा की प्रतिशत मात्रा ज्ञात करने के लिये)—१२ रु.

रक्तचापमापक यन्त्र (डायल टाइप)—१२५ रु

आई शेड—० ५०

मोतीझरा देखने का शीशा—छोटा २ ५०, बडा ३ ९, धातु का हैंडिल छोटा ४ २५, बडा ५ ५०

स्टेथिस्कोप—१० रु, बढिया १४ ५०, जापानी सर्वोत्तम ४५रु., स्टेथिस्कोप रखने का थैला मू ८ ५०

डायफ्राम (इंच) चैसरी—४ ५०

किडनी ट्रे—८" ४ २५, १०" ५ ००, ८" नाइलोन की (न टूटने वाली) ४ ७५

सस्पेन्सरी बेन्डेज—२ ५०

हीमोग्लोबिन स्केल बुक—२ ५०

पैन टार्च—२ सैल सहित १० ५०

पैन टार्च सेट—पैनटार्च पर नाक कान तथा गले को देखने वाली नलिया लग जाती है। कपडा से मढे एक सुन्दर बक्स में रखे पूरे सैट का मूल्य २५ ५०

थर्मामीटर—४ ५०, फार्नहाइट वाला भारतीय ६ ५०

थर्मामीटर केस—धातु का २ ५०, प्लास्टिक का २ रु

आटोमाइजर—८ ५०

धमनी सदश (Artery Forceps)—मूल्य ५ इची ४ ५०, ६ इची ५ ५०, स्टेनलैसस्टील की ५ इची ६ ५०, ६ इची ७ २५

सूचिका सदश Needle Holder)—मू० ८ ००, कैंची की तरह का ९ ५०, स्टेनलैस स्टील का कैंची की तरह का मू० १० ५०

धागा सीवन कर्म को—१ रीलिट २ ००, त्रिनेनी-नेल १० ५०

सूचिका—सीवन कर्म को विदेशी ६ सुई का पैकिट ६ ७५

शीशे पर लिखने की पैंसिल—० ७५

मसूढे चीरने का चाकू सीधा १ ५०, फोल्डिंग ३.००, स्टेनलैस स्टील का सीधा ३ ५०

इंजेक्शन सिरिंज (कस्पलीट)—सम्पूर्ण कांच की २ cc की २ ७५, ५ cc की ४ ००, १० c. c की ६ ००, २० c c की १० ००, ३० c c की १४.५०, ५० c c की २८.००

रिकार्ड सिरिंज—२ c c की ११ ००, ५ c c की १५ ०० १० c c की १८ ५०

ल्यूर लाक भारतीय—२ c c की ६ ०० ५ c c. की ६ ००, १० c c की १२ ००

ल्यूर लाक जापानी—२ c c की १० ००, ५ c c की १२ ००, १० cc की १५ ००, २० cc की २० ००, ३० cc की २८ ००, ५० cc की ३५ ००

नाइलोन की सिरिंज—२ cc की २ ७५, ५ cc की ४ ००, १० c c की ५ ५०

इन्जेक्शन की सुई (नीडिल)—१ दर्जन जापानी ६ ००

सिरिंजकेस निकिल के—१ केस २ c c. की सिरिंज के लिये ३ ००, ५ c c की सिरिंज के लिये ४ ००, १० cc की सिरिंज के लिये ६ ००, २० cc की सिरिंज के लिये ११ ००, ३० या ५० c c की सिरिंज के लिये १६ ५०।

सिरिंजकेश प्लास्टिक का—जिसमे २ सी सी, ५ सी सी तथा १० सी सी. की सिरिंज तथा नीडिल एक साथ रखी जा सकती हैं। मू ६.५०

परवाल उखाड़ने की चीमटी—[Cilia Forceps] मू २ ५०, स्टेनलैस स्टील की ४ ५०

एनीमा सिरिंज (बस्ति यन्त्र)—मू ६.००

दवा नापने का ग्लास—मूल्य २ ड्राम का ०.८०, १ औंस का १ ००, २ औंस का १ २५, ४ औंस का १ ५०

घाव में डालने की सलाई [probe]—मू. ० ३५

गला व जबान देखने की जीभी [Tongue Depre-

ssure]—मूल्य साधारण सीधी १ ५०, फोल्डिङ्ग ३.००, स्टेनलैस स्टील की सीधी ५ ५० ।

गरम पानी की थैली—मूल्य ६ ५०

बरफ की थैली—मू ४ ५०

कान धोने की पिचकारी—धातु की १ औंस की ७.७५, २ औंस की ८.५०, ४ औंस की ११ ५० ।

आपरेशन करने का चाकू—मू ६ ब्लेडो सहित ६.५० । स्टेनलैस स्टील का ६ ब्लेड सहित ८ ५० ।

बिश्चूरी—सीधी का मूल्य १.५०, फोल्डिङ्ग ३ ०० । स्टेनलैस स्टील की सीधी ३.५० ।

चीमटी—४ इन्ची ० ६०, ५ इन्ची १ ००, स्टेनलैस स्टील बढिया ४ इन्ची ३ ७५, ५ इन्ची ४ ००

दातो मे दवा लगाने की चीमटी—३.०० ।

चाकू—चाकू सीधा ५ इन्ची १ ५०, फोल्डिङ्ग ३.००, स्टेनलैसस्टील का सीधा ३.५० ।

दांत उखाड़ने का जमूड़ा—६ ५०, स्टेनलैस स्टील २०.००

आख मे दवा डालने की पिचकारी—१ दर्जन ०.४०

कान मे से दाना निकालने का यन्त्र—मू २.५० ।

ग्लेसरीन की पिचकारी [प्लास्टिक की]—१ औंस २ ५०, २ औंस ४ ००

तीन मार्ग वाला यन्त्र (Three way Canula)—६.२५

आमाशय मे दूध चढाने की नली—३.०० ।

कान देखने का आला—१६ ०० ।

गुदा परीक्षण यन्त्र (Proctoscope)—१४ ०० ।

स्तनो से दूध निकालने का यन्त्र—२ ५० ।

मूत्र कराने की नली [कैथीटर]—मू रवड का० ७५ स्त्रियो के लिये धातु का १ ७५, पुरुषो को धातु का ३ ५०

जलोदर मे उदर से पानी निकलने यन्त्र—मू ३.७५, स्टेनलैस स्टील का ६ ५० ।

आख टैस्ट करने का चार्ट—मू० १ ६० प्रति चार्ट ।

टारल चीनी का गोल—३इन्ची २ ५०, ४ इन्ची ३ ००

आपेक्षिक घनत्वमापक यन्त्र [Urinometer]—मूल्य १.५०, बड़ा (१००० से २००० तक चिह्न वाला) २ ००

मवाद साफ करने की पिचकारी—मनुष्य के लिये १ २०, जनानी १.५० ।

कैंची—४ इन्ची २ .०. ५ इची २ २५, ६ इची ३ रु, ७ इची ३.७५ । कैंची मुडी हुई ४ इची २ २५, ५ इची २.५० । कैंची एक ओर को मुडी हुई ४ इची २.५०, ५ इची ३.०० । कैंची सीधी स्टेनलेस स्टील की ४ इची ४.५०, ५ इची ५ ५०, ६ इची ७ २५, ७ इची ७ रु० ।

रवड़ के दस्ताने—मूल्य १ जोडी ३ ५० ।

कांटा (Scales)—ग्राम के बाटो सहित निकिल किया हुआ १५.०० ।

डूस—पूर्ण २ पिंट का ६.५०, ४ पिंट का ९ ५०, २ पिंट का नाइलौन का सुन्दर पात्र रवड टोटनी सहित ६ ०० ।

स्प्रिट लैम्प—धातुकी २ औंसकी ४.५०, ४ औंसकी ५ ५०

डाक्टर्स इमर्जेंसी बैग—१० इची सम्पूर्ण चमडे का जिप (जंजीर) लगा सुन्दर १८ ००, १२ इन्ची २२ ००

मुख विस्फारक यन्त्र (Mouth gag)—मूल्य ११ ००

दन्त उन्नामक यन्त्र [Dental Elevetor]—६ ५०

नासिका प्रेक्षण यन्त्र—५ ००

अंगुली के रबड के दस्ताने—३० नये पैसे, १ दर्जन ३.००

मूत्रपात्र [Urinal pot]—तामचीनी का मू ६ २५, नाइलौन का बढिया ७.५० ।

सुरमा लगाने की सलाई—[काच की] १ दर्जन ३० पैसे, १ ग्रौस । ३.०० ।

योनि परीक्षण यन्त्र—११ ५० ।

योनि प्रक्षालन यन्त्र—१५ ०० ।

नीडलकेस प्लास्टिक का—इन्जेक्शन की सूचिका रखने को— १ दर्जन मू ५ ५० ।

कार्क स्क्रू—शीशी से कार्क को सुविधापूर्वक निकालने को ०.५० ।

विसंक्रामक पात्र—३ × २½ × १½ इन्ची— १७ ५०

विसंक्रामक पात्र—बिजली से चलने वाला—४१रु.

नाडी संदश (Sinus Forceps)— विद्रधि खोलने को स्टेनलैसस्टील का ५ इन्ची ७.७५, ६ इन्ची ९ ५०

टूर्नीकेट—स्क्रू से कसने वाला शिरान्तर्गत इन्जेक्शन लगाने के लिये अति उपयोगी, विलायती २८.०० ।

पट्टियां—(Bandages) घावो मे अस्पताल मे बाधी जाने वाली पट्टियां—यह ३ मीटर लम्बी तथा १ दर्जन के पैक मे है— १ इन्च की १२ पट्टिया १ ००, २ इन्च की १२ पट्टियाँ २ ००, ३ इन्च की १२ पट्टिया ३ ०० ।

रुई (Cotton)—४०० ग्राम का पैकिट ४.२५ ।

पत्थर के खरल

कसौटी पत्थर मुलायम दवाओं को घोटने के लिए उत्तम है। मोतिया पत्थर के खरल कडे तथा साधारण दवा घोटने के लिये उपयोगी है। मोतिया मे अधिक कड़ा तथा कम घिसने वाला तामड़ा होता है। विविध पिष्टी घोटने के लिये इनका उपयोग करे। तामडा पत्थर से अधिक उत्तम व न घिसने वाला हसराज पत्थर सर्वोत्तम है।

--मूल्य तथा साइज का विवरण--

	हसराज	तामड़ा	मोतिया	कसौटी
३ इची	×	×	३ ००	२ ००
४ इची	१४.२५	९ ७५	४.५०	२ ७५
५ इची	१६ ७५	११ २५	५ ७५	४ ६०
६ इची	२२.७५	१५ ७५	७.५०	७ २५
७ इची	२७ ७५	१८ ५०	१० ५०	६ ५०
८ इची	३४.९०	२२ ५०	१३ ५०	१२ ००
९ इची	४० २५	२७ ८७	१७ ००	१५ ००
१० इची	४७ ७५	३२ २५	२१ २५	१९ ५०
११ इची	५५.२५	३८ ७५	२४ ७५	×

	हसराज	तामड़ा	मोतिया
१२ इची	६२ ७५	४४ ००	२८ ७५
१३ इची	७० ७५	४९ ५०	३३.७५
१४ इची	८३ ००	५७ ००	३९ ००
१५ इची	९६ ५०	६६ २५	४७ ५०
१६ इची	११८ ७५	७८ ७५	५५ ००
१७ इची	१३९ ५०	८८.५०	६६.००
१८ इची	१६४ ३७	१०१ ००	७९ ५०
१९ इची	१९७ ००	१२२.२५	९६ ००
२० इची	२२५ ००	१४४ २५	११४ ००

सभी पत्थर के खरल १६ इची तक के बनाकर तैयार रखे जाते हैं। बडे खरल का या स्टाक मे समाप्त खरल का आर्डर आने पर १॥–२ माह मे तैयार किया जाता है। खरलो का आर्डर देते समय अपने पास के रेलवे स्टेशन का नाम अवश्य लिखें तथा कम से कम १० रु० मनिआर्डर से पेशगी भेजे।

पता–दाऊ मैडीकल स्टोर्स विजयगढ़ (अलीगढ़)

खाली कैपसूल

आजकल का जमाना चमक-दमक का है। यदि आप अपने रोगियो को कोई कडवी दवा देना चाहते है तो उसे पुडिया मे न देकर कैपसूल मे भरकर दे। इससे वह रोगी आपको दवा के दुगुने पैसे खुशी–खुशी दे जायगा। साथ ही रोगी को दवा का कडवापन वगैरह कुछ भी नही मालूम पडेगा। कोई-कोई रोगी कडवी दवा को खाते ही उल्टी कर देते हैं लेकिन कैपसूल मे दवा भर कर देने पर ऐसा कुछ नही होगा। हमने वहुत बढ़िया क्वालिटी के कैपसूल मगाकर सग्रह किए हैं। आप भी लाभ उठावें। मूल्य निम्न प्रकार हैं—

वडा साइज ५ ७५ प्रति सैकडा, ५५ ०० के १०००
छोटा साइज ५ ५० प्रति सैकडा, ५२ ५० के १०००
सेल–टैक्स तथा पोस्ट–व्यय पृथक

नोट—एक साथ २००० कैपसूल या उससे अधिक मगाने पर पैकिग पोस्ट व्यय हम देंगे।

पता–दाऊ मैडीकल स्टोर्स, विजयगढ़ (अलीगढ़)

रजिस्टर्ड पेटेन्ट

भारत सरकार से अपनी दुकान, फर्म, कम्पनी तथा अपनी बनाई हुई दवाओं के नाम रजिस्टर्ड कराइये। शीघ्रता कीजिये, कहीं ऐसा न हो कि नकल करने वाले ही चुपके से आपसे पहले उस नाम को रजिस्टर्ड करालें और असली मालिक बन बैठें तथा बाद में आपको हानि और परेशानी उठानी पड़े तथा नाम भी बदलना पड़े। प्रसिद्धि ही तो व्यापार की जान है नियम मुफ्त मंगाइये।

दाऊ मैडीकल स्टोर्स, विजयगढ़ (अलीगढ़)

गर्ग वनौषधि भंडार विजयगढ़ (अलीगढ़) की आविष्कृत
पेटेन्ट औषधियां



नेत्र ज्योति वर्धक सुरमा—अन्य सुरमो की तरह केवल आखो की सुन्दरता बढ़ाने के लिए यह सुरमा नही है। यह तो नेत्रो की ज्योति बढाने वाली अत्युत्तम महौषधि है। वृद्धावस्था मे धुन्ध और जाले से जिनकी नेत्रो की रोशनी कम हो जाती है उनके लिए यह वरदान है। मोतियाबिन्दु की प्रारम्भिक अवस्था मे यह बहुत लाभ करता है। इससे मोतियाबिन्दु बढता नही है और प्रारम्भिक मोतियाबिन्दु निश्चय ही ठीक हो जाता है। अब तक जितने व्यक्तियो ने इसे व्यवहार किया है, सबने प्रशसा की है। मूल्य ५ ग्राम की शीशी का २ रुपया है।

छाजनहर मलहम—अब तक यह समझा जाता रहा है कि छाजन असाध्य रोग है किन्तु हमारी इस मलहम ने यह धारणा गलत सिद्ध करदी है। इसके व्यवहार से छाजन के सैकड़ो रोगी स्वस्थ हो गए हैं। छाजनहर चूर्ण के पानी से छाजन को धोकर मलहम लगाइये। छाजन ठीक हो जायगा। मलहम और चूर्ण का एक ही पैकिंग ३ २५ का है।

दन्त रक्षक टूथ पेष्ट—बाजार में मिलने वाले अन्य टूथ पेष्टो की तरह यह केवल दांतो को साफ करने वाला टूथ पेष्ट नही है। यह दातो के समस्त रोगो की महौषधि है। इसके व्यवहार से दातो मे पानी लगना, टीस चलना, मसूडे फूलना और दातो का हिलना आदि समस्त विकार दूर हो जाते है। और नियमित व्यवहार करने से पायरिया ठीक हो जाता है। पैकिंग बहुत सुन्दर किया गया है। मूल्य १ २०

दग्धनौल—(जले की मलहम) यह जले की अत्युत्तम मलहम है। जलने पर यदि इसका तुरन्त व्यवहार कराया जाय तो छाला नही पड़ता और तत्काल शाति आ जाती है। यदि छाला पडने पर इसका व्यवहार कराया जाय तो जले के घाव बहुत शीघ्र ठीक हो जाते है। एलोपैथिक औषधि जो जले पर व्यवहार की जाती है उससे बहुत सस्ती और उत्तम है। इसका पैकिंग भी सुन्दर ट्यूब में किया गया है। मूल्य प्रति ट्यूब (२५ ग्राम) १ २०।

नपुंसकत्वारि—यह प्रयोग हमारा आविष्कृत नही है। इसका प्रयोग सेक्स रोगाङ्क मे देहली निवासी श्री प्रेमी जी ने छपवाया था और लिखा था कि इसके सेवन से इन्द्री की कमजोरी, सुस्ती, नामर्दी, ढीलापन, पतलापन, टेढापन रगो का फूलना, दम फूलना, शीघ्र पतन, नसो मे पानी भरना आदि सभी विकार दूर होकर काम शक्ति बहुत बढ जाती है। पूर्ण योवन आजाता है। धन्वन्तरि के सैकड़ो ग्राहको ने हमसे इस प्रयोग को बनवा कर मगाया और लाभ उठाया है। मूल्य एक मास के सेवन के लिए ६० गोलियो का २५ रुपया है। यदि इसके साथ वसन्त कुसुमाकर रस भी सेवन करना चाहे तो १ मास के लिए ६० गोली ३२.०० की हैं।

अर्शोघ्न—अर्श बहुत ही कठिन रोग है और इसके मस्से तो बेहद कष्ट देते है। जब फूल जाते है रक्त स्राव होने लगता है और बेहद कष्ट, जलन और सूजन हो जाती है। अब तक यह समझा जाता रहा है कि आपरेशन के अतिरिक्त इसकी कोई चिकित्सा ही नही है, किन्तु आपरेशन मे भी इतना कष्ट और व्यय होता है कि सभी रोगी आपरेशन नही करा पाते और कष्ट भोगते रहते हैं। हमारी इस मलहम ने चिकित्सा जगत मे आश्चर्य उपस्थित कर दिया है। केवल मात्र इसके नियमित लगाने से ही, मस्से धीरे धीरे सूख कर नष्ट हो जाते हैं। २५ ग्राम का ट्यूब जो १ मास से भी अधिक समय के लिये पर्याप्त होता है ५) का है।

चर्मनौल—खाज, खुजली आदि सभी प्रकार के चर्म रोगो के लिये अत्युत्तम है। खाज चाहे गीली हो या सूखी, सभी मे लाभ करती है। शरीर के दाग धब्बे भी इसके व्यवहार से ठीक हो जाते हैं, मूल्य २५ ग्राम के ट्यूब का १.५०

(अन्य औषधियो का विवरण अगले पृष्ठ पर पढ़िये)

श्वेत प्रदरान्तक—श्वेतप्रदर अति कठिन रोग है। बदल-बदल कर औषधिया देने पर भी इसे लाभ नहीं होता। रोगिणी औषधिया सेवन करते-करते परेशान हो जाती है, किन्तु उसे निराशा ही हाथ लगती है। हमारी यह औषधि है तो कतिपय बनौषधियो का चूर्ण, किन्तु गुणो मे मूल्यवान रसो को भी मात करने वाली है। इससे श्वेत प्रदर, कटिशूल, हाथ पैरो की जलन, हडकल, सिर दर्द आदि उपद्रवो मे शीघ्र लाभ होता है। जो श्वेतप्रदर की रोगिणी बहुत सी औषधिया सेवन करके निराश हो गई थी, वह इस औषधि से पूर्ण स्वस्थ हुई है। १५ दिन के सेवन योग्य १५० ग्राम चूर्ण का मूल्य केवल ३ रुपया है।

वातनौल—वायु के दर्द और सूजन के लिये आशुफलप्रद है। पक्षाघात, ग्रधसी, आमवात आदि किसी भी रोग के कारण दर्द और सूजन हो इसकी मालिश करने से बहुत शीघ्र लाभ होता है। वायु के रोगो मे प्राय महानारायण तैल, विषगर्भ तैल आदि की मालिश की जाती है; किन्तु यह मलहम इन सब तैलो से अधिक लाभप्रद है। आमवात मे जब रोगी पीड़ा और सूजन से छटपटाता है तो इसकी मालिश करने से बहुत शीघ्र चैन पड जाता है। आमवात और ग्रधसी के रोगी को वातान्तक कैपसूल १–१ खिलाकर ऊपर से रास्ना मूल का क्वाथ पिलाना चाहिए और इस मलहम की मालिश करके सिकाई करनी चाहिए। पसली या गले के दर्द मे इसकी मालिश करके रुई बाध देने से बहुत शीघ्र लाभ होता है। व्यवहार करने से ही पता चलेगा कि इस विशुद्ध आयुर्वेदीय मलहम की बराबरी न कोई तैल कर सकता है और न ओइनमेंट। ट्यूब मे २५ ग्राम का सुन्दर पैकिंग ३.०० का है।

त्रिफलावलेह—यह अवलेह उन रोगियो के लिए, जिन्हे स्थाई मलावरोध रहता है, कभी दस्त साफ नहीं होता, पेट मे भारापन रहता है और पेट के दर्द की शिकायत रहती है, अत्युत्तम औषधि है। यह केवल दस्तावर ही नही, आतो को बल भी प्रदान करती है, कुछ दिन नियमित सेवन के पश्चात् फिर इसके सेवन की आवश्यकता ही नहीं रहती। जिन व्यक्तियो की बाल्यावस्था या युवावस्था मे नेत्रो की ज्योति कम हो जाती है और नेत्र चिकित्सक आखो मे किसी प्रकार की खराबी नही बताते वह यदि नेत्र ज्योति वर्धक सुरमा तथा इस अवलेह का नियमित प्रयोग करते है तो निश्चित ही नेत्रो की ज्योति बढ जाती है। मूल्य २५० ग्राम ४.००

नवयौवन मलहम—जिन व्यक्तियो की हस्तमैथुन, बहुमैथुन आदि निन्दनीय कर्मो से नसे कमजोर हो गई है और उसके कारण निर्बलता, टेढापन और पतलापन आकर नपुंसकता आ गई हैं, उनके लिये इसके व्यवहार से बहुत शीघ्र लाभ होता है। कोई तिला या मलहम इसकी समानता नही कर सकता। इसके व्यवहार मे टेढापन, पतलापन, सुस्ती, नपुंसकता, नसो मे पानी भरना, रगो का फूलना आदि सभी विकार दूर होकर पूर्ण पुष्टता आती है। मूल्य १० ग्राम के ट्यूब का ४.५०

काम शक्ति केशरी—इस हीरा और स्वर्ण मिश्रित औषधि का प्रयोग भी धन्वन्तरि के सेक्स रोगांक मे प्रकाशित हुआ था और बहुत से ग्राहको ने हमसे इसे बनाकर भेजने का आग्रह किया था, किन्तु हीरा भस्म न होने से हम इसे तैयार नही कर सके थे। अब बडे परिश्रम से हीरा भस्म तैयार कराकर हमने इस प्रयोग को तैयार कराया है। इसके गुणो के विषय मे लेखक ने लिखा है कि सब प्रकार के असाध्य नपुंसको को शानदार जीवन बिताने के लिये इससे बढकर अन्य औषधि मिलना कठिन है। इसके सेवन से घी–दूध खूब हजम हो जाता है और बल—वीर्य और कान्ति तेजी से बढती है। यो तो नपुंसकता दूर करने के लिये नपुंसकत्वारि भी कम नही है किन्तु इसमे तो हीरा का मिश्रण है, जो कि असीम बलवर्धक है। यदि समर्थ रोगी कामशक्ति केशरी, नपुंसकत्वारि और बसन्त कुसुमाकर की १–१ गोली मिलाकर मलाई मे चाटकर ऊपर से दूध पीवे, तो क्या कहने। कामशक्ति केशरी की १ मास के लिये १–१ रत्ती की ६० गोली ९० रुपये की हैं।

पता—गर्ग बनौषधि भंडार विजयगढ़ (अलीगढ़)

गर्ग वनौषधि भंडार विजयगढ़ (अलीगढ़) का नवीन आविष्कार

वनौषधियों के घन सत्व



आयुर्वेद में कुछ ऐसी दिव्य वनौषधिया है जो अत्यन्त सस्ती और सुलभ होने पर भी आश्चर्यजनक लाभ करती हैं, मूल्यवान एलोपैथिक औषधिया भी गुणो मे उसकी समानता नही कर सकती, किंतु सेवन मे झंझट, अरुचिकर स्वाद एव मात्रा अधिक होने के कारण एलोपैथिक औषधियोके समान आदर नही पाती, वही औषधिया जब एलोपैथिक औषधि निर्माणकरने वाली बडी-बड़ी फर्मो द्वारा नाम बदल कर कैपसूल और टेबलेटो के रूप में जनता में रखी जाती हैं तो उनका पर्याप्त आदर होता है और विज्ञापन के बल पर अन्धाधुन्ध बिक्री होती है। आवश्यकता इस बात की है कि समय के अनुसार हम भी उनके स्वरूप मे परिवर्तन करें, जिससे वह जनता मे आदर एव प्रचार पासकें। इन सब बातो का विचार करकेहमने कुछ वनौषधियो के घन सत्व तैयार करायें हैं, जिनकी मात्रा बहुत थोडी होती है और सेवन करने के लिए किसी अनुपान की आवश्यकता नही होती अब तक जो घन सत्व तैयार कराये हैं उनका विवरण नीचे दिया जा रहा है।

उदम्बर घन सत्व – उदम्बर अर्थात् गूलर एक ऐसी वनस्पति है जिसे प्रत्येक वैद्य जानता है। मधुमेह और बहुमूत्र में इसका अति उत्तम प्रभाव होता है। मधुमेह की प्राय. सभी एलोपैथिक औषधियो मे इसका मिश्रण होता है किन्तु वैद्यबन्धु इसका प्रयोग इसलिये कम कर पाते है कि इसके सेवन करने मे बडा झंझट है, पहिले फल लाये जाये फिर उनका क्वाथ बनाकर सेवन कराया जाय इस असुविधा को दूर करने के लिये हमने गूलर के फलो का घन सत्व तैयार कराया है। सेवन करने से मधुमेह और बहुमूत्र मे बहुत शीघ्र लाभ होता है। रक्तपित्त, रक्तातिसार और रक्तप्रदर की भी उत्तम औषधि है। अग्नि दग्ध मे इसका घोल एलोपैथिक औषधियो से भी अधिक लाभ करता है। ५० ग्राम घन सत्व का मूल्य केवल १ ७५ है। ½-½ ग्राम की १०० टेबलेट २ ०० ½ ग्राम के १०० कैपसूल ८ ०० के हैं।

कुटज घन सत्व—कुडा की छाल अतिसार की प्रमुख औषधि है। अतिसार नाशक प्राय सभी औषधियो मे कुडा की छाल का मिश्रण होता है, किन्तु क्वाथ आदि बनाकर व्यवहार कराने मे बडी कठिनता होती है। हमने इसका भी घन सत्व तैयार कराया है। अतिसार मे केवल कुटज घनसत्व के व्यवहार से ही पूर्ण लाभ हो जाता है। आमातिसार की तो इससे उत्तम कोई औषधि ही नही है। बहुत से रोगियो को टट्टी मे आम जाने की वर्षो से शिकायत रहती है, उन्हे इसके लिए निरन्तर सेवन से अवश्य लाभ होता है। आम रक्तातिसार (पेचिस) मे १–१ ग्राम कुटज घन सत्व और आधा आधा ग्राम उदम्बर घन सत्व देने से आश्चर्य जनक लाभ होता है। मूल्य ५० ग्राम घन सत्व का २ ०० आधे ग्राम की १०० टेबलेट २ २५ की और आध-आध ग्राम के १०० कैपसूल ६.०० के हैं।

बावली घास घनसत्व—परीक्षा से यह प्रमाणित हो चुका है कि बावली घास मे रक्त रोकने की अद्भुत क्षमता है। चाहे अर्शं से रक्त जाता हो, नकसीर छूटती हो या रक्त प्रदर हो सबमें इसका प्रभाव तीव्रता से होता है। चाहे एलोपैथिक कैपसूल या इन्जेक्शन फेल हो जाय किन्तु यह व्यर्थ सिद्ध नही हो सकती। ५० ग्राम घनसत्व का मूल्य २ २५ आधे ग्राम की १०० टेबलेट २.५० की और आधे ग्राम के १०० कैपसूल ६.५० के है।

(अन्य घन सत्वो का विवरण अगले पृष्ठ पर देखिए)

मुलहठी घन सत्व—खासी के लिए मुलहठी सत्व का व्यवहार प्राय सभी वैद्य करते हैं किन्तु बाजार में मिलने वाला मुलहठी घन सत्व प्राय नकली होता है। हमने पूर्ण विशुद्धता के साथ मुलहठी सत्व (घन सत्व) तैयार कराया है। ५० ग्राम का मूल्य २ २५ आधे ग्राम की १०० टेबलेट २ ५० की और १०० कैपसूल ६ ०० के हैं।

रास्ना घन सत्व—रास्ना आमवात, गृध्रसी, पक्षाघात आदि कठिन वात रोगो की सफल औषधि सिद्ध हो चुकी है। इसलिए हमने इसका भी घनसत्व तैयार कराया है। यदि १-१ ग्राम रास्ना घन सत्व में आधी-आधी रत्ती शुद्ध कुचला चूर्ण मिला कर सेवन कराया जाय तो आमवात के रोगियो को आश्चर्य जनक लाभ होता है। मूल्य ५० ग्राम का १ ७५ आधे ग्राम की १०० टेवलेट २ ०० की। और आधे ग्राम के १०० कैपसूल ८ ५० के है।

सुदर्शन घन सत्व—सुदर्शन चूर्ण सब प्रकार के ज्वरो के लिए रामबाण है किन्तु अत्यन्त कटु स्वाद होने और मात्रा मे अधिक लेने की आवश्यकता होने के कारण इसका व्यवहार बहुत ही कम हो पाता है। इसलिए हमने इसका भी घनसत्व तैयार कराया है। यद्यपि यह घन सत्व भी कटु है, किन्तु मात्रा में कम लिए जाने के कारण आसानी से सेवन किया जा सकता है। टेवलेट या कैपसूल के सेवन मे तो कोई असुविधा है ही नही। मूल्य ५० ग्राम का ५ ००, आधे ग्राम की १०० टेवलेट ५ ५० की और आधे ग्राम के १०० कैपसूल १६ ०० के हैं।

अशोक घन सत्व—अशोक गर्भाशय सम्बन्धी विकारो की विशेषत प्रदर की अमोघ औषधि है। यद्यपि इसके द्वारा अशोकारिष्ट, अशोक घृत आदि कई प्रयोग तैयार होते हैं किंतु उनमे न सुविधा है और न आधुनिकता; इसलिये इसका भी घन सत्व तैयार कराया है। यह प्रदरादि गर्भाशय सम्बन्धी सभी विकारो पर रामबाणहै। मूल्य ५० ग्राम का २ ५० है। आधे ग्राम की १०० टेवलेट २ ७५ की और आधे-आधे ग्रामके १०० कैपसूल १० ०० के हैं।

नेत्र वालादि घन सत्व—नेत्रवाला-सर्पगन्धा और अन्य दो मस्तिष्क विकार नाशक वनौषधियो द्वारा यह घन-सत्व तैयार किया गया है। यह हिस्टेरिया और अपस्मार की सफल औषधि है। अनेक मूल्यवान औषधियो के सेवन से निराश हुये रोगियो को इसके व्यवहार से लाभ हुआ है। मूल्य ५० ग्राम घन सत्व २ ५० आधे ग्राम की १०० टेवलेट २ ७५ और आधे ग्राम के १०० कैपसूल १० ०० के है।

ब्राह्मी शंखपुष्पी घन सत्व—स्मरण शक्ति की वृद्धि के लिये अत्युत्तम औषधि है एव पित्त के विकारो को नष्ट करती है। पित्ताधिक्य के कारण निरन्तर रहने वाला सिर दर्द और ज्वर की ऊष्मा भी ठीक हो जाती है। मू० ५० ग्राम घन सत्व ४ ०० आधे ग्राम की १०० टेवलेट ४.५० आधे ग्राम के १०० कैपसूल १४ ००

अश्वगंधादि घन सत्व—निर्बलता और वायु विकार की अत्युत्तम औषधि है। किसी भी रोग के कारण हुई निर्बलता मे इसे दूध के साथ व्यवहार कराइये ओर चमत्कार देखिये। मूल्य ५० ग्राम घन सत्व ४ ५० आधे आधे ग्राम की १०० टेवलेट ४ ७५ और आधे ग्राम के १०० कैपसूल १५ ००

अपामार्गादि घन सत्व—अपामार्ग, सोम कल्प, वासा और मुलहठी का यह घन सत्व श्वास-खासी के लिये बहुत ही उत्तम है। जब रोगी खांसते खासते परेशान हो जाता है और कफ नही निकलता इसका सेवन बहुत ही उपयोगी रहता है। ४-६ मात्राओ के सेवन से ही श्वास का वेग शांत होजाता है। मूल्य ५० ग्राम घन सत्व २ २५ का आधे ग्राम की १०० टेवलेट २ ५० की और आधे ग्राम के १०० कैपसूल ६ ५० के है।

पता—गर्ग बनौषधि भंडार विजयगढ़ (अलीगढ़)

गर्ग वनौषधि भंडार विजयगढ़ (अलीगढ़) के निर्मित

आयुर्वेदिक घनसत्वों के मिश्रण से प्रस्तुत

पूर्ण प्रभावशाली आयुर्वेदिक कैपसूल

रक्तचापांतक—ब्लडप्रेसर बढने की शिकायत आजकल बहुत हो गई है । इसमे जिन एलोपैथिक औषधियो का व्यवहार कराया जाता है वह हृदय को निर्बल करती हैं और स्थाई लाभ नही करती । हमारी सर्पगंधा घनसत्व, ब्राह्मीशङ्खपुष्पी घनसत्व, मुक्ता शुक्ति पिष्टी और रससिंदूर आदि से निर्मित यह औषधि ब्लडप्रेसर को तुरन्त लाभ करती है और नियमित सेवन से बार बार ब्लडप्रेसर बढने की शिकायत सदैव को नष्ट होजाती है । मूल्य ५० कैंपसूल १०.००, और १० कैंपसूल २.२५ के हे ।

हिस्टेरियांतक—नेत्रबलादि घनसत्व, वच घनसत्व, असगन्ध, मल्लचन्द्रोदय और अन्य औषधियो के मिश्रण से प्रस्तुत यह कैपसूल हिस्टेरिया के लिए रामवाण है । इसके उपयोग से बहुत सी औषधियां सेवन करके निराश हुई रोगिणी भी स्वस्थ्य हुई हैं । ५० कैपसूल १२.००,१० कैंपसूल २.७५ के हैं ।

यक्ष्मांतक—रुदन्ती क्षय की अमोघ औषधि प्रमाणित हो चुकी है । बडे-बडे डाक्टर भी इजेक्शनो के स्थान मे अब इसका प्रयोग करने लगे है । हमारे यह कैंपसूल रुदन्ती के घनसत्व से तैयार किये गये है । अतः गुणो में बहुत अधिक वृद्धि हो गई है । रुदन्ती घनसत्व के साथ ही क्षयनाशक स्वर्ण वसन्तमालती, शुक्ति पिष्टी, मृगश्रृङ्ग भस्म आदि औषधियो का मिश्रण भी किया गया है । इसलिये हमारे यह कैपसूल क्षय की हर अवस्था मे और उसके उपद्रवों में बहुत शीघ्र लाभ करते है । ५० कैंपसूल १८ ०० के और १० कैपसूल ४ ०० के है ।

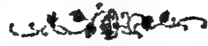
क्लीवांतक--अश्वगन्धा घनसत्व, मकरध्वज, स्वर्ण भस्म, अकरकरा आदि बीस औषधियो से निर्मित यह कैंपसूल प्रमेह, शीघ्रपतन, इन्द्री की निर्बलता, सब प्रकार की कमजोरी और स्तम्भन शक्ति की न्यूनता के लिए अत्युत्तम हैं । नपु सकता को नष्ट करने और स्तम्भन शक्ति की न्यूनता को ठीक करने के लिये सैंकडो औषधियो की परीक्षा के पश्चात् यह प्रयोग हमने तैयार किया है । एक बार आप इसका प्रयोग करेंगे तो सदैव को इसके भक्त हो जायेगे । ५० कैपसूल २० ०० और १० कैंपसूल ४ ५० के है ।

वातांतक--समस्त वात रोगो की यह अमोघ औषधि रास्ना घनसत्व, लशुन घनसत्व, विषमुष्ठि, मल्लचन्द्रोदय आदि औषधियो के मिश्रण से निर्माण की गई है । इसके व्यवहार से पक्षाघात, गृध्रसी, हाथ पैरो की सूजन आदि समस्त वात रोगों मे शीघ्र लाभ होता है । वर्षो से परेशान रोगी इसके व्यवहार से स्वस्थ हुए है । एलोपैथिक औषधियो और इजेक्शनो के फेल होने पर भी काम करता है । मूल्य ५० कैप १२ ००, १० कैप.२ ७५

विषम ज्वरांतक--सुदर्शनघन सत्व, गोदन्ती भस्म, कालमेघ घनसत्व और द्रोणपुष्पी घनसत्व के मिश्रण से निर्मित यह कैपसूल सभी प्रकार के ज्वर, विशेषतया मलेरिया ज्वर के लिए रामवाण हे । काम तो कुनैन के समान करता है किंतु कुनैन जैसे दुर्गुण इसमे नही हे । मूल्य ५० कैंपसूल १० ००, १० कैंपसूल २ २५

मधुमेहांतक—उदुम्बर घन सत्व, गुड़मार घनसत्व, त्रिवगभस्म, यशदभस्म, शिलाजीत आदि के मिश्रण से निर्मित यह कैंपसूल मधुमेह, बहुमूत्र और उससे होने वाली निर्बलता की अत्युत्तम औषधि है । इसके सेवन से सुगर की मात्रा धीरे-धीरे कम होकर सर्वथा नष्ट हो जाती है । जो रोगी नित्यप्रति इजेक्शन लेते-लेते परेशान हो गए थे इसके सेवन से स्वस्थ हुये है । देते-देते लाभ होता है । मूल्य ५० कैपसूल १०.५० और १० कैपसूल २.५० के हे ।

विशुद्ध असली बनौषधियां



यो तो हमारे यहां सभी प्रकार की वनौषधियां, काष्ठोषधियां, खनिज द्रव्य और शोधित द्रव्य सस्ते, उत्तम और विश्वस्त प्राप्त होते है किंतु यहां उन कतिपय औषधियों के ही भाव दिये जा रहे हैं जो बाजार में प्रायः नकली सड़ी--गली और गुणहीन प्राप्त होती है। बाजार में मिलने वाली सोंठ, मिर्च, पीपल आदि वस्तुओं के भाव घटते-बढ़ते रहते हैं अतः उनके भाव नही दिये जारहे हैं। आपको जिस भी वस्तु आवश्यकता हो सूचित कीजिये, हम उत्तम से उत्तम वस्तु उचित मूल्य मे भेज देंगे।

बनौषधि

भाव १ किलो पर

अष्टवर्ग	१०.००
सर्पगन्धा	३०.००
जीवन्ती	७.००
उलट कम्बल	४ ००
गुणमार बूटी	४ ००
विधारा	२.००
बावची	२ ००
असगंध नागौरी	६.००
अशोक छाल (बंगाल)	२ २५
अतीस कड़वी	८५ ००
रुदन्तीफल	२४ ००
मालकांगुनी	४.५०
ब्राह्मी	४.००
पुत्रजीवक	४,५०
अनन्तमूल	१ ५०
विदारी-कंद	२ ५०
दशमूल	१ ८०
भृंगराज	२ ००
शंखपुष्पी	२ ००
खैर की छाल	१ २५
अरनी	० ७५
कटेरी छोटी	० ८०
कटेरी बड़ी	१ २५

बनौषधि

भाव १ किलो पर

नीलोफर	२.००
कालमेघ	२.७५
फूलप्रियंगु	६.५०
कुड़ा की छाल	१ २५
नागकेशर असली	१२.५०
सितावर	६ ००
वंशलोचन असली	६०.००
अकरकरा असली	२००.००
अर्जुन छाल	१ ५०
चित्रक छाल	८.५०
चित्रक मूल	३,००
नकछिकनी	४.००
बिल्व छाल	१.५०
मौलश्री की छाल	३ ००

धातु उपधातु एवं खनिज द्रव्य

भाव १ किलो पर

ताम्र चूर्ण	२५ ००
शु ताम्र चूर्ण	३५.००
लोह चूर्ण	३ ००
शु लोह चूर्ण	३ ५०
वज्राभ्रक	३ ००
धान्याभ्रक	७ ००
शु रांग	८०.००
शु, जस्ता	१२.५०
कांतलोह	६ ००
शु. कांतलोह	१०.००
माहूर	१ ००
शु. माहूर	३ ५०
शंख टुकड़ा	२ ००
मृगश्रृंग	३.७५
गोदन्ती –	१ ५०
प्रवालमूल	२९ ००
प्रवाल शाखा	२८०.००

बहुमूल्य द्रव्य

भाव १० ग्राम पर

मोती सीप असली	१००.००
मोती छिलका	१४.००
मोती असली	१००.००
मोती बेडौल	४४.००
मोती चूरा	१२ ००
केशर काश्मीरी	३०.००
कस्तूरी असली न. १	३५०.००
कस्तूरी असली न. २	१५० ००

खाली कैपसूल

	१०००	१००
बड़ा साइज	४७.५०	५ ००
छोटा साइज	४३ ५०	४ ५०

ग्राम बनौषधि भंडार विजयगढ़ [अलीगढ़]

अर्श के लिये दो चमत्कारी औषधियाँ



अर्श के सैकड़ो रोगियों पर परीक्षा के पश्चात् हमने इन औषधियो का आविष्कार किया है। सैकड़ों औषधियां सेवन करके निराश हुये रोगी जो वर्षो से कष्ट भोग रहे थे और बार-बार दौड़ा हो जाने से परेशान थे इनके सेवन से स्वस्थ हुये है। हमारी गारंटी है कि इनके व्यवहार मे अवश्य सन्तोष होगा। बहुत से प्रशंसा-पत्र हमारे पास हैं किन्तु उन्हें स्थानाभाव से प्रकाशित नहीं कर पा रहे।

अर्शान्तक कैपसूल——वावलो घास घनसत्व, शूरण घनसत्व और अर्श नाशक अन्य औषधियो के मिश्रण से निर्मित यह कैपसूल-अर्श खूनी हो या वादी, आश्चर्यजनक लाभ करता है। ४-६ कैपसूलो के सेवन से ही रक्त का जाना रुक जाता है। इन कैपसूलो को सेवन कराइये अर्शोघ्न मलहम लगाइये और चमत्कार देखिए। मू० ५० कैपशूल ६ ००

अर्शोघ्न (अर्श के मस्सो के लिये विशुद्ध आयुर्वेदिक मलहम)-इसके नियमित लगाने से मस्से सूख कर गिर जाते हैं और आपरेशन में होने वाले भयंकर कष्ट और व्यय से छुटकारा मिल जाता है। मूल्य २५ ग्राम का ट्यूब ५ ००

पता——गर्ग बनौषधि भंडार विजयगढ़ (अलीगढ़)

स्वप्न प्रमेह की अव्यर्थ औषधि

जिन्होंने हमारी किसी पेटेंट औषधि का प्रयोग किया है वह वह भली भांति जानते है कि हमारी पेटेंट औषधि कभी निष्फल साबित नहीं हो सकती। हमारा यह चूर्ण स्वप्न प्रमेह में अचूक लाभ करता है। जिस रोगी को भी आप देंगे वही प्रशंसा करेगा। हमारे आग्रह से एक बार परीक्षा कीजिये। १५ दिन की औषधि का पैकिङ्ग ३.००है।

गर्ग बनौषधि भंडार विजयगढ़ (अलीगढ़)

रजिस्ट्रेशन आफ न्यूजपेपर्स (सेन्ट्रल) रूल्स १९५६ के नियम ८ के अन्तर्गत
धन्वन्तरि नामक मासिक पत्र का विवरण

प्रकाशन का स्थान	विजयगढ़ (अलीगढ़)
प्रकाशन का काल	मासिक
मुद्रक का नाम	वैद्य देवीशरण गर्ग
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	विजयगढ़ (अलीगढ़)
प्रकाशक का नाम	वैद्य देवीशरण गर्ग
राष्ट्रीयता एव पता	उपरोक्त
सम्पादक का नाम	वैद्य देवीशरण गर्ग
राष्ट्रीयता एव पता	उपरोक्त
पत्र के मालिक का नाम	वैद्य देवीशरण गर्ग, विजयगढ (अलीगढ)
	ज्वाला प्रसाद अग्रवाल विजयगढ (अलीगढ)
अ	दाऊदयाल गर्ग, विजयगढ (अलीगढ)
अता	मुरारीलाल गर्ग, विजयगढ (अलीगढ)
हृदन	श्रीनाथ अग्रवाल, विजयगढ (अलीगढ)
माल	रामेश्वरदयाल अग्रवाल, विजयगढ (अलीगढ)
ग्राह	भगवतीप्रसाद अग्रवाल, विजयगढ (अलीगढ)
पु	रामकिशन अग्रवाल, विजयगढ (अलीगढ)
घ	गिर्राजकिशोर अग्रवाल, विजयगढ (अलीगढ़)
	गोपालशरण अग्रवाल विजयगढ (अलीगढ)

विदी
दगर
भू
शर
खैर
अर
कटे
क

मैं, वैद्य देवीशरण गर्ग, यह घोषित करता हूँ कि ऊपर दिया गया विवरण जहा तक मैं जानता मुझे विश्वास है सत्य है ।

ह० वैद्य देवीशरण गर्ग (प्रकाशक)

हाशा (Thymus serpyllum)

यह तुलसी कुल (Labiatae) का लगभग एक बित्ता ऊचा, पहाडी पुदीने की जाति का एक छोटा सुवासिक और कोमल क्षुप है। शाखायें पुष्कल वारीक होती हैं और उन पर छोटे छोटे अवृंत और लव गोल पत्र लगते है जिन पर तेल से भरी हुई ग्रंथिया और रुई के समान वारीक रोआ होता है। फूल अनेक दल बद्ध, छोटा सा, गोल, ललाई व बनफशई लिए (किरमजी) और बीज राई से छोटे होते है।

उत्पत्ति स्थान—

काश्मीर से कुमाऊ तक ५००० से १२००० फीट की ऊचाई पर तथा फारस एव यूरोप मे इसके क्षुप होते हे।

नाम—

हि, भा बा —हाशा जगली पुदीना। अ—हाशा, अल मामून, सातरुल हमीर, सनोवरुल हिमार, नम्माम। फा—पूदन कोही। प. माशो बम्बई—इयान। अ वाइल्ड थाइम (Wild thyme। ले —थाइमस सर्पिलम (Thymus serpyllum Linn)।

रासायनिक सङ्गठन

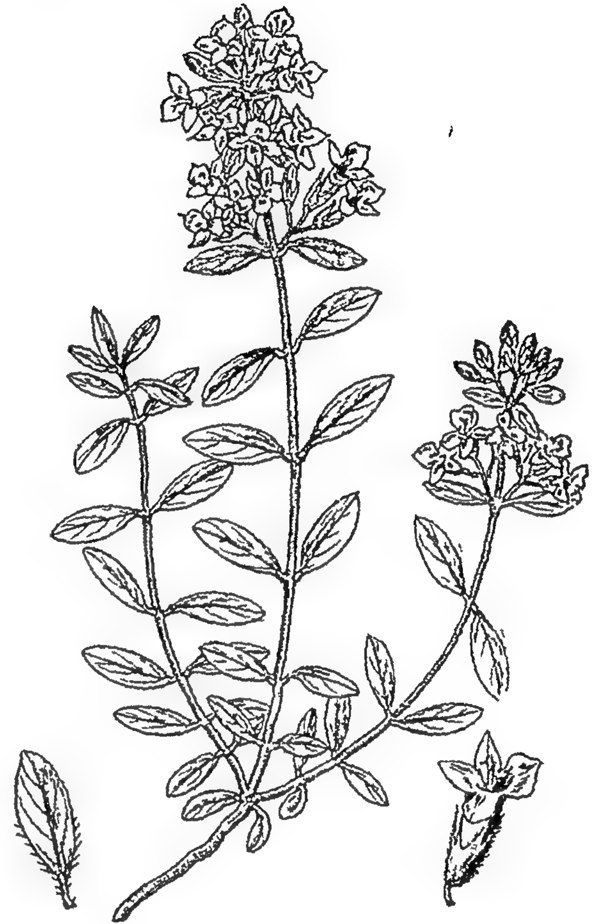
इसमे एक मनोहर सुगधित उत्पत तेल, कषाय द्रव्य निर्यास होता है। इसके उत्पल तेल से थोडा थाइमोल प्राप्त होता है, किन्तु यूरोप मे बहुधा यह थाइम्स वल्गेरिस से प्राप्त किया जाता है, जिसमे यह विपुल होता है। एशिया और भारतवर्ष में यह अजवाइन और अजमोदे से प्राप्त किया जाता है। इसलिए थाइमोल को हिन्दुस्तान मे अजवायन का फूल कहते हैं।

उपयुक्त अङ्ग—पचाङ्ग। मात्रा—५ माशे से ७ माशे तक।

गुण धर्म और प्रयोग—

प्रकृति—दूसरे दर्जे मे उष्ण और तीसरे में रूक्ष। गुण-कर्म-त्वचा कोथ प्रतिवन्धक होने से हाशा प्रायश त्वचा के रोगो मे कोथ प्रतिवन्धक रूप में प्रयुक्त होता है।

इसके अतिरिक्त यह स्वेदन कर्म करता, जमे हुए रक्त को द्रवीभूत करता और सूजन उतारता है। यह मूत्र तथा आर्तव का प्रवर्तन करता है। अधिक सेवन करने से यह



हाशा
THYMUS SERPYLLUM LINN.

गर्भ तथा अमरा का निर्हरण करता है। श्वासोच्छ्वास संस्थान पर भी इसका उत्तेजक प्रभाव होता है तथा यह श्लेष्म निर्हरण कर्म करता है। समस्त आहाराव यवो मे यह उत्तेजना पैदा करता है, वायु का उत्सर्ग कर देता है, अन्त्र मे उत्तेजना पैदा करके विरेक लाता है तथा उदरज कृमि विशेष कर अकुश मुख कृमि को मार डालता है। इसका उक्त कर्म अत्यन्त तीव्र होता है।

उपयोग—नमक और सिरके के साथ पीने से हाशा विरेक लाता है और उदरज कृमि को नष्ट करके उत्सर्गित करता है। शहद मे मिलाकर चाटने या गरम पानी के साथ सेवन करने से पक्षवध, अर्दित, विस्मृति, अपतानक और अपस्मार में लाभ करता है। श्वास और कास

मे कफ को उत्सर्गित करके लाभ पहुचाता है। यह शूल तथा उदरानाह को नष्ट करता एव यकृदामाशय के दौर्बल्य को दूर करता तथा पाचन शक्ति की सहायता करता है। मूत्रार्तव जनन और अपरा निर्हरण के लिये इसका क्वाथ मधु मिला कर पिलाते हैं। सूजन उतारने, जमे हुए रक्त को पिघलाने तथा चर्मकील को नष्ट करने के लिये इसे सिरके मे पीसकर लगाते हैं। कोथ प्रतिबन्धक होने के कारण दद्रु, गज, खालित्य, चम्बल, पामा जैसे रोगों मे इसको सिरके के तेल मे पकाकर लगाने से उपकार होता है। इसको पास रखने से इसकी गन्ध से मच्छर भाग जाते हैं। यह निद्राजनक, विरेचन, कृमि नाशन, कोष्ठांगो को बलप्रद और रोगों मे गुण दायक है।

अहितकर—फुफ्फुसो को। निवारण—नाना और गोंद वंशलोचन। प्रतिनिधि—अफ्लोमून और सातर।

(यू० द्र० वि० से साभार उद्धृत)

हिंगोट (Balanites Roxburghii)

यह वटादि वर्ग और महा वृक्षादि कुल (Simarubaceae) का मध्यम कद का वृक्ष होता है। जो जागल काटेदार, छोटी-बडी अनेक शाखा युक्त, सर्वदा हरा, १० से ३० फीट ऊचा वृक्ष। बहुधा प्रशाखा के अन्त भाग मे लम्बा, तीक्ष्ण काटा। मुख्य वृन्त पर प्राय सामने सामने दो पर्ण दल बब्बूलवत क्षुद्र या विविध आकार के। पुष्प हरे सफेद, छोटे सुगन्धित। फल—अण्डाकार लम्बगोल, चिकने, तेजस्वी, अतिकठोर। लम्बाई लगभग २-२½ इच। फल कच्चा होने पर हरा और पकने पर पीला। पुष्पकाल—ग्रीष्म। फलपाक—शरद ऋतु मे।

उत्पत्ति स्थान—

अफ्रीका, अरब स्थान और भारत के उष्ण और उपउष्ण सर्व प्रदेश।

नाम—

स —इगुदी, तापसद्रुम, अङ्गार वृक्ष, तिक्तक। हि—हिंगोट,गोदी, इगुदी। म.—हिंगणवेट, हिंगणो। ब—इगोट, हिंगन, जीयासुता। राज —हिंगोरिया, हिंगोरा। कच्छी—अङ्गारिया। गु —इगोरियो। ता —नचुदन, नानफुनवा। ते —गार, इगुदी। ओ —इगुदी हाला। मला —नंचुट। कना —इगलरे, इगलुके। अरबी—हिलेलजे। अ-डेलिल (Delil)। ले—बेलेनाइटिस राक्स बुर्घिआई (Balanites Roxburghii Planch)

रासायनिक संगठन—

डाक्टर वामन देसाई के मतानुसार फल गर्भ मे १ ३% साबुन, १% अम्ल द्रव्य,शक्कर और अधिक पिच्छिल द्रव्य, (सेपोनीन) होते हैं। छाल के भीतर साबुन जैसा झाग उत्पन्न करने वाला पदार्थ है। इसके फलों के मज्जा मे तैल का दुग्धी करण होता है। हिंगोट की छाल और फल के गूदे का गुण सेनेगा के समान माना गया है। बीजो को भून या उबालकर तैल निकाला जाता है। उस तैल को Betu oil कहते हैं। इसका स्वाद कुछ कड़वा मीठा होता है। इसका उपयोग साबुन बनाने और खाने मे भी होता है।

हिंगोट रस मे कड़ुवा, अनुरस, चरपरा, विपाक चरपरा, उष्णवीर्य, मादक गन्ध युक्त। (बास अधिक बार लेने पर शिर मे भारीपन लाने वाला)। एव कृमि, वातरोग, कफ-प्रकोप, व्रण विकार, कुष्ठ, विष, श्वित्र, शूल, भूत बाधा और गह बाधा आदि को दूर करता है। फूल—मधुर, स्निग्ध, गरम, कड़वे, वात और कफ नाश करते हैं।

(शा० नि०)

फलमज्जा—रेचक, तिक्त और कृमि नाशक है।

(कै० नि०)

हिंगोटा फल मज्जा—कफ, रक्त विकार, आम, गोठ, फोडे, कृमिवात, विष, शूल, कुष्ठ मिटाती है।

(वैद्य रघुनाथ जी)

डाक्टर देसाई के मतानुसार—हिंगोट–सस्त्रन, कृमिघ्न, कफहर और कुष्ठ नाशक है। जीर्ण कफ रोग में फल के गूदे से अच्छा लाभ पहुचता है। इसे बादाम तैल और शक्कर के जल के साथ खरल कर दुग्धीकरण करके देना हितावह है। इसके सेवन से कफ पतला होकर शीघ्र निकलने लगता है, मल-मूत्र की शुद्धि होती है। बीजो का

तैल घाव और अग्निदग्ध व्रण पर लगाया जाता है ।

उपयुक्त अङ्ग—फलगर्भ और मूल त्वक् ।

मात्रा—फल गर्भ कफघ्न रूप से १ से ५ रत्ती, सारक रूप मे १० से ३० रत्ती ।

गुण धर्म और प्रयोग—

हिंगोट का उपयोग प्राचीनकाल से आयुर्वेद मे होता आ रहा है । चरक सहिता और सुश्रुत सहिता दोनो मे इसका उल्लेख मिलता है ।

कपडा धोने के लिए हिंगोट के फलो को साबुन के समान लगाया जाता है । किन्तु साबुन में कास्टिक रहने से कपडे की आयु कम हो जाती है ऐसा इससे नही होता ।

फलगर्भ का जल मे लेप मुख की कान्ति वढाता है ।
(शा नि)

प्रयोग

उदरशूल—फल गर्भ ५ से १० रत्ती सेवन करे या मूल को जल मे घिसकर पीवे ।

अपचन—हिंगोट की छाल का चूर्ण दही मे देवे ।

जीर्ण कफ कास—हिंगोट फल गर्भ २-२ रत्ती दिन मे २ या ३ बार शहद के साथ देवे या देसाई के मतानुसार दुग्धी करण (इमलसन) बनाकर सेवन करावे ।

श्वास विष—प्रात काल पहले गुड खिलावे । फिर हिंगोट की छाल का चूर्ण ३-४ माशे मठ्ठे मे मिलाकर पिला देवे । इस तरह १ सप्ताह तक सेवन कराने से विष वमन और विरेचन होकर निकल जाता है ।

कर्ण मूल शोथ—हिंगोट, हल्दी, इन्द्रायन, सेंधानमक, देवदारु और आक के दूध को मिलाकर बार बार लेप करते रहने से कर्णमूल शोथ का शमन हो जाता है ।

तारुण्य पिटिका—हिंगोट के फल गर्भ को जल मे घिसकर मुह पर लेप करते रहने से सब फुन्सिया दूर हो जाती है ।

स्तन शोथ—स्त्रियो के स्तन पर सूजन आने पर हिंगोट के मूल को जल मे घिस निवाया कर लेह करें । फिर धतूरे के पान पर तैल किंचित गरम कर ऊपर बांधे । इस पर थोडा थोडा सेक करें । इस तरह ३ दिन करने पर सूजन दूर हो जाती है ।

अश्रुस्राव—आख आने और जल स्राव होने पर हिंगोट के फल को जल मे घिसकर प्रात साय अजन करने से दो-तीन दिन मे आख स्वच्छ और निरोग हो जाती है ।

नारू—हिंगोट के मूल की छाल [या फलगभ] और ४-६ रत्ती हीग मिला जल मे पुल्टिस बनाकर बाध दे । चौथे दिन पट्टी खोले । इस प्रयोग से नारू गल जाता है ।

अग्नि दग्ध व्रण—अग्नि से जल जाने (झुलस जाने) पर हिंगोट का तैल लगा लेने पर तुरन्त लाभ होजाता है ।

पशुओ का अफरा—हिंगोट के फल गर्भ का क्वाथ करके पशु को पिला देने से उदर शुद्धि हो जाती है ।
(गां औ र. से साभार स)

काली खासी पर—हिंगोट के फल की मज्जा की गोली १ से २ रत्ती की मात्रा मे दिन मे ३-४ बार देने से लाभ होता है ।
(वनो गुणादर्श]

कुष्ठ में—हिंगोट मज्जा का तेल हितकर है ।
(च चि अ ७।१।६)

चूहे के विष में—काला सिरस (पचाग लेवे) और हिंगोट का गर्भ दोनो सम भाग लेकर मधु के साथ चाटे ।
(सु क अ ७।१२)

रक्तपित्त—हिंगोट मज्जा—मुलैठी चूर्ण के साथ सेवन करें ।
(सु उ ४५।२६)

मुख व्यङ्ग पर—हिंगोट के फल की छाल के नीचे का का लाल गूदा ठण्डे जल मे पीसकर २१ दिन तक मुख पर लेप करने से व्यङ्ग मिटता है । (काले चाठे या दाग मुह पर हो जाते हैं उनको व्यङ्ग कहते है ।
(राजमार्तण्ड)

गोल कृमि पर—हिंगोट फल मज्जा तेल गोल कृमि (राउन्ड वर्म्स) के लिये बहुत उपयोगी माना गया है ।

मात्रा—५से १० बून्द, कैपस्यूल मे भरकर देवे । जामनगर के अनुसन्धान केन्द्र में इसका परीक्षण किया गया है ।
(आ नि. से साभार)

हिरनपदी (CONVOLVULUS ARVENSIS)

यह त्रिवृत्तादि कुल (Convolvulaceae) की एक लता है । कोन्वाल्वुलस लिपटने वाली । आर्वेन्सिस—खेतों मे नैसर्गिक उगने वाली । भूमिगत काण्ड फैलने वाला । काण्ड सामान्यत १ से १० फुट लम्बा, जमीन पर फैलने



वाला, उलझा हुआ या विशेषत लिपट कर चढ़ने वाला। न्यून।धिक कोण युक्त चिकना या रुयेदार। तोड़ने पर दूध निकलता है। मूल सूतली से पेन्सिल जैसा मोटा। शाखाये सूतली जैसी पतली, तेजस्वी, वहुधा खड़ी धारी युक्त एव ऐंठी हुई (Twisted) पात एकातर, अखण्ड १ से ३ इन्च लम्ब लगभग चिकने, चौडाई मे विभिन्न प्रकार के अण्डाकार या लम्ब गोल। लगभग चिकने नोक रहित ऊपर की ओर किंचित तीक्ष्ण नोकदार (Apiculate) तीन सिरे युक्त आधार स्थान में कटा हुआ सा। निम्न पात प्राय खण्ड युक्त। पत्तो का आकार हिरन के पैर (खुर) जैसा होता है। इसलिए इसे हिरनपदी सज्ञा दी हैं। पत्र वृन्त छोटा, पुष्पदण्ड १ से २ इन्च लम्बा, पत्र कोणीय, एकाकी, कोमल, छोटे, रेखाकार २ पुष्पपत्र सह (जहा से पुष्प वृन्त निकलता है) पुष्प वृन्त एकाकी या २-३। पुष्प बाह्य कोप के पत्र चौडे अण्डाकार असमान। पुष्पान्तरकोप लगभग पौन इन्च लम्बा, चौडा, घोगाकार, गुलाबी या सफेद या हलका बैंजनी। पु केसर ५ असमान। स्त्रीकेसर १, डोडी छोटी, गोलाकार चिकनी बीज गहरा रक्ताभ पिंगल, चिकना या रुएदार लगभग ३ कोण युक्त। स्वाद कडवा। पुष्प काल —जुलाई, नवम्बर।

उत्पत्ति स्थान—

ससार के सब प्रदेशो में १०००० फीट की ऊचाई पर हिमालय में मिलती है।

नाम—

स —हरिणपादी। हिं —हिरन पदी। ब —गोण्डाल। राज —हिरनखुरी। सौराष्ट्र— खेतराऊफुदरडी। बोम्बे—हिरण पग। म —हिरण वेल। कच्छी—नेरीवल, नेरी। गु —हिरण वेल। ता —नाराजी। अ —डीयर्स फुट, विन्डविड (Deer's foot Bind weed) ले० —कोन्वोलव्यु लस आर्वेसिस (Convolvulus arvensis Linn)।

रासायनिक संगठन—

मूल मे विरेचन द्रव्य अवस्थित रहता है। काण्ड के सुरा प्रधान अर्क के भीतर १½ से ४ प्रतिशत रालमय द्रव्य मिलता है। वह उग्रता दर्शक और प्रदाहक होता है। इसका विरेचक प्रभाव जुलाव के समान है। अम्ल द्रव्य १४ प्र. श तक और शकरा प्रधान द्रव्य १९६ —१९७ ३ तक मिलता है। सूखे भूमिगत काण्ड (Rhizome) से ४९ प्र. श राल मिलता है। बीजो में स्याई ४७ प्र श मिलता है। उपयुक्त अङ्ग—समग्रलता।

मात्रा—६ माशे से १ तोला।

गुण धर्म तथा प्रयोग—

मूल और पचाङ्ग—विरेचक। वीर्य—उष्ण। पान—सारक और व्रण शोधक। इसकी जड विरेचक होती है। इसके पत्तो की तरकारी बनायी जाती है और ये पौष्टिक माने जाते हैं। इसके पत्तो को पीस कर फोडे-फुन्सियो पर बाधते है। पजाब और सिन्ध मे विरेचन के लिए अग्रेजी दवा जेलप के बदले मे इसकी जड का उपयोग किया जाता है। (व च)

यूनानी मतानुसार-

प्रकृति—गरम तर। गुण कर्म—यह लता खून साफ करने वाली और चर्म रोगो के वास्ते लाभकारी है। मेदा और आतो को बलदायक, संग्रहणी और खूनी दस्तो को मिटाती है। गुर्दा, मसाना, पेशाब के रोग और शुक्र व्याधियो के लिए लाभकारी है। कमजोरी, प्रमेह, गुर्दे की शिथिलता और मधु मेह मे इसको घोट कर पीना लाभकारी है इससे आँखों के रोग मिटते हैं। हिरणपदी अकेली या दूसरी दवाइयो के साथ भी प्रयोग की जाती है।

प्रयोग—

धातु क्षय पर—हिरन पदी का चूर्ण ३ माशा, एक पाव दूध और उसमे २ तोला शक्कर मिलाये हुए के साथ सुबह, शाम ७ योम लेवें।

प्रमेह, धातु विकार पर—हिरणपदी एक तोला को दूध मे पीसकर छान के मिश्री मिलाकर १४ दिन पिलाने से उक्त विकार मिटते हैं। (वनौषधि गुणादर्श भा ६)

चूर्ण हिरनपदी—पत्तो को बारीक पीस मिश्री मिलाकर खाने से सब प्रकार के रक्तज रोग आराम होते है और अच्छा खून पैदा होता है। हरे धनिये के साथ सेवन करने से खूनी दस्तो को मिटाती है। मात्रा—१४ माशा, दही मे। सग्रहणी मे भी यह योग लाभकारी है।

रस हिरनपदी—हिरनपदी ३¾ माशा, कालीमिर्च ७ के साथ ठण्डाई बनाकर पीने से शक्ति देती है और वीर्य को ज्यादा पैदा करती है तथा प्रमेह और मधुमेह मे लाभकारी है।

सत्त हिरनपदी—हिरनपदी का रस २ सेर, कालीमिर्च



एक छटाक, मिट्टी की हाडी मे नरम आंच पर पकावें, जिससे खुश्क हो जावे। बाद मे पीस छान कर वोतल में सुरक्षित रखे।

गुण—रक्तज रोग, फिरग, कुष्ठ, पीलिया, प्रमेह और आखो की रोशनी के लिए यह सत एक माशा खिलावें।

वग भस्म—शुद्ध वङ्ग १ तोला को पिघलाकर उसमें एक तोला शुद्ध पारा मिलावे और खरल मे पीस लें, फिर एक पाव हिरनपदी के सूखे पत्तो के चूर्ण मे किसी टाट के टुकडे में आधा चूर्ण बिछावें और उस पर कलई और पारे की मिली हुई चुटकी अलग अलग रखते जावें। तथा बचा हुआ चूर्ण ऊपर से ढक देवें और फिर टाट का टुकड़ा ऊपर से लपेटें एव गोला सा करलें। ५ सेर कण्डो के बीच में रखकर आंच देवें तो बङ्ग की सफेद भस्म वन जायगी।

गुण—यह भस्म प्रमेह को मिटाती है और वाजीकर है। मात्रा १ रत्ती।

बाजीकरणार्थ—यह ७ माशा कौंच के बीजो की गिरी के चूर्ण के साथ लेवे और ऊपर से गरम दूध पीवे।

प्रमेह मे—७ माशा चूर्ण तालमखाना और मधुमेह मे एक तोला जामुन की गिरी के चूर्ण के अनुपान के साथ सुवह शाम लेवें और ऊपर से अर्क गिलोय ५ तोला पीवे।

गुर्दे की शिथिलता के लिये—यह एक तोला, कपासियो की गिरी की खीर वना उसके साथ लेवें। ग्रहणी मे एक रत्ती उक्त भस्म तीन माशा कपर्द भस्म के साथ मिला तक्र के अनुपान से लेवें।

चिकित्सक बन्धुओ से विनय है कि इस बूटी के सम्बन्ध मे उपार्जित विशेषानुभव परिणाम सहित प्रकाशित करने का कष्ट करें जिससे विरेचनीय प्रभाव का सही निर्णय मिल जाय।

हिरू सियाह (EUPHORBIA HELIOSEOPIA)

यह थूहर कुल (Euphorbiacnae) की एक वनस्पति होती है। इसके सब अङ्गो मे दूधिया रस भरा रहता है।

उत्पत्ति स्थान—

यह वनस्पति पजाव, पश्चिमी हिमालय और नीलगिरी मे पैदा होती है।

नाम—

हि—हिरू सियाह, महावी। प.—चतरीवाल, दूवल, कुल्फा डोडक। अ—केटस मिल्क (Cat's milk) चूर्न स्टाफ (Churn staff)। ले—यूफोर्बिया हेलिओसिओपिया (Euphorbia Helioseopia Linn)।

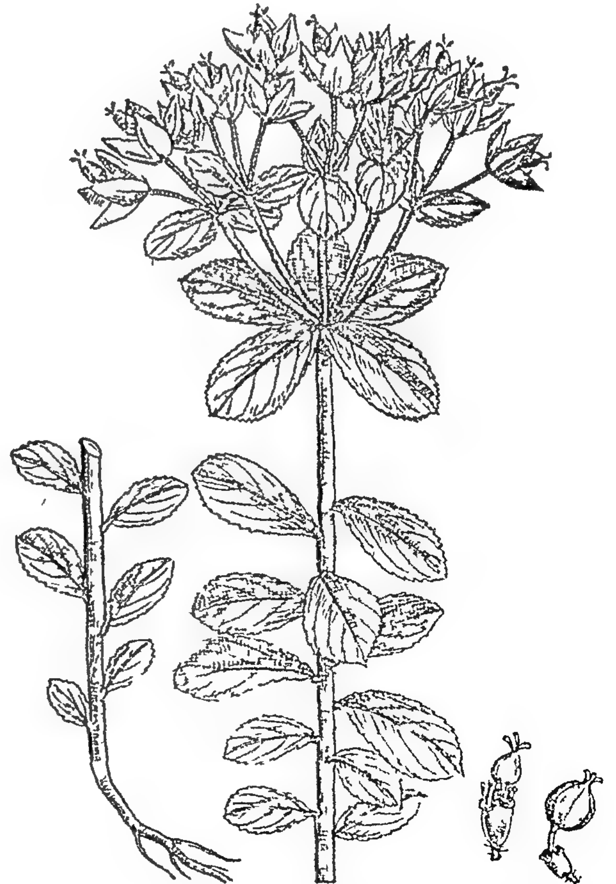
उपयुक्त अङ्ग—मूल और बीज।

गुण धर्म और प्रयोग—

यह वनस्पति मूत्र विरेचक होती है। इसका रस त्वचा पर होने वाले मसो को दूर करने के लिए लगाया जाता है। इसका दूधिया रस फफोलो पर लगाने के काम में लिया जाता है और इसके बीज भुनी हुई काली मिर्चों के साथ हैजे की बीमारी मे दिए जाते है।

इसका रस एक लेप की तरह सन्धिवात और स्नायु शूल पर लेप करने के काम मे लिया जाता है और इसकी जड एक कृमिनाशक वस्तु की तरह दी जाती है।

(व. च. से साभार)



हिरु स्याह
EUPHORBIA HELIOSCOPIA LINN.



हिंसालू (RUBUS ELLIPTICUS SMITH)

यह गुलाबकुल (Rosaceae) का एक कांटेदार झालरदार पौधा होता है, जो कि लता जाति का माना जाता है।

यह दो प्रकार का होता है। एक के तीन पत्र गोलाकार होते हैं, टहनियो पर काटे होते है, पुष्प श्वेत कुछ मैले जैसे और फल पीले होते हैं।

फूलने फलने का समय—चैत्र बैशाख मास।

दूसरा भेद—कर हिमालू—यह लता रूपी वनस्पति होती है। इसके फल कलेजी रग के, मानीद कलेजा या रक्त के रग के होते है। इसकी टहनियो पर भी काटे होते है। यह असाढ-श्रावण मास मे फलता है। जगली ग्वाले घसियारे इसे लाकर बेचते है।

उत्पत्ति स्थान—

यह हिमालय मे ८ से १० हजार फीट की ऊचाई से १४ हजार फीट की ऊचाई तक कुमायू, गढवाल के जङ्गलों मे पाया जाता है। जहा शील हो और छाया हो।

नाम—

गढवाली नाम—हिंसालू, हिंस्र, हिलोला, हिंसाऊ, हिंसोला। दूसरा—कर हिंसालू, किन्सोला। ले—रुबस इलिप्टिकस (Rubus ellipticus Smith)।

गुण धर्म और प्रयोग—

बडा हिंसालू—पीला फल वाला—अरुचि, दाह, तृषा, ज्वर, छर्दिनाशक, हृद्य, दीपन और मूत्रल है। इसका शरबत बजूरी शरबत के समान गढवाल की योग धारा फार्मेसी वैद्य—हकीमो को खूब सप्लाई करती है। इसकी जड़ उदर रोग नाशक है। कोपल दारुहल्दी के काढे मे मिलाकर उसका प्रयोग आखो के विविध रोगों पर होता है। इसकी ताजी जड का रस व्रण रोपक है। इसकी जड़ से आयुर्वेदिक टिंचर बनता है। इसके बीज ३ ग्राम घोटकर धारोष्ण दूध के साथ देने से प्रमेह नाशक है।

दूसरी जाति के गुण—लघु हिंस्र (किन्सोला) के फलो का शरबत या ताजे फलो का स्वरस २ से ३ छटांक तक पिलाने से शरीर मे खून की कमी अति शीघ्र पूर्ण हो जाती है बाल रोग पर पथ्य है। भारत सरकार इसका प्रयोग अपने निर्माण मे लेकर देश की रक्षा करे। यह क्षय नाशक है। यह मीठा अमृत पर्वतीय प्रदेशो में उत्पन्न होता है। आषाढ से श्रावण मास तक प्राप्त होता है।

—श्री योगेश्वर प्रसाद जी घिल्डियाल, कोटाबाग-रूडकी (नैनीताल)

हिलमोचिका (Enhydra Flucktuans)

यह भृङ्गराजादि कुल (Compositae) का क्षुप ब्राह्मी के समान जलज उद्भिद है। हिलमोचिका का क्षुप १ से ३ फीट लम्बा होता है। यह सादा तथा आड़ी टेढ़ी शाखाओ वाला चिकना या रोमावलि युक्त होता है। शाख की प्रत्येक गाठ से मूल निकलता है, डाडी गोल और बहुधा जमीन पर चलने वाली होती है। इसका क्षुप विशेष करके बहु वर्षायु हो ऐसा मालूम होता है।

पान—आमने-सामने १ से ३ इन्च लम्बे और कईतरह की चौडाई मे तथा मूल की ओर नोकदार होते हैं। पत्र दण्ड विहीन, डाडी और शाखाओ के चारो ओर विकले हुए होते है। ये रेसाकार, लम्ब गोल या भल्लाकृति के होते हैं। कोर पर दूर-दूर दातेदार, नीचे की ओर नसो पर विशेष रोमावलि और रस कुप्पी वाला होता है।

फूल—शाखाओ के किनारे कोण मे से निकले हुए होते है। पुष्प दण्ड नहीं होता है। पुष्प एकाकी। पुष्प सफेद नीले रङ्ग के छोटे-छोटे।

बीज—काला, चिकना और यह कलगी जैसी पीछी रहित होता है। क्षुप जल मे अथवा गीली जमीन मे होते हैं। रस मे तिक्त। शीत काल मे फूल और फल आते है। इसके पत्तो की भाजी बङ्गाली खाते है।

उत्पत्ति स्थान—

पूर्वी बगाल, आसाम, सिलहट, बगाल के हुगली, हावडा, २४ परगना, वर्द्धमान, बॉकुड़ा प्रभृति जिलो में गङ्गा के किनारे एव नालो के जलो मे एवं किनारे पैदा होते हैं।

नाम—

सं०—हिलमोचिका। हिं०—हरहुच, हरुच, हिलमोचिका। बं०—हिञ्चो, हिंचाशाक, हेलेंचा। उड़ीसा—हिरमचा। ले.—अेनहीड्रा फ्लक्टुअेन्स Enhydra Fluctuans Lour।

उपयुक्त अङ्ग—पचाङ्ग। मात्रा–१ तोला।

गुण धर्म और प्रभाव–

रस–तिक्त। विपाक-कटु। वीर्य-उष्ण दोषघ्नता-कफ-पित्त। हिलमोचिका—शोथ, कुष्ठ, कफ, पित्त को नष्ट करती है। (भा प्र)

हिलमोचिका—सर, तिक्त, कुष्ठघ्न, कफ और पित्त को जीतने वाली है। (रा० व०)

विशेष-पत्ते किंचित कड़वे, शीतल, मृदु विरेचक, त्वचा के रोग और खासी को मिटाने वाले होते हैं। शीतला की बीमारी मे भी ये उपयोगी होते हैं। (व० च०)

उपयोग—

बगाल मे इसके पत्तो का शाक बनाया जाता है। चर्म रोग और मज्जा तन्तुओ के रोगो मे इसका स्वरस १ तोले की मात्रा में दिया जाता है। यकृत की क्रिया को दुरुस्त करने के लिये इसके पत्तो का शाक चावल की पेज मे उबालकर उसमे सेंधा नमक और सरसो का तेल मिलाकर खिलाया जाता है, सुजाक मे इसके स्वरस को दूध में मिलाकर देते है। मस्तिष्क की गरमी को कम करने के लिए इसके पत्तो को पीसकर लेप करते है। चेचक की बीमारी मे इसके स्वरस में मधु मिलाकर पिलाया जाताहै। (व च)

चरक, सुश्रुत, वाग्भट्ट आदि मे इसका उल्लेख नही है। अमरसिंह जी ने 'हिलमोचिका' का उल्लेख किया है। भानुजी दीक्षित ने इसका नाम 'हिलपाल' बताया है। 'आयुर्वेद विज्ञानम्' वो. १ पा. ६३८ पर इसका चित्र दिया है।

द्रव्यमत—

हिलमोचिका के पान मृदुरेचक है और त्वग्दोष और ज्ञाव ततुओ के रोगो मे प्रयोग होता है। पत्तो का ताजा रस १ तोला की मात्रा में धातुओ के अनुपान रूप में कलकत्ते के कविराज काम मे लेते है।

वात रोगो मे ये दिये जाते हैं (यू सी दत्त)। पत्र–पित्त नाशक हैं। पत्तो का ताजा रस सुजाक एव मूत्रकृच्छ्र मे वकरी या गाय के दूध के साथ दिया जाता है। पत्तो का कल्क माथे पर बाधा जाता है इससे ठण्डक रहती है। कलेजे के दर्द पर यह उपयोगी है। (आ. नि.)

हिलमोचिका के रस मे समुद्रफेन पीस कर शरीर पर मर्दन करने से शरीर से आने वाली दुर्गन्धि दूर होती है। (भा. प्र)

चन्दन के चूर्ण के साथ हिलमोचिका का रस अथवा निम्ब पत्रो के रस के साथ हिलमोचिका का रस पिलावे रहने से बसन्त (चेचक) का प्रकोप कम हो जाता है। (भा व ब से)

ताजे रस की १ तोले की मात्रा उत्तम भस्म के समान बलकारी है। इसके सेवन से विश्वाची और स्नायु जाल की पीडा आराम होती है। (अ वू दर्पण)

हींग (Ferula Assafoetida)

यह हरीतक्यादि वर्ग और गर्जर कुल (Umbelliferae) का बहु वर्ष जीवी वृक्ष ह्रस्व प्रमाण का ६ से ८ फीट लम्बा होता है। पत्र कोमल, लोमयुक्त, २-४ पक्ष युक्त होता है। पत्र दण्ड के दोनो ओर २-२ पत्र बाहर निकलते हैं और अग्र भाग में एक पत्र होता है और पत्रों के किनारे कर्तित होते हैं। नीचे की ओर के पत्र १-२ फुट लम्बे और डिम्बाकृति के होते हैं। पुष्पदण्ड के शेष भाग का दण्ड बृहत् और पत्रहीन होता है। फल ½ इची लम्बा, ¼ इची चौड़ा, गर्भाशय पर मसृणलोम होते है। इसके फल को अञ्जुदान और निर्यास को हीग कहते हैं।

फूलने फलने का समय—मार्च-अप्रैल।

जाति—इसकी श्वेत और कृष्ण दो जातिया होती हैं। श्वेत वृक्ष का निर्यास सुगन्धित और हीरकवत् शुभ्र, स्फटिकाकार होता है इसे "हीराहीग" कहते है। इसी का

व्यवहार औषधि मे होता है। कृष्ण जाति का निर्यास दुर्गन्वित होता है इसे 'हीग' हीगडा' कहते हैं।

आजकल हिंगु के अनेक प्रकार बाजार मे मिलते है वे उत्पत्ति स्थान, वृक्ष भेद, सग्रह विधि आदि मे भेद होने से होते है।

सग्रह विधि—इसका सग्रह दो प्रकार से किया जाता है। प्रथम विधि यह है कि वसन्तऋतु मे हिंगु वृक्ष के मूल के ऊपर वाले भाग मे चाकू से त्वचा छील दी जाती है। यहा जो निर्यास सचित होता है उसे १-२ दिन मे पुन छीलकर हटा लेते हैं और फिर वहा नया निर्यास सचित होता है। इस प्रकार कई बार करने से सारा निर्यास निकल आता है तब उसे छोड दिया जाता है। इस निर्यास को सुरक्षित रखने एवं धूप आदि से बचाने के लिये इसके चारो ओर पत्थरो की दीवाल सी बनादी जाती है। यह विधि प्राय बल्ख, बुखारा, पारस आदि में प्रचलित है।

इसके सग्रह की दूसरी विधि अफगानिस्तान, काबुल, काश्मीर और सीमा प्रान्त मे व्यवहृत होती है। वहा वृक्ष के काण्ड को मूल से कुछ ऊपर काट देते है जिससे मूल के छिन्न भाग पर निर्यास जम जाता है। इसे हटाकर पुन थोडा और काट देते हैं। इस प्रकार कई बार काटने से सव निर्यास आजाता है तब छोड़ देते हैं। निर्यास को सुरक्षित रखने के लिए छिन्न मूल भाग को पत्थरो से ढक देते हैं।

परीक्षा—

प्रशस्त हिंगु—जो जल मे डालने पर शनै शनै श्वेत धारा देकर पूरा मिल जाय और जल स्वच्छ दुग्धवत् हो जाय तथा कोई अवशेष पात्र तल में न बैठे वह हिंगु (हीग) प्रशस्त माना गया है। दियासलाई लगाने से हीग पूरी जल जानी चाहिए। उसका वर्ण शुभ्र, गन्ध तीक्ष्ण और स्वाद कटु होना चाहिए।

अग्राह्य हीग—व्यापारीगण उपर्युक्त विधि से निर्यास का सग्रह कर उसमे गेहूँ का आटा, पत्थर के टुकड़े आदि मिला देते हैं जिससे उसका वजन बढ जाता है और असल निर्यास कम रह जाता है। ऐसी हीग को जल में घोलने पर वह पात्र तल मे नीचे बैठ जाती है। आग लगने से पूरी जलती भी नही। गन्ध और स्वाद मे भी अन्तर आ जाता है। ऐसी हींग का प्रयोग नही करना चाहिए।

हींग का शोधन—हीग का शोधन दो प्रकार से किया जाता है—(१) अभर्जित और (२) भर्जित। प्रथम विधि में हीग को आठ गुने जल मे घोलकर छान लेते है और फिर किसी स्निग्ध लोह पात्र में रखकर मन्द आच से जल हीन करते है। दूसरी विधि से हीग मे गाय का घी देकर खूब भूनते हैं। जब शुष्क और खर हो जाता है तब उतारते हैं।

वृक्ष भेद—Ferula Narthex Boiss वृक्ष से भी हीग मिलती है। बम्बई के बाजार मे हीग को आवुसायर की हीग कहते है। बम्बई की हीग, हीरा हीग की अपेक्षा उत्तम नही है। कारण इसके साथ बबूल का गोद और अन्य २ द्रव्यो को मिश्रित किया जाता है। हाल मे इसके साथ आलू के टुकडे तक मिलाते है।

(F alliacea Boiss, F Narthex), प्रभृति वृक्षो से हीग का उत्पादन किया जाता है तब इन वृक्षो से उत्पन्न हीग मे विभिन्नता और रूप एव आकार मे पृथकता होती है।

सन १८८४ मे डा पिटर्स जब क्वेटा मे रहते थे तब पुष्पित हीग के वृक्ष देखे है। उन्होने इस वृक्ष के नमूने भेजे थे, वहा इ एम. होल्मस साहिब ने परीक्षा करके देखा था कि यह वृक्ष (Ferula Assafoetida Linn) है। डा पिटर्स ने भी उपरोक्त वृक्ष की सूखी जड को देखकर यही निश्चय किया था। यह अफगानिस्तान की रिपोर्ट मे देखा जा सकता है। वृक्ष परिपक्व होने पर उसके तने से दूध के समान गोद बाहर होता है एव उसके गाढा होने पर ही हीग हो जाती है। उत्कृष्ट हीग चपटा, उस पर बालू, काकरे लगे हुए मिलते हैं, उसका ऊपरी भाग पीताभ, तोडने पर मुक्ता के समान श्वेतवर्ण दिखती है। हवा लगने से उज्वल लाल वर्ण अत मे फीका हरिद्रा वर्ण हो जाता है।

उत्पत्ति स्थान—

ईरान, तुर्किस्तान, अफगानिस्तान, पजाब, पेशावर, काश्मीर मे होते हैं।

प्राप्ति स्थान—हीग—चर्म कोषो मे बन्द होकर बलख (वाह्लीक) बुखारा, पारसादि में बिकती है और बोम्बे में भी आती है, जहा पत्थर, आलू, गोधूमादि का श्वेतसार



(आटा) इत्यादि द्रव्य मिला दिये जाते हैं। हीग का दूसरा महा केन्द्र अफगानिस्तान है। यह वृक्ष प्रायः शुष्क नग्न शिलाओं पर होते हैं।

नाम–

स —हिंगु, सहस्रवेधि, जतुक, वाह्लीक, रामठ। हि.-हीग। व –हिंग। म हिंग। गु, सिंधी–हींग, वघारणी। राज –हीग। ता –पेरुङ्कायम्। मल –कायम। ते–इङ्गुरा। क —यग, इगु। कर्णा —लेसु। द. को –हीग। वोम्बे–मुलतानी हीग। काश्मीरी—यग। फा. अगजद, अगोज। अरवी–हिल्तीत। अ –असाफिटिड़ा (Asafoetida)। ले – फेरुला असाफिटिडा (Ferula assafoetida Linn)।

रासायनिक संगठन—

इसमे एक उडशील तैल ६ से १७ प्रतिशत होता है जिसमे रसौन तैल और एलिल परसल्फाइड (Allyl per-sulphide) होता है। इसी के कारण हीग की विशिष्ट गन्ध होती है। इसके अतिरिक्त राल (Asaresinotann-ol) ६५ प्रतिशत, गोद २५ प्रतिशत, क्षार और लवण ३-४ प्रतिशत तथा (Ferualic, acetic, malic, formic और Valerianic acid) होते है।

उपयुक्त अङ्ग–निर्यास और बीज।

मात्रा—१ से ४ रत्ती तक।

गुण-धर्म और प्रयोग-

हींग –हलकी, गरम, पाचक, दीपन, कफवात नाशक, चरपरी, स्निग्ध, सारक, तीक्ष्ण तथा शूल, अजीर्ण और विवन्ध को दूर करती है।

हींग—हृदय को हितकारी, चरपरी, गरम तथा कृमि, वात, कफ,विवन्ध, आध्मान, शूल और गुल्म का नाश करती है और नेत्रों को हितकारी है। (रा नि)

हीग–गरम, रुचिकारी, तीक्ष्ण, वात कफ नाशक तथा शूल, गुल्म, उदररोग, आनाह (अफारा) और कृमि को दूर करती है तथा पित्त वर्धक है। (भा प्र)

हीग—गरम, मन्दाग्नि नाशक, पाचक, कफ वात विनाशक, चरपरी, स्निग्ध, तीक्ष्ण रस वाली, भूत को दूर करने वाली और पित्त को कुपित करती है। (शा नि)

हीग–पित्त जनक, गरम, हृदय को हितकारी, कड़वी, सारक, चरपरी, हलकी, तीक्ष्ण, रुचिकारक, पाचक, अग्नि दीपन, स्निग्ध, मल स्तम्भक तथा श्वास खांसी, कफ,आनाह अर्थात् अफारा, आध्मान, गुल्म, शूल, हृदयरोग, वादी, अजीर्ण, कृमि और उदर रोग का नाश करती है। (नि र)

चरक ने दीपनीय, श्वासहर और सज्ञा स्थापक दशेमानियों में हीग का उल्लेख किया है। सुश्रुत ने पिप्पल्यादिगण में और शिरोविरेचन वर्ग में हीग का उल्लेख किया है। (आ नि)

यूनानी मतानुसार–

हीग–प्रकृति—चौथे दर्जे मे गरम और दूसरे मे रूक्ष है।

गुण कर्म-वातानुलोमन, आक्षेपहर, कोथ प्रतिवन्धक, श्लेष्म नि सारक, मूत्रार्तवजनन, शोणितोत्क्लेशक, वातनाड्युत्तेजक और कफोत्सारी है।

उपयोग–वातानुलोमन होने के कारण उदरानाह को दूर करने के लिये वस्ति, तिला एव भक्षणीय औषधि के रूप मे हीग का उपयोग किया जाता है आक्षेपहर होने के कारण यह आक्षेप मुक्त रोगो विशेषकर अपतन्त्र ० कि मे प्रयुक्त होती है। यह वात नाडियो के भीतर उत्तेजना पैदा करती है, इसलिये ध्वजोच्छ्राय करने के कारण वाजीकर भी है तथा शोणितोत्क्लेशक होने के कारण यह तिलाओ मे डाली जाती है। यह उपस्थेन्द्रिय मे शक्ति उत्पन्न करती है। श्लेष्म नि सारक होने के कारण या कास एव कफज कृच्छ्र श्वास में प्रयुक्त की जाती है।

मात्रा–१ माशा।

हीग वृक्ष के फल—अञ्जुदान–प्रकृति—दूसरे दर्जे मे गरम और खुश्क। गुण-कर्म —श्वयथु विलयन, वातानुलोमन, दीपन, मूत्रार्तवजनन, बाजीकर एव मूत्रल है। उपयोग—अजुदान को मस्तिष्क और वात व्याधियो, जैसे—अर्दित, पक्षवध, विस्मृति आदि मे उपयोग करते हैं। यह आमाशय को पाचन शक्ति देने, वायु का उत्सर्ग करने तथा मूत्रार्तव जनन के लिये भी प्रयुक्त होता है। कफज ज्वरो, जलोदर और कामला के लिए भी इसका उपयोग करते हैं। नपुंसकता मे इसे उपयुक्त औषधियो के साथ खिलाते है। मात्रा—२ से ३ माशे। (यू द्र वि)

डाक्टरी मतानुसार—

डा० देसाई के मत से हींग—दीपन, पाचन, आमाशय और आंतो के लिए उत्तेजक, वायुनाशक, अनुलोमिक, कृमिघ्न, मज्जा तन्तुओ के लिए तथा गर्भाशय के लिए जोरदार उत्तेजक, सकोच–विकास प्रतिबन्धक और विषम ज्वर को नष्ट करने वाली होती है। इसके अन्दर रहने वाला उडनशील तैल श्वास नलिका, त्वचा और मूत्र पिण्ड के द्वारा बाहर निकलता है। बाहर निकलते समय जिस मार्ग से यह बाहर निकलता है उस उस मार्ग को उत्तेजना देता है। इसका कफ निस्सारक गुण प्याज के समान होता है। इसके लेने से श्वास नलिका मे जमा हुआ कफ पतला होता है, उसकी दुर्गन्ध नष्ट होती है और उसमें रहने वाले रोग जन्तुओ का नाश होता है। श्वासोच्छ्वास के केन्द्र स्थान की क्रिया कुछ धीमी हो जाती है जिससे बिना कारण आने वाली खासी कम हो जाती है। ज्ञान-तन्तु अथवा कर्म तन्तुओ के चिडचिडे होने से अथवा मज्जा तन्तुओ के केन्द्र स्थान की कमजोरी की वजह से मस्तिष्क पर वाह्य घटनाओ का असर मामूली से अधिक होने लगता है। जिससे मनुष्य द्वारा भूल और भूल भरे काम होने लगते हैं और उसकी दुखी और गमगीन रहने की आदत पड जाती है। ऐसी स्थिति में हींग का प्रयोग करने से मज्जा तन्तुओ की यह विकृति बन्द होकर वे व्यवस्थित रूप से काम करने लगती हैं। इसीसे हींग मज्जा तन्तुओ के लिये बलदायक और सकोच विकास प्रतिबन्धक मानी जाती है। इससे आमाशय और आतो की पेशियो को उत्तेजना मिलती है जिससे दस्त साफ होता है। फुफ्फुस के रोगो मे हींग बहुत गुणकारी होती है। प्रौढ मनुष्यो की श्वास नलिका की पुरानी सूजन, दमा, कुक्कुर खासी और छोटे बच्चो की श्वास नलिका की सूजन तथा फुफ्फुस के रोग होने के पश्चात् होने वाली सूखी खासी में हींग देने का बहुत रिवाज है। इसको देने से घबराहट की कमी होती कफ पतला होता है और कफ का अधिक उत्पन्न होना कम हो जाता है। फुफ्फुस के रोगो मे हींग को पानी मे घोटकर देते हैं।

पेट का फूलना, उदरशूल, कब्जियत, आमाशय और आंतो की शिथिलता, वमन और कृमि रोग में हींग बहुत गुणकारी होती है, इन रोगो में हींग को अजवायन के साथ अथवा गुड़ के साथ देते हैं। आंतों के रोग में तथा कृमि रोग में हींग के पानी का एनिमा देना चाहिए।

मृगी, अर्दित, पक्षाघात, आक्षेप इत्यादि वात रोगों में हींग को देने से बहुत लाभ होता है। मलेरिया ज्वर में भी यह एक उपयोगी वस्तु है। ज्वर के अन्दर सन्निपात का लक्षण दिखाई देने पर हींग कपूर की गोली देना चाहिए। अगर रोगी में गोली को निगलने की ताकत न हो तो गोली को अदरक के रस में मिलाकर उसकी जबान पर लेप देना चाहिए। इससे नाडी की गति में सुधार होता है। हाथ पांवों को स्थिरता मिलती है और रोगी का बडबड बकना, हाथ पांव फेंकना, कपडे फाडना आदि उपद्रव बन्द हो जाते हैं।

इस गोली के साथ कस्तूरी देने से घबराहट, चक्कर आना इत्यादि रोगो में तथा हृदयोदर में हींग कपूर मदिरा देने से लाभ होता है। प्रसूति के समय हींग देने से गर्भाशय का सकोचन होकर परिस्राव साफ पड जाता है, गर्भाशय शुद्ध हो जाता है और मासिक धर्म पुनः बन्द हो जाता है।

नारू के ऊपर हींग का लेप करने से और हींग खाने से नारू का कीडा मर जाता है। नियमित रूप से हींग खाने वालो को नारू नहीं निकलता, ऐसा कहा जाता है।

मेजर बसु और कीर्तिकर के मत से हींग एक शक्तिशाली आक्षेप निवारक, कफ निस्सारक, कृमिनाशक, मज्जा तन्तुओ को उत्तेजना देने वाली और हलकी मृदु विरेचक होती है। यह हिस्टीरिया रोग और हिस्टीरियाजनित विकारो मे बहुत लाभदायक होती है। इसी प्रकार दमा, हूपिंग कफ, हृदयशूल (Angina Pectoris) तथा कालिक (शूल मे होने वाले आक्षेप) को यह दूर करती है। निमोनिया रोग की स्थिति में हींग का प्रयोग करने से यह अपना आश्चर्यजनक प्रभाव दिखलाती है। बच्चो के ब्रोंकाइटीज मे भी इसका उत्तम प्रभाव होता है।

ग्लोबस हिस्टीरिया मे (जिसमे कि पेट की तरफ से एक गोला सा उठकर छाती की तरफ बढता है) हींग को देने से बहुत लाभ होता है। दाद के ऊपर इसका लेप



करने से दाद अच्छा हो जाता है। सन्धिवात मे इसके वृक्ष के पत्तो को पिलाने से लाभ होता है।

वक्तव्य—उदर रोगो में भर्जित हीग एव फुफ्फुस रोगो मे कच्ची हीग देनी चाहिये। कच्ची हीग में अधिक तीक्ष्णता और छेदन शक्ति होती है जिससे इसका प्रभाव फुफ्फुस पर अधिक होता है। उदर रोगो मे ऐसी हीग उत्क्लेशकर और क्षोभक हो जाती है अत उसे घृत भृष्ट करने के बाद ही प्रयोग करते है।

हीग का शोधन—लोह के पात्र मे घी के अन्दर हीग को डालकर आग पर रख दें जब कुछ लाल हो जाय तब उतार कर काम मे लावे।

प्रयोग—

अपचन और अफरा—दूषित अन्न की डकार आती हो, थोडा थोड़ा दस्त होता हो और उदर मे वायु भरी हो तो २ रत्ती हीग को घी लगाकर निगलवा देवें अथवा हिंग्वाष्टक चूर्ण या शिवाक्षार पाचन या हिंग्वादि वटिका सेवन करावे।

वक्तव्य—उदर मे तीव्र पीडा हो तो उदर पर एरण्ड तैल लगाकर गरम जल से सेक भी करना चाहिये।

हैजा—दस्त मे दुर्गन्ध दूर होकर जब पतले जल जैसे आने लगे, तब अतिसार हरी वटिका सेवन करावे। १–१ गोली १–१ घण्टे पर ३ वार देने से हैजा बन्द हो जाता है। यह गोलिया अतिसार के लिये बनी है तथापि हैजे मे भी लाभ पहुचा देती हैं।

सन्निपात में वात प्रकोप—कभी बुखार बढ जाने पर वात प्रकोप के लक्षण उत्पन्न होते हैं। भागना, दौडना, चितभ्रम होना, वस्त्र फेंकना, मन्द मन्द बोलते रहना आदि होने पर हिंगु कर्पूर वटी तुरन्त लाभ पहुँचाती है। यह प्रसूता स्त्री को भी निर्भयतापूर्वक दे सकते हैं।

हिस्टीरिया—अनेक कमजोर हृदय वाली स्त्रियो के मन पर आघात होने से हिस्टीरिया हो जाता है। मृगी (अपस्मार) मे मुह मे भाग आता है इसमे नही आता। इस रोग में छाती या कठ मे वायु का गोला रुक गया हो ऐसा भास होता है। इस पर हिस्टीरियानाशक वटी अथवा 'हिंगु कर्पूर वटी, का सेवन कराना चाहिए।

विच्छू का जहर—आक के दूध में हीग को घिसकर लेप करे।

दुष्ट व्रण—घाव मे कीडे पड जाने और प्रति दुर्गन्ध उत्पन्न होने पर उसे शुद्ध करने के लिए नीम के ताजे पान २ तोले और १ माशा हींग मिला घी के साथ पीस कर पुल्टिस बनावे। यह बांधने से कीडे सब मर जाते है, और दुष्ट सडा हुआ मांस दूर हो जाता है तथा घाव शुद्ध हो जाता है। कभी-कभी यह पुल्टिस ४-६ बार बांधनी पडती है।

नहरुआ--नाहरु निकलने पर उसे जल्दी निकालने और देह में रहे हो उन सबको जलाने के लिए हींग का चूर्ण ४ माशे को २० तोले दही मे मिलाकर सुबह पिला देवे। दोपहर को दही भात खिलावें, या केवल दही पर रक्खें। इस तरह ३ दिन करने से नारु जल जाते है।

नोट—डा वीर जी जीणा आर्य औषधि मे लिखते है कि 'वाले को खीच कर निकालने तथा नाश करने का गुण है ऐसा मानना व्यर्थ है।

दन्त शूल—दात में वेदना होने पर पहले मुह मे २ तोले तिल या सरसो का तैल भर ५-७ मिनट चलाकर थूक देवें। फिर निवाये जल मे हीग मिलाकर कुल्ले करें।

हिक्का—हीग और उड़द का धुआ देने से वात प्रकोप से उत्पन्न हिक्का का शमन हो जाता है।

मक्कल शूल—स्त्रियो के प्रसव होने के पश्चात् भूल होने पर गर्भाशय में शूल चलता है उसे मक्कल शूल कहते है। उस पर हीग घी दी जाती है, या हिंग्वादि वटी का सेवन कराया जाता है।

मूत्रावरोध—वायु उत्पन्न होकर मूत्रावरोध होने पर हीग २ रत्ती और छोटी इलायची १ माशे का चूर्ण १-१ घण्टे पर जल केसाथ ३-४ बार देने से पेशाब साफ आजाता है। उत्तम लाभदायक है।

परिणाम शूल—भोजन के ३-४ घण्टे बाद उदर में शूल चलता हो, तो ४ रत्ती हीग, १ माशा सोडा बाइ-कार्ब और १ माशा जीरे का चूर्ण, घी शहद के साथ या निवाये जल के साथ सेवन कराना चाहिए। उदर में व्रण हो, तो घी के साथ दिया जाता है। (गा. औ र)

उदर शूल पर—हीग ३ माशा, कुष्ठ ३ माशा, विडग ३ माशे मिलित चूर्ण गरम पानी के साथ पिलावे। ऐसी

३ मात्रा दिन में ३ वक्त पिलावें । यदि विशेष शूल हो तो घण्टे-घण्टे मे देवे । (व गु ८)

वत्सनाभ के विष पर—४ रत्ती हीग गाय के २ तोला घी के साथ बार-बार पिलाने से वत्सनाभ विष का जहर उतर जाता है ।

कृमि दन्त—अहिफेन और हीग को समान मात्रा मे लेकर पीसकर के दन्त के छेद में रुई रखकर दवा देने से कृमि दन्त शूल आराम हो जाता है । (भा व व)

उदर शूल—घोड़े की लीद का रस १ तोला मे एक माशा शुद्ध हीग मिलाकर २-३ बार देने से उदर शूल मिटता है ।

उदर शूल की किसी भी दशा मे आधा तोला हीग गरम पानी से घोलकर गुदामार्ग द्वारा पिचकारी देने से लाभ होता है ।

वातज कास—कुक्कुर खासी (व्हूपिंग कफ की द्वितीय अवस्था) मे जब खांसी के साथ आक्षेप के दौरे होने लगें तब २-३ घण्टे के अन्तर से ½ रत्ती हीग घी के साथ अथवा बिहीदाने के लुआब के साथ देवें । ऐसी दशा मे हीग की पिचकारी भी दे सकते हैं ।

वायुगोला (गैस) मे—हीग २ रत्ती गरम पानी से सेवन करे । यह अत्यन्त पाचक और क्षुधावर्द्धक है ।

विशूचिका पर—अफीम १ माशा, शुद्ध हीग ½ माशा, लाल मिर्च का वस्त्रपूत चूर्ण १ माशा, कत्था १ माशा, लेकर ताजे पोदीने के रस से घोटकर २-२ रत्ती की गोलिया बनावे । हैजे के कारण दस्त होने पर २-२ घण्टे के अन्तर से एक एक गोली देवें ।

कर्णनाद और बधिरता—हीग और सोठ से चौगुना सरसो का तेल और तेल से चौगुना अपामार्ग के पचाग का रस डालकर तेल सिद्ध करले । इसे कान मे डालने से कर्णनाद, बधिरता आदि कर्ण रोग आराम होते हैं ।

अफीम का विष—पानी अथवा मट्ठे मे घोलकर हीग पिलावे तो अफीम का विष दूर होता है ।

(अगद तत्र परिशिष्ट विष पु,)

विशिष्ट योग—

फेटिड स्पिरिट आफ एमोनियां—शुद्ध हीग पौने चार तोला के टुकड़े टुकड़े कर ७॥ छटांक अल्कोहल में मिला कर बर्तन का मुंह बन्दकर २४ घण्टे तक रखते हैं । उसके बाद अलकोहल छानकर उसमें एक छटांक एमोनिया फोर्ट अथवा नौसादर मिला दें । इसकी प्रयोग मात्रा २० बूद है । कई बार देना हो तो २० बूद की मात्रा मे चार-पांच वार दे सकते हैं ।

टिंचर ऑफ एसाफेटिडा (हींग का अरिष्ट)—आधा पाव हींग लेकर ७½ छटांक अलकोहल में चार मुंह बन्द कर बर्तन मे एक सप्ताह तक रखें । बीच बीच मे बर्तन को हिला दिया करें । एक सप्ताह बाद छानकर बन्द बोतल मे रख दें । मात्रा ३० बूद से ६० बूद तक ।

(अ. त प रि [illegible])

आयुर्वेदीय विशिष्ट योग—

रज प्रवर्तिनी वटी—हींग, कसीस, एलुवा, मण्डूर भस्म मिलाकर गोली बनाले और १ माशा की मात्रा में मिश्रेयादि क्वाथ के साथ देवें ।

हींग कपूर वटी—हींग १ तोला और कपूर १ तोला। इन दोनो चीजो को शहद में घोटकर रत्ती रत्ती भर की गोलिया बना लें । यह अनेक रोगो पर काम मे आती है ।

मात्रा १ से २ गोली, दिन मे ३ बार । जल, दूध, शहद या अदरक के रस और शहद के साथ ।

वक्तव्य—कितने चिकित्सक इसमे १ तोला कस्तूरी मिला लेते हैं । कस्तूरी मिलाने पर गुण बढ जाता है । ज्वर मे वात प्रकोपज सन्निपात के लक्षण, बुद्धिभ्रम, मद मद प्रलाप, वस्त्र फेंकना, हाथ पैरो में कम्प होना, बार-बार उठना और हिस्टीरिया आदि पर यह वटी दी जाती है । आवश्यकता पर ३-३ घण्टे पर ३-४ बार देवें । रोगी नही निगल सके तो अदरख के रस और शहद मे मिला कर जीभ पर घिस देवें ।

हिंग्वाष्टक चूर्ण—सोठ, मिरच, पीपर, जीरा, स्याह जीरा, अजमोद, सेंधानमक, भुनी हीग, ये आठो चीजें १-१ तोला । इन सब चीजो का चूर्ण कर लो । इस चूर्ण को ३ से ६ माशे की मात्रा मे भोजन के समय घी के साथ पहले ग्रास मे लेने से सब प्रकार के उदर रोग मिटते हैं ।

नोट—(सोठ और जीरे को सेक लिया जाय तो अधिक उत्तम है ।)



हीग फल वर्ति—हीग और सेंधव को मधु के अन्दर फलवर्ति बनावे। (आर्य औषध)

गिवाक्षार पाचन चूर्ण—हिंग्वष्टक चूर्ण, छोटी हरड़ का चूर्ण और सज्जी क्षार (सोड़ा बाइकार्ब) तीनो को सम भाग मिलाकर खरल कर बोतल मे भरे।

मात्रा—३ से ४ माशे २ बार निवाये जल के साथ। यह चूर्ण आम को पचाता है, अपान वायु को शुद्ध लाता है तथा मलावरोध को दूर करता है। आमाशय का पित्त अधिक तेज होने पर और यकृत पित्त निर्बल होने पर यह हिंग्वाष्टक की अपेक्षा अधिक लाभदायक है।

हिंग्वादि बटी—भुनी हीग, अम्लवेत, सोठ, काली-मिर्च, पिप्पली, अजवायन, सैंधानमक, विडनमक और काला नमक, ये नौ औषधिया सम भाग मिला बिजौरे नीबू के रस मे ३ दिन खरल करके २-२ रत्ती की गोलिया बना लेवें। मात्रा १ से ४ गोली दिन मे २-३ बार छाछ के साथ देवे या १-१ गोली मुह मे रखकर रस चूसते रहे। उदर शूल को दूर करने मे यह वटी अति लाभदायक है। आफरा हो तो उसे यह दूर करती है तथा पाचन क्रिया बढाती है।

अतिसार हर बटी—हीग, कालीमिरच और कपूर तीनो ४-४ तोले और अफीम १ तोला मिला अदरख के रस मे ६ घण्टे खरल कर १-१ रत्ती की गोलिया बनावें।

मात्रा—१ से २ गोली, दिन मे ३ बार। यही वटी अतिसार में बार बार दुर्गन्ध रहित पतले दस्त होने और कालेरा के दस्त जिसमे दुर्गन्ध न आती हो, मात्र जल गिरता हो, उन दोनो पर तुरन्त लाभ पहुचाती है।

हिस्टीरिया वटी—हीग कच्ची और एलुआ समभाग मिला जल के साथ खरल कर २-२ रत्ती की बटी बनावे।

मात्रा—१-१ वटी दिन मे २ या ३ बार जल के साथ देते रहने से हिस्टीरिया थोडे ही दिनो मे दूर होजाता है। आफरा और मलावरोध पर भी यह हितकारक है। रात्रि को २ वटी देने से सुवह एक दस्त साफ आजाता है।

हिंग्वादि क्वाथः (१) (हा. सं। स्था ३ अ. ७)—हीग, पोखरमूल, कचूर और काला नमक (सचल) समान भाग लेकर क्वाथ बनावे।

यह क्वाथ शूल और विशेषत वातज शूल को नष्ट करता है तथा पाचक है।

(काला नमक क्वाथ तैयार होने पर मिलाना चाहिए।

हिंग्वादिक्वाथ (२) (हा. स। स्था.३ अ.७)—हीग, सोठ, कचूर, काला नमक (सचल), देवदारु, पोखर मूल, नागर माथा और पुनर्नवा की जड समान भाग लेकर क्वाथ बनावें।

यह क्वाथ शूल, उदर रोग और गुल्म रोग को नष्ट करता है तथा पाचक है।

(काला नमक क्वाथ तैयार होने पर मिलाना चाहिए।)

हिंगु द्वादशकं चूर्णम् (वं से.। अजीर्णा)—हीग १ भाग, सैंधा नमक २ भाग, पीपल ३ भाग, पीपलामूल ४ भाग, काली मिर्च ५ भाग, अजवाइन ६ भाग, हर्र ७ भाग, अनार दाना ८ भाग, इमली ९ भाग, चीतामूल १० भाग, सोठ ११ भाग और धनिया १२ भाग लेकर यथा विधि चूर्ण बनावे।

हीग को थोडे घी मे भून लेना चाहिए। इमली को पानी मे भिगोकर मल कर वह पानी चूर्ण मे मिलाकर सुखा लेना चाहिए। (मात्रा—२ से ३ मासे।)

यह चूर्ण अरुचि, गुल्म, हृद्रोग, अष्ठीला, आध्मान, शूल और शुष्कार्श तथा रक्तार्श को नष्ट करता है।

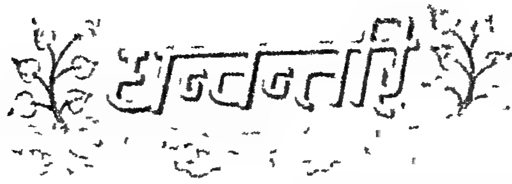
हिंगु नवकचूर्णम् (यो र.। गुल्मा)—हीग, पोखर मूल, तुम्बरु (नेपाली धनिया), हर्र, काली निसोत, बिड नमक, सेंधानमक, जवा खार और सोठ समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे घी में सेक कर जौ के क्वाथके साथ पिलाने से उप-द्रव युक्त गुल्म और शूल का नाश होता है। (मात्रा—१ से २ माशा)।

हिंगु पंचकं चूर्णम् (१) यो चि. म।अ २)—हीग सचल (काला नमक) सोठ, अनार दाना और अम्लवेत समान भाग लेकर चूर्ण बनावे। इसे उष्ण जल के साथ सेवन करने से श्वास और हृद्रोग का नाश होता है।

(मात्रा—५ रत्ती।)

हिंगु पञ्चकंचूर्णम् (२) (यो र। गुल्मा)—हीग, सेधा नमक, तिन्तडिक, राई और सोठ समान भाग लेकर चूर्ण बनावे। इसके सेवन से गुल्म का नाश होता



है। (मात्रा—४ रत्ती।)

हिङ्ग्वादि चूर्णम् (१) (यो र । अजीर्णा.)—हीग १½ तोला, विड नमक २½ तोला, तथा मिर्च, सोंधा नमक, सौंठ, पीपल, अजवायन, जीरा (काला), अजमोद, सफेद जीरा, बहेड़ा और हर्र ५-५ तोले एव सनाय और आवला १०-१० तोले और बेल तथा कैथ का गूदा २०-२० तोले लेकर चूर्ण बनावे और उसे विजौरे नीबू के रस मे घोट कर सुरक्षित रक्खे।

इसके सेवन से अरुचि, अफरा, मलावरोध और अग्नि माद्य का नाश होता है। (मात्रा—५ माशे।)

हिंग्वादि चूर्णम् (२) (ग नि । ग्रहण्य ३)—हीग और जवाखार १-१ भाग तथा हर्र, सौंठ, पीपल और चीता मूल २-२ भाग लेकर चूर्ण बनावे।

इसे सेवन करने से कफज ग्रहणी रोग नष्ट होता है।

अनुपान—दही या मद्य। मात्रा—१½ माशा।

हिंग्वादि चूर्णम् (३) यो.र । गुल्मा.)—हीग १ भाग, वच २ भाग, विड नमक ३ भाग, सौंठ ४ भाग, जीरा ५ भाग, हर्र ६ भाग, पोखर मूल ७ भाग और कूठ ८ भाग लेकर चूर्ण बनावे।

यह चूर्ण गुल्म, उदर रोग, अजीर्ण और विसूचिका को नष्ट करता है। (मात्रा—१½ माशा।)

हिंग्वादि चूर्णम् [४] वै. म र पटल ३] हीग एक भाग, वच २ भाग, चीतामूल ३ भाग, सोठ ४ भाग, अजवायन ५ भाग, हर्र ६ भाग, पीपल ७ भाग और निशोथ ८ भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे घी के साथ सेवन करने से कास और श्वास का नाश होता है। (मात्रा—१॥ माशा)।

हिग्वादि चूर्णम् [५] वैद्यामृत वि ५ विसूचिका.)—हींग १ भाग, वच २ भाग, विड नमक ३ भाग, सोठ ४ भाग, अजवायन ५ भाग और हर्र ६ भाग लेकर चूर्ण बनावे।

यह चूर्ण अफरा, शूल, अर्श, अग्निमाद्य, गुल्म, मलावरोध और विसूचिका को शीघ्र ही नष्ट कर देता है। मात्रा—१॥ माशा।

हिंग्वादि चूर्णम् (६) भै र. शूला.)—हीग, काला नमक, हर्र, विड़नमक, सेंधानमक, तुम्बरु (नेपाली धनिया) और पोखर मूल समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे दशमूल के क्वाथ के साथ सेवन करने से पार्श्व, हृदय, कमर और पीठ के शूल, [illegible], कफ, आनाह और वातज रोगो का नाश होता है। (मात्रा—१॥ माशा।)

हिङ्ग्वादि चूर्णम् (७) (च. भ. चि. अ. १० ग्रहण्य.)—हीग, कुटकी, वच, काला अतीस, पाठा, इन्द्र जौ, [illegible], पीपल, पीपलामूल, नव चीतामूल और सोंठ [illegible] तोला तथा पांचो नमक ५-५ तोले लेकर चूर्ण बनावें और फिर उसमे २०-२० तोले घी तथा तिल का तेल एवं ४ सेर दही मिलाकर अग्नि पर पकावें। जब [illegible] लेही सी होजाय तो उसे हाण्डी मे [illegible] जलावें। तत्पश्चात् हांडी के स्वांग शीतल होने पर उसमें से भस्म को निकाल कर चूर्ण करलें। उसमें से १। तोला [illegible] मे मिलाकर पीनी चाहिए और उसके पचने पर मधुर आहार करना चाहिये। इसके सेवन से वात कफज ग्रहणी रोग और गर विष का नाश होता है। व्यवहारिक मात्रा १॥ से ३ माशे तक।)

हिंग्वादि चूर्णम् (८) (हा. स. स्था. ३ अ. ७)—हीग, सञ्चल (काला नमक) हर्र, अजवायन, पुनर्नवा, सुगन्धवाला, अरण्ड मूल, बडी कटेली, छोटी कटेली, तुम्बरु, सौंठ, मिर्च, पीपल, जवाखार और सज्जखार समान भाग लेकर चूर्ण बनावें। यह चूर्ण वातज शूल और विसूचिका को तुरन्त नष्ट करता है। मात्रा—२ माशे।

हिंग्वादि चूर्णम् (९) (व. से. बालरोगा.)—हींग, सेंधानमक और पलाश (ढाक) की जड समान भाग लेकर चूर्ण बनावे। इसे शहद के साथ चटाने से बच्चो की प्रबल तृषा नष्ट होजाती है। (मात्रा—१ रत्ती।)

हिंग्वादि चूर्णम् (१०) (वृ. नि. र बालरोगा.)—हीग, काकड़ासिंगी, गेरु, मुलैठी, छोटी इलायची और सौंठ समान भाग लेकर चूर्ण बनावे। इसे शहद में मिला कर चटाने से बालकों की हिचकी और श्वास का नाश होता है। (मात्रा—२-३ रत्ती।)

हिंग्वादि चूर्ण (११) भै र । शूला.)—हीग, अतीस, सोठ, मिर्च, पीपल, वच, सचल और हर्र समान भाग लेकर



चूर्ण बनावे।

इसे प्रात खाली पेट (निरन्नकोष्ठ मे) गरम पानी के साथ पीने से शूल नष्ट होता है। मात्रा—१ माशा।

हिंग्वादि चूर्णम् (१२) (भै. र शूला.)—हीग एक भाग, सचल २ भाग, सौठ ४ भाग और हर्र आठ भाग लेकर चूर्ण बनावे। यह चूर्ण कमर, कुक्षि, पार्श्व, हृदय और वस्ति के शूल को नष्ट करता है। मात्रा—२ माशा।

हिंग्वादि चूर्णम् (१३) (बृहद) (हा. स स्था ३ अ. ३)—हीग, सौंठ, वच, अजवायन, हर्र, निसोथ, वायबिडङ्ग, देवदारु, चव्य, तुम्बरु, कूठ, नागरमोथा, हाऊबेर, शालपर्णी, रास्ना, इन्द्रजौ, धमासा, शतावर, कटेली छोटी, बडी कटेली, दालचीनी, इलायची, तेजपात, जीरा, पोखरमूल, तितडीक (समाकदाना), इमली, अम्लवेत, जवाखार, सज्जीखार और पाचों नमक समान भाग लेकर चूर्ण बनावे और फिर उसे गोमूत्र की १ भावना देकर छाया मे सुखाले। तदनन्तर बिजौरे नीबू के रस मे ३ दिन खरल कर सुरक्षित रक्खें।

मात्रा १¼ तोला। व्यावहारिक मात्रा—१॥ से २ माशे।

इसके सेवन से शूल, अफारा, मलावरोध, अग्निमाद्य, गुल्म, विद्रधि, प्लीहा, पांडु और विशेषत. ज्वर का नाश होता है।

अनुपान—वात मे उष्ण जल के साथ, पित्त मे खाड के साथ, कफ मे त्रिफले के क्वाथ और सुरा के साथ सेवन करना चाहिए।

हिंग्वादि चूर्णम् (१४) (च. द. शूला)—हीग, सौठ, मिरच, पीपल, कूठ, जवाखार और सेंधानमक समान भाग लेकर चूर्ण बनावे। इसे बिजौरे नीबू के रस के साथ सेवन करने से प्लीहा और शूल का नाश होता है। मात्रा—१ माशे।

हिंग्वादि चूर्णम् (१५) हा. स स्था ३ अ २८)—हीग, हर्र, बहेडा, आमला, सफेद जीरा, काला जीरा, चित्रक, भारगी, कूट, वायविडग, तुम्वरु, पोखरमुल, सोठ, देवदारु, जवाखार, सज्जीक्षार और पाचो नमक समान भाग लेकर चूर्ण बनावे। यह चूर्ण वातज गुल्म और शूल को नष्ट करता है। मात्रा—२ माशे।

हिंग्वादि चूर्णम् (१६) (ग नि. शूला)—हीग, तुम्वरु, सौंठ, मिरच, पीपल, अजवायन, चीतामूल, हर्र, जवाखार और पांचो नमक समान भाग लेकर चूर्ण बनावे।

इसे प्रात. काल मंदोष्ण जल के साथ सेवन करने से मल-मूत्र और वायु का रुकना तथा शूल का नाश होता है एव पाचन और दीपन है। मात्रा—२ माशे।

हिङ्ग्वादि चूर्णम् (१७) (वृ नि र शूला)—हीग १ भाग, बहेडा २ भाग, अदरक (सौंठ) ३ भाग और कटकरञ्ज बीज ४ भाग लेकर चूर्ण बनावें। इसे जल के साथ सेवन करने से शूल नष्ट होता है। गुड मे हर्र का चूर्ण मिलाकर खाने से या घी के साथ लहसन खाने से भी शूल नष्ट हो जाता है। मात्रा—२ से ३ माशे।

हिंग्वादि चूर्णम् (१८) (शा स ख २ अ ६)—हीग, सौंठ, मिर्च, पीपल, पाठा, हपुषा, हर्र, कचूर, अजमोद, अजवायन, तिन्तडीक, अम्लवेत, अनारदाना, पोखरमूल, धनिया, जीरा, चीतामूल, वच, जवाखार, सज्जीखार, सेंधानमक, सचल (काला नमक) और चव्य समान भाग लेकर चूर्ण बनावे। इस चूर्ण मे नीवू के रस की अनेक भावनाये देकर गोलियां भी बना सकते है। इसे भोजन के आरम्भ मे मद्य अथवा उष्ण जल के साथ सेवन कराना चाहिये।

इसके सेवन से पार्श्वशूल, हृदयशूल, वस्तिशूल, वातकफज गुल्म, अफारा, मूत्रकृच्छ्र, गुदपीडा, योनिशूल, ग्रहणीविकार, अर्श, प्लीहा, पाण्डु, अरुचि, छाती की जकडाहट, हिचकी, श्वास, काम और गलग्रह का नाश होता है। मात्रा -२ माशे। यह चूर्ण सर्व सम्मत और परीक्षित है।

हिंग्वादि चूर्णम् (१९) (वं से स्त्री रोग)—हीग, पीपल, दो प्रकार का लोध, भारङ्गी, मेदा, सौठ, रास्ना, अतीस और चव्य समान भाग लेकर चूर्ण बनावे। इसके सेवन मे योनिदोष और योनि शूल नष्ट होकर योनि मृदु हो जाती है। मात्रा—१॥ माशा।

हिंग्वादिचूर्णम् (२०) (भै र शूला)—हीग, अम्लवेत, पीपल, आमला, अजवायन, जवाखार, हर्र और सेंधानमक समान भाग लेकर चूर्ण बनावे। इसे सुरामण्ड (मद्य के ऊपर के स्वच्छ भाग) के साथ सेवन करने से प्रवृद्ध वातजशूल नष्ट होता है। मात्रा—१ माशा।



हिंग्वादि जलयोग (वृ. नि र. अतिसारा)—हींग, सोठ, वायविडङ्ग और सञ्चल (कालानमक) समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे २½ तोले पानी में मिलाकर पीने से भस्मातिसार का नाश होता है। मात्रा—४ रत्ती।

हिंग्वादि योग (१) (वृ नि. र छर्द्य)—हीग, और सारिवा मूल समान भाग लेकर चूर्ण बनावें। यह चूर्ण हर प्रकार की वमन को नष्ट करता है।

मात्रा—१-१ रत्ती चूर्ण १-१ घण्टे बाद पानी से दे।

हिंग्वादि योग (२) (वा. भ चि अ २५)—हीग, दन्तीमूल, हर्र, बहेडा, आवला, देवदारु, दारुहल्दी, भिलावा, सहजने की फली, कुटकी, चिरायता, वच, सौठ, काला अतीस, नागरमोथा, कूठ, सरल काष्ठ (चीर) और पाचो नमक १-१ भाग लेकर चूर्ण करें और फिर उसमे सबसे ४ गुना दही तथा उतना ही घी मिलाकर हाडी मे बन्द कर के इस प्रकार जलावें कि धुआ बाहर न निकले। तदनन्तर हाडी के स्वाग शीतल होने पर निकाल कर पीसलें।

इसे १। तोले की मात्रा मे मदिरा, दही, मांड, उष्ण-जल, अरिष्ट, आसव मे से किसी के साथ मिलाकर पीने से उदर रोग, गुल्म, अष्ठीला, तूनी, प्रतितूनी, शोफ, विसूचिका, प्लीहा, हृद्रोग, अर्श और उदावर्त का नाश होता है।

हिंग्वादि योगः (३) (भै० र० अम्लपित्त.)—हीग १ भाग, कतकफल (निर्मली के बीज) २ भाग और इमली की छाल ४ भाग लेकर चूर्ण बनावे और उसमे ८ भाग घी मिलाकर हाडी मे बन्द करके गजपुट में फूक दें। तदनन्तर स्वाग शीतल होने पर निकाल कर पीसलें। इसके सेवन से अम्ल पदार्थ खाने वाले रोगी का अम्लपित्त नष्ट होता है। मात्रा—१॥ से २ माशे।

हिंग्वादि योग (४) (व से. । मुख रोगा.)—हीग, कायफल, कसीस, सज्जी, कूठ और काली मिर्च समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसमे से जरासा चूर्ण पीडा वाले दात के नीचे रखने या मलने से दन्त पीडा शीघ्र ही शान्त हो जाती है।

हिंग्वाद्यं चूर्णम् (१) (शा. सं. । ख. २ अ. ६ हृद्रोगा.)—हीग, वच लवण, सोठ, पीपल, कूठ, हर्र, चीता, जवाखार, सचल (काला नमक) और पोखर मूल समान भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे जौ के क्वाथ के साथ सेवन करने से शूल और हृद्रोग का नाश होता है। मात्रा—१½ माशा।

हिंग्वाद्यम् चूर्णम् (२) (यो र । आमवाता)—हीग १ भाग, चव्य २ भाग, विडलवण ३ भाग, सोठ ४ भाग, काला जीरा ५ भाग और पोखरमूल ६ भाग लेकर चूर्ण बनावें। यह चूर्ण आमवात को नष्ट करता है। मात्रा—२ से ३ माशा।

हिंग्वाद्य द्विरुत्तर चूर्णम् (वृ नि र । आनाहा)-हीग १ भाग, वच २ भाग, चीता मूल ४ भाग, कूठ ८ भाग, सचल (काला नमक) १६ भाग और वायविडग ३२ भाग लेकर चूर्ण बनावें।

इसे मदोष्ण जल के साथ सेवन करने से अफारा, विसूचिका, हृद्रोग, गुल्म और ऊर्ध्व वायु का नाश होता है।

मात्रा—एक माशा।

हिंग्वादिगुटिका [1] [धन्व । शूला.]—हीग, अम्लवेत, सौठ, कालीमिर्च, पीपल, अजवायन, सेंधा नमक, विडलवण और सचल (काला नमक), इनका चूर्ण समान भाग लेकर सबको एकत्र मिलाकर बिजौरे के रस मे घोट कर गोलिया बनावें। इसके सेवन से वातज शूल नष्ट होता है। मात्रा—१-१½ माशा।

अनुपान—उष्ण जल।

हिंग्वाद्यवटकः (व से शूला)—हीग, सञ्चल (काला नमक), पाठा, जवाखार, सज्जीखार, सेंधा नमक, काला नमक और विड़ नमक, इनका चूर्ण समान भाग लेकर लहसन के रस मे खरल करके गोलिया बना ले।

इसके सेवन से हृदय शूल, पार्श्व शूल, मन्यास्तम्भ, और कुक्षिशूल का नाश होता है। माशा १¼ तोला, व्यवहारिक मात्रा—१-१½ माशा। अनुपान—उष्ण जल।

हिंग्वादिघृतम् (१) सु स । चि अ ४२ गुल्मा,)

हीग, सचल (काला नमक), जीरा, विड नमक, अनारदाना (या अनार की छाल), अजमोद, पोखरमूल, सोठ, मिर्च, पीपल, धनिया, अम्लवेत, जवाखार, चीतामूल,

कचूर, वच, अजमोद, इलायची और तुलसी समान भाग मिश्रित २० तोले।

२ सेर घी में यह कल्क और ८ सेर दही मिलाकर पकावे। यह वात गुल्म, शूल और आनाह को नष्ट करता है। मात्रा--एक से दो तोला।

हिंग्वादि घृतम् (२) (यो. त.। त. ३८)—हीग, सचल (काला नमक), सौठ मिर्च, पीपल दश-दश तोले। ८ सेर घी में यह कल्क और ३२ सेर गोमूत्र मिलाकर पकावे। यह घृत उन्माद को नष्ट करता है। मात्रा--एक से दो तोला।

हिंग्वादि घृतम् (३) (ग, नि.। भूतोन्मदा)—हीग, सरसो, बच, सौठ, मिर्च और पीपल २½-२½ तोले। २ सेर घी मे यह कल्क और ८ सेर गोमूत्र मिलाकर पकावे। इसे पीने तथा इसकी नस्य लेने और मालिश करने से देवग्रहजनित उन्माद नष्ट होता है।

हिंग्वादि तैलम् [१] [यो र। नासा.]—हीग सोठ, मिर्च, पीपल, वायविडग, कायफल बच, कूठ, छोटी इलायची, लाख, स्वर्ण जीवन्ती, इन्द्र जौ और तुलसी के फूल समान मिश्रित २० तोला २ सेर सरसो के तेल में यह कल्क और ८ सेर गोमूत्र मिलाकर मदाग्नि पर पाक सिद्ध करे।

इसे नासिका द्वारा पीने से नासा रोग नष्ट होते हैं।

हिंग्वादि तैलम् २ (भैं. र कर्ण रोगा)–हीग, तुम्बरु (नेपाली धनिया) और सौंठ समान भाग मिलित २० तोले २ सेर सरसो के तेल मे यह कल्क और ८ सेर पानी या (इन्ही द्रव्यो का क्वाथ) मिलाकर तैल सिद्ध करे। इसे कान मे भरने से कर्ण शूल नष्ट होता है।

हिंग्वादि लेपः १ (यो र सन्निपाता)—हीग, हल्दी, दारुहल्दी, इन्द्रायन की जड, सेंवानमक, देवदारु और कूठ के समान भाग मिलित चूर्ण को आक के दूव मे पीसकर लेप करने से कर्णमूल शोथ (सन्निपात ज्वर मे होने वाली कान को पीछे की सूजन) का नाश होता है।

हिंग्वादि लेप. २ (यो र शूला)—हीग, तैल, सेंधा-नमक और गोमूत्र को एकत्र मिलाकर पकाकर (गाढा लेप सा बनाकर) नाभि पर लेप करने से शूल नष्ट होता है।

(अथवा हीग और सेंधानमक के कल्क तथा गोमूत्र के साथ तेल पकाकर नाभि पर लगाने या नाभि मे भरने से भी लाभ होगा।)

हिंग्वादि लेप। ३ ।च द अग्निमाद्य)—हीग, सोंठ, मिर्च, पीपल और सेंधा नमक समान भाग लेकर (पानी के साथ) पीसकर पेट पर लेप करके दिन मे सोने से समस्त प्रकार के अजीर्ण नष्ट हो जाते हैं।

हिंग्वाद्यञ्जनम् (रा मा. नेत्ररोगा ३)—हीग या द्रोण पुष्पी (गूमा) के रस का अजन लगाने से कामला रोग शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

हिंग्वादि नस्यम् (वै जी वि १)—पुराने घृत में हीग मिलाकर उसकी नस्य लेने से चातुर्थिक ज्वर (चौथिया) नष्ट हो जाता है।

यूनानी विशिष्ट योग-

सऊय बरान किर्म वीनी—द्रव्य और निर्माण विधि—पीला एलुआ १ माशा, कपूर १ माशा, हींग १ माशा। इनको शरीफा के हरे पत्तो का रस १ तोला और आडू (शफ्तालू) के हरे पत्तो का रस १ तोला मे पीसकर एक तोला गुल रोगन मिलाकर नासिका मे टपकाये। यदि गुल रोगन के स्थान मे तारपीन का तैल सम्मिलित करें तो अधिक लाभ हो।

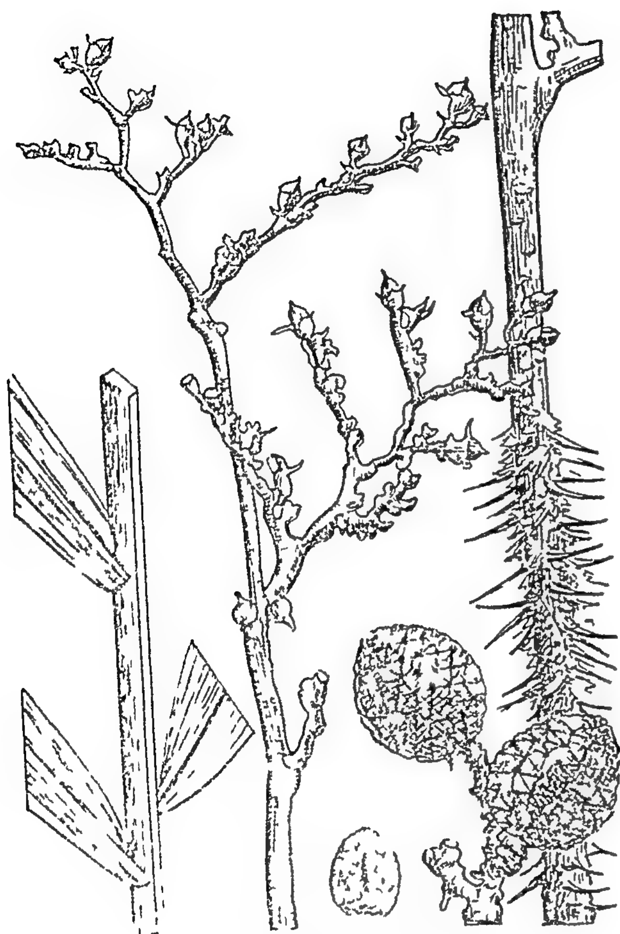
हब्ब इख्तिना कुर्रिहम—द्रव्य और निर्माण विधि—कस्तूरी १ रत्ती, हीग, कपूर, तगर (असारुन), बालछड़ प्रत्येक १ माशा। सबको बारीक पीसकर चना प्रमाण की गोलिया बनावे।

मात्रा और अनुपान—१ गोली उपयुक्त अनुपान से उपयोग करें।

गुण तथा उपयोग—अपतन्त्रक के लिए उत्कृष्ट कोई अन्य औषधि अब तक अनुभव मे नही आई।

द्वितीय हब्ब इख्तिना कुर्रिहम—द्रव्य और निर्माण विधि—जुन्द बेदस्तर ७ माशा, हीग, कस्तूरी, ऊदसलीब प्रत्येक ४½ माशा सबको पीसकर अर्क दालचीनी या अर्क सौफ के साथ उडद प्रमाण की वटिकायें प्रस्तुत करे।

मात्रा और अनुपान—२ गोली प्रतिदिन सवेरे अर्क सौंफ के साथ खिलायें।



हीर दखण नं०२

CALAMUS DRACO WILLD

मात्रा—बीजक निर्यास निष्कर्ष (Tinct Kino) ३० से ६० बूद · चूर्ण १ माशे से ४ माशे तक।

गुण धर्म और प्रयोग–

प्रबल ग्राही, रक्त स्तम्भक और व्रणरोपण। ग्राही (आकुञ्चन) क्रिया स्थानिक बाह्य प्रयोगो में भी प्रतीत होती है।

रस तत्रसार व सिद्ध प्रयोग सग्रह द्वितीय खड में इस गोद के २ प्रयोग रक्तस्रावरोध और प्रवाहिका नाशार्थ दिये है। बीजक निर्यासादि चूर्ण और भुवनेश्वरी वटी। इनके अतिरिक्त बोल बद्ध रस और बोल पर्पटी मे भी बीजाबोल के स्थान पर हीरादोखी गोद मिलाने पर रक्त स्तम्भन गुण अधिक दर्शाता है। बीजक निर्यास निष्कर्ष—(Tinct kino) हीरा दोखी गोद १० भ ग, ग्लिसरीन १५ भाग, वाष्पजल २५ भाग, मद्यार्क (९०%) १०० भाग तक। पहले ग्लिसरीन को वाष्प जल में मिलावे। फिर हीरा दोखी में थोडा जल मिलाकर गाद जैसा करे। अच्छी तरह मिल जाने पर शेष जल मिला लेवे। फिर गोद से ५ गुना मद्यार्क मिलाकर १२ घण्टे रहने देवें। पश्चात् अच्छी तरह चलाकर छान लेवे। बाद मे और मद्यार्क मिलाकर १०० भाग पूरा करे।

मात्रा—३० से ६० बूद, दिन मे ३ बार, रक्तस्राव रोधनार्थ।

उपयोग—हीरादोखी गोद रक्तातिसार, रक्तप्रदर, अत्यार्तव, रक्तार्श, उर क्षत, रक्त वमन, नासारक्तस्राव आदि मे व्यवहृत होता है। सद्योव्रण (घाव लगने) पर इसका चूर्ण दवा देने से या निष्कर्ष लगाने से रक्तस्राव तुरन्त बन्द हो जाता है और घाव भी मिट जाता है।

(गा औ र से साभार)

अहितकर—इसकी अधिक मात्रा गुर्दे, फेफडे और तिल्ली को नुकसान पहुचाती है।

निवारण—कतीरा। (व. च.)

हीराबोल—देखिये बोल' भाग ५ के पृष्ठ २३५ पर।

हुरा (EXCOECARIA AGALLOCHA)

यह एरडादिकुल (Euphorbiaceae) का एक वृक्ष होता है। अग्लोचा=सुगन्धयुक्त लकड़ी वाला वृक्ष। सर्वदा हरा, क्षीरी, छोटा वृक्ष या बडी झाडी। पान-बीच मे मासल और चिमडे, २ से ४ इच लम्बे, १½ से २ इच चौडे अन्तर पर, लगभग लम्ब गोल, नोक युक्त, अखण्ड। वृन्त आध से सवा इच लम्बा। गिरने के पहले कितने ही पुराने पान गहरे लाल हो जाते है। सूखने पर हलका भूरा फूल सूक्ष्म, सुगन्धयुक्त, पीले हरे। नर फूल वृन्त रहित १ से २ इच लम्बी मञ्जरी मे। मादा पुष्प वृन्तयुक्त, कलङ्गी मे, मादा फूल की कलङ्गी आधा से एक इच लम्बी अलग। डोडी का कद अति विविध गहराई मे ३ खण्ड युक्त, लगभग आधा इच तक बडे। बीज चिकने लगभग



हुरा
EXCOECARIA AGALDOCHALINN

गोल। छाल ताजी होने पर उसमे से दूध जैसा रस निकलता है। दूध जम जाने पर काला बन जाता है। लकडी सफेद और नरम होती है। पुष्प और फल मई-जून मे।

उत्पत्ति स्थान—

बङ्गाल, बिहार, मद्रास, कर्णाटक, अण्डमानादि।

नाम-

स-धूम्रवृक्ष। हिं-हुरा। ब-गगवा, गेंगवा, गेरिया। म-गेवा, पु गाली, सुरिंद। ओ-गोवन। मला.-गेत्रा, सुरन्ड कु गली। क-ह्रा, हरो। ता-अगदिल,अगि, आम्वालत्ति। ते-चिल्ला, टेल्ला। अ-ब्लाइडिंगट्री (Blinding Tree) ले-एक्स कोइकेरिया अग्लोचा (Excoecaria Agallocha Linn)।

उपयुक्त अङ्ग—छाल।

गुण धर्म और प्रभाव—

दूध तीव्र रेचन और विषहर है। त्वचा से लगजाने पर दाह उत्पन्न करता है। नेत्र मे चला जाने पर नेत्र सूज जाते है। कभी आख फूट जाती है दूध लगजाने पर दही या मक्खन का अजन कर लेना चाहिए एव दही वाली पट्टी बांधनी चाहिए। नाक को लग जाय तो भयकर जलन करता है और सूज भी जाता है। राल कामोद्दीपक और धातुपौष्टिक है।

उपयोग-

कुष्ठ, गलत कुष्ठ, व्रण और त्वग् रोग पर दूध को तैल मे मिलाकर लेप किया जाता है। कुष्ठ पर दूध लगाने से पक कर कीटाणु नष्ट हो जाते हैं, फिर आराम हो जाता है।

विच्छू के विष पर दूध का लेप किया जाता है। पानो के क्वाथ से व्रण को धोने पर कीटाणु नष्ट हो जाते हैं। अपस्मार मे पानो का क्वाथ दिया जाता है।

विशेष—मुख्यमूल और जमान के पास के तने की छाल के भीतर से राल सदृश मिलता है। यह नरम, हल्का और लाल रङ्ग का होता है। हुरे की लकडी का धुआ नेत्रो को लगे तो सूज जाते है। बाजार मे विकने वाला तगर हुरे की उपजाति का है। वह माडागास्कर और जजीबार से भारत मे आता है। औषधि रूप से पान, छाल, राल और दूध उपयोगी है।

(गा० औ० र० से साभार संकलित)

हुर-हुर श्वेत (GYNANDROPSIS PENTAPHYLLA)

यह गुडूच्यादि वर्ग और वरुणादि कुल (Capparidaceae) की वनस्पति है। यह खेत, खण्डहर और परती जमीन तथा गन्दी भूमि मे अधिक उत्पन्न होती है। इसका क्षुप सीधा २ से ४ फीट तक ऊचा होता है। इसकी साखें टेढी-मेढी और रोमयुक्त होती हैं। इसके पत्ते प्राय पाच दल वाले होते हैं और प्रत्येक दल डेढ दो इच लम्वा अण्डाकार और अणीदार होते हैं। पत्रदण्ड दो इच लम्वा होता है। कभी-कभी सात दल वाले और कही तीन ही



दल होते हैं। डण्डी के अन्त वाले भाग मे छोटे छोटे त्रिदल पत्ते सटे से रहते है और इस पर क्रमश फल और फलिया लगा करती है। फूल सफेद रग के आते है और फलियां २-३ इच लम्बी और गोल होती है। इनमे से राई के समान कालापन मिश्रित भूरे रङ्ग के बीज निकलते है। बरसात का पानी पडने पर बीज अकुरित होकर पौधे के रूप मे बढते है और बरसात के अन्त में इसके क्षुप पुष्पफलादि युक्त बहुत देखने में आते हैं और वसन्त ऋतु तक वे नष्ट हो जाते हैं।

उत्पत्ति स्थान—

यह बङ्गाल, बिहार, उडीसा, तिरहुत, चम्पारन तथा गरम प्रदेशो मे अधिक उत्पन्न होती है। सिलोन की झाड़ी और खेतो मे बाहुल्यता से मिलती है।

नाम—

स.—ब्रह्म सुवर्चल, ब्रह्म सुदुर्लभा, सूर्य्यावर्त, अर्कपुष्पिका इत्यादि। हि—ब्रह्म सोचली, ब्रह्मसोचली, सोचली, हुरहुर, हुलहुल, करालिया। ब.—बनशलते, हरहुरिया, हुरहुरिया, हुडहुडिया। राज—हुलहुल, बगरा। सन्ताल—सेतकट अरक। म.—मावली। उ. प्र—कठल हरहर। गु—सूर्य्यमुखी फूल। सिंध—किनरो। ता—वेलर, नेरवेल्ला। ते—वामित वेलकुरा। मलय—तैवेला, करवेला। बो—तिलवण, फडुघु। ले—जिनान्ड्रोप्सिस पेन्टाफिल्ला (Gynandropsis pentaphylla D C) व (Gynandropsis gynandra [Linn] Briquet) पीले फूल की हुरहुर को लेटिन मे (Cleome viscosa Linn) कहते है।

रासायनिक संगठन—

इसके क्षुप मे उडनशील तैल रहता है, वह अधिक गरमी लगने पर उड जाता है। बीजो का तैल यन्त्रो से निकालने पर हरा तैल निकलता है। इसका गुण-धर्म राई तथा सरसो के तैल के समान है। सफेद हुलहुल के बीजो मे से २५% हरा गाढा तैल निकलता है। उसमे अम्ल सत्व ६ ४ प्रतिसहस्त्र, वसापरिवर्तित, आयोडीन, उग्रवास वाला उड्डयनशील तैल और मृदु राल मिलते है।

उपयुक्त अङ्ग—बीज पान और पचाङ्ग।

मात्रा—बीज का चूर्ण १½ से २ माशे। बालको को १ से २ रत्ती।

गुण-धर्म और प्रयोग—

सक्षेप मे—रस- कटु। वीर्य-- उष्ण। विपाक-कटु। दोषघ्नता--वात कफ है।

हुर-हुर- कटु, उष्ण, वातहर, गुल्म, उदर, कर्णशूल, कृमि, ज्वर का नाशक है। (रा नि)

बीज--उत्तेजक, स्वाद मे कड़वा, चरपरा, उष्ण वीर्य, अग्निदीपक, ग्राही, दाहजनक, स्वेदल, उदर वात शामक, गोल कृमियो को गिराने वाला और चर्म नाशक है।

बीजों का तैल—उष्ण, स्वेदल, दीपन, उदर वात हर, कृमिघ्न और चर्म रोग नाशक है। वातराई के समान तीक्ष्ण, गुल्म, उदर शूल, आफारा, प्लीहा वृद्धि; उदर रोग पर प्रयोजित होता है। बालको के आक्षेप पर हितावह है।

पानो का शाक—अर्श और वात रोगी के लिए हितकर है।

पानो का रस—शोथ शामक। मूल--कृमिघ्न।

नव्य मतानुसार—

सफेद और पीली हुल-हुल के बीजो की क्रिया राई के समान है। पीली के पान अधिक उग्र हैं, पीली के पानो के लेप से त्वचा तुरन्त लाल हो जाती है। सामान्यत यह दाहजनक, दीपन, उत्तेजक और कृमिघ्न है।

मूल—उत्तेजक और स्वेदल है।

पचाङ्ग चूर्ण—वातहर, दीपन, पाचन, स्वेदजनक और उत्तेजक है। (आ० नि०)

उपयोग—

गोल कृमियो को गिराने के लिए पीली हुल-हुल के बीज उपयोगी है। अन्तर शोथ कम कराने के वास्ते इसके पानो का लेप राई की अपेक्षा अधिकतर कार्य करता है। बीजो को नीबू के रस या सिरके में पीसकर लेप करने से दद्रु, कण्डू, पामा, व्युची आदि रोग दूर होते हैं। हुल हुल के बीज और हीग को पीसकर लेप करने से जुए मर जाती हैं। त्वचा मे उग्रता लाने और फाला उठाने के लिए उसमें राई के समान गुण रहा है।



पानो का रस तैल मे मिलाकर वधिरता मे और कर्ण पाक पर कानो मे डाला जाता है। त्वचा मे लाली लाने और फाला उठाने के लिये पानो की पुल्टिस बनाकर बाधी जाती है।

प्रयोग—

शीत ज्वर पर (अ)—दाहिने हाथ की कलाई के जोड पर बाहर की ओर हुल-हुल के पानो की १ तोले की टिकिया बांधने से वहां पर ३-४ घण्टे मे एक फाला हो जाता है, फिर ज्वर दूर हो जाता है। फाला हुआ है, उसे सुई से फोड कर उस पर घृत लगा देना चाहिए। फाले मे से जल निकाल डाले, किंतु ऊपर की त्वचा को न निकालें, यह प्लेग की गाठ पर भी हितावह है।

(आ) बीजो का चूर्ण सुदर्शन अर्क के साथ सेवन कराने से ज्वर जल्दी शमन हो जाता है। या ताजे सफेद हुल-हुल का रस ½ से १ तोला देने से उत्तेजना आती है और ज्वर का ह्रास हो जाता है।

अर्श रोग पर—बीज का चूर्ण २-२ माशे मिश्री मिला कर प्रात: साय सेवन करते रहे, तथा हुर-हुर के पत्तो के फाण्ट से आबदस्त लेते रहे।

आक्षेपक वातहर—हुल-हुल के पानो का फाण्ट दिन मे २ या ३ वार पिलाने से बालको के अङ्गो का खिचाव दूर हो जाता है।

उदर कृमि पर—बीजो का चूर्ण दिन मे दो बार थोडे गुड के साथ सेवन करावे। फिर चौथे रोज सुबह एरण्ड तैल का जुलाब देने से आतो से गोल कृमि निकल जाते हैं। सूक्ष्म उदर कृमि हो तो बीजो का चूर्ण जल के साथ देने से ही मर जाते हैं। एव उनकी नयी उत्पत्ति बन्द हो जाती है।

प्लीपा वृद्धि—बीजो का चूर्ण, काटेदार करञ्ज (लता करञ्ज) के पानों के रस के साथ दे, दिन में दो बार देते रहने से थोडे ही दिनो मे प्लीहा कम हो जाती है।

उदर शूल पर—बीजों का तेल मिश्री या बताशे मे देने से शूल दूर हो जाता है।

कर्ण शूल पर—सफेद हुलहुल के पानो का रस कान में डालने से कर्णशूल दूर हो जाता है। किन्तु इससे बहुत जलन होती है अत तैल या शहद मिलाकर डालना चाहिए।

कर्ण पाक पर—पीली हुलहुल के पानो के स्वरस को तैल मे मिला स्वरस जलाकर तैल सिद्ध करे। उस तैल को कान मे डालने से घाव भर जाता है और पूय श्राव बन्द हो जाता है।

नेत्र पीडा—हुलहुल के पानो की पुल्टिस बना कपडे मे लपेट कर नेत्र पर बाध देने से वेदना दूर होती है और शोथ शमन हो जाता है।

व्रण पर—हुलहुल के क्वाथ से व्रण को धोने से कीटाणु मर जाते हैं और घाव का सत्वर शोधन होता है।

दाद पर—हुलहुल का स्वरस मलने से कीटाणु नष्ट होकर दाद दूर हो जाता है।

गलगण्ड—सफेद हुलहुल के पान और लहसुन को पीस पुल्टिस करके बाधने से पच्यमान गलगण्ड फूल जाता है।

ताम्र भस्म—इसके पुटो से बनने वाली ताम्र भस्म सुन्दर नीले रङ्ग की होती है, वह विषम ज्वर, प्लीहावृद्धि, यकृद्वृद्धि, यकृद्दाल्युदर और अन्य उदर रोगो मे लाभ पहुँचाती है।

रौप्य भस्म—हुलहुल के पुटो वाली रौप्य भस्म नेत्र शूल पर विशेष हितकर है, ऐसा कितने ही चिकित्सको का अनुभव है। (गा औ र से साभार)

बाइन्टे पर—इसके पत्तो के काढ़े को ५-६ तोले की मात्रा से दोनो समय सेवन कराने से लाभ होता है।

सब प्रकार के विष पर—इसके १½ तोले बीजो को जल मे पीसकर पिलाना चाहिए। —अ० बू० द०

पानीझला—इसके पत्तो का काढा छ तोले की मात्रा मे दिन मे दो बार पिलाने से पानी झरा या पैरा टाइफाइड ज्वर छूटता है।

आधाशीशी—हुलहुल के पत्तो के रस मे हुलहुल के बीजो को खरल करके कपाल पर दो तीन दिन तक लेप करने से आधाशीशी की वेदना मन्त्र शक्ति की तरह बन्द हो जाती है।

बहुमूत्रता पर—हुलहुल के बीजो को अजवाइन और गुड़ युक्त सेवन करने से बहुमूत्रता दूर होती है।

दन्त शूल पर—अगर किसी की दाढ मे कीट लगी हो तो इसके पत्तो का रस दाढ मे भर देने से कीड़ा मर जाता है और दर्द भी दूर हो जाता है।

पीनस पर—इसके स्वरस की नस्य देने से पीनस के कीडे मरकर झड़ जाते है।

कफ पर—इसके पचाग का चूर्ण सेवन करने से कफ नष्ट हो जाता है।

शीत ज्वरे—हुलहुल का रस और मकोय का रस मिलाकर ज्वर मे प्रथम हाथ पैरो मे मालिश करने से शीत ज्वर छूट जाता है।

बिच्छू विष पर—इसके स्वरस या बिच्छू के काटने पर नस्य देते हैं तथा नमक युक्त कान में भी डालते हैं।

—वैद्य श्री दुर्गाप्रसाद जी शर्मा म आयु. से साभार

अहितकर—यदि यह ज्यादा प्रयोग किया जाय तो पित्त प्रकुपित हो जाता है और रोगोत्पन्न करता है। इसमें पित्त शामक उपचार करना चाहिए।

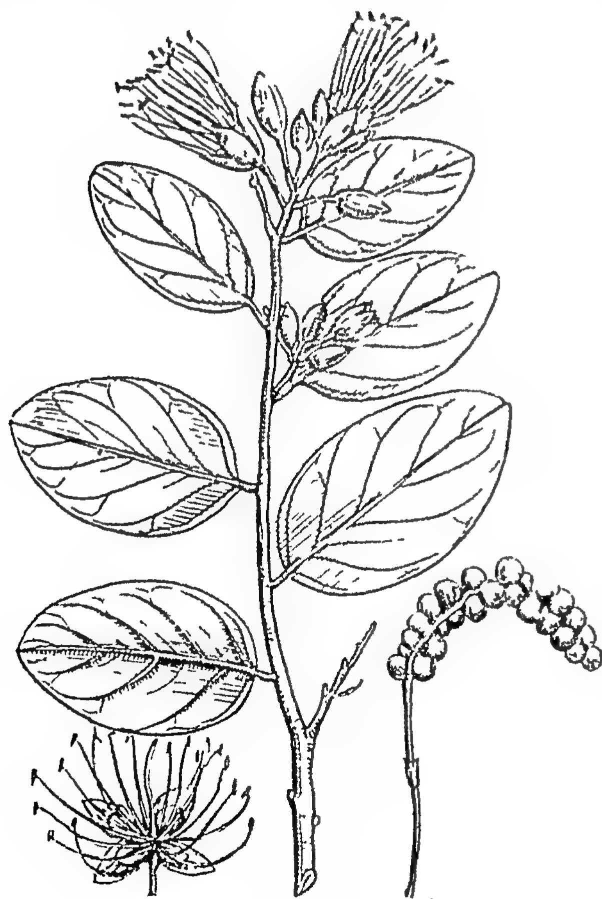
—डा० व० सि०

हुलहुल शाक—देखिये इसी भाग मे हिलमोचिका। हू (हु) (फारीकून) देखिये 'वत्सनाभ' भाग ५ पृष्ठ ४० पर।

हृत्पत्री—देखिये—डिजीटेलिस' भाग ३ पृष्ठ २८३ पर।

हेमकन्द (Maerua Arenaria)

यह वरुणादि कुल (Capparidaceae) की एक बेल होती है। एरीनरिया=रेती मे उगने वाला। यह जङ्गल



हेमकन्द
MAERUA ARENARIA HK & ETH.

मे होता है इसका कन्द १½–२ सेर का होता है। इसको जङ्गली लोग काठियावाड मे बेचने के लिये बाजार मे लाते हैं। स्वाद मुलहठी के समान कुछ मधुर और राई जैसा चरपरा है। इसे टुकडे किये बिना रख देने तो यह सड जाता है। इस हेतु से आने पर तुरन्त रुपये के समान पतले टुकडे करके सुखा देना चाहिए। फिर वायु न लगे, उस तरह बन्द बरतन मे रखे या अर्क निकाल लेवें। बम्बई मे यह गुजराती पसारियो के यहा मिलता है।

इसकी बेल कुछ कठिन होती है। वृक्ष आदि आश्रय स्थान पर ऊचाई तक चढ जाती है। डण्डी श्वेताभ और कुडकीली। पान—लम्ब गोल विविध आकार के। पुष्प हरी आभा वाले सफेद। विशेषत शीतकाल में आते हैं। फली—काली मिर्च की मजरी के समान। मूल मे से रतालू जैसे आकार के सफेद रग के कितनेक उपमूल निकलते हैं। वे अगुली से लेकर हाथ की कलाई जैसे मोटे होते हैं, जो मूल मिट्टी वाली गहरी भूमि मे हो वे पतले, विषम आकार की छोटी मोटी गाठो वाले और १ से ३ फीट लम्बे होते हैं। ऊपरकी छाल बहुत पतली भूरे रग की। मूल के बीच में एक सछिद्र कडकीली सफेद पतली खडी सलाका। गन्ध–पीसी हुई राई के समान उग्र। स्वाद पहले मधुर फिर चरपरा लगता है।

पान—अन्तर पर आध से साढ़े तीन इच लम्बे और ½ से २½ इच चौडे। फली २ से ५½ इच लम्बी। बीज—तपखिरिया या भूरे रग का, मध्य भाग मे सकुचित। फली

धार डोरी से गुथी हुई माला के समान। चित्रावलोकन कीजिए।

उत्पत्ति स्थान—

कटीले और जमीन पर छाने वाले बबूलों की झाडी में, बाड़ो मे और विशेष करके कीचड वाली जमीन मे हेम कन्द उगता है। यह पश्चिमी हिमालय, मध्यभारत, पञ्जाब, सिंध, दक्षिण भारत, कच्छ और काठियावाड मे होती है।

नाम—

स.—दग्धकन्द, धवलकाद, विसर्प वेरी। हि—हेमकन्द। गु.—दूधियो, हेमकन्द। म—विकट। काठि—घोलोकटकियो, हेमकन्द। कच्छी—वोरो पिञ्जारो। ते—पट्टतिगे, भूचक्रम्। ता—भूमि चक्कराई। लै—माइरुआ एरीनरिया (Maerua Arenaria Hook)।

उपयुक्त अङ्ग—पचाग और कन्द।

मात्रा—कन्द चूर्ण १ से २ माशा तक।

गुण धर्म और प्रयोग—

यह उष्ण, पाचक, विषघ्न, कीटाणु नाशक, रक्तशोधक, वेग शामक और कफघ्न है।

यह बालको के लिए अति उपयोगी औषधि है। काठियावाड-गुजरात मे यह घरेलू औषधि के रूप से प्रयोजित होती है। यह विषर्प की श्रेष्ठ औषधि होने से इसे विसर्प बैरी संज्ञा दी है।

उपयोग—

यह बालरोग की निर्भय औषधि है। प्राचीन ग्रन्थो में इसका उपयोग हुआ है या नही, यह नही जाना जाता। संस्कृत नाम जो दिये हैं, वे सब गुण-धर्म के अनुसार नये दिये हैं। सौराष्ट्र और गुजरात मे दीर्घकाल से घरेलू औषध रूप से व्यवहृत होता है जिन स्त्रियों के शरीर मे रतवा हो उनको इसका मूल दूध मे पीसकर पिलाते हे जो सार्सापरिला के समान कार्य करता है।

प्रयोग—

विषर्प पर—इसका उपयोग उदर सेवन और बाह्य लेप रूप से होता है। गुजरात मे यह विषर्प प्रसिद्ध औषधि मानी जाती है। बालक को दूध मे घिस कर पिलाते है एव लेप भी करते है।

बालको के प्रतिश्याय पर—प्रतिश्याय मे और छाती मे कफ वृद्धि हो गयी हो तो इसके मूल को दूध में घिसकर छाती पर लेप किया जाता है। साथ में ज्वर हो तो घिसकर पिलाया जाता है।

बालकों के अपचन—(अ)—बालको को दूध न पचा हो, वमन और सफेद दस्त होते हो तो हेमकन्द की फली को दूध मे घिसकर पिलावें।

(आ)—फली को बीज सह जला राखकर उसे दूध मे मिलाकर पिलाने से अपचन जल्दी दूर हो जाता है। मूल और फली के अभाव मे डांडी, पान या फूल भी व्यवहृत किये जाते हैं।

क्षयरोग मे प्रस्वेद पर—राजयक्ष्मा मे दूसरी और तीसरी अवस्था मे रात्रि को प्रस्वेद बहुत आता है। प्रस्वेद आने पर निर्बलता बढ़ जाती है। ऐसे रोगियो को हेमकन्द का चूर्ण १॥ से २ माशे जल के साथ देने से प्रस्वेद कम हो जाता है।

जीर्ण ज्वर पर—हेमकन्द का चूर्ण १॥-१॥ माशे दिन में २ बार गिलोय सत्व और शहद के साथ देने से १ सप्ताह मे ज्वर दूर हो जाता है।

व्रण और फाले पर—हेमकन्द को जल से घिसकर लेप करे।

श्वास-कास पर—इसका चूर्ण शक्कर के साथ देने से कफ शिथिल होकर सरलता से निकल जाता है। कफ प्रधान तमक श्वास मे इसका अर्क पिलावें या १॥—१॥ माशा चूर्ण १-१ घण्टे तक २-३ बार निवाये जल के साथ देवे। (गां औ र से साभार)

प्लेग पर हेमकन्द की जड पानी या दूध मे पीसकर प्लेग की गाठो पर बहुत से लोग लेप करते है।

(व व. गुजराती से)



हैमवती बचा (IRIS VERSICOLOR)


हैमवती बचा
IRIS VERSICOLOR LINN

यह कुसुम कुल (Iridaceae) की एक जाति की वनस्पति है। मूल-कन्द। पुष्प—नील, श्वेत, श्यामवर्णी। पुष्प रंग भेद से तीन प्रकार के होते हैं। चित्रावलोकन कीजिए।

उत्पत्ति स्थान–

यह भारत में काश्मीर और ईरान में बहुतायत से प्राप्त होती है।

नाम—

स.—हैमवती वचा। हि.—हैमवती वचा, बालवच। गु.—बालवच। म.—वालेखंड। ले.—आइरिस वरसी-कोलोर (Iris versicolor Linn)।

उपयुक्त अङ्ग—मूल।

गुण धर्म और प्रयोग–

मात्रा—चूर्ण २ से ४ माशे। अनुपान मधु।

रस–महाकषाय। गुण—नेत्रानीय, कफ निःसारक। वीर्य–उष्ण। विपाक–कटु। शमन–कफपित्त। रोगोपयोग–प्रतिश्याय, कास, आमवात। (संकलित)

हैम सागर (KALANCHOE LACINIATA)

यह धन्वन्तरि [पर्ण बीज] कुल (Crassulaceae) की एक वनस्पति होती है। इसकी बडी झाडी होती है। इसकी ऊचाई १-२ मीटर तक होती है। इसका तना मांसल होता है। पत्र काण्ड के दोनो ओर पक्षाकार होते है। पत्र लम्बे और करोत के समान दाते युक्त। फूल—पुष्पदण्ड के गुच्छ बद्ध रूप मे होते हैं। पुष्प खिलने पर झाड फूलो से ढक जाता है और सुन्दर दिखाई देता है। पुष्प का बहिर्व्यास ४, पुष्पदल ४, पुष्पदल मूल नल के समान, जिस तरह कलमी शाक के पुष्प दीखते है। पुंकेसर समस्त प्राय. समान। वर्षाकाल मे फूल और शीत-काल मे फल होते हैं।

नाम–

स—हेमसागर।। हि.—व—हेमसागर। ता -माला कल्लि। बोम्बे—जखम हयात। म –आराम साराम। ले –कलन चोई लेसिनिएटा (Kalanchoe Laciniata D c)

उपयुक्त अङ्ग—पत्र।

गुण धर्म और प्रभाव—

इसके रसदार पत्ते व्रण और जखम पर लगाने से



वहुत लाभ पहुचाते है। ये जलन को दूर करते है और जख्म को जल्दी भर देते है। एन्सली का कथन है कि—"मैं यह विश्वास के साथ कह सकता हू कि व्रण को साफ करके भरने मे तथा सूजन को दूर करने मे इसके पत्ते वहुत उपयोगी है। इसका रस रगड़ और अग्नि से जले हुए स्थान पर लगाने से भी वहुत लाभ पहुँचाता है। ताजा घाव और रगड़ पर एक रक्तश्राव रोपक औषधि की तरह इनका उपयोग किया जाता है।"

उपयोग—

विगड़े हुए फोड़े—इसके पत्तो का लेप करने से बिगडे हुए फोडे सुधर जाते है।

पित्त शोथ—इसके पत्तो का लेप करने से पित्त शोथ विखर जाती है।

अतिसार—इसके पत्तो का कल्क दुगुने पिघले हुए मक्खन मे मिलाकर पिलाने से अतिसार और आमातिसार मिटता है।

पथरी—पथरी वाले को भी अतिसार वाला उक्त प्रयोग लाभ पहुचाता है।

अग्नि से जलना—मोच और अग्नि से जले हुए स्थान पर इसका लेप करने से शान्ति मिलती है।

ताजे घाव—ताजे घाव और रगड़ पर इसका लेप करने से खून का बहना वन्द हो जाता है। किसी घाव पर इसके रस मे भिगोये हुए कपडे को बधा रखने से वह बहुत जल्दी भर जाता है। दूसरी औषधियों से इतना जल्दी नही भरता है। (ब च.से)

कोकन मे इसका रस पैत्तिक अतिसार मे प्रयोग करते हैं। (डीमक)।

क्षत को विशुद्ध करने मे और प्रदाह को मिटाने के वास्ते यह एक मूल्यवान औषधि है। (डा. एन्सली)

(भा व ब से साभार सकलित)

हेरम्ब (EPICARPUS ORIENTALIS)

हेरम्ब का वृक्ष वडा होता है। इसके पत्ते वेर के समान होते हैं। इसकी लकडी दतून करने के काम में आती हैं।

उत्पति स्थान—

बगाल, दक्षिण,दक्षिण महाराष्ट्र मे यह पैदा होता है।

नाम—

स —हेरम्ब, कटकी, खरपत्र, दत धावन। हिं—हेरम्ब वज्रदती। म —दातणी, हेरम्ब वृक्ष। गु —वज्रदन्ती। ले एपिकार्पस ओरीएन्टेलिस (Epicarpus orientalis)।

गुण-धर्म-और प्रभाव—

हेरम्ब कफ और दात को नष्ट करने वाला होता है। इसकी जड़ वमनकारक होती है। इसकी लकडी का दतून दातो को मजबूत करता है।

(शा वि.)

होलोंग (DIPTEROCARPUS PILOSUS)

यह सर्जरसादिकुल (Dipterocarpaceae) का एक बड़ी जाति का वृक्ष होता है।

उत्पत्ति स्थान—

यह सिलहट, चटगाव, ब्रह्मा, अण्डमान द्वीप पुञ्ज और आसाम मे पैदा होता है।

नाम—

आसाम—होलोंग। ले —डिप्टेरोकार्पस पिलोसस (Dipterocarpus Pilosus Roxb.)।

उपयुक्त अङ्ग—फूल।

गुण—धर्म और प्रभाव—

इसके फूल सुजाक, पुरातन प्रमेह और इसी प्रकार की दूसरी मूत्रेन्द्रिय सम्बन्धी वीमारियो मे उपयोग में लिए जाते है। चित्रावलोकन आगामी पृष्ठ पर करें

(ब. च. से

हंसराज नं. १ (Adiantum Lunulatum)

यह गुडूच्यादि वर्ग और हसराजादि कुल (Polypodiaceae) का क्षुप होता है। एडियेण्टम—वालसदृश शिरा वाले पर्ण। लुनुलेट्म—अर्धचन्द्राकार पर्ण। वर्षायु पुष्प रहित क्षुप। ऊचाई ४ इच से २ फीट तक। पान (Fronds) मूल पर रहे हुए छोटे कन्द (गाठ) से निकले हुए पत्र दण्ड पर। पत्र दण्ड के दोनो ओर थोडी दूर पर। पहले पीले फिर हरे, अन्त मे तेजस्वी हरे—काले। पत्र वृन्त—पतला लम्बा पौन से एक इच चौडा, किनारा अर्धचन्द्राकार, अनेक सूक्ष्म शिरायुक्त। वीज (Spores) पान के पिछली ओर किनारे पर चिपके हुए, सूक्ष्म पीटिका सदृश (इसे वोने पर क्षुप निकलता है) मूल और वृन्त लाल। पान—नीचे की ओर वडे, ऊपर की ओर क्रमश छोटे-छोटे होते हैं। यह एक पत्र उद्भिद् है। पत्र कुछ कृष्ण वर्ण चमकदार होते है। पत्रशलाका पतली और लम्बी होती है, इसके दोनो ओर पान आते हैं। पान एक ओर भग्न होते हैं। इसके किनारे और पत्र वृन्त चिकने और चमकीले होते है। शलाका कुछ समय वाद काली हो जाती है। पत्तो का किनारा $\frac{3}{4}$ इच से $1\frac{1}{2}$ इच लम्बा और आधा से एक इच चौडा होता है। वृन्त की ओर का किनारा शलाका पर सीधा अथवा विषम होता है। ऊपर का किनारा गोलाई लिये हुए और वहुधा खाचेदार होता है। पत्तो के किनारे मे वारीक खसे होती हे। इनके ऊपर की किनारी के सिरो पर पीछे से वारीक झिल्ली आयी हुयी होती है, जिसमे रज ढकी रहती है।

विशेष वर्णन—हसराज के पान खुलने के पूर्व एक गुच्छे के मानिन्द किनारे अन्दर की ओर मुडे हुए होते है। यह वनस्पति अपुष्पा है और इसके वास्तव मे खरे फूल नही होते है परन्तु जिस उत्पत्ति द्रव्य मे से इसकी पुनरुत्पत्ति होती है उस द्रव्य को धारण करने वाली रज (Spores) और उसके ऊपर की सूक्ष्म झिल्ली (Sporanges) पान के पीछे की ओर आती है, जो देखने में पान के पीछे सूक्ष्म जन्तु लगे हुये हो या दाने उठे हुये हो ऐसा जो दिखाई देता है, उसको (Spores) स्पोर्स कहते हैं। इस परत के अन्दर जा रज होती है उसमे सपुष्प वनस्पति के बीज से प्रत्युत्कर होते है। किन्तु उसमे एक हरे पान जैसी जीभी (Prothallas) उत्पन्न करने की शक्ति होती है और इस जीभी मे पुनरुत्पत्ति करने के साधन इन्द्रिय और उत्पत्ति द्रव्य रहे हुए होने हैं।

भेद—पत्तो के आकार भेद मे इसकी अनेक जातिया होती हैं। वैज्ञानिक शोध मे इस कुल की सात जातिया मालूम हुई हैं, उनमे मे मुख्य दो और हैं उनका सचित्र वर्णन आगे दे दिया गया है।

उत्पत्ति स्थान—

यह उत्तर भारत के सब प्रदेशो मे, सौराष्ट्र, दक्षिण भारत के पश्चिमीघाट, विहार, बंगाल और राजस्थान मे होता है। यह अधिकतर पहाडो के झरनो, कुओ, शीत-



होलोंग
DIPTEROCARPUS PILOSUS ROXB



प्रधान स्थानों में जहां छाया के साथ जमीन गीली रहती हो ऐसी जगहों में विशेष पैदा होता है।

उत्पत्ति का समय—

वर्षा ऋतु है। परन्तु सदा तर रहने वाले छायादार स्थानों मे बारहो मास ताजा मिल जाता है।

औषधि सग्रहकाल—शरद ऋतु (सितम्बर-अक्टूबर मास) इसका औषधि गुण छः मास मे कमजोर होजाता है और वर्ष भर मे बिल्कुल जाता रहता है।

नाम—

स.—हंसपादी, हसपदी, हसवती, कीटयाता, त्रिपादिका। हि—हसराज, हसपदी, हसपगी, काली झाट,काली झांप। ब०—गोयाली लता, कालो झाट। गु—हसपादी, मुबारख, मुबारखीनोपालो, हसराज, काली हसराज। रा०, म०—हंसराज, राजहस, घोडखुरी। काठियावाड़ी-कालो हसराज। सथाली—दोवारी। ते०— हसपादमु। अ० फा० परसिया वशा। अ०—मेडेनहेयर (Maiden hair) ले०—आडिआदुम लुन्युलेटम (Adiantum Lunulatum Burm)।

उपयुक्त अङ्ग—पचांग।

मात्रा—५ से ७ माशे तक स्वरस आधा से एक तोला। चूर्ण १ से ३ माशा।

गुण धर्म और प्रभाव—

सक्षेप मे—रस मधुर, तिक्त, कषाय। विपाक-मधुर। वीर्य-शीत। गुण-गुरु, कण्ठ्य, रोपण, ग्राही, लेखन। दोषशमन—वातपित्त शामक, कफनि सारक। शारीरिक अङ्गो पर प्रभाव-श्वासोच्छ्वास सस्थान।

हसराज—गुरु, शीतवीर्य, रक्तविकार, विषप्रकोप, व्रण, विसर्प, दाह, अतिसार, लूताविष और भूतादि के आक्षेप (ग्रहदोष) तथा अग्निरोहिणी को दूर करने वाला है। (भा० प्र०)

कैयदेव जी ने शोथहर और व्रण रोपण गुण अधिक लिखे हैं। हसराज—चरपरा, उष्ण, रसायन, भूत बाधा (बालग्रह दोष) विष, अपस्मार और भ्रम का नाशक है। (नि० र०)

यूनानी मतानुसार—

प्रकृति—अनुष्णाशीत। गर्मी और खुश्की के साथ। दूषित दोषों को पतला करके निकालने वाला, कफनि-सारक, मूत्रजनन, आर्तवजनन और अपरापातन है। छाती की वेदना, श्वास, कास और प्रतिश्याय मे उपयोगी है।

डाक्टरी मतानुसार-

रेचक तथा मूत्रल एव आर्तवप्रवर्तक है। यह कफ और श्वास के रोगों मे दिया जाता है। पसली के दर्द मे भी उपकारी है। इसे मूल ही के साथ काढ़े के रूप मे देना चाहिये। (सी एम. गुप्ता)

डा० देसाई के मत से हसराज कड़वा, कुछ सकोचक, खांसी को दूर करने वाला और कफनाशक है। इसमे कुछ मूत्रल धर्म भी रहता है। बच्चो के लिये यह बहुत उपयोगी औषधि है। इसके पचाग का शरबत विशेषतः बच्चो के कफ कास में बहुत दिया जाता है। बच्चों की खासी में हसराज के शरबत की मात्रा अधिक होने पर वामक धर्म दिखलाता है फिर भी कफ को यह वमन के द्वारा निकाल देता है, जिससे खासी मे राहत पहुचती है।

बच्चों के ज्वर मे यह दवा गुजरात मे बहुत काम मे ली जाती है। पत्तो को जल मे पीसकर स्वरस मिश्री के साथ दिया जाता है। रतवा (विसर्प) की शोथ में इसके स्वरस का लेप किया जाता है। (जे रोव. अहमदाबाद)

यह शीत स्निग्ध है और रतवा मे लगायी जाती है। (सर्जन वस्नभुज)

उपयोग —

हसराज का उल्लेख चरक सहिता के भीतर कण्ठ दशेमानी और मधुरस्कन्ध मे तथा सुश्रुत सहिता के भीतर विदारीगन्धादि गण मे मिलता है। घरेलू औषधि रूप से गुजरात और सौराष्ट्र मे दीर्घकाल से इसका व्यवहार होता है।

प्रयोग—

बाल झड़ने पर—सिर के बाल झड जाते हो, तो हसराज के पान जल में पीसकर लेप करने से लाभ होता है।

कफज कास—कफज कास पर हसराज का क्वाथ अकसीर माना जाता है।

मूत्राघात—प्रमेह से पेशाब बन्द होगया हो तो उस पर हसराज का क्वाथ पिलाया जाता है।

विषर्प पर—हसराज के पानो को या हसराज और जल पीपल के पानो को पीसकर लेप करते रहने से २-३ दिन मे ज्वर और दाह सह बालको का विषर्प रोग दूर हो जाता है। कोई कोई लोग हंसराज के साथ गेरू को पीसकर लगाते है। इसके स्वरस को निवाया करके पिलाते भी हैं।

बालको का कफ प्रकोप—हसराज पचाग को जल के साथ पीस छान निवाया करके उसमे गुड या शक्कर मिलाकर पिला देने से एक वमन होकर कफ निकल जाता है, फिर व्याकुलता और खांसी दूर होजाती है।

मूत्रावरोध—हसराज के पचाग को ठण्डाई के समान पीस छानकर पिलाने और वस्तिस्थान पर हसराज का निवाया लेप करने से पेशाब साफ आजाता है।

फुफ्फुस रोग—इसके क्वाथ मे शहद मिलाकर पिलाने से सूखी खासी नष्ट हो जाती है। इसका शरवत पीने से छाती और फेफडो मे सचित कफ निकल जाता है और फेफडे साफ होजाते हैं।

फोडे फुन्सी—हसराज और मेथी को जल मे पीस गरम कर लेप करने से फोडे फुन्सी जल्दी पक जाते है।

बालो के रोग—इसका तैल तैयार कर लगाने से बाल लम्बे व काले हो जाते है।

नकसीर की दवा—हसराज १ तोला, मुलहठी ½ तोला, इलायची छोटी १ माशा, गिलोय सत्व १ माशा, मिश्री ९ माशा। सबको पीसकर मक्खन मे मिलाकर ७ या ६ दिन सेवन करने से नकसीर बन्द होजाती है और नासिका से निकलने वाला बलगम भी मिट जाता है।

—वैद्य मक्खनलाल वरनवाल, चौक, सुलतानपुर (अवध)

विशिष्ट योग—

क्वाथ हसराज—हसराज २॥ तोला को यवकुट कर १ सेर पानी मे क्वाथ करे, जब चतुर्थांश रहे मल छानकर ५ तोला शहद मिला गुनगुना पिलावें। गरमी मे मधु के स्थान पर मिश्री मिलावे।

गुण—इसके सेवन से एक घण्टे मे दमे का दौरा रुक जाता है।

क्वाथ हंसराज नं० २—हसराज (परसिया वशा) २ तोला, खतमी के बीज, खुब्बाजी के बीज ६-६ माशा, अंजीर १ तोला। क्वाथ बनाकर सेवन कराने से गरम नजला मिट जाता है।

हिम हंसराज—हसराज यवकुट ३ तोला, पानी २० तोला मे रात को भिगो दें। सुवह मिश्री मिलाकर गरमी के मौसम मे प्रयोग करने से गले की जलन और खुश्क खांसी को दूर करता है। ज्यादा दिन के प्रयोग से कलेजे की गरमी और कामला (पीलिया) को मिटाता है।

शरवत हंसराज—हन्सराज ५ तोला, मुलैठी २ तोला, खतमी के बीज, खुब्बाजी के बीज १-१ तोला, बैदाना ६ माशा, बनफसा के फूल ३ तोला। रात भर पानी मे भिगो कर तीन पाव मिश्री से विधिवत् शरवत बनावे।

गुण—दमा, खासी के वास्ते अनुभूत है। चिपकने वाले कफ को नरम करके निकालता है। सीने के दर्द मे लाभकारी है। गरम, खुश्क खासी व मौसम गरमी के नजले एव जुकाम के लिये विशेष लाभप्रद है।

मात्रा—३ तोला। दोनो वक्त।

अहितकर—प्लीहा के रोगो को। **निवारण**—मस्तगी और गुले बनफसा। **प्रतिनिधि**—बनफशा और मुलैठी।

—सकलित

हंसराज नं० २ (ADIANTUM CAPALLUS)

यह गुडूच्यादि वर्ग और हन्सराजादि कुल (Polipodiaceae) का क्षुप हन्सपदी के समान होता है। इसके पत्ते हन्स नामक जलचर के पाद तुल्याकृति होने से इसको भी हन्सपदी या हन्सराज कहते है। सूक्ष्म कैशिका सदृश शिरा वाले पान। वेनेरिस=शिरायुक्त पान। काण्ड लगभग खडा लगभग कोमल, ४ से ५ इच ऊचा, तेजस्वी, श्याम आभा वाला। पत्र काण्ड के दोनो ओर उपपत्रयुक्त, सिरे पर छोटे, तूरे पान की लम्बाई ४ से ६ इच, पान कोमल काला पान के ऊपर के हिस्से में ६ विभाग वाला। पान का अग्रभाग मोटा। पान का प्रत्येक विभाग आधा से एक इच



चौड़ा। निम्न पत्र वृन्त ½ इञ्च लम्बा, पतला। बीज पत्र के अन्त के भाग में और बीज समूह गोलाकार सदृश होते हैं।

उत्पत्ति स्थान-

पश्चिमी हिमालय प्रदेश मे ८००० फीट की ऊचाई पर, दक्षिण भारत, मद्रास, बम्बई प्रदेश व अफगानिस्तान में पैदा होता हैं। ब्रह्म देश और मणिपुर की सीमान्त मे भी दिखाई देता है।

नाम-

हि —हन्सराज। व्र.—हन्सपदी। काश्मीर—दुम-तुल्ली। अरबी—शेरुल्जिन। फा—सिरसिया पेशानी। अ —मेडेन्स हेयर (Maidens Hair)। ले —आडिआ-टुम कापील्लस वेनेरिस (Adiantum cspillus Veneris Linn)।

उपयुक्त अङ्ग—पत्र।

मात्रा—५ से ७ माशे तक। स्वरस—½ से १ तोला, चूर्ण १ से ३ माशा।

गुण धर्म और प्रभाव-

यह वनस्पति ज्वर, जुकाम और खासी में लाभदायक होती है। पंजाब मे इसके पत्तो को कालीमिर्च के साथ ज्वर को दूर करने के लिये देते है। जुकाम के अन्दर इसके पत्तो का रस शहद में मिलाकर देने से लाभ होता है।

मेक्सिको मे इसके पौधे की चाय बनाकर कालिक (उदर शूल) मे देते हैं। इस चाय के सेवन से स्त्रियो को होने वाली मासिक धर्म की रुकावट भी मिट जाती है।

यह वनस्पति लुआबदार, कफ निस्सारक और छाती के रोगो मे हितकर होती है। कफ को दूर करने के लिये सारे यूरोप मे इस वनस्पति की बडी प्रशसा है। एक ऋतु-स्राव नियामक औषधि की तरह भी इसका रस मधु या चीनी के साथ उपयोग किया जाता है।

फ्रान्स मे इस वनस्पति से एक प्रकार का शरबत बनाया जाता है जो खासी, गले की खराबी और वायुनलियो की खराबी मे दिया जाता है। (व च से साभार)

हंसराज नं० ३ (ADIANTUM VENUSTUN)

यह गुडूच्यादि वर्ग और हन्सराजादि कुल(polypodiaceae) का क्षुप होता है। वेनस्टम—शुक्र के सदृश तेजस्वी सुन्दर। पान—३-४ उपपत्रयुक्त, झिल्लीदार, चौडे, क्रमशः पतले अग्र भाग युक्त, चिकने, नीचे की ओर किंचित नील हरित, छोटे वृन्त युक्त, सुन्दर, दातेदार अकुर देने वाले २ खण्ड कभी ३ गट्टे। प्रत्येक गट्टे के तल भाग मे सामान्यत. बीज समूह। पान—पंखाकार हृदयाकार होते है।

यह फर्न की जाति की अपुष्प क्षुद्र वनस्पति है जो पहाडो मे चट्टानो मे लगी हुई मिलती है। इसमे चारो ओर ८-१० अगुल के सूत के से पतले गोल चिकने चम-कीले, ललाई लिये काले डण्ठल फैलते हैं। इन डण्ठलो के दोनो ओर बन्द मुट्ठी के आकार की अथवा बनिये के पत्र जैसी छोटी छोटी कटावदार पत्तिया गुथी होती है।

पत्र के आकार भेद से इसकी असख्य जातिया होती हैं। यह बूटी शाखा और पत्रसहित औषध के काम मे आती हैं। इसका औषधीय वीर्य छ मास में कमजोर और एक वर्ष मे पूर्णतया जाता रहता है।

उत्पत्ति स्थान-

यह उत्तर पूर्वी भारत के हिमालय प्रदेश मे ३००० से १०००० फीट की ऊचाई पर एव नेपाल, कामरूप(आसाम) और खासिया पहाड पर पाया जाता है। शिमला में यह आम है।

नाम-

स —हन्सपदी। हि.—हन्सराज, काली झाट। बोम्बे-मुबारक। प.—घास १ ता —मयूर शिखि। ले —आडि आटुम वेनसटम (Adiantum venustum g Don)।

उपयुक्त अङ्ग—पचाग।

मात्रा—५ से ७ माशा तक। स्वरस—½ से १ तोला। चूर्ण १ माशे से ३ माशे तक।

गुण धर्म और प्रभाव—

इसके पत्र सुगन्धि युक्त व उग्र, अधिक मात्रा में व्यव

हाय क ने पे वमन हो जाती है। पत्र–बलकारक, सर्दि-निवारक। चाम्बा नामक स्थान के लोग इसके पत्रो का लेप भग्न स्थाव पर करते हे।

पजाब मे हन्सराज एक साधारण औषधि है। यह वेदना निवारक है एव सर्दि होने पर प्रयुक्त होती है। इसमे ऋतुकर ओर मूत्रकर गुण है। कविराजो ने भिन्न भिन्न Adiantum के भेदो का भिन्न भिन्न गुण वर्णन नही किये है, उन्होने सबके समान गुण हे कहकर विश्वास किया है। हकीम इसको कुत्ते के विष पर एव ज्वर के पश्चात् की दुबलता मे व्यवहार करने को कहते हैं। इसमें बालो के गिरने की व्याधि को दूर करने की शक्ति है। (डा० वाट) –भा. व. व. से साभार

हन्सपदी विशेष (गजकेसर) (DRYOPTERIS CRENATA)

यह हन्सपदी कुल (Polypodiaceae)× का क्षुप होता है। जिसको लेटिन में (Dryopteris crenata o. kze) कहते है। ड्रायोप्टेरिस=महा पूर्णाङ्ग प्रजाति। क्रीनाटा=विदार। इस वनस्पति का क्षुप भी मयूरशिखा, हन्सपदी आदि के समान पत्थरो के सलो मे जहा काफी पानी बहता रहता है और ठण्डक रहती है वहा होताहै।

इसका क्षुप एक से तीन फीट तक ऊचा होता है। इसके मूल के पतले तन्तु कत्थई रग के होते हैं। ऊपर कद

×हस राज कुल–(Polypoodiaceae)हसराज अहृष्य बीज वनस्पति के अन्दर की वनस्पति है। इस कुल की वनस्पति की पुनरुत्पत्ति स्त्री, पुं-केसर जैसी इद्रियो से नही होती है। इसलिए अन्य कुलो के समान इसमें फूल नही आते। अत. इस कुल की वनस्पतिया अपुष्प वनस्पति कहलाती हे। इस कुल की वनस्पतियो के पान खिलने के पहले एक गुच्छ के समान अपने अन्दर मुडे हुए होते है। इस वनस्पति के सत्य फूल नही होते तो भी जिस उत्पत्ति द्रव्य से इसकी पुनरुत्पत्ति होती है उस द्रव्य को धारण करने वाली रज(Spores) और इसके ऊपर की सूक्ष्म कवच (Sporanges) पान के पीछे की ओर आती है। इसके कवच के अन्दर जो रज होती है उसमे सपुष्प वनस्पति के बीज के जैसे प्रत्यकुर होते है वैसे प्रत्यकुर नहीं होते। किन्तु इसमे एक हरे पान के समान जीभी (prothallas) उत्पन्न करनेकी शक्ति होती है और इस जीभी पुनरुत्पत्ति करने के साधन या इन्द्रिया और उत्पत्ति हुए द्रव्य रहे हुए होते हें।

इस कुल की वनस्पत्ति मे मादक, विदाही, ग्राही, मूत्रल, वान्तिकारक, चिरगुणकारी पौष्टिक, अपलेपक और वातहर आदि गुण रहे होते हे। (व० व० गुजराती)

उत्पत्ति स्थान–

(१) यह बूटी कुम्भलगढ (उदयपुर) राजस्थान के पास मभेरा ग्राम से केलवाडा, कडिया, सदुको का गुडा, आतरी, आतरी से आगे बलाई के घर के पास बकायन का पेड हे वहा से जेतारण ग्राम जाने के रास्ते की नाल मे एक मील दूरी पर बाई तरफ पहाडी के पत्थरो मे यह (Dryopteris crenata o kze) हसपदी विशेप ('गज-केसर') बूटी जहा-तहाँ पत्थरो की सधियो मे लगी हुई है।

(२) जरगाजी और पलामा के बीच बनास नदी है वहा भी जरगाजी की ओर है।

(३) जेतारण ग्राम का वाला (नला) के ढावे पर पीदाणें आवें जब नाल है उसमे भी है।

(४) इसकी अन्य जातिये जैसे (1) Dryopteris Brbigera B (Mrooe) Kuntze. (2) Dryopteris blandfordii (Hope) C chr. (3) Dryopteris filixmas (Linn) Schott. (4) Dryopteris marg ineta (Wall) christ. (5) Dryopteris odontoloms (Moore) C chr. (6) Drypoteris Lchimperiana (Hochst) C chr उक्त जातियें जिनमे ३ नबर Dryopteris filixmas (Linn) Schott को छोड़कर सब ही हिमालय पर्वत पर ४००० से १०००० फीट की ऊचाई पर एलपाइन, काश्मीर से सिक्किम, चाम्बा, मसूरी पर पायी जाती है।

[ग्लो. इ. मे. प्ला. २]

होता है जिससे आगे से आगे शाखें फूटती जाती हैं और कन्द की लम्बाई बढती जाती है। यहां तक कि एक क्षुप की मूल की लम्बाई फीट दो फीट तक चली जाती है। जैसे २ शाखें निकली थी कन्द पर मरोडी दार हिस्सा अलग अलग मालूम होता है और उन पर बहुत सुन्दर मखमल के समान मुलायम सुनहली कत्थई झांई मे केसर के तन्तुओ से लदा रहता है।

कन्द का रङ्ग पीला जिसका तोडने से चोपचीनी वत् साफ टूटता है। टूटे भाग के अन्दर की गोलाई मे काले घोडे के बाल के समान तीखे बालो के कई सिरे पीले गूदे मे निकले होते है। कन्द समग्र गहरा पीला। पीलेपन की अवस्था में वस्त्र पर लग जाने से इसका पीलापन फिर नही जाता। कन्द स्वाद मे निर्गुण्डीवत् कडुआ, गन्धरहित होता है।

शाख चोपहल जो व्यास में आधा इन्च के होती है। शाख पर हंसपदी के समान सुन्दर मुलायम पत्र आते है। पत्ते एक सीक पर आठ के लगभग होते हैं और वो आमने सामने न होकर जिस प्रकार नीमके पत्र होते हैं उसी प्रकार ऊपर नीचे एकान्तर होते हैं। एक पत्र बाई ओर का पीछे उससे उतनी ही दूरी पर दाहिनी तरफ का। फिर बांई ओर का, इस प्रकार आते हैं। एक ही पत्र इक्कीस हिस्सो मे विभक्त मालूम देता है और कगूरेदार जिससे पत्र की मनोहरता बढ जाती है। इस तरह की एक सीक में उपरोक्त वर्णन की १५ १७ सलाकाए निकलती हैं और प्रत्येक सलाकाओ पर २१ के करीब पत्र। एक शाख में उक्त वर्णानुसार ५-७ सीके होने से मयूरछत्र के समान पत्र फैले हुए खूबसूरत लगते है। बूटी के पत्र के प्रत्येक हिस्से पर पीछे की तरफ सफेद उभार (Spore or Seedgerm) गोलाई मे होते है।

नाम—

हि —हंसपदी विशेष (गजकेशर)। ले —ड्रायोप्टेरिस क्रीनाटा (Dryopteris crenata C Rze)।

नोट—उपरोक्त जातियो के भी अन्य भाषाओ में कोई नाम नही दिये गये हैं।

रासायनिक सङ्गठन—

इस वनस्पति मे तथा उपरोक्त सब जातियो मे फिलिसिन (Filicin) नामक सत्व १ से ४ प्र श तक मूल में पाया गया है जो व्रघ्न कृमि (Tapeworm) में विशेष लाभकारी मानते हैं।

उपयुक्त अङ्ग—मूल।

मात्रा—चूर्ण ३ से ६ माशा। अनुपान—जल या गाय का धारोष्ण दूध।

गुण धर्म और प्रयोग-

सक्षेप मे रस-तिक्त, कषाय। गुण—कृमिघ्न, ग्राही, गर्भस्थापक, शीतल। वीर्य—शीत। विपाक—मधुर।

प्रयोग-

गर्भस्थापनार्थ योग न १—गजकेशरमूल चूर्ण ३ माशे-केवल प्रात बछडे वाली गाय के ताजे दूध के साथ सन्तान इच्छुक स्त्री ऋतु स्नान के बाद पांच दिन तक पीये और क्षीर भोजन करें। पीछे पुरुष सहवास करे। गुण-अवश्य सन्तान की उत्पत्ति होगी

गर्भस्थापनार्थ योग नं.२—गजकेशर मूल १ तोला, पीपल वृक्ष की जटा १ तोला, चूर्ण हाथीदात १ तोला, शिवलिंगी बीज १ तोला, मिश्री ४ तोला का वस्त्रपूत चूर्ण तैयार कर आधा-आधा तोला की मात्रा मे उक्त अनुपान मे ऋतु शुद्धि के बाद ४ दिन सेवन करे, सयम से रहे और हविष्यान्न भोजन ले। औषधि की समाप्ति के बाद गर्भाधान करे।

गुण—निश्चय ही गर्भ धारण होगा। यह बूटी वर्षों से व्यवहार मे आ रही है और सफलता भी सतोषप्रद मिली है। वैद्य बन्धु आगे विशेष शोध करने का श्रम करें।

(भा ज. बू भा २ से)

क्षीर काकोली (LILIUM POLYPHYLLUM)

यह हरितक्यादि वर्ग और रसोन कुल (Liliaceae) का क्षुप है, जो कि ऊंचाई मे ८ इच से डेढ फीट के लगभग होता है। डण्ठल सीधा मूल से निकलता है। पत्र स्टेम (Stem) के साथ जुडे रहते है, पत्र क्रमानुसार एव भालाकार होते है। शाखाओ और प्रशाखाओं पर फूल खलते हैं। खिलने पर ये पुष्प कुछ पीले व श्वेत वर्ण के

होते हैं तथा सू घने पर इन पुष्पों से तीव्र सुगन्ध आती है। फलकोष एक इ च से सवा इच लम्बे होते हे ये कोष तीन प्रखण्डो मे विभक्त होते हैं। मूल कन्द प्याज के कन्द के समान छिलके वाला एव परतदार होता है। आग मे भूनने के बाद खाने मे यह परतदार कन्द मीठा होता हे। ताजी अवस्था मे यह कण्द श्वे त वर्ण के होते है। औषधि सग्रह करने से पूर्व इन ताजे मूल कन्दो को उवलते हुए पानी मे उवाल लेते है ऐसा करने पर इनका जलीयाश नष्ट हो जाता है और ये मूलकन्द सड़ने से वच जाते हैं।

पुष्पकाल—अगस्त, सितम्बर। फलकाल—सितम्बर से नवम्बर। औषध सग्रहकाल —सितम्बर से नवम्बर।

उत्पति स्थान—

यह मूलिका हिमालय मे से २७०० मीटर से ३००० की ऊचाई तक उपलब्ध है।

भिलंगना घाटी मे—पवाली, गगी, राजखर्क, किनकोलियाखाल, ताली आदि स्थानो मे उपलब्ध होती हे।

केदारनाथ घाटी मे—रामवाडा, केदारनाथ एव वासु की ताल आदि स्थानो मे उपलब्ध होती हे। इमी भाति भागीरथी एव टौमवन खण्ड के हरकी, दून, नेटवाड, मोरी आदि स्थानो मे उपलब्ध होती है।

नोट–प्राय इन मूलिका के साथ Fritillaria mylli Hook एव Lilium Sp रसोन कुल की कुछ प्रजातियो के मूलकन्द भी पाये जाते हैं। इस मूलिका के अभाव मे Roscoea procera wall और Roscoea alpinia Royle के मूल कन्द वाजार मे विक्रय करते ह जिनका वर्णन निम्न प्रकार से दिया जा रहा है।

मूलकन्द की वाह्य रचना विवरण—

काकोली–क्षीर काकोली का मूलकन्द १ इच डायमीटर के लगभग होता है जो प्राकृत अवस्था मे श्वे त वर्ण का होता है तथा पानी मे उवालने पर ये कन्द कुछ पीले वर्ण के हो जाते है। ये मूलकन्द प्याज के छिलके के समान अलग-अलग परतदार होते हे। वाह्य रचना मे इसका आकार ठीक एक गाठ वाली लहशुन के समान होता है। मूलकन्द प्राकृत अवस्था मे मसृण और मधुर होता हे तथा ये कन्द गन्धविहीन होते है। अथवा (वा) काकोली क्षीर काकोली (व) [A] Roscoea Alpinia Royle
[C] Roscoea Procera Wall

(A) यह एक क्षुप जाति की वनस्पति है जो कि १५०० मीटर से लेकर २७०० मीटर की ऊंचाई तक उपलब्ध होती है। यह क्षुप ८ इंच से १० इ च तक लम्बा होता है। पत्र ३ इ च से ४ इ च तक लम्बे भालाकार होते है। ये पत्र शाखाओ के साथ साथ जुटे होते हैं। पुष्प अग्रिम भाग मे एक या दो मे खिलते हैं। उप जाति (Species) भेद से इसकी अन्य प्रजातियां काकोली–क्षीर काकोली के नाम से विक्रय होती हैं। पुष्प श्वेत एव गुलावी रङ्ग के एव सफेद नीले (White purple) वर्ण के होते हैं। कुछ पुष्प वैंगनी रङ्ग के भी होते हैं। मूल शतावरी मूल के समान चार या पाच के समूह रूप मे होती है। ये मूल कन्द लम्बाई में २ इ च से २½ इ च वक लम्बे होते हैं। (B) R procera Wall का तना ८ इ च से १½ फीट तक लम्बा पुष्प सफेद–गुलावी होते है, दल चक्र की अपेक्षा पुट चक्र लम्बा होता है।

पुष्पकाल–जुलाई-अगस्त। फलकाल–सितम्बर। औषधि सग्रह काल–अगस्त,सितम्बर। उपयुक्त अङ्ग–मूल,

उत्पत्ति स्थान—

प्राय भिलगना घाटी, भागीरथी घाटी, यमुना घाटी एव केदारनाथ, चकरौता आदि स्थानो के १५०० मीटर से २७०० मीटर की ऊचाई तक उपलब्ध होते हैं।

नेपाल प्रदेश से भी इस मूलिका का निर्यात होता है।

मूलकन्द का बाह्य विवरण (Microscopic structure) काकोली, क्षीर काकोली का मूल कन्ददो इ च से तीनइ च के लगभग लम्बाई में तथा मोटाई मे १-६ इ च के लगभग होता है। मूलगाठ से शतावरी के समान ही चार या पाच जडे निकली रहती है फिर वे जड़ें मूलगाठ से अलग अलग होजाती है। प्राकृत अवस्था में ये मूलकन्द कुछ हरे वर्ण के होते हैं। जोकि देखने मे चिडिया कन्द केसमान होते हे तथा सूखने के उपरात कुछ धूसर एव कृष्णवर्ण के हो जाते हे। मूल कन्द का आतरिक भाग श्वेत वर्ण का होता है। स्वाद में ये मल मधुर अनुरस वाले



होते है।

निघण्टुओ मे विवर्णित काकोली–क्षीर काकोली का–उत्पत्ति स्थान एव लक्षण—

महामेदा के उत्पन्न होने वाले स्थानो मे ही, क्षीर काकोली भी पायी जाती है। क्षीर काकोली का कन्द शतावरी [पीवरी] के समान होता है तथा काटने पर इसमें दूध निकलता है। ये कन्द प्रिय गन्धयुक्त होते है।

काकोली भी क्षीर काकोली के समान ही होती है। किन्तु दोनो मे भेद का कारण क्षीर काकोली का कृष्णवर्ण का होना है।

सदिग्वता—इस आधार पर काकोली एव क्षीर काकोली शतावर के समान आकृति वाला श्वेत वर्ण का होना चाहिए जबकि (Lilium polyphyllum) शतावर के समान नही है जोकि लसुनकन्द वाला एव श्वेत कन्द है। कुछ शास्त्रीय लक्षणो की मान्यता Roscoea Alpinia or Roscoea Procera] से मिलती है। ये सभी कन्द रासायनिक परीक्षण के विषय है।

[वैद्य मायाराम जी उनियाल]
गुरुकुल कागडी विश्वविद्यालय [उ० प्र०]

नाम—

स.—क्षीर काकोली, पर्वस्या, महावीरा, पयस्विनी। हिं—क्षीरकाकोली। ले—लिलियम पोलिफाइलम (Lilium polyphyllum) उपयुक्त अङ्ग—कन्द।

मात्रा—६ माशा से १ तोला तक

गुण धर्म और प्रयोग—

आयुर्वेद मतानुसार क्षीर काकोली वीर्य वर्द्धक, स्तनों मे दूध बढाने वाली, हल्की, कामोद्दीपक, अवस्था स्थापक, पाक और रस मे स्वादिष्ट, बलकारक, शीत वीर्य और जीवनदायक होती है। (शा नि.)

प्रयोग—

अष्टवर्ग—जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, ऋद्धि, वृद्धि, काकोली, क्षीर काकोली इन एकत्र मिले हुए आठ द्रव्यो को अष्टवर्ग कहते हैं।

अष्टवर्ग गुण—अष्टवर्ग—शीतल, स्वादिष्ट, पुष्टिजनक, बलकारी और शरीर मे कफवर्द्धक है। वीर्यजनक, भारी, भग्न सधानकारक तथा वात, पित्त, रक्त, तृषा, दाह ज्वर, प्रमेह और क्षय रोग का नाश करता है। (शा नि)

क्षुद्र मक्षिका (RUNGIA PARVIFLORA NEES)

यह वासा कुल (Acanthaceae) का क्षुप १० इच से दो फीट तक पाया गया है। यह वर्षायु, रोमश, कोमल होता है। इस छोटी बूटी के पत्र मोटे, मासल, सूक्ष्म रोमस ढाई से ४ इच लम्बे, डेढ से पौने दो इच चौडे, प्राय वृन्त रहित; पुष्प श्वेत वर्ण के लम्बी पखुडी वाले। पुष्पस्तवक छोटा ½ इची, पुष्प दण्ड छोटा पौन इची, चपटा फल या वीज कोष २ इची। वीज छोटे-छोटे सख्या मे ४ होते हैं। प्राय शीतकाल में पुष्प आते हैं।

उत्पत्ति स्थान—

यह क्षुप भारतवर्ष के दो हजार से पाच–छ हजार फीट की ऊचाई पर बगाल, छोटा नागपुर, उडीसा एव कुमायू, गढवाल आदि क्षेत्रो मे विशेष मिलता है।

नाम—

स–पिण्डी। हिं•–पिंड्डी। गु०–मोटो खडसलियो। व–पिण्डी। गढवाली—क्षुद्रमक्षिका, क्षुद्र मौनी, लघुमक्षिका, छोटी मखी, ऋनुमाखी। ले०–रगिया पारवीफ्लोरा (Rungia Parviflors Nees)।

गुण धर्म और प्रयोग—

वह वनस्पति कामला, अरुचि, ज्वर वालरोग, वात, श्लैष्मिक ज्वर, निमोनिया, वालरोगो का विषम ज्वर, अजीर्ण, उपदशघ्न और रक्तवर्द्धक है।

हमने सहस्रपत्री के योग से तिल्ली, जिगर पर सत्वर लाभ पाया जाता है।

मात्रा—३ से ६ ग्राम तक।

अनुपान—बालक को माता के दूध के साथ। कामला मे वारोष्ण दूध के साथ।

अपथ्य—गर्म वस्तुयें। उपदश मे लवण का त्याग करे।

—श्री योगेश्वर प्रसाद जी घिल्डियाल, वैद्यवाचस्पति
श्री राष्ट्रीय औषधालय, कोटाबागरुड्की,
पो पतलिया (नैनीताल)

क्षीरीविदारी–देखिये 'विदारी कन्द न०२' भाग ५ पृष्ठ १८६ पर। त्रायमाण–देखिये भाग ३ के पृष्ठ ३८९ पर।

वनस्पति बिक्रेताओं के पते

वत्सनाभ—इल्फ्रेड टी इम्पोरियम बोम्बू ग्रोव १०½ माइल, किलपोग, आसाम।

पीपल छोटी—पसावा अेन्ड सन्स, मिसिन बेंग, अयाल, एन, लुसाई हिल्ला (आसाम)।

नागकेसर असली—शिलोग कापरेटिव मार्केटिंग सोसायटी, बडा बाजार, शिलोग (आसाम)।

शहद के बिक्रेता—सहा अेण्ड क, टोकलाईपुर, ट्रन्करोड़, जोरहाट, आसाम।

चन्दन के बिक्रेता—अमृतलाल मोतीलाल शाह, लम्बडग, आसाम।

सामदास सुरानचन्द्र चावला, हाफलोग, एन सी हिल्स, आसाम।

गनजम हर्बस्टोन, गनजम, उडीसा।

मधु के बिक्रेता—अगरवाला फार्मेसी, भडार, देहरादून।

अष्टवर्ग फामसी, देहरादून।

वी कुलराम शाह वर्मा, पो. आ जोशीमठ, गढवाल।

बृजभूषणलाल गुप्ता एण्ड कं०, सराफाबाजार, सहारनपुर

भारत आयुर्वेदिक औषधालय, नगीना, जिला बिजनौर

बाकेलाल अग्रवाल, पो ओ. चकोतरा, देहरादून।

वनौषधि भण्डार, गणेश मन्दिर, झांसी।

दून फार्मास्युटिकल क०, मोती बाजार, पो आबक्स नं०६०, देहरादून (उत्तर प्रदेश)

देवी सहाय प्रभुदयाल, बनीरामण्डी, मुरादाबाद।

डिपार्टमेंट आफ कोटेज इन्डस्ट्रीज, यू पी, जी टी रोड, कानपुर।

ग्रीन हिल्स प्रोडक्टस लि०, रामपुर, विजनौर।

ग्रामोद्योग कार्यालय, दिलवाडा, ललितपुर, झांसी।

हिमाचल फार्मेसी, मसूरी।

अष्टवर्ग के बिक्रेता—हिमाचल हर्ब इन्स्टीट्यूट, मोहल्ला जाफरनवाब खा, सहारनपुर।

हिमालय ड्रग क २२-२४ वायसराय रोड, देहरादून।

हिंद हर्ब सप्लाई क०, पो आ चोहारपुर, देहरादून।

इण्डियन ड्रग क, ४६-३०, वायसराय रोड, देहरादून

इण्डियन हर्ब इन्स्टीट्यूट अेण्ड सप्लाई क०, पो० आ० चोहारपुर, देहरादून।

जगदीशप्रसाद गर्ग, भारत आयु. औषधालय, विजनौर

कृष्णा आयुर्वेदिक औषधालय, डोईवाला, देहरादून।

कल्याण फार्मेसी अेण्ड लेबोरेट्री, शहीदगज, सहारनपुर

केदार कार्यालय, हल्द्वानी।

केदार फार्मेसी, करणपुर, देहरादून।

कैलाश औषधि भण्डार, चकोतरा, (देहरादून)

लाल सींग पगती, मान सियारी, अलमोड़ा।

धाय के फूल, मुचकन्द, अर्जुन—महावीर जडी-बूटीभण्डार खनिया वाना, झांसी (उ. प्र

नेशनल ड्रग कारपोरेशन, प्रेम नगर, देहरादून उ. प्र.

नन्दा ड्रगएण्डफार्मास्युटिकलवर्कस, पीपलमण्डी, देहरादून

पचम लाल वन्चूमल, ललितपुर (उ प्र)

फर्मास्युटिकल एक्सपर्ट कारपा डिपार्ट, राईस्टेट रानीखेत

रामगोपाल सिंह ठाकेरी, कालालेन वाली रोड, देहरादून

रामसींग पंगती, जोहर हिमालय ट्रेडिङ्ग एजेंसी, मानसियारी, अलमोडा (उ. प्र)

रामलाल मेहता वैद्य, श्रीनगर, गढवाल।

सुशील किशोर जोशी, भोगपुर, देहरादून।

वनस्पति औषधालय, देहरादून

एस. पोसना, पो० आ राजपुर (देहरादून)।

आर्य बनौषधि भण्डार, ललितपुर, झासी।

हिमालय हर्बस स्टोर, मिरकोट, सहारनपुर।

नेशनल इण्डिया हर्ब सप्लाई क., विंग न. १, बी। के ८/७, प्रेमनगर, देहरादून।

अगर वाल मधु भण्डार, देहरादून।

वी ड्रग्स एण्ड फ्रूट प्रोडक्टस, २-४, मधीवाथरोड, बरेली

वी एम औषधि वी एण्ड संस, गाधी बाजार, झासी

भारत आयुर्वेदिक औषधालय, नगीना।

हिमालय बी कीपिंग एसोसियेशन, देहरादून।

ग्रीन हिल्स प्रोडक्टस लि रामपुर स्टेट, बिजनौर।

हसराज गिरीश चन्द्र, पो आ. ज्वालापुर, हरिद्वार।

गुलाबराय जानकीप्रसाद, गवर्नमेंट कट्राक्टर्स, हल्द्वानी, नैनीताल।

ओमप्रकाश अग्रवाल, एम केन कालेज हाउस रामगढ

ग्रामोद्योग कार्यालय, पो० आ० दिलवाडा, झांसी।

वी. कुलाराम शाह शर्मा, पो०आ० जोशीमठ, गढ़वाल

शिलाजीत–कस्तूरी—वालीराम वर्मा, गोरीकुण्ड, केदारनाथ, गढवाल ।

क्षारो के विक्रेता—होराम शर्मा वशिष्ठ फतेह भवन, मुनशी पुरा, बुलन्द शहर ।

शिलाजीत विक्रेता—हिमालय डिपो., नियर रेलवे स्टेशन, हरिद्वार ।

कैलाश बूटी आश्रम, वदरा केशराम, गढवाल ।

के. रामचन्द नाम बूटी पो० आ० बदरीनाथ, गढवाल

महेशानन्द एण्ड सन्स, नन्द प्रयाग, गढवाल ।

हरिशकरलाल, रामशकरलाल, चौखम्बा, वाराणसी ।

कस्तूरी, जवाहरात के खरड़ो के विक्रेता—आग्नानद घने-श्वरलाल, मोहल्ला पीपलमण्डी, देहरादून ।

नेशनल ड्रग कारपोरेशन, प्रेमनगर, देहरादून ।

एस सत्य वहादुर नेपाली एण्ड सन्स, नेपाली कोठी, फूल वाली गली, चौक, लखनऊ ।

ठाकुरदास अमरनाथ, हरिद्वार, सहारनपुर, उ० प्र० ।

सत्त गुलावजल, इत्र—होतीलाल मनोहरलाल बारवाड़ा, जिला–अलीगढ ।

राम जनम ठाकुर, C/o ज्ञानचन्द वैद्य,इटावा उ०प्र०

हीग, शिलाजीत के विक्रेता—विजय स्टोर्स, आगरा ।

भजनलाल कुजीलाल, लोहट वाजार, हाथरस ।

अरण्डी और तिल तैल—जुगीलाल कमलापत आयल मिल्स, कमला स्ट्रीट, कूपरगज, कानपुर ।

मूल्यवान धातुये और खरल—प्रेम प्रकास वी शास्त्री, नियर आटा चक्की, न० २ दयाल बाग, आगरा ।

दारू मैडीकल स्टोर्स, विजयगढ (अलीगढ)

इत्र के विक्रेता–अमरनाथ मिश्रा एण्ड सन्स,मिश्रभवनकन्नौज

सुगन्धित पदार्थ—वदरीनाथ विश्वनाथ चौक बनारस ।

गगासागर ओकारनाथ, परफ्युमर्स, कन्नौज (उ० प्र०)

इत्र विक्रेता—मोरा कम्पनी, चौक, वाराणसी ।

गुलाब जल और इत्र—सेठ टीकमचन्द प्रेमचन्द अत्तर एण्ड रोजवाटर फेक्टरी, कन्नौज ।

मल्लसिन्दूरादि—श्री रतन आयुर्वेद भवन, कचौरा अलीगढ

श्री कृष्ण भैषज्यभवन, कृष्णावाटिका, कचौरा अलीगढ

प्रभात रसायनशाला, कचौरा (हरीगढ़) अलीगढ ।

वनस्पति और समुद्री पदार्थो के विक्रेता—के. एस नायर एण्ड को, त्रिवेन्द्रम ।

स्टेण्डर्ड ड्रग एक्सपोर्टस् क., ६६ पार्थसारथी मैंदर स्ट्रीट, टुटी कोरिन ।

इण्डियन ड्रगकपनी, १४७,डबल्यू जी सी रोड,टुटीकोरिन

नेशनल ड्रग कपनी, ३८ पिरिशा स्ट्रीट, टुटीकोरिन ।

पी आई.एम पालावेसम, पिलाई २६२ साउथ काटन रोड, टुटीकोरिन ।

टुटीकोरिन कमर्सियल क., ४८ इम्पेरोर स्ट्रीट, टुटीकोरिन

के.ऐस नेयर क, १४७ डवल्यू जी सी रोड,टुटीकोरिन

केशर, मधु, जीरा के विक्रेता—ओचकासी, हैड आफिस श्रीनगर, काश्मीर ।

डी. शाह सन्तराम जानडियल, रामनगर पो आ जम्मू

आरगज जोहनसन एण्ड कम्पनी लि. श्रीनगर ।

जियालाल पोतेदार खरयू, पो आ पानपुर, काश्मीर

काकाराम बोधराज, उधमपुर (काश्मीर)

पी के शाहपुरी, हव्बा का दल, श्रीनगर ।

पी.एस जमवाल एन्ड सन्स, काचीचावनी, जम्मू तवी

वोधराज वशीलाल, उधमपुर जम्मू ।

कन्सरवेटर आफ फोरेस्ट, एस सी एण्ड एफ आई. सर्कल, जे. के गवर्नमेंट, जम्मू ।

मधु के विक्रेता—देशराज गुप्ता, नियर पी. डी. डी. स्टोर, उधमपुर, जम्मू ।

काश्मीर भण्डार, पहली ब्रिज, श्रीनगर ।

आर सी वाल एण्ड को.,३ ब्रिज,पो.आ एस. श्रीनगर

आर. डी. चोपडा, बटोट, काश्मीर ।

काशीराम सीताराम,कमीशन एजेट,उधमपुर, जम्मू ।

ग्रीन फिल्ड सिडीकेट, पो आ. बक्स ४७, श्रीनगर ।

शिलाजीत के विक्रेता—काश्मीर शिलाजीत डिपो, श्रीनगर, काश्मीर ।

केशर, दवाइया, मधु शिलाजीत के विक्रेता–बलवन्तराय गुरुवचनलाल, जम्मूतवी, काश्मीर ।

ईश्वरदास तिक्क एण्ड सन्स, श्रीनगर, काश्मीर ।

बोधराज वंशीलाल, उधमपुर, काश्मीर ।

मोहन ब्रदर्स वचवाडा, श्रीवगर, काश्मीर ।

काश्मीर एपिया रिस्वस एसोसियेशन, करालयार । रैनवाडी, श्रीनगर ।

कसरवेटर आफ फोरेस्टस् टिम्वर युटिलाइजेशन सर्कल, श्रीनगर, काश्मीर ।

सत्त गिलोय, भिलावा के विक्रेता—महेन्द्रलाल छोटा-लाल शाह, अमलसार, जिला–सूरत ।

आई वी चजादवा एण्ड कम्पनी, मेघदत्त, जेलरोड, जामनगर ।

बसन्तलाल जे लालन, चादी वाजार, पो आ. शालफाली, जामनगर (गुजरात) ।

सर्पगन्धा,रेवन्दचीनी,वाला के विक्रेता—एलाइड बिजीनेस कारपोरेशन,३५ अजमल खा रोड,खारीवावली,दिल्ली

हामिदअली, ६१८, कुचा रोहिलाखान, दिल्ली ।

रामचन्द कुड़ामल, कटरा टोवेको, फतेहपुरी, दिल्ली ।

जीवनदास सुगन्धितवस्तु भण्डार,किनारीवाजार,दिल्ली

हरी वनस्पतियो के विक्रेता—कोड़ामल मदनलाल, फतेहपुरी, दिल्ली ।

हिमालया रेंज ड्रग फिल्ड,३६१६११-क,मिलिटरी रोड, वापानगर, करौलवाग, दिल्ली-१२

ट्रेड कमिश्नर, जे एण्ड के गवर्नमेंट,५ पृथ्वीराज रोड़ नई हिल्ली ।

मधु के विक्रेता-रोशनलाल,एच न ४११,आजादपुर, दिल्ली

ड्रग लेण्ड कारपोरेशन,पो०वक्स१४७४,देहली ३१

पोल सन्स, फेज वाजार, दरियागज, देहली ।

पुराने गुड के विक्रेता —उमराव सिंह अमरनाथ, एच न २६१, वडा वाजार दिल्ली-शाहदरा ।

केशर कस्तूरी के विक्रेता—सुन्दरलाल चन्द्रकुमार नेपाली, वतासा वाली गली, फतेहपुरी, दिल्ली ।

मुश्क हाउस, वेयर्ड रोड, नई दिल्ली ।

जान्तव पदार्थो के विक्रेता-मुलतान शिकारी,वडातूती,देहली

वत्सनाभ के विक्रेता-अमृत जनरल स्टोर्स,फाटक हवासखां, देहली ।

ड्रग लेण्ड कारपोरेशन ४१२७, नया वाजार, देहली ६

तिल सरसो के तेल के विक्रेता)—दाताराम सोहनलाल फाटक हवास खा, देहली ।

तिल और नारियल तेल के विक्रेता—स्वस्तिक आयल जार्ज एण्ड क , ओपोजिट यग फ्रेण्ड एण्ड कम्पनी, चादनी चौक, देहली ।

नीम और ओलीव आयल के व्यापारी—नेशनल ग्रानर लि , ६१, मोडल बस्ती, देहली ।

चन्दन के तेल के विक्रेता—जिनेन्द्र सुगन्धित भण्डार, किनारी वाजार, देहली ।

निम, नरसो के तेल के विक्रेता-रतनलाल मितोलीनवर्क्स, निगर गुरुद्वारा कटरा धुनानराय,चांदनी चौक, देहली

कपूर के विक्रेता—हिन्दुस्तान केमिकल एण्ड इडस्ट्रियल कार्पोरेशन, बजाज बिल्डिङ्ग, ओरिजिनलरोड,न्यूदेहली

मेन्थल और वनस्पतियो के विक्रेता—अनन्तराम लच्छमणदास अग्रवाल, ६६६२१, खारीवावली, देहली ।

खरल और गन्धक के बिक्रेता—कपूरचन्द बोथरा, नई सडक, देहली ।

कस्तूरी के विक्रेता—चमनलाल एस गुप्ता, मैसर्स हसाराम सीताराम एण्ड क बड़ा सिरकी वाला, देहली ।

खरडो और केसर के व्यापारी—इम्पेरियल मुश्क हाउस, ६६८५/८६, खारी वावली, १ स्टपलूर, ओपोजिट तिलक बाजार, देहली ।

वनस्पतियो के विक्रेता—देवीसहाय भवरीलाल, कटरा, टोवेको, देहली ।

महामेदा, हरीतकी दवाइयो के व्यापारी—आत्माचन्द वाड़ा, चाम्वा (वाया डलहोजी) पजाव ।

वावा अत्तार सिंह वलराम सिंह,मजीठ मडी,अमृतसर

वनस्पति कार्यालय, जिजोरी डोअवा, होशियार पुर ।

डायरेक्टर ग्राफ ऐग्रीकलच्युरल, सिरमूर, नाहन ।

दीपक वावा एण्ड क , मजीठ मन्डी, अमृतसर ।

द्वारकापुर रामगोपाल, न्यू मिश्री वाजार, अमृतसर ।

केवडा और वेदमुश्क के व्यापारी—गुरदयाल सिंह, हरभजन सिंह, बाजार गन्दानाला अमृतसर ।

जी एच. वावा ब्रोस, मजीठ मडी, अमृतसर ।

काश्मीर भडार, वाजार, बनसन वाला, अमृतसर ।

काश्मीर आयुर्वेदिक वर्क्स, जी टी. रोड, अमृतसर ।

वनस्पतियो और वच्छनाग के व्यापारी—काश्मीरी केशर भडार, मजीठ मडी, अमृतसर ।

वनस्पतिया, मधु और कस्तूरी—एम आर टन्डन, कटरा हरी सिंह, अमृतसर ।

वनस्पतियां और पारा—पी एस.सोहनसिंह, चोक दरवार, अमृतसर ।

आर पी भारद्वाज, दी माल, सोलन ।

रामसीग, पो० कारमाना, (रोहतक) ।

डायर माकीन वरी वेरीज लि०, सोलन, सिमला ।

अहसान अली C/o बशीर अहमद,गाव-पाल्ला, पी सी नुह, गुड़गाव ।

केशर, हीग, पारा के व्यापारी—हरवसलाल मर्करी स्टोर, हिन्दू-मुसलिम मेडिकल हाल, लुधियाना ।

मोती और हींग के व्यापारी—के एल. तलवार ब्रदर्स, तलवार टेक्स टाइल मिल्स, लुधियाना।

मोती, कस्तूरी के विक्रेता—कस्तूरी भवन, विश्वनाथ शर्मा, लुधियाना।

मोहनलाल एण्ड ब्रदर्स, कटरा हरीसिंह, अमृतसर।

एस. डी. महता एण्ड क., कटरा हरीसिंह, अमृतसर।

एस डी बेरी एण्ड क,१५६ सेक्रेटेरियट रोड, जालधर

नमक और मुलतानी मिट्टी के व्यापारी—कृष्णा साल्ट एन्ड केमिकल इण्डस्ट्रीज, रेवाड़ी, गुड़गाव।

बारहसिंगे के सींग—तुलसीराम जैन, रेवाड़ी, गुडगांव।

सिरके—डाक्टर चौधरी एन्ड सन्स, फोरेस्ट, जालन्धर।

यूनानी वनस्पतियां और हींग—गुरुकुल अलकार फार्मेसी, पो आ बस्ती गु जा, जालधर (पजाब)

श्रीनगर ड्रग हाउस, कसेरा बाजार, अमृतसर।

अम्बर, केसर, कस्तूरी—उत्तमसिंह, मनोहर सिंह, मजीठ मण्डी, अमृतसर।

शुक्ति और सर्पगन्धा के व्यापारी—रोयल बटन एण्ड सीपी वर्कस, पो मेवसी, जि चम्पारन (बिहार)

विष, शिलाजीत—मोतीलाल मुरारका, भागलपुर सिटी।

सीप, सत्त गिलोय—रामलखन ठाकुर, पुरानी बाजार, पो० ओ० मेवसी, चम्पारन।

रोयल बट्टन एण्ड सीपी वर्क्स, मेवसी, जिला चम्पारन।
तिलक धारी ठाकुर, पुरानी बाजार, मेवसी, चम्पारन।
परमानद ठाकुर पो आ. मेवसी, जि चम्पारन।

राल, दवाइयें—वंशीधरदत्त, १२६, पुरखोत्तमराय स्ट्रीट, कलकत्ता–७

भट्टाचार्य ब्रदर्स, ११ सीतालेन, पो आ लेन, पो. आ हाटखोला, कलकत्ता।

शक्ति देने वाले पदार्थो के विक्रेता—बेंगाल शक्ति फूड, ११३, पुरुषोत्तमराय स्ट्रीट, कलकत्ता- ७

भूतनाथ महेन्द्रा, हुक्कापट्टी, कलकत्ता।

डोन एण्ड क, ११ पोरचुगीज चर्च रोड, कलकत्ता–१
गधेश्वर भडार, ११/१२ कोटन स्ट्रीट, कलकत्ता।
घोषेज मार्केटिंग ऐजेसी, टाउन एण्ड दार्जीलिंग।

इलायची, मजीठ, चिरायता, पीपल के व्यापारी—गुरुदयालसिंह चरनसिंह, ५ करबला स्ट्रीट, कलकत्ता।

पीपल और विप–पी एस सोहषसींग, ६ अमरतला स्ट्रीट, कलकत्ता।

पी.एस.डोन एण्ड क०,१,मेचुआ बाजार स्ट्रीट, कलकत्ता

चिरायता, शतावर, सर्पगधा के व्यापारी—बी नारायण, एन. डी पो आ बक्स १०००६, कलकत्ता–२३

अयापान, उलट कम्बल, चालमोगरा, तेल के व्यापारी-कारतीक चन्द्र कुन्डु एण्ड सन्स, १/ए नन्दोराम सेन स्ट्रीट सभा बाजार, कलकत्ता–५

अशोकछाल, पटोलपत्र और अन्य दवाइया—सुरेन्द्रनाथदास, ८७/२, लोअर चितपुररोड, मेचुआबाजार, कलकत्ता-७

चालमोगरा—तवीन ब्रदर्स एण्ड क०, तीस्तारोड, कलीमपोग, दारजीलिंग।

सुभाराम रामगोपाल, कलीमपोग, दारजीलिंग।

कवि. विजयकाली भट्टाचार्य, १७०/१, विपिन बिहारी गांगुली स्ट्रीट, कलकत्ता—१२

मधु—डायरेक्टर आफ फोरेस्ट, आफिस आफ डिविजिनल फारेस्ट आफीसेर, गवर्नमेंट आफ वेस्ट बगाल, ३५, गोपाल नागोर रोड, अलीपुर, कलकत्ता—२७।

पाला शरवत और मिश्री—बेंगाल इम्पोरियम, १४/८, ओल्ड चीना बाजार स्ट्रीट, कलकत्ता—१

फोरेस्ट युटिलाइजेशन आफीसर, मिट्टर्स बिल्डिंग (३ फ्लूर) ८ लाइन्स रेंज, कलकत्ता।

उत्तम कपूर—इम्पोरियम केमिकल इण्डस्ट्रीज इण्डिया लि०, १८ रोड, कलकत्ता।

कस्तूरी–बी एन बहादुर सारस्त, ४४ स्ट्रान्ड रोड: कलकत्ता या १०, पनडितिया रोड, बालीगज, कलकत्ता।

खेमचन्द सत्यनारायण अग्रवाल. कलीमपोग, दारजीलिंग

मदन मोहन ओम निवास, कलीमपोग, दारजीलिंग।

गांधी ब्रदर्स, कलीमपोग, दारजीलिंग।

एम डी.महताएण्डकम्पनी, ३१मल्लिकस्ट्रीट, कलकत्ता-७

सत्त, सुगन्धित पदार्थ, दवाइया—बूट्टो क्रिस्टो पाल एण्ड क०लि०, १–३ बोना फिल्ड लेन, कलकत्ता।

कपूर, लोबान और वशलोचन—लखपतराय सम्पतरायशाह, १४, मल्लिक स्ट्रीट, कलकत्ता।

जेतुन का तेल—हरीसन ट्रेडिङ्ग क०, ड-३, क्लाइव स्ट्रीट कलकत्ता।

सिंह की चर्बी—डा एन सी वसु १२०, कोर्नवेलिज स्ट्रीट, शाम बाजार, कलकत्ता।

मडूर और गधक—दासदत्त एण्ड क ३, डोइ घाटा स्ट्रीट, कलकत्ता।

वच्छनाग—अलफ्रेड टी. इम्पोरियम, वेम्बग्रोव, कलमीपोग दारजीलिंग।

सर्प विष—ड्रग हाउस कंपनी लि०, ५३ शंभूनाथ पंडित स्ट्रीट, कलकत्ता।

सुगन्धित पदार्थ—पेराडाइज परफ्युमरी हाउस ७५, कलूटोला स्ट्रीट, कलकत्ता।

शाह एन्ड क०, ३५–३८, इफ्रा स्ट्रीट, कलकत्ता।
एसेंस सप्लाई क, एजेंसी,६,कलूटोला स्ट्रीट,कलकत्ता।
सिकरी एण्ड क० लि०, ५५,केनिंग स्ट्रीट, कलकत्ता।
एसेसएण्डबोटल सप्लाई क०,१४राधाबाजार,कलकत्ता
जे.एम.पारख एण्ड क०,४४-४५,इफ्रा स्ट्रीट,कलकत्ता
के आर. पटवर्द्धन, ७२, केनिंग लेन, कलकत्ता।
नाजमल,अरीफीमएण्ड क ,७५,कलूटोलास्ट्रीट,कलकत्ता
सूरजमल अरीफीच एण्ड क०, १ इफ्रा स्ट्रीट, राधाबाजार, कलकत्ता।
कविराज जी० सरस्वती,झाड़ामोरा, पो०आ०,सेवारपोरा, राजशाही, बंगाल।

कुचला और वस्पतिया—बी. एल नारायणराव, श्रीकृष्ण भवन, कमर्सियल रोड, काकिनाड़ा, मदरास।

मधु और वनस्पतिया—के रामास्वामी, चेट्टी, रसप्पा चेट्टी स्ट्रीट, पार्क हाउस, मदरास।

आअर्स कारपोरेशन, ६०, चिन्नाथाम्बी स्ट्रीट,मदरास१
म्यूचल ट्रेडर्स, १६ बदरीअन स्ट्रीट, मदरास—१।
वी. गोल्डेन ड्रग्स स्टोर्स, एच. ओ , पेरिंग गुलाम।
एम. रामास्वामी,इरुधु नगर एस आई. मदरास–१।
नीलगिरी सीड डिपोर्ट, कर्मसियल रोड, उत्कमण्ड।
सिवराय एण्ड क० कोर्ट रोड, कालिकट।
फ्री इण्डिया युकलिप्टिस आयल डिस्टलरि, कूहनूर।

यूकलिप्टिस आयल—आर एस नीलगिरी।

कोटागिरी नेशनल युकलिप्टिस डिस्टिलरी,कोटागिरी, नीलगिरी।
इम्पेरियम युकलिप्टिस आयल डिस्टिलरी,मिसिन हाल, कुनूर रोड, नीलगिरी।
पारख युकलिप्टिस आयल डिस्टिलरी विल्लिंगटन बाजार, पो० आ० नीलगिरी।
अब्दुल रहमान साहब, फ्लोवर बाजार, मदरास।
टी. ए रहमान एण्ड सन्स,फ्लोवर बाजार, १० चिना बाजार रोड, मदरास।

वनस्पतिया—महावीर जडी बूटी आयुर्वेद भवन, शिवपुर (मध्यप्रदेश)

वैद्य कृष्णदत्त जोशी रतलाम,
चितकार जीवन रसायन आयुर्वेदिक फार्मेसी, भोपाल।
एम सी राय, कन्सरवेटर आफ फोरेस्ट, जबलपुर।
डा धर्म वीर वर्मा शिवपुरी।
जडी बूटी आयुर्वेद भवन, खनिया दाना [म. प्र]
छोटेलाल रामसेवक तिवारी पो०आ०बक्स६७, कटनी

वनस्पतियां और गोंद—अगर दाल अेण्ट सन्स, ४२८ कालबा देवी रोड, मुंबई।

बाबमल सन्तशरण,२०४,सेम्युल स्ट्रीट,वड़गादी बोम्बे३
इण्डो केमिकल अेण्ड ट्रेडिंग क०,पो आ बक्स२३६७ बोम्बे-२
क्वालिटी ट्रेडर्स,३८४ बी डागोलकर वाडी,कालवादेवी रोड, बम्बई–२
सूरजी वल्लभ दास,स्वदेशी बाजार स्ट्रीट,२२०–२० शेख मेमन स्ट्रीट, बम्बई–२
सुश्रुत औषधि भण्डार, ३६८, पायधुनी, बम्बई—३
यूनानी अेण्ड आयुर्वेदिक औषधि भण्डार, २४५ कालबादेवी रोड, बम्बई–२
वनस्पति एसेंस और तेलादि–कोलोनियल ट्रेडर्स, पो० आ० बक्स ७००८, बम्बई—२८
जादव जी लल्लू भाई अेण्ड क,२५४-कालबादेवी रोड, बम्बई–२
कीरितचन्द एण्ड कं ,१८५|१८७,सेम्युल स्ट्रीट,बम्बई-९
शाह सेठ अेण्ड कम्पनी, २६४, सेम्युल स्ट्रीट,बडगादी बम्बई।
मिश्रा महाराष्ट्र फार्मेसी, बरहामपुर।
विश्व अेण्ड क , पो० बक्स १०६८, बोम्बे—१
सूरणसीध होरया सीघ,३६/४८ मसजीद बन्दर रोड, फस्ट फ्लोर, बोम्बे—७

मोती, केसर, कस्तूरी—ठाकर दास अमरनाथ, २२६|७ रामनिवास, सियन इस्ट, बम्बई—२२

कस्तूरी,केसर–करसनदास लुधा,२३६,सेम्युल स्ट्रीट,बम्बई-३

थाईमोल—नारदेन केमिकल वर्कस इंडिण्या लि०, २ पूना स्ट्रीट, ओपो० प्रिसेज पार्क,फरिरि रोड बम्बई—९

जितियाना का सत्त–ऐंग्लो थाई कारपोरेशन लि०, इवारट हाउस, बुसी स्ट्रीट पो० आ० बक्स ७०, बम्बई।

वसलोचन, कपूर, शिलाजीत,कौडी,बारहसिंगा,बीरबहोटी–नेपालट्रेडर्स एजेंसी,९५|९७,भण्डारीस्ट्रीटवेदगादी बोम्बे

सी सी ट्रेडर्स, ७९, मिड़ो स्ट्रीट, फोर्ट बोम्बे।
क्वालिटी ट्रेडर्स ३८४, बी. डभोकर वाडी, कालवा देवी रोड, मुंबई—२

नारियल का तेल—स्वस्तिक आयल मिल्स लि०, २७ वसटियन रोड, फोर्ट वम्बई।

टिमको सेल डिपो, केश्वजी विल्डिग १४६,फ्रियरगेड, बोम्बे।

स्वस्तिक फ्फोर अेण्ड आयल मिल्स, ८७ वाजार गेट स्ट्रीट, बम्बई।

सुगन्धित वस्तुये—एम आर. मोदी, ३—बी, मगलदास बिल्डिग, २९, बोम्बे—२

इण्डो केमिकल अेण्ड ट्रेडिंग क.पो व.२३६७ बोम्बे—२

ग्लोब ट्रेडिंग कारपोरेशन,१५६, ललित निवास, लेडी जमशेदजी रोड, महिम, बोम्बे—८

प्रभाकर अेण्ड कम्पनी, नूतन नगर, टरनररोड,वान्द्रा बोम्बे।

हसनअली कमरुद्दीन,१६ छिपी चाल स्ट्रीट, बोम्बे—२

एस.एच.केलकर अेण्ड क.,३६ मगलदास रोड,वोम्बे—२

सुगन्धित पदार्थ—बोम्बे एसेंस सप्लाई क., १७४, होर्नवाइ रोड, हार्नवाई बिल्डिग, बोम्बे—१

मोती, खरड, जवाहरात—नगीनदास, वीर चन्द्र भवेरी, ४४.४६ धनजीस्ट्रीट, बोम्बे २

वनस्पतियो के आयातकर्त्ता—सेन्ट्रल कर्मासियल एजेंसी, पो आ. बक्स ५०९०, बोम्बे—९

दवाइयां वनस्पतियां, रसायनिक दवाइयें—भारतकुञ्ज ड्रग्स, सप्लाई क, विस्को चेम्बर,३९४ काथा बाजार, पो आ व न ५०१९, वोम्वे—६

श्रीराम फ्लोरमिल्स,८१,गुन्दोपन्थस्ट्रीट,बेंगलोर सिटी।

साबुन, सुपारी चूर्ण, मधु —मलनाद ग्रामसट्रेडिंग क, मेदी मरचेंटस, बी एच रोड, शिमोगा।

रेगमाही, वीर बहूटी, नीम तेल और गोलोचन—एग्रीकलच्युरल डिपार्टमेट, जोधपुर।

रामदित्तामल लोचन दास, सर्राफा बाजार अलवर।

वनस्पतिया,शहद,शंख—गङ्गाधर शर्मा क,बुम्मानगली,पुष्कर

अरावली मधु शाला, दौलत विल्ला, अलवर।

जगदम्बा आयुर्वेदिक फार्मेसी, सरपुरें, पो आ गु टी, अलवर

क्षार—रामकृष्ण राजपूत ओषधालय,पो जोहरहारा,भरतपुर

गोवर्द्धनदाधीच, भवाण्डी—वेवरी, बूंदी।

चर्बी—अनाप सनाप कार्यालय, करौली (राज)

एच. शेरसिह किशन प्रसाद भट नागर, करौली।

उटंगण का तेल—वफोरी कुन्दनलाल रामकरण, वालोतरा

मोती, जवाहरात की खरडे—नन्द लाल सूरजमल, लाल कटरा, जयपुर।

खनिज पदार्थ—सन्नोखान—जयपुर।

मोती—मानूमल सूरजमल—जयपुर।

वचेरी लाल सोहन लाल झवेरी, लाल कटरा,जयपुर।

क्षार और मण्डूर—लक्ष्मी विलास आयुर्वेदिक फार्मेसी, भावन्दी-बेबरी, बून्दी (राज)

वनस्पतियो के विक्रेता—गुलाब चन्द लादू राम अत्तार, नया बाजार, अजमेर।

गङ्गा बिशन गोपी किशन पसारी नया बाजार,अजमेर

बोहराअली अमरजी बाटली वाला,मोचीवाड़ा,उदयपुर

बोहरामुहम्मदअली बाटलीवाला मण्डी कीनाल उदयपुर

सिल्वी कल्चुरिस्ट फोरेस्ट डिपार्टमेंट, गवरमेट आफ राजस्थान, जयपुर।

मधु—हनी हाउस, चाम्बा, वाया—डलहौजी, हि. प्र.।

वत्सनाभ—हर्वल होम, पो आ रिनोक, सिक्किम।

डी शमशेर, पाक याग सिक्किम।

एरंड ककडी का दूध—अे एस. चांटया अेण्ड क, ११०—११२ मालिबन स्ट्रीट कोलम्बो, श्री लङ्का।

अे मीरा मोहीद्दीन अेण्ड सन्स,वक्स हाल स्ट्रीट,पो. आ बक्स ३७५, कोलम्बो।

एस एम. मोहिन्दर अेण्ड सन्स, पो.आ. बक्स ८०४, कोलम्बो।

केसर, कस्तूरी, खट्टासी, शिलाजीत—दयोराम सिंह, १०, हिल वियू होटल, मक्खन गल्ली, काठमाडू, नैपाल।

नेशनल कर्मासियल इन्टर प्राइजेज,७|१२२, मारुटोले, काठमांडू, नैपाल।

डिपार्टमेंट आफ एजूकेशन,गवर्नमेंट आफ नैपाल,गवर्नमेंट वोटेनिस्ट काठमांडू, नैपाल।

नेपाल—हिमालया कस्तूरी भण्डार, ललितपुर, नेपाल।

साहु नारायण बहादुर, महापाल, पाटन, नेपाल।

मधु—अब्दुलसत्तार, अब्दुलजब्बार, जनरलमर्चेन्ट, मेक्का

मधु और यूनानी वनस्पतियां—अब्दुल रहीम पो आ. सैयद शरीफ, तहसील मत्था, विजेज, नालकोट, जिला-माडरन [पाकिस्तान]

बलुचिस्तान ड्रग एण्ड सीड सिंडीकेट,सानदेमन रोड, क्वेट्टा। [पाकिस्तान]

मोती, सीप और समुद्री उपज—परमियन गल्फ सलेम ए अरेयर बेहरायन, परसियन गल्फ, पाकिस्तान।

बनौषधि विशेषांक [छठवें भाग]

की

संदर्भ सूची

(अकारादि क्रमानुसार)



आ, इ ई

उ, ऊ

ए, ऐ, ओ, औ, अं

क, ख, ग,

घ, च

छ, ज

क्ष-त्र

संस्थापित १८९८

धन्वन्तरि कार्यालय

विजयगढ़ [अलीगढ़]

को

प्रामाणिक आयुर्वेदिक औषधियां

एवं

चिरपरीक्षित सफल पेटेंट औषधियां

(केवल रजिस्टर्ड चिकित्सकों के लिये)

हम गत ७५ वर्षो से शास्त्रोक्त विधि से अत्युत्तम द्रव्यो द्वारा योग्य एव अनुभवी व्यक्तियो की देख-रेख में पूर्ण प्रभावशाली आयुर्वेदिक ओषधियो का निर्माण कर भारत के प्रतिष्ठित चिकित्सको को उचित मूल्य पर सप्लाई करते हे। हम अपनी ओषधियो का अन्य फार्मेसियो की तरह धुआधार प्रचार नही करते हैं। लेकिन हमारी ओषधिया अपने गुणो के कारण उत्तरोत्तर अधिकाधिक प्रचार प्राप्त कर रही हैं। आप से भी साग्रह निवेदन है कि हमारी 'ओषधियो को एक बार व्यवहार करके उनकी परीक्षा अवश्य करें।

नियम

कमीशन—

अ १५.०० से कम मूल्य की दवा मगाने पर कोई कमीशन नही दिया जायगा ।

आ २५.०० तक की दवा मगाने पर १२॥ प्रतिशत कमीशन दिया जायेगा ।

इ २५.०० से अधिक मूल्य की दवा मगाने पर २५ प्रतिशत कमीशन दिया जायेगा ।

ई १५०.०० से अधिक मूल्य की दवा मगाने पर २५ प्रतिशत कमीशन दिया जायगा-तथा मालगाडी का किराया कार्यालय देगा ।

उ ७५.०० से अधिक नैट मूल्य (कमीशन कम करके) की केवल रस रसायन मूल्यवान औषधिया मगाने पर पोस्ट-व्यय कार्यालय देगा ।

आर्डर देते समय—

अ. आदेश पत्र मे औषधियो का नाम, उसका नम्बर, तौल, पैकिंग की तौल तथा मूल्य सभी बातें स्पष्ट लिखें । नीचे मूल्य का जोड़ लगावें तथा उपयुक्त नियमानुसार जो कमीशन बनता है उसको भी लिखे । यदि आप एजेंट है तो एजेसी नम्बर भी लिखे ।

आ हर पत्र मे अपना पूरा पता तथा पास के रेलवे स्टेशन का नाम अवश्य लिखें ।

इ पार्सल—पोस्ट से भेजी जाय या रेल से, सवारी गाडी से भेजी जाय या मालगाडी से । यह विवरण अवश्य लिखना चाहिये ।

ई आर्डर देते समय चौथाई मूल्य अथवा कम से कम ५.०० एडवास मनियार्डर से अवश्य भेजें तथा आदेश पत्र मे मनियार्डर का नम्बर व तारीख लिख दें ।

३—दवा भेजते समय पैकिंग करने मे पूर्ण सावधानी रखी जाती है और प्राय टूट फूट नही होती । किंतु अगर किसी कारण कोई टूट फूट हो जाती है तो उसका जिम्मेदार कार्यालय नही है ।

४—पार्सल मगाकर वी. पी. लौटाना अनुचित है । एक वार वी पी वापिस आने पर कार्यालय पुन उस ग्राहक को वी पी न भेजेगा तथा खर्चा लेने का हकदार होगा । यदि विल में कोई भूल हो तो वी पी. छुडा पत्र डालकर उसका सुधार करालें ।

५—हमारे उधार का लेना देना नही है । बीजक का रुप बैंक या वी पी. से लिया जाता है ।

६—सभी ग्राहको को ३ प्रतिशत सेलटैक्स अवश्य देना होगा । यू. पी से वाहर के ग्राहको को १० प्रतिशत सैल टैक्स देना होगा । आर्डर के साथ सी फार्म भेज देने पर ३% सैल टैक्स लगेगा ।

७—ग्राहको को पार्सल का वारदाना, पैंकिंग व्यय, पोस्ट-व्यय, स्टेशन पहुचाई आदि सभी खर्च पृथक देने होते हैं ।

८—धन्वन्तरि कार्यालय के किसी भी विभाग का कोई भी झगडा अलीगढ की अदालत मे तय होगा ।

९—नियमो मे अथवा औषधियो के भावों मे किसी भी समय सूचना दिये बिना परिवर्तन करने का कार्यालय को पूरा अधिकार है ।

आवश्यक-सूचना

सेलटैक्स में परिवर्तन

निवेदन है कि औषधियो पर उत्तर-प्रदेश सरकार ने १।७।६९ से विक्रीकर ३ प्रतिशत कर दिया हे । परिणामस्वरूप अन्तर्प्रान्तीय कर १०% हो गया है । अन्य प्रान्तो के ग्राहको से अव हमको १०% विक्रीकर लेना होगा । यदि आप आर्डर के साथ C फार्म भेज देगे तो सेलटैक्स ३ % लिया जायगा ।

१—उत्तर प्रदेश के ग्राहको से अव तक दो प्रतिशत विक्रीकर लिया जाता रहा है लेकिन अव ३ प्रतिशत लिया जायगा ।

२—उत्तर प्रदेश से वाहर के ग्राहक यदि आर्डर के साथ (वाद मे नही) सी फार्म भेज देगे तो ३% विक्रीकर लिया जायगा । यदि C फार्म नही भेजेंगे तो बिक्रीकर १० प्रतिशत लिया जायगा ।

आप आर्डर देते समय उक्त नियमो के अनुसार विक्रीकर लगाने की स्वीकृत अवश्य दीजियेगा अन्यथा पत्र व्यवहार मे व्यर्थ देरी होगी । उत्तर प्रदेश से वाहर के ग्राहक जिनके पास सी फार्म हो वे आर्डर के साथ ही सी फार्म अवश्य भेजे ।

—निवेदक

व्यवस्थापक—धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ (अलीगढ)

शास्त्रोक्त औषधियां



कूपीपक्व रसायन

	१ ग्राम	१० ग्राम
सि. मकरध्वज न १	५ ६०	५५.००
सि. मकरध्वज न २	४ १०	४०.००
सि. मकरध्वज न ३	३.१०	३० ००
सि. मकरध्वज न ४	३.६०	३५ ००
सि मकरध्वज न ५	२ ६०	२५.००
सि मकरध्वज न ६	२ ३०	२२.००
सि. चन्द्रोदय न १	६.१०	६० ००
अनुपान मकरध्वज	१ ००	९ ००
रस सिंदूर न १	१ ९०	१८ ००
रस सिंदूर न० २	१.७०	१६ ००
रस सिंदूर न० ३	१.४०	१३.००
मल्ल चन्द्रोदय	५ ६०	५५.००
मल्ल सिंदूर	१.४०	१३ ००
ताल सिंदूर	१.४०	१३ ००
ताम्र सिंदूर	१.४०	१३.००
शिला सिंदूर	१.४०	१३ ००
स्वर्णवङ्ग भस्म	० ६०	५.००
मृतसजीवनी रस	० ५५	४ ५०
रस माणिक्य	० ४५	३ ५०
समीरपन्नगरस न १	३ ३०	३२ ००
समीरपन्नगरस न २	१ ४०	१३ ००
पञ्चसूत रस	१.४०	१३.००
स्वर्णभूपति रस	३ ३०	३२.००
व्याधिहरण रस	१.८०	१७ ००

भस्में

	३ ग्राम	१० ग्राम
अभ्रक भस्म न १	१५.३०	५० ००
अभ्रक भस्म न २	१.६५	५ २५
अभ्रक भस्म न ३	१ ००	३.१०
अकीक भस्म	१ १०	३.५०
कपर्द (कौड़ी) भस्म	० ४०	०.९०
कांत लोह भस्म	१ ००	३.१०
कुक्कटाण्डत्वक भस्म	० ४०	१ ००
गोदन्ती हरताल भस्म	० ४०	० ७५
जहरमोहरा भस्म	० ९०	२ ७५
तबकीहरताल भस्म	२ ७५	९ ००
ताम्र भस्म न० १	२ १५	७-००
ताम्र भस्म न.२	१.६५	५.२५
ताम्र भस्म न ३	१ ३०	४ १०
नाग भस्म न० १	१ २०	३ ५०
नाग भस्म न० २	०.७०	२ १०
प्रवाल भस्म न.१	२ ००	६ ५०
प्रवाल भस्म न.२	० ८५	२ ५०
प्रवाल भस्म न ३	० ८५	२ ५०
प्रवाल भस्म न ४	० ८०	२ २५
प्रवाल भस्म चन्द्रपुटी	० ८०	२ २५
वङ्गभस्म न.१	१.३०	४ १०
बङ्गभस्म न २	१ ००	३ १०
वैक्रांत भस्म	२ २५	७ २५
मल्ल [संखिया] भस्म	२ २५	७.२५
मृगश्रृङ्गभस्म श्वेत	० ४०	० ७५
माणिक्य भस्म	२ ८५	६ ००
माण्डूर [कीट] भस्म न १	० ४०	० ८०
माण्डूर भस्म न २	० ३०	० ७०
मुक्ताभस्म न १	३६ ००	१२०.००
मुक्ता भस्म न २	२७ ००	६० ००
यशद भस्म	० ६०	१ ७५
रौप्य भस्म न १	४ ३०	१४ ००
रौप्य भस्म न २	३.८५	१२ ५०
लोह भस्म न १	३ २५	१० ००
लोह भस्म न २	० ७५	२ १०
लोह भस्म न ३	० ६०	१ ६०
स्वर्णभस्म	११५ ००	×
स्वर्ण माक्षिक भस्म	० ७५	२ ३०
शङ्ख भस्म	० ३०	० ६५
शङ्कर लोह भस्म	१ ४०	४ ५०
शुक्ति भस्म [मोती सीप]	० ३०	०-७५
सगजराहत भस्म	०-३५	०.८०
त्रिबंग भस्म न १	१ ४०	४.५०
त्रिबंग भस्म न. २	० ६५	१.८०

पिष्टी

	३ ग्राम	१० ग्राम
प्रवाल पिष्टी	० ८०	२.२५
मुक्ता पिष्टी न १	३३ ००	११०.००
मुक्ता पिष्टी न २	२४ ००	८०.००
अकीक पिष्टी	० ८०	२.२५
जहर मोहरा पिष्टी	० ८०	२.२५
कहरवा पिष्टी	३ १५	१० ००
मुक्ताशुक्ति पिष्टी	० ३०	०.६५
माणिक्य पिष्टी	१.८५	६.००
वैक्रांत पिष्टी	१.८५	६ ००

शोधित द्रव्य

	१०० ग्राम	१० ग्राम
शुद्ध गंधक आमलासार	४ ००	० ५०
शुद्ध बच्छनाग	६ ००	० ७०
शुद्ध विष बीज [वस्त्रपूत]	८ ५०	० ९५
शुद्ध जयपाल	५.००	० ६०
शुद्ध भल्लातक	५ ००	० ६०
शुद्धताल [हरताल]	१२ ००	१.३०
शुद्धशिला (मनशिल)	१२ ००	१ ३०
शुद्ध ताम्रचूर्ण १ किलोग्राम		३६.००
शुद्धलोह [फौलाद]	,,	७ ००
शुद्ध धान्याभ्रक (शुद्ध वज्राभ्रक)	,,	६ ५०
शुद्ध माण्डूर	,,	३ ००

पर्पटी

	१ ग्राम	१० ग्राम
ताम्र पर्पटी न १	१ ००	६ ००
ताम्र पर्पटी न २	० ६०	४ ५०
पचामृत पर्पटी न १	१ ००	६ ००
पचामृत पर्पटी न. २	० ६०	४ ५०
विजय पर्पटी (स्वर्णमुक्ता घटित)	३ ८०	३७ ००
बोल पर्पटी न १	० ८०	७ ००
बोल पर्पटी न २	० ५०	३ ५०
रस पर्पटी न १	१ ००	६ ००
रस पर्पटी न २	० ७०	५ ००
लोह पर्पटी न १	१.००	६ ००
लोह पर्पटी न २	० ७०	५ ००
श्वेत पर्पटी	×	० ५०
स्वर्ण पर्पटी न १	३ ८०	३७ ००
स्वर्ण पर्पटी न २	२ ५०	२४ ००

नोट–न १ की पर्पटी विशेष शुद्ध-पारद से निर्मित हैं तथा न २ हिंगुलोत्थ पारद द्वारा निर्मित है। न १ की पर्पटी की मात्रा कम और गुण अधिक होने से इसे व्यवहार मे अधिक लेते है।

बहुमूल्य

रस रसायन गुटिका

	१ ग्राम	१० ग्राम
आमवातेश्वर रस	१ ८०	१७ ००
वृ कस्तूरी भैरवरस	३ ६०	३६.००
कस्तूरी भैरवरस	३ १०	३० ००
कस्तूरी भूषण रस	३ १०	३० ००
वृ कामचूडामणिरस	१ ८५	१७ ५०
कामदुग्धा रस	१ ३०	१२ ००
कुमारकल्याण रस	६ ६०	६५ ००
कृष्णचतुर्मुख रस	२ १०	२० ००
चतुर्मुख चिंतामणि रस	२ ९०	२८ ००
जयमगल रस (स्वर्णयुक्त)	४ ३०	४२ ००
प्रवालपचामृत रस	१ ५०	१४ ००
पुटपक्वविषमज्वरांतक लोह	२ २०	२१.००
वृ पूर्णचन्द्र रस	२ ५०	२४ ००
बसतकुसुमाकर रस	४ ३०	४२ ००
वृ वातचितामणि रस	५ १०	५० ००
ब्राह्मीवटी न १ (स्वर्णमुक्तायुक्त)	४ ३०	४२ ००
मृगाकपोटली रस	१० ९०	१०८ ००
मधुरोल १० गोली		३ ८०
मधुरान्तक वटी (मौक्तिकवटी)	१ ८५	१७ ५०
महाराजनृपतिवल्लभ रस	१ २०	११ ००
महालक्ष्मीविलास [नारदीय]	१ ५०	१४ ००
महाराजवङ्ग भस्म	१ ३०	१२ ००
योगेन्द्र रस	४ ९०	४८ ००
रसराज रस	३ ५०	३४ ००
राजमृगाक रस	३ ६०	३५ ००
वृ लोकनाथ रस	० ७०	५ ७५
श्वासचितामणि रस	२ १०	२० ००
श्वासकासचिता रस	३ ६०	३५ ००
स्वर्णवसतमालती न १	४ ३०	४२ ००
स्वर्ण वसतमालती न २ (शास्त्रीय)	२ ९०	२८ ००
सर्वाङ्गसुन्दर रस	४ १०	४० ००
सग्रहणी कपाट रस न. १	४ १०	४० ००
सूतशेखर रस न १ [स्वर्णयुक्त]	२ २०	२१ ००
हिरण्यगर्भ पोटलीरस	३ ९०	३८ ००
हेमगर्भ रस	४ १०	४० ००

रसायन गुटिका

	१० ग्राम	५० ग्राम
अग्निकुमार रस	० ८०	३ ५०
अमरसुन्दरवटी	० ९५	४ २५
अजीर्ण कण्टक रस	०.९५	४ २५
अग्नितुण्डी वटी	०.८५	३.७५
आनन्दभैरवरस [लाल]	१ ५०	७ ००
आनन्दोदय रस	१ ९०	९.००
आदित्य रस	१ ५०	७ ००
आमलकी रसायन	१ २०	५ ५०
आरोग्यवर्धिनी वटी	१ २०	५ ५०
इच्छाभेदी रस	१ ४०	६ ५०
इच्छाभेदीवटी [गोली]	१ ५०	७ ००
उपदशकुठार रस	० ९५	४ २५
एकागवीर रस	५ ००	२४.५०
एलादि वटी	०.७०	३ ००
एलुआदि वटी	० ७०	३ ००
कनकसुन्दर रस	१ २०	५ ५०
कफकुठार रस	१ ७०	८.५०
कफकेतु रस	० ९५	४ २५
करजादिवटी ५० गोली		१.२०
कामदुधा रस न २	२ ५०	१२ ००
काकायन गुटिका	० ८०	३.५०
कीटमर्द रस	० ८०	३ ५०
क्रव्यादि रस	४ ५०	२२ ००
कृमिकुठार रस	१ ६०	७ ५०
खैरसार वटी	० ७५	३.२५
गगाधर रस	२ १०	१० ००
गन्धक वटी	० ९५	४ २५
गन्धक रसायन	१ ९०	९ ००
गर्भविनोद रस	१ २०	५ ५०
गर्भपाल रस	२ ५०	१२ ००
गर्भचितामणिरस	३ ५०	१७ ००
गुल्मकुठार रस	१ ४०	६.५०
गुल्मकालानल रस	१ ६०	७ ५०
गुडपिप्पली	० ८०	३ ५०
गुडमार वटी	०.७०	३ ००
ग्रहणी गजेन्द्र रस	३ ७०	१८ ००
ग्रहणीकपाट रस न २	२ ९०	१४ ००
घोडाचोली रस [अश्वकचुकी रस]	१ २०	५ ५०

	१० ग्राम	५० ग्राम
चन्द्रप्रभा वटी	१ २-	५ ५०
चन्द्रोदयवर्ती	१.००	४ ५०
चन्द्रकला रस	१ ६०	७ ५०
चन्द्रासु रस	१.९०	९ ००
चन्द्रामृत रम	१ २०	५ ५०
चित्रकादि वटी	० ८०	३.७५
ज्वराकुश रस	१ १०	५ ००
जयवटी	१.९०	९ ००
जलोदरारि वटी	१ ३०	९ ००
जातीफल रस	२ ९०	१४ ००
तक्रवटी	१ ५५	७ २५
दुर्जलजेता रस	१ १५	५ २५
दुग्धवटी न २	१ ५५	७ २५
नवज्वरहर वटी	१ ५५	७ २५
नष्ट पुष्पातक रस	४ ३०	२० ००
नृपतिवल्लभ रस	१ ९०	९ ००
नाराच रस	१.३०	६ ००
नित्यानन्द रस	१ ४०	९ ५०
प्रताप लकेश्वर रस	१ ३०	६ ००
प्रदरारि रस	१ ५०	७ ००
प्रदरातक रस	२ ४०	११ ५०
प्लीहारि रस	१ ३०	६ ००
प्राणेश्वर रस	३ ५०	१७ ००
प्राणदा गुटिका	० ७५	३ २५
पचामृत रस न १	१.८०	८ ५०
,, न २	२.१०	१० ००
पाशुपत रस	१.३०	६००
पीपल ६४ प्रहरी	४ ३०	२१ ००
वृ शङ्ख वटी	१ १०	५ ००
वृ नायकादि रस	० ९५	४ २५
वहुमूत्रान्तक रस	५ ००	२४.५०
वहुशाल गुड	० ८०	३ ५०
वालामृत रस(वटी)	५ ७०	२८ ००
ब्राह्मी वटी न २	२ २०	१० ५०
वातगजाकुश रस	२ २०	१० ५०
विषमुष्टिका वटी	० ९५	४ २५
वृद्धिवाधिका वटी	२ ३०	११ ००

	१० ग्राम	५० ग्राम
वैताल रस	२ ९०	१४ ००
व्योषादि वटी	० ७०	३ ००
महामृत्युञ्जय रस (रक्त)	२ १०	१०.००
,, (कृष्ण)	२ १०	१० ००
मकरध्वज वटी ५०० गोली		४६ ००
महागन्धक रस	४.१०	२० ००
मरिच्यादि वटी	० ७०	३ ००
महाशूलहर रस	१ ८०	८ ५०
महावातविध्वस रस	३.७०	१८.००
मार्कण्डेय रस	१.३०	६ ००
मूत्रकृच्छ्रातक रस	४ ३०	२१ ००
मेहमुद्गर रस	१ ५०	७ ००
रक्तपित्तातक रस	१ ८०	८ ५०
रस पीपरी	३.१०	१५ ००
रामबाण रस	१ ३०	६ ००
लवग्वादि वटी	१ ००	४ ५०
लशुनादि वटी	० ८०	३ ००
लघुमालती वसत	३.१०	१५ ००
लक्ष्मीविलास रस	२ ५०	१२ ००
लक्ष्मीनारायण रस	३ ७०	१८ ००
लाई (रस) चूर्णं	१ ३०	६ ००
लीलावती गुटिका	१ ३०	६ ००
लीलाविलास रस	२ १०	१० ००
लोकनाथ रस	२.३०	११ ००
श्वासकुठार रस	१ ३०	६ ००
शङ्खवटी	०.८०	३ ००
सशमनी वटी	१ ३०	६ ००
शिरोवज्र रस	१ ५०	७ ००
शिलाजीत वटी	२ १०	१० ००
शीतभञ्जी रस(वटी)	२ ४०	११ ५०
शूलवज्रिणी वटी	१ ५०	७.००
शूलगजकेशरी रस	२ ९०	१४ ००
श्रृङ्गाराभ्रकं रस	२ ३०	११ ००
समीरगज केशरी	५ ७०	२८ ००
स्मृतिसागर रस	४ ३०	२१ ००
सन्निपात भैरव रस	१ ९०	९.००

	१० ग्राम	५० ग्राम
सजीवनी वटी	० ८०	३ ००
सर्पगधावटी	२ ३०	११ ००
सिद्धप्राणेश्वर रस	१ ३०	६.००
शूत शेखर रस	३.५०	१७.००
सूरण मोदक वृ	०.८०	३ ००
सौभाग्य वटी	१.३०	६.००
हिंग्वादि वटी	०.८०	३ ००
हृदयार्णव रस	३ १०	१५.००
त्रिपुर भैरव रस	१.५०	७.००
त्रिभुवन कीर्ति रस	१ २०	५ ५०
त्रिविक्रम रस	३.५०	१७.००

लोह-माण्डूर

अम्लपित्तातक लोह	२ ३०	११ ००
चदनादि लोह(ज्वर)	१ ५०	७ ००
चदनादि लोह(प्रमेह)	१.८५	८ ७५
ताप्यादि लोह	३ ५०	१७ ५०
धात्री लोह	१ ३०	६ ००
नवायस लोह (लोह-भस्म से निर्मित	१ ००	४ ५०
प्रदरारि लोह	१.६०	७.५०
प्रदरान्तक लोह	१ ९०	९ ००
पुनर्नवादि माण्डूर	१ ००	४ ५०
विडगादि लोह	१ १०	५ ००
विषम ज्वरातक लोह	१ ८०	८ ५०
यकृत हर लोह	१ ६०	७.५०
शोथोदरारि लोह	२ १०	१०.००
सर्वज्वरहर लोह	१.८०	८ ५०
सतामृत लोह	१ ५०	७.००
त्र्यूषणादि लोह	१ ५०	७ ००

गुग्गुल

अमृतादिगुग्गुल	० ८०	३.००
काचनार गुग्गुल	० ७०	२ ५०
किशोर गुग्गुल	० ७०	२ ५०
गोक्षुरादि गुग्गुल	० ७०	२.५०
पुनर्नवादि गुग्गुल	०.७०	२ ५०
वृ योगराज गुग्गुल	१ ४५	६ ७५

	१० ग्राम	५० ग्राम		१० ग्राम	५० ग्राम		१० ग्राम	५० ग्राम
योगराज गुग्गुल	० ६०	२ ००	रास्नादि गुग्गुल	०.७०	२ ५०	त्रयोदशाग गुग्गुल	० ७०	२.५०
रसाभ्र गुग्गुल	१ ३०	६ ००	सिंहनाद गुग्गुल	०.७०	२ ५०	त्रिफलादि गुग्गुल	०.७०	२ ५०

अरिष्ट—आसव

	६००मि. लि (१ वोतल)	४००मि लि (१ पौंड)	२१०मि लि (८ औंस)
अमृतारिष्ट	३ ६०	३ ०५	१ ७०
अर्जुनारिष्ट	३.७०	३ १०	१ ७५
अरविंदासव न० १	६ ३५	७ ८५	४ २०
केशरयुक्त	१०० मि लि.		२ ३५
अरविंदासव न० २	४ १०	३ ३५	२ १०
अशोकारिष्ट	३.७०	३.१०	१ ७५
अभयारिष्ट	३.७०	३ १०	१ ७५
अश्वगधारिष्ट	४ १०	३.३५	२ १०
उशीरासव	३ ६०	३.०५	१ ७०
कनकासव	३.६०	३.०५	१ ७०
कुमारी आसव	३ ७०	३ १०	१ ८०
कुटिजारिष्ट	३ ७५	३ १५	१ ८५
खदिरारिष्ट	३ ५०	३.०५	१ ७०
चन्दनासव	३ ५०	३.०५	१.७०
दशमूलारिष्ट न० १ (कस्तूरी सहित)	६.५०	५.३५	२.६०
दशमूलारिष्ट न० २ (कस्तूरी रहित)	४ ००	३.३०	१ ६५
द्राक्षासव	४.००	३ ३०	१.६५
द्राक्षारिष्ट	४ ००	३.३०	१ ६५
देवदार्व्यारिष्ट	३ ७०	३.१०	१.८०
पत्रागासव	३.७०	३.१०	१.८०
पिपल्यासव	३ ७०	३.१०	१ ८०

	६००मि. लि. (१ बोतल)	४००मि लि. (१ पौंड)	२१०मि. लि (७ औंस)
पुनर्नवासव	३.५०	३ ०५	१ ७०
वल्लभारिष्ट	६.१०	५ ००	२ ६५
बबूलारिष्ट	३ ५०	३ ०५	१ ७०
वासारिष्ट	४ ००	३ ३०	१.६५
बालरोगांतकारिष्ट	४.५०	३ ७५	२ ०५
विडङ्गासव	३.६०	३ ०५	१ ७०
रक्तशोधिकारिष्ट	४ १०	३ ३५	१.६५
रोहितकारिष्ट	३ ५०	३ ०५	१ ७०
लोहासव	३ ३०	२ ८५	१ ६५
सारस्वतारिष्ट न० १ (स्वर्णयुक्त)	×	×	७ ६०
सारस्वतारिष्ट न० २	४.५०	३.७०	२ ००
सारिवाद्यासव	४.००	३.३०	१ ६५

अर्क

अर्क उसवा	४.१०	३.४०	१ ८०
दशमूल अर्क	२ ५०	२.२५	१ २५
द्राक्षादि अर्क	३.१०	२.८०	१ ५०
महामजिष्ठादि अर्क	२.५०	२ २५	१ २५
रास्नादि अर्क	२.५०	२.२५	१ २५
सुदर्शन अर्क	२ ८०	२.५०	१ ३५
अर्क सौंफ	२.७५	२ ४५	१ ३५
अर्क अजवायन	२.७५	२.४५	१ ३५
अर्क पोदीना	२.८०	२ ५०	१ ३५

क्वाथ

दशमूल क्वाथ १ किलोग्राम	१ ७५
१०० ग्राम	० ३०
२० ग्राम की १०० पुड़िया	७ ००
दार्व्यादि क्वाथ १ किलो०	५ ००
१२५ ग्राम की ८ पुड़ियां	५ ५०
देवदार्व्यादि क्वाथ १ किलो०	४ २५
१२५ ग्राम की ८ पुड़िया	४ ७५
बलादि क्वाथ १ किलोग्राम	३ ००
१२५ ग्राम की ८ पुडिया	३ ५०
महामजिष्ठादि क्वाथ	५.००
१२५ ग्राम की पुड़िया	५.५०
महारास्नादि क्वाथ १ किलो०	५ ००
१२५ ग्राम की ८ पुडिया	५ ५०
त्रिफलादि क्वाथ १ किलो०	४ २५
१२५ ग्राम की ८ पुडिया	४ ७५

चूर्ण

	१ किलोग्राम	५० ग्राम		१ किलोग्राम	५० ग्राम		१ किलोग्राम	५० ग्राम
अग्निमुख चूर्ण	१४.००	०.९५	जातीफलादि चूर्ण	२८.००	१.६५	लबंगादि चूर्ण	२४.००	१.५०
अविपत्तिकर चूर्ण	१२.५०	०.९०	तालीसादि चूर्ण	२१.००	१.३०	लवणभास्कर चूर्ण	१२.००	०.९०
अजीर्ण पानकचूर्ण	१७.००	१.१०	दशनसंस्कार चूर्ण	१७.००	१.१०	सारस्वत चूर्ण	१४.००	०.९५
उदरभास्कर चूर्ण	१६.००	१.०५	नारायण चूर्ण	१४.००	०.९५	सामुद्रादि चूर्ण	१६.००	१.०५
एलादि चूर्ण	२१.००	१.३०	निम्बादि चूर्ण	१४.००	०.९५	शृंग्यादि चूर्ण	१७.००	१.१०
कपित्थाष्टक चूर्ण	१२.५०	०.९०	प्रदरांतक चूर्ण	१४.००	०.९५	सितोपलादि चूर्ण	३५.००	२.००
कामदेव चूर्ण	१६.००	१.०५	पञ्चसकार चूर्ण	११.००	०.८०	[असली वंशलोचन से बना हुआ]		
गङ्गाधर चूर्ण	१४.००	०.९५	प्रदरादि चूर्ण	१४.००	०.९५	महासुदर्शन चूर्ण	११.००	०.८०
चन्दनादि चूर्ण	१४.००	०.९५	पुष्यानुग चूर्ण	१४.००	०.९५	हिंग्वाष्टक चूर्ण	२०.००	१.२५
ज्वर भैरव चूर्ण	१४.००	०.९५	यवानीखाण्डव चूर्ण	१४.००	०.९५	त्रिफलादि चूर्ण	९.००	०.७०

तैल–घृत

	४०० मि. लि.	१०० मि. लि.	५० मि. लि.		४०० मि. लि.	१०० मि. लि.	५० मि. लि.
आंवला तैल	८.५०	२.२०	१.२५	महाविषगर्भ तैल	१०.५०	२.७५	१.४५
इरिमेदादि तैल	९.००	२.४०	१.३०	बैरोजा तैल	१४.००	३.६५	१.९५
कटफलादि तैल	१०.५०	२.७५	१.४५	महामरिच्यादि तैल	९.००	२.४०	१.३०
कन्दर्प सुन्दर तैल	११.५०	३.००	१.६०	महामाष तैल	११.००	२.९०	१.५०
काशीसादि तैल	१०.००	२.६०	१.३५	मोम का तैल	१७.००	४.३५	२.२५
किरातादि तैल	८.५०	२.३०	१.२५	राल का तैल	१६.००	४.१०	२.१०
कुमारी तैल	९.००	२.४०	१.३०	लाक्षादि तैल	१०.००	२.६०	१.३५
ग्रहणीमिहिर तैल	१०.००	२.६०	१.३५	शुष्कमूलादि तैल	९.००	२.४०	१.३०
गुडुच्यादि तैल	१.००	२.४०	१.३०	षड्बिन्दु तैल	१०.५०	२.७५	१.४५
महाचन्दनादि तैल	११.००	२.९०	१.५०	हिमसागर तैल	११.००	२.९०	१.५०
चंदनबलालाक्षादि तैल	११.००	२.९०	१.५०	क्षार तैल	१६.००	४.१०	२.१०
जात्यादि तैल	११.००	२.१०	१.५०	अर्जुन घृत	१७.००	४.४०	२.२५
दशमूल तैल	१०.००	२.६०	१.३५	अशोक घृत	१७.००	४.४०	२.२५
दार्व्यादि तैल	११.००	२.९०	१.५०	अग्नि घृत	१७.००	४.४०	२.२५
महानारायण तैल	१०.००	२.६०	१.३५	कदली घृत	१८.००	४.७५	२.४०
पिप्पल्यादि तैल	१०.००	२.६०	१.३५	कामदेव घृत	२०.००	५.१५	२.६५
पिंड तैल	११.५०	३.००	१.६०	दूर्वादि घृत	१७.००	४.४०	२.२५
पुनर्नवादि तैल	९.००	२.४०	१.३०	धात्री घृत	१७.००	४.४०	२.२५
ब्राह्मी तैल	११.००	२.९०	१.५०	पञ्चतिक्त घृत	१४.००	३.६५	१.८५
बिल्व तैल	११.००	२.९०	१.५०	फल घृत	१७.००	४.४०	२.२५
विष गर्भ तैल	९.५०	२.५०	१.३०	ब्राह्मी घृत	१७.००	४.४०	२.२५
भृङ्गराज तैल	१०.५०	२.७५	१.४५				

	४०० मि.लि.	१०० मि.लि	५० मि.लि		४०० मि लि	१०० मि लि	५० मि लि
महाबिन्दुघृत	१७ ००	४ ४०	२.२५	सारस्वत घृत	१७ ००	४ ४०	२ २५
महात्रिफलादिघृत	१८ ००	४ ७५	२ ४०				
शृङ्गीगुड घृत	१७ ००	४ ४०	२ २५				

नोट—सभी शीशिया पिल्फर कैप से सुन्दर पैक की जाती है।

क्षार–सत्व–द्राव

	१०० ग्राम	१० ग्राम		१०० ग्राम	१० ग्राम		१०० ग्राम	१० ग्राम
वज्रक्षार	३.५०	० ४५	तिलक्षार	४ २५	० ५५	यवक्षार	२ ५०	०.३५
अपामार्ग क्षार	३ ५०	० ४५	मूली क्षार	५ ००	० ६०	गिलोय सत्व	४.००	० ५०
इमलीक्षार	३ ५०	० ४५	ढाक क्षार	३.५०	० ४५	नाडी क्षार	५ ००	० ६०
वासाक्षार	४ २५	० ५५	आक क्षार	५ ००	०.६०			
कटेरी क्षार	४ २५	० ५५	केतकी क्षार	३ ५०	० ४५	शखद्राव १०० मिलीलिटर	११ ५०	
कदली क्षार	३.५०	० ४५	चना(चणक)क्षार	४ २५	० ५५	२५ मि लि (१ औस)	३ ००	

अवलेह

च्यवनप्राशावलेह

४५० ग्राम शीशी मे	५ ००
२५० ग्राम शीशी मे	२ ८०
२५० ग्राम कार्डबक्स मे	३ ००
१२५ ग्राम शीशी मे	१ ५०
६०० ग्रा प्लास्टिक की शीशी	१० ००

	१ किलोग्राम	२५० ग्राम
कुटजावलेह	१३.००	३ ४५
कण्टकारी अवलेह	१२ ५०	३ ४०
कुशावलेह	१३ ००	३ ४५
वासावलेह	१२ ५०	३ ४०
ब्राह्मी रसायन	१४ ००	३ ७०
आर्द्रक खण्ड	१४ ००	३ ७०

	१ किलोग्राम	१२५ ग्राम
सुपारी पाक	१४ ००	२ ००
विषमुष्टिकावलेह ५० ग्राम		६ ७५
मधुकाद्यावलेह १७५ ग्राम		४ ००

मलहम लेप

	१०० ग्राम	५० ग्राम		१०० ग्राम	५० ग्राम		१०० ग्राम	५० ग्राम
जात्यादि मलहम	२ ६०	१ ५०	अग्निदग्धव्रणहर मलहम	२ ५०	१ ३५	दशांगलेप	२ ६०	१ ४०
पारदादि मलहम	३ ६०	१ ६०				निम्बादि मलहम	४ ५०	२ ४०

बहुमूल्य द्रव्य

	१० ग्राम		१० ग्राम		१० ग्राम
असली कस्तूरी न.१	१५०.००	केशर काश्मीरी मोगरा	४०,००	केशर चूरा (औषधि निर्माण के लिए उत्तम)	१६ ००
कस्तूरी काश्मीर उत्तम	८० ००	चांदी के वर्क	१२ ००		
अम्बर	३६ ००				

भस्म निर्माणार्थ द्रव्य

अकीक दाना	५० ग्राम २ ००	जहर मोहरा खताई	१० ग्राम २.००	पिरोजा खड़	१० ग्राम २ ००
वैक्रात खड	१० ग्राम २ ००	नीलम खड	,, २ ००	कहरवा	७ ००
अकीक खड	,, १ ००				
माणिक्य (याकूत)	,, २.००	खर्पर (खपरिया)	,, २ ००	पुखराज खड़	३ ००

नोट—बहुमूल्य द्रव्य एव निर्माणार्थ द्रव्यो के भाव नैट है। इन भावो पर किसी को कमीशनादि न दिया जायगा। इन भावो मे घट बढ़ होना भी सभव है। आर्डर सप्लाई के समय जो भाव होगा वह लगाया जायगा।

केवल रजिस्टर्ड चिकित्सकों के लिये—

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ द्वारा निर्मित

अनुभूत एवं सफल पेटेण्ट दवायें

हमारी ये पेटेन्ट औषधिया ७० वर्षों से भारत के प्रसिद्ध वैद्यराजो और धर्मार्थ औषधालयो द्वारा व्यवहार की जा रही हे । अत. इनकी उत्तमता के विषय मे किसी प्रकार का सदेह नहीं करना चाहिए ।

मकरध्वज वटी

(अर्थात् निराशवन्धु)

आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति में सबसे अधिक पसिद्ध एवं आशुफलप्रद महौषधि सिद्ध मकरध्वज नम्बर एक अर्थात् चन्द्रोदय है । इसी अनुपम रसायन द्वारा इन गोलियो का निर्माण होता है । इसके अतिरिक्त अन्य मूल्यवान एव प्रभावशाली द्रव्यो को भी इसमे डाला जाता है । ये गोलिया भोजन को पचाकर रस, रक्त आदि सप्त धातुओ को क्रमश सुधारती हुई शुद्ध वीर्य का निर्माण करती और शरीर मे नव-जीवन व नवस्फूर्ति भर देती हे । जो व्यक्ति चन्द्रोदय के गुणो को जानते है वे इसके प्रभाव मे सन्देह नही कर सकते । वीर्य विकार के साथ होने वाली खासी, दमा, सर्दी, कमर का दर्द, मन्दाग्नि, स्मरण शक्ति का नाश आदि व्याधिया भी दूर होती हैं । क्षुधा बढती व शरीर हृष्ट-पुष्ट और निरोग बनता है । जो व्यक्ति अनेको औषधियां सेवन कर निराश हो गये है उन निराश पुरुषो को यह औषिध बन्धुतुल्य सुख देती है इसलिये इसका दूसरा नाम निराशबन्धु है ।

४० वर्ष की आयु के बाद मनुष्य को अपने मे एक प्रकार की कमी और शिथिलता का अनुभव होता है । मकरध्वज वटी इस शक्ति को पुन उत्तेजित करती और मनुष्य को सबल व स्वस्थ बनाये रखती है । मूल्य—१ शीशी (४१ गोलियो की) ४ ००, छोटी शीशी (२१ गोलियो की) २.१०

कुमारकल्याण घुटी

(बालको के लिए सर्वोत्तम घुटी)

इसके सेवन करने वाले बालक कभी बीमार नहीं होते किन्तु पुष्ट हो जाते हैं । इसके सेवन से बालको के समस्त रोग जैसे ज्वर, हरे पीले दस्त, अजीर्ण, पेट का दर्द, अफरा, दस्त मे कीडे पड जाना, दस्त साफ न होना, सर्दी, कफ, खासी, पसली चलना, सोते मे चौक पडना, दात निकलने के रोग आदि सब दूर हो जाते हैं । शरीर मोटा ताजा और बलवान हो जाता है । पीने मे मीठी होने से बच्चे आसानी से पी लेते हैं । मूल्य एक शीशी १४ मि लि ०.३५, ४ औंस (११४ मिलि लिटर) की शीशी सुन्दर कार्डबक्स मे २.३०, २ औंस (५७ मिली लिटर) की शीशी सुन्दर कार्डबक्स मे १ २०, १ पौंड (४५५ मि लि ८.५०

कुमार रक्षक तेल—इसको बच्चे के सम्पूर्ण शरीर पर धीरे-धीरे रोजाना मालिश करे । आध घण्टे बाद स्नान करायें । बच्चे मे स्फूर्ति बढेगी, मासपेशियां सुदृढ हो जायेंगी, हड्डियो मे ताकत पहुचेगी । मूल्य १ शीशी ४ औंस (११४ मि लि २ ५०, छोटी शीशी २ औंस (५७ मि लि) १ ३५

ज्वरारि—कुनीनरहित विशुद्ध आयुर्वेदिक ज्वर जूटी को शीघ्र नष्ट करने वाली सस्ती एव सर्वोत्तम महौषधि है । जूडी और उसके उपद्रवो को नष्ट करती है मूल्य—दश मात्रा की शीशी १ ५०, २० मात्रा की बडी शीशी २.८०, ५० मात्रा की पूरी बोतल ५ ००

कासारि—हर प्रकार की खासी को दूर करने वाली सर्वत्र प्रशंसित अद्वितीय औषधि है । यह वासा पत्र क्वाथ एव पिप्पली आदि कासनाशक आयुर्वेदिक द्रव्यों से निर्मित शर्वत है । अन्य औषधियो के साथ इसको अनुपान रूप मे देना भी उपयोगी है । सूखी व तर दोनो प्रकार की खासी को नष्ट करने वाली सस्ती दवा है । मूल्य—बीस मात्रा की शीशी १.८०, ५ मात्रा की शीशी ५० पैसे, १ पौंड (४०० मि लि) ६ ००

कामिनी रक्षक—बार-बार गर्भस्राव हो जाना, बच्चो का छोटी आयु मे ही मर जाना, इन भयकर व्याधियों से अनेक सुकुमार स्त्रिया आजकल पीड़ित हैं। यदि कामिनी रक्षक को गर्भ के प्रथम माह से नवम माह तक सेवन करावें तो न गर्भस्राव होगा और न गर्भपात। बच्चा स्वस्थ, सुन्दर और सुडौल उत्पन्न होगा। मू २ औंस (५७ मि लि) की एक शीशी २ ५०।

शिरोविरेचनीय सुरमा—जिनको जुकाम रुकने के कारण सिर मे दर्द हो वो इस सुरमा को सलाई से हल्का-हल्का नेत्रो मे आजे। थोडी देर ही मे आख व नाक से वलगम निकलना प्रारम्भ हो जायगा और सभी कष्ट दूर होगे। पुराने सिर दर्द मे पथ्यादि क्वाथ वा शिरोवज्र रस भी साथ मे सेवन करने से शीघ्र लाभ होगा। मूल्य—१ ग्राम की शीशी ० ७५।

वातारि वटी—वातरोगनाशक सफल और सस्ती दवा है। १-२ गोली प्रात. साय गरम जल या रास्नादि क्वाथ के साथ लेने से सभी प्रकार की वात व्याधिया नष्ट होती है। मूल्य—एक शीशी (५० गोली) २ ५०।

करंजादि वटी—ये गोलिया मलेरिया के लिए उत्तम प्रमाणित हुई हैं। १ शीशी (५० गोली) १ २०।

कासहर वटी—हर प्रकार की खासी के लिये सस्ती व उत्तम गोलिया है। दिन मे ५-७ बार अथवा जिस समय खासी अधिक आ रही हो १-१ गोली मुह मे डाल रस चूसे, गला व श्वास नली साफ होती है। कफ बन्द होता है। मूल्य १ शीशी (१० ग्राम) ० ६०

निम्बादि मलहम—यह मलहम फोडा-फुसी व घावो के लिये अत्युत्तम है। निम्ब क्वाथ से घाव या फोडो को साफकर इस मरहम को लगाने से वे शीघ्र ही भरते ह नासूर तक को भरने की इसमे शक्ति है। मूल्य—१ शीशी आध औस ६० नये पैसे, २०० ग्राम का पैक ८ ५० रुपया।

बल्लभ रसायन—किसी भी रोग से किसी भी प्रकार का रक्तस्राव होता हो तो यह विशेष लाभ करता है। रक्त को बन्द करने के लिये अव्यर्थ औषधि है। मूल्य २ औंस की १ शीशी २ ००

रक्तबल्लभ रसायन—इसमे ज्वर के साथ होने वाला रक्तस्राव बन्द होता है। ज्वर को दूर करने और रक्त को बन्द करने के लिये अव्यर्थ हैं। १ शीशी आध औस [१८ मिली लिटर] २ ००।

सरलभदी वटी—जिनको नित्य ही कब्ज की शिकायत रहती हो और कई-कई बार दस्त जाना पडता हो उन्हे १-२ गोली रात्रि में सेवन करने से नित्य प्रात दस्त साफ होता है तथा कार्य करने मे उत्साह बढता है। मू १ शीशी [३१ गोली] १ ५०

गोपाल चूर्ण—जिनकी प्रकृति पित्त की हो उन्हे इसके सेवन से दस्त साफ होता है। जिनको मलावरोध हो उन्हे इसमे से ३ माशे रात को सोते समय गुनगुने जल के साथ या गरम दूध के साथ फाक लेने से सुबह दस्त साफ हो जाता है। १ शीशी [२ औस] १ ००

मृदुविरेचक चूर्ण—यह मृदुविरेचक है। जिन्हे मलावरोध रहता हो और अनेक औषधियो से न गया हो भोजनोपरान्त ३—३ माशे गुनगुने पानी से फकायें। यदि पेट मे खुरचन सी मालूम पडे तो थोडी सौंफ चबा लें। इनसे पन्द्रह दिन मे मलावरोध नष्ट होता है। मू १ शीशी १ ००

आवनिस्सारक वटी—प्रात काल गुनगुने जल के साथ तीन गोली तक सेवन करने से गुदा के द्वारा आव निकलने लगती है। आव निकालने के लिये यह एक ही वस्तु है। यदि पेट मे दर्द ऐंठन हो तब चिन्ता न करें। क्योकि आव निकलते समय प्राय ऐसा होता है। एक शीशी १ तोला [१० ग्राम] १ २५

मुंह के छालो की दवा—इसको छालो पर बुरककर मुह नीचे कर दें, लार गिरने लगेगी, दिन रात में छाले नष्ट हो जायेगे। मूल्य एक शीशी (आध औंस) ० ८०

कर्णामृत तैल—कान मे सांय-सांय शब्द होना, दर्द होना, कान से मवाद बहना आदि सभी कर्ण-रोगो के लिये उत्तम तैल है। आधा औस [१४ मि लि] ० ८०

बालोपकारक वटी—बालक बेहोश हो जाता है, हाथ पैर ऐठ जाते हैं, मुख से लार (झाग) देने लगता है, दांती बन्द हो जाती है। बालक की ऐसी हालत मे यह अक्सीर प्रमाणित होती है। १ शीशी [३१ गोली] २ ५०

मधुरौल—मधुमेह, बहमूत्र व सोमरोग मे भी यह लाभप्रद है। मूल्य १० गोली ३ १०

पायरिया मंजन—इस मंजन के नित्य व्यवहार से दातो से खून जाना, मवाद जाना, टीस मारना, पानी लगना आदि दूर होते है। मूल्य एक शीशी १ ००

नयनामृत सुरमा—नेत्र रोगो के लिए उपयोगी सुरमा है। चांदी या काच की सलाई से दिन मे एक वार लगाने से धु धला दीखना, पानी निकलना, खुजली नष्ट होती है। मू. [३ ग्राम] की शीशी ७५ पैसे।

अग्निसंदीपन चूर्ण—अग्नि को उत्तेजित करने वाला मीठा व स्वादिष्ट चूर्ण है। भोजन के वाद ३ ३ माशे लेने से कब्ज दूर हो रुचि बढेगी। एक शीशी (२ औंस) मूल्य ० ७५।

मनोरम चूर्ण—स्वादिष्ट, शीतल व पाचन चूर्ण है, एक वार चख लेने पर शीशी समाप्त होने तक आप खाते ही रहेंगे। गुण और स्वाद दोनो मे लाजवाब है। १ शीशी [२ औंस] ० ७५, छोटी शीशी [१ औंस] ० ४५

अग्निवल्लभ क्षार—इसके सेवन से अग्नि प्रज्वलित होती व खाना हजम होता है। भूख न लगना, दस्त साफ न होना, खट्टी डकारो का आना, पेट मे दर्द तथा भारीपन होना, तबियत मचलाना, अपान वायु का विगडना इत्यादि शिकायते दूर होती है। जल दोष नही सताता। एक शीशी [२ औंस] का मूल्य १ २५

ग्रहणीरिपु—यह ग्रहणी रोग के लिए अक्सीर है। एक शीशी १ औंस ३ ५०

खाजरिपु-गीली तथा सूखी खाज के लिए अक्सीर है। मूल्य एक शीशी [२ औंस] १ २५, छोटी शीशी ० ७०।

दाद की दवा—यह दाद की अक्सीर दवा है। दाद को साफ करके किसी मोटे वस्त्र से खुजलाकर दवा की मालिश करे। स्नान करने के वाद रोजाना वस्त्र से अच्छी प्रकार पौंछ लिया करे। एक शीशी मूल्य ० ७५

नेत्र बिन्दु—दुखती आखो के लिये अत्युपयोगी है। मूल्य आधा औंस [१४ मि लि] ० ८८, ¼ औंस ० ५०

स्वप्नोजित वटी-३० गोली की १ शीशी २ ५०

स्वप्नोजित चूर्ण—४ औंस की १ शीशी २ ५०

शक्तिदा चूर्ण—४ औंस १ शीशी २ ५०

नारी सुखदा वटी-३० गोली की १ शीशी २ ००

धन्वन्तरि काला दंतमंजन—विशुद्ध आयुर्वेदीय द्रव्यो से निर्मित यह काला दतमजन नित्य व्यवहार करने के लिये उपयोगी है। दातो को चमकीला बनाता है, मुख की दुर्गन्ध दूर करता है, मसूढो को सुपुष्ट बनाता है एक बार व्यवहार करने पर आप इसे सदैव व्यवहार करना पसद करेगे। मूल्य एक शीशी १ २५

निद्राकारक तैल—किसी रोग के कारण या मानसिक चिन्ताओ के कारण निन्द्रा न आने पर इसकी मालिश सिर तथा बालो मे धीमे-धीमे कीजिये, मिनटो मे निन्द्रा आ जायगी तथा रोगो व चिन्ताओ से छुटकारा मिलेगा। मूल्य २ औंस की १ शीशी २ ८०, १ पौंड २० ००

शोथ शार्दू ल तैल—इस तैल की मालिश करने से शोथ किसी भी प्रकार का हो तत्काल लाभ होगा। एक वार अवश्य परीक्षा करें। मूल्य २ औंस की एक शीशी २ ५०

शूलहर टिकिया—दर्द गुर्दा के लिये अक्सीर। जलते हुए अङ्गारो पर १ या २ टिकिया रखकर उसका धुआ जहा दर्द हो वहा लगावें। दर्द तुरन्त बन्द होगा। मूल्य १० टिकियो की शीशी १ ८०

डब्बानाशक वटी—वालको के पसली चलने (बाल न्यूमोनिया) के लिए अक्सीर औषधि। मूल्य ३० गोली की एक शीशी १ ५०।

सौन्दर्यवर्धक चूर्ण (उबटन)—चेहरे की कील, मु हासे आदि से रक्षा करने वाला तथा सुन्दर सुवर्ण बनाने वाला अनुपम उबटन है। कन्याओ तथा सौंदर्य प्रेमी महिलाओ के लिये अत्युपयोगी चूर्ण है। मूल्य शीशी १.५०

चन्द्रप्रभावर्ति—आख की फूली के लिये उत्तम। इसके लगाने से आख का जाला, धुध पानी बहना खुजली होना आदि नेत्र विकार नष्ट होते है। नियमित अधिक समय तक व्यवहार करने से फुली भी नष्ट होती है। सुपरीक्षित दवा है। मूल्य ५० ग्राम ८ ००, १० ग्राम १ ८०

जुसांदा (जुकाम नाशक क्वाथ)—बिगडे जुकाम के लिये अति उत्तम क्वाथ है। जुकाम भयानक रोग है। इसकी उपेक्षा करने से अनेक भीषण रोग उत्पन्न हो जाते है। इस क्वाथ की ४ ५ मात्रा ही सम्पूर्ण विकार नष्ट कर देती है। २०-२० ग्राम की १० पुडिया १ ६०

द्राक्षावलेह—सूखी कास को दूर करने के लिये थोडा थोडा चटावें तुरन्त ही लाभ होगा। १२५ ग्राम की एक शीशी ३ २५

सोमकलासव—यह श्वास तथा स्वर-यन्त्र के सभी रोगो के लिये अत्युपयोगी एव सुपरीक्षित है। मूल्य १ बोतल ५.५०, १ पौंड ४ २५, १ पाव २ ५०

³ विपरीत क्रम यानी ऊपर से नीचे की ओर जाने वाला।

४ अस्त-व्यस्त, विखरा हुआ।

हमारे सफल सैट

स्त्री रोगहर सैट—स्त्री सुधा—स्त्रियो के लिये सव श्रेष्ठ प्रसिद्ध लाभकारी औपधि, मूल्य १ बोतल ६ ००, १ शीशी ३ ०० । मधुकाद्यवलेह-स्त्री सुधा के साथ इसे सेवन करने से शीघ्र लाभ होता है। एक शीशी ४ ००, पूरा सैट पन्द्रह दिन सेवन योग्य औपधियो का मू ६ ००

हिस्टेरियाहर सैट—१५ दिन की तीन दवाओ का मूल्य १० ००

निर्वलताहर सैट—मकरध्वज वटी, तेल व पोटली तीन दवाये २० दिन व्यवहार करने योग्य मू १० ००

मकरध्वज वटी—६१ गोली १ शीशी ४ ००

धन्वन्तरि तेल—मुरदार नसो पर मालिश के लिये एक शीशी मू ३ ५०

धन्वन्तरि पोटली—सिकाई करने के लिए १ डिब्बा मूल्य ३ ५०

श्वेत कुष्ठहर सैट—इसमे श्वेतकुष्ठहर अवलेह, वटी व घृत तीन औपधिया है । इन तीनो औषधियो के विधिवत् अधिक दिन सेवन करने से श्वेतकुष्ठ अवश्य नष्ट होता है १५ दिन की तीनो दवाओ का ८ ००

रक्तदोष हर सैट—इसमे धन्वन्तरि आयुर्वेदीय सालसापरेला, तालकेश्वर रस, इन्द्रवारुणादि क्वाथ—ये तीन औपधिया है । इनके सेवन से सभी प्रकार के रक्त विकार तथा चर्म रोग नष्ट होकर शरीर सुडौल बनता है । मूल्य पन्द्रह दिन की तीनो दवाओ का ६.००,पोस्ट व्यय ४ ५०

अर्शान्तक सैट—इसमे वटी, मलहम तथा चूर्ण तीन औपधिया है । इनके प्रयोगो से दोनो प्रकार के अर्श नष्ट होते हैं । अर्श से आने वाला रक्त १-२ दिन में ही बन्द हो जाता है । मू १५ दिन की तीनो दवाओ का ६ ००

वात रोगहर सैट—इसमे वातरोगहर तैल, रस अवलेह ये तीन औपधिया हैं । इन तीनो औपधियो के व्यवहार से जोडो का दर्द, सूजन, अङ्ग विशेष की पीड़ा, पक्षाघात आदि समस्त वात व्याधियों मे लाभ होता है । १५ दिन सेवन योग्य तीनो औपधियो का मू. १०.००

सर्वोत्तम शिलाजीत

स्वय निकला हुआ अत्युत्तम तथा पूर्ण विश्वस्त शिलाजीत मगाकर रोगियो को व्यवहार करावें तथा औपधि निर्माणार्थ काम में लावे ।

मूल्य—१ किलोग्राम १४० रु, ५० ग्राम ७ २५, १० ग्राम १ ७० ।

असली शहद

औपधियो के अनुपान रूप मे व्यवहार करने के लिये हमने शुद्ध अत्युत्तम असली शहद ग्राहको को सप्लाई करने का प्रबन्ध कर लिया है । यह निम्न पैकिङ्गो में आप प्राप्त कर सकते है—

५०० ग्राम ८ ००, १०० ग्राम २ २५, ५० ग्राम १ २५

असली विश्वस्त गिलोय सत्व

स्वय अपनी देखरेख मे निकाला गया विश्वस्त गिलोय सत्व हमसे मगाकर व्यवहार कीजियेगा । इसमे सन्देह करने की कोई आवश्यकता नही है । मूल्य—

१ किलोग्राम ३१ ५०, ५० ग्राम २ रु

पता—धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ (अलीगढ़)

शारीरिक चित्र

ये चित्र अनेक रङ्गो मे आफसैट प्रेस से बहुत ही आकर्षक तैयार कराये गये हैं। इन चित्रो का साइज एक समान २० इञ्च चौड़ाई तथा ३० इञ्च लम्बाई है। ऊपर नीचे लकडी लगी है, कपडे पर मढ़े है तथा चिकित्सालय में टांगने पर उसकी शोभा बढ़ाने वाले है। सभी विवरण हिन्दी मे लिखा गया है।

न. १ अस्थिपंजर—इस चित्र मे सिर से लेकर पैर तक की सभी अस्थियो को बडे सुन्दर ढग से दर्शाया गया है। हाथ की, अगुलियो की, पैर की, रीढ की, छाती की सभी अस्थियां स्पष्ट समझ सकते हैं। मू ५ ००

न २ रक्तपरिभ्रमण—इसमे शुद्ध अशुद्ध रक्त की धमनी एव शिरायें अपने प्राकृतिक रङ्गो मे दर्शाई गई है। भ्रूण मे रक्तपरिभ्रमण का पृथक चित्रण किया गया है। एक हाथ और एक पैर मे शिरायें दर्शाई गई हैं। मू ५ ००

नं ३ वातनाड़ी संस्थान—इस चित्र मे सम्पूर्ण वात नाडी मण्डल [Nervous System] का सुन्दर व स्पष्ट चित्रण किया गया है। उर्व्वाङ्ग वातनाडी तथा सुषुम्ना और मस्तिष्क सम्बन्ध का चित्रण पृथक किया गया है। चित्र अपने ढग का निराला है। मूल्य ५ ००

न ४ नेत्र रचना एवं दृष्टि विकृति—इस चित्र मे पृथक-पृथक ६ चित्र है। १—दक्षिण चक्षु—इसमे चक्षु के बाह्य अवयव दर्शाए गये हैं। २—पटलो और कोष्ठों को दिखाने के लिये चक्षु का क्षितिज काट। ३—चक्षु से सम्बन्धित नाडी। ४—नेत्र चालनी पेशियां। ५—दृष्टिभेद (दर्शनसामर्थ्य। ६—साधारण स्वस्थ नेत्र एव दृष्टि विकृति। इन चित्रो से नेत्र विषयक सम्पूर्ण विवरण समझ मे आयेगा। मू. ५.००

चारो चित्र एक साथ मगाने पर केवल १६ ००

नोट—वादे विना कपडा लकडी लगे चित्र शीशा में मढने के लिए १ चित्र ४ ००। चारो चित्र मंगाने पर १२ ००

वैद्यों के लिये आवश्यक

रोगी रजिस्टर—हर वैद्य के लिए यह आवश्यक है कि वह अपने रोगियो का विवरण नियमित रूप से लिखे। चिकित्सक को अपनी सुविधा तथा कानूनी दृष्टि दोनो प्रकार से आवश्यक है। २०० तथा ४०० पृष्ठो के ग्लेज कागज के सजिल्द 'रोगी रजिस्टर' हमने तैयार किए हैं जिनमे आवश्यक कालम दिए हैं। मू २०० पृष्ठो का ४ ००, ४०० पृष्ठो का ७ २५

रोगी प्रमाणपत्र पुस्तिका—रोगियो को अवकाश प्राप्ति के लिये प्रमाणपत्र देने के फार्म ग्लेज कागज पर २ रङ्गो में तैयार किये हैं। अग्रजी अथवा हिन्दी मे बढिया कागज पर बडे साइज के दो रङ्गो मे छपे ४० प्रमाण पत्रो की पुस्तिका का मूल्य १ ५०

स्वास्थ्य प्रमाणपत्र पुस्तिका—सरकारी कर्मचारी बीमार होने के कारण अवकाश लेते है। स्वस्थ होने पर अपने कार्य पर पहुचने पर उन्हे 'वे स्वस्थ हैं' इस विषय का प्रमाणपत्र प्रस्तुत करना होता है। वैद्य इस पुस्तिका को मगाकर स्वस्थ्य पमाण पत्र आसानी से दे सकते है। अग्रेजी अथवा हिन्दी मे वढिया कागज पर बडे साइज मे दो रङ्गो मे छपे ४० प्रमाणपत्रो की पुस्तिका का मूल्य १ ५०

रोगी व्यवस्थापत्र—रोगी के लक्षण, तारीख औषधि आदि इन फार्मों पर लिखकर रोगी को दे दीजिये वे रोगी रोजाना या जब औषधि लेने आवेंगे तो आपको यह फार्म दिखा देगे। इससे उनका पहला पूरा हाल आपके सामने आ जायगा। बडे काम के फार्म हैं २०×३०=३२ पेजी ५० पैसा के १००, बडे साइज के १ रुपये के १००।

आघात प्रमाणपत्र—चोट लग जाने पर चिकित्सक को प्रमाण पत्र देना होता है। इस फार्म पर आप यह प्रमाणपत्र सुगमता से दे सकेंगे। फुलस्केप साइज के २५ प्रमाणपत्रो की पुस्तिका का मूल्य १.२५

तापमापक तालिका (टेम्परेचर चार्ट)—इसमें रोगियो का तापमान अङ्कित करने की बडी सुविधा रहती है। इस चार्ट पर दिन मे चार समय का तापमान १२ दिन तक अङ्कित किया जा सकेगा। अन्य निदान विषयक आकडे भी लिखे जा सकते है। मूल्य २५ चार्ट का १ २५। मात्र

पता—धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ (अलीगढ़)

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ द्वारा प्रकाशित

* आयुर्वेदिक पुस्तकें *

ड्रग एक्ट (हिन्दी में)—लेखक–डा० दाऊदयाल गर्ग ए एम. बी- एस —यह पुस्तक सभी औषधि निर्माताओ, औषधि विक्रेताओ तथा चिकित्सको के लिये अवश्य पठनीय एव सग्रहणीय है। आजकल के उलझन पूर्ण समय मे अत्यन्त उपयोगी पुस्तक है। दूसरा परिवर्द्धित एव सशोधित सस्करण मूल्य ५ ००, सजिल्द ६.००

आयुर्वेद पर ड्रग एक्ट—लेखक डा दाऊदयाल गर्ग ए एम बी. एस.—मूल्य ७५ पैसा।

यन्त्र शस्त्र परिचय—लेखक डा० दाऊदयाल गर्ग ए एम. बी एस.। प्रत्येक चिकित्सक का यह परम कर्तव्य है कि वह उस प्रत्येक उपकरण के बारे मे पूरी जानकारी रखे जिसका कि वह प्रयोग कर रहा है तथा उसकी सही व्यवहार विधि जानना अति आवश्यक है तभी वह चिकित्सा क्षेत्र मे सफलता प्राप्त कर सकता है। इस पुस्तक से चिकित्सक सभी यन्त्रशस्त्रो के बारे मे पूरी सही जानकारी प्राप्त कर सकेगे। इस पुस्तक को चार खण्डो मे विभक्त किया गया है। प्रथम खण्ड मे उन यन्त्रशस्त्रो का वर्णन किया गया है जिनका प्रयोग केवल निदान (Diagnosis) मे किया जाता है यथा रक्तचापमापक यन्त्र, थर्मामीटर, स्टेथिस्कोप, नाक व गले आदि की परीक्षार्थ डाइग्नोस्टिक सैट, गुदा परीक्षण यन्त्र आदि। द्वितीय खण्ड मे चिकित्सा कार्य मे प्रयुक्त होने वाले उपकरणो की प्रयोग विधि दी गई है यथा इन्जेक्शन लगाना, ट्रोकार एण्ड कैनूला, कर्ण प्रक्षालन, दात उखाडना, आमाशय प्रक्षालन, योनि प्रक्षालन, एनिमा, कैथीटर आदि। तृतीय खण्ड मे शल्यकर्म (चीर फाड़) मे काम आने वाले उपकरणो का वर्णन दिया गया है। इसी खण्ड मे टाके किस प्रकार लगाये जाते है तथा शल्य के विषय मे सभी बाते दी है। चतुर्थ खण्ड मे सन्ततिनिरोध (Birth control) मे प्रयुक्त होने वाले उपकरणो के विषय मे आवश्यक जानकारी दी गई है। इस पुस्तक की सबसे बडी विशेषता चित्रो की भरमार है। १२० पृष्ठो की पुस्तक मे २३० चित्र हे। चित्रो की अधिकता के कारण ही प्रत्येक विषय स्पष्ट, सरल एव सहज बुद्धिगम्य बन पडा है भाषा अत्यन्त सरल है।

उत्तम ग्लेज कागज पर छपी, २० × ३० सोलह पेजी साईज मे ३२० पृष्ठ, उत्तम छपाई, सुपुष्ट जिल्द, आकर्षक दो रङ्गा टाइटिल वाली पुस्तक। मूल्य लागत मात्र ६ ००

चिकित्सा रहस्य—लेखक श्री प कृष्ण प्रसाद त्रिवेदी बी ए आयुर्वेदाचार्य, इस पुस्तक मे विषय प्रवेश के पश्चात् आयुर्वेद के मूल सिद्धात 'दोष धातु मल मूल हि शरीर' के अनुसार चिकित्सा के उपयुक्त शरीर, मन और आत्मा की स्वस्थ दशा की सुस्थिति एव रोग प्रतिकार की दृष्टि से आवश्यक स्वस्थवृत सम्बन्धी कुछ बाते प्रथम अध्याय से दशम अध्याय तक सक्षेप में वर्णित है। तत्पश्चात् रोग प्रतिकार एव चिकित्सा सारल्य की दृष्टि से आयुर्वेदीय प्रमुख सूत्रो का विवेचन ११ वे अध्याय मे किया गया है। तदुपरात ४ अध्यायो में तीनो दोषो का विशद विवेचन एव तत्सम्बन्धी चिकित्सा दर्शाई गई है। इस पुस्तक मे उन्ही बातो का उल्लेख किया गया है जिनकी जानकारी चिकित्सा कर्म के पूर्व ही उसकी सफलता के लिए आवश्यक है। आयुर्वेद चिकित्सा प्रद्धति वा अन्य चिकित्सा पद्धतियो के साथ तुलनात्मक विचार भी किया गया है। बीच मे आधुनिक विज्ञान द्वारा समन्वय करने का प्रयत्न किया गया है। लेखन शैली इतनी सरल और रोचक है कि बहुत शीघ्र ही गूढ विषय भी समझ मे आ जाता है। आयुर्वेद के छात्रो तथा आयुर्वेदानुरागियो के लिये यह ग्रन्थ बडा ही उपयोगी सिद्ध होगा। उत्तम ग्लेज कागज पर २० × ३० सोलह पेजी साइज मे छपी ३७५ पृष्ठ, सुपुष्ट जिल्द मूल्य ४ ५०।

वृ. पाक संग्रह—लेखक श्री प कृष्णप्रसाद जी त्रिवेदी बी ए आयुर्वेदाचार्य। इस पुस्तक में ४०० से अधिक पाको का सग्रह प्रकाशित है। हर पाक की निर्माण विधि, मात्रा, सेवन विधि आदि दी गयी है। प्राय सभी रोगो पर ३-४ प्रयोग इस पुस्तक मे आपको मिलेंगे। हर प्रकार से उपयोगी है। मूल्य सजिल्द ३ ५०,अजिल्द ३ ००

सूर्य रश्मि चिकित्सा[नवीन सस्करण]—सूर्य-चिकित्सा को अग्रेजी मे क्रामोपैथी कहते हैं। इस पुस्तक मे सूर्य की किरणो से ही समस्त रोग दूर करने का विधान

है। इसको पढकर पाठक देखेंगे कि सूर्य कितना शक्ति शाली है। उसकी किरणे शरीर को कितनी लाभदायक हैं और उनके द्वारा रोग किस प्रकार बात की बात मे दूर किये जा सकते है, अनेक रङ्गीन चित्र है। मू ०७५

उपदंश विज्ञान (द्वितीय संस्करण)—लेखक श्री कविराज पडित बालक राम जी शुक्ल आयुर्वेदाचार्य। इस पुस्तक मे गरमी (चादी) रोग के वज्ञानिक कारण, निदान, लक्षण तथा चिकित्सा का वर्णन किया गया है। पुस्तक के कुछ शीर्षक ये हैं—उपदश परिचय, प्राच्य-पाश्चात्य का साम्यवाद, सक्रमण, निदान, सिफलिस के भेद, उपदश, प्राथमिक कील, लिंगार्श औपसर्गिक सकल रोग, उपदशज विकृतिया, मस्तिष्क विकार, फिरगं चकित्सा मे पारद प्रयोग,पथ्यापथ्य आदि उपदश सम्बन्धी सभी विषय वर्णित है। मू १ रु

प्रयोग पुष्पावली—ये प्रयोग बहुत समय से परीक्षित हैं और सफल प्रमाणित हो चुके हे। अनेक उद्योग धन्धो का सकेत इसमे मिलेगा जिससे पाठक बहुत लाभ उठा सकते हे। समष्टि रूप मे पुस्तक वेकार मनुष्यो को व्यवसाय की ओर झुकाने वाली है। पहले दो सस्करण शीघ्र समाप्त हो जाना इसकी उत्तमता के प्रमाण है। पृष्ठ सख्या ११२ मूल्य १ २५।

कुचिमार तत्र (भाषा टीका)—यह श्रीमद् कुचिमार मुनि प्रणीत है। इसमे इन्द्रिय वृद्धि, स्थूलीकरण, कामोद्दीपन लेप, वाजीकरण, द्रावण, स्तम्भन, सकोच व केशपात, गर्भाधान, सहज प्रसव आदि पर अनेक योग भली भाति वताए गये हे। इस नवीन सस्करण मे प्रमेह, नपुसकता, मधुमेह, आदि रोगो पर स्वानुभूत प्रयोगो का एक छोटा सा सग्रह भी दिया है। मूल्य ५० पैसा।

दशमूल (सचित्र)—लेखक लाला रूपलाल जी वैश्य बूटी विशेषज्ञ। इस पुस्तक मे दशमूल की दशो औषधियो का सचित्र वर्णन है। साथ ही उनके पर्याय नाम, गुण और प्रयोग भी वतलाये गये हैं तथा दशमूल, पचमूल से बनने वाले अनेक योगो की विधिया दी गयी है। मू० ५० पैसा।

न्यूमोनियां प्रकाश (द्वितीय संस्करण)—आयुर्वेद मनीषी स्वर्गीय पडित देवकरण जी बाजपेयी की यह वह उत्तम रचना है जिस पर धन्वन्तरि पदक मिला था और जो निखिल भारतीय वैद्य सम्मेलन से सम्मान और पदक प्राप्त कर चुकी है। न्यूमोनियां की शास्त्रीय व्युत्पत्ति, कारण, निदान, परिणाम, चिकित्सा आदि सभी बातें भलीभांति वर्णित है। मू० ५० पैसा।

प्राकृतिक ज्वर—लेखक स्वर्गीय लाला राधावल्लभ जी वैद्यराज। मलेरिया (फसली बुखार) का पूर्ण विवेचन है। आयुर्वेदीय मत से मलेरिया कैसा होता है? उसके दूर करने के लिये आयुर्वेदीय प्रयोग, क्विनाइन से हानि आदि विषयो पर पूर्ण प्रकाश डाला है। मू. २५ पै

वेदों में वैद्यक ज्ञान—लेखक स्वर्गीय लाला राधा वल्लभ जी वैद्यराज। वेद के मन्त्र जिनमे आयुर्वेदीय विषयो का वर्णन है तथा जिनसे आयुर्वेद की प्राचीनता प्रमाणित होती है, शब्दार्थ सहित दिये हैं। मू २५ पैसा

कूपीपक्व रस रसायन भस्म पर्पटी—लेखक वैद्य देवीशरण जी गर्ग—धन्वन्तरि कार्यालय मे निर्माण होने वाले कूपीपक्व रसायनो के गुण, मात्रा, अनुपान सेवन विधि आदि विस्तृत वर्णित हें। मू. २५ पै

चन्द्रोदय मकरध्वज (तृतीय संस्करण)—लेखक स्वर्गीय लाला राधावल्लभ जी वैद्यराज। इस पुस्तक मे पारदशुद्धि, गन्धक शुद्धि, पारद के सस्कार, मकरध्वज बनाने की विधि, आष्टी बनाने की विधि, मकरध्वज के गुण तथा भिन्न-भिन्न रोगो में अनुभव सभी बातें स्वानुभव के आधार पर वर्णित है। मू २५ पैसा।

रस रसायन गुटिका गूगल—धन्वन्तरि के प्रधान सम्पादक एव अनुभवी चिकित्सक वैद्य देवी शरण जी गर्ग ने इस पुस्तक में धन्वन्तरि कार्यालय मे निर्मित रस रसायन गुटिका गूगल के गुण मात्रा, अनुपान, व्यवहार विधि बडे ही उपयोगी ढंग से लिखी है। मू ५० पैसा

रक्त—(Blood) श्री वैद्यराज राधावल्लभ जी ने रक्त की बनावट, उपयोगिता एव रक्त सम्बन्धी सभी मोटी-मोटी वातें आयुर्वेद एव एलोपैथी उभय पद्धतियो से समझाकर सरल हिन्दी भाषा मे लिखी है। नवीन सस्करण मू २५ पैसा।

इन्फ्लुएञ्जा (फ्लु)—लेखक श्री पडित कृष्णप्रसाद त्रिवेदी बी ए आयुर्वेदाचार्य। इसमे इन्फ्लुएञ्जा रोग का विस्तृत विवेचन तथा सफल चिकित्सा विधि वर्णित है। फ्लु और इसके सभी उपद्रवो की आयुर्वेदीय चिकित्सा दी है। मू ५० पैसा।

अन्य प्रकाशकों की पुस्तकें

आयुर्वेदीय ग्रंथ रत्न

अष्टाङ्गहृदय [सम्पूर्ण]—विद्योतनी भाषा टीका वक्तव्य, परिशिष्ट एव विस्तृत भूमिका सहित । टीकाकार श्री अत्रिदेव मूल्य १५ रु, कृष्णलाल भारतीय २० रु, श्री प लालचन्द्र कृत १५ रु ।

अष्टाङ्ग संग्रह [सूत्र स्थान]—हिन्दी टीका, व्याख्याकार गोवर्धन शर्मा छांगाणी मू. ८ रु

काश्यप संहिता—टीकाकार श्री सत्यपाल भिषगाचार्य, विद्योतनी भाषा टीका विस्तृत सस्कृत हिंदी उपोदघात सहित । ग्रथ का मुख्य विषय 'कौमार भृत्य' अष्टाङ्गायुर्वेद का अपरिहार्य अङ्ग है। यह विषय पूर्ण विस्तृत और प्रामाणिक रूप से वर्णित है । मूल्य १५ रु.

कौमारभृत्य [नव्य बालरोग सहित]—बाल रोगो पर प्राच्य एव पाश्चात्य चिकित्सा विज्ञान के आधार पर श्री प रघुवीर प्रसाद त्रिवेदी A M S द्वारा लिखित विशाल ग्रन्थ मूल्य ८ रु ।

गंगयति निदान—लेखन जैन यति गगाराम जी अनुवादक आयुर्वेदाचार्य श्री नरेन्द्रनाथ शास्त्री । मूल्य ५ ५० ।

चरक संहिता [सम्पूर्ण]—श्री जयदेव विद्यालंकार द्वारा सरल सुविस्तृत भाषा टीका युक्त दो जिल्दो में (छठा सस्करण) मूल्य ३० रु. ।

चरक संहिता—श्री अम्बिकादत्त, हिंदी व्याख्याविमर्श परिशिष्ट सहित दो भागो मे । अत्युपयोगी नवीन विस्तृत टीका मूल्य ४५ रु. ।

चक्रदत्त—भावार्थ सदीपनी विस्तृत भाषा टीका तथा विशद टिप्पणी सहित । परिशिष्ट मे पचलक्षणी निदान डाक्टरी मूत्र परीक्षा, पथ्यापथ्य सहित । मू १० रु

द्रव्यगुण विज्ञान [पूर्वार्ध]—छात्रोपयोगी सस्करण लेखक आयुर्वेद मार्तण्ड वैद्य यादव जी त्रिकम जी आचार्य द्रव्य गुण, रस, वीर्य, विपाक, प्रभाव, कर्म विज्ञानात्मक विशद विवेचन । मू. ५ रु.

भावप्रकाश [सम्पूर्ण]—भाषा टीका सहित । दो जिल्दो मे शारीरिक भाग पर प्राच्य पाश्चात्य मतो का समन्वयात्मक वर्णन निघण्टु भाग पर विशिष्ट विवरण तथा चिकित्सा-प्रकरण में प्रत्येक रोग पर प्राच्य पाश्चात्य मतो का समन्वयात्मक वर्णन विशेष टिप्पणी से सुशोभित है । मू. २९ रु., श्री लालचन्द्रकृत २५ रु. ।

माधव निदान [भाषाटीकायुक्त]—पूर्वार्द्ध मधुकोष सस्कृत टीका विद्योतनी भाषा तथा वैज्ञानिक विमर्श टिप्पणी युक्त । यह माधव निदान बडा उपयोगी बन पड़ा है । दो भाग मू. १४ रु

माधव निदान—मूलपाठ, मूलपाठ की सरल हिन्दी व्याख्या मधुकोष सस्कृत व्याख्या और उसका सरल अनुवाद, वक्तव्य एव टिप्पणी युक्त । यह ग्रन्थ विद्यार्थियो तथा चिकित्सको के लिये आवश्यक है । प पूर्णानन्द शास्त्री कृत टीका दो भागो में मू. १३ रु

माधव निदान—सर्वाङ्ग सुन्दरी भाषा टीका ४ ५०

माधव निदान—टीकाकार ब्रह्मशंकर शास्त्री, मधुकोष सस्कृत व्याख्या तथा मनोरमा हिन्दी टीका सहित । पृष्ठ सख्या ४१२ मू ६ रु

रसायनसार—श्री प श्यामसुन्दराचार्य के बीसियो वर्षो के परिश्रम से प्राप्त प्रत्यक्षानुभव के आधार पर लिखित अपूर्व रस ग्रन्थ मू ८ रु

रसेन्द्रसार सगह—वैज्ञानिक रस चन्द्रिका भाषा टीका परिशिष्ट मे नवीन रोग पर रसो का प्रभाव, मान, परिभाषा, मूषा, पुटप्रकरण, अनुपान विधि तथा औषधि बनाने के नियमादि मू ६ रु

रसेन्द्रसार सग्रह(तीन भागो मे)—आयुर्वेद बृहस्पति पं घनानन्द जी पन्त द्वारा सस्कृत टीका और हिन्दी भाषा सहित वैद्यो, विद्यार्थियो के लिये उपयोगी है । मू ११ रु.

रसरत्न समुच्चय—नवीन सुरत्नोज्वला विस्तृत भाषा टीका एव परिशिष्ट सहित मू १० रु, श्री प धर्मानन्द कृत तत्वबोधिनी हिन्दी टीका १० रु

रसतरगिणी चतुर्थ संस्करण—भाषा टीका सहित रस निर्माण, धातु उपधातुओ के शोधन मारणयुक्त यह अनुपम ग्रन्थ है । मू १२ रु

रसराज महोदधि (पचम भाग)—वस्तुत, यह आयु

वैदीय रसो का सागर ही है। पठनीय सरल भाषा मे लिखा उपयोगी रस ग्रन्थ है नवीन सस्करण सजिल्द मू १२.००

योगरत्नाकर–काय चिकित्सा विपयक उपलब्ध ग्रन्थो मे यह सर्वोत्कृष्ट रचना है। चिकित्सको के लिए ज्ञातव्य सभी आवश्यक विषयो का सग्रह किया गया है। माधवोक्त क्रम से सभी रोगो के निदान व चिकित्सा का वर्णन है। मू १८ ००

सौश्रुती—लेखक रमानाथ द्विवेदी। अष्टाग आयुर्वेद के शल्यतत्र पर लिखित प्राच्य पाश्चात्य समन्वय मू ८ ५०

सुश्रुत सहिता सम्पूर्ण—सरल हिन्दी टीका सहित टीकाकार श्री अत्रिदेव गुप्त। विद्यार्थियो के लिए पठनीय हैं। पक्के कपडे की जिल्द मू १५ ००, कविराज अम्बिका दत्त कृत सम्पूर्ण २४ ००

हारीत सहिता—ऋषि प्रणीत प्राचीन सहिता। भाषा टीका सहित, टीकाकार शिवसहाय जी सूद मूल्य ८ ५०

हरिहर सहिता—वैद्यराज हरिनाथ साख्याचार्य नवीन औपधियो का समावेश है सरल भाषा टीका मू. ८ ००

चिकित्सा रत्न–ले रामरतन गगेले। एक चिकित्सक के लिये सब प्रकार की सक्षिप्त उपयोगी सामग्री से युक्त सजिल्द मू ६ रु

चिकित्सा तत्व प्रदीप–एक चिकित्सक के लिए अत्यन्त उपयोगी ग्रथ प्रथमभाग१० रु सजिल्द, द्वितीय भाग १२ रु

वनौषधि चन्द्रोदय (१० भाग)–प्रत्येक वनस्पति के पर्याय, परिचय, गुणकर्मादि विवेचनयुक्त श्री चन्द्रराज भडारी कृत ४० रु (प्रत्येक भाग ५ रु)

चिकित्सा चन्द्रोदय (सात भाग)

हिन्दी ससार मे अपूर्व और पहला ग्रन्थ बिना गुरु के वैद्यक सिखाने वाला, जो सस्कृत जरा भी नही जानते वे भी इस ग्रन्थ को बिना गुरु के पढकर वैद्य बन सकते हैं–

चिकित्सा चन्द्रोदय	१ ला भाग	५ ००
,, ,,	२ रा भाग	६ ००
,, ,,	३ रा भाग	६.००
,, ,,	४ था भाग	६.००
,, ,,	५ वा भाग	६ ००
,, ,,	६ वा भाग	५ ००
,, ,,	७ वा भाग	१५ ००
		५८ ००

नोट–एक साथ ७ भाग खरीदने वालो को किताबें रेल पार्सल से मगानी चाहिए। एक पूरा सैट लेने वालो को कमीशन कम करके ५० ७५ रु देने पड़ते हैं। खर्चा पृथक

स्वास्थ्य रक्षा—गृहस्थो के घर की यह रामायण है। हर घर मे इसका रहना जरूरी है। इसका नाम ही स्वास्थ्य रक्षा उर्फ तन्दुरुस्ती का बीमा है। तन्दुरुस्ती नही तो दुनिया मे रहा ही क्या है। मू ६ ००

काय चिकित्सा (दो भाग)—श्री रामरक्ष पाठक जी की किसी भी पुस्तक को जिसने पढा है वह भली प्रकार इस पुस्तक की उपयोगिता जान सकता है। इस पुस्तक मे आयुर्वेद सिद्धातो का विशद रूप मे विवेचन किया गया है। अत्युपयोगी है ल.भग ५५० पृष्ठ, क्राउन साइज छपाई सुन्दर कपडे की जिल्द मू २५ ००

शारङ्गधर सहिता—भाषा टीका सहित टीकाकार प. प्रयागदत्त शर्मा सजिल्द ६ ०, श्री प केशवदेव शास्त्री कृत टीका ८ ००

निदान चिकित्सा हस्तामलक–लेखक वैद्य रणजीतराय देशाई। विद्वान चिकित्सको के लिये पठनीय उत्तम पुस्तक सजिल्द लगभग ७०० पृष्ठ ६ ००

अष्टांग हृदयम्—सर्वाङ्ग सुन्दरी व्याख्या विभूपित। टीकाकार श्री प लालचन्द वैद्य। व्याख्या बहुत सुन्दर एव सरल भाषा मे की गई है। लगभग ८५० पृष्ठ, बड़ा साइज कपडे की सुपुष्ट जिल्द। मू केवल १५ रु

भिषक्कर्म सिद्धि—आयुर्वेद के प्रकाड विद्वान श्री रमानाथ द्विवेदी द्वारा लिखित यह अनुपम ग्रन्थ है। इसमें चिकित्सक के लिये जानने योग्य सभी विषयो का सग्रह किया गया है। ग्रथ के पाच खण्ड किये गये हैं–प्रथम खड मे निदान पचक, द्वितीय खण्ड मे पचकर्म, तृतीय मे चिकित्सा के आधारभूत सिद्धात, चतुर्थ खण्ड के ३३ अध्यायो मे रोगानुसार आयुर्वेदीय सफल-चिकित्सा तथा अन्त के पचम खण्ड के परिशिष्टाध्याय मे आवश्यक जानकारी दी गई है। पुस्तक चिकित्सको, अध्यापको एव विद्यार्थियो के लिए अद्वितीय है। सुन्दर छपाई पक्के कपडे की जिल्द ७१५ पृष्ठ मू २० रु

काय चिकित्सा—गगासहाय पाडेय–इस पुस्तक मे चिकित्सा के सैद्धातिक पक्ष का स्पष्टीकरण एव चिकित्सा के विभिन्न उपक्रमो का व्यवहारिक स्वरूप देने के अतिरिक्त व्याधि की विभिन्न अवस्थाओ के उपचार क्रम का

विशद विवेचन किया गया है। प्राच्य एव पाश्चात्य चिकित्सा का समन्वयात्मक निर्देश भी किया गया है। अन्त में विशिष्ट सक्रामक व्याधियो का विस्तृत परिचयादि एव चिकित्साक्रम है। लगभग एक हजार पृष्ठ,सुन्दर छपाई सजिल्द मूल्य २५ रुपया।

इन्द्र निदान—इसमे सस्कृत माधव-निदान की अनेक प्रकार के पद्यो मे बडी सरल सुबोध हिन्दी भाषा मे टीका की गई है तथा आधुनिक रोगो का परिशिष्ट मे कथन कर दिया है। इसके टीकाकार श्री इन्द्रमणि जैन अलीगढ हैं। सजिल्द मू केवल ६ रुपया।

कामविज्ञान विश्वकोष (आधुनिक काम विज्ञान)—इसमे काम विज्ञान की प्रत्येक शाखा का एशिया, अफ्रीका और यूरोप में हुई अगस्त १९६७ तक की हजारो नई नई खोजो का पूरा-पूरा हाल दिया है। "पुरुषो तथा स्त्रियो" के समस्त गुप्त रोगो का नये ढग से वर्णन हैं। कई सौ चित्रो, चार्टों तथा तालिकाओ से सजी पुस्तक का मूल्य केवल ८ रुपया।

चिकित्सादर्श.—आयुर्वेद के प्रकाड विद्वान श्री रामेश्वरदत्त जी शास्त्री द्वारा लिखित यह अपूर्व ग्रन्थ चिकित्सा सूत्रो का एक सग्रह है। नुस्खा नवीसी की तो यह अपूर्व पुस्तक है। द्वितीय या तृतीय भाग मे रोगो का विशिष्ट वर्णन दिया है। मू प्रथम भाग ४००, द्वितीय भाग ७ रुपया, तृतीय भाग ७ रुपया।

पदार्थ विज्ञानम्—लेखक श्री प० वागीश्वर शुक्ल वैद्य। इस ग्रन्थ मे आयुर्वेद के आधार भूत सिद्धातो का प्रतिपादन सरल भाषा मे किया गया है। मू ८ रुपया।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग की उप-वैद्य, वैद्य-विशारद, आयुर्वेदरत्न तथा समस्तरीय परीक्षाओ के लिये विशेष उपयोगी गाइडें—

अशोक उपवैद्य गाइड—(शिव कुमार व्यास)सम्पूर्ण छः पत्रो की परीक्षोपयोगी सामिग्री प्रश्नोत्तर रूप मे गत परीक्षाओं के प्रश्नो के आधार पर दी है। मू ६ रु.

अशोक वैद्य विशारद गाइड—लेखक आचार्य ज्ञानेन्द्र पाडेय प्रथम खण्ड ८ रुपया, द्वितीय खण्ड ८ रु

अशोक आयुर्वेदरत्न गाइड—(प्रथम भाग) लेखक शिव कुमार व्यास आयुर्वेदाचार्य (B I M S) मू १५ रु

अशोक आयुर्वेदरत्न गाइड—(द्वितीय खण्ड) लेखक शिवकुमार व्यास आयुर्वेदाचार्य (B I M S) १५ रु

शुद्ध आयुर्वेदिक चिकित्सा मार्गदर्शिका (आयुर्वेदिक गाइड)—इसके लेखक हैं आयुर्वेद के प्रकाड विद्वान श्री अत्रिदेव विद्यालकार—इस पुस्तक के ३ भाग हैं—प्रथम भाग मे रोगानुसार चिकित्सा, द्वितीय भाग मे विशिष्ट ज्ञातव्य तथा तृतीय भाग मे रोगानुसार सिद्ध योगो का सग्रह है। सजिल्द मू ५ रु

आयुर्वेद प्रकाश—टीकाकार श्री गुलराज शर्मा मिश्र आयुर्वेदाचार्य। लगभग ५०० पृष्ठीय रस शास्त्र के इस उत्कृष्ट ग्रन्थ मे लेखक के वचनानुसार केवल उन्ही विषयो का समावेश किया गया है कि उन्होने इनकी स्वय परीक्षा कर ली है। मू १२.५०

भेल सहिता सस्कर्त्ता आचार्य गिरजादयालु शुक्ल सस्कृत भाषा मे श्लोको का अभूतपूर्व सग्रह, मूल्य १० रु

आयुर्वेद द्रव्य गुण निदान—लेखक श्री शिव कुमार व्यास। प्रारम्भ मे द्रव्य गुण कर्म वीर्य विपाक व प्रभाव का विवेचन देकर बाद मे लगभग ३५० द्रव्यो का विवरण उनके गुण आदि दिये गये है। सजिल्द मूल्य १० रु

स्वास्थ्य शिक्षा पाठावलि—श्री भास्करगोविन्द घाणेकर एव वासुदेव भास्कर घाणेकर। आयुर्वेदीय स्वास्थ्य ज्ञान सम्बन्धी उत्कृष्ट सग्रह। साथ ही सरल हिन्दी भाषा मे टीका दी है। मू ३ ५०

विक व सिल गाइड (रुदन्ती चिकित्सा)—लेखक अमरदास भाटिया—इसमे क्षय रोग का नवीन उपचार रुदन्ती द्वारा अनेक एक्सरे फोटो देकर समझाया गया है। मूल्य ३ रुपया।

सुश्रुत संहिता (सूत्र स्थान)—डा० गोविन्द भास्कर कृत आयुर्वेद रहस्य दीपिका व्याख्या अत्यन्त उपयोगी एव विस्तृत टीका मू ६ रुपया।

सुश्रुत सहिता [शरीर स्थान]—डा० गोविन्द भास्कर कृत टीका मू० १२ रु

स्वास्थ्य विवेचन—इस पुस्तक में क्षय रोग की सफल एव सरल चिकित्सा बहुत रोचक ढङ्ग से दी गई है। लेखक श्री शिव कुमार वैद्य शास्त्री, डी एस सी ए आयुर्वेद वृहस्पति। अनेको चित्र है। सजिल्द मू ५ रु

वैद्य वतश—यह आयुर्वेद का लघु निघण्टु है। व्याख्याकार श्री ब्रह्मानन्द जी त्रिपाठी है। मू १ ५० रु

त्रिदोष विज्ञानम्—कविराज श्री उपेन्द्र नाथ दास—

आयुर्वेद का आधार त्रिदोष विज्ञान है तथा उसकी ही जानकारी यह पुस्तक कराती है उपयोगी पुस्तक है। मू ४ रु

राजयक्ष्मा—प्रो सी द्वारकानाथ। मू १ रु

सरल पशु चिकित्सा—इस पुस्तक मे गाय, बैल, घोडा कुत्ता आदि के रोगो के लक्षण, चिकित्सा वर्णन दिया है। मू सजिल्द ४ रु

वैद्यकीय सुभाषित साहित्यम्—डा भास्कर गोविन्द घाणेकर–आयुर्वेदीय साहित्य में संग्रहणीय श्लोको को संग्रह कर उसकी सुन्दर व्याख्या की गयी है सजिल्द मू २५ रु

आयुर्वेद रत्न गाइड—श्री वैद्य जगदीशचन्द्र मिश्र आयुर्वेद रत्न की परीक्षा देने वाले विद्यार्थियो के लिये बहुत उपयुक्त गाइड है। सजिल्द मू १६ रु

वाग्भट विवेचन—आचार्य प्रियव्रत शर्मा-आचार्य जी ने वाग्भट्ट संहिता से विषयपूर्वक चयन करके उसके ऊपर लिखा है। मू. २० रु.

प्रत्यक्ष शारीर—महामहोपाध्याय गणनाथ सेन सरस्वती श्री कविराज की संस्कृत पुस्तक का यह हिन्दी अनुवाद है। सजिल्द पुस्तक दो खण्डो में है। मू प्रथम भाग १० रु, द्वितीय भाग १५ रु

वानस्पतिक अनुसंधान पत्रिका—डा. कृष्णचन्द्र चुनेकर ए. एम एस-लेटिन नामो में वर्ण क्रमानुसार उनके हिंदी नामो का एव मुख्य गुणो का संग्रह किया गया है। सजिल्द मू. १० रु.

एलोपैथिक पुस्तकें हिंदी में

आधुनिक चिकित्साशास्त्र—श्री धर्मदत्त जी। एलोपैथिक पद्धति से चिकित्सा का ज्ञान करने के लिये आये दिन ग्रन्थ लिखे जा रहे हैं किंतु वे ग्रन्थ सभी प्राय एकागी ही होते है। क्योकि इस चिकित्सा का क्षेत्र इतना विशाल हो गया है कि किसी एक ग्रन्थ मे सभी विषयो का समावेश कठिन है। साथ ही इस प्रणाली में प्रतिदिन नये तरीको का आविष्कार होता रहता है। अनुभवी लेखक ने आज तक के सारे आविष्कारो को इस पुस्तक मे गागर मे सागर की भाति भर दिया है। हर तरीके से इलाज इसमे दिया गया है। सूक्ष्म से सूक्ष्म विषय भी छूटने नही पाया है। आधुनिक से आधुनिक तरीके भी इसमे आ गये है। मू ३६ रु

अभिनव शवच्छेद विज्ञान—लेखक हरिस्वरूप कुलश्रेष्ठ–नवीन मतानुसार शवच्छेद (Dissection) विषयक विशाल ग्रन्थ है। विषय का स्पष्ट ज्ञान करने के लिये अनेक चित्र साथ मे दिये गये है। दो भाग मू. १८ रु

अभिनव विकृति विज्ञान—रघुवीर प्रसाद त्रिवेदी ए एम एस-विकृति विज्ञान (Pathology) विषय का हिंदी भाषा मे विशाल ग्रन्थ। अनेक चित्र साथ मे दिये गये हैं। प्रत्येक रोग का विकाश किस प्रकार होता है? एव उस समय शरीर के किस अङ्ग मे क्या-क्या परिवर्तन होते हैं स्पष्ट रूप मे समझाया गया है। मू २२ रु

एलोपैथिक पेटेण्ट चिकित्सा—लेखक डा. अयोध्यानाथ पाडेय। अकारादि क्रमानुसार प्रत्येक रोग पर प्रयोग की जाने वाली पेटेण्ट औषधिया दी है तथा वे पेटेण्ट औषधिया किन-किन रोगो पर प्रयुक्त हो सकती हैं यह भी दिया गया है। मू २७५

अभिनव नेत्रचिकित्सा विज्ञान—लेखक पं विश्वनाथ द्विवेदी शास्त्री B A आयुर्वेदाचार्य। प्राच्य एव पाश्चात्य दोनो का समन्वय करते हुये नेत्र चिकित्सा पर हिन्दी मे विशाल ग्रन्थ मू १५ रु.

शल्य प्रदीपिका—लेखक डा मुकुन्दस्वरूप वर्मा। शल्य (सर्जरी) विषयक हिंदी मे लिखी हुई उत्कृष्ट पुस्तक है। प्रत्येक प्रकार के शल्य कर्म को विस्तार से लिखा है। अनेक चित्र दिये हैं। मू १२.५०

बाल रोग चिकित्सा—लेखक डा रमानाथ द्विवेदी एम ए, ए एम एस प्राच्य एव पाश्चात्य चिकित्सा विज्ञान का विस्तार से समन्वय करते हुये विशुद्ध वर्णन युक्त। मूल्य ६ रु

अभिनव शरीर क्रिया विज्ञान—लेखक प्रियव्रत शर्मा यह पुस्तक हिन्दी मे अपने विषय की सर्वश्रेष्ठ पुस्तक है। मू १० रु.

धात्री विज्ञान—डा शिवदयाल गुप्ता A M S., प्रारम्भ में नारी जननेन्द्रिय रचना एव शारीर, गर्भिणी परिचर्या, नवजात शिशु परिचर्या एव प्रसवकालीन रोगो का संक्षेप मे वर्णन किया है। अनेक सम्बन्धित चित्र भी

दिये हैं। मू. ३ ००

गर्भस्थ शिशु की कहानी—लेखक डा. लक्ष्मीशंकर गुरु। प्रसूति विषयक हिन्दी मे उत्तम एव सक्षिप्त पुस्तक। सम्वन्धित चित्र भी है। मूल्य २ रु.

जन्म निरोध—लेखक ए. ए खा एम. एस सी। पुस्तक मे जन्म निरोध के लिए अनेक प्रकार की भौतिक, रासायनिक, यान्त्रिक एव शस्त्रकर्मीय विधिया दी गई है। पुस्तक अत्यन्त उपादेय है। मू. ६ रु.

सामान्य शल्य विज्ञान [सचित्र]—लेखक डाक्टर शिवदयाल गुप्त A.M S शल्य (सर्जरी) विषयक हिन्दी भाषा मे विशाल ग्रन्थ। प्रत्येक विषय को आवश्यकीय चित्रो द्वारा समझाया गया है। पुस्तक अध्यापकों, विद्यार्थियो एव चिकित्सको सभी के लिए उपादेय है। मू. १२ रु

आदर्श एलोपैथिक मेटेरिया मैडिका—विज्ञान के अनुसार प्रत्येक औषधि की प्रकृति, गुण, धर्म, उपयोग, मात्रा रोग निदान के अनुसार वर्णित हैं। मू ११ रु.

हिन्दी माडर्न मैडीकल ट्रीटमैंट—(आधुनिक चिकित्सा) लखनऊ विश्वविद्यालय के प्रोफेसर श्री एम. एल गुजराल M B, M R C.P (लन्दन) द्वारा लिखित एलोपैथिक चिकित्सा का सर्वोत्तम प्रामाणिक ग्रन्थ है। चिकित्सको के लिए अत्युपयोगी है। मू २० रु

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान—(दो भाग) श्री डा० आशानन्द पचरत्न M. B. B. S आयुर्वेदाचार्य। यह चिकित्सा विज्ञान की सुन्दर रचना है। इसमे १६ अध्यायो में रोग का वर्णन तथा उनकी सफल एलोपैथिक एव आयुर्वेदिक चिकित्सा बड़ी खूबी के साथ दी है। इनकी वर्णन शैली तुलनात्मक दृष्टि से ही महत्व की ही नही वरन् सफल चिकित्सा की दृष्टि से भी यह ग्रन्थ चिकित्सको को उपादेय है। कपडे की जिल्द मू. प्रथम भाग १० रु.

आयुर्वेद एण्ड एलोपैथिक गाइड—ले० आयुर्वेदाचार्य प रामकुमार द्विवेदी। हिन्दी मे प्राच्य पाश्चात्य विज्ञान का विस्तृत ज्ञान देने वाली बेजोड पुस्तक है। मू १२ रु.

वर्मा एलोपैथिक निघण्टु—डाक्टर वर्मा जी कृत। इसमे १००० से अधिक पेटेण्ट तथा साधारण औषधियो के वर्णन के अतिरिक्त सैकड़ो नुस्खे तथा अन्य उपयोगी बाते दी है। मू १२ रु.

एलोपैथिक योग रत्नाकर—श्री वर्मा जी की उपयोगी पुस्तक एलोपैथिक मिक्चर तथा प्रयोगो का विशाल सग्रह पृष्ठ ७४१ मू. १३ रु.

एलोपैथिक चिकित्सा (चौथा संस्करण)—लेखक डा सुरेशप्रसाद शर्मा। इसमें प्राय. सभी रोगो के लक्षण निदाव आदि सक्षेप मे वर्णन करके उन रोगो की चिकित्सा विस्तृत रूप से दी है। योग आधुनिकतम अनुसन्धानो को मथकर अनुभवसिद्ध लिखे गये हैं। ८२५ पृष्ठ के विशाल सजिल्द ग्रन्थ का मू. १३ रु.

एलोपैथिक पाकेट गाइड—एलोपैथिक चिकित्सा का सूक्ष्म रूप यह पाकेट गाइड है। इसे आप जेब में रखकर चिकित्सार्थ जा सकते है जो आपका हर समय साथी का काम देगी मू. ३ रु

एलोपैथिक पेटेन्ट मैडीसन—लेखक डा. अयोध्यानाथ पाडेय। कौन पेटेन्ट औषधि किस कम्पनी की किन किन द्रव्यो से निर्मित हुई है किस रोग में प्रयुक्त होती है यह लिखा गया है। दूसरे अध्याय मे रोगानुसार औषधियो का चुनाव किया है। मू. ६ ५०

एलोपैथिक मेटेरिया मैडिका (पाश्चात्य द्रव्य गुण विज्ञान)—ले. कविराज रामसुशीलसिंह शास्त्री A M S. यह पुस्तक अपने विषय की सर्वश्रेष्ठ पुस्तक है। लेखक ने विषय को आयुर्वेद चिकित्सको तथा विद्यालयो के लिए विशेष उपयोगी ढङ्ग से प्रस्तुत किया है। मू. प्रथम भाग ३०.०० द्वितीय भाग ३०.००

एलोपैथिक मेटेरिया मैडिका—लेखक डाक्टर शिवदयाल जी गुप्त ए एम एस। इस पुस्तक मे अब तक की सम्पूर्ण औषधिया जो एलोपैथी में समाविष्ट हो चुकी हैं दी गई हैं। सरल सुबोध भाषा, वैज्ञानिक—क्रम से विषय का स्पष्टीकरण, औषधियो के सम्बन्ध में आधुनिक सूचना, भिन्न-भिन्न औषधियो से सम्बन्धित तथा चिकित्सा मे प्रयुक्त योगो का निर्देश पुस्तक की विशेषता है। हिन्दी में सबसे महान और विशाल अद्वितीय पुस्तक जिसमें १३०० पृष्ठ हैं। मू १३ ००

एलोपैथिक सफल औषधिया—एलोपैथी की नवीनतम प्रसिद्ध खास-खास औषधियो का गुणधर्म विवेचन जो आजकल बाजार मे वरदान सिद्ध हो रही हैं। सभी सल्फा ग्रुप आदि औषधियो के वर्णन सहित मू. ४ ००

सचित्र नेत्र विज्ञान--लेखक डा शिवदयाल गुप्त, पृष्ठ संख्या ५१४, चित्र संख्या १३, मू ६ रु

मल-मूत्र-रक्तादि परीक्षा--लेखक डा. शिवदयाल गुप्ता

यूनानी पुस्तकें

जर्राही प्रकाश [चारो भाग]—इसमें घाव और व्रण से सम्बन्धित जर्राह के लिये उर्दू, सस्कृत व डाक्टरी आदि अनेक ग्रन्थो का सार सग्रह किया गया है। पृष्ठ सख्या २६८ मू ३ ५०

यूनानी चिकित्सा विधि—इसके लेखक श्री मसाराम जी शुक्ल हकीम वाइस प्रिंसीपल यूनानी तिब्बिया कालेज दिल्ली हैं। इसमे दिल्ली के प्रसिद्ध यूनानी खानदानी हकीमो के अनुभूत प्रयोगो का निचोड है जिसके कारण, यूनानी हकीमो की चिकित्सा दिल्ली मे खूब चमकी और आज तक नाम है। कपडे की पक्की जिल्द मू ५ रु

यूनानी चिकित्सा सागर—श्री मसाराम जी शुक्ल द्वारा लिखा हुआ हिंदी भाषा मे यूनानी का विशाल ग्रन्थ है जो 'रसतन्त्रसार' के ढङ्ग पर लिखा गया है। इसमे पुराने व आधुनिक सभी हकीमो के एक हजार अनुभूत प्रयोग हैं। औषधियो के नाम हिन्दी मे अनुवाद कर दिये गये हैं। जिनके नाम नही मिले हैं ऐसी १५० औषधियो का वर्णन परिशिष्ट मे दिया है। ५१६ पृष्ठ मू १० रु

यूनानी चिकित्सा विज्ञान—यूनानी चिकित्सा विज्ञान का हिंदी में अनुवाद ग्रन्थ। इस पुस्तक के दो भाग किये गये हैं। प्रस्तुत भाग मे यूनानी चिकित्सा और निदान के मूलभूत सिद्धान्तों का विशद विवेचन है। इसमे रोग के लक्षण, निदान, भेद तथा परीक्षा की सामान्य विधिया है। ६९६ पृष्ठो के इस ग्रन्थ का मूल्य ८ ५०

यूनानी सिद्ध योग संग्रह—यह यूनानी सिद्ध योगो का सग्रह है। सभी योग सरल परीक्षित और सहज में बनने वाले है हर एक वैद्य के काम की चीज है। इसके सग्रह-कार है वैद्यराज दलजीतसिंह जी आयुर्वेद वृहस्पति। मू २ ७५।

यूनानी वैद्यक के आधारभूत सिद्धात (कुल्लियात)—श्री बाबू दलजीतसिंह जी व उनके भाई रामसुशीलसिंह जी ने इस छोटे से ग्रन्थ मे इस बात को दिखाने का प्रयत्न किया है कि आयुर्वेद और यूनानी चिकित्सा पद्धतियो मे कितना सादृश्य तथा कितना असादृश्य है। इसका निर्माण दोनो का समन्वय हो सकता है इस आधार पर किया गया है। मू. १ २५

मखजनउल मुफरदात (निघण्टु विज्ञान)—लेखक प. जगन्नाथ शर्मा। मू. २ रु

कराबादीन सिफाई—यूनानी प्रयोग सग्रह लेखक प जगन्नाथ प्रसाद शर्मा मू २ रु

कराबादीन कादरी—लेखक जगन्नाथप्रसाद-हैड मुदर्रिस। चार भाग मू. ८ रु

यूनानी द्रव्य गुण विज्ञान—हकीम डा. दलजीतसिंह ने पूर्वार्ध में द्रव्य गुण कर्म आदि का विवेचन किया है। उत्तरार्ध मे ५३० यूनानी द्रव्यो के पर्याय, उत्पत्ति स्थान का वर्णन, रासायनिक सगठन, प्रकृति और गुणो का पूर्ण विवेचन दिया है। मू २२ रु

सरल सिद्ध प्रयोगों की पुस्तकें

अनुभूत योग प्रकाश—ले० डा० गणपतिसिंह वर्मा। प्राय सभी रोगो पर आपको सरल सफल प्रयोग इस पुस्तक में मिलेगे। मू. ६ २५

अनुभूत—ले डा. सुरेन्द्रसिंह नेगी--इसमे भिन्न-भिन्न रोगो पर अनूभूत रोगों का वर्णन है। मू २ ५०

पैसे-पैसे के चुटकुले—सस्ते तथा सफल प्रयोगो का सग्रह मू ३ रु

महात्मा जी के १२३१ नुस्खे—इस पुस्तक मे जनता के लाभार्थ महात्मा जी ने अपने स्वानुभूत प्रयोगों द्वारा गागर मे सागर भर दिया है। सजिल्द ३ रु.

सिद्ध योग (दो भाग)—प विशेश्वरदयाल वैद्यराज—इस पुस्तक मे अनेक सिद्ध योगो का रोगानुसार वर्गीकरण करते हुये सग्रह किया है। मू प्रथम भाग १ रु, द्वितीय भाग ०.५०

वैद्य जीवनम्—श्री लोलम्बराज कृत सस्कृत मे प्रयोगो का सग्रह है। सरल हिंदी टीका की गई है। प कालीचरण पाडेय एम. ए कृत १ २५, केशवदास जी १ रु

नित्योपयोगी चूर्ण संग्रह—नित्य उपयोग मे आने वाले १३१ चूर्णो का सग्रह विभिन्न ग्रन्थो से किया है। उनके बनाने की विधि, मात्रा, अनुपान एव गुणो का वर्णन किया गया है। मू १.२५

नित्योपयोगी क्वाथ संग्रह—क्वाथ चिकित्सा, आयुर्वेद

की प्राचीन, अल्प व्यय साध्य एव आशुफलप्रद चिकित्सा है। इस पुस्तक मे १६ क्वाथो का सग्रह प्रकाशित किया गया है। मू १.२५

नित्योपयोगी गुटिका संग्रह—३२३ वटियो (गुटिकाओ) का उपयोगी सग्रह मू २ रु

अनुभूत योग चिंतामणि—डा गणपति सिह वर्मा राजवैद्य। वर्गानुसार रोगो का वर्णन कर तत्पश्चात् उपयोगी नुस्खे दिये गये हैं जो कि सस्ते, सरल और आशुफलप्रद हैं। अल्पकाल मे ५ सस्करण हो जाना ही इसकी उत्तमता का प्रमाण है। मू प्रथम भाग ५.००, द्वितीय भाग ४.००

सिद्ध भैषज्य संग्रह—चूर्ण, वटी, तैल, अवलेह, आदि वर्गानुसार अनेक सिद्ध औषधियो का विवेचन किया गया है। अन्त मे ज्वर, अतिसार आदि रोगो पर प्रयुक्त की जाने वाली औषधियो की सूची विस्तृत रूप से दी गयी है। सजिल्द मू. ८.००

देहाती अनुभूत योग सग्रह—(दो भाग) अनुवादक अमोलकचन्द्र शुक्ल। देहाती वस्तुओ से उत्तमोत्तम प्रयोगो को बनाने की विधियां वर्णन की गयी हैं। दोनो भागों को मिलाकर लगभग ६५० प्रयोग दिये हैं। सजिल्द प्रथम भाग ६.००, द्वितीय भाग ७.००

डाक्टरी नुस्खे—डाक्टर राधाबल्लभ पाठक लेकक डाक्टरी नुस्खो का सग्रह सजिल्द मू. ५.००

अनुभूतयोग चर्चा—लेखक बसरी लाल साह्नी प्रथम भाग में २०७ प्रयोगो तथा द्वितीय भाग में ४३३ प्रयोगो का सग्रह है। इस पुस्तक मे अति सरल प्रयोग वर्णित है। मू. प्रथम भाग २ ५०, द्वितीय भाग ३.५०

अनुभूत योग—दो भागो मे लगभग १५० प्रयोगो की निर्माण विधि, मात्रा अनुपान एव उनके गुणो का विस्तृत विवेचन किया है। मू प्रत्येक भाग का १ ००

रस तत्रसार व सिद्ध प्रयोग संग्रह—सशोधित अष्टम सस्करण। इस ग्रन्थ मे रस-रसायन, गुटिका, आसव, अरिष्ट पाक, अवलेह, लेप, सेक, मलहम, अजनादि सभी प्रकार की आयुर्वेदिक औषधियो के सहस्त्रश अनुभूत एव शास्त्रीय प्रयोग तथा विस्तृत गुण धर्म विवेचन है। प्रथम भाग १०.००, सजिल्द १२००, द्वितीय भाग ८.००, सजिल्द १० रु

होमियोपैथिक पुस्तकें

आर्गेनन—यह होमियोपैथी की मूल पुस्तक है जिसमे इस पैथी के मूल प्रवर्तक महात्मा सैमुएल हैनिमैन के २९१ सूत्र हैं। इस पुस्तक मे इन्ही पर डा सुरेश प्रसाद शर्मा ने व्याख्या इतनी सुन्दर और सरल की है कि हिंदी जानने वाले इन सूत्रो का मन्तव्य भली-भाति समझ सकते हैं। बिना इस पुस्तक के होमियोपैथी जानना दुराशा मात्र हैं। पृष्ठ सजिल्द मू. ४ ५०

ज्वर चिकित्सा—उत्तर प्रदेशीय सरकार से पुरस्कार प्राप्त इसमे सभी प्रकार के ज्वरो की एलोपैथिक, आयुर्वेदिक यूनानी मत से चिकित्सा वर्णित है। मू २ रु

पशु चिकित्सा होमियो—यह आयुर्वेदिक तथा होमियोपैथिक दोनो से सम्बन्धित पशु चिकित्सा पर बहुत उपयोगी साहित्य है। मू २ १२

प्रिंस मैटेरिया मैडिका—(कम्परेटिव)—डा सुरेशप्रसाद शर्मा प्रिंस होमियोपैथिक कालेज के प्रिंसिपल द्वारा प्रणीत यह होमियोपैथिक मेटेरिका मेडिका है। औरो से इसमें बहुत कुछ विशेषता है। थेराप्युटिक ही नही इसमे फार्मोकोपिया भी सम्मिलित की गयी है। प्रत्येक औषधि के मूलद्रव्य, प्रस्तुत विधि, वृद्धि, उपशम, प्रमुख एव साधारण लक्षणो आदि सभी विषयो का वर्णन किया गया है १३७२ पृष्ठो की पुस्तक का मू केवल १० रु

किंग होमियो मिक्चर्स—श्री शकर लाल गुप्ता। यह पुस्तक होमियोपैथिक डाक्टरो के दैनिक व्यवहार के लिये अत्युपयोगी है। मू २.५०

होमियो मेटेरिया मेडिका—(रेपर्टरी सहित)—डा विलियम बोरिक। अब तक यह पुस्तक अग्रेजी भाषा मे थी जिसका यह सरल हिन्दी भाषा में अनुवाद है। मेटेरिया मेडिका अध्याय के बाद रेपर्टरी अध्याय लिखा गया है। लगभग १८०० पृष्ठ मू १५ रु

होमियोपैथिक लेडी डाक्टर (छठा सस्करण)—इस पुस्तक में स्त्री रोगो की सरल होमियोपैथिक चिकित्सा दी गयी है। पाच सस्करण शीघ्र ही समाप्त हो जाना इस पुस्तक की उपादेयता का द्योतक है। मू १.६२

होमियोपैथिक नुस्खा—डा श्याम सुन्दर शर्मा—इस

पुस्तक मे अनेक उपयोगी होमियोपैथी नुस्खे दिये हैं। मू १.२५

भैषज्यसार—होमियोपैथी की पाकेट गुटिका। सभी सभी रोगो की दवाओ के प्रयोग व मात्राये दी हैं। मूल्य २ ००

भारतीय औषधावली तथा होमियो पेटेन्ट मैडीसिन—डा सुरेसप्रसाद ने इस पुस्तक मे उन औषधियो को लिया है जो भारतीय औषधियो से तैयार होती हैं। साथ ही बाद में कुछ होमियोपैथिक पेटेण्ट औषधियो को वह किस रोग मे दी जाती हैं, दिया है। मूल्य १.५०

रिलेशन शिप—नित्य व्यवहारिक औषधियो का सहायह अनुसरणीय प्रतिषेधक तथा विपरीत औषधियो का सग्रह किया है। मू २ ००

सरल होमियो चिकित्सा—इसमे सभी स्त्री पुरुषो के स्वास्थ्य नियमो को अलग बनाया है तथा उनसे विपरीत होने वाले होमियोपैथी सभी रोगो की होमियोपैथी चिकित्सा दी गई है। रोगी वर्णन तथा चिकित्सा दोनो ही अत्यन्त सरल और समझाकर लिखे गए हैं। मू ४.५०

रोग निदान चिकित्सा—इस छोटी पुस्तक मे १०० पृष्ठो में रोगी की परीक्षा विधि व ५० पृष्ठो मे होमियोपैथी एव आयुर्वेदिक चिकित्सा है। मू २ ००

स्त्री रोग चिकित्सा—डा. सुरेशप्रसाद शर्मा लिखित स्त्री जननेंद्रिय के समस्त रोग, गर्भाधान, प्रसव के रोग तथा स्त्रियो को होने वाले अन्य सभी रोगो का निदान व चिकित्सा दी है। मू ५ रु

होमियोपैथिक मेटेरिया मेडिका—जिन्हे मोटे-मोटे ग्रथ प्रढने का समय नही है उनके लिए यह मेटेरिया मेडिका बहुत उपयुक्त है। सजिल्द ४.२५, आर एस भार्गव ७ ००

होमियो चिकिसा विज्ञान (Practice of Medicines)—ले डा श्यामसुन्दर शर्मा। प्रत्येक रोग का खण्ड खण्ड रूप में परिचय, कारण, शारीरिक विकृति, उपद्रव, परिणाम और आनुषङ्गिक चिकित्सा के साथ आरोग्य चिकित्सा का वर्णन है। सजिल्द मू ५ ००

बारह तन्तु औषधिया—इनमे प्रारम्भ मे १२ मूल औषधियो के विषय मे लगभग १८० पृष्ठो मे पर्याप्त जानकारी प्रदान करने के बाद रोगानुसार वायोकैमिक चिकित्सा विस्तार से दी है। छठा सस्करण मू ७ रु

होमियोपैथिक सग्रह—प्रथम भाग—इसमे होमियोपैथिक विधान (Organon), मेटेरिया मैडिका, रेपर्टरी तथा नुस्खे दिये गये है। मूल्य १० रु

होमियोपैथिक सग्रह दूसरा भाग—इसमे मेटेरिया मैडिका का होम्यो विस्तारपूर्वक दिया गया है। औषधियो के प्रचलित नाम, मदर टिंक्चर तथा डाइलूशन बनाने की विधि, औषधि चिन्ह कच्चे रूप मे इसका प्रयोग, होमियोपैथिक प्रविङ्ग तथा औषधियो के सम्बन्ध दिये हैं। मू १५ रु

कालरा या हेजा—इस महाव्याधि पर सुन्दर सामग्री प्रस्तुत है। प्रत्येक अवस्था पर औषधियो का सग्रह मू ३ ००

वायोकैमिक चिकित्सा—वायोकैमिक चिकित्सा सिद्धात के सम्बन्ध मे आवश्यक बातें तथा बारहो औषधियो के वृहद मुख्य लक्षण और किन-किन रोगो मे उनका व्यवहार होता है ? सरल ढङ्ग से समझाया है। पृष्ठ ४२६ मू ४ ५०

वायोकैमिक रहस्य (नवम् संस्करण)—बारहो दवाओ का भिन्न-भिन्न रोगो पर सफल वर्णन किया गया है। सजिल्द मू. ३ ००, कैलाशभूषण लिखित १.५०

वायोकैमिक मिक्चर—बारहो क्षारो का विभिन्न रोगो मे मिक्चर रूप से व्यवहार करना यह पुस्तक बताती है। मू. ० ७५

होमियो परिवारिक चिकित्सा—लेखक डा सुरेशप्रसाद शर्मा प्रत्येक रोग के लक्षण एव उनकी होमियोपैथिक चिकित्सा विस्तृत रूप से दी गई है। आधुनिक वैज्ञानिक विवेचन भी साथ मे दिया गया है। मू १० रु

होमियो मदर टिंचर्स (मेटेरिया मेडिका)—डा भगवती प्रसाद श्रीवास्तव—इसमे होमियोपथिक दवाओ के सक्षिप्त लक्षण, उनके प्रभाव आदि दिये हैं। मू ३ ५०

होमियो पशु चिकित्सा—इसमे घरेलू जानवरो के रोगो की चिकित्सा होमियोपैथिक पद्धति से दी है मू २ ४०

जीवन रसायन शास्त्र—ले० डा० एच० पी० सिंह—इसमे होमियोपैथिक चिकित्सा पद्धति के बारे में सक्षिप्त जानकारी, औषधियो की सक्षिप्त जानकारी, रिपर्टरी तथा अन्त में कुछ अनुभूत योग दिये गये हैं। सजिल्द मू ३.५०

वायोकैमिक रेपर्टरी—डा कामता प्रसाद मिश्र--यह पुस्तक अनेक हिन्दी तथा अग्रेजी ग्रन्थो से सग्रह कर बडे परिश्रम एव विवेक से तैयार की गई है। रोगो एव उनके विभिन्न लक्षणो का वर्णन अकारादि क्रम से किया गया हैं।

सजिल्द मू. ५ रुपया

प्रैक्टिस आफ मैडीसन (होमियो चिकित्सा विज्ञान)–डा. श्याममुन्दर शर्मा एम० डी०–इसमे क्रमानुसार प्रत्येक रोग के कारण, लक्षण, निदान एव होमियो चिकित्सा दी है। सजिल्द पुस्तक मू ५ रुपया

होमियोपैथिक मदर टिंचर (मेटेरिया मेडिका)—डा. भगवतीप्रसाद श्रीवास्तव–इसमें होमियोपैथिक की समस्त मदर टिंचर औषधियो का मूल वस्तु, प्रस्तुत क्रिया, शक्ति एव रोगो की चिकित्सा का वर्णन है। मू. ३ ५०

होमियोपैथिक नुस्खा.	डा श्याम सुन्दर शर्मा	१.२५
घाव की चिकित्सा	श्याममुन्दर शर्मा	१.००
निमोनिया चिकित्सा	डा. वी एन. टडन	०.७५
” ”	डा सुरेशप्रसाद	० ७५
होमियो थाईसिस चिकित्सा	” ”	० ७५
होमियो टाइफाइड चिकित्सा	” ”	० ७५
होमियो पाकेट गाइड	” ”	१.००
गृह चिकित्सा	” ”	३.००
”	डा बी. एन. टडन	१ ५०
सरल होमियो पारिवारिक चिकित्सा	डा. शिवसहाय भार्गव	५.००
होमियो फार्माकोपिया	डा. बी एन. टडन	२.००

प्राकृतिक चिकित्सा की पुस्तकें

रोगो की सरल चिकित्मा (तीसरा परिवर्तित सस्करण) लेखक श्री विट्ठलदास मोदी। १०,००० से अधिक रोगियो पर किये गये अनुभव के आधार पर लिखी गई हिन्दी की यह प्राकृतिक चिकित्सा सम्बन्धी श्रेष्ठ पुस्तक है, अब तक इसकी पन्द्रह हजार प्रतिया बिक चुकी है। पृष्ठ संख्या ३५०, बढिया पक्की जिल्द मू ४ रुपया

बच्चों का स्वास्थ्य और उनके रोग—बच्चे के पालन पोषण की विधि के साथ-साथ उनके रोगी होने पर उन्हे रोगमुक्त करने की विधि इस पुस्तक मे विस्तार से दी गई है। मू केवल ३ रु

रोगो की नई चिकित्सा—लेखक लूईकूने। यद्यपि प्राकृतिक चिकित्सा का बहुत पहले आविर्भाव हो चुका था पर हिन्दुस्थान मे प्राकृतिक चिकित्सा कूने की पुस्तक न्यू साईन्स आफ हीलिंग के साथही आई। कूने की इस पुस्तक का ही 'रोगो की नई चिकित्सा' अनुवाद है मू. २ ५०

प्राकृतिक जीवन की ओर—मिट्टी, पानी, धूप, हवा और भोजन की सहायता से नये पुराने सब रोगो को दूर करने वाली तथा स्वास्थ्य बढिया बनाने की विधि सिखाने वाली जर्मन पुस्तिका का अनुवाद मू ४ रु

जीने की कला—यह पुस्तक आपका मानसिक बल बढाएगी, चिन्ताओ से मुक्त करेगी तथा आपके सामने वे सारे रहस्य खोल देगी जिनसे मनुष्य स्वस्थ बनता है। मू २ रुपया

स्वास्थ्य कैसे पाये ?—इस पुस्तक में स्वास्थ्य को उन्नत बनाने और लोगो की रोगो से मुक्ति पाने की आत्म कथाये पढ स्वस्थ रहने का सही तरीका जानें। मू २ रु

उपवास के लाभ—उपवास की महिमा, उपवास करने की विधि और रोगो के निवारण मे उपवास का स्थान बताने वाली पुस्तक मू २ रु

उठो ?—इस पुस्तक को पढें और दुख, परेशानी और मुसीबतो से छुटकारा पा जीवन सफल बनायें। मू. १ ५०

आदर्श आहार–भोजन से स्वास्थ्य का क्या सम्बन्ध है और भोजन द्वारा रोग का निवारण कैसे किया जा सकता है ? बताने वाला एक ज्ञानकोष मू. २.२५

आहार चिकित्सा—आहार द्वारा रोग निवारण की शास्त्रीय विधि इस पुस्तक में सरल भाषा में समझाई है। इसके लेखक श्री विट्ठलदास मोदी हैं। मू २ रु.

सर्दी जुकाम खांसी–इन रोगो के कारण, उनको दूर करने की सरल घरेलू विधि, उनसे बचने का रास्ता बताने वाली एक अत्यन्त उपयोगी पुस्तक। मू ०.७५

योगासन–लेखक आत्मानन्द। योगासन की विधिया और योगासनो द्वारा रोग निवारण की कला की जानकारी प्राप्त कीजिये। मू केवल २ रु.

दुग्धकल्प—दूध मे क्या गुण हैं। इससे इलाज किस प्रकार किया जाता है। दूध से बनी विभिन्न वस्तुओ का हमारे स्वास्थ्य पर कैसा प्रभाव पडता है आदि वर्णन इस पुस्तक में पढिये। मू १ रु

स्वास्थ्य के लिये शाक तरकारियां (चतुर्थ संस्करण)–शाक तरकारियाँ जो हम रोजाना खाते हैं इनका मनुष्य के स्वास्थ्य और सौन्दर्य से क्या सम्बन्ध है, कौन कौन सी

शाक तरकारिया कब और कैसे खानी चाहिए आदि सभी बाते इस छोटी सी पुस्तक में है। मू २ ५०

स्वास्थ्य और जल चिकित्सा (छठा सस्करण)—लेखक केदारनाथ गुप्ता एम ए। इसमे जल चिकित्सा के सारे सिद्धान्तो का बडी सरल भाषा मे प्रतिपादन किया गया है। पानी के द्वारा समस्त रोगो की चिकित्सा कैसे करें। यह पुस्तक में पढिये। मू ३.५०

दैनन्दिनी रोगो की प्राकृतिक चिकित्सा—लेखक कुल रजन मुखर्जी—इस पुस्तक में ज्वर, प्रतिश्याय, अतिसार, प्रवाहिका, फोडा, फुन्सी, घाव, सिरदर्द, हैजा, चेचक आदि की प्राकृतिक चिकित्सा दी है। मू. ४ रु

पुराने रोगो की गृह चिकित्सा—लेखक डा. कुलरजन मुखर्जी। इस पुस्तक मे अजीर्ण, सग्रहणी, श्वास, यक्ष्मा, कैंसर, मधुमेह, दाद, उन्माद, रक्तचाप, अश्मरी, नपुंसकता अण्डवृद्धि आदि सभी जीर्ण रोगो की प्राकृतिक चिकित्सा दी गई है। मू. ४ रु

देहाती प्राकृतिक चिकित्सा—इस पुस्तक मे नेत्र, कर्ण, नासिका, दन्तरोग, मुख तथा कण्ठरोग, श्वास, कास, अजीर्ण, विशूचिका, प्रवाहिका, अतिसार, सग्रहणी, वृक्कशूल, मूत्रावरोध, दाद, श्वित्र, नपुसकता आदि रोगो के उपयोगी प्रयोग दिये गये है। मू सजिल्द ५ रु

स्वास्थ्य साधन—श्री रामदास गौड़ सजिल्द ४ रु

प्राकृतिक शिशु चिकित्सा—लेखक डा सुरेश प्रसाद शर्मा। शिशुओ के विभिन्न रोग किस कारण से होते हैं? तथा उनका नाम मात्र व्यय में किस प्रकार उपचार किया जाय? बच्चो को निरोग रखने के उपाय एव विविध प्रकार के स्नाव इस पुस्तक मे हैं। मू २ रु.

आकृति निदान—अपने विषय की सर्वश्रेष्ठ पुस्तक है। अन्त मे ५२ फोटो चित्रो द्वारा विभिन्न आकृतियो का ज्ञान कराया गया है। बादीपन का इलाज बहुत विस्तृत रूप से दिया है। सजिल्द मू. २.५०

जल चिकित्सा—श्री राखालचन्द जी चट्टोपाध्याय बी. एल.। अनुवादक प ईश्वरीप्रसाद शर्मा। इस पुस्तक के तीन भाग हैं। तृतीय भाग में सब तरह के स्त्री रोगो का ज्ञान दिया गया है। मू. तृतीय भाग १.५०

तन्दुरुस्त कैसे रहे?—बर्नर मैकफैडन। इसके अनेको चित्र देते हुए व्यायामो का बडे सुन्दर ढग से वर्णन किया गया है। मू. ३ रु

नवीन चिकित्सा पद्धति—डा	युगलकिशोर चौधरी	१ २५
सूर्योदय	,,	१.००
व्यायाम काया कल्प	,,	२ ००
चिकित्सा सागर	,,	० ७०
मैं निरोग हू या रोगी	,,	० ६२
कपड़ा और तन्दुरुस्ती	,,	०.५६
दमा-श्वास खासी का इलाज डा.	युगलकिशोर चौधरी	०.५०

चिकित्सोपयोगी नवीन उपकरण

एक सफल चिकित्सक के लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि वह रोगी का सही निदान करे तथा उसकी चिकित्सा में ओषधि प्रयोग के साथ-साथ आधुनिकतम यन्त्र शस्त्रों का प्रयोग आवश्यकतानुसार करे। इन आधुनिक यन्त्र-शस्त्रों के प्रयोग से आपको अपनी चिकित्सा में तो सफलता मिलती ही है साथ ही रोगी पर भी आपके प्रति बहुत अनुकूल प्रभाव पडता है। हमने अपने स्टोर्स में नवीन नवीन यन्त्र शस्त्रों का विक्रयार्थ विशाल संग्रह किया है। चिकित्सकों को चाहिये कि वे आवश्यकतानुसार इन वस्तुओं को मगाकर रखे तथा अपने चिकित्सा कार्य में सफलता एवं यश प्राप्त करे। यह मूल्य नैट है। पोष्ट पैकिंग व्यय एवं सैलटैक्स पृथक होगा।

डाइग्नोस्टिक सैट—इसके द्वारा नाक, कान तथा गले को अन्दर से देखते हैं। प्रकाश का प्रबन्ध होता है। सैल सहित मू ४७ रु.

चिपकने वाली पट्टी—१ इंच ×५ गज ३ ५०, २ इंच ×५ गज ६ ००

आमाशय प्रक्षालिनी नलिका—७ ००

नमक का पानी चढाने का यन्त्र—१२ ५०

आख धोने का गिलास—१ रु.

शर्करामापक यन्त्र—६ ५०

सुगर टैप—(बिना किसी यन्त्र के तत्काल ही मूत्र में शर्करा की प्रतिशत मात्रा ज्ञात करने के लिये)—१२ रु.

रक्तचापमापक यन्त्र (डायल टाइप)—१२५ रु

आई शेड—० ५०

मोतीझरा देखने का शीशा—छोटा २ ५०, बडा ३ रु, धातु का हैंडिल छोटा ४ २५, बडा ५ ५०

स्टेथिस्कोप—१० रु, बढिया १४ ५०, जापानी सर्वोत्तम ४५रु., स्टेथिस्कोप रखने का थैला मू ८ ५०

डायफ्राम (इंच) पैसरी—४ ५०

किडनी ट्रे—८" ४ २५, १०" ५ ००, ८" नाइलोन की (न टूटने वाली) ४ ७५

सस्पैन्सरी बेन्डेज—२ ५०

हीमोग्लोबिन स्केल बुक—२ ५०

पैन टार्च—२ सैल सहित १० ५०

पैन टार्च सेट—पैनटार्च पर नाक कान तथा गले को देखने वाली नलिया लग जाती है। कपडा से मढे एक सुन्दर बक्स में रखे पूरे सैट का मूल्य २५ ५०

थर्मामीटर—४ ५०, फार्नहाइट वाला भारतीय ६ ५०

थर्मामीटर केस—धातु का २ ५०, प्लास्टिक का २ रु

आटोमाइजर—८ ५०

धमनी सदश (Artery Forceps)—मूल्य ५ इंची ४ ५०, ६ इंची ५ ५०, स्टेनलैसस्टील की ५ इंची ६ ५०, ६ इंची ७ २५

सूचिका सदश Needle Holder)—मू० ८ ००, कैंची की तरह का ९ ५०, स्टेनलैस स्टील का कैंची की तरह का मू० १० ५०

धागा सीवन कर्म को—१ पैकिट २ ००, क्रिस्टीनैल १० ५०

सूचिका—सीवन कर्म को विदेशी ६ सुई का पैकिट ६ ७५

शीशे पर लिखने की पैन्सिल—० ७५

मसूढे चीरने का चाकू सीधा १ ५०, फोल्डिंग ३.००, स्टेनलैस स्टील का सीधा ३ ५०

इंजेक्शन सिरिंज (कम्पलीट)—सम्पूर्ण कांच की २ CC की २ ७५, ५ CC की ४ ००, १० C.C की ६ ००, २० C C की १० ००, ३० C C की १४.५०, ५० C C की २८.००

रिकार्ड सिरिंज—२ C C की ११ ००, ५ C C की १५ ०० १० C C की १८ ५०

ल्यूर लाक भारतीय—२ C C की ६ ०० ५ C C. की ८ ००, १० C C की १२ ००

ल्यूर लाक जापानी—२ C C की १० ००, ५ C C की १२ ००, १० CC की १५ ००, २० CC की २० ००, ३० CC की २८ ००, ५० CC की ३५ ००

नाइलोन की सिरिंज—२ CC की २ ७५, ५ CC की ४ ००, १० C C की ५ ५०

इन्जेक्शन की सुई (नीडिल)—१ दर्जन जापानी ६ ००

सिरिंजकेश निकिल के—१ केस २ C C. की सिरिंज के लिये ३ ००, ५ C C की सिरिंज के लिये ४ ००, १० CC की सिरिंज के लिये ६ ००, २० CC की सिरिंज के लिये ११ ००, ३० या ५० C C की सिरिंज के लिये १६ ५०।

सिरिंजकेश प्लास्टिक का—जिसमे २ सी सी, ५ सी सी तथा १० सी सी. की सिरिंज तथा नाडिल एक साथ रखी जा सकती हैं। मू ६.५०

परवाल उखाडने की चीमटी—[Cilia Forceps] मू २ ५०, स्टेनलैस स्टील की ४ ५०

एनीमा सिरिंज (बस्ति यन्त्र)—मू ६.००

दवा नापने का ग्लास—मूल्य २ ड्राम का ०.८०, १ औंस का १ ००, २ औंस का १ २५, ४ औंस का १ ५०

घाव में डालने की सलाई [probe]—मू. ० ३५

गला व जबान देखने की जीभी [Tongue Depre-

मिलने का पता दाऊ मैडीकल स्टोर्स, विजयगढ (अलीगढ)

ssure]—मूल्य साधारण सीधी १ ५०, फोल्डिङ्ग ३.००, स्टेनलैस स्टील की सीधी ५ ५० ।

गरम पानी की थैली—मूल्य ६ ५०

बरफ की थैली—मू ४ ५०

कान धोने की पिचकारी—धातु की १ औंस की ७.७५, २ औंस की ८.५०, ४ औंस की ११ ५० ।

आपरेशन करने का चाकू—मू ६ ब्लेडो सहित ६.५० । स्टेनलैस स्टील का ६ ब्लेड सहित ८ ५० ।

बिश्चूरी—सीधी का मूल्य १.५०, फोल्डिङ्ग ३ ०० । स्टेनलैस स्टील की सीधी ३.५० ।

चीमटी—४ इन्ची ० ६०, ५ इन्ची १ ००,स्टेनलैस स्टील बढिया ४ इन्ची ३ ७५, ५ इन्ची ४ ००

दातो मे दवा लगाने की चीमटी—३.०० ।

चाकू—चाकू सीधा ५ इन्ची १ ५०, फोल्डिङ्ग ३.००, स्टेनलैसस्टील का सीधा ३.५० ।

दांत उखाड़ने का जमूड़ा—६ ५०,स्टेनलैस स्टील२०.००

आख मे दवा डालने की पिचकारी—१ दर्जन ०.४०

कान मे से दाना निकालने का यन्त्र—मू २.५० ।

ग्लेसरीन की पिचकारी [प्लास्टिक की]—१ औंस २ ५०, २ औंस ४ ००

तीन मार्ग वाला यन्त्र(Three way Canula)—६.२५

आमाशय मे दूध चढाने की नली—३.०० ।

कान देखने का आला—१६ ०० ।

गुदा परीक्षण यन्त्र (Proctoscope)—१४ ०० ।

स्तनो से दूध निकालने का यन्त्र—२ ५० ।

मूत्र कराने की नली [कैथीटर]—मू रबड का० ७५ स्त्रियो के लिये धातु का १ ७५, पुरुषो को धातु का ३ ५०

जलोदर मे उदर से पानी निकलने यन्त्र—मू ३.७५, स्टेनलैस स्टील का ६ ५० ।

आख टैस्ट करने का चार्ट—मू० १ ६० प्रति चार्ट ।

खरल चीनी का गोल—३इन्ची २ ५०, ४ इन्ची ३ ००

आपेक्षिक घनत्वमापक यन्त्र [Urinometer]—मूल्य १.५०, बड़ा (१००० से २००० तक चिह्न वाला) २ ००

मवाद साफ करने की पिचकारी—मनुष्य के लिये १ २०, जनानी १.५० ।

कैंची—४ इन्ची २ ००, ५ इन्ची२ २५, ६ इन्ची ३ ०, ७ इन्ची ३.७५ । कैंची मुडी हुई ४ इन्ची २ २५, ५ इन्ची २.५० । कैंची एक ओर को मुडी हुई ४ इन्ची २.५०, ५ इन्ची ३.०० । कैंची सीधी स्टेनलेस स्टील की ४ इन्ची ४.५०, ५ इन्ची ५ ५०, ६ इन्ची ७ २५, ७ इन्ची ७ ५० ।

रबड़ के दस्ताने—मूल्य १ जोडी ३ ५० ।

कांटा (Scales)—ग्राम के बाटो सहित निकिल किया हुआ १५.०० ।

डूस—पूर्ण २ पिंटका ६.५०,४ पिंट का ९ ५०, २ पिंट का नाइलौन का सुन्दर पात्र रबड टोटनी सहित ९ ०० ।

स्प्रिट लैम्प—धातुकी २ औंसकी४.५०,४ औंसकी५ ५०

डाक्टर्स इमर्जेंसी बैग—१० इन्ची सम्पूर्ण चमडे का जिप (जजीर) लगा सुन्दर १८ ००, १२ इन्ची २२ ००

मुखविस्फारक यन्त्र (Mouth gag)—मूल्य ११ ००

दन्त उन्नामक यन्त्र [Dental Elevetor]—६ ५०

नासिका प्रेक्षण यन्त्र—५ ००

अंगुली के रबड के दस्ताने—३० नये पैसे,१ दर्जन३.००

मूत्रपात्र[Urinal pot]—तामचीनी का मू ६ २५, नाइलौन का बढिया ७.५० ।

सुरमा लगाने की सलाई—[काच की] १ दर्जन ३० पैसे, १ ग्रौस । ३.०० ।

योनि परीक्षण यन्त्र—११ ५० ।

योनि प्रक्षालन यन्त्र—१५ ०० ।

नीडलकेस प्लास्टिक का—इन्जेक्शन की सूचिका रखने को— १ दर्जन मू ५ ५० ।

कार्क स्क्रू—शीशी से कार्क को सुविधापूर्वक निकालने को ०.५० ।

विसंक्रामक पात्र—३ × २½ × १½ इन्ची— १७ ५०

विसंक्रामक पात्र—बिजली से चलने वाला—४१रु.

नाडी संदश(Sinus Forceps)— विद्रधि खोलने को स्टेनलैसस्टील का ५ इन्ची ७.७५, ६ इन्ची ९ ५०

टूर्नीकेट—स्क्रू से कसने वाला शिरान्तर्गत इन्जेक्शन लगाने के लिये अति उपयोगी, विलायती २१.०० ।

पट्टियां—(Bandages) घावो मे अस्पताल मे बाधी जाने वाली पट्टिया—यह ३ मीटर लम्बी तथा १ दर्जन के पैक मे है— १ इन्च की १२ पट्टिया १ ००, २ इन्च की १२ पट्टियाँ २ ००, ३ इन्च की १२ पट्टिया ३ ०० ।

रुई(Cotton)—४०० ग्राम का पैकिंग ४.२५ ।

पत्थर के खरल

कसौटी पत्थर मुलायम दवाओं को घोटने के लिए उत्तम है। मोतिया पत्थर के खरल कड़े तथा साधारण दवा घोटने के लिये उपयोगी है। मोतिया मे अधिक कड़ा तथा कम घिसने वाला तामड़ा होता है। विविध पिष्टी घोटने के लिये इनका उपयोग करे। तामड़ा पत्थर से अधिक उत्तम व न घिसने वाला हसराज पत्थर सर्वोत्तम है।

--मूल्य तथा साइज का विवरण--

	हसराज	तामड़ा	मोतिया	कसौटी
३ इची	×	×	३ ००	२ ००
४ इची	१४.२५	९ ७५	४.५०	२ ७५
५ इची	१६ ७५	११ २५	५ ७५	४ ६०
६ इची	२२.७५	१५ ७५	७.५०	७ २५
७ इची	२७ ७५	१८ ५०	१० ५०	९ ५०
८ इची	३४.९०	२२ ५०	१३ ५०	१२ ००
९ इची	४० २५	२७ ८७	१७ ००	१५ ००
१० इची	४७ ७५	३२ २५	२१ २५	१९ ५०
११ इची	५५.२५	३८ ७५	२४ ७५	×

	हसराज	तामड़ा	मोतिया
१२ इची	६२ ७५	४४ ००	२८ ७५
१३ इची	७० ७५	४९ ५०	३३.७५
१४ इची	८३ ००	५७ ००	३९ ००
१५ इची	९६ ५०	६६ २५	४७ ५०
१६ इची	११८ ७५	७८ ७५	५५ ००
१७ इची	१३९ ५०	८८.५०	६६.००
१८ इची	१६४ ३७	१०१ ००	७९ ५०
१९ इची	१९७ ००	१२२.२५	९६ ००
२० इची	२२५ ००	१४४ २५	११४ ००

सभी पत्थर के खरल १६ इची तक के बनाकर तैयार रखे जाते हैं। बड़े खरल का या स्टाक मे समाप्त खरल का आर्डर आने पर १॥–२ माह मे तैयार किया जाता है। खरलो का आर्डर देते समय अपने पास के रेलवे स्टेशन का नाम अवश्य लिखें तथा कम से कम १० रु० मनिआर्डर से पेशगी भेजे।

पता–दाऊ मैडीकल स्टोर्स विजयगढ़ (अलीगढ़)

खाली कैपसूल

आजकल का जमाना चमक-दमक का है। यदि आप अपने रोगियो को कोई कड़वी दवा देना चाहते है तो उसे पुड़िया मे न देकर कैपसूल मे भरकर दे। इससे वह रोगी आपको दवा के दुगुने पैसे खुशी–खुशी दे जायगा। साथ ही रोगी को दवा का कड़वापन वगैरह कुछ भी नही मालूम पड़ेगा। कोई-कोई रोगी कड़वी दवा को खाते ही उल्टी कर देते हैं लेकिन कैपसूल मे दवा भर कर देने पर ऐसा कुछ नही होगा। हमने बहुत बढ़िया क्वालिटी के कैपसूल मगाकर सग्रह किए हैं। आप भी लाभ उठावे। मूल्य निम्न प्रकार हैं—

बड़ा साइज ५ ७५ प्रति सैकड़ा, ५५ ०० के १०००
छोटा साइज ५ ५० प्रति सैकड़ा, ५२ ५० के १०००
सेल–टैक्स तथा पोस्ट–व्यय पृथक

नोट—एक साथ २००० कैपसूल या उससे अधिक मगाने पर पैकिंग पोस्ट व्यय हम देंगे।

पता–दाऊ मैडीकल स्टोर्स, विजयगढ़ (अलीगढ़)

रजिस्टर्ड पेटेन्ट

भारत सरकार से अपनी दुकान, फर्म, कम्पनी तथा अपनी बनाई हुई दवाओं के नाम रजिस्टर्ड कराइये। शीघ्रता कीजिये, कहीं ऐसा न हो कि नकल करने वाले ही चुपके से आपसे पहले उस नाम को रजिस्टर्ड करालें और असली मालिक बन बैठें तथा बाद में आपको हानि और परेशानी उठानी पड़े तथा नाम भी बदलना पड़े। प्रसिद्धि ही तो व्यापार की जान है नियम मुफ्त मंगाइये।

दाऊ मैडीकल स्टोर्स विजयगढ़ (अलीगढ़)

गर्ग बनौषधि भंडार विजयगढ़ (अलीगढ़) की आविष्कृत

पेटेन्ट औषधियां

नेत्र ज्योति वर्धक सुरमा—अन्य सुरमो की तरह केवल आखो की सुन्दरता बढ़ाने के लिए यह सुरमा नही है। यह तो नेत्रो की ज्योति बढाने वाली अत्युत्तम महौषधि है। वृद्धावस्था मे धुन्ध और जाले से जिनकी नेत्रो की रोशनी कम हो जाती है उनके लिए यह वरदान है। मोतियाबिन्दु की प्रारम्भिक अवस्था मे यह बहुत लाभ करता है। इससे मोतियाबिन्दु बढता नही है और प्रारम्भिक मोतियाबिन्दु निश्चय ही ठीक हो जाता है। अब तक जितने व्यक्तियो ने इसे व्यवहार किया है, सबने प्रशसा की है। मूल्य ५ ग्राम की शीशी का २ रुपया है।

छाजनहर मलहम—अब तक यह समझा जाता रहा है कि छाजन असाध्य रोग है किन्तु हमारी इस मलहम ने यह धारणा गलत सिद्ध करदी है। इसके व्यवहार से छाजन के सैकड़ो रोगी स्वस्थ हो गए हैं। छाजनहर चूर्ण के पानी से छाजन को धोकर मलहम लगाइये। छाजन ठीक हो जायगा। मलहम और चूर्ण का एक ही पैकिंग ३ २५ का है।

दन्त रक्षक टूथ पेष्ट—बाजार में मिलने वाले अन्य टूथ पेष्टो की तरह यह केवल दांतो को साफ करने वाला टूथ पेष्ट नही है। यह दातो के समस्त रोगो की महौषधि है। इसके व्यवहार से दातो मे पानी लगना, टीस चलना, मसूडे फूलना और दातो का हिलना आदि समस्त विकार दूर हो जाते है। और नियमित व्यवहार करने से पायरिया ठीक हो जाता है। पैकिंग बहुत सुन्दर किया गया है। मूल्य १ २०

दग्धनोल—(जले की मलहम) यह जले की अत्युत्तम मलहम है। जलने पर यदि इसका तुरन्त व्यवहार कराया जाय तो छाला नही पड़ता और तत्काल शाति आ जाती है। यदि छाला पडने पर इसका व्यवहार कराया जाय तो जले के घाव बहुत शीघ्र ठीक हो जाते है। एलोपैथिक औषधि जो जले पर व्यवहार की जाती है उससे बहुत सस्ती और उत्तम है। इसका पैकिंग भी सुन्दर ट्यूब में किया गया है। मूल्य प्रति ट्यूब (२५ ग्राम) १ २०।

नपुंसकत्वारि—यह प्रयोग हमारा आविष्कृत नही है। इसका प्रयोग सेक्स रोगाङ्क मे देहली निवासी श्री प्रेमी जी ने छपवाया था और लिखा था कि इसके सेवन से इन्द्री की कमजोरी, सुस्ती, नामर्दी, ढीलापन, पतलापन, टेढापन रगो का फूलना, दम फूलना, शीघ्र पतन, नसो मे पानी भरना आदि सभी विकार दूर होकर काम शक्ति बहुत बढ जाती है। पूर्ण योवन आजाता है। धन्वन्तरि के सैकड़ो ग्राहको ने हमसे इस प्रयोग को बनवा कर मगाया और लाभ उठाया है। मूल्य एक मास के सेवन के लिए ६० गोलियो का २५ रुपया है। यदि इसके साथ बसन्त कुसुमाकर रस भी सेवन करना चाहे तो १ मास के लिए ६० गोली ३२.०० की हैं।

अर्शोघ्न—अर्श बहुत ही कठिन रोग है और इसके मस्से तो बेहद कष्ट देते है। जब फूल जाते है रक्त स्राव होने लगता है और बेहद कष्ट, जलन और सूजन हो जाती है। अब तक यह समझा जाता रहा है कि आपरेशन के अतिरिक्त इसकी कोई चिकित्सा ही नही है, किन्तु आपरेशन मे भी इतना कष्ट और व्यय होता है कि सभी रोगी आपरेशन नही करा पाते और कष्ट भोगते रहते हैं। हमारी इस मलहम ने चिकित्सा जगत मे आश्चर्य उपस्थित कर दिया है। केवल मात्र इसके नियमित लगाने से ही, मस्से धीरे धीरे सूख कर नष्ट हो जाते हैं। २५ ग्राम का ट्यूब जो १ मास से भी अधिक समय के लिये पर्याप्त होता है ५) का है।

चर्मनौल—खाज, खुजली आदि सभी प्रकार के चर्म रोगो के लिये अत्युत्तम है। खाज चाहे गीली हो या सूखी, सभी मे लाभ करती है। शरीर के दाग धब्बे भी इसके व्यवहार से ठीक हो जाते हैं, मूल्य २५ ग्राम के ट्यूब का १.५०

(अन्य औषधियो का विवरण अगले पृष्ठ पर पढिये)

श्वेत प्रदरान्तक—श्वेतप्रदर अति कठिन रोग है। बदल-बदल कर औषधिया देने पर भी इसे लाभ नहीं होता। रोगिणी औषधिया सेवन करते-करते परेशान हो जाती है, किन्तु उसे निराशा ही हाथ लगती है। हमारी यह औषधि है तो कतिपय बनौषधियो का चूर्ण, किन्तु गुणो मे मूल्यवान रसो को भी मात करने वाली है। इससे श्वेत प्रदर, कटिशूल, हाथ पैरो की जलन, हडकल, सिर दर्द आदि उपद्रवो मे शीघ्र लाभ होता है। जो श्वेतप्रदर की रोगिणी बहुत सी औषधिया सेवन करके निराश हो गई थी, वह इस औषधि से पूर्ण स्वस्थ हुई हैं। १५ दिन के सेवन योग्य १५० ग्राम चूर्ण का मूल्य केवल ३ रुपया है।

वातनौल—वायु के दर्द और सूजन के लिये आशुफलप्रद है। पक्षाघात, ग्रधसी, आमवात आदि किसी भी रोग के कारण दर्द और सूजन हो इसकी मालिश करने से बहुत शीघ्र लाभ होता है। वायु के रोगो मे प्राय महानारायण तैल, विषगर्भ तैल आदि की मालिश की जाती है; किन्तु यह मलहम इन सब तैलो से अधिक लाभप्रद है। आमवात मे जब रोगी पीड़ा और सूजन से छटपटाता है तो इसकी मालिश करने से बहुत शीघ्र चैन पड़ जाता है। आमवात और ग्रधसी के रोगी को वातान्तक कैपसूल १-१ खिलाकर ऊपर से रास्ना मूल का क्वाथ पिलाना चाहिए और इस मलहम की मालिश करके सिकाई करनी चाहिए। पसली या गले के दर्द मे इसकी मालिश करके रुई बाध देने से बहुत शीघ्र लाभ होता है। व्यवहार करने से ही पता चलेगा कि इस विशुद्ध आयुर्वेदीय मलहम की बराबरी न कोई तैल कर सकता है और न ओइनमेट। ट्यूब मे २५ ग्राम का सुन्दर पैकिंग ३.०० का है।

त्रिफलावलेह—यह अवलेह उन रोगियो के लिए, जिन्हे स्थाई मलावरोध रहता है, कभी दस्त साफ नहीं होता, पेट मे भारापन रहता है और पेट के दर्द की शिकायत रहती है, अत्युत्तम औषधि है। यह केवल दस्तावर ही नही, आतो को बल भी प्रदान करती है, कुछ दिन नियमित सेवन के पश्चात् फिर इसके सेवन की आवश्यकता ही नहीं रहती। जिन व्यक्तियो की बाल्यावस्था या युवावस्था मे नेत्रो की ज्योति कम हो जाती है और नेत्र चिकित्सक आखो मे किसी प्रकार की खराबी नही बताते वह यदि नेत्र ज्योति वर्धक सुरमा तथा इस अवलेह का नियमित प्रयोग करते है तो निश्चित ही नेत्रो की ज्योति बढ जाती है। मूल्य २५० ग्राम ४.००

नवयौवन मलहम—जिन व्यक्तियो की हस्तमैथुन, बहुमैथुन आदि निन्दनीय कर्मो से नसे कमजोर हो गई है और उसके कारण निर्बलता, टेढापन और पतलापन आकर नपुसकता आ गई हैं, उनके लिये इसके व्यवहार से बहुत शीघ्र लाभ होता है। कोई तिला या मलहम इसकी समानता नही कर सकता। इसके व्यवहार मे टेढापन, पतलापन, सुस्ती, नपुसकता, नसो मे पानी भरना, रगो का फूलना आदि सभी विकार दूर होकर पूर्ण पुष्टता आती है। मूल्य १० ग्राम के ट्यूब का ४.५०

काम शक्ति केशरी—इस हीरा और स्वर्ण मिश्रित औषधि का प्रयोग भी धन्वन्तरि के सेक्स रोगांक मे प्रकाशित हुआ था और बहुत से ग्राहको ने हमसे इसे बनाकर भेजने का आग्रह किया था, किन्तु हीरा भस्म न होने से हम इसे तैयार नही कर सके थे। अब बडे परिश्रम से हीरा भस्म तैयार कराकर हमने इस प्रयोग को तैयार कराया है। इसके गुणो के विषय मे लेखक ने लिखा है कि सब प्रकार के असाध्य नपुसको को शानदार जीवन बिताने के लिये इससे बढकर अन्य औषधि मिलना कठिन है। इसके सेवन से घी-दूध खूब हजम हो जाता है और बल-वीर्य और कान्ति तेजी से बढती है। यो तो नपुसकता दूर करने के लिये नपुसकत्वारि भी कम नही है किन्तु इसमे तो हीरा का मिश्रण है, जो कि असीम बलवर्धक है। यदि समर्थ रोगी कामशक्ति केशरी, नपुसकत्वारि और बसन्त कुसुमाकर की १-१ गोली मिलाकर मलाई मे चाटकर ऊपर से दूध पीवे, तो क्या कहने। कामशक्ति केशरी की १ मास के लिये १-१ रत्ती की ६० गोली ९० रुपये की हैं।

पता—गर्ग बनौषधि भंडार विजयगढ़ (अलीगढ़)

गर्ग वनौषधि भंडार विजयगढ़ (अलीगढ़) का नवीन आविष्कार

वनौषधियों के घन सत्व



आयुर्वेद में कुछ ऐसी दिव्य वनौषधिया है जो अत्यन्त सस्ती और सुलभ होने पर भी आश्चर्यजनक लाभ करती हैं, मूल्यवान एलोपैथिक औषधिया भी गुणो मे उसकी समानता नही कर सकती, किंतु सेवन मे झंझट, अरुचिकर स्वाद एव मात्रा अधिक होने के कारण एलोपैथिक औषधियोके समान आदर नही पाती, वही औषधिया जब एलोपैथिक औषधि निर्माणकरने वाली बडी-बड़ी फर्मो द्वारा नाम बदल कर कैपसूल और टेबलेटो के रूप में जनता में रखी जाती हैं तो उनका पर्याप्त आदर होता है और विज्ञापन के बल पर अन्धाधुन्ध बिक्री होती है। आवश्यकता इस बात की है कि समयके अनुसार हम भी उनके स्वरूप मे परिवर्तन करें, जिससे वह जनता मे आदर एव प्रचार पासकें। इन सब बातो का विचार करकेहमने कुछ वनौषधियो के घन सत्व तैयार कराये हैं, जिनकी मात्रा बहुत थोडी होती है और सेवन करने के लिए किसी अनुपान की आवश्यकता नही होती अब तक जो घन सत्व तैयार कराये हैं उनका विवरण नीचे दिया जा रहा है।

उदम्बर घन सत्व – उदम्बर अर्थात् गूलर एक ऐसी वनस्पति है जिसे प्रत्येक वैद्य जानता है। मधुमेह और बहुमूत्र में इसका अति उत्तम प्रभाव होता है। मधुमेह की प्राय. सभी एलोपैथिक औषधियो मे इसका मिश्रण होता है किन्तु वैद्यबन्धु इसका प्रयोग इसलिये कम कर पाते है कि इसके सेवन करने मे बडा झंझट है, पहिले फल लाये जाये फिर उनका क्वाथ बनाकर सेवन कराया जाय इस असुविधा को दूर करने के लिये हमने गूलर के फलो का घन सत्व तैयार कराया है। सेवन करने से मधुमेह और बहुमूत्र मे बहुत शीघ्र लाभ होता है। रक्तपित्त, रक्तातिसार और रक्तप्रदर की भी उत्तम औषधि है। अग्नि दग्ध मे इसका घोल एलोपैथिक औषधियो से भी अधिक लाभ करता है। ५० ग्राम घन सत्व का मूल्य केवल १ ७५ है। ½-½ ग्राम की १०० टेबलेट २ ०० ½ ग्राम के १०० कैपसूल ८ ०० के हैं।

कुटज घन सत्व—कुडा की छाल अतिसार की प्रमुख औषधि है। अतिसार नाशक प्राय सभी औषधियो मे कुडा की छाल का मिश्रण होता है, किन्तु क्वाथ आदि बनाकर व्यवहार कराने मे बडी कठिनता होती है। हमने इसका भी घन सत्व तैयार कराया है। अतिसार मे केवल कुटज घनसत्व के व्यवहार से ही पूर्ण लाभ हो जाता है। आमातिसार की तो इससे उत्तम कोई औषधि ही नही है। बहुत से रोगियो को टट्टी मे आम जाने की वर्षो से शिकायत रहती है, उन्हे इसके लिए निरन्तर सेवन से अवश्य लाभ होता है। आम रक्तातिसार (पेचिस) मे १–१ ग्राम कुटज घन सत्व और आधा आधा ग्राम उदम्बर घन सत्व देने से आश्चर्य जनक लाभ होता है। मूल्य ५० ग्राम घन सत्व का २ ०० आधे ग्राम की १०० टेबलेट २ २५ की और आध-आध ग्राम के १०० कैपसूल ६.०० के हैं।

बावली घास घनसत्व—परीक्षा से यह प्रमाणित हो चुका है कि बावली घास मे रक्त रोकने की अद्भुत क्षमता है। चाहे अर्श से रक्त जाता हो, नकसीर छूटती हो या रक्त प्रदर हो सबमें इसका प्रभाव तीव्रता से होता है। चाहे एलोपैथिक कैपसूल या इन्जेक्शन फेल हो जांय किन्तु यह व्यर्थ सिद्ध नही हो सकती। ५० ग्राम घनसत्व का मूल्य २ २५ आधे ग्राम की १०० टेबलेट २.५० की और आधे ग्राम के १०० कैपसूल ६.५० के है।

(अन्य घन सत्वो का विवरण अगले पृष्ठ पर देखिए)

मुलहठी घन सत्व—खांसी के लिए मुलहठी सत्व का व्यवहार प्राय सभी वैद्य करते हैं किन्तु बाजार में मिलने वाला मुलहठी घन सत्व प्राय नकली होता है। हमने पूर्ण विशुद्धता के साथ मुलहठी सत्व (घन सत्व) तैयार कराया है। ५० ग्राम का मूल्य २ २५ आधे ग्राम की १०० टेवलेट २ ५० की और १०० कैपसूल ९ ०० के हैं।

रास्ना घन सत्व—रास्ना आमवात, गृध्रसी, पक्षाघात आदि कठिन वात रोगो की सफल औषधि सिद्ध हो चुकी है। इसलिए हमने इसका भी घनसत्व तैयार कराया है। यदि १-१ ग्राम रास्ना घन सत्व में आधी-आधी रत्ती शुद्ध कुचला चूर्ण मिला कर सेवन कराया जाय तो आमवात के रोगियो को आश्चर्य जनक लाभ होता है। मूल्य ५० ग्राम का १ ७५ आधे ग्राम की १०० टेवलेट २ ०० की। और आधे ग्राम के १०० कैपसूल ८ ५० के है।

सुदर्शन घन सत्व—सुदर्शन चूर्ण सब प्रकार के ज्वरो के लिए रामवाण है किन्तु अत्यन्त कटु स्वाद होने और मात्रा मे अधिक लेने की आवश्यकता होने के कारण इसका व्यवहार बहुत ही कम हो पाता है। इसलिए हमने इसका भी घनसत्व तैयार कराया है। यद्यपि यह घन सत्व भी कटु है, किन्तु मात्रा में कम लिए जाने के कारण आसानी से सेवन किया जा सकता है। टेवलेट या कैपसूल के सेवन मे तो कोई असुविधा है ही नही। मूल्य ५० ग्राम का ५ ००, आधे ग्राम की १०० टेवलेट ५ ५० की और आधे ग्राम के १०० कैपसूल १९ ०० के हैं।

अशोक घन सत्व—अशोक गर्भाशय सम्बन्धी विकारो की विशेषत प्रदर की अमोघ औषधि है। यद्यपि इसके द्वारा अशोकारिष्ट, अशोक घृत आदि कई प्रयोग तैयार होते हैं किंतु उनमे न सुविधा है और न आधुनिकता; इसलिये इसका भी घन सत्व तैयार कराया है। यह प्रदरादि गर्भाशय सम्बन्धी सभी विकारो पर रामवाणहै। मूल्य ५० ग्राम का २ ५० है। आधे ग्राम की १०० टेवलेट २ ७५ की और आधे-आधे ग्रामके १०० कैपसूल १० ०० के हैं।

नेत्र वालादि घन सत्व—नेत्रवाला-सर्पगन्धा और अन्य दो मस्तिष्क विकार नाशक वनौषधियो द्वारा यह घन-सत्व तैयार किया गया है। यह हिस्टेरिया और अपस्मार की सफल औषधि है। अनेक मूल्यवान औषधियो के सेवन से निराश हुये रोगियो को इसके व्यवहार से लाभ हुआ है। मूल्य ५० ग्राम घन सत्व २ ५० आधे ग्राम की १०० टेवलेट २ ७५ और आधे ग्राम के १०० कैपसूल १० ०० के है।

ब्राह्मी शंखपुष्पी घन सत्व—स्मरण शक्ति की वृद्धि के लिये अत्युत्तम औषधि है एव पित्त के विकारो को नष्ट करती है। पित्ताधिक्य के कारण निरन्तर रहने वाला सिर दर्द और ज्वर की ऊष्मा भी ठीक हो जाती है। मू० ५० ग्राम घन सत्व ४ ०० आधे ग्राम की १०० टेवलेट ४.५० आधे ग्राम के १०० कैपसूल १४ ००

अश्वगंधादि घन सत्व—निर्बलता और वायु विकार की अत्युत्तम औषधि है। किसी भी रोग के कारण हुई निर्बलता मे इसे दूध के साथ व्यवहार कराइये और चमत्कार देखिये। मूल्य ५० ग्राम घन सत्व ४ ५० आधे आधे ग्राम की १०० टेवलेट ४ ७५ और आधे ग्राम के १०० कैपसूल १५ ००

अपामार्गादि घन सत्व—अपामार्ग, सोम कल्प, वासा और मुलहठी का यह घन सत्व श्वास-खासी के लिये बहुत ही उत्तम है। जब रोगी खांसते खासते परेशान हो जाता है और कफ नही निकलता इसका सेवन बहुत ही उपयोगी रहता है। ४-६ मात्राओ के सेवन से ही श्वास का वेग शांत होजाता है। मूल्य ५० ग्राम घन सत्व २ २५ का आधे ग्राम की १०० टेवलेट २ ५० की और आधे ग्राम के १०० कैपसूल ९ ५० के है।

पता—गर्ग बनौषधि भंडार विजयगढ़ (अलीगढ़)

विशुद्ध असली बनौषधियां



यो तो हमारे यहां सभी प्रकार की वनौपधिया, काष्टोपधिया, खनिज द्रव्य और शोधित द्रव्य सस्ते, उत्तम और विश्वस्त प्राप्त होते है किंतु यहा उन कतिपय औपधियो के ही भाव दिये जा रहे हैं जो बाजार में प्राय: नकली सड़ो--गली और गुणहीन प्राप्त होती है। बाजार में मिलने वाली सोंठ, मिर्च, पीपल आदि वस्तुओ के भाव घटते-बढते रहते हैं अतः उनके भाव नही दिये जारहे हैं। आपको जिस भी वस्तु आवश्यकता हो सूचित कीजिये, हम उत्तम से उत्तम वस्तु उचित मूल्य मे भेज देंगे।

बनौषधि

भाव १ किलो पर

अष्टवर्ग	१०.००
सर्पगन्धा	३०.००
जीवन्ती	७.००
उलट कम्बल	४ ००
गुणमार बूटी	४ ००
विधारा	२.००
वावची	२ ००
असगंध नागौरी	६.००
अशोक छाल (बगाल)	२ २५
अतीस कड़वी	८५ ००
रुदन्तीफल	२४ ००
मालकांगुनी	४.५०
ब्राह्मी	४.००
पुत्रजीवक	४,५०
अनन्तमूल	१ ५०
[illegible]दीरी-कद	२ ५०
[illegible]शमूल	१ ८०
भृंगराज	२ ००
शंखपुष्पी	२ ००
[illegible]र की छाल	१ २५
अरनी	० ७५
कटेरी छोटी	० ८०
कटेरी वडी	१ २५

बनौषधि

भाव १ किलो पर

नीलोफर	२.००
कालमेघ	२.७५
फूलप्रियगु	६.५०
कुडा की छाल	१ २५
नागकेशर असली	१२.५०
सितावर	६ ००
वशलोचन असली	६०.००
अकरकरा असली	२००.००
अर्जुन छाल	१ ५०
चित्रक छाल	८.५०
चित्रक मूल	३,००
नकछिनकी	४.००
विल्व छाल	१.५०
मौलश्री की छाल	३ ००

धातु उपधातु एवं खनिज द्रव्य

भाव १ किलो पर

ताम्र चूर्ण	२५ ००
शु ताम्र चूर्ण	३५.००
लोह चूर्ण	३ ००
शु लोह चूर्ण	३ ५०
वज्राभ्रक	३ ००
धान्याभ्रक	७ ००
शु रांग	८०.००
शु, जस्ता	१२.५०
कांतलोह	६ ००
शु. कांतलोह	१०.००
माहूर	१ ००
शु. माहूर	३ ५०
शख टुकडा	२ ००
मृगश्र ग	३.७५
गोदन्ती	१ ५०
प्रवालमूल	२६ ००
प्रवाल शाखा	२८०.००

बहुमूल्य द्रव्य

भाव १० ग्राम पर

मोती सीप असली	१००.००
मोती छिलका	१४.००
मोती असली	१००.००
मोती बेडोल	४४.००
मोती चूरा	१२ ००
केशर काशमीरी	३०.००
कस्तूरी असली न १	३५०.००
कस्तूरी असली न. २	१५० ००

खाली कैपसूल

	१०००	१००
वडा साइज	४७.५०	५ ००
छोटा साइज	४३ ५०	४ ५०

गंगा बनौषधि भंडार विजयगढ़ [अलीगढ़]

रजिस्ट्रेशन आफ न्यूजपेपर्स (सेन्ट्रल) रूल्स १९५६ के नियम ८ के अन्तर्गत धन्वन्तरि नामक मासिक पत्र का विवरण

१. प्रकाशन का स्थान	विजयगढ़ (अलीगढ़)
२. प्रकाशन का काल	मासिक
३. मुद्रक का नाम	वैद्य देवीशरण गर्ग
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	विजयगढ़ (अलीगढ़)
४. प्रकाशक का नाम	वैद्य देवीशरण गर्ग
राष्ट्रीयता एव पता	उपरोक्त
५. सम्पादक का नाम	वैद्य देवीशरण गर्ग
राष्ट्रीयता एव पता	उपरोक्त
६. पत्र के मालिक का नाम	वैद्य देवीशरण गर्ग, विजयगढ (अलीगढ)
	ज्वाला प्रसाद अग्रवाल विजयगढ (अलीगढ)
	दाऊदयाल गर्ग, विजयगढ (अलीगढ)
	मुरारीलाल गर्ग, विजयगढ (अलीगढ)
	श्रीनाथ अग्रवाल, विजयगढ (अलीगढ)
	रामेश्वरदयाल अग्रवाल, विजयगढ (अलीगढ)
	भगवतीप्रसाद अग्रवाल, विजयगढ (अलीगढ)
	रामकिशन अग्रवाल, विजयगढ (अलीगढ)
	गिर्राजकिशोर अग्रवाल, विजयगढ (अलीगढ़)
	गोपालशरण अग्रवाल विजयगढ (अलीगढ)

मैं, वैद्य देवीशरण गर्ग, यह घोषित करता हूँ कि ऊपर दिया गया विवरण जहा तक मैं जानता मुझे विश्वास है सत्य है।

६१

ह० वैद्य देवीशरण गर्ग (प्रकाशक)